सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

४८

(सितम्बर १९३१ – जनवरी १९३२)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमे १२ सितम्बर, १९३१ से ३ जनवरी, १९३२ तककी सामग्री दी गई है। इन दिनो लन्दनमे गोलमेज परिषद्का दूसरा अधिवेशन चल रहा था और काग्रेसके एकमात्र प्रतिनिधि या राष्ट्रीय स्वरके एकमात्र प्रवक्ताके रूपमे गाधीजी भी उसमे शामिल हुए थे। इस परिषद्मे गाधीजी "शान्ति-सुलह स्थापित करनेके उद्देश्य" (पृष्ठ २) से शामिल हुए थे, क्योकि देशमे "काफी उथल-पुथल और लडाई-झगडे हो चुके" (पृष्ठ १) थे, और यदि कोई समाधान ढूँढा जा सकता था तो प्रयत्न करके देख लेना आवश्यक था। वसे, परिषद्के परिणामोके सम्बन्धमे गाधीजी आरम्भसे ही शकाग्रस्त थे। भारतके वातावरणमे उन्हे इस वातका कोई लक्षण दिखाई नही देता था कि अंग्रेजोके हृदयमे कोई परिवर्तन हुआ है और वे सत्ताके त्यागके लिए तैयार है। इसलिए उन्होने वहुत सकोच-विकोचके बाद परिषद्मे भाग लेनेकी स्वीकृति दी थी। गाधीजी की आशका निराधार नही थी। लन्दनमे सप्ताह-भरके अन्दर ही वे सरकारी मन्तव्योकी "घोर अनिश्चिततासे अधीर हो उठे" (पृष्ठ २९), और ज्यो-ज्यो समय बीतता गया, उन्हें इस वातकी अधिकाधिक प्रतीति होती गई कि "भारत तथा काग्रेसके विरुद्ध खडी ताकतोका" उन्होने "गलत अन्दाजा लगाया था" (पृष्ठ २५३)। इस प्रकार परिणामकी दृष्टिसे तो गाधीजी अपने शान्ति-सुलहके उद्देश्यमे प्राय· विफल ही हो गये, किन्तु उन्होने अपने इस लन्दन-प्रवासको निरर्थक नही जाने दिया। उन्होने इस अवसरका उपयोग इग्लैण्डके लोकमतको भारतकी परिस्थितियोसे अवगत करानेके निमित्त किया, और साथ ही ब्रिटेन तथा भारतकी नई साझेदारीकी अपनी कल्पनाको इग्लैण्डके प्रभावशाली जनोके मानसमे प्रतिष्ठित करनेका प्रयास किया। उनकी कल्पनाकी इस नई साझेदारी का आधार शासक और शासितका सम्बन्ध नही, वरन् दो समकक्ष मित्रोका सम्बन्ध था, और इस साझेदारीका उद्देश्य मात्र पारस्परिक हितोको साधना नही, वल्कि अखिल विश्वका कल्याण करना था। इग्लैण्डसे लौटते हुए उन्होने विलेन्यूवमे रोमाँ रोलाँसे भेट की। कुछ समय वे इटलीमे रुके तो वहाँ मुसोलिनीसे भी भेट की और फिर वैटिकन सिटीके भी दर्शन किये, "जहाँ क्रूसपर चढे ईसा मसीहकी सजीव प्रतिमाको" देखकर वे भाव-विभोर हो उठे। अपनी यात्राका सक्षिप्त विवरण देते हुए उन्होने स्वय लिखा, "उस जीवन्त दृश्यने मुझे इस तरह वाँध लिया था कि वहाँसे अलग होते हुए मुझे लगभग वियोगका दु ख अनुभव हो रहा था। वहाँ मुझे यह समझते देर नही लगी कि व्यक्तिके ही समान राष्ट्रका निर्माण भी शूलीकी पीड़ा, कष्टोकी आँच सहनेसे ही सम्भव है" (पृष्ठ ४८०)।

गाधीजी की दृष्टिमे भारतके सघर्षका, राजनीतिक स्वतन्त्रतासे परे, एक व्यापकतर, एक नैतिक महत्त्व था। जब गाधीजी का जहाज ब्रिटेनके तटको छूनेवाला था, तभी 'ईवनिंग स्टैंडर्ड' के माध्यमसे विश्वको अपना सन्देश देते हुए उन्होने कहा "यदि भारत सत्य और अहिसाके बलपर स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेता है तो मुझे पूरा विश्वास है कि विश्व-शान्तिके क्षेत्रमे इस युगका यह सबसे बडा योगदान होगा" (पृष्ठ १)। अमेरिकाको दिये एक सन्देशमे इसी विषयको पल्लवित करते हुए उन्होने कहा. "ससार रक्तपातसे बिलकुल तग आ गया है। वह अपने उद्धारका कोई नया रास्ता ढूँढ रहा है और नये रास्तेके लिए व्याकुल ससारको वह रास्ता दिखानेका गौरव-पद शायद इस प्राचीन देश भारतको ही प्राप्त होगा" (पृष्ठ १०)। भारतकी राष्ट्रीयताको गाधीजी अन्तर्राष्ट्रीयताकी भावनासे भिन्न नही मानते थे, क्योकि "जिस क्षण हम सत्य और अहिंसारूपी साधनका सहारा लेते है उसी क्षण हमारी देशभक्ति अन्तर्राष्ट्रीयतामे परिवर्तित हो जाती है।" इसलिए उनकी दृष्टिमे, इन साधनोके द्वारा भारतकी स्वातन्त्र्य-प्राप्तिमे अन्तत विश्वका कल्याण निहित था (पृष्ठ ४)। लन्दनमे भारतीय विद्यार्थियोकी एक सभामे उन्होने स्पष्ट शब्दोमे कहा, यह बात स्वय ब्रिटेन की जनताके हितमे है कि परिषद् सफल हो। कारण, "पजाबमे मैने ब्रिटिश स्वभाव के घिनौने रूपको जाना है। ..मेरा उद्देश्य अपने पास उपलब्ध सभी साधनोसे इस तरहके दुष्काण्डको रोकना है। अपने लोगोके कष्टोको रोकनेसे भी अधिक मुझे मानव-स्वभावके पाशवीकरणको रोकनेकी चिन्ता है। जो लोग अपना पाशवीकरण कर लेते है वे न केवल अपने-आपको, बल्कि मानव-जातिको भी नीचे ले जाते है" (पृष्ठ १६१)। उनका विचार था कि चूँकि हम सब एक ही परम पिताकी सन्तान है और सबमे एक ही परम तत्त्व व्याप्त है, इसलिए "हम प्रत्येक व्यक्तिके—चाहे वह हमारी जातिका हो या किसी औरका—पापके भागीदार है" (पृष्ठ १६१)।

परिषदमे होनेवाली राजनीतिक चर्चामे गाधीजी ने जो रुख अपनाया उसका आधार काग्रेस द्वारा उनको दिया गया कार्य-निर्देश था। इस निर्देशमें काग्रेसने पूर्ण स्वराज्यकी राष्ट्रीय माँगको दोहराया था। पूर्ण स्वराज्यका मतलब था शासनके अन्य विषयोके अतिरिक्त सेना, वित्त और परराष्ट्र-नीतिपर भी जनताका पूर्ण नियन्त्रण। गाधीजी को जो-कुछ करना था, इस राष्ट्रीय माँगको ध्यानमें रखकर ही करना था। हाँ, उन्हे ऐसे छोटे-मोटे "फेर-बदल करनेकी छूट" अवश्य दी गई थी "जो भारतके हितके लिए स्पष्टत आवश्यक हो" (पृष्ठ १९)। इस कार्य-निर्देशमें गाधीजी को ब्रिटेनके साथ ऐसी साझेदारी कायम करनेकी गुजाइश भी दिखाई दी जिसमे दोनो पक्षोको पूरी बराबरीका दर्जा हासिल हो और प्रत्येकको अपनी इच्छानुसार उससे अलग होनेका अधिकार हो। इसी लक्ष्यको ध्यानमे रखकर उन्होने गोलमेज परिषद्की सघ-सरचना समितिके समक्ष कहा "ये दो महान् राष्ट्र मिल-जुलकर क्या नही कर सकते? एक ओर आपका यह राष्ट्र है—सख्यामे थोड़े किन्तु बहादुर

लोगोका राष्ट्र, जिसकी बहादुरीका इतिहास इतना उज्ज्वल है कि उससे अधिक उज्ज्वल इतिहास शायद दुनियाके किसी भी राष्ट्रका नही होगा . . और दूसरी ओर हमारा यह अत्यन्त प्राचीन राष्ट्र है—करोडो लोगोका यह राष्ट्र, जिसका अपना एक प्राचीन और गरिमामय इतिहास है, जो आज हिन्दू और इस्लाम इन दो महान् सस्कृतियोका प्रतिनिधित्व करता है" (पृष्ठ २१)। अपने इस इग्लैण्ड-प्रवासमे गाधीजी ने परिषद्के अन्दर और उसके बाहर जो अनेक भाषण और वक्तव्य दिये, उनमे इस साझेदारीके विचारका उल्लेख उन्होने बार-बार किया।

परिषद् और उसकी विभिन्न समितियोकी बैठकोके दौरान जिन विवादास्पद प्रश्नोंकी चर्चा हुई उनके सम्बन्धमे गाधीजी का दावा यह था कि काग्रेस ब्रिटिश भारत और देशी नरेशोके अधीनस्थ भारत, दोनोके करोडो मूक और अभावग्रस्त जनोका सच्चा प्रतिनिधि करती है और इन मूक मानवोके हितोके समक्ष समाजके शेष सभी वर्गोंके हितोको गौण बनकर रहना पडेगा। अत, उन्होने वयस्क-मताधिकारका पक्ष-पोषण किया और इस वातका विरोध किया कि सविधानमे ब्रिटेन या भारतके किसी भी विशेष वर्गके हितोको सरक्षण दिया जाये। इसी प्रकार उन्होने मुसलमान और सिख, इन दो वडे अल्पसख्यक समुदायोके अतिरिक्त अन्य किसी भी वर्गको विशेष प्रतिनिधित्व दिये जानेका विरोध किया। किन्तु देशी नरेशोकी विशेष स्थितिको स्वीकार करते हुए उनके प्रति उन्होने समझौतेका रुख अपनाया और उनसे जो-कुछ कहा, वह उनकी उदारताकी वृत्तिपर भरोसा रखते हुए ही कहा। देशी नरेश सघमे शामिल होनेको तैयार थे, इसके लिए गाधीजी ने उनकी वडी प्रशसा की, लेकिन "आम जनताके वीचसे आनेवाले, आम जनताके आदमी और समाजके निम्नतम वर्गका प्रतिनिधित्व करनेके लिए" प्रयत्नशील व्यक्तिकी हैसियतसे उन्होने उनसे अनुरोध किया कि "वे जो भी योजना बनाकर समितिके स्वीकारार्थ पेश करे उसमे" भारतके दीन-दुःखी जनोको ध्यानमे रखकर उनके द्वारा दिये गये एक-दो "सुझावोको भी स्थान दे" (पृष्ठ ३२)।

उस समयकी राजनीतिक विचारधाराके सन्दर्भमे गाधीजी का वयस्क-मताधिकारका सिद्धान्त लोगोको बडा क्रान्तिकारी जान पडा। किन्तु गाधीजी "गाँवके गरीबसे-गरीब लोगोके बीच हिल-मिलकर" रह चुके थे और अपने निजी अनुभवोके आधारपर उन्हे जनसाधारणके प्रभुत्वसे कोई भय नही लगता था। इसके विपरीत उनकी धारणा तो यह थी कि "गरीबोके बीच, खुद अस्पृश्योके बीच . . मानवताके कुछ सर्वोत्कृष्ट नमूने" देखनेको मिल सकते है (पृष्ठ ३४)। उन्होने कहा कि वयस्क-मताधिकारसे न केवल मुसलमानोकी, वल्कि दलित वर्गो, ईसाइयों और श्रमिक वर्गो, सवकी उचित आकाक्षाओकी पूर्ति होगी। किन्तु मतदाताओकी बड़ी सख्यासे जो कठिनाइयाँ उत्पन्न हो सकती थी, उन्हे दूर करनेके विचारसे उन्होने गाँववार निर्वाचक इकाइयोपर आधारित अप्रत्यक्ष निर्वाचन-पद्धति अपनानेका सुझाव रखा। इस पद्धतिके

अनुसरणसे प्रत्याशी और मतदाताके बीच सीधा सम्पर्क स्थापित हो सकता था। लेकिन परिषद्में इस सुझावको समर्थन नही मिला, यहाँतक कि अल्पसख्यक समुदायोके प्रतिनिधियोकी ओरसे भी नही।

काग्रेसने एक सयुक्तक निर्वाचक-मण्डलकी योजना बनाई थी, जिसमें मुसलमानो और सिखोके लिए स्थानोके आरक्षण और उनके धार्मिक अधिकारोको सवैधानिक सरक्षण देनेकी व्यवस्था थी। लेकिन अगर यह योजना स्वीकार न हो तो काग्रेस हिन्दू, मुसलमान और सिख प्रतिनिधियोको स्वीकार्य कोई भी अन्य समाधान मान लेनेको तैयार थी। गाधीजी ने अनौपचारिक वार्ता द्वारा तीनो समुदायोके प्रतिनिधियोके बीच कोई समझौता करानेका पूरा प्रयत्न किया, लेकिन वह फलित नही हो सका। अन्तमे प्रतिनिधिगण इस बातपर सहमत हो गये कि यह प्रश्न प्रधान मत्री रैम्जे मैकडॉनाल्डके निर्णयपर छोड दिया जाये। प्रतिनिधियोने प्रधान मत्रीके पास इस आशयका जो अनुरोध भेजा, उसपर गाधीजी ने हस्ताक्षर नही किये; क्योकि उनकी रायमें मैकडॉनाल्ड जो पचनिर्णय देते वह व्यक्तिकी हैसियतसे नही, बल्कि प्रधान मत्रीके रूपमे देते।

दलित वर्गोके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी व्यवस्थाका गाधीजी ने प्रबल विरोध किया। उनकी मान्यता थी कि ऐसी व्यवस्थासे तो "हिन्दू समाज दो सशस्त्र छावनियोमे बँट जायेगा" (पृष्ठ १७७)। डॉ० अम्बेडकरकी पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी माँगके पीछे जो मनोभावना काम कर रही थी उसके औचित्यको उन्होने पूरी तरहसे स्वीकार किया, किन्तु साथ ही कहा कि "उन्हें [डॉ० अम्बेडकरको] जो भारी अन्याय भोगना पडा और शायद जो कटु अनुभव हुए है उनके कारण उनका विवेक कलुषित हो गया है" (पृष्ठ ३३०)। दलित वर्गोके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी व्यवस्थामे उन्हें अस्पृश्यताके स्थायी बन जानेकी सम्भावना दिखाई दी। उन्होने पूछा कि "क्या अछूत सदा अछूत ही रहेगे? . अस्पृश्यता जीवित रहे, इसकी अपेक्षा मै यह अधिक अच्छा समझूँगा कि हिन्दू धर्म डूब जाये" (पृष्ठ ३३०)। उस माँगके स्वीकृत हो जानेसे "हिन्दू धर्ममे जो विभाजन" होता, वह उन्हें असह्य था। उन्होने सम्पूर्ण गम्भीरताके साथ घोषणा की कि "इस चीजका विरोध करनेवाला यदि मै अकेला रहूँ, तो भी मै अपने प्राणोकी बाजी लगाकर इसका विरोध करूँगा" (पृष्ठ ३३१)। और चन्द महीने बाद ही यरवडा जेलमे आमरण अनशन आरम्भ करके गाधीजी ने अपने इस सकल्पको साकार कर दिखाया।

यूरोपीय समुदायकी विशेष प्रतिनिधित्वकी माँगका विरोध करते हुए उन्होने उस समुदायके प्रतिनिधियोको स्मरण दिलाया कि आजतक "यूरोपीयोका वर्ग विशेष सुविधा-प्राप्त वर्ग रहा है। उन्हें वह सारा सरक्षण प्राप्त रहा है जो यह विदेशी सरकार उन्हे दे सकती थी।" इसलिए गाधीजी ने उनसे अनुरोध किया कि "वे कुछ दिन अपने हितोके लिए विशेष सुरक्षाकी माँग करना छोड़कर आम जनताकी सद्भावनापर निर्भर

रहनेकी कोशिश करके तो देखे" (पृष्ठ ३९)। वह वर्ग केवल विशेष प्रतिनिधित्वकी ही नही, अपने व्यापारिक हितोको सवैधानिक सरक्षण दिये जानेकी भी माँग कर रहा था। गाधीजी ने उसकी इस माँगका विरोध भी उतनी ही दृढताके साथ किया। उन्होने स्पष्ट शब्दोमे कहा . "ब्रिटिश व्यापार यदि भारतीय हितोके प्रतिकूल है तो रक्षाकी कोई भी व्यवस्था भारतमे उसे बचा नही सकेगी। ब्रिटिश या भारतीय, प्रत्येक 'हित' को इस कडी कसौटीपर परखना होगा कि वह जनताके हितमे है या नही" (पृष्ठ ६७)। इसी प्रकार वे "सभी जन्मजात भारतीय प्रजाजनोके अधिकारोकी समानताकी गारन्टी" पर भी सहमत होनेको तैयार नही थे। इसका कारण बताते हुए उन्होने कहा : "भारतकी भावी सरकारको . . परिस्थितियोको समान करनेके लिए लगातार वह काम करना पडेगा जिसकी मौजूदा सरकारने उपेक्षा की, अर्थात् जिन लोगोको प्रकृतिने अथवा स्वय सरकारने कृपा करके धन और अन्य सुविधाएँ प्रदान की है, उनके विरुद्ध और भूखो मरते भारतीयोके पक्षमे उसे बराबर भेदभाव करना पडेगा" (पृष्ठ ३४९)। उनके विचारसे भारतके आर्थिक पुनर्निर्माणके प्रयत्नमे इग्लैण्ड-जैसे उन्नत देशोको आदर्श मानकर नही चला जा सकता था। भारत-जैसे अविकसित देशके लिए यह आवश्यक था कि वह "अपना ही अर्थशास्त्र , अपनी ही उद्योग-पद्धति विकसित" करे, और "मूल उद्योगोको यदि राज्य अपने अधिकारमे न भी ले तो कमसे-कम उनके सचालन, प्रबन्ध और विकासमे तो उसकी आवाज प्रमुख" हो ही (पृष्ठ ३५५)। इस सबके परिणामस्वरूप यूरोपीयोके विरुद्ध ही नही, भारतीय पूँजीपतियोके खिलाफ भी भेदभाव हो सकता था। सघ-सरचना समितिके समक्ष दिये गये जिस भाषणमे गाधीजी ने यह चेतावनी दी थी उसे कतिपय प्रेक्षकोने "साफ-साफ बोल्शेविक विचारोसे प्रेरित" बताया और उससे उनके "मित्रोमे बेचैनी पैदा हो गई" थी (पृष्ठ ४५७)।

सेनापर जनप्रतिनिधियोके नियन्त्रणसे सम्बन्धित गाधीजी के विचार भी बहुतोको अव्यवहार्य लगे होगे। उन्होने देखा कि "भारतीय सेना तो ब्रिटिश हितोकी रक्षाके लिए है" (पृष्ठ ३३८), इसलिए उन्होने पूरी निर्भीकताके साथ कहा कि यदि उस पर भारतका नियन्त्रण स्थापित नही किया जा सकता तो अच्छा यही होगा कि उसे भग कर दिया जाये। फिर भी उन्हें आशा थी कि सेनाको भग करनेकी स्थिति नही आयेगी और सैनिक कमान हस्तान्तरित करते समय ब्रिटिश सत्ताधारी भारतीय सेनाके भारतीय और अग्रेज सैनिकोको भी "एक नया सबक सिखायेगे"—यह सबक कि भविष्यमे उन्हे ब्रिटेनके हितोकी नही, बल्कि भारतके हितोकी रक्षा करनी है। उन्होने अग्रेजोके उदात्त भावोको जगाते हुए कहा . "ग्रेट ब्रिटेनका यह गौरवपूर्ण विशेषाधिकार और कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह अब हमे अपनी प्रतिरक्षाके सचालनके रहस्योमे दीक्षित करे। हमारे पख कतर देनेके बाद यह उसका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह हमे पख दे, जिससे हम उसी प्रकार उड सके जैसे ब्रिटेनवाले उडते है" (पृष्ठ ३४०)।

स्पष्ट था कि ब्रिटिश सरकार गाधीजी की माँगोको कुछ कम करके भी स्वीकार करनेकी मन स्थितिमे नही थी। ब्रिटेन गम्भीर आर्थिक सकटमे पडा हुआ था और लेबर सरकार अपना बहुमत खो बैठी थी। परिषद्का अधिवेशन चल रहा था, इसी बीच ब्रिटेनमे आम चुनावोके भी आदेश जारी कर दिये गये। कजर्वेटिव पार्टी प्रबल बहुमतसे विजयी हुई। किन्तु चुनावोके बाद एकदलीय सरकार बनानेके बजाय राष्ट्रीय सरकार बनाई गई और प्रधान मत्रीके पदपर रैम्जे मैकडॉनाल्ड ही कायम रहे। इन परिवर्तनोके बीच कोई बडा निर्णय सम्भव नही था, किन्तु ब्रिटिश सरकारने इस चीज को जो रूप दिया वह यह था कि साम्प्रदायिक समस्याका समाधान न हो पानेके कारण ही सविधान-रचनामे वाछित प्रगति नही हो सकी। लगता है, गाधीजी इस चालको पहले ही ताड गये थे। अल्पसख्यक-समस्या समितिको विभिन्न समुदायोके प्रतिनिधियोकी अनौपचारिक वार्त्ताकी विफलताकी सूचना देते हुए उन्होने कहा, असफलताके कारण "भारतीय प्रतिनिधि-मण्डलके गठनमे ही निहित थे।" प्रतिनिधिगण सरकार द्वारा मनोनीत किये गये थे और इसलिए वास्तवमे उनकी कोई प्रातिनिधिक हैसियत नही थी। इसके अतिरिक्त समितिकी चर्चामे "वास्तविकताकी भावनाका अभाव" था, क्योकि प्रतिनिधियोको यह नही मालूम था कि उन्हे "क्या मिलनेवाला है।" इस गतिरोधसे निकलनेके मार्गका सकेत करते हुए उन्होने कहा कि साम्प्रदायिक समस्याका समाधान "स्वराज्यके सविधानका शिखर हो सकता है, उसका आधार नही हो सकता, . साम्प्रदायिक मतभेदोका हिमशैल स्वतन्त्रताके सूर्यकी गर्मीसे गल जायेगा" (पृष्ठ १२९)। परिषद्के बाहर गाधीजी ने अपने विचार कही अधिक दो टूक ढगसे व्यक्त किये। उन्होने ब्रिटिश सरकारपर "फूट डालो और राज करो" की नीतिका अनुसरण करनेका आरोप लगाया। उन्होने कहा, "जबतक विदेशी शासन-रूपी पच्चर कायम है और वह अधिकाधिक गहरा धँसता जा रहा है तबतक हम आपसमे विभक्त ही रहेगे। पच्चरका काम ही यही है" (पृष्ठ २०४)। उनका कहना था कि सरकार एक बार यह घोषणा करके तो देखे कि "भारतीयोमे आपसमे सहमति हो या न हो, हम तो भारतको छोडने ही जा रहे है" (पृष्ठ २०५)। उन्होने विश्वास दिलाया कि यदि सरकार ऐसा करे तो निश्चय ही भारतके विभिन्न समुदायोके बीच सहमति हो जायेगी। लेकिन सरकार तो "केवल भारतका शोषण करनेके लिए नौकरशाहीकी सत्तामे साझेदारी" देनेको तैयार थी और यह चीज भारतीयोके बीच "फूटके बीज बोती" थी (पृष्ठ २०५)।

भारतकी राष्ट्रीय माँगके प्रति ब्रिटेनकी जनतामे सहानुभूतिके अभावका एक मुख्य कारण गाधीजी को यह लगा कि उन लोगोको भारतकी वास्तविक स्थितिका भान ही नही था। इस सन्दर्भमे उन्होने एक नौजवान क्वेकरके इस कथनका उल्लेख किया कि "जबतक हम लोगोको [अग्रेजोको] बचपनसे ही सच्चे और यथार्थ इतिहासकी नही, बल्कि गलत इतिहासकी शिक्षा दी जा रही है, तबतक आपके यहाँ आनेसे कोई

लाभ होनेवाला नही है।" भारतकी स्थितिका सही बोध करानेके लिए उन्होने अग्रेजोके सामने "दो अचूक कसौटियाँ" रखी। उन्होने उनसे पूछा "यह तथ्य है या नही कि भारत आज दुनियाका सबसे गरीब देश है? यह तथ्य है या नही कि . इस देशको पौरुषहीन बना दिया गया है?" (पृष्ठ १२१) उन्होने यह स्वीकार किया कि जनताको स्वय भारतके सूदखोरो और साहूकारोने लूटा है, और इसलिए "अगर हमारा तरीका हिसात्मक होता तो भारतीय बनिये गोलीसे उडा दिये जानेके पात्र माने जाते। लेकिन, अग्रेज बनिये तो इस व्यवहारके सौ गुना अधिक पात्र है। . . मुझे तो इतिहासमे इतनी असगठित और विनम्र जातिके इतने सगठित शोषणका कोई दूसरा उदाहरण ही दिखाई नही देता" (पृष्ठ २०६)।

मशीनोके सम्बन्धमे गाधीजी के विचारोको सुनकर भारतके अनेक हितेच्छु भी चक्करमे पड गये। इसलिए उनके इग्लैण्ड-प्रवासके दौरान इस विषयपर उनसे बार-बार प्रश्न पूछे गये। चार्ली चैपलिनको मशीनोके प्रति अपनी अरुचिका मनोवैज्ञानिक कारण बताते हुए उन्होने कहा· "मशीनके कारण हम अतीतमे इग्लैण्डके अधीन हो गये और हम अपनेको पराधीनतासे केवल इसी तरह मुक्त कर सकते है कि हम मशीनसे बनी सभी चीजोका बहिष्कार करे" (पृष्ठ ५३)। उन्होने एच० एन० ब्रेल्सफोर्ड के समक्ष यह स्वीकार किया कि "केवल थोडे-से निष्ठावान आदमी ऐसे है जो बिना मशीनके सादा जीवन बिता सकते है। जनसाधारणका उसके बिना काम नही चलेगा" (पृष्ठ १५२)। एक अन्य प्रसगपर उन्होने कहा . "शल्य-चिकित्साके औजार बनानेके लिए मै जटिलसे-जटिल यन्त्रोको अपनाना चाहूँगा" (पृष्ठ ४२६)। एक अमेरिकी सवाद-दाताके प्रश्नोके उत्तर देते हुए गाधीजी ने स्वीकार किया कि वे मशीनोके विरोधी थे, किन्तु वही "जहाँ वह उत्पादन और वितरणको चन्द हाथोमे सीमित कर देनेका साधन बन जाता है", क्योकि "जो चीज सर्वसाधारणको सुलभ न हो सके उसे" वे "अपने लिए त्याज्य" मानते थे (पृष्ठ १८४)। जहाँतक थोक उत्पादनका सम्बन्ध था, यह चीज भी अपने-आपमे ऐसी नही थी जो गाधीजी को पसन्द न रही हो। स्वय चरखा भी तो प्रकारान्तरसे थोक उत्पादनका ही एक साधन था — लेकिन यह ऐसा साधन था जिससे लोग अपने घरोमे ही उत्पादन कर सकते थे और लाखो घरोमे इस तरह अलग-अलग किये गये उत्पादनको मिलाकर देखनेसे उसका परिणाम थोक उत्पादन ही तो था। वे जिस चीजको गलत मानते थे वह थी — "कमसे-कम लोगो द्वारा अत्यन्त जटिल यन्त्रोकी सहायतासे अधिकसे-अधिक उत्पादन" (पृष्ठ १८३)। राज्य-नियन्त्रित उत्पादन और वितरणके रूसी प्रयोगके सम्बन्धमे उन्होने कहा, "अगर यह बल-प्रयोगपर आधारित न होता तो मै इस व्यवस्थापर मुग्ध हो जाता" (पृष्ठ १८३)।

कुछ सभाओमे गाधीजी राजनीतिके बजाय उन विषयोपर बोले, जिनका उनके हृदय-देशसे अत्यधिक निकटका सम्बन्ध था। अपने गिल्डहाउस चर्चके भाषणमे उन्होने

स्वय स्वीकार किया कि "यद्यपि मेरा ध्येय बाहरसे राजनीतिक लगता है, इसकी जड़ें आध्यात्मिक हैं" (पृष्ठ ५५)। "अनैतिकता और असत्यसे अछूता रहने" के लिए स्वैच्छिक दारिद्रयके आदर्शको प्राप्तिकी दिशामें अपनी क्रमिक प्रगतिका वर्णन करते हुए उन्होने स्वीकार किया कि "प्रारम्भमे वह एक कठिन सघर्ष था और — जैसा कि मेरी स्मृतिमे आज भी स्पष्ट है — अपनी पत्नी और अपने बच्चोके साथ वह एक तरहका मल्लयुद्ध था" (पृष्ठ ५६)। लेकिन "एक समय ऐसा भी आया जब उन चीजोको त्यागना" उनके लिए "वास्तविक उल्लासकी बात हो गई" जिनके वे अभ्यस्त हो चुके थे और उनका त्याग करके उन्हें ऐसा लगा जैसे उनके "कन्धोसे एक बडा बोझ उतर गया।" वे "अब निश्चिन्त चल-फिर" सकते थे "और अपने भाइयोकी सेवाका कार्य भी खूब आरामसे और पहलेसे अधिक आनन्दके साथ" कर सकते थे (पृष्ठ ५७)। गाधीजी का विचार था कि स्वैच्छिक गरीबीके आदर्शको अपने जीवनमे सम्पूर्णत उतारनेके लिए शरीरका मोह त्यागना भी आवश्यक है। उन्होने कहा . "यह (शरीर) आपको एक अस्थायी सम्पत्तिके रूपमे दिया गया है" तथा "ईश्वरकी इच्छा पर यह शरीर भी समर्पित किया जा सकता है, और जबतक यह मेरे पास है, इसका उपयोग दुराचार, भोग-विलास या आनन्दके लिए नही, बल्कि सेवाके लिए होना चाहिए, और जाग्रत अवस्थामे इससे सब समय सेवा ही करनी चाहिए" (पृष्ठ ५९)। ईसाई धर्म-प्रचारक सस्थाओके एक सम्मेलनमें बोलते हुए उन्होने बताया कि वे धर्मान्तरणके विरुद्ध क्यो थे। उन्हीके शब्दोमे, "प्रार्थना करनेवाले का यह विश्वास होता है कि ईश्वर रहस्यात्मक ढगसे काम करता है, और वह यह चाहता है कि जिस सत्यको उसने स्वय देखा है वह समस्त ससारको प्राप्त हो। वह औरोमे बँट जाये, इसके लिए वह प्रार्थना करता है। और वह सत्य आगे बढता है, उसके पख लग जाते हैं। . . धर्म गुलाबकी तरह है" (पृष्ठ १३५)। उनके लिए आदर्श मिशनरी, आदर्श धर्म-प्रचारक तो एन्ड्रयूज थे, जो ईसाई धर्मका उपदेश नही देते थे, बल्कि उसे अपने जीवनमे उतारते थे (पृष्ठ १३६)। उन्होने यह तो स्वीकार किया कि इन सस्थाओने परोक्ष रूपसे भारतकी सेवा की है, किन्तु साथ ही यह भी कहा, "मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं भी उसी पिताकी पूजा करता हूँ, यद्यपि एक भिन्न रूपमे करता हूँ। 'गॉड' के रूपमे उसकी पूजा करना मेरे लिए उचित नही होगा। वह नाम मुझपर कोई प्रभाव नही डालता, पर जब मै उसे रामके रूपमे सोचता हूँ तो वह मुझे पुलकित कर देता है। . . उसमे कितनी कविता है" (पृष्ठ १४१)! गाधीजी मानते थे कि परमेश्वरकी — उस एकमात्र परम सत्यकी — अभिव्यक्ति अनेक प्रतीकोके द्वारा हो सकती है और इसलिए मनुष्यको सस्थाओकी बेडियोमें जकड़ना गलत है, सत्यकी प्रतीतिको केवल अपनी ही सस्था, अपने ही धर्मकी इजारेदारी मानना भ्रम-मात्र है। धर्मके सम्बन्धमे ऐसा ही भ्रामक विचार रखनेवाले एक आलोचकको उत्तर देते हुए उन्होने कहा "आपका ईश्वर तो मेरा भी है, बावजूद इसके कि आप मेरे ईश्वरमे विश्वास नही

करते। . . . मनुष्य सदा अच्छा ही होता है और अगर वह सही रास्तेसे भटकता है तो केवल बुरी सस्थाओके कारण ही भटकता है" (पृष्ठ ४२८)।

धर्म और कलाके पारस्परिक सम्बन्धपर अपने विचार प्रकट करते हुए गाधीजी ने कहा: "उन दोनोमे मूल अनुभूतिका क्षेत्र मनुष्यका ईश्वरसे सम्बन्ध होता है। . . . ईश्वरके साथ मनुष्यका सम्बन्ध ही सदा जीवनका केन्द्रीय अनुभव रहेगा" (पृष्ठ १६५)।

गाधीजी का यह इग्लैण्ड-प्रवास राजनीतिक दृष्टिसे विफल हो गया जान पडता था, किन्तु उन्हे इसका तनिक भी दु ख नही था। उन्होने वल्लभभाईको लिखा, "यहाँ मेरा सब काम परिषद्‌के बाहर ही होता है" (पृष्ठ २५८)। फ्रेड्स ऑफ इडियाकी सभामे उन्होने कहा कि "अपने कार्यके सम्बन्धमे यदि मुझे पस्त करनेवाली जबरदस्त कठिनाइयोका सामना करना पड रहा है तो काफरेस और कमेटियोके बाहर मुझे आनन्द और उल्लास भी प्राप्त हो रहा है" (पृष्ठ १२९)। लकाशायरके मजदूरोके पास गाधीजी के खिलाफ शिकायतका कारण था, किन्तु उनकी लकाशायर-यात्रा भी व्यक्तिगत दृष्टिसे अत्यन्त सफल रही। वहाँ "सड़कोके किनारे एकत्रित लोगोकी भीड़ने स्वेच्छासे" उनके प्रति "जिस गहरे प्रेमका प्रदर्शन किया", उससे वे विचलित हो उठे और उस प्रसगका वर्णन करते हुए उन्होने लिखा, "उस प्रेमको मैं अपने जीवनकी एक सुन्दर स्मृतिके रूपमे सदा सँजोकर रखूंगा" (पृष्ठ ८४)। परिषद्‌के पूर्णाधिवेशनमे अपने भाषणका समापन करते हुए उन्होने कहा: "मैं यहाँसे हजारो अग्रेजोकी मैत्री का सौभाग्य प्राप्त करके जा रहा हूँ। . . . मेरे अभागे देशपर चाहे जो आ पडे, इस आतिथ्य और इसके स्नेहकी स्मृति मेरे मनसे कभी नही मिटेगी" (पृष्ठ ४०५)। "सिंहावलोकन" शीर्षक लेखमे इसी विषयकी चर्चा पुन. करते हुए उन्होने लिखा: "ईस्ट लन्दनमे रहते हुए मुझे मानव-स्वभावके सर्वोत्तम पक्षका परिचय मिला और मेरे इस सहज विश्वासकी पुष्टि हुई कि अन्दर उतरकर देखे तो पूर्वी और पश्चिमी दुनिया-जैसी कोई चीज नही है। . . . अगर मेरे इग्लैण्डके और भी निकट आनेकी कोई गुजाइश थी तो इस अनुभवने मुझे उसके और निकट ला दिया है" (पृष्ठ ४७९)।

इग्लैण्डसे लौटते हुए जब गाधीजी विलेन्यूवमे रोमाँ रोलाँसे मिलने तीन दिन स्विट्जरलैण्डमे ठहरे तब वहाँ उन्होने कई सभाओमे भाषण दिये। ऐसी ही एक सभामे "सत्य क्या है?" इस प्रश्नका उत्तर देते हुए उन्होने कहा, "जो हमारी अन्तरात्मा कहे, वही सत्य है" (पृष्ठ ४४८)। किन्तु साथ ही उन्होने यह चेतावनी भी दी कि "हर व्यक्तिका अपनी अन्तरात्माकी आवाज सुन सकनेका दावा उचित नही है", क्योकि "जिसमे विनय नही है, वह कभी भी सत्यको प्राप्त नही कर सकता" (पृष्ठ ४४९)। एक अन्य सभामे उन्होने कहा· "ईश्वर-प्रेमके बिना सच्चा मानव-प्रेम मैं असम्भव मानता हूँ" (पृष्ठ ४५५)। रेड क्रॉसके मानव-दयाके कार्योके लिए उसकी प्रशसा करते हुए उन्होने यह सुझाव दिया, "उसे युद्धके बाद सहायता देनेकी बात

नही सोचनी चाहिए, युद्धके बिना सहायता देनेकी बात सोचनी चाहिए।" उन्होने कहा "मेरी इस बातपर विश्वास कीजिए कि लाखो लोग ऐसे है जो अपनी ही गलतीसे कष्टमे पडे हुए है", और इन्हे "भावी अहिंसात्मक सस्थाओ" की सहायता और मार्गदर्शनकी आवश्यकता है (पृष्ठ ४६६)।

शुद्धि तथा हृदय-परिवर्तनके साधनके रूपमे कष्ट-सहनकी शक्तिका बोध गाधीजी को पहले भी था, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इस इग्लैण्ड-प्रवासके दौरान उनके इस बोधमे और भी गहराई आई। इग्लैण्डमे वुडब्रूककी क्वेकर बस्तीकी एक सभामे उन्होने कहा कि १९२० से ही "मेरी यह प्रतीति बढ़ती गई है कि जनताके लिए जो चीजे आधारभूत महत्त्वकी है वे केवल बुद्धिपूर्वक समझाने-बुझानेसे ही नही मिल जाती, बल्कि उनकी कीमत कष्ट-सहनके रूपमे चुकानी पड़ती है", क्योकि "हमे लोगोको समझा-बुझाकर ही सन्तुष्ट नही हो जाना चाहिए, बल्कि उनके हृदयको भी प्रभावित करना चाहिए" (पृष्ठ २०८)।

स्वदेश वापस लौटते हुए जहाजपर 'बडे दिन' के असवरपर दिये एक प्रवचनमें उन्होने समझाया कि यदि हम "सघर्षके बीच . शान्तिका अनुभव" करना चाहते है तो हमे "उस सघर्षको दूर करनेके लिए अपने सम्पूर्ण जीवनको नष्ट" करना पडेगा, "अपने प्राणोकी बलि चढा" देनी होगी, क्योकि जिस प्रकार "ईसाका चमत्कारपूर्ण जन्म एक शाश्वत घटना है, उसी प्रकार इस झझावातसे भरे जीवनमे शूलीपर चढना, आत्मबलिदान करना भी एक शाश्वत घटना है" (पृष्ठ ४८६)। इसलिए भारत लौटकर जब उन्होने देखा कि सविनय अवज्ञा पुन आरम्भ करना अनिवार्य हो गया है तब उन्होने रवीन्द्रनाथ ठाकुरको पत्र लिखकर उनसे अनुरोध किया, "जो यज्ञाग्नि सुलगाई जा रही है, उसमे आप जो सर्वोत्तम समिधा डाल सकते है, वह डाले" (पृष्ठ ५३७)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित सस्थाओ, व्यक्तियो, पुस्तकोके प्रकाशको तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं.

सस्थाएँ : साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और सग्रहालय (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट), नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रथालय, अहमदाबाद।

व्यक्ति : श्रीमती गगाबहन वैद्य, श्री नारणदास गाधी, राजकोट, श्री नारायण देसाई, बारडोली; और प्रेमाबहन कटक, सासवड।

पुस्तके : 'इडिया इन १९३१-३२', 'ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'इडियन राउण्ड टेबल कॉन्फरेन्स (सेकेण्ड सेशन) · प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स', 'इडियन राउण्ड टेबल कॉन्फरेस (सेकेण्ड सेशन) प्रोसीडिग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐण्ड माइनॉरिटीज कमिटी', 'दैट स्ट्रेंज लिटिल ब्राउन मैन — गाधी', 'बापुना पत्रो — २ सरदार वल्लभभाईने', 'बापुना पत्रो — ४ 'मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो — ६ · ग० स्व० गगाबहेनने', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'माई ऑटोबायोग्राफी' और 'हेलिफैक्स'।

पत्र-पत्रिकाएँ · 'अमृतबाजार पत्रिका', 'इन्टरनेशनल अफेयर्स', 'इडियन न्यूज', 'इडियन रिव्यू', 'ईवनिंग स्टैंडर्ड', 'क्लिथरो एडवर्टाइजर ऐंड टाइम्स', 'गिल्ड-हाउस', 'जॉन बुल', 'ज्यूइश क्रॉनिकल', 'टाइम्स', 'टेक्स्टाइल मर्क्युरी ऐंड आर्गस', 'ट्रिब्यून', 'डेली टेलीग्राफ', 'डेली मेल', 'डेली वर्कर', 'डेली हेराल्ड', 'नवजीवन', 'नेशन', 'न्यूज क्रॉनिकल', 'न्यूयॉर्क टाइम्स', 'पोस्ट', 'फ्रैंड', 'बर्मिघम पोस्ट', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'बॉरोज ऑफ पॉपलर ऐंड स्टेपनी', 'ईस्ट लन्दन एडवर्टा-इजर', 'ब्रिटिश वीकली', 'मैंचेस्टर गार्डियन', 'यग इडिया', 'यॉर्कशायर पोस्ट', 'रिकसिलिएशन', 'लेबर मथली', 'सडे ऑब्जर्वर', 'सडे टाइम्स', 'स्टेट्समैन', 'स्पेक्टेटर', 'हरिजन', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसधान व सन्दर्भ-सबधी सुविधाओके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इडियन कौसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना एव प्रसारण मत्रालय का अनुसधान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐंड रेफरेस डिवीजन) और श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोकी फोटो-नकल तैयार करनेमे मदद देनेके लिए हम सूचना एव प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके भी आभारी है।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गाधीजी के स्वाक्षरोमे मिली है उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जोकी स्पष्ट भूलोको सुधारकर दिया गया है।

अग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमे अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूले सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमे प्रयुक्त शब्दोके सक्षिप्त रूप यथासभव पूरे करके दिये गये हैं। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमे सशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजी ने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके वीच चौकोर कोष्ठकोमे दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गाधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोडकर गहरी स्याहीमे छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोडकर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजी के कहे हुए नही हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमे छापे गये है। भाषणो और भेटकी रिपोर्टोके उन अशोमे, जो गाधीजी के नही है, कही-कही कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोमे की गई है, और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गाधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोमे 'एस० एन०' सकेत साबरमती सग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गाधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध कागज-पत्रोका, 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गाधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाधी) द्वारा सगृहीत पत्रोका और 'एस० जी०' सेवाग्राममे सुरक्षित सामग्रीका सूचक है।'

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये है। अन्तमे साधन-सूत्रोकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई है।

विषय-सूची

१. भेंट : 'ईवनिंग स्टैंडर्ड' के प्रतिनिधिको[1]

१२ सितम्बर, १९३१

जोरोंकी बारिश हो रही थी। गांधीजी खुरदरी खादी धारण किये हुए थे। उन्होंने अपना कन्धा उचकाते हुए कहा :

मुझे वर्षा पसन्द नही। अभी-अभी सुना है कि इस साल आपके यहाँ गर्मीकी ऋतु आई ही नही। लेकिन अगर मै भारतमे शान्ति स्थापित कर सकूँ तो मुझे इस मौसमको भी झेलनेमे कोई एतराज नही होगा।

मै 'ईवनिंग स्टैंडर्ड' के जरिये दुनियाको एक सन्देश[2] देना चाहता हूँ.

> यदि भारत सत्य और अहिंसाके बलपर स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेता है तो मुझे पूरा विश्वास है कि विश्व-शान्तिके क्षेत्रमे इस युगका यह सबसे बडा योगदान होगा।
>
> मो० क० गांधी

मै इतना ही चाहता हूँ कि भारतमे शान्ति स्थापित हो जाये और इसमे मै ब्रिटेनकी जनताकी सहायता चाहता हूँ। मै सरकारको परेशान नही करना चाहता, उसकी मदद करना चाहता हूँ। मै यहाँ क्यो आया? इसलिए आया हूँ कि मैंने लॉर्ड इर्विनको इसके लिए वचन दिया है। अपने वचनका पालन करनेसे कभी किसीका कोई नुकसान नही हुआ है। मैंने भी अपना वचन निभाया है। अब सवाल यह है कि शान्तिसे मेरा तात्पर्य क्या है? शब्दकोशमे आप ऐसा लिखा पायेंगे कि यह युद्धका विपरीतार्थक शब्द है। हमारे यहाँ काफी उथल-पुथल, लडाई-झगडे हो चुके है। अब हम शान्ति चाहते है। मुझे ऐसा सन्देशवाहक कहा गया है जिसे किसीका प्रतिनिधित्व करनेका कोई अधिकार नहीं है। यह तो सरासर गलतबयानी है। मुझे यह अधिकार प्राप्त है और देनेवाले लोग है भारतकी जनता।

इसके बाद गांधीजी ने मुझे टाइप किया हुआ एक पृष्ठ दिया और उसके आखिरी अनुच्छेदकी ओर इंगित किया। वह इस प्रकार था : "कांग्रेस महात्मा गांधीको अपना प्रतिनिधित्व करनेके लिए नियुक्त करती है और उन्हें प्रतिनिधित्व करनका अधिकार देती है।"

यह अधिकारपत्र है या नही? मै तो कहता हूँ कि है। आप पूछते है, मै चरखा क्यो चलाता हूँ। यह धैर्यके अभ्यासका एक बड़ा साधन है। जब आपकी पत्नी

१. **ईवनिंग स्टैंडर्ड**के प्रतिनिधिने गांधीजी से, जब वे इंगलिश चैनल पार कर रहे थे, उस समय नौकामें ही मुलाकात की थी।

२. यह लिखित सन्देश था।

नाराज हो, आप भी कातने लगे। आप पूछते हैं कि मैं सोमवारको मौन रखनेका अपना व्रत तोड़ूँगा या नहीं। जरूरत हुई तो तोड़ूँगा।[1] वैसे तो अपना व्रत कायम रखनेकी मेरी बड़ी इच्छा है, लेकिन अगर उन लोगोंने बहुत आग्रह किया तो बोलूँगा।

गांधीजी ने मुझे बताया कि वे लन्दनमें अपनी लँगोटी ही पहनेंगे, लेकिन ठंडसे बचनेके लिए शाल और कम्बल ओढ़ा करेंगे। वे किसी रंगशालामें नहीं जायेंगे।

किसी समय मैं लीसियम जाया करता था। शेक्सपियरके नाटक मुझे अच्छे लगते थे। अप्रतिम एलेन टेरी मुझे बहुत पसन्द थी, मैं उसे पूजता था। लेकिन यह तबकी बात है जब 'मेलोड्रामा' (अतिनाटक)का चलन नहीं हुआ था। लन्दनमें मेरे किसी रंगशालामें न जा पानेका कारण सिर्फ यही है कि मेरे पास समय नहीं रहेगा।

मैं उबा देनेवाला वैसा मनहूस बूढ़ा आदमी नहीं हूँ जैसा मुझे चित्रित किया जाता है। सच तो यह है कि मैं बहुत खुशमिजाज आदमी हूँ। [इस अर्थमें] अगर आप मुझे 'स्कॉच' कहें तो वह गलत नहीं होगा। मैं अपने पैसे-पैसेका खयाल रखता हूँ।

पिछली बार विश्व-युद्ध प्रारम्भ होनेके ठीक बाद, ६ अगस्त, १९१४ को, इंग्लैंडके समुद्र-तट पर था। आज मैं यहाँ शान्तिकी खोजमें वापस आया हूँ।

[अंग्रेजीसे]

ईवनिंग स्टैंडर्ड १२-९-१९३१

२. भाषण: फ्रेंड्स हाउस, लन्दनमें[2]

१२ सितम्बर, १९३१

आजकी शाम आप मुझसे ऐसी अपेक्षा तो नहीं ही करेंगे कि मैं आपका ज्यादा समय लूँ या मैं जिस कामको लेकर यहाँ आया हूँ, उसके बारेमें कुछ ज्यादा कहूँ। लेकिन, सामान्य रूपसे मैं आपसे एक बात कहना चाहूँगा। मैं शान्ति-सुलह स्थापित करनेका उद्देश्य लेकर यहाँ अपने मित्रोंके साथ आया हूँ। मैं और मेरे मित्र महान् अंग्रेज राष्ट्रके अतिथि हैं। मुझे उम्मीद है कि हम अपने कामके सिलसिलेमें जितने

१. गोलमेज परिषद्की संघ-संरचना समिति (फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी)की बैठक १४ सितम्बरको होनेवाली थी, उस दिन सोमवार था।

२. रायटरके अनुसार गांधीजी फोकस्टोनसे लन्दन शामके ४-१० पर पहुँचे और यद्यपि उस समय वर्षा हो रही थी, फिर भी लोग इतनी अधिक संख्यामें उमड़े आ रहे थे कि पुलिसके लिए एहतियात बरतना जरूरी हो गया। उन्हें गाड़ीसे सीधे फ्रेंड्स हाउस ले जाया गया। स्वागत समितिकी ओरसे उनका स्वागत करते हुए लॉरेन्स हाउसमैनने कहा : "... महात्मा गांधी, यदि इजाजत हो तो कहूँ कि आप एक अनोखे आदमी हैं — अपने देशवासियोंके लिए भी और हमारे देशवासियोंके लिए भी। आप हृदयसे इतने शुद्ध और सच्चे हैं कि हमारे मनमें शंका पैदा हो जाती है कि क्या ऐसा हो सकता है। आप इतने सरल हैं कि हममें से कुछ लोग हैरतमें पड़ जाते हैं।"

दिन भी यहाँ रहेगे उसके अन्तमे आप ऐसा नही मानेगे कि मैने आपके आतिथ्यका किसी प्रकारसे दुरुपयोग किया है। मुझे आशा है कि जैसे-जैसे समय बीतता जायेगा, आप उस उद्देश्यकी व्याप्तिको समझते जायेगे जिसकी खातिर काग्रेसने मुझे यहाँ भेजा है। आप इस बातका भी ध्यान रखेगे कि काग्रेसकी ओरसे बोलनेके अधिकारसे युक्त प्रतिनिधिके रूपमे मेरी अपनी कुछ सीमाएँ, कुछ मर्यादाएँ होगी। मुझे तो काग्रेससे जो आदेश प्राप्त हुए है, उनकी सीमाओमे रहकर ही काम करना है। उस आदेशपत्रमे ऐसे कुछ शब्द अवश्य हैं, जिनकी रूसे मुझे अपनी इच्छानुसार काम करनेकी कुछ छूट मिल जाती है, लेकिन बाकी मामलोमे, सभी बुनियादी मामलोमे तो मै बिलकुल बँधा हुआ ही हूँ।[1] कांग्रेसने मुझे अपना विश्वास दिया है और यदि मुझे अपने-आपको उस विश्वासके योग्य सिद्ध करना है तो मुझे उस आदेशकी सीमाओका उल्लघन कदापि नही करना चाहिए।

मै विनम्रतापूर्वक कहूँगा कि काग्रेस एक सदुद्देश्यको लेकर चल रही है—ऐसे उद्देश्यको लेकर जिस पर किसी भी राष्ट्रको गर्व होगा। काग्रेस करोडो मूक और क्षुधार्त्त मानवोके लिए विशुद्ध स्वतन्त्रता चाहती है। काग्रेस उनका सही प्रतिनिधित्व कर सके, इस उद्देश्यसे उसने इस स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके साधनके रूपमे सत्य और अहिंसाको चुना है।

मै यह भली-भाँति जानता हूँ कि सभी काग्रेसियोका आचरण उस साधनके अनुरूप नहीं रहा है, और मै यह भी जानता हूँ कि अगर हम काग्रेसी सत्य और अहिंसाके नाम पर असत्य और हिंसामय व्यवहार करेगे तो सारी दुनिया हम पर थूकेगी। लेकिन मै जानता हूँ कि काग्रेसके श्रेष्ठतम कार्यकर्त्ताओने अपने जीवनमे सत्य और अहिंसाके सारको उतारा है और यह मेरे लिए सबसे बडे सन्तोषकी बात है। . . .

मै जानता हूँ कि हमारे बीच हिंसामे विश्वास करनेवालोका भी एक दल है। मै उनमे से बहुत-से नौजवानोको जानता हूँ। उनके साथ मै रहा हूँ, उनके बीच घुल-मिलकर उनको देखा है, उनके साथ बातचीत भी की है। मैने और मेरे बहुत-से सहयोगियोंने उन्हे उस चीजकी ओरसे विमुख करनेकी कोशिश की है, जिसे हम गलत मानते है। लेकिन साथ ही मै यह भी जानता हूँ कि हमारे और उनके बीच उद्देश्यकी एक समानता भी है। वे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए व्याकुल है—स्वतन्त्रता, जिस पर भारतका हक है, जो उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। मैने सार्वजनिक तौर पर और निजी बातचीतमें भी उनसे कहा है और आज फिर कहता हूँ कि उनके कार्योंसे कांग्रेस बडी अटपटी स्थितिमें पड जाती है, उनकी गतिविधियाँ

१. १४-९-१९३१ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**, १५-९-१९३१ के **ट्रिब्यून**, और १६-९-१९३१ के **हिन्दुस्तान टाइम्स**में प्रकाशित रायटरकी रिपोर्टमें उपर्युक्त वाक्यके बजाय यह कहा गया है: "गांधीजीने इस बात पर जोर दिया कि उन्हें काग्रेसके आदेशके अनुसार ही चलना चाहिए जिसके कुछ शब्द ऐसे है कि मेरे लिए अपनी इच्छानुसार काम करनेकी कोई छूट नहीं रह जाती। लेकिन बाकी सभी मामलोंमें और सभी बुनियादी मामलोंमें वे अपनी इच्छानुसार बरतनेको बिलकुल स्वतन्त्र है।"

प्रगतिकी घड़ीकी सुईको पीछे ढकेलती है। सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तमें विश्वास रखनेवाले कांग्रेसी इस बातको भली-भाँति समझते है कि स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए हिंसाका सहारा लेनेवाले ये नौजवान न केवल अपना, बल्कि देशका भी नुकसान करते है और सबसे ज्यादा नुकसान तो उन करोडो मूक मानवोका करते है जिनका उल्लेख अभी मैंने किया है।

भले ही हम राष्ट्रवादी हो, भले ही हम प्रबल देशभक्त हो, लेकिन जिस क्षण हम सत्य और अहिंसा-रूपी साधनका सहारा लेते है उसी क्षण हमारी देशभक्ति अन्तर्राष्ट्रीयतामे, विश्वप्रेममे परिवर्तित हो जाती है। हमारी देशभक्तिकी अवधारणा ही कुछ ऐसी हुई है कि हम स्वतन्त्रता चाहते है तो किसी अन्य देश अथवा व्यक्तिकी स्वतन्त्रता पर हाथ डालनेके लिए नही। हम 'जिसकी लाठी उसकी भैस' अथवा 'अधिकतम लोगोका अधिकतम हित' वाले नियममे विश्वास नही करते। हम तो सबका — ईश्वरकी सृष्टिके तुच्छतम प्राणीका — सर्वाधिक कल्याण-साधन हो, इस नियममे विश्वास रखते है। और यदि भारत स्वतन्त्रताका अपना अधिकार प्राप्त कर लेता है, यदि वह इन साधनोसे अपनी आजादी हासिल कर लेता है तो क्या आप नही मानते कि यह भारतके लिए ही नही, बल्कि सारी दुनियाके लिए बहुत अच्छी बात होगी?[1]

लेकिन कुछ और बात भी है। आप तो भारत सरकार और कांग्रेसके बीच हुए समझौतेके बारेमे जानते ही होगे। यह एक पवित्र समझौता है जो एक नेक अंग्रेज, लॉर्ड इर्विनके प्रयत्नोसे सम्पन्न हो पाया है। मैने उनसे बार-बार यह वादा किया था कि अगर सम्भव हुआ तो मै लन्दन अवश्य आऊँगा। सो ज्यो ही मुझे ऐसा लगा कि रास्ता खुल गया है, मै भागा-भागा लन्दन पहुँच गया हूँ।

इसके बाद श्री गांधीने सभी अंग्रेज पुरुषों और स्त्रियों से भारतीय समस्याका अध्ययन करनेका अनुरोध करते हुए कहा कि इसमें मै आपकी कठिनाई समझता हूँ, क्योंकि अभी आप लोग अपने घरेलू मामलोसे निबटनेमें लगे हुए हैं और यह सर्वथा उचित है। [उन्होंने आगे कहा:]

मेरी यह कामना है कि अंग्रेज स्त्री-पुरुषोके मनमें यह सत्य उतर जाये कि जबतक ब्रिटेन और भारतके आपसी व्यवहारका हिसाब-किताब दुरुस्त नही कर लिया जाता तबतक ब्रिटेनका 'बजट' सही तौरसे सन्तुलित नही हो पायेगा।

अन्तमें श्री गांधीने श्रोताओंसे कहा कि आप लोग मेरे अंगीकृत कार्यको सफल बनानेके लिए काम करें, क्योंकि उससे भारतकी ही नहीं, सारी दुनियाकी भलाई होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन न्यूज, २२-९-१९३१ और ट्रिब्यून, १५-९-१९३१

१. यहाँ तकका अंश इंडियन न्यूज़ से लिया गया है और शेष ट्रिब्यून से।

३. तार : लॉर्ड इर्विनको

किंग्सले हॉल बोउ
लन्दन ईस्ट
[१२ सितम्बर, १९३१][1]

लॉर्ड इर्विन
गैरोबी वकथोर्प (यॉर्क्स)

हर्ष है कि आखिर आपको यह सूचित कर पा रहा हूँ कि मैं यहाँ पहुँच गया हूँ। जब भी आपको सुविधा हो, आपसे मिलना चाहूँगा।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७९०६) से।

४. भेंट : समाचारपत्रोंको

लन्दन
१२ सितम्बर, १९३१

एक मुलाकातके दौरान श्री गांधीने मुझे उन माँगोंका सार बताया जो वे कांग्रेसकी ओरसे पेश करनेवाले हैं। उन माँगोंके अनुसार :

१. कांग्रेसका लक्ष्य पूर्ण स्वराज्य है।

२. पूर्ण स्वराज्यका मतलब है, सेना, विदेशी मामलों, वित्त और आर्थिक नीतिपर नियन्त्रण।

३. एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा ब्रिटिश सरकारके आर्थिक सौदोंकी जाँच।

उन्होंने कहा कि कुछ ऐसे शब्द अवश्य हैं जिनकी रूसे मुझे अपनी इच्छानुसार काम करनेकी थोड़ी छूट मिल जाती है; अन्यथा तो मुझे जो समादेश दिया गया है, उससे बँधा हुआ हूँ।

श्री गांधीने यह भी कहा कि यद्यपि हिन्दू-मुस्लिम समस्या बहुत टेढ़ी है, लेकिन इसका कोई कामचलाऊ समाधान ढूँढ़ पानेकी आशा मैं कभी नहीं छोड़ूँगा।[2]

१. तारसे स्पष्ट है कि गांधीजी ने इसे लन्दन पहुँचनेके कुछ ही देर बाद भेजा होगा।

२. यहाँ तकका अंश संडे टाइम्स के प्रतिनिधिके साथ हुई मुलाकातके विवरणसे लिया गया है और आगेका हिस्सा ट्रिब्यूनमें प्रकाशित रायटरके एक प्रतिनिधिके साथ हुई मुलाकातके विवरणसे उद्धृत किया गया है।

श्री गांधीने कहा कि कोई कामचलाऊ समाधान ढूँढ़ पानेकी आशा मैं कभी नहीं छोड़ूँगा। मैं बराबर आशान्वित हूँ। मैं मुसलमानोंके साथ मतभेद दूर करनेके लिए मनमें कोई भी अन्यथा विचार रखे बिना सब-कुछ करनेको तैयार हूँ। मैं तो सादे कागज पर दस्तखत करके मुसलमानोंको दे देने और फिर वे उसपर सत्य समझ-कर जो-कुछ लिख दें, उसके लिए संघर्ष करनेको तैयार हूँ।

श्री गांधीने इस बातपर जोर दिया कि मुसलमानों द्वारा की गई कोई भी माँग सारे मुस्लिम समाजकी ओरसे की गई माँग होनी चाहिए। उन्होंने आगे कहा:

यह बात मैं किसी प्रयोजनसे ही कह रहा हूँ, क्योंकि एक छोटा-सा संगठन है जिसे राष्ट्रवादी मुस्लिम दल कहते हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि इसके समर्थकोंकी संख्या कितनी है, लेकिन उस दलके साथ मैं कोई धोखेबाजी नहीं कर सकता।

उन्होंने कहा, मेरा काम मुसलमानोंके दोनों दलोंको एक साथ लाना है।

[अंग्रेजीसे]

संडे टाइम्स, १३-९-१९३१ और ट्रिब्यून, १५-९-१९३१

५. भेंट : समाचारपत्रोंको

लन्दन

१२ सितम्बर, १९३१

आज किंग्सले हॉलमें[1] एक मुलाकातके दौरान श्री गांधीने कहा:

मैं लंकाशायर जानेको तैयार, बल्कि उत्सुक हूँ। मैं उत्तरी क्षेत्र भी जाना चाहता हूँ और मैंचेस्टर तो अवश्य जाना चाहता हूँ। मुझे बहुत-से पत्र और तार मिले हैं, जिनमें मुझसे वहाँ आनेको कहा गया है और यह भी कि अगर मैं गोलमेज परिषद्में न भी जाऊँ तो वहाँ जानेसे ही मेरा इंग्लैंड आना सफल हो जायेगा। मेरा वहाँ जाना या न जाना वहाँके लोगों पर निर्भर है। अगर वे चाहते हों कि मैं आऊँ तो इसके लिए उन्हें बस इतना-भर कह देना पड़ेगा कि 'आइए'।

मैं यह समझ सकता हूँ कि विदेशी वस्त्रोंके सम्बन्धमें हमने जो-कुछ किया है, उसको लेकर यहाँ बहुत-सी गलतफहमियाँ फैली हुई हैं। अगर मैं वहाँ गया और उनसे बातचीत हुई तो मैं चाहूँगा कि वे मुझसे सवाल-जवाब करें। मैं उनसे अपनी बात बिना किसी दुराव-छिपावके कहूँगा।

श्री गांधीने कहा कि जो प्रचार किया गया है उससे लंकाशायरके लोगोंका मन कहाँ तक प्रभावित हुआ है, यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन आशा तो मैं यही रखूँगा कि अगर कोई गलतफहमी हो तो मैं उसे दूर कर दूँ और वैसा करनेके लिए मैं

१. म्यूरियल लेस्टर द्वारा लन्दनके ईस्ट एण्ड क्षेत्रमें स्थापित एक समाजसेवाकी संस्था; गांधीजी ने अपने लन्दन-प्रवासके दरम्यान वहीं ठहरना पसंद किया था।

कुछ भी उठा नहीं रखूँगा। अगर मैं वहाँ जाऊँगा तो मैं मुख्यतः श्री सी० एफ० एन्ड्रयूजके मार्ग-दर्शनमें चलूँगा, क्योंकि वे लंकाशायरमें काम करनेवाले बहुत-से स्त्री-पुरुषोंको जानते हैं और बहुत-से मिल-मालिकोंसे भी उनका सम्पर्क रहा है।

जब उनसे भारतके लोगोंके लिए सन्देश माँगा गया तो उन्होंने कहा :

उनसे कहिए कि मन, वचन और कर्मसे अहिंसाका पूरा पालन करना तथा कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमको पूर्ण रूपसे लागू करनेका प्रयत्न करना ही मेरे लिए उनकी सबसे अच्छी सहायता होगी।

इंग्लैंडके मौसमके बारेमें वे कुछ ज्यादा शिकायतके लहजेमें नहीं बोले। उन्होंने कहा कि इसको तो मैं पहले भी कई वर्ष झेल चुका हूँ और इससे अच्छी तरह वाकिफ हूँ। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि इस बार जबकि यहाँ मेरे रहने-सहने वगैरहका ढब कुछ दूसरा होगा, इस मौसमका मुझपर क्या असर होगा, यह मैं नहीं कह सकता। वैसे मौसमकी सर्दीका खमियाजा मित्रोंके प्रेमकी गरमाहट पूरा कर देगी।

किसीने उनसे पूछा कि क्या वे सोमवारको, अर्थात् अपने मौनवारको भी संघ-संरचना समितिकी बैठकमें जायेंगे। इसपर उन्होंने कहा :

मैं तो अपने-आपको प्रधान-मन्त्री और भारत मन्त्रीकी इच्छा पर छोड़ दूँगा। वे जैसा चाहेंगे वैसा ही करूँगा। यदि उन्हें मेरा वहाँ जाकर चुप बैठना असुविधा-जनक नहीं लगता तो मैं खुशी-खुशी वहाँ जाकर बैठककी कार्यवाही देखूँगा।

किंग्सले हॉलके पास रहनेवाले लोग श्री गांधीको देखने और उनसे मिलनेकी आशा लगाये हुए हैं। श्री गांधीका कहना है कि वे बेशक उनसे मिलनेकी आशा रखते हैं। उन्होंने कहा :

अगर ऐसा नहीं होता तो मैं यहाँ आता ही क्यों? मैं आशा करता हूँ कि वे यहाँ आयेंगे और मैं उनमें से कुछके घर जा कर उनसे मिल सकूँगा, बशर्ते कि कुमारी लेस्टर ऐसी व्यवस्था कर दें जिससे मुझे वहाँ जाते कोई देख न सके।

गोलमेज परिषद्में शामिल होनेवाले मुसलमान प्रतिनिधियोंमें से एक हैं श्री शौकत अली। कल एक मुलाकातके दौरान उन्होंने बताया कि साम्प्रदायिक समस्याको लेकर वे श्री गांधीसे चार बार मिल चुके हैं और इन मुलाकातोंके परिणामस्वरूप ज्यादा अच्छे आसार नजर आने लगे हैं। जब श्री गांधीसे पूछा गया कि क्या वे उनकी इस रायसे सहमत हैं तो उन्होंने कहा :

हाँ, सहमत तो हूँ ही। जब दो आदमी — और खासकर ऐसे दो आदमी जो लगातार दस साल तक एक-दूसरेके दोस्त रहे हैं — आपसमें मिलकर बातचीत करते हैं तब प्रगति तो होती ही है। आशा तो बराबर बनी हुई है, लेकिन सब-कुछ इस बात पर निर्भर है कि यहाँ क्या होता है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, समझौतेके मार्गमें कोई कठिनाई नहीं आयेगी, क्योंकि व्यक्तिशः मैं तो मुसलमानोंकी माँगें स्वीकार कर ही लूँगा।

मै लॉर्ड रॉदरमेयर और श्री विन्स्टन चर्चिलसे पत्र लिखकर एक मुलाकातका अवसर देनेका निवेदन करने जा रहा हूँ। यह कोई मजाककी बात नहीं है। मै तो अपने विरोधियोसे बराबर कहता रहा हूँ वे मुझे मिलनेका अवसर दें। इस तरह मुझे अपनी स्थिति समझानेका मौका मिल सकता है। मै यह पता करने जा रहा हूँ कि ऐसे कौन-से लोग है जो मेरे भी मित्र हैं और श्री चर्चिलके भी। मै उनके ऐसे ही किसी मित्रके माध्यमसे उनसे सम्पर्क स्थापित करनेकी कोशिश करूँगा।

मैं तो सुलह-शान्ति स्थापित करनेके लिए कटिबद्ध होकर ही यहाँ आया हूँ। वैसे तो ऐसी शान्ति ईश्वर ही दे सकता है, लेकिन इस दिशामें जो-कुछ करना सहायक हो सकता है, उसे करनेसे मै बाज नही आऊँगा।[1]

एक विख्यात अमेरिकी एजेंसीके एक प्रतिनिधिने आशान्वित स्वरमें पूछा: "क्या ऐसी कोई सम्भावना है कि आप स्वदेश लौटते समय अमेरिकाके रास्ते जायें?"

नही, अमेरिकाको मेरी जरूरत नही है। अमेरिका अभी मेरा स्वागत करनेको तैयार नही है। 'मेरा' से मेरा मतलब है मेरे सन्देशका। मेरे मित्रोंने मुझे वहाँ न जानेकी सलाह दी है और मेरे अन्दर भी कही कोई कह रहा है कि उनकी सलाह ठीक ही है। सम्भव है, वे मुझे लेकर काफी हो-हल्ला करें और मुझे बहुत-सी सभाओमे भी बुलायें, लेकिन अन्तमें इससे कुछ बननेवाला नही है। मै भारतमे अपना काम करके ही अमेरिकाको अपना सन्देश सबसे अच्छी तरह दे रहा हूँ। साथ ही ऐसी बहुत-सी बाते हो रही है जिनसे पता चलता है कि अमेरिकावाले मेरे काममे रुचि ले रहे है। वहाँसे सैकडो पत्र मेरे पास आते है। हो सकता है कि वे केवल मेरे हस्ताक्षर लेनेके बहाने-भर हो, लेकिन मेरे काममें उनकी रुचि तो है ही।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, १४-९-१९३१ और बॉरोज ऑफ़ पॉपलर ऐंड स्टेपनी ईस्ट लन्दन ऐडवर्टाइजर, १९-९-१९३१

१. यहाँ तकका अंश **मैंचेस्टर गार्डियन** से लिया गया है और शेष **बॉरोज़ ऑफ़ पॉपलर ऐंड स्टेपनी ईस्ट लन्दन ऐडवर्टाइज़र** से।

६. अमेरिकाके लिए प्रसारित वार्त्ता[1]

१३ सितम्बर, १९३१

मेरे विचारसे, भारतीय परिषद् (इडियन काफरेन्स)के जो परिणाम होगे उनका प्रभाव भारत पर-ही नही, सारे ससार पर पडेगा। भारत अपने-आपमे लगभग एक महादेश है। मानव-जातिका पाँचवाँ हिस्सा यही बसता है। इसकी सभ्यता ससारकी प्राचीनतम सभ्यताओमे से है। इसकी परम्पराएँ हजारो-हजार वर्ष पुरानी है, और दुनिया यह देखकर दग है कि इनमे से कुछ तो आज भी अपने मूल रूपमे ज्यो-की-त्यो बनी हुई है। इसमे सन्देह नही कि कालके थपेडोने अन्य अनेक संस्कृतियो और सस्थाओकी तरह इस सभ्यताके भी विशुद्ध रूपको बदला है, प्रभावित किया है।

यदि भारतको अपने सुदूर अतीतके वैभवको स्थायित्व प्रदान करना है तो वह स्वतन्त्रता प्राप्त करके ही ऐसा कर सकता है। हमारे सघर्षकी ओर सारी दुनियाका ध्यान गया है। इसका कारण यह नही है कि हम भारतीय अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए लड रहे है। वास्तवमे इसका कारण यह है कि हमने उस स्वतन्त्रताको प्राप्त करनेके लिए जो उपाय अपनाये है वे अनुपम है, और, जहाँतक इतिहाससे मालूम होता है, उन्हे ऐसी किसी भी जातिने नही अपनाया है, जिसका कोई विवरण उपलब्ध है।

हमने जो उपाय अपनाये है वे हिंसाके या रक्तपातके उपाय नही है, और न वे उस अर्थमे कूटनीतिक उपाय है, जो अर्थ इस शब्दका आजकल लगाया जाता है। वे उपाय तो विशुद्ध सत्य और अहिंसा है। फिर कोई आश्चर्य नही कि सफल और शान्तिपूर्ण क्रान्ति सम्पन्न करनेके इस प्रयत्नकी ओर दुनियाका ध्यान खिच गया है। आज तक तो राष्ट्र आपसमे पशुओकी तरह ही जूझते रहे है। उन्होने जिन्हे अपना शत्रु माना है उनसे जी-भरकर बदला लिया है।

बडे-बडे राष्ट्रो द्वारा अपनाये गये राष्ट्रगानो पर ध्यान देते है तो हम पाते है कि उनमे तथाकथित शत्रुके अमगलकी कामना की गई है। उनमे उन्होने अपने शत्रुओंका नाश कर देनेकी प्रतिज्ञा की है और यहाँ तक कि इस सबमे ईश्वरका नाम जोडने और उससे सहायता देनेकी प्रार्थना करनेमे भी कोई संकोच नही किया है। हम भारतवालो ने इस तरीकेको बदल दिया है। हमे लगता है कि जिस नियमसे पशु-जगत् संचालित होता है उस पर मानव-जगत्को नही चलना चाहिए। वह नियम मानवीय गरिमाके विरुद्ध है।

१. यह प्रसारण कोलम्बिया ब्रॉडकास्टिंग सर्विस पर किंग्सले हॉलसे किया गया था। फिशर कृत **लाइफ ऑफ़ महात्मा गांधी** के अनुसार गांधीजी ने अपना यह अलिखित भाषण प्रारम्भ करनेसे पहले कहा था· "क्या मुझे उसमें बोलना है?" भाषण समाप्त होनेके बाद उन्होंने कहा था: "अच्छा तो अब भाषण समाप्त हुआ।" इसे रेडियो सुननेवाले लाखों लोगोंने भी सुना था।

खुद मैं तो रक्तपात करके देशकी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी अपेक्षा आवश्यकता होने पर युगो तक उसकी प्रतीक्षा करते रहनेके लिए तैयार हूँ। अपने प्राय. पैंतीस वर्षोंके सतत राजनीतिक अनुभवोंके बाद मेरा अन्तर्मन तो मुझसे यही कहता है कि ससार रक्तपातसे बिलकुल तग आ गया है। वह अपने उद्धारका कोई रास्ता ढूँढ रहा है और मैं अपने मनमे यह सुखद विश्वास लेकर चल रहा हूँ कि शायद नये रास्तेके लिए व्याकुल ससारको वह रास्ता दिखानेका गौरव-पद इस प्राचीन देश भारतको ही प्राप्त होगा।

इसलिए दुनियाके तमाम बड़े राष्ट्रोको इस महान् सघर्षमे भारतके साथ हार्दिक सहयोग करनेके लिए मैं निस्सकोच आमन्त्रित करता हूँ। करोडो लोग अपने राष्ट्रको उचित गरिमा और सम्मानका पद दिलानेके लिए प्रतिशोधस्वरूप अपने हाथ उठाये बिना कष्ट-सहन कर रहे है—यह दृश्य वास्तवमे देखने और अपनी स्मृतिमे प्यारसे सँजो रखने लायक होगा।

मैंने कष्ट-सहनको आत्मशुद्धिकी प्रक्रिया कहा है। मेरा यह निश्चित मत है कि यदि कोई अपनी स्वतन्त्रता गँवाता है तो अपनी कमजोरीके कारण ही। हममें क्या दोष है, यह मैं जानता हूँ और उनपर मेरा मन दुःखी होता है। भारतमें दुनियाके सभी प्रमुख धर्मोके लोग बसते है और बड़ी लज्जाके साथ हमे यह स्वीकार करना पडता है कि हम आपसमे ही बँटे हुए.है, हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरेकी जानके ग्राहक बने हुए है। यह और भी लज्जाका विषय है कि हम हिन्दू लोग अपने कई करोड भाइयोको इतना पतित मानते है कि उनका स्पर्श भी नही करना चाहते। मै तथाकथित 'अस्पृश्यो'की बात कह रहा हूँ।

जो राष्ट्र स्वतन्त्र होनेके लिए प्रयत्नशील हो, उसके लिए ये छोटी कमजोरियाँ नही है। आप देखेंगे कि आत्मशुद्धिके बल पर किये जा रहे इस सघर्षमे अस्पृश्यताके अभिशापके निवारण और भारतके विभिन्न धर्मावलम्बी तमाम वर्गो और समुदायोंके बीच एकताकी स्थापनाको हमने अपने ध्येयका एक प्रमुख अग बनाया है।[१]

इसी दृष्टिसे हम अपने देशसे मद्यपानके अभिशापको भी दूर करनेका प्रयत्न कर रहे है। हमारे लिए सौभाग्यकी बात है कि शराब और मादक द्रव्योका सेवन हमारे यहाँ बहुत कम लोग — मुख्यत. कारखानोमें काम करनेवाले मजदूर और ऐसे ही कुछ अन्य लोग — करते है।

हमारे लिए यह भी सौभाग्यका विषय है कि हमारे देशमे शराब और मादक द्रव्योके सेवनको सचमुच एक अभिशाप माना जाता है। फिर भी, इसमें सन्देह नही कि अपने समाजसे इस बुराईको दूर करनेकी हमारी यह लड़ाई बहुत कठिन है।

मुझे यह कहते हुए दु.ख—सचमुच बहुत दु.ख—हो रहा है कि वर्तमान सरकार ने इस बुराईको राजस्वका एक प्रमुख साधन बना लिया है। इससे प्रतिवर्ष लगभग पचीस करोड रुपये प्राप्त होते है। लेकिन, मुझे यह कहते हुए हर्षका अनुभव हो रहा है कि भारतकी स्त्रियोने अपने-आपको अवसरके उपयुक्त सिद्ध किया है। वे

१. यहाँ मूलमें तीन शब्द म्यूरियल लेस्टर कृत **एंटरटेनिंग गांधी** नामक पुस्तकसे लिये गये हैं।

शान्तिपूर्ण तरीकेसे इस बुराईको दूर करनेका प्रयत्न कर रही है। उनका तरीका यह है कि वे शराबी लोगोसे शराब छोड देनेके लिए पूरी उत्कटतासे अनुनय-विनय करती हैं और इसी तरह वे शराब-विक्रेताओसे भी शराब न बेचनेका अनुरोध करती है। जो लोग इन दो कुटेवोके शिकार है, उनपर इस सबका काफी असर हुआ है।

काश कि मै अभी यह कह पाता कि कमसे-कम इस एक काममे हमे शासकोका हार्दिक सहयोग मिल रहा है। सरकार कोई कानून न भी बनाती और सिर्फ हमे अपना सहयोग देती तो मै कहनेका साहस करता हूँ कि हमने इस सुधारको सम्पन्न कर दिखाया होता और अपने इस दु.खी देशसे शराब और मादक द्रव्योका नामोनिशान मिटा दिया होता।

एक ऐसी शक्ति भी है जिसका अपना रचनात्मक महत्त्व है और जिसे राष्ट्रने इस सघर्षके दौरान प्रकट किया है। १,९०० मील लम्बे और १,५०० मील चौडे इस देशमे बिखरे ७,००,००० गाँवोमे रहनेवाले करोडों अर्धवुभुक्षित मानवोके लिए हम जो इतनी अधिक चिन्ता कर रहे है वह इसी शक्तिका रूप है। यह बड़े दु.खका विषय है कि ये सीधे-सादे ग्रामीण लोग वर्षके लगभग छः महीने बेकार रहते है और इसमे उनका अपना कोई कसूर नही होता।

यह बात बहुत पुरानी नही है कि इस देशका प्रत्येक गाँव दो मानवीय आवश्यकताओ, भोजन और वस्त्रके मामलेमे आत्म-निर्भर हुआ करता था। लेकिन हमारा दुर्भाग्य कहिए कि ईस्ट इडिया कम्पनीने उस पूरक धन्धेको और यहाँके लाखो कतैयोको समाप्त कर दिया। ये वही कतैये थे जो इतना बारीक सूत निकालते थे जितना बारीक सूत आज तक कोई आधुनिक यन्त्र भी नही निकाल पाया है और जो अपनी कुशल अँगुलियोके कौशलके कारण सारी दुनियामे विख्यात थे। कम्पनीने यह सब कैसे किया, इस विषय पर चुप रहना ही अच्छा होगा। लेकिन इसका परिणाम यह हुआ कि एक दिन इन ग्रामवासी कतैयोने पाया कि उनका वह नेक धन्धा तो समाप्त हो चुका है। तबसे भारत उत्तरोत्तर अधिकाधिक गरीब होता गया है।

कोई इस चीजके खिलाफ चाहे जो दलील दे, लेकिन यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि ईस्ट इडिया कम्पनीके भारत-आगमनसे पूर्व ये ग्रामवासी बेकार नही थे, और आज जो भी चाहे जाकर देख ले कि वे बेरोजगार है। इसलिए इस बातको समझने मे किसी विशेष प्रयत्न या जाँच-पडतालकी जरूरत नही थी कि यदि वे वर्षके छः महीने काम नही कर सकेगे तो उन्हे भूखो ही रहना पडेगा।

तब क्या मुझे इन करोड़ो अर्ध-वुभुक्षित मानवोकी ओरसे दुनियासे यह अनुरोध करनेका अधिकार नही है कि वह स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए व्याकुल इस जातिके त्राणके लिए आगे आये?

[अग्रेजीसे]

न्यूयॉर्क टाइम्स, १४-९-१९३१

७. किंग्सले हॉलमें प्रवचन

१३ सितम्बर, १९३१

उन्होंने कहा कि यदि हम ईश्वरमें विश्वास करते हैं तो स्वाभाविक है कि उससे प्रार्थना करें। कहते हैं, शरीरके लिए जितनी महत्त्वपूर्ण खुराक है, आत्माके लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण प्रार्थना है। यद्यपि यह कथन सच है, किन्तु प्रार्थना आत्माके लिए उससे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है जितनी कि खुराक शरीरके लिए है। कारण यह है कि हम कभी-कभी भोजन किये बिना भी रह सकते हैं और उससे शरीरको अच्छा ही महसूस होगा, लेकिन प्रार्थनाके बिना रहनेकी बात तो सोची ही नहीं जा सकती। उन्होंने कहा :

भोजन करनेमें हम ज्यादती भी कर सकते हैं, लेकिन प्रार्थना चाहे जितनी करें, वह अधिक नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]

न्यूज़ क्रॉनिकल, १४-९-१९३१

८. सन्देश : 'टाइम्स' को

[१४ सितम्बर, १९३१के पूर्व]

मैं शान्ति-स्थापनाके जिस प्रयोजनको लेकर इंग्लैंड आया हूँ, उसमें मैं प्रत्येक अंग्रेज स्त्री और पुरुषकी सद्भावना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स, १४-९-१९३१

९. पत्र : लॉर्ड इर्विनको

१४ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

कलसे मैं काममें जुट जाऊँगा। मैं जो-कुछ भी कर रहा हूँ और करूँगा, सबमें आपका और आपके साथ हुई बातचीतका[1] खयाल बना हुआ है और बना रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

हैलिफैक्स, पृष्ठ ३१६-७

१. गांधीजी और लॉर्ड इर्विनमें हुई इस बातचीतके विवरणके लिए देखिए खण्ड ४५।

१०. भेंट: 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

लन्दन
१४ सितम्बर, १९३१

'क्रॉनिकल' के लिए दी गई एक खास भेंटके दौरान आज महात्माजी ने कई प्रश्नोंके उत्तर दिये। प्रतिनिधिने उनसे पूछा कि क्या संघ-संरचना समितिकी सोमवारकी बैठकमें लॉर्ड सैंकेने समितिके विचारार्थ सरकारकी नई योजनाकी घोषणा की थी और क्या महात्माजी को ऐसा लगता है कि कांग्रेस ऐसी किसी योजनाको स्वीकार करेगी जो उस चीजसे कम पड़ती हो जिसे उसने दिल्ली समझौतेकी पुष्टि करके स्वीकार किया है। इसपर गांधीजी ने कहा:

लॉर्ड सैंकी जो योजना पेश करना चाहते हैं, उसके पेश किये जानेसे पहले ही उस पर कुछ कहना मेरे लिए मुनासिब नहीं होगा।

प्र० – संघ-शासनकी योजनाके अनुसार तो संघमें ऐसी अलग-अलग इकाइयाँ शामिल रहेंगी जिनमें से कुछमें ब्रिटिश भारतमें प्रचलित शासन-प्रणाली लागू रहेगी और कुछमें देशी राज्योंमें प्रचलित शासन-प्रणाली। फिर क्या आप ऐसा मानते हैं कि इस योजनाके अधीन लोकतन्त्र और निरंकुश तन्त्रमें सामंजस्य बैठा पाना सम्भव होगा?

उ० – दोनो ओर से समझौतेकी भावना हो तो यह मुझे कोई कठिन तो नहीं लगता।

प्र० – गोलमेज परिषद्में देशी राज्योंकी जनताका प्रतिनिधित्व तो हो नहीं रहा है। इस हालतमें क्या आप ऐसा समझते हैं कि कांग्रेस देशी राजाओंको अपने-अपने राज्योंमें लोकतान्त्रिक शासन-पद्धति स्वीकार करनेके लिए मजबूर कर सकती है?

उ० – राजा लोग कर तो सकते हैं बहुत-कुछ, लेकिन वास्तवमें वे करेंगे क्या, यह मैं नहीं कह सकता।

प्र० – परिषद्में राष्ट्रवादी मुसलमानोंका कोई प्रतिनिधि शामिल नहीं है। इस स्थितिमें क्या आप ऐसा मानते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर किसी भी हद तक सफलतापूर्वक विचार किया जा सकता है?

उ० – यह काम अगर लगभग असम्भव नहीं तो कठिन तो होगा ही। लेकिन मुझे बराबर यही लगता है कि डॉ० अन्सारीके प्रतिनिधि चुने जानेमें चाहे जो-कोई भी बाधक हुआ हो, उसने भयकर भूल की है।

प्र० – तीनों दलोंकी राष्ट्रीय सरकारने हाल ही में ऐसी घोषणा की है कि भारतीय मामलेके सम्बन्धमें ब्रिटिश नीतिमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। इस घोषणाको

ध्यानमें रखते हुए भी क्या आप यह सोचते हैं कि बाह्य परिस्थितियाँ ऐसी हैं जिनसे यह आशा की जा सकती है कि भारत कराची प्रस्तावके अनुसार औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त कर लेगा?

उ० — इस सवालमें दो गलतियाँ जान पड़ती हैं। आप समझते हैं कि मैं जो तमाम प्रतिकूल परिस्थितियोंके बावजूद आशा लगाये हुए हूँ उसका कारण बाह्य परिस्थितियाँ हैं। लेकिन वास्तवमें मैंने बम्बईमें जो-कुछ कहा और अपने जिस कथनमें मुझे अब भी कोई परिवर्तन करनेका कारण नहीं दिखाई देता वह यह था कि यद्यपि आशा रखनेका कोई आसार नजर नहीं आ रहा है, फिर भी एक जन्मजात आशावादी होनेके नाते मैं प्रतिकूल परिस्थितियोंमें भी आशा नहीं छोड़ सकता। आशाके लिए कोई कारण, कोई आधार नहीं होता। यह तो अपने उद्देश्यकी सचाई और साधनोंकी शुद्धता पर निर्भर है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-९-१९३१

११. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन

१५ सितम्बर, १९३१

मैं इसे प्रतिक्रियावादी मानता हूँ। इस तरहके विधेयकसे उन लोगोंको चिन्ता होना स्वाभाविक है जो यह आशा और विश्वास रखते हैं कि गोलमेज परिषद्‌के परिणामस्वरूप निश्चय ही सत्ता भारतकी जनताके हाथोंमें आ जायेगी।

इसलिए मुझे भरोसा है कि सरकार तनिक सोच-विचार करने पर इस विधेयकको वापस ले लेगी, और कमसे-कम केन्द्रीय विधान सभाके सदस्य तो इसका विरोध करेंगे ही।[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-९-१९३१

१. गांधीजी ने यह वक्तव्य प्रेस विधेयककी व्यवस्थाओंको पढ़नेके बाद दिया था। कहनेको इसका उद्देश्य मार-काट या हिंसाकी वृत्तिको भड़कानेवाले लेखोंका प्रकाशन रोकना था, किन्तु वास्तवमें इसके लागू हो जाने पर अखबारोंका मुँह ही बन्द हो जाता।

२. ३ अक्टूबर, १९३१ को केन्द्रीय विधान सभाने इसे २४ के मुकाबले ५५ मतोंसे पास कर दिया।

१२. भाषण : संघ-संरचना समितिके समक्ष[1]

लन्दन
१५ सितम्बर, १९३१

लॉर्ड चान्सलर महोदय, महाराजागण और मित्रो,

प्रारभमे ही मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसकी स्थितिको आपके सामने रखते हुए मुझे वडा अटपटा लग रहा है। मै यह बता देना चाहूँगा कि मै जो इस समितिमे और यथासमय गोलमेज परिषद्मे शामिल होनेके लिए लन्दन आया हूँ सो अपने मनमे यही भावना लेकर आया हूँ कि आप सबके साथ पूरा सहयोग करूँगा और इस बातकी भरसक कोशिश करूँगा कि हमारे बीच अधिकसे-अधिक बातोपर सहमति हो सके। मै महामहिमकी सरकारको इस बातके लिए भी आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि मै किसी भी अवस्थामे अधिकारियोको किसी परेशानीमे नही डालना चाहता और न चाहूँगा। मै यहाँ एकत्र अपने सहयोगियोको भी यही आश्वासन देना चाहता हूँ — हमारे बीच चाहे जितने मतभेद

१. गोलमेज परिषद्का दूसरा अधिवेशन ७ सितम्बरसे १ दिसम्बर, १९३१ तक चला। इसमें कुल ११२ प्रतिनिधि शामिल हुए थे — २० ब्रिटिश सरकारके, २३ देशी राज्योंके और ६९ ब्रिटिश भारतके। गाधीजी दूसरे अधिवेशनमें काग्रेसके एकमात्र प्रतिनिधिके रूपमें शामिल हुए थे। प्रधान मन्त्री रैम्जे मैकडॉनल्ड परिषद्के अध्यक्ष थे। दूसरे अधिवेशनका आरम्भ परिषद्के सभी सदस्योंकी बैठकसे नही हुआ। संघ-सरचना समितिकी बैठक दुबारा ७ सितम्बरको शुरू हुई और अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी २८ सितम्बरको। इसके बाद २८ नवम्बरको फिर पूर्णाधिवेशन प्रारम्भ हुआ। परिषद्की दूसरी समितियोंकी बैठक दुबारा नही हुई।

संघ-संरचना समितिकी अध्यक्षता लार्ड सेकीने की और उसे जिन विषयों पर विचार करना था वे इस प्रकार थे :

१. संघीय विधानमण्डलमें कितने सदस्य हों और उसका गठन कैसा हो।
२. संघीय विधानमण्डलके सदस्योंके निर्वाचनसे सम्बन्धित प्रश्न।
३. संघीय विधानमण्डलके दोनों सदनोंके आपसी सम्बन्ध।
४. संघ तथा उसके घटकोंके बीच वित्तीय साधनोंका बँटवारा।
५. मन्त्रिमण्डल और विधानमण्डलसे उसके सम्बन्ध।
६. संघीय तथा प्रान्तीय विधानमण्डलोंके बीच विधायक अधिकारोंका बँटवारा और संघीय विषयोंके सम्बन्धमें कानून बनानेका देशी राज्यों पर प्रभाव।
७. संघीय सरकार, देशी राज्यो और प्रान्तोके बीचके प्रशासनिक सम्बन्ध।
८. संघीय न्यायालय।

समिति पहले चार और फिर आठवें विषय पर ही अपनी रिपोर्ट दे पाई। अल्पसख्यक समस्या समितिमें कोई सहमति नही हो सकी।

हो, मैं उनके मार्गमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं डालूँगा। इसलिए यहाँ मेरी स्थिति पूर्ण रूपसे आपकी और महामहिमकी सरकारकी सद्भावनापर निर्भर है। यदि किसी अवस्थामें मुझे लगा कि मुझसे परिषद्को कोई लाभ नहीं होनेवाला है तो मैं उससे अलग हो जानेमें कोई संकोच नहीं करूँगा। जिन लोगोंके जिम्मे इस समिति और परिषद्की व्यवस्थाका भार है, उनसे भी मैं कह सकता हूँ कि वे मुझे संकेत-भर कर देंगे तो मैं स्वेच्छया इस सारी कार्यवाहीसे अलग हो जाऊँगा।

मुझे ये सब बातें इसलिए कहनी पड़ रही हैं कि मैं जानता हूँ, कांग्रेस तथा सरकारके बीच बुनियादी मतभेद हैं, और सम्भव है, मेरे और मेरे सहयोगियोंके बीच भी कोई बड़े मतभेद हों। इसके अलावा मैं एक मर्यादाके भीतर ही काम कर सकूँगा — मैं तो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ओरसे काम करनेवाला एक मामूली और अदना-सा एजेंट-भर हूँ। और यहाँ यदि हम एक बार फिर इस बातका स्मरण कर लें कि कांग्रेस क्या है और उसका उद्देश्य क्या है तो यह ज्यादा अच्छा रहेगा। उस हालतमें आप शायद मुझे अपनी सहानुभूति दे सकेंगे, क्योंकि मैं जानता हूँ कि मेरे सिर पर जो जिम्मेदारी आ पड़ी है, वह बहुत भारी है। यदि मैं गलती नहीं करता तो कहूँगा कि कांग्रेस भारतका सबसे पुराना राजनीतिक संगठन है। यह लगभग ५० वर्ष पुरानी है और इस कालमें यह बिना किसी व्याघातके हर साल अपना अधिवेशन करती आई है। यह संस्था अपने नामके अनुरूप एक राष्ट्रीय संस्था है। यह किसी विशेष समुदाय, अथवा वर्ग या हितका प्रतिनिधित्व नहीं करती। इसका दावा है कि यह भारतके समस्त हितों और सभी वर्गोंका प्रतिनिधित्व करती है। मुझे यह बताते हुए अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है कि कांग्रेसकी स्थापनाकी बात सबसे पहले एक अंग्रेजके मनमें उठी। वे अंग्रेज सज्जन थे एलन ऑक्टैवियस ह्यूम, जिन्हें हम कांग्रेसका जनक कहते थे। उस संस्थाके पालन-पोषणका श्रेय दो पारसियोंको प्राप्त है। एक तो थे फीरोजशाह मेहता। दूसरे थे दादाभाई नौरोजी, जिन्हें सारा भारत सहर्ष अपना बुजुर्ग नेता कहा करता था। प्रारम्भसे ही इस संस्थामें मुसलमानों, ईसाइयों, ऐंग्लो-इंडियनों, बल्कि कह सकता हूँ कि सभी धर्मों और सम्प्रदायोंको न्यूनाधिक यथेष्ट प्रतिनिधित्व प्राप्त रहा है। स्वर्गीय बदरुद्दीन तैयबजीने तो कांग्रेसके साथ अपनेको एकाकार ही कर दिया था। कांग्रेसके अध्यक्ष मुसलमान भी हुए हैं और पारसी तो हुए ही हैं। और इस समय मुझे कमसे-कम एक भारतीय ईसाईका भी नाम याद आ रहा है। मेरा मतलब डब्ल्यू० सी० बनर्जीसे है। फिर, कालिचरण बनर्जी थे, जिनका कांग्रेससे अटूट सम्बन्ध था और जिनसे अधिक सच्चे भारतीयके दर्शन करनेका सौभाग्य मुझे कभी नहीं मिला। अभी मुझे श्री के० टी० पालकी अनुपस्थिति बहुत खल रही है और मुझे विश्वास है कि आप सबको भी खल रही होगी। वैसे, मुझे ठीक-ठीक तो मालूम नहीं है, लेकिन जहाँतक मालूम है उसके आधारपर कह सकता हूँ कि यद्यपि वे औपचारिक रूपसे कभी कांग्रेसके सदस्य नहीं रहे, लेकिन वे पक्के राष्ट्रवादी थे। आज हमें अपने बीच स्वर्गीय मौलाना मुहम्मद अलीकी भी कमी उतनी ही खल रही है, और आप जानते ही

है कि वे भी कांग्रेसके अध्यक्ष थे। इस समय कांग्रेस कार्य-समितिके १५ सदस्योंमें से ४ मुसलमान हैं। महिलाओंने भी कांग्रेसके अध्यक्ष-पदको सुशोभित किया है। एक तो थीं डॉ० एनी बेसेंट और उनके बाद हुईं श्रीमती सरोजिनी नायडू। वे इस समय कार्य-समितिकी सदस्या भी हैं। इस प्रकार आप देख सकते हैं कि कांग्रेसमें वर्ग या धर्मका कोई अन्तर नहीं किया गया है और न स्त्री-पुरुषका ही कोई भेद बरता गया है।

अपने स्थापना-कालसे ही कांग्रेस तथाकथित 'अस्पृश्यों' के लिए काम करती आई है। एक समय ऐसा था जब कांग्रेस अपने प्रत्येक वार्षिक अधिवेशनके साथ एक सामाजिक कांफरेंसका भी आयोजन किया करती थी। यह कांफरेंस कांग्रेसका एक अभिन्न अंग थी और स्वर्गीय रानडेने अपनी अन्य प्रवृत्तियोंके साथ-साथ इस कांफरेंसके काममें भी अपनी पूरी शक्ति लगा दी थी। आप देखेंगे कि उनके नेतृत्वमें सामाजिक कांफ्रेंसके कार्यक्रममें अस्पृश्यता-निवारणको एक प्रमुख स्थान दिया गया था। लेकिन १९२०में कांग्रेसने इस दिशामें एक बड़ा कदम उठाया और अस्पृश्यता-निवारणके प्रश्नको अपने राजनीतिक कार्यक्रमका एक महत्त्वपूर्ण अंग बना लिया। जिस प्रकार कांग्रेसने हिन्दू-मुस्लिम एकताको — हिन्दू-मुस्लिम एकतासे उसका तात्पर्य सभी वर्गोंकी एकतासे रहा है — स्वराज्य-प्राप्तिके लिए अनिवार्य माना, उसी प्रकार उसने अस्पृश्यताके अभिशापके निवारणको भी पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेकी एक अनिवार्य शर्त माना। कांग्रेसने जो स्थिति १९२० में अपनाई वह आज भी कायम है। इस तरह आप देख सकते हैं कि कांग्रेस अपने नामके साथ जुड़े राष्ट्रीय विशेषणको सच्चे अर्थोंमें चरितार्थ करनेके लिए प्रारम्भसे ही प्रयत्नशील रही है।

और यदि यहाँ उपस्थित आप महाराजागण मुझे कहनेकी इजाजत दें तो कहूँगा कि बिलकुल प्रारम्भिक अवस्थामें कांग्रेसने आपके हितोंकी रक्षाका भी प्रयत्न किया। मैं इस समितिको यह स्मरण करा दूँ कि कश्मीर और मैसूरके मामलेको उठानेवाले भारतके वे बुजुर्ग नेता दादाभाई नौरोजी ही थे और मैं सम्पूर्ण विनम्रताके साथ यह कहूँगा कि ये दोनों राजघराने दादाभाई नौरोजी तथा कांग्रेसके सत्-प्रयासोंके कुछ कम ऋणी नहीं हैं। सच तो यह है कि देशी राज्योंके घरेलू और आन्तरिक मामलोंमें कोई दस्तन्दाजी करनेसे अपना हाथ रोके रहकर कांग्रेस आज तक भारतके राजाओंकी सेवा करनेकी कोशिश करती रही है।

इसलिए मैं आशा करता हूँ कि मैंने कांग्रेसका यह जो संक्षिप्त परिचय देना ठीक समझा, उसे जान लेनेके बाद यह समिति तथा कांग्रेसके दावोंमें किसी प्रकारकी रुचि रखनेवाले अन्य लोग भी यह समझ सकेंगे कि इसने अपने लिए जो दावा किया है उसका औचित्य साबित करनेकी भी कोशिश की है। मैं जानता हूँ कि यदा-कदा वह अपने दावेको सही साबित करनेमें विफल भी रही है, लेकिन मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि यदि आप उसके इतिहासपर गौर करें तो पायेंगे कि वह अधिक अवसरोंपर सफल ही रही है और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया है, उसकी सफलता बढ़ती गई है और असफलता घटती गई है। सबसे बड़ी बात

तो यह है कि काग्रेस तत्त्वत· उन करोड़ो मूक, अर्धबुभुक्षित मानवोका प्रतिनिधित्व करती है जो भारत-भरमें बिखरे ७,००,००० गाँवोमें बसे हुए हैं — फिर चाहे वे, जिसे ब्रिटिश भारत कहते है, उस हिस्सेके रहनेवाले हो या जिसे भारतके देशी राज्य कहा जाता है, उस क्षेत्रके निवासी हो। ऐसे प्रत्येक हितको, जिसे काग्रेस रक्षणीय मानती है, इन करोड़ो मूक मानवोके हित-साधनमे सहायक होना है, और इसलिए आपको यदा-कदा विभिन्न हितोके बीच ऊपरी तौरपर कुछ टकराव देखनेको मिलता है। लेकिन अगर इन हितोके बीच कोई वास्तविक टकराव हो तो मुझे कांग्रेसकी ओरसे यह कहनेमें कोई हिचक नही है कि उस हालतमें वह इन करोडो मूक मानवोके हित-साधनके लिए बाकी सभी हितोका बलिदान कर देगी। अतएव काग्रेस तत्त्वत· किसानोका सगठन है और वह उत्तरोत्तर किसान-सगठन ही बनती जा रही है। आपको — समितिके भारतीय सदस्योको भी — शायद यह जानकर आश्चर्य होगा कि आज काग्रेस अपने अखिल भारतीय चरखा सघ नामक सगठनके जरिये लगभग २,००० गाँवोकी कोई ५०,००० स्त्रियोको रोजगार दे रही है और इनमे से कदाचित् ५० प्रतिशत मुसलमान है तथा कई हजार स्त्रियाँ 'अस्पृश्य' वर्गकी है। इस प्रकार हमने रचनात्मक कार्यके सहारे इन गाँवोमे प्रवेश किया है। और हम इस बातके लिए प्रयत्नशील है कि ७,००,००० गाँवोमें से प्रत्येक गाँव हमारी इस रचनात्मक प्रवृत्तिकी परिधिमे आ जाये। यह काम अतिमानवीय है, लेकिन यदि इसे मानवीय प्रयत्नोसे सम्पन्न किया जा सकता हो तो आप शीघ्र ही पायेंगे कि काग्रेसने अपनी यह प्रवृत्ति इन तमाम गाँवोमे शुरू कर दी है और वह उन्हे चरखेका सन्देश दे रही है।

मै उम्मीद करता हूँ कि काग्रेसके इस प्रातिनिधिक स्वरूपका परिचय पा लेनेके बाद, आप मुझे दिये गये कांग्रेसके आदेश (मैंडेट)को सुनकर आश्चर्य नही करेंगे। आशा है, वह आदेश आपके कानोको अप्रिय नही लगेगा। आप यह मान सकते हैं कि काग्रेस ऐसा दावा कर रही है जिसे किसी तरह सिद्ध नही किया जा सकता। लेकिन वह दावा जैसा भी है, उसे मै काग्रेसकी ओरसे अधिकसे-अधिक विनम्र ढंगसे, किन्तु साथ ही पूरी दृढताके साथ आपके सामने प्रस्तुत करने जा रहा हूँ। मै अपनी पूरी आस्था और शक्तिसे उस दावेकी पैरवी करने यहाँ आया हूँ। यदि आप मुझे इस बातकी प्रतीति करा दें कि मै जो-कुछ कह रहा हूँ, सचाई उससे उलटी है और काग्रेसका दावा इन करोडो मूक मानवोके हितोके विरुद्ध है तो मैं अपनी बातपर फिरसे विचार करूँगा। यदि कोई मुझे अपना दृष्टिकोण समझा सके तो उसे समझनेको मै बराबर तैयार रहता हूँ, लेकिन इसके बावजूद यदि मुझे कांग्रेसके एजेटके रूपमे ठीक काम करना है तो अपनी सम्मतिमें वैसा परिवर्तन करनेसे पूर्व मुझे अपने काग्रेसके मालिकोसे परामर्श करना होगा।

अब मै काग्रेस द्वारा दिया आदेश-पत्र पढूँगा ताकि आप सब मुझपर लगी मर्यादाओको साफ-साफ समझ सकें। यह है कराची कांग्रेस द्वारा पास किया गया प्रस्ताव :—

> **कार्य-समिति तथा भारत सरकारके बीच हुए अस्थायी समझौतेपर विचार करनेके बाद यह सभा उसकी पुष्टि करती है और यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि कांग्रेसका पूर्ण स्वराज्यका लक्ष्य ज्यों-का-त्यों कायम है। यदि ब्रिटिश सरकारके प्रतिनिधियोंके साथ किसी कांफरेंसमें कांग्रेसके किसी प्रतिनिधि-मण्डलके शामिल होनेका कोई रास्ता खुला रहता है तो वह प्रतिनिधि-मण्डल उसी लक्ष्यकी पूर्तिके लिए काम करेगा और विशेष रूपसे इस बातको ध्यानमें रखकर काम करेगा कि सेना, विदेश-नीति, वित्त और राजस्व तथा अर्थसे सम्बन्धित नीतिपर राष्ट्रका नियन्त्रण स्थापित हो सके; भारत अथवा इंग्लैंडको अपने सिर कौन-कौन-से आर्थिक दायित्व लेने चाहिए, यह तय करनेके लिए एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा भारतमें ब्रिटिश सरकारके आर्थिक सौदोंकी जाँच कराई जा सके; और दोनोंमें से प्रत्येक पक्षको यह साझेदारी अपनी इच्छानुसार समाप्त कर देनेका अधिकार प्राप्त हो सके। लेकिन कांग्रेस प्रतिनिधि-मण्डल इन मुद्दोंमें ऐसे फेर-बदल स्वीकार करनेको स्वतन्त्र होगा जो भारतके हितोंके लिए स्पष्ट रूपसे आवश्यक हों।**

इसके बाद प्रतिनिधिकी नियुक्तिकी बात है।

इस आदेश-पत्रके प्रकाशमे मैंने गोलमेज परिषद् द्वारा नियुक्त अनेक उपसमितियोके अस्थायी निष्कर्षोको यथाशक्ति पूरे ध्यानसे पढनेकी कोशिश की है। मैंने प्रधान मन्त्रीके उस वक्तव्यको भी ध्यानपूर्वक पढा है जिसमे उन्होने महामहिमकी सरकारकी सुविचारित नीति प्रस्तुत की है। वैसे तो मेरे समझनेमे भूल भी हो सकती है, लेकिन जहाँतक मै इस दस्तावेजको समझ पाया हूँ, काग्रेसका जो लक्ष्य और दावा है, उससे यह बहुत पीछे रह जाता है। यह सच है कि मुझे जरूरत पडनेपर काग्रेसके लक्ष्यमे ऐसे फेर-बदल स्वीकार करनेकी छूट दी गई है जो भारतके हितके लिए स्पष्टत: आवश्यक हों, लेकिन ऐसे फेर-बदलको इस आदेश-पत्रमे कही गई बुनियादी बातोंसे तो मेल खाना ही चाहिए।

यहाँ मै आपको दिल्लीमे सरकार तथा कांग्रेसके बीच हुए उस समझौतेकी शर्तोका स्मरण कराना चाहता हूँ जिसे मै एक पवित्र और हर हालतमे पालन किया जाने लायक समझौता मानता हूँ। उस समझौतेमे काग्रेसने सघ-शासनके सिद्धान्तको, इस सिद्धान्तको कि जिम्मेदारी केन्द्रके हाथोंमे हो, स्वीकार किया है और साथ ही यह सिद्धान्त भी मजूर किया है कि भारतके हितोंके लिए जितने जरूरी हों उतने रक्षात्मक पूर्वोपाय भी किये जाने चाहिए।

कल किसी प्रतिनिधिने — मुझे नाम नहीं याद आ रहा कि किस प्रतिनिधिने — एक मुहावरेका प्रयोग किया था, जिसका मुझपर बहुत असर हुआ। उन्होने कहा था, "हम केवल राजनीतिक संविधान नहीं चाहते।" मुझे नहीं मालूम कि उस वाक्यको सुनते ही मेरे मनमे उसका जो अर्थ उभरा, वही अर्थ वक्ताके मनमे भी था

या नही। लेकिन मैंने मनमे तत्काल कहा, इस वाक्यसे एक बहुत अच्छा मुहावरा मेरे हाथ लग गया है। वास्तवमें स्थिति यही है कि काग्रेसको — और व्यक्तिगत रूपसे अपने बारेमे कहूँ तो मुझे भी — किसी ऐसे राजनीतिक सविधान-मात्रसे सन्तोष नही होगा जो देखनेको तो भारतको वह सब-कुछ दे दे जो वह राजनीतिक दृष्टिसे चाह सकता है, किन्तु वास्तवमे कुछ भी न दे। यदि हम पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेको कटिबद्ध है तो वह किसी प्रकारकी अहकारकी भावनाके कारण नही। हम पूर्ण स्वराज्य इसलिए नही चाहते कि दुनियाके सामने कह सके कि देखो, हमने ब्रिटेनवालो से अपने सारे सम्बन्ध तोड लिये। इसके विपरीत आप खुद इस आदेश-पत्रमे ही पाते है कि काग्रेसके मनमें साझेदारी, ब्रिटेनवालो के साथ सम्बन्ध रखनेकी बात है, लेकिन ऐसा सम्बन्ध जैसा दो बिलकुल बराबरके साझीदारोके बीच होता है। एक समय ऐसा था जब मुझे ब्रिटिश प्रजा होने और कहे जानेपर गर्वका अनुभव होता था। अब कई वर्षोसे मैंने अपनेको ब्रिटिश प्रजा कहना बन्द कर दिया है। ब्रिटिश प्रजा कहे जानेसे तो मै एक बागी कहा जाना बेहतर समझूँगा। लेकिन मेरी यह आकाक्षा अवश्य रही है और आज भी है कि मै इस साम्राज्यका नागरिक नही बल्कि राष्ट्रमण्डलका नागरिक बनूँ। सम्भव हो तो किसी साझेदारीकी व्यवस्थाके अधीन — मै उसका और ईश्वरकी मर्जी ऐसी हो तो एक स्थायी साझेदारीकी व्यवस्थाके अधीन — नागरिक बनना चाहता हूँ। किन्तु यह साझेदारी एक राष्ट्र द्वारा दूसरे पर थोपी गई साझेदारी नहीं होनी चाहिए। इसीलिए आप यहाँ देखते है कि काग्रेसकी माँग यह है कि दोनो मे से प्रत्येक पक्षको एक-दूसरेसे अपने सम्बन्ध तोड लेने, साझेदारीसे अलग हो जानेका अधिकार होना चाहिए। इसलिए स्वभावत. इस साझेदारीको अनिवार्य रूपसे दोनोके लिए लाभप्रद होना चाहिए।

एक बात, जो मैंने अन्यत्र भी कही है, यहाँ फिर कहना चाहूँगा। हम जिस समस्या पर विचार करनेके लिए एकत्र हुए है, उसकी दृष्टिसे भले ही वह अप्रासगिक हो, लेकिन मेरे लिए अप्रासगिक नही है। मेरा मतलब इस बातसे है कि मै यह अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि ब्रिटिश राजनयिक आजकल आर्थिक समस्याको हल करनेमें पूरी तरहसे फँसे हुए है। हमे उनसे ऐसी ही आशा भी थी। इसलिए जब मै जहाजसे लन्दन आ रहा था तब स्वभावत. मेरे मनमे यह प्रश्न उठा कि क्या इस समय इस परिषद्का होना ब्रिटेनके मन्त्रियोपर एक बोझ नही होगा, क्या हम खामखाह बीचमे टपक पडनेवाले नहीं माने जायेंगे। लेकिन फिर मैंने मनमे कहा कि हो सकता है, ऐसी बात न हो, हमे ऐसे आदमी न माना जाये। हो सकता है, खुद ब्रिटेनके मन्त्री ही घरेलू मामलेकी दृष्टिसे भी गोलमेज परिषद्की कार्यवाहीको अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानते हो।

हाँ, भारतको तलवारके बलपर भी कब्जेमे रखा जा सकता है। भारतको तलवारके जोरपर अपने कब्जेमें रखनेकी ब्रिटेनकी सामर्थ्यमे मुझे कभी क्षण-भरको भी सन्देह नही हुआ है। लेकिन ग्रेट ब्रिटेनकी समृद्धिमे, उसकी आर्थिक मुक्तिमे कौन सहायक हो सकता है — दासताकी बेडीमे जकडा किन्तु विद्रोही भारत या ब्रिटेनके सुख-दु.खमें

हाथ बँटानेवाला, बुरे दिनोमे उसके कन्धेसे-कन्धा मिलाकर खडा होनेवाला एक सम्मानित साझेदार भारत? हाँ, जरूरत पडी तो अपनी मर्जीसे ब्रिटेनके कन्धेसे-कन्धा मिलाकर वह भारत उसके दुश्मनोके खिलाफ लडनेको भी आयेगा। लेकिन वह लडाई किसी भी जाति अथवा व्यक्तिके शोषणके लिए नहीं होगी—होगी तो जहाँतक हम अनुमान कर सकते है सारे ससारके कल्याणके लिए ही होगी। मै अपने देशके लिए आजादी जरूर चाहता हूँ, लेकिन सच मानिए कि अगर मेरा बस चले तो वह आजादी मै इसलिए नहीं चाहता कि एक ऐसे राष्ट्रका सदस्य होनेके नाते, जिसकी जनसख्या पूरी मानव-जातिका बीस प्रतिशत है, मै दुनियाकी किसी भी अन्य जाति अथवा किसी भी व्यक्तिका शोषण करूँ। यदि मै अपने देशकी वह स्वतन्त्रता चाहता हूँ तो मै तबतक उसका पात्र नहीं हो सकता जबतक कि सबल या दुर्बल दूसरी प्रत्येक जातिके वैसी ही स्वतन्त्रताके उपभोग करनेके अधिकारको मै श्रद्धा और सम्मानकी दृष्टिसे नही देखता।

और इसलिए आपके इस सुन्दर द्वीप-समूहके निकट पहुँचते हुए मैने मनमें सोचा कि हो सकता है, मै ब्रिटिश मन्त्रियोको यह बात समझा सकूँ कि एक महत्त्वपूर्ण साझेदारके रूपमे, शक्तिके बलपर नही बल्कि प्रेमके रेशमी धागेसे आपके देशके साथ बँधा भारत आपके बजटको—केवल एक ही वर्षके लिए नही बल्कि अनेकानेक वर्षोंके लिए—सन्तुलित करनेमे शायद सच्चा सहायक हो सकता है। ये दो महान् राष्ट्र मिल-जुलकर क्या नही कर सकते? एक ओर आपका यह राष्ट्र है—संख्यामे थोड़े किन्तु बहादुर लोगोका राष्ट्र, जिसकी बहादुरीका इतिहास इतना उज्ज्वल है कि उससे अधिक उज्ज्वल इतिहास शायद दुनियाके किसी भी राष्ट्रका नही होगा, जो गुलामीकी बुराईके खिलाफ लडनेके लिए प्रसिद्ध है और जिसने निर्बलोका सरक्षक और सहायक होनेका कमसे-कम दावा तो कितनी ही बार किया है, और दूसरी ओर हमारा यह अत्यन्त प्राचीन राष्ट्र है—करोडो लोगोका यह राष्ट्र, जिसका अपना एक प्राचीन और गरिमामय इतिहास है, जो आज हिन्दू और इस्लाम इन दो महान् संस्कृतियोंका प्रतिनिधित्व करता है, जिसमे अगर आप इजाजत दे तो कहूँ कि ईसाइयोंकी भी एक खासी बडी तादाद है और जरथुस्त्री धर्मके तो सभी अनुयायी, वे शानदार लोग शामिल है, जो सख्यामे नगण्य होते हुए भी परमार्थ-वृत्ति और व्यापारिक साहस-उद्यममे लगभग अद्वितीय है—निश्चय ही पीछे तो किसीसे नही है। हमारे देशमें ये सारी सस्कृतियाँ केन्द्रित है। और मान लीजिए ईश्वर हिन्दुओ और मुसलमानों दोनोंको, जिनके प्रतिनिधि उपस्थित है, सद्बुद्धि दे और वे अपने मतभेद भुलाकर आपसमें एक सम्मानप्रद समझौता कर ले तो फिर आप उस राष्ट्रको और अपने राष्ट्रको एक साथ मिलाकर स्थितिकी कल्पना कीजिए। अब मै एक बार फिर मनमें सोचता हूँ और आपसे पूछता हूँ कि स्वतन्त्र भारत, ग्रेट ब्रिटेनकी ही तरह पूर्ण रूपसे स्वतन्त्र भारत और ग्रेट ब्रिटेनके बीच कायम सम्मानजनक साझेदारी क्या दोनोके लिए लाभ-प्रद सिद्ध नही हो सकती—इस महान् राष्ट्रकी घरेलू समस्याओके समाधानकी दृष्टिसे भी। और अपने मनमे इसी स्वप्न और आशाको सँजोकर मैने ब्रिटिश द्वीप-समूह पर कदम रखा और आगे भी उस स्वप्नको मनमें सँजोये रहूँगा।

और इतना कह देनेके बाद मैं समझता हूँ, मैंने सब-कुछ कह दिया है। अब तफसीलकी बातें आप खुद ही तय कर ले, मुझसे उनके बारेमें ज्यादा कहनेकी आशा न रखें, यह बतानेकी अपेक्षा न करे कि सेनापर नियन्त्रणसे मेरा क्या मतलब है, विदेशी मामलो, वित्त, राजस्व तथा आर्थिक नीतिपर नियन्त्रणका मैं क्या अर्थ लगाता हूँ, या कि आर्थिक सौदोंसे ही मेरा क्या तात्पर्य है। इन आर्थिक सौदोंके बारेमें कल एक मित्रने कहा था कि ये तो ऐसे सौदे है जिनका सम्मान हर हालतमें किया ही जाना चाहिए, ये तो पवित्र सौदे है। मैं ऐसा नही मानता। अगर किसी साझेदारीमें शामिल होनेवाले और उससे अलग होनेवाले साझेदारोके बीच माल-मिल्कियतका हिसाब-किताब होता है तो उनके सौदोंकी जाँच और उनमें आवश्यक हेर-फेर करना जरूरी होता है। इसलिए यदि कांग्रेस यह कहे कि राष्ट्रको इसका पता होना चाहिए कि उसे कौन-सी जिम्मेदारियाँ लेनी चाहिए और कौन-सी नही लेनी चाहिए तो इसके लिए उसे किसी असत्य आचरण या अपराधका दोषी नहीं माना जा सकता। इस लेखा-परीक्षा, इस जाँचकी माँग केवल भारतके ही हकमें नही, बल्कि दोनोके हकमें की जा रही है। मेरा यह निश्चित मत है कि अंग्रेज जनता भारतपर ऐसा कोई बोझ नहीं लादना चाहती जिसे ढोनेकी अपेक्षा उससे औचित्यपूर्वक नही की जा सकती। और मैं कांग्रेसकी ओरसे यह घोषणा करता हूँ कि जिस बोझको ढोना उसके लिए उचित होगा, उससे इनकार करनेकी बात वह कभी नही सोचेगी। यदि हमें एक ऐसे ईमानदार राष्ट्रके रूपमें कायम रहना है जिसकी दुनियामें साख हो तो हम अपना खून-पसीना बहाकर अपने कर्जका एक-एक पैसा चुकायेंगे।

इस आदेश-पत्रकी धाराओंके बारेमे आपको आगे कुछ बताने और इन धाराओ का कांग्रेसी लोग जो अर्थ लगाते है वह अर्थ आपके सामने स्पष्ट करनेकी जरूरत मैं नही समझता। अगर ईश्वरकी यह इच्छा हुई कि मैं इस विचार-विमर्शमें, इन चर्चाओमें भाग लेता रहूँ तो इन चर्चाओंके दौरान ही मैं इन धाराओंके फलितार्थ आपके सामने स्पष्ट कर सकनेकी आशा रखता हूँ। जैसे-जैसे यह विचार-विमर्श आगे चलेगा, मेरे सामने सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंके सम्बन्धमें भी अपनी बात कहनेका अवसर आयेगा ही। लेकिन लॉर्ड चांसलर महोदय, मैं समझता हूँ, इस समय तो आपकी उदारता और अनुग्रहका लाभ उठाकर मैं किंचित् विस्तारसे काफी-कुछ कह चुका हूँ। वास्तवमें मैं आपका इतना अधिक समय नही लेना चाहता था। लेकिन मुझे लगा कि यदि मैं इस अवसरपर भी अपना हृदय खोलकर आपके सामने अपनी चिर-पोषित आकांक्षा न रख दूँ तो मैं उस उद्देश्यके साथ न्याय नही कर पाऊँगा जिसका प्रतिपादन आपके, उप-समितिके आप सदस्योके सामने और हम भारतीय प्रतिनिधियोके मेजवान ब्रिटिश राष्ट्रके सामने करनेके लिए मैं यहाँ आया हूँ। मेरी यही लालसा है कि जब मैं ब्रिटिश द्वीप-समूहसे प्रस्थान करूँ तो मनमें यह विश्वास लेकर करूँ कि ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच समान साझेदारी कायम होनेवाली है। आपके बीच रहते हुए मैं इससे अधिक और क्या कर सकता हूँ कि हृदयसे ईश्वरसे उस स्थितिके साकार होनेकी प्रार्थना करता रहूँ।

लॉर्ड चांसलर महोदय, मैंने लगभग पैंतालीस मिनटका समय ले लिया है, किन्तु आपने मुझे बीचमे न रोककर मुझ पर जो कृपा की है, उसके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। मै इतने अनुग्रहके योग्य नही था और इसलिए एक बार फिर आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृ० ४१-४७

१३. भाषण : लेबर पार्टीके संसद्-सदस्योंकी सभामें[1]

लन्दन

१६ सितम्बर, १९३१

आज शाम श्री गांधीने कामन्स सभाके लेबर पार्टीके सदस्योंके समक्ष भाषण दिया। . . .

अपने भाषणमें उन्होंने बताया कि उन्हें इंग्लैंड इस निर्देशके साथ भेजा गया है कि उन्होंने जो वचन दिया है, उसपर वे दृढ़ रहेंगे। तात्पर्य पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेके वचनसे था। उनके विचारसे भारतकी ग्रामवासी जनताके हितोंके लिए ऐसा स्वराज्य आवश्यक है। इस प्रशासनके कारण और उन लोगोंको जो कर देने पड़ते हैं, उनकी वजहसे वे भूखों मर रहे हैं।

श्री गांधीकी एक बात मजदूर दलीय श्रोताओंको बहुत विशिष्ट मालूम हुई। तात्पर्य उनकी इस दलीलसे है कि मशीनोंको तिलांजलि दे दी जाये और गाँववालों को अपने हाथोसे काम करने दिया जाये। उन्होंने कहा कि यदि कोई ग्रामीण लोगोंसे पूछे कि मैं ही उनका नेतृत्व क्यों करता हूँ तो वह पायेगा कि ऐसा इसलिए है कि वे अपनी आशाओं और आकांक्षाओंको व्यक्त नहीं कर सकते और उन आशाओं और आकांक्षाओंको वाणी मैं देता हूँ।

श्री गांधीने कहा कि मैंने लॉर्ड इर्विनसे वादा किया था कि मैं गोलमेज परिषद्में शरीक होऊँगा। उसी वादेको पूरा करनेके लिए मैं यहाँ आया हूँ। जो बातें 'पूर्ण स्वराज्य' में आती है, वे अगर किन्हीं अन्य शब्दोंमें भी आ जायें तो मैं उन्हें भी उतनी ही तत्परतासे स्वीकार कर लूँगा जितनी तत्परतासे इन शब्दोंको स्वीकार किया है। मैं सार चाहता हूँ, थोथा नाम नहीं। मैंने अपने ऊपर सावधानी बरतनेके

१. यह सभा हाउस ऑफ कामन्सके ग्रैन्ड कमिटी रूममें हुई थी, उपस्थित व्यक्तियोंमें कुमारी म्यूरियल लेस्टर, श्री केन्सवरी, ससद्-सदस्य और जे० एफ० होराबिन, संसद-सदस्य भी थे।

जो-कुछ सामान्य नियम लगा रखे हैं, उन्हें त्यागकर मैं आप लोगोंको अपनी वे भावनाएँ समझाना चाहता हूँ, जो वास्तवमें मेरे करोड़ों देशभाइयोंकी भी भावनाएँ हैं।

उन्होंने पूर्ण स्वराज्य और सेना तथा विदेशी मामलोंपर भारतीयोंके नियन्त्रणकी अपनी माँगें दोहराईं। दूसरे शब्दोंमें, वे भारतके लिए वैसी ही स्वतन्त्रता चाहते हैं जैसी स्वतन्त्रताका उपभोग ग्रेट ब्रिटेन कर रहा है। उन्होंने कहा कि भारत इससे कम किसी भी चीजसे सन्तुष्ट नहीं हो सकता। मुझे अपनी ओरसे कोई समझौता करनेका अधिकार नहीं दिया गया है, यद्यपि इस एक चीजके लिए आश्वस्त कर दिये जानेपर आप मुझे अनेक समझौते करते पायेंगे। लेकिन अगर ऐसा न हुआ तो मैं कोई समझौता नहीं कर पाऊँगा। मैं भारतको दुनियाकी किसी भी जातिके लिए खतरेका कारण बनानेके लिए पूर्ण स्वराज्य नहीं चाहता। यदि मेरा बस चले तो मैं तो ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच सच्ची मित्रता कायम करना चाहता हूँ।

मैं ब्रिटिश शासन और सत्ताके प्रति एक जाना-माना विद्रोही हूँ, लेकिन मेरे हजारों देशभाई उसके प्रति छिपे तौरपर विद्रोहका भाव रखते हैं, क्योंकि जो कष्ट और असुविधाएँ प्रकट विद्रोहीको सहनी पड़ती हैं, उन्हें वे सहन नहीं करना चाहते। मैं चाहता हूँ कि अगर आपके मनमें इससे कोई उलटी धारणा हो, कोई भ्रम हो तो उसे दूर कर लीजिए। लोग यदि ब्रिटिश जुएको अपने कन्धोसे उतार फेंकना और पूर्ण रूपसे स्वाधीन हो जाना चाहते हैं तो उसका कारण यह है कि वे भूखों मरना नहीं चाहते। बाहरी शत्रुओंसे देशके बचावके लिए भारतमें इतनी अधिक सैनिक शक्तिकी आवश्यकता नहीं है। मुझे तो बताया गया है कि अगर दुर्भाग्यवश कोई दूसरी लड़ाई हुई तो वह पहलीसे भिन्न और बहुत अधिक भयंकर होगी। मुझे यह याद दिलानेकी जरूरत नहीं है। हमने तो अब अपनी इन कठिनाइयोंसे अन्तिम बार लड़ लेनेके लिए अपनी कमर कस ली है और मैं चाहता हूँ कि यहाँ उपस्थित लोगोंसे यदि बने तो भारतको उस दुर्दिनसे बचाइए।

अब श्री शिनवेलने कहा कि कोयलेकी खानोंमें काम करनेवाले हजारों भारतीय मजदूर अंग्रेज नहीं, भारतीय खान-मालिकोंके ही अधीन तो काम करते हैं, और मैं देखता हूँ कि मजदूरोंके प्रति भारतीय खान-मालिकोंका रवैया अंग्रेज खान-मालिकोंकी तुलनामें बहुत अधिक प्रतिक्रियावादी और क्रूरतापूर्ण है। तो आप ब्रिटिश शासनके बारेमें जो-कुछ कहते हैं, उसका मेल आप भारतीय उद्योगपतियोंके प्रतिक्रियावादी रवैयेसे कैसे बैठा सकते हैं?

श्री गांधीने कहा कि जब मैं बोल रहा था तो मेरे मनमें कोयलेकी खानों अथवा बम्बई और कलकत्ताके कारखानोंमें काम करनेवाले कुछ हजार मजदूरोंकी समस्या नहीं थी। मैं जमींदारों या मिल-मालिकोंकी वकालत नहीं करता।

मुझे जो-कुछ कहना है, उसका इस बातसे कोई सम्बन्ध नहीं है कि भारतीय उद्योगपति अंग्रेजोंसे अधिक क्रूर हैं या नहीं। मुझे उस तरहके शोषण-अत्याचारके

बारेमें कुछ नहीं कहना है, जो भी कहना है, गाँवोंमें रहनेवाले भारतीयोंके जीवन-स्तरके बारेमें कहना है। मेरी शिकायत तो उस प्रणालीके खिलाफ है, जिसके द्वारा गाँववालों की एक-एक बूँद रक्तका दोहन किया जा रहा है। कोयलेकी खानोंमें काम करनेवाले मजदूर पीड़ित जरूर हैं, लेकिन वे भूखों नहीं मर रहे हैं, और मैं उन लोगोंकी बात कह रहा हूँ जो सचमुच भूखों मर रहे हैं। भारतके चौरासी प्रतिशत लोग गाँवोंमें रहते हैं और मौजूदा व्यवस्थाके द्वारा उनका एक-एक बूँद खून चूसा जा रहा है, और इन लोगोंको सालमें छः महीने अनिवार्य रूपसे बेकार रहना पड़ता है। यदि ब्रिटेनके मजदूर छः महीने बेकार रहें और उन्हें कोई वेतन-भत्ता न मिले तो क्या वे भी भूखों नहीं मरने लगेंगे — विशेषकर तब जब कि उन्हें बेकारीकी अवस्थामें भी सरकारको कर भी देना पड़े?

इसके बाद लंकाशायरके एक सदस्यने श्री गांधीसे पूछा कि वे लंकाशायरके मालके बहिष्कारका औचित्य कैसे ठहराते हैं।

श्री गांधीने कहा कि भारतको लंकाशायर, जापान या इटली अथवा दुनियाके किसी भी हिस्सेमें तैयार सूती वस्त्रोंके बजाय अपने यहाँ तैयार किये सूती वस्त्रोंका प्रयोग करनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। यह बहिष्कार अंग्रेजोंके खिलाफ नहीं है। बाहरसे सूती कपड़े खरीदना आप भारतका कोई कर्त्तव्य तो नहीं मानते? मुझे तो सिर्फ गाँवोंके पक्षका समर्थन करना है और विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारकी सारी योजना उन्हींके हितोंका ख्याल करके बनाई गई है।

यदि हम गाँवों या मिलोंमें अपनी जरूरतका कपड़ा आप ही तैयार कर रहे हैं और केवल उसीका उपयोग कर रहे हैं तो क्या कोई नैतिक अपराध कर रहे हैं? इस तरह हम प्रतिवर्ष साठ करोड़ रुपये सीधे गरीबोंकी जेबोंमें डाल रहे हैं। क्या ऐसा कोई भी नैतिक नियम है जिसके अनुसार मेरे लिए लंकाशायरके कपड़ोंको प्राथमिकता देना लाजिमी हो, ताकि लंकाशायरके उन मजदूरोंका भरण-पोषण हो जो इतने वर्षोंसे उन ग्रामीण लोगोंको दरिद्र बनाये हुए हैं? लंकाशायरका उत्थान भारतके ग्रामीण उद्योग-धन्धोंके ध्वंसावशेषपर हुआ है।

यहाँ सर नॉर्मन एंजेलने पूछा कि भारतीय उद्योगोंको आज जो संरक्षण दिया जा रहा है, क्या उसका परिणाम यही नहीं होगा कि लंकाशायरके मालका स्थान बम्बई और कलकत्ताका माल ले लेगा और यदि बम्बईके उद्योगोंका विकास किया जाता है और भारतका औद्योगीकरण किया जाता है तो क्या गाँवकी सालमें छः महीनेकी बेकारी ज्यों-की-त्यों नहीं रह जायेगी? यह स्थिति तो ब्रिटिश सत्ताकी समाप्तिके बाद भी बनी ही रहेगी।

उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि मैं अपनी सारी शक्ति गाँवोंकी दशा सुधारनेमें लगा रहा हूँ और बहिष्कार आन्दोलन ग्रामीण लोगोंके हकमें ही चलाया जा रहा है। जब उनके सामने सिर्फ अपने यहाँके मिलोंसे ही निबटनेकी समस्या रहेगी तब

वे उससे आसानीसे निबट लेंगे। मिल-मालिकोंने हमसे यह समझौता किया है कि वे ग्रामीण उद्योग-धन्धोंके साथ होड़ नहीं करेंगे। यह ग्रामीण उद्योग बहुत बड़ा उद्योग है। वह २,००० गाँवोंमें चल रहा है और इससे उन गाँवोमें रहनेवाले १,००,००० लोगोंको जीविका मिलती है। आज एक-तिहाई कपड़ा हाथकरघों पर ही बुना जा रहा है, यद्यपि वे मिलोंमें काते सूतका ही उपयोग करते हैं। मैं हाथ-कता सूत चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि अंग्रेज लोग हाथ-कताईके इस यन्त्रको सर्वांगपूर्ण बनानेके लिए मुझे अपने कौशलका लाभ दें। और आपको यह जानकर खुशी होगी कि एक अंग्रेज इंजीनियरने मुझे हाथ-करघेका एक अपेक्षाकृत सरल नमूना दिया है, जिसपर ज्यादा अच्छी तरह बुनाई हो सकेगी। उसके लिए वे मुझसे कुछ ले नहीं रहे हैं, बल्कि अपना वह आविष्कार भेंटके तौरपर दे रहे हैं। यह बहिष्कार आन्दोलन देशी मिलोंके लाभके लिए नहीं है और अगर उन्होंने इसे कुचलनेकी कोशिश की तो खुद ही कुचल जायेंगी।

संसद-सदस्य श्री टाउटने कहा कि श्री गांधीके उत्तरसे तो यही लगता है कि बार-बार जो यह कहा जा रहा है कि बम्बईके मिल-मालिक बहिष्कार आन्दोलनमें आर्थिक सहायता दे रहे है, उसमें कोई सचाई नहीं है।

श्री गांधीने कहा कि बम्बईके मिल-मालिकोंने बेशक सहायता दी है और किसी हदतक उदारतासे दी है, लेकिन आन्दोलनका सारा हिसाब-किताब सबके देखनेके लिए खुला पड़ा है। बहिष्कार आन्दोलनको ग्रामीण लोगोंसे भी सहायता मिली है। यदि वे चाहे तो भारतीय मिलोंका बहिष्कार भी शुरू कर सकते हैं। मैं ग्रामीण उद्योगके एक विशेषज्ञकी हैसियतसे बोल रहा हूँ और मेरा यह दावा है कि अगर किसी भूचालमें बम्बई और कलकत्ताकी सभी मिलें बरबाद हो जायें और सभी बाहरी देश भी भारतको कपड़ा देना बन्द कर दें तो भारत महीने-भरके अन्दर अपने ग्रामीण उद्योगके बलपर देशकी कपड़ेकी सारी जरूरत पूरी कर सकता है।

इसपर एक अन्य मजदूरदलीय सदस्यने पूछा कि अगर दूसरे देश भारतका पटसन और चाय खरीदना बन्द कर दें तो भारत क्या करेगा? अगर भारत लंकाशायरसे कपड़ा नहीं खरीदता तो फिर हम उससे चाय कैसे खरीद सकते हैं?

श्री गांधीने उत्तरमें कहा कि यह तो खरीदने-बेचनेवालेकी मर्जीपर निर्भर है। अगर दुनिया हमारा माल नहीं खरीदना चाहती तो हम भी उसपर उसे जबरदस्ती नहीं थोपना चाहते। हम इन चीजोंका उत्पादन इसलिए करते हैं कि इनकी माँग है, और अगर दूसरे देश इन्हें नहीं खरीदेंगे तो हमें कोई और उद्योग शुरू करना होगा।

कुमारी विल्किसनने पूछा कि वैज्ञानिक आविष्कारोंका लाभ उठानेसे इनकार करना क्या प्रतिक्रियावादी नीति नहीं है, मानव-मेधासे उत्पन्न नई-नई चीजोंका उपयोग न करनेका आग्रह रखनेका परिणाम क्या भारतको सदा गरीब बनाये रखना न होगा?

श्री गांधीने कहा कि मैं तो भारतको यन्त्र-मात्रके प्रयोगसे विमुख करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। हमारे यहाँ ऐसे करोड़ों लोग हैं जो ये सारे काम अपने हाथोंसे कर सकते हैं, और ऐसे यन्त्रोंका प्रयोग करना आत्मघातके समान होगा जिनके सहारे चन्द हजार मजदूरोंके श्रमसे जरूरतका सारा कपड़ा तैयार किया जा सकता हो। मैं मानता हूँ कि जबतक मैं इन लोगोंको कोई और धन्धा देनेकी स्थितिमें नहीं हूँ तब-तक वैसा-कुछ करना अनैतिक होगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, १७-९-१९३१

१४. भेंट : 'टेक्स्टाइल मर्क्युरी' के सम्पादकको

लन्दन
१७ सितम्बर, १९३१

'टेक्स्टाइल मर्क्युरी' के सम्पादकने श्री गांधीको पहलेसे ही सभी प्रश्न लिखकर दे रखे थे। उनके उत्तर देनेसे पहले उन्होंने कहा कि मैं एक सन्देश प्रचारित करना चाहता हूँ और आशा करता हूँ, लंकाशायर सूती वस्त्र-उद्योगमें लगे सभी लोग उसे सहानुभूतिपूर्वक ग्रहण करेंगे और समझेंगे। उन्होंने कहा :

मैं जानता हूँ कि प्रश्न बडा जटिल है, लेकिन अगर दोनो देशोके बीच सद्-भावना कायम हो जाये तो निराश होनेका कोई कारण मुझे दिखाई नही देता। इसकी एक अनिवार्य शर्त यही है कि आज भारतीय पक्षको हानि पहुँचाने और भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके खिलाफ तरह-तरहकी अफवाहे फैलानेके लिए इग्लैडमे जो गन्दा प्रचार चल रहा है, उसका डटकर विरोध करना चाहिए; और ऐसा प्रचार चल रहा है, यह तो बहुत अच्छी तरह सिद्ध किया जा सकता है।

इग्लैडमे रहते हुए यदि मैं गलतफहमियोके सभी कारण दूर कर सकूँ तो इसे मैं अपना सौभाग्य मानूँगा। अगले सप्ताह मैं इसी उद्देश्यसे लंकाशायर जा रहा हूँ। वहाँ मैं अपने मनमे सर्वथा मैत्रीपूर्ण भाव लेकर जाऊँगा। मैं सभीको अपनेसे सवाल-जवाब करनेके लिए आमन्त्रित करूँगा और यह वचन देता हूँ कि मैं सब-कुछ खुले हृदयसे कहूँगा, कोई दुराव नही करूँगा।

प्र० : भारतमें लंकाशायरके कपड़ेके व्यापारके ह्रासका असली कारण क्या है?

उ० : मेरे विचारसे इसका कोई एक नही, बल्कि अनेक कारण है। बेशक, इसका एक कारण बहिष्कार आन्दोलन भी था और है। मुख्य कारण यह है कि जापानने लंकाशायरको मात दे दी। ध्यान रखना चाहिए कि बहिष्कार केवल लकाशायरके

१. सभा समाप्त होने पर किंग्सले हॉल जानेके पूर्व गांधीजी ने वहाँ अपनी प्रार्थना भी की।

सूती वस्त्रोका ही नही, बल्कि तमाम विदेशी सूती वस्त्रोका किया जा रहा है, लेकिन इसके बावजूद जापानने लकाशायरकी तुलनामे बहुत अधिक प्रगति की है। तीसरा कारण तो सार्वभौम है — अर्थात् सभी जगह लोगोकी जीवनके लिए आवश्यक वस्तुएँ खरीदनेकी क्षमता भी कम होती जा रही है। चौथा कारण है भारतीय मिलो द्वारा अधिकाधिक कपडेका उत्पादन, और पाँचवाँ तथा अन्तिम कारण है, भारतके ग्रामीण लोगोके अन्दर अपनी जरूरतका कपडा अपने ही घरोमें तैयार कर लेनेकी बढती हुई इच्छा।

प्र० : क्या लंकाशायरके व्यापारको उखाड़नेके लिए कोई सक्रिय आन्दोलन चल रहा है?

उ० : दिल्ली समझौतेके बादसे तो किसी और विदेशी प्रतिस्पर्धीको तरजीह देकर लकाशायरके व्यापारको उखाडनेके लिए सक्रिय अथवा किसी भी प्रकारका कोई आन्दोलन नही चल रहा है। अलबत्ता देशी कपडेको — चाहे वह मिलका बना हो या हाथका बना — प्राथमिकता देना जारी है।

प्र० : क्या वहाँ जापानी मालको प्राथमिकता दी जाती है? अगर दी जाती है तो क्यों?

उ० : इस समय तो निश्चय ही जापानी मालको कोई प्राथमिकता नहीं दी जा रही है।

प्र० : क्या भारतमें कपड़ेकी खपतकी स्थितिमें कोई परिवर्तन नहीं आया है? यदि कोई कमी आई है तो उसका प्रतिशत क्या है?

उ० : मेरा ख्याल है कि कमी आई है, लेकिन उसे साफ देखा नही जा सकता।

प्र० : लंकाशायर भारतके साथ अपना व्यापार कैसे बढ़ा सकता है? सम्भावनाएँ कैसी हैं? यहाँ सवाल कीमतका है, अथवा स्तर या ब्रिटेन-विरोधी प्रचारका?

उ० : लकाशायर जिस एक उपायसे भारतके साथ अपना व्यापार बढा सकता है, वह मैंने कुछ महीने पहले बताया था।[1] मान लीजिए कि भारतके साथ इग्लैंडका हार्दिक समझौता हो जाता है और भारत देशी मिलोमे और हाथसे जो कपडा तैयार करता है, उससे उसकी जरूरत पूरी नही होती और बाकी कपडे उसे विदेशोसे खरीदने पड़ते हैं। उस हालतमे सभी विदेशी कपडोके मुकाबले लंकाशायरके कपडोको प्राथमिकता दी जायेगी। हाँ, मालके स्तर और कीमतका विचार तो तब भी करना ही पड़ेगा, लेकिन तब वह दोस्ताना तरीकेसे आपसमे तय कर लेनेका मामला होगा।

प्र० : भारत अपनी कपड़ेकी आवश्यकताका कितना प्रतिशत देशमें बने कपड़ेसे ही पूरी कर सकता है? इसमें से कितना मिलोंका बना होता है और कितना हाथ-करघोका?

उ० : मेरे विचारसे तो यदि कुछ थोडी-सी सुविधाएँ मिल जाये तो वह बडी आसानीसे अपने गाँवोमे ही पर्याप्त कपड़ा तैयार कर सकता है और जो-कुछ कमी

१. देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ २५५-६।

रह जायेगी उसे देशी मिलोमे बने कपडेसे पूरा किया जा सकता है। इस समय भारतमे जितने कपड़ेकी खपत उसका एक-तिहाई हाथ-करघो पर तैयार होता है, एक-तिहाई मिलोमे और शेष एक-तिहाई आयात किया जाता है।

'टेक्स्टाइल मर्क्युरी' और उसके माध्यमसे लकाशायरको मेरा यही सन्देश है कि लोग पूर्वाग्रहोके कारण इस सारे प्रश्नको उलझाये नही, बल्कि इसके सभी परिणामो और प्रभावोको ध्यानमे रखकर इसपर विचार करे।

[अग्रेजीसे]
टेक्स्टाइल मर्क्युरी, १८-९-१९३१

१५. भेंट : 'न्यूज क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

लन्दन
[१७ सितम्बर, १९३१][1]

मुझे ईस्ट एड बडा पसन्द है — खासकर सड़कोपर उछलते-कूदते छोटे-छोटे बच्चे। वे बडी आत्मीयतासे मेरा अभिवादन करते है। चालीस वर्ष पहले जब मै लन्दनमे था, उस समयकी स्थितिपर विचार करता हूँ तो पाता हूँ कि सामाजिक परिस्थितियोमे बहुत अधिक परिवर्तन आ गया है। भारतकी गरीबीको देखते हुए तो लन्दनमे कुछ भी गरीबी नही है। यहाँ सडकोसे गुजरते हुए मै हर घरके बाहर बोतल-भर दूध और अन्दर पट्टीनुमा दरी बिछी देखता हूँ और बैठकमे शायद एक पिआनो भी होता है।

भारतमे करोड़ो लोग केवल लँगोटी ही पहनते है। इसीलिए मै भी लँगोटी ही पहनता हूँ। लोग मुझे अर्ध-नग्न कहते है। मै भारतके निर्धनतम लोगोसे अपना तादात्म्य स्थापित करनेके लिए जान-बूझकर ऐसा करता हूँ। लन्दनमे जो चीज मुझे बहुत अच्छी लगती है वह यह है कि यहाँ गरीबो और अमीरोके बीच उतना ज्यादा अन्तर नही है। जब मै रोज रातको मोटरमे बैठकर बो की ओर जाता हूँ तो देखता हूँ कि मै जैसे-जैसे वेस्ट एडसे ईस्ट एडकी ओर बढता हूँ, वैसे-वैसे अमीरी बहुत धीरे-धीरे घटती जाती है और गरीबी बढती जाती है। ऐसा कहना शायद अतिरजित नही होगा कि भारतमे जो जीवन-स्तर अमीरोका है, वह लन्दनमे गरीबोका है।

गोलमेज परिषद्के बारेमें बोलते हुए श्री गांधीने कहा :

जो स्थिति है, उससे मै बहुत चिन्तित हूँ। हम बहुत ही कम प्रगति कर पा रहे है। हम पाँच दिनसे यहाँ है और इतने समयमे हम जो-कुछ कर पाये है वह

१. साधन-सूत्रमें तिथि नहीं दी गई है। लेकिन संवाददाता कहता है कि गांधीजी से उसने 'कल' मुलाकात की। यदि उसने यह भेंट-वार्ता १८ को तैयार की हो तो भेंट १७ को ही हुई होगी।

चार-पाँच घंटेमे ही किया जा सकता था। सरकारने तो बिलकुल चुप्पीका रुख अपना लिया है। वह कुछ भी कहनेमें इतनी सावधानी बरतती है कि उसकी स्थिति क्या है, कुछ पता ही नही चलता। जबतक वह अपने विचार स्पष्ट नही करती, हम आगे नही बढ़ सकते। हमे मालूम होना चाहिए कि वह कहाँतक जानेको तैयार है। इस सप्ताह मैं बहुत नरमीसे बोला हूँ, लेकिन कह नही सकता कि इस घोर अनिश्चितताको, जिसका कोई कारण दिखाई नही देता, मै कबतक बरदाश्त कर पाऊँगा। सरकार बराबर तटस्थ नही बैठी रह सकती, उसे इधर या उधर जाना ही होगा।

[अंग्रेजीसे]

न्यूज क्रॉनिकल, १९-९-१९३१

१६. भाषण: संघ-संरचना समितिके समक्ष

लन्दन
१७ सितम्बर, १९३१

लॉर्ड चान्सलर महोदय,

शीर्षक-२[1] पर हो रही इस बहसमें मैं बहुत हिचकिचाहटके साथ भाग ले रहा हूँ। हमारे विचारार्थ जो अनेक मुद्दे दर्ज है, उनके सम्बन्धमे मै बादमें बोलूँगा। सोमवारसे मेरा मन कुछ बातोको लेकर बड़ा परेशान रहा है और अगर आप इजाजत दें तो पहले मै उन्ही बातोकी चर्चा करके अपने मनके उस बढते हुए बोझको हलका करूँ। इस समितिमे हुई बहसोको मैंने बहुत ही ध्यानसे देखा-सुना है। पहले मैंने प्रतिनिधियोकी सूचीकी ओर ध्यान नही दिया था, लेकिन अब जब उसका अध्ययन किया तो सबसे पहले जिस बातको लेकर मेरा मन परेशान हो उठा वह यह है कि हम लोग राष्ट्रके चुने हुए प्रतिनिधि नही, बल्कि सरकारके चुने हुए प्रतिनिधि है, जबकि यहाँ आये लोगोको राष्ट्रका ही प्रतिनिधित्व करना चाहिए था। मै भारतके विभिन्न दलो और समुदायोको निजी अनुभवसे जानता हूँ, इसलिए जब प्रतिनिधियोकी सूचीकी ओर ध्यान देता हूँ तो पाता हूँ कि इसमें बहुत-से महत्त्वपूर्ण नाम शामिल नही है। और इसलिए मेरा मन यह सोचकर व्यथित हो उठता है कि प्रतिनिधियोके चुनावमे वास्तविकताको ताकपर रख दिया गया। मेरे मनमे वास्तविकताकी अवहेलना का भाव जगनेका दूसरा कारण यह है कि मुझे लगता है, इन कार्यवाहियोका तो कोई अन्त ही नही है और हम लगभग कोई प्रगति नही कर रहे है। यदि हम इसी तरह चलते रहे तब तो इस समितिके सामने उठाये विभिन्न प्रश्नोपर बालकी खाल खीचनेवाले अन्दाजसे बहस करनेके अलावा और कुछ नही कर पायेंगे।

१. संघ-ससदके सदस्योंके चुनावसे सम्बन्धित सवाल।

सो लॉर्ड चान्सलर महोदय, सबसे पहले तो मै, आप हम सबके प्रति जितना अधिक धैर्य — और इजाजत हो तो कहूँ कि सतत शिष्टता और सौजन्य — दिखा रहे है, उसके लिए आपके साथ अपनी हार्दिक सहानुभूति व्यक्त करता हूँ। और आप समितिकी कार्यवाहियोके सिलसिलेमे जितना अधिक कष्ट उठा रहे है, उसके लिए मै आपको सचमुच बधाई देता हूँ। मै आशा करता हूँ कि आपके और हमारे सामने जो काम पडा हुआ है, उसके अन्तमे वह अवसर भी आयेगा जब मै आपको इस बातके लिए बधाई दे सकूँगा कि आपने हमे कुछ ठोस परिणाम सामने रखनेमे समर्थ बनाया या वैसा करनेको मजबूर किया।

अगर इजाजत हो तो अब मै महामहिमके सलाहकारोके खिलाफ एक नम्र शिकायत पेश करूँ। उन्होने सात समुद्र पारसे हम सबको यहाँ बुलाया है, और जैसा कि मै समझता हूँ, यह जानते हुए बुलाया है कि हममे से सभी उतने ही व्यस्त आदमी है जितने कि वे स्वय है। हमे अपना-अपना काम छोडकर यहाँ आना पडा है। सो अब जब उन्होने हम सबको यहाँ बुला लिया है तो क्या उनके लिए यह सम्भव नही कि वे कुछ ऐसा करे जिससे हम लोग अपने कार्यमें आगे बढे? क्या मै आपके माध्यमसे उनसे यह अनुरोध नही कर सकता कि वे लोग यह तो बताये कि उनके मनमे क्या है? यदि वे हमारा मतामत जाननेके लिए कुछ ठोस प्रस्ताव लेकर सामने आये तो मुझे बडा हर्ष होगा; और यदि आपके सामने मै यह बात कह सकूँ तो कहूँगा कि मुझे लगता है, सही तरीका भी यही होगा कि वे ऐसे प्रस्ताव लेकर सामने आये। यदि ऐसा-कुछ किया जाये तो मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि हम अच्छे या बुरे, सन्तोषजनक या असन्तोषजनक किसी-न-किसी निष्कर्षपर पहुँच ही जायेगे। लेकिन अगर यह समिति केवल ऐसी एक वाद-विवाद-समिति बनकर रह जाती है, जिसका प्रत्येक सदस्य अलग-अलग व्यक्तियो द्वारा उठाये मुद्दोपर जोरदार तकरीरे झाडता है तो मै नही समझता कि हम यहाँ जिस प्रयोजनसे एकत्र हुए है उसे सिद्ध करनेमे कोई योग-दान दे सकेंगे या उस दिशामे कोई प्रगति कर सकेंगे। मुझे लगता है कि यदि आप कर सके तो कोई ऐसी उप-समिति नियुक्त कर देना ज्यादा लाभदायक होगा जो आपके सामने निर्णयार्थ कुछ ठोस मुद्दे पेश कर सके। ऐसा हो जानेसे हमारी कार्यवाहियाँ ठीक समयपर पूरी हो सकेंगी।

मैंने यह सुझाव सिर्फ आपके और सदस्योके विचारार्थ सामने रख देनेका साहस किया है। आप शायद उन्हे महामहिमके सलाहकारोके विचारार्थ उनके सामने रखेंगे। मै यह चाहता हूँ कि वे हमारा मार्ग-दर्शन करे, नेतृत्व करें और वे क्या चाहते है, यह साफ-साफ बताये। मै उनसे यह जानना चाहता हूँ कि यदि हम उन्हीको अपने भाग्यका निर्णायक बना दें तो वे क्या करेगे। अगर वे हमारी सलाह और राय जाननेका सौजन्य दिखायेंगे तो हम उन्हे अपनी सलाह और राय देंगे। मेरे विचारसे इस घोर अनिश्चितता और अन्तहीन विलम्बकी स्थितिसे वह स्थिति सचमुच बहुत अच्छी होगी।

इतना कहकर अब मै दूसरे शीर्षकके सम्बन्धमे दो-चार बाते कहूँगा। यहाँ मेरे सामने भी वही कठिनाई आती है जो सर तेज बहादुर सप्रूके सामने आई थी। यदि

उनकी बातोको मैने ठीक समझा है तो उन्होने यही कहा कि उन्हे इस बातसे बडी परेशानी हो रही थी कि उनसे विभिन्न उपशीर्षकोपर बोलनेको तो कहा जा रहा है, किन्तु उन्हे यह नही मालूम कि वास्तवमें मताधिकारका स्वरूप क्या होगा। यही कठिनाई मेरे सामने भी खडी है। लेकिन इसके अलावा भी एक कठिनाई है। मैंने समितिके सामने काग्रेसका आदेश-पत्र रखा था और मुझे प्रत्येक उपशीर्षकपर उसी आदेश-पत्रको ध्यानमे रखकर बोलना पड़ेगा। इसलिए इन उपशीर्षकोमें से कुछके सम्बन्धमें मुझे इस आदेश-पत्रको ध्यानमे रखकर ही सुझाव देने या अपने विचार व्यक्त करने होगे, और यदि समितिको यह मालूम नही होगा कि वास्तवमें वह किस उद्देश्यको लेकर चल रही है तो स्वभावतः मै जो भी विचार रखूँगा, वह वास्तवमे किसी कामका नही होगा। उस विचारका तो केवल इस आदेश-पत्रके सन्दर्भमे ही कोई मानी होगा। मै क्या कहना चाहता हूँ, यह बात जब मै इन उपशीर्षको पर विचार करने लगूँगा तो स्पष्ट हो जायेगी।

उपशीर्षक (१) के सम्बन्धमें जहाँ मोटे तौर पर मेरी हार्दिक सहानुभूति डॉ० अम्बेडकरके साथ है, वहाँ बुद्धिके धरातल पर मै श्री गैविन जोन्स तथा सर सुल्तान अहमदसे पूरी तरह सहमत हूँ। यदि यह समान विचार रखनेवाले समान उद्देश्योसे परिचालित ऐसे सदस्योकी समिति होती जिन्हे अपने मत देकर किसी निष्कर्ष पर पहुँचनेका अधिकार होता तो मै डॉ० अम्बेडकरके साथ बहुत दूर तक जा सकता था। लेकिन हमारी स्थिति ऐसी नही है। यह तो बेतरतीब ढगसे चुने बेमेल लोगोकी एक मण्डली है, जिसका प्रत्येक सदस्य शेषसे सर्वथा स्वतन्त्र है और इसलिए उसे किसी भी सामान्य नियमका खयाल किये बिना अपनी राय देनेका अधिकार है। इसलिए मेरी नम्र सम्मतिमें, हमे देशी राज्योसे यह कहनेका कोई अधिकार नही है कि उन्हें क्या करना चाहिए और क्या नही करना चाहिए। ये राज्य बडी उदारतासे हमारी सहायताके लिए आगे आये हैं और इन्होने कहा है कि वे हमारे साथ सघमें शामिल होगे, तथा शायद अपने कुछ ऐसे अधिकारोको भी छोड देगे जिनका उपभोग वे अन्यथा किसी प्रकारकी दस्तन्दाजीके बिना करते। ऐसी स्थितिमे मैं तो यही कर सकता हूँ कि सर सुलतान अहमदने जो विचार व्यक्त किया और शायद श्री गैविन जोन्सने जिस पर विशेष आग्रह किया, उस विचारका मै पूरा अनुमोदन करूँ। मेरा तात्पर्य उनके इस विचारसे है कि हम अधिकसे-अधिक यही कर सकते है कि देशी राज्योसे अनुरोध-आग्रह करे और उन्हे अपनी कठिनाइयाँ समझाये। साथ ही मुझे लगता है कि हमें भी उनकी विशेष कठिनाइयोको समझना चाहिए। इसलिए मै उदारमना देशी राजाओके सम्मुख केवल एक-दो बातें ही रखूँगा और उनसे उन पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करनेको कहूँगा और चूँकि मै आम जनताके बीचसे आनेवाला आम जनताका आदमी हूँ और समाजके निम्नतम वर्गका प्रतिनिधित्व करनेकी कोशिश कर रहा हूँ, इसलिए मै उनसे अनुरोध करूँगा कि वे जो भी योजना बनाकर इस समितिके स्वीकारार्थ पेश करे उसमे मेरे उन सुझावोको भी स्थान दें। मै यह महसूस करता हूँ और जानता हूँ कि वे हृदयसे अपनी रैयतका कल्याण चाहते है। मै जानता

हूँ कि वे उनके हितोंकी विशेष रक्षा करनेका दावा करते हैं; लेकिन अगर सब-कुछ ठीक-ठीक चला तो वे जन-भारतके – यदि मैं ब्रिटिश भारतको यह नाम दे सकूँ तो – अधिकाधिक सम्पर्कमें आयेंगे, और तब जिस प्रकार भारतके उस हिस्सेके लोग देशी राज्योंके सुख-दुःखको अपना बना लेना चाहेंगे उसी प्रकार वे भी जन-भारतके लोगोंके सुख-दुःखको अपना बना लेना चाहेंगे। आखिरकार भारतके इन दोनों हिस्सोंमें कोई मौलिक भेद तो है नही। यदि किसी सजीव शरीरको दो हिस्सोंमे बाँटा जा सकता हो तो भले आप भारतको भी दो हिस्सोंमें बाँट दीजिए। यह अनादि कालसे एक देशके रूपमे कायम रहा है और कोई भी कृत्रिम सीमा इसे विभाजित नही कर सकती। देशी राज्योंकी प्रशंसामे यह कहना ही होगा कि जब उन्होने साहसके साथ खुलेआम सघके पक्षमें अपना मत व्यक्त किया तो वास्तवमे उन्होने यह दावा पेश किया कि वे भी उसी खूनसे हैं जिस खूनसे हम हैं – वे हमारे सगे हैं। वे और कुछ कर भी नही सकते थे। हममे और उनमे सिवा इसके कोई भेद नही है कि हम साधारण जन हैं और वे हैं — या यो कहिए कि ईश्वरने उन्हे बनाया है — उच्च कुलोत्पन्न व्यक्ति, राजा। मै उनका शुभेच्छु हूँ, मै हर तरहसे उनकी समृद्धिकी कामना करता हूँ। मै ईश्वरसे यह भी मनाता हूँ कि उनकी अपनी समृद्धि और अपना कल्याण उनके प्रिय प्रजाजनोके हित-साधनमे सहायक सिद्ध हो। इसके आगे मै कुछ नही कहूँगा, कुछ कह भी नही सकता। मै तो उनसे केवल विनती ही कर सकता हूँ। जैसा कि हम जानते हैं, वे सघमे शामिल हो या न हो, यह उनकी इच्छा पर निर्भर है। हमारे हाथमे यह है कि हम उनका सघ-प्रवेश सुगम बना दे। इसी तरह उनके वसकी वात यह है कि वे ऐसी स्थिति उत्पन्न करे जिससे हम अपनी बाँहे पसारकर सघमें उनका स्वागत करे। मै जानता हूँ कि इस आदान-प्रदानकी भावनाके विना हम संघ-शासनकी कोई निश्चित योजना नही वना सकेंगे, या अगर बना भी लेगे तो वादमें हममे झगड़े होगे और हम एक-दूसरेसे फिर अलग हो जायेंगे। इसलिए यदि हम पूरे मनसे सघ-शासनकी किसी योजनाको स्वीकार न कर सके तो ऐसी योजना वनानेकी अपेक्षा तो कोई योजना न वनाना ही बेहतर होगा। यदि हम कोई योजना वनाये तो पूरे मनसे वनाये।

अव दूसरे शीर्षकको ले। देखता हूँ, इस शीर्षक पर वास्तवमे निर्योग्यताओके सवालको ही – अर्थात् निर्योग्यताओकी व्यवस्था की जाये या नहीं, इसी बातको – ध्यानमें रखकर विचार किया गया है। यद्यपि मै पूर्ण रूपसे लोकतन्त्रवादी होनेका दावा करता हूँ, फिर भी मै निस्सकोच कहूँगा कि यह बात मतदाताओके अधिकारोसे सर्वथा सगत है कि उम्मीदवारीके सम्बन्धमे कुछ निर्योग्यताओकी व्यवस्था की जाये और इसी तरह किसी सदस्यको सदस्यतासे च्युत करनेके सम्बन्धमे भी कतिपय निर्योग्यताएँ निर्धारित कर दी जाये। इन निर्योग्यताओका स्वरूप क्या हो, इस सम्बन्धमें मै इस समय कुछ नही कहना चाहता। मै सिर्फ यह कह रहा हूँ कि निर्योग्यताएँ लगानेके विचार और सिद्धान्तका मै पूरे मनसे समर्थन करूँगा। 'नैतिक भ्रष्टाचार' शब्द-समुच्चयको सुनकर मुझे भय नही लगता। इसके विपरीत इसे मै एक अच्छा

मुहावरा मानता हूँ। सच तो यह है कि हम चाहे जितना विचार-विमर्श करनेके बाद किसी शब्दको चुनें, कठिनाइयाँ तो फिर भी बनी ही रहेंगी। लेकिन कठिनाइयोंपर पार पानेके लिए तो न्यायाधीश होते ही हैं। कठिनाई उत्पन्न होनेपर न्यायाधीश हमारी सहायताको आगे आयेंगे और हमें बतायेंगे कि 'नैतिक भ्रष्टाचार' में कौन-सी बातें आती हैं और कौन-सी नहीं आती। और यदि कहीं ऐसा हुआ कि सविनय प्रतिरोध करनेवाले मुझ-जैसे किसी आदमीको 'नैतिक भ्रष्टाचार' का दोषी ठहराया जाता है तो मैं उसका बुरा नहीं मानूँगा। हो सकता है, इसके कारण कुछ लोगोंको कष्ट उठाना पड़े, लेकिन इसीलिए मैं यह कहनेको तैयार नहीं हूँ कि किसी प्रकारकी निर्योग्यताएँ लगाई ही न जायें और अगर लगाई जाती है तो वह मतदाताके अधिकारका हनन होगा। यदि हम कोई कसौटी कायम करने या उम्र-सम्बन्धी कोई सीमा रखने जा रहे हैं तो चरित्र-विषयक कोई मर्यादा भी होनी ही चाहिए।

अब तीसरी बात — अर्थात् प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष निर्वाचनके प्रश्नको लें। यदि इस समय यहाँ लॉर्ड पील मौजूद होते तो पाते कि इस विषय पर उनके विचारोंसे मैं सारत सहमत हूँ। मुझे इस विषयका गहरा ज्ञान नहीं है, मैं तो अपने सामान्य ज्ञानके आधार पर ही बोल रहा हूँ और मुझे कहना यह है कि 'अप्रत्यक्ष निर्वाचन' शब्दोंसे भी मुझे भय नहीं लगता। मैं नहीं जानता कि इन शब्दोंका कोई प्राविधिक अर्थ भी है या नहीं। अगर होगा भी तो मुझे वह मालूम नहीं है। मैं अपना आशय अभी स्पष्ट करता हूँ। चाहे उसे 'प्रत्यक्ष निर्वाचन' कहा जाये या 'अप्रत्यक्ष निर्वाचन', मैं तो निश्चय ही जगह-जगह जाकर इसके पक्षमें बोलूँगा और शायद निर्वाचनकी उस पद्धतिके पक्षमें एक खासा बड़ा जनमत भी तैयार कर लूँगा। मैं जो पद्धति सुझाने जा रहा हूँ वह आवश्यक है, क्योंकि वयस्क मताधिकारका मैं पक्का हिमायती हूँ। कांग्रेस-जनोंकी इसमें दृढ़ आस्था है। वयस्क मताधिकार एकाधिक कारणोंसे आवश्यक है। मेरी हद तक इसका एक निर्णायक कारण यह है कि इसके द्वारा मैं सभीकी उचित आकांक्षाओंकी — केवल मुसलमानोंकी नहीं, तथाकथित अस्पृश्यों, ईसाइयों और श्रमिकों, सभी वर्गोंकी आकांक्षाओंकी — पूर्ति कर सकता हूँ। मैं इस विचारको सहन नहीं कर सकता कि जिसके पास धन है उसे तो मताधिकार प्राप्त हो, लेकिन ऐसा चरित्रवान् व्यक्ति इससे वंचित रहे जो धनवान् या शिक्षित नहीं है; या यह कि दिन-रात अपना खून-पसीना एक करनेवाले किसी ईमानदार श्रमिकको सिर्फ इस कारण यह अधिकार न दिया जाये कि उसने गरीब होनेका अपराध किया है। यह मेरे लिए असह्य बात है। मैं तो गाँवके गरीबसे-गरीब लोगोंके बीच हिल-मिलकर रहा हूँ। और इस बात पर मैंने गर्वका अनुभव किया है कि लोग मुझे अछूत मानते हैं। इसलिए मैं यह भी जानता हूँ कि इन गरीबोंके बीच, खुद अस्पृश्योंके बीच, आपको मानवताके कुछ सर्वोत्कृष्ट नमूने देखनेको मिलेंगे। इन अस्पृश्य भाइयोंको मताधिकार न दिया जाये, इससे तो कहीं अच्छा मैं यह मानूँगा कि खुद मुझे ही यह अधिकार न मिले। मुझे साक्षरताके सिद्धान्तका कोई मोह नहीं है। मैं यह नहीं मानता कि मतदाताको पढ़ना-लिखना

और गुणा-भाग करना आना ही चाहिए। मै यह अवश्य चाहता हूँ कि मेरे देश-भाइयोको लिखना-पढ़ना आये। लेकिन तब मैं यह भी जानता हूँ कि यदि उनको मताधिकार दिलानेके लिए उन सबके पढ़ाई-लिखाई सीख लेने तक इन्तजार करना पड़ा तब तो मुझे अनन्त काल तक इन्तजार ही करते रहना पडेगा। लेकिन मै उतने समय तक प्रतीक्षा करनेको तैयार नही हूँ। मै जानता हूँ कि इनमे से करोडों लोगोमे मताधिकारके ठीक प्रयोगकी क्षमता है, लेकिन अगर हम उनमे से सभीको मताधिकार दे दे तो उन सबके नाम मतदाता-सूचीमे दर्ज करना और ऐसे निर्वाचन-क्षेत्र, जिनके साथ ठीक न्याय किया जा सके, बना सकना बिलकुल असम्भव नही तो कठिन अवश्य हो जायेगा।

मै लॉर्ड पीलकी इस आशकाको सही मानता हूँ कि यदि निर्वाचन-क्षेत्र बहुत बडे होगे तो उम्मीदवारोके लिए सभी लोगोके व्यक्तिगत सम्पर्कमे आना अथवा समय-समय पर उनसे सम्पर्क बनाये रखकर किसी मामले पर उनके विचार जान सकना असम्भव होगा। यद्यपि मैने कभी विधायक बननेका प्रयास नही किया है, फिर भी इन निर्वाचकोसे मेरा साबका पड़ा है और मै जानता हूँ कि मुझे कितनी मुश्किलोसे गुजरना पडा है। मुझे इन विधायक सस्थाओके सदस्योके अनुभवोकी भी जानकारी है। इसलिए हम काग्रेस-जनोने इस सम्बन्धमे एक योजना बनाई है, और यद्यपि मौजूदा सरकारने हम पर एक समानान्तर सरकार खडी करनेका आरोप लगाया है, फिर भी मै अपने तरीकेसे उस आरोपको स्वीकार भी कर सकता हूँ। हमने कोई समानान्तर सरकार तो स्थापित नही की है, लेकिन हमारा यह मसूबा जरूर है कि किसी दिन हम वर्तमान सरकारको स्थान-च्युत कर दे और धीरे-धीरे विकास-क्रमसे गुजरते हुए समय आने पर उस सरकारका सारा दायित्व अपने हाथोमे ले ले।

गत चौदह वर्षोसे मैं भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके विधानो और नियमोके मसौदे तैयार करता आया हूँ। उससे पहले दक्षिण आफ्रिकाकी एक ऐसी ही सस्थाके[1] लिए लगभग बीस वर्षो तक मैने यही काम किया है। इस दौरान मैंने जो अनुभव प्राप्त किये वे सब अगर आपको बताना चाहूँ तो आशा है, आप अन्यथा न मानेगे। कांग्रेसके सविधानमे लगभग वयस्क मताधिकार-जैसी ही चीज है। हम चार आनेका बहुत मामूली-सा वार्षिक शुल्क भी लेते है। वह शुल्क यदि इस मामलेमे लगा दिया जाये तो मुझे कोई आपत्ति नही होगी। यहाँ फिर मै लॉर्ड पील द्वारा व्यक्त आशंकासे अपनी सहमति प्रगट करता हूँ। आशका यह है कि हमारे गरीब देशमे चुनावोके प्रबन्धमें ही बहुत ज्यादा पैसा खर्च हो सकता है। मै ऐसी स्थिति नही आने देना चाहूँगा और इसलिए यह पैसा इकट्ठा करनेपर भी राजी हूँ। लेकिन अगर मुझे कोई यह समझा सके कि यह चार आनेका शुल्क भी लोगोपर भार-रूप होगा तो तो मै उसे भी उठा लूँगा। मगर जो भी हो, काग्रेसमे यह शुल्क लिया जाता है।

हमारी निर्वाचन-पद्धतिकी एक और भी विशेषता है। मतदान-पद्धतियोकी जहाँ तक मुझे जानकारी है, उसके अनुसार पजीयन-अधिकारीको मतदाता-सूचीमे उन सभी

१. नेटाल भारतीय काग्रेस और फिर ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय कांग्रेसके लिए।

लोगोके नाम दर्ज कर लेने पडते है जिनके बारेमें वह समझता है कि उन्हें मत देनेका अधिकार है। इसलिए कोई व्यक्ति चाहे मतदान करना चाहे या न चाहे, मतदाता-सूचीमें अपना नाम दर्ज करानेकी उसकी इच्छा हो या न हो, उसका नाम उसमें आ जाता है। इसी तरह एक दिन नेटालके डर्बन नगरमें मैने एकाएक अपना नाम मतदाता-सूचीमें पाया। वहाँके विधानमण्डलमे विभिन्न दलोकी जो स्थिति थी, उसमे किसी प्रकारके परिवर्तनमें योगदान देनेकी मेरी कोई इच्छा नही थी। मतदाता-सूचीमे अपना नाम दर्ज करवानेकी मैंने कभी परवाह ही नही की। लेकिन जब किसी उम्मीदवारको मेरे मतपत्रकी आवश्यकता हुई तो उसने मुझे बताया कि मतदाता-सूची मे मेरा भी नाम है। तभी मुझे मालूम हुआ कि मतदाता-सूची कैसे तैयार की जाती है। हमारे पास यह विकल्प है कि जो मतदान करना चाहे, उसे मताधिकार दिया जा सकता है। इसलिए जो लोग मतदान करना चाहे उन्हे मतदाता-सूचीमें अपने नाम दर्ज करवानेकी पूरी छूट है। इसमें स्त्री-पुरुपका कोई भेद नही किया जायेगा। अलबत्ता, मताधिकार देनेमें उम्र तथा अन्य बातोके सम्बन्धमे जो शर्तें लगाई जा सकती है, उन्हे पूरा करना जरूरी होगा। मेरा खयाल है, इस तरहकी योजना लागू करनेसे मतदाता-सूची इतनी बडी नही हो पायेगी कि उसे सँभालना कठिन हो जाये।

यदि उक्त योजनाको स्वीकार कर लिया जाये तब भी मतदाताओकी सख्या लाखो होगी। इसलिए गाँव और केन्द्रीय विधान-मण्डलको एक-दूसरेसे जोडे रखनेके लिए कोई व्यवस्था करना जरूरी है। केन्द्रीय विधान-मण्डल और भारतीय काग्रेस कमेटीमे कुछ बातोमे समानता है। इसी प्रकार प्रान्तीय विधान-मण्डलोसे मिलती-जुलती हमारी प्रान्तीय सस्थाएँ हैं। हमारी सस्थामें भी कुछ मामूली कानून बनते है और हमारा भी अपना एक प्रशासनिक सगठन है। हमारी अपनी कार्यकारिणी परिषद् भी है। यह बिलकुल सच है कि उस कार्यकारिणीको सगीनोका साहाय्य प्राप्त नही है, लेकिन अपने निर्णयोको लागू करानेके लिए हमारे पास उससे भी कोई बहुत बड़ी चीज है, जिसके बलपर हम अपने लोगोसे अपने निर्णयोका पालन करवाते है, और आजतक हमारे मार्गमे ऐसी कोई भी बाधा नही आई है जिसे हम पार न कर पाये हो। मै यह नही कहता कि हमने सभी परिस्थितियोमें सदा अपने आदेशोका पूरा पालन करवाया है, लेकिन गत सैंतालीस वर्षोसे काग्रेस चल रही है और साल-दर-साल इसका रुतबा बढता ही गया है। आपको बता दूँ कि प्रान्तीय परिषदोको अपने चुनावोका नियमन करनेके लिए उपनियम बनानेका पूरा अधिकार प्राप्त है। उसके मूलाधार, अर्थात् मतदाताओ पर लगाई निर्योग्यताओ-सम्बन्धी व्यवस्थामें तो वे कोई परिवर्तन नही कर सकती, लेकिन बाकी सब बातें वे जैसे चाहे कर सकती है। इसलिए यहाँ मै केवल एक प्रान्तका उदाहरण देता हूँ, जहाँ ऐसा किया जाता है। वहाँ गाँव अपनी छोटी कमेटियाँ चुनते है। ये कमेटियाँ ताल्लुका कमेटियोका चुनाव करती है और फिर ये ताल्लुका कमेटियाँ जिला कमेटियाँ चुनती है और अन्तमे जिला कमेटियाँ प्रान्तीय परिषदोका चुनाव करती है। अब ये प्रान्तीय परिषदें अपने प्रतिनिधि केन्द्रीय विधायक सस्थामें — यदि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीको यह नाम दिया

जा सके तो—भेजती है। हमने तो अपनी सस्थामे इसी पद्धतिसे काम लिया है। अगर यहाँ भी हम कुछ ऐसी ही व्यवस्था करे तो मुझे उस पर कोई आपत्ति नही होगी। लेकिन एक दूसरा तरीका भी है। हमे याद रखना चाहिए कि भारतमे ७,००,००० गाँव है। मेरा खयाल है, इनमे देशी राज्योके गाँव भी आ जाते है। आँकड़े मुझे ठीक-ठीक मालूम नही है हो सकता है, मै गलती भी कर रहा होऊँ। जन-भारतमे शायद ५,००,००० या इससे कुछ अधिक गाँव होगे। तो इस प्रकार हमारी प्रस्तावित व्यवस्थामे ५,००,००० इकाइयाँ हो सकती है। इनमे से प्रत्येक इकाई अपना प्रतिनिधि चुनेगी और ये प्रतिनिधि, अगर आप लोगोको स्वीकार होगा तो, केन्द्रीय या संघीय विधायक सस्थाके लिए प्रतिनिधि चुनेगे। मैने आपको योजनाकी एक मोटी रूप-रेखा-भर दी है। अगर आपको यह पसन्द आये तो तफसीलकी बाते बादमे तय की जा सकती है। यदि हम वयस्क मताधिकारके सिद्धान्तको अपनाने जा रहे है तो मुझे लगता है कि हमे ऐसी किसी योजनाका सहारा लेना ही पडेगा जैसी कि मैने सुझाई है। जहाँ-कही इसको अमलमे लाया जा रहा है, मै सप्रमाण कह सकता हूँ कि यह बहुत सफल सिद्ध हो रही है और इन प्रतिनिधियोके माध्यमसे साधारणसे-साधारण ग्रामवासीसे भी सम्पर्क स्थापित करनेमे कोई कठिनाई नहीं हुई है। यह पद्धति निर्विघ्न रूपसे काम करती रही है, और जहाँ-कहीं लोगोने इस पर ईमानदारीसे अमल किया है, इसमे ज्यादा समय भी लगते नही देखा गया है और खर्च तो लगभग कुछ भी नही होता पाया गया है। इस योजनाके अन्तर्गत मै किसी उम्मीदवार द्वारा साठ-साठ हजार, बल्कि एक-एक लाख रुपये खर्च करनेकी बात सोच भी नही सकता। मुझे मालूम है कि कुछ मामलोमे एक-एक लाख रुपये तक खर्च किया गया है। दुनियाके इस सबसे गरीब देशके लिए मै इस राशिको भयावह मानता हूँ।

इस उपशीर्षककी चर्चा करते हुए मै द्विसदनीय विधानमण्डलोके सम्बन्धमे भी अपने विचार—चाहे वे जैसे और जिस लायक हो—व्यक्त करना चाहूँगा। यदि इस बातसे आपकी भावनाओको चोट न पहुँचे तो मै कहूँगा कि इस सम्बन्धमे मै श्री जोशीके विचारोसे सहमत हूँ। मै साफ बता दूँ कि द्विसदनीय विधानमण्डलके प्रति मुझे कोई मोह नही है और न इसमे मेरी दृढ आस्था ही है। मुझे ऐसा कोई भय नही है कि लोक-निर्वाचित सदन उत्साहातिरेकमे अपना विवेक खो सकता है और जल्दबाजीमे ऐसे कानून पास कर दे सकता है जिन पर बादमे उसे पछताना पडे। मै यह नही चाहूँगा कि लोक-निर्वाचित सदनके खिलाफ बातें कहकर पहले उसे बदनाम किया जाये और फिर उसके सम्बन्धमे चाहे जैसा निर्णय कर लिया जाये। मै मानता हूँ कि लोक-निर्वाचित सदन अच्छे-बुरेका विचार करनेमे भली-भाँति समर्थ है और इस समय चूँकि मै दुनियाके सबसे गरीब देशके सन्दर्भमें यह सब कह रहा हूँ, इसलिए यह भी कहूँगा कि हमें जितना कम खर्च उठाना पड़े उतना ही अच्छा है। मै इस विचारको एक क्षणके लिए भी स्वीकार नही करता कि यदि लोक-निर्वाचित सदन पर कुछ अकुश रखनेके लिए विशिष्टोका कोई सदन न होगा तो लोक-

निर्वाचित सदन देशका नाश कर देगा। मुझे ऐसा कोई भय नही है। अलबत्ता मैं ऐसी स्थितिकी कल्पना कर सकता हूँ जब दोनो सदनोके बीच जोरोसे ठन जाये। जो भी हो, यद्यपि इस सम्बन्धमे मैं कोई निश्चयात्मक रवैया नही अपना सकता, किन्तु खुद मेरी तो यह पक्की राय है कि हमारा काम एक ही सदनसे चल सकता है और उसके बहुत-से फायदे भी है। यदि हम अपने मनको इस बातके लिए मना सकें कि हमारा काम एक ही सदनसे चल सकता है तो निश्चय ही हम बहुत सारे खर्चसे तो बच ही सकते है। मैं लॉर्ड पीलके इस विचारसे पूर्णत. सहमत हूँ कि हमे नजीरोकी चिन्ता करनेकी जरूरत नही है। हम तो खुद ही एक नया उदाहरण कायम करेगे। आखिरकार भारत एक पूरा महाद्वीप है। किन्ही भी दो जीवन्त मानवीय संस्थाओके बीच पूर्ण समानता-जैसी कोई चीज है ही नही। हमारी अपनी अलग परिस्थितियाँ है, अपनी अलग मान्यताएँ है। मै तो यह मानता हूँ कि हमें नजीरोकी परवाह किये बिना कई प्रकारसे अपने लिए एक नया ही रास्ता बनाना होगा। इसलिए मुझे लगता है कि यदि हम एक-सदनीय विधायिका आजमाकर देखें तो यह कोई गलत काम नही होगा। बेशक आप इसे, मानव-बुद्धिके लिए जहाँतक सम्भव है, निर्दोष और सर्वांगपूर्ण बना दें, लेकिन सन्तोष एक ही सदनसे करे। अब चूंकि मेरे विचार ऐसे है, इसलिए उपशीर्षक ३ और ४के सम्बन्धमें मुझे कुछ कहने की जरूरत नही रह जाती।[1]

तो अब मैं उपशीर्षक ५, अर्थात् विशेष निर्वाचन-क्षेत्रों द्वारा विशेष हितोके प्रतिनिधित्वके सवाल पर आता हूँ। यहाँ मै जो-कुछ कह रहा हूँ, उसे कांग्रेसका ही विचार समझिए। कांग्रेसने हिन्दू-मुस्लिम-सिख समस्याके सम्बन्धमें विशेष रूपसे विचार करनेकी बात किसी तरह स्वीकार कर ली है। इसके कुछ ऐतिहासिक कारण है। वह इस सिद्धान्तको अब और किसी समुदायके सम्बन्धमें किसी भी रूपमे लागू नहीं करने देगी। मैंने यह सुना कि विशेष हितोका दावा करनेवालो की सूचीमें कौन-कौन आते है। जहाँ तक अस्पृश्योंका सम्बन्ध है, अभी तक मै यह नही समझ पाया हूँ कि डॉ० अम्बेडकर क्या कहना चाहते है। लेकिन इतना तो है ही कि अस्पृश्योके हितोका प्रतिनिधित्व करनेका गौरव अकेले अम्बेडकर साहबको ही प्राप्त नही होगा, उसकी भागीदार कांग्रेस भी बनेगी। उनके हित कांग्रेसको उतने ही प्रिय है जितने कि भारतके किसी भी अन्य जनसमुदाय अथवा व्यक्तिके हित प्रिय हो सकते है। इसलिए मैं किसी और जनसमुदायके सम्बन्धमें विशेष प्रतिनिधित्वका सिद्धान्त लागू करनेका तीव्र विरोध करूँगा। वयस्क मताधिकारके अधीन मजदूरोके संगठनो आदिको तो विशेष प्रतिनिधित्वकी जरूरत होती ही नही; जमींदारोको तो कतई नही होती। इसका कारण मैं बताता हूँ। कांग्रेसका ऐसा कोई इरादा नही है कि वह जमींदारोसे उनकी जमीन-जायदाद छीन ले; और न इन मूक और दरिद्र लोगोके मनमे ही ऐसा-कुछ है। उसके बजाय कांग्रेस यह चाहेगी कि जमींदार लोग अपने-अपने काश्त-

१. उपशीर्षक ३ का सम्बन्ध संघीय विधानमण्डलके दोनों सदनोंके पारस्परिक सम्बन्धोंसे और उपशीर्षक ४ का संघ और उसकी इकाइयोंके बीच वित्तीय साधनोंके बँटवारेसे था।

कारोके न्यासियोकी तरह रहे। मै समझता हूँ, जमीदारोको ऐसा सोचकर गर्वका अनुभव होना चाहिए कि उनकी रैयत, ये करोडो ग्रामवासी बाहरसे आनेवाले या खुद काश्तकारोमे से खडे होनेवाले लोगोके बजाय उन जमीदारोको अपने उम्मीदवार और प्रतिनिधि बनाना ज्यादा पसन्द करेगे। इसलिए होगा यह कि जमीदारोको अपने किसानोसे जा मिलना होगा, उनके सुख-दुःखको अपना सुख-दुःख बना लेना होगा। और यदि वे ऐसा करते है तो इससे अच्छा, इससे उदात्त और क्या हो सकता है? लेकिन अगर जमीदार लोग विशेष व्यवहार और दो सदन होने पर किसी एक सदनमे या एक ही लोक-निर्वाचित सदन होने पर उस सदनमे पृथक प्रतिनिधित्वका आग्रह रखेंगे तो मुझे लगता है, वे हमारे बीच वास्तवमे फूटके बीज बोयेंगे, और इसलिए मै आशा करता हूँ कि जमीदारों अथवा ऐसे ही किसी अन्य हितकी ओरसे इस तरहकी कोई माँग नहीं की जायेगी।

और अब मै अपने यूरोपीय भाइयोकी समस्याको लेता हूँ। स्वभावतः श्री गैविन जोस उनका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करते है। लेकिन मै उनसे नम्रतापूर्वक कहना चाहूँगा कि अबतक यूरोपीयोका वर्ग विशेष सुविधा-प्राप्त वर्ग रहा है। उन्हे वह सारा सरक्षण प्राप्त रहा है जो यह विदेशी सरकार उन्हे दे सकती थी और उसने उन्हे दिल खोलकर सरक्षण दिया है। श्री गैविन जोसने कहा है कि वे भयभीत है, किन्तु यदि अब यूरोपीय लोग भारतीय जनताके साथ अपने भाग्यको जोड लेनेके लिए तैयार हो, उसके सुख-दु:खको अपना सुख-दु:ख बना लेना चाहते हो तो उन्हे डरनेका कोई कारण नही है। श्री गैविन जोसने किसी विशेष दस्तावेजसे कुछ पढकर सुनाया। मैने वह दस्तावेज नही पढा है। हो सकता है, कुछ भारतीय ऐसा भी कहे कि "ठीक है, अगर यूरोपीय लोग, अग्रेज लोग चाहते है कि हम उन्हे चुनकर भेजे तो समझ लीजिए कि हम उन्हे चुनने नहीं जा रहे है।" लेकिन मै वादा करता हूँ कि उन्हे मै सारे भारतमे घुमाकर यह दिखा दूँगा कि यदि वे हमारे सुख-दु:खको अपना सुख-दु:ख बना लेनेको तैयार है तो लोग किसी भारतीयके मुकाबले उन्हे तरजीह देगे। उदाहरणके लिए, चार्ली एन्ड्रचूजको लीजिए। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि वे भारतके चाहे जिस निर्वाचन-क्षेत्रसे खडे हो जाये, वे बिना किसी कठिनाईके चुनाव जीत जायेगे। आप उन्हीसे पूछिए कि क्या भारतमे सर्वत्र लोगोने बाँहे फैलाकर उनका स्वागत नहीं किया है। मैने यूरोपीयोसे अनुरोध किया है कि वे कुछ दिन अपने हितोके लिए विशेष सुरक्षाकी माँग करना छोडकर आम जनताकी सद्भावना पर निर्भर रहनेकी कोशिश करके तो देखे। एक बात कहनेकी इजाजत दे तो मै कहूँगा कि संरक्षणात्मक व्यवस्थाओपर भरोसा करके चलना सरक्षण चाहनेका गलत तरीका होगा। वे भारतमे हमारा ही एक हिस्सा बनकर रहे। मै तो चाहूँगा कि वे इसी तरह रहे और उनसे इसी तरह रहनेकी विनती करूँगा। जो भी हो, मेरा यह निश्चित विचार है कि काग्रेस ऐसी किसी भी योजना पर सहमत नही होगी जिसमे विशेष हितोको सरक्षण दिया गया हो। वयस्क मताधिकारकी व्यवस्था कर देनेसे तो विशेष हितोको अपने-आप सुरक्षा प्राप्त हो जाती है।

जहाँतक ईसाइयोका सम्बन्ध है, यदि मुझे एक ऐसे ईसाईका साक्ष्य देनेकी इजाजत दी जाये जो अब हमारे बीच नहीं रहे तो मै बता दूँ कि उन्होने साफ कहा था: "हम किसी प्रकारका विशेष संरक्षण नही चाहते।" और मेरे पास ईसाई सगठनोंके इस आशयके पत्र पडे हुए है कि वे कोई विशेष सरक्षण नही चाहते और उन्हे जो भी सरक्षण प्राप्त करना होगा, अपनी सेवाके बलपर प्राप्त करेगे।

द्वितीय सदनके सम्बन्धमें एक बात पूछना चाहता हूँ। क्या इसकी सदस्यताके लिए किन्ही विशेष योग्यताओकी व्यवस्था की जानेवाली है? लेकिन द्वितीय सदनके बारेमे मेरे क्या विचार हैं, यह तो आप जान ही गये है। इसलिए सदस्यताकी अर्हता प्राप्त करनेसे सम्बन्धित योग्यताओके सवालपर मुझे कुछ कहनेकी जरूरत नही है।

अब मै एक बहुत ही नाजुक मुद्दे पर आ रहा हूँ। वह है वफादारीकी शपथका मुद्दा। फिलहाल इसपर मै कोई राय नही दे सकूँगा, क्योकि मै यह जानना चाहता हूँ कि वास्तवमे भारतको कौन-सा राजनीतिक दर्जा मिलने जा रहा है। अगर उसे पूर्ण स्वतन्त्रताका दर्जा मिलने जा रहा है, अगर भारतको पूर्ण स्वाधीनता मिलनी है तो स्वभावतः वफादारीकी शपथ भिन्न प्रकारकी होगी। यदि उसे एक आधीन देशका दर्जा मिलने जा रहा है तब तो उसमें मेरे लिए कोई स्थान ही नही होगा। इसलिए आज इस सवालपर कोई राय जाहिर करना मेरे लिए सम्भव नही है।

और अब आखिरी मुद्दे—अर्थात् इस मुद्देको ले कि अगर प्रत्येक सदनमें मनोनीत सदस्योकी व्यवस्था की जानी है तो वह व्यवस्था कैसी हो? इस विषयपर मुझे यही कहना है जो योजना कांग्रेस-जनोंने बनाई है, उसमें मनोनीत सदस्योके लिए कोई स्थान नही है। विशेषज्ञ लोग सदनमें आयें, जिन्हे किसी खास विषयपर सलाह देनेको बुलाया जाये ऐसे लोग आयें, यह तो मै समझ सकता हूँ। वे सलाह देंगे और फिर सदनसे चले जायेंगे। लेकिन इस बातका तो मुझे कोई औचित्य दिखाई नही देता कि उन्हे सदनमें मत देनेका अधिकार दिया जाये। अगर हम विशुद्ध लोकतन्त्रकी स्थापना करना चाहते है तब तो मत देनेका अधिकार केवल लोक-निर्वाचित प्रतिनिधियोको ही दिया जा सकता है। इसलिए जिस योजनामे मनोनीत सदस्योको स्थान दिया जाये उसपर मै सहमत नही हो सकता।

लेकिन मनोनयनका सवाल फिर मुझे उप-शीर्षक ५ पर ले आता है। कांग्रेसमें विशेष मामलोके सम्बन्धमे कुछ व्यवस्था की गई है। हम चाहते है कि विधायक संस्थामें महिलाएँ चुनी जायें, यूरोपीय लोग चुने जायें, ईसाई चुने जायें और बेशक अस्पृश्य लोग चुने जायें। मै यह बात अच्छी तरह जानता हूँ कि ये अल्प-संख्यक समुदाय काफी बड़े-बडे है। अब मान लीजिए, निर्वाचन-क्षेत्रोका रवैया ठीक नही रहता, वे स्त्रियो, या यूरोपीयो, या अस्पृश्यों अथवा, समझ लीजिए, जमीदारोको नही चुनते और उनके ऐसा रवैया अपनानेका कोई उचित कारण नही है। इस परिस्थितिके निराकरणके लिए मै सविधानमें एक ऐसी धाराकी व्यवस्था कराना चाहूँगा जिसके बलपर निर्वाचित विधायिका सभाको उन लोगोको चुननेका अधिकार दिया जा सके जिन्हे चुना तो जाना चाहिए था लेकिन जो चुने नही गये। शायद मेरा आशय

स्पष्ट नही हो पाया। अब मै एक उदाहरण देकर समझाता हूँ। हमारी कांग्रेसकी एक प्रान्तीय परिषद्मे ठीक इसी ढगका एक नियम है। हमने यह दायित्व तो निर्वाचन-क्षेत्रोपर डाल दिया है कि उन्हे अमुक संख्यामे महिलाओ, अमुक सख्यामे मुसलमानों और अमुक संख्यामे अस्पृश्योको चुनकर परिषद्मे भेजना होगा। अगर वे वैसा नही कर पाते तो उनके चुनावकी व्यवस्था यह निर्वाचित सस्था करती है। वह उन लोगोको चुनती है जिन्हे निर्वाचकोने न चुननेका कोई उचित कारण न होते हुए भी नही चुना। निर्वाचन-क्षेत्र गलत आचरण न कर पायें, इसलिए अगर ऐसी कोई धारा सविधानमे जोड दी जाये तो मै उसका स्वागत करूँगा। लेकिन पहले तो मै निर्वाचन-क्षेत्रोपर इतना भरोसा करके ही चलूँगा कि वे सभी वर्गोके लोगोंको चुनेगे और जाति-गोत्रकी भावनाके चक्करमे नही पडेगे। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि कांग्रेसजनोकी मनोवृत्ति जात-पाँत अथवा ऊँच-नीचकी भावनाके बिलकुल खिलाफ है। कांग्रेस पूर्ण समानताकी भावनाका विकास कर रही है।

मुझे खेद है कि मैने आपका इतना अधिक समय ले लिया, लेकिन लॉर्ड सैकी, इस बातके लिए मै सचमुच आपका कृतज्ञ हूँ कि आपने मेरे प्रति इतना सौजन्य और उदारता दिखाई।[1]

सर सुल्तान अहमद : अगर आप इजाजत दें तो मै श्री गांधीसे एक सवाल पूछना चाहता हूँ। उन्होंने कहा है कि अगर किसी समुदायके लोग एक अपेक्षित संख्यामें नहीं चुने जाते तो श्री गांधी निर्वाचनका अधिकार किसी और संस्थाको दे देना चाहेंगे।

श्री गांधी : नही, मैने ऐसा नही कहा। चुनाव तो वही लोग करेगे जो जनता द्वारा चुन कर आये है।

श्री अय्यंगार : आपका मतलब विनियुक्ति (को-ऑप्शन) से अतिरिक्त सदस्य चुननेकी व्यवस्थासे है ?

श्री गांधी : आप विनियुक्ति कहना चाहे तो विनियुक्ति ही कहें। मै तो इस विषयका सामान्य ज्ञान रखनेवाला आदमी ही हूँ। इसलिए आप मुझसे बिलकुल ठीक भाषाके प्रयोगकी अपेक्षा तो नही ही करेगे।

सर सुल्तान अहमद : लेकिन क्या इसका मतलब यह नहीं है कि कुछ विशेष समुदायोंके लिए सुरक्षित स्थान होंगे ?

श्री गांधी : नहीं, ऐसा नहीं है। मै तो यह कह रहा हूँ कि सख्या निर्धारित किये बिना उस तरहकी एक धारा रखी जा सकती है। लेकिन अगर सख्या भी निर्धारित कर दी जाये तो मुझे आपत्ति नही होगी और आप इस बातका ध्यान रखियेगा कि मैने इस विषयपर जो बात कही, उसका मुसलमानोंसे कोई सम्बन्ध नही था।

सर सुल्तान अहमद : नहीं, नहीं, मै मुसलमानोंकी बात तो कर ही नहीं रहा हूँ। मै तो उन चार वर्गोके सम्बन्धमें बोल रहा हूँ जिनका आपने उल्लेख किया

१. इसके बाद लॉर्ड सैकी अध्यक्षकी कुर्सीपर से उठ गये और उनका स्थान लॉर्ड लोथियनने ग्रहण किया।

है — मतलब कि व्यापारी, श्रमिक, जमींदार आदि। मुसलमानोंसे तो इसका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। वे इसमें शामिल नहीं है।

श्रीमती सुब्बरायन: क्या मैं भी महात्मा गांधीसे एक सवाल पूछ सकती हूँ? आपने महिलाओंकी स्थितिका उल्लेख किया है। मान लीजिए, केन्द्रीय विधायिका सभामें कोई भी महिला सदस्या नहीं चुनी जाती। उस हालतमें क्या आप उस विधायिका सभाको महिलाओंकी विनियुक्तिका अधिकार देनेवाली धाराकी व्यवस्था करवाना चाहेंगे?

श्री गांधी: मैं ऐसी विधायिका सभाका बहिष्कार करूँगा। जो विधायिका सभा एक उचित अनुपातमे महिला सदस्याएँ नही चुनेगी उसका मै बहिष्कार करूँगा और जब मैं यह बात कह रहा हूँ तो समझ लीजिए काग्रेसकी ओरसे भी कह रहा हूँ। निश्चय ही उनके लिए सरक्षणकी पूरी व्यवस्था रहेगी। यह कैसे किया जा सकता है, यह तो बिलकुल सीधी-सी चीज है। लेकिन विशेष निर्वाचन-क्षेत्रोकी व्यवस्था करनेमे मेरी सहमति कभी नही होगी।

श्रीमती सुब्बरायन: विशेष निर्वाचन-क्षेत्र नहीं; लेकिन मान लीजिए कि आम चुनावोंमें महिलाएँ नहीं चुनी जातीं, तो उस हालतमें तो आप केन्द्रीय विधायिका सभाको महिलाओंका चुनाव करने देंगे?

श्री गांधी: उस हालतमे निर्वाचित विधायक उनका चुनाव करेंगे और जबतक चुनाव नही कर लेगे तबतक उन्हे अपनी कार्यवाही चलानेका अधिकार नही होगा।

सर अकबर हैदरी: क्या एक सवाल मैं भी पूछ सकता हूँ? आपने ५,००,००० गाँवों या मतदाता-मण्डलोंकी बात कही है। क्या वे पहले प्रान्तीय परिषदोंके सदस्य चुनेंगे और फिर ये परिषदें संघीय विधायिकाके लिए सदस्य चुनेंगी; या आप प्रान्तीय परिषदों तथा संघीय विधायिका सभाके लिए अलग-अलग निर्वाचक-मण्डलोंकी व्यवस्था कराना चाहेंगे?

श्री गांधी: श्रीमन्, सर अकबर हैदरीके खास सवालका जवाब देनेसे पहले क्या मै यह कह सकता हूँ कि अगर आप मेरी सुझाई योजनाकी मोटी रूप-रेखाको स्वीकार कर लेते हैं तो ये सब बाते तो सचमुच बिना किसी कठिनाईके तय की जा सकती हैं। सीधे उनके सवालके जवाबमे मैं यह कहूँगा कि मैं जो योजना प्रस्तुत करनेकी कोशिश कर रहा था उसके अन्तर्गत गाँव तो किसी भी विधायिका सभाके लिए सदस्य नहीं चुनेंगे। वे तो निर्वाचको, मतदाताओंको चुनेंगे। प्रत्येक गाँवके निवासी एक आदमीको चुनेंगे और उससे कहेंगे कि "आप अपने मताधिकारका प्रयोग हमारे लिए कीजिएगा।" वह आदमी प्रान्तीय अथवा केन्द्रीय विधायिका सभाके चुनावके निमित्त उनका एजेंट होगा।

सर अकबर हैदरी: तब तो उस आदमीकी दो हैसियतें होंगी — एक ओर प्रान्तीय परिषद्का सदस्य चुननेकी और दूसरी ओर केन्द्रीय विधायिकाका सदस्य चुननेकी?

श्री गांधी : हाँ, उसकी दो हैसियतें हो सकती हैं। लेकिन, आज तो जब मैं बोल रहा था उस समय मेरे मनमें केन्द्रीय विधायिकाकी ही बात थी। वैसे मैं प्रान्तीय विधायिकाके सम्बन्धमें भी बेशक यही पद्धति लागू करना चाहूँगा।

सर अकबर हैदरी : क्या आप इस प्रकार निर्वाचित प्रान्तीय विधायिका द्वारा संघीय विधायिकाके निर्वाचनके लिए कोई गुंजाइश नहीं रखना चाहेंगे?

श्री गांधी : ऐसा तो नही है कि मैं उसके लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रहने दूँगा, लेकिन यह चीज मुझे ठीक नही लगती। अगर "अप्रत्यक्ष निर्वाचन" का यह विशेष अर्थ है तो फिर समझ लीजिए कि मैं उसके लिए कोई गुंजाइश नही रखता। इसलिए "अप्रत्यक्ष निर्वाचन" शब्दोंका प्रयोग मैं सामान्य अर्थमें ही कर रहा हूँ। अगर इसका ऐसा कोई विशिष्ट अर्थ हो तो मुझे नही मालूम।

बड़ौदाके महाराजा गायकवाड़ : इसी पद्धतिका अनुसरण तो हम लोग भी कर रहे हैं।

श्री गांधी : हाँ, महाराजा साहबकी योजना मुझे मालूम है।

बड़ौदाके महाराजा गायकवाड़ : इसका उद्देश्य यही है कि वर्ग या जाति अथवा धर्मका खयाल किये बिना प्रत्येक व्यक्तिको मत देनेका अधिकार दिया जाये।

श्री गांधी : हाँ, हाँ, मुझे मालूम है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसिडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ १५६-१६६

१७. पत्र : लॉर्ड विलिंग्डनको

किंग्सले हॉल,
एस० डब्ल्यू० ई० ३
१८ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका ४ तारीखका हवाई डाकसे भेजा गया पत्र पा कर बडी राहत मिली। उसी डाकसे मुझे सरदार वल्लभभाई पटेल और पण्डित जवाहरलाल नेहरूके भी पत्र मिले, जिनमें मुझे सूचित किया गया था कि आपने उन्हे बहुत ही कृपापूर्ण पत्र लिखे हैं। इस सबसे मेरा बोझ हलका हो गया है और मैं इसके लिए आपका कृतज्ञ हूँ। आपने डॉ० अन्सारी, सेठ जमाल मोहम्मद और बिड़लाके सम्बन्धमे लिखे मेरे पत्रपर तुरन्त ध्यान दिया, इसके लिए भी मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मेरा खयाल है कि यथासमय मुझे भारत-मन्त्रीका पत्र भी मिल जायेगा।

खान अब्दुल गफ्फार खाँ के बारेमें आप जो कहते हैं मैं उसे समझता हूँ और इस बातकी सराहना करता हूँ कि उनके बारेमें आपने साफ-साफ बाते लिखी हैं।

पर मुझे आशा है कि घटनाएँ आपके निष्कर्षको अनुचित ही सिद्ध करेगी। आपको शायद यह मालूम नही है कि उनका अग्रेजीका ज्ञान सीमित है। वे अग्रेजीमें सुसगत पत्र नही लिख सकते और उन्हे किसीकी सहायता लेनी होती है। फिर भी मैं यह मानता हूँ कि उनके सचिवका आपके सचिवको मुलाकातकी व्यवस्था करनेके लिए लिखना भोडापन है। परन्तु मैं चाहूँगा कि आप अब्दुल गफ्फार खाँको अपने हृदयमें थोडा स्थान दें। मुझे वे पूर्णतया विश्वसनीय और एक अच्छे कार्यकर्त्ता लगे है।

चटगाँव हत्याकाण्ड पर मैं आपके जितना ही दुःखी हूँ और पागल नौजवानोको उनके गलत रास्तेसे हटानेके लिए जो-कुछ कर सकता हूँ, कर रहा हूँ।

आपको यह बताते हुए मुझे खुशी होती है कि सभी वर्गोंके लोगोसे मुझे सच्ची सहानुभूति ही मिली है। आपको मालूम ही है कि मैं जान-बूझकर लन्दनके ईस्ट एण्डमें और एक ऐसी सस्थामें ठहरा हूँ जो ईस्ट एण्डके मजदूरोकी सेवाके लिए बनाई गई है। इसलिए मैं रोज सीधे-सादे गरीब लोगोके सम्पर्कमें आता हूँ, और जब वे मुझे अभिवादन करते है तो बडी प्रसन्नता होती है। मैं पराये लोगोके बीच रह रहा हूँ, ऐसा मुझे महसूस ही नहीं होता।

बाकी बातोके बारेमें अभी, इतनी जल्दी, मैं कुछ कह नहीं सकूँगा।

आशा है, आप और लेडी विलिंग्डन, दोनो पूर्ण स्वस्थ और सानन्द होगे।

हृदयसे आपका,

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७७७८) से।

१८. पत्र : विलियम एच० यूकर्सको[1]

[१८ सितम्बर, १९३१के पश्चात्]

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। भारत यदि स्वतन्त्र हो जाता है तो इसका अर्थ यह नही होगा कि तब ब्रिटिश भारतीय चाय-बागान या अन्य ब्रिटिश हित जब्त कर लिये जायेगे। इसके विपरीत, हर न्यायोचित हितकी पूरी-पूरी रक्षा की जायेगी। परन्तु यह निश्चित है कि एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण सभी विदेशी और अन्य हितोकी न्याय्यताकी जाँच करेगा।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७७९४) से।

१. न्यूयॉर्कके टी ऐंड कॉफ़ी ट्रेड जरनलके सम्पादक। १८ सितम्बरके अपने पत्रमें उन्होंने गांधीजीसे पूछा था कि स्वतन्त्र भारतकी उनकी योजनाओंका चाय उद्योग पर क्या प्रभाव पड सकता है।

१९. मैं क्या चाहता हूँ

सम्पादकने इस स्तम्भमे मुझसे यह बतानेको कहा है कि "मैं क्या चाहता हूँ।" यह शीर्षक भ्रामक है। मैं तो यहाँ केवल भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसका एक प्रतिनिधि हूँ और काग्रेससे अलग कुछ नहीं चाहता। इसलिए, "मैं क्या चाहता हूँ" का अर्थ, यह है कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस क्या चाहती है।

तो मैं पाठकोको पहले अपने स्वामी, भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसका परिचय दूँ। यह भारतका शायद सबसे पुराना राजनीतिक सगठन है और समूचे भारतका प्रतिनिधि होनेका दावा करता है। मैं जानता हूँ कि कुछ लोग इस दावेको नही मानेंगे। पर मैं केवल यही कह सकता हूँ कि यह दावा सेवाके अधिकारसे बना है।

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस सैंतालीस वर्षसे कुछ अधिक पुरानी है। इसे एक अग्रेज, एलन ऑक्टेवियस ह्यूमने जन्म दिया था। हिन्दुओके अलावा, मुसलमान, पारसी और ईसाई भी इसके अध्यक्ष रह चुके है। दो महिलाएँ, डॉ० एनी बेसेंट और श्रीमती सरोजिनी नायडू, भी इसकी अध्यक्ष रह चुकी है। इसके सदस्योमे जमीदार भी है।

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस व्यक्तियोकी पूजा नही करती। वह वर्गो, धर्मो और स्त्री-पुरुषोमे भेदभाव नही करती। उसने सदा तथाकथित अस्पृश्योके पक्षका समर्थन किया है और पिछले कुछ सालोसे उसने एक अस्पृश्यता-विरोधी समिति स्थापित कर रखी है, ताकि अस्पृश्यताको तेजीसे खत्म किया जा सके।

परन्तु भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके इस दावेका, जिसे न तो चुनौती दी गई है और न दी जा सकती है, आधार इस तथ्यमे है कि वह भारतके सात लाख गाँवोमे बसे देशकी कुल आबादीके ८५ प्रतिशतसे भी अधिक मूक व निर्धन लोगोका प्रतिनिधित्व करती है।

इस महान् संगठनके नामपर मैं दावा करता हूँ :

(१) भारतके लिए पूर्ण स्वाधीनताका।

(२) इसमे ऐच्छिक और पूर्ण समानतापर आधारित साझेदारीके लिए स्थान रहेगा।

(३) इसमे सच-योजना या ऐसे संरक्षणोके लिए भी स्थान रहेगा जो भारतके हितमें स्पष्टतः आवश्यक हो सकते है।

मैं आशा करता हूँ कि 'डेली मेल' के पाठक कांग्रेसकी ओरसे निर्भीकतापूर्वक रखे गये इस दावेसे भयभीत नही होंगे। 'दूसरोसे अपने प्रति जैसे व्यवहारकी अपेक्षा रखते हो, तुम खुद भी उनके साथ वैसा ही व्यवहार करो।' उन्नीस सौ साल पुरानी इस बुद्धिमत्तापूर्ण कहावतके आधारपर, मैं यह आशा करता हूँ कि भारतकी स्वतन्त्रता, जिससे कि वह ब्रिटिश शासनके कारण वचित रहा है, अंग्रेज नर-नारियोंको बुरी नही लगेगी।

स्वयसिद्ध सत्यके लिए किसी तर्ककी आवश्यकता नही है। स्वाधीनता हर राष्ट्रका जन्मसिद्ध अधिकार है।

भारतका भी यह अधिकार है। परन्तु यहाँ यह बताना अप्रासगिक न होगा कि ब्रिटिश शासनके अधीन भारत अधिकाधिक निर्धन और दुर्बल होता गया है। ग्राम-उद्योग नष्ट हो गया है और पूरे राष्ट्रको निरस्त्र कर दिया गया है। अपने पूरे अर्थोमें केवल पूर्ण स्वतन्त्रता ही भारतको सुखी और शक्तिशाली बना सकती है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
डेली मेल, १९-९-१९३१

२०. बच्चोंके साथ चर्चा

१९ सितम्बर, १९३१

कल तीसरे पहर किंग्सले सेटिलमेंटके हॉलके बीचोंबीच फर्शपर बैठे श्री गांधीने बो इलाकेके बच्चोंके एक दलसे भेंट की, जिसमें कोई भी बच्चा १२ वर्षसे अधिकका नहीं था। आयोजन सर्वथा अंतरंग था। मिस लेस्टरके एक-दो सहायकों, जिन्दादिल श्री और श्रीमती जॉर्ज लेसबरी और भावनगरके शालीन दीवान सर प्रभाशंकर पट्टणीके सिवा, वहाँ कोई भी बड़ी उम्रका आदमी मौजूद नहीं था।

परन्तु (एक संवाददाता लिखता है) इस भेंटके तुरन्त बाद श्री गांधीने स्वयं मुझे उसके बारेमें सब बातें बताईं।

भारतके मौसम, भारतीय बच्चो द्वारा खेले जानेवाले खेलो और इसी तरहकी दूसरी बातोके बारेमें जब प्रश्न किये जा रहे थे तो एक बच्चेने मुझसे मेरी भाषाके विषयमें पूछा।

इससे मुझे वह मौका मिल गया जिसे कि मैं चाहता था, और मैं उन्हे बहुत-से शब्दोके समान उद्गमके बारेमें बताने लगा। मैंने 'पेटर,' 'फादर' और हिन्दू 'पिता', तथा 'मेटर,' 'मदर' और हमारा अपना 'माता' शब्द लिया। जब मैंने उनसे यह पूछा कि इससे क्या साबित होता है तो वे बोले, "इससे यह साबित होता है कि हम सब एक ही नस्लके हैं।"

इसपर मैंने कहा, तो हम सब एक ही परिवारके हैं और हमे परस्पर मित्र होना चाहिए, और उन्होने मेरी यह बात मानी।

फिर मैंने लडकोसे पूछा कि क्या उनमे से कोई हमलेका जवाब हमलेसे देता है। दस-बारह बहादुर लडकोने अपने हाथ उठा दिये। इससे मुझे अहिंसाके सिद्धान्त पर उन्हे एक छोटा-सा पाठ देनेका मौका मिल गया। उसके बाद मैंने पूछा कि दरअसल उन्हे उसके बजाय क्या करना चाहिए। "मित्रता कर लेनी चाहिए," उन्होने जवाब दिया, और मैंने कहा कि यह बात उन्हे याद रखनी चाहिए।

लन्दनके बच्चे मुझे इतने अच्छे लगते है कि यहाँ और जिन घरोमे मैं आज सुबह गया था, दोनो जगह उनसे मिलकर मुझे बड़ा आनन्द मिला।

इस भेंटके फलस्वरूप, कुछ बच्चोंने अपना यह संकल्प प्रकट किया है कि उनका एक छोटा-सा शिष्टमण्डल भारतीय बच्चोंके नाम मैत्रीका एक सन्देश लेकर श्री गांधीके पास जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
संडे ऑब्जर्वर, २०-९-१९३१

२१. भाषण: स्वागत-समारोहमें[1]

लन्दन
१९ सितम्बर, १९३१

मै अपने देशके करोडो भूखे लोगोका प्रतिनिधित्व करनेके लिए इंग्लैंड आया हूँ और ईस्ट एण्डके लोगोके बीच अपनेको पाकर मुझे बहुत ही खुशी हो रही है। जिस स्नेहके साथ मेरा स्वागत किया गया है वह मेरे लिए सदा एक बहुमूल्य निधि बना रहेगा।

भारतके गरीब लोगोके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मै जिस तरहकी पोशाक पहनता हूँ उससे कौतूहल पैदा होगा, मै यह जानता था। पर मुझे ऐसा लगता है कि मेरे इस स्वागतका कारण कौतूहलके अलावा कुछ और है।

[अंग्रेजीसे]
संडे टाइम्स, २०-९-१९३१

२२. पत्र: गुंट्रम प्रूफरको

[१९ सितम्बर, १९३१के पश्चात्]

पत्रके लिए धन्यवाद। जर्मनीकी यात्राके बारेमें[2] सोचना अभी असामयिक होगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७७९८) से।

२३. गुजरातकी खादी

यदि गुजरातकी खादीको गुजरात ही इस्तेमाल नही करता तो और कौन करेगा? गुजरातकी खादी मोटी है, टिकाऊ नही है और महँगी है, यह कहकर यदि गुजराती उसका बहिष्कार कर देते है तो फिर उसे कौन इस्तेमाल करेगा? अन्य लोग उसे क्यो इस्तेमाल करे? इसी प्रकारके बहानोके कारण धर्म नष्ट हुए है, देश

१. इसका आयोजन म्यूरियल लेस्टरने किंग्सले हॉलमें इस उद्देश्यसे किया था कि उनके कुछ मित्र गांधीजीसे मिल सकें।

२. गुट्रम प्रूफरने १९ सितम्बरके अपने पत्रमें गांधीजीसे अनुरोध किया था। कि वे स्वदेश लौटते समय जर्मनी पधारें।

तबाह हुए हैं और मनुष्योका पतन हुआ है। यदि गुजरातकी खादी मोटी और खुरदरी लगती है तो उसे महीन और मुलायम बनायें। यदि वह महँगी है तो उसकी खपत बढ जानेपर वह अवश्य सस्ती हो जायेगी।

सब लोग यह जानते है कि दस वर्ष पहले गुजरातमे जैसी खादी बनती थी उसकी अपेक्षा आज वह महीन, टिकाऊ और सस्ती है। यदि खपत बढ जाये तो उसमे और अधिक सुधार हो सकता है। किन्तु सुधार होना, न होना तो गुजरातियोके हाथकी बात है। वे उसे महँगी कहकर अस्वीकार कर सकते हैं या फिर महँगी होनेके बावजूद अपनी मानते हुए उसे अपनाकर उसकी किस्ममें सुधार कर सकते है और उसे सस्ता भी बना सकते हैं।

इस शुभ उद्देश्यको ध्यानमे रखते हुए एक खादी-भक्तने यह सुझाव दिया है कि प्रान्तीय समितिको गुजराती खादी-सप्ताह मनाना चाहिए। उस सप्ताहके निमित्तिसे जहाँ-जहाँ गुजरातकी खादी इकट्ठी हो गई हो उसे वहाँसे मँगा लिया जाये और स्वयंसेवक और स्वयसेविकाएँ घर-घर फेरी लगाकर उसे वेच डाले। कुल मिलाकर गुजरातमे उत्पादित खादी इतनी कम है कि यदि चाहे तो अकेला अहमदाबाद ही उसे खरीद सकता है। सप्ताह किस प्रकार मनाया जाये, यह बात मेरे बतानेकी नही है। पूरी खादी इकट्ठी करके और सम्बन्धित उत्पादन-केन्द्रोको पैसा चुकाकर समिति को पूरी कीमतका औसत निकाल लेना चाहिए और किसी तरहका नुकसान या घाटा उठाये बिना उसे वेच देना चाहिए। व्यापारमे चीज नुकसान उठाकर भी बेची जाती है। किन्तु यहाँ बात व्यापारकी नही, बल्कि देशप्रेमकी है। देशप्रेमके लिए खरीदार चाहे जितना दाम दे सकता है। जिस प्रकार कोई माँ अपने कुरूप या ऐसे बच्चेको, जिसके पालन-पोषणपर बहुत अधिक खर्च हो रहा हो, छोड नही देती, बल्कि उसके कल्याणके लिए तबाह तक हो सकती है, यदि गुजरात भी वैसा ही कुछ करे, तो वह काफी होगा। गुजरातको तबाह नही होना पड़ेगा, शायद कुछ अधिक कीमत-भर देनी पड़ेगी।

खादी-भक्तका दूसरा सुझाव यह है कि गुजरातके कार्यकर्त्ताओको गुजरातकी खादी ही इस्तेमाल करनी चाहिए।

गुजरातकी खादीकी खपत बढानेके और भी बहुत-से उपाय सुझाये जा सकते है, किन्तु वैसा करनेकी चाह-भर होनी चाहिए। जहाँ चाह है वहाँ राह निकल ही आती है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०-९-१९३१

२४. भेंट : 'पोस्ट' के प्रतिनिधिको

लन्दन
[२० सितम्बर, १९३१][1]

भेंटके दौरान जब ब्रिटेनके प्रति उनके रुखका जिक्र आया तो उन्होंने कहा :

मुझे ब्रिटिश लोगोसे नही बल्कि ब्रिटिश शासनसे नफरत है।

ब्रिटिश अधिकारियोंके भारतसे हटा लिये जानेसे, गांधीजीके खयालमें, कोई भारी मुश्किल पेश नहीं आयेगी। वैसे, उन्होंने यह बात स्पष्ट की कि उनमें से कुछ यदि भारतमें रहना चाहेंगे तो रह भी सकेंगे, "पर, हमारी शर्तो पर।" मैंने पूछा कि क्या वे इस चीजका समर्थन करेंगे कि भारतीय, सरकारी कार्यका अनुभव प्राप्त करनेकी दृष्टिसे, ब्रिटिश शासनमें पद-ग्रहण करें। गांधीजी ने जवाब दिया कि असहयोगके दिनोंमें तो उन्होंने वस्तुतः इसके विरुद्ध सलाह दी थी, और जहाँतक अनुभवका प्रश्न है वह कोई बहुत महत्त्व नहीं रखता। भारत स्थित ब्रिटिश अधिकारियोंकी कुशलताके सम्बन्धमें उन्होंने कहा :

वे अपने ढगसे और अपने निजी हितके लिए कुशल है।

आगे और प्रश्नोंसे पता चला कि गांधीजी का संकेत केवल उन अधिकारियोंके कार्योकी ओर था जो वर्तमान व्यवस्थाको चला रहे हैं। फिर भी मुझे ऐसा लगा कि इस विषयपर कुछ और प्रकाश डाला जाना उपयोगी होगा, और मैंने पूछा : "आपने जमीनका लगान आँकने और अन्य मामलोंमें ब्रिटिश अधिकारियोंकी प्रायः आलोचना की है। समय-समय पर आपने जिन रिपोर्टोको चुनौती दी है, क्या आपके खयालमें वे जान-बूझकर भ्रामक बनाई गई थीं?" गांधीजी ने जवाब दिया :

नही, ऐसा नही किया गया है; या किया भी गया है तो कभी-कभी ही। पर अन्याय तो हुआ। मरीजको जान-बूझकर मारा गया या अज्ञानवश या वह केवल संयोगवश मर गया, इससे कोई फर्क नही पडता।

भेंटके अन्तमें गांधीजी ने दो वाक्य दोहराये, जिनका उपयोग वे पहले भी कर चुके थे।

१. भेंटका स्थान लन्दन था और यह रविवारको सुबह हुई थी। इसके पत्रमें प्रकाशित होनेसे पहले चार रविवारोंको गाधीजी लन्दनसे बाहर थे। इस तरह इसकी सम्भावित तिथि २० सितम्बर हो सकती है।

मैं जिस तरह भारतके लिए स्वतन्त्रताकी कामना करता हूँ उसी तरह सभी राष्ट्रोंके लिए करता हूँ, और मेरे खयालमें, भारतकी स्वतन्त्रताका अर्थ विश्वकी स्वतन्त्रता है।[1]

[अंग्रेजीसे]

पोस्ट, २४-१०-१९३१

२५. भेंट : श्रीमती नाइटको

लन्दन

[२० सितम्बर, १९३१]

गांधीजी मेरठके कैदियोंके लिए[2] कुछ नहीं करेंगे। उनके मामलेको वे यह कहकर छोड़ रहे हैं कि वाइसरायके साथ उनके समझौतेके बाद जो आम माफी दी गई उसमें वे नहीं आते, क्योंकि वे अहिंसावादी नहीं हैं।

यह चीज लन्दनमें हुई गांधीजी और श्रीमती नाइटकी भेंटमें साफ हुई। श्रीमती नाइट मेरठके एक कैदी लेस्टर हचिन्सनकी माँ है, जो जमानतपर रिहा किया गया है, और जेलमें भोगी यातनाओंके कारण इस समय बहुत अधिक बीमार है।

गांधीजी ने यह भी कहा कि वे जानते हैं कि हचिन्सन बहुत अधिक बीमार है, पर वे उसके लिए कुछ नहीं कर सकते।

यह पूछने पर कि क्या वे मेरठ केसके सवालको गोलमेज कान्फ्रेन्समें नहीं रख सकते, उन्होंने जवाब दिया कि वे ऐसा नहीं कर सकते, क्योंकि कान्फ्रेन्सकी कार्रवाई गुप्त और अन्तरंग है।

[अंग्रेजीसे]

डेली वर्कर, २१-९-१९३१

१. रिपोर्टके अन्तमें लिखा था : "अपने पतले-दुबलेपनके बावजूद वे प्रभावशाली हैं; और इस तरहका वैयक्तिक आकर्षण तो मुझे अबतक कभी अनुभव ही नहीं हुआ था। यह विनम्र व्यक्ति अजेय है, यह बात मैं अक्सर कहता रहा हूँ; पर इसकी सचाई मैंने केवल अभी महसूस की है। गांधीजी की विनम्रता आदमीको भावाभिभूत कर देती है।

२. मेरठके जिला-मजिस्ट्रेटकी सूचनापर भारतीय दण्ड संहिताकी धारा १२१ (ए)के अन्तर्गत कलकत्ता, मद्रास, लखनऊ, पूना, चाँदपुर और इलाहाबादमें २८ ट्रेड यूनियन नेताओंकी गिरफ्तारी हुई थी। मुकदमा साढ़े चार वर्षसे भी ज्यादा समय तक चला था और उसमें कई अभियुक्तोंको लम्बी सजाएँ दी गई थीं। गांधीजीके अनुसार इस मुकदमेका हेतु लोगोंको आतंकित करना था।

२६. पत्र : सुशीला गांधीको

किंग्सले हॉल, वो
लन्दन, ईस्ट
२२ सितम्बर, १९३१

चि० सुशीला,[1]

तुम्हारा पत्र मिला। परिषद्की बैठकमें भाग लेते हुए यह पत्र लिख रहा हूँ। साथमें महादेव, प्यारेलाल, देवदास और मीराबहन भी हैं। आजकल जो ठण्ड पड़ रही है उसे सहन किया जा सकता है। लेकिन यहाँ काम बहुत अधिक बढ़ गया है। क्या परिणाम निकलेगा, यह तो मैं नहीं कह सकता। अभी एक महीना तो यहाँ रहूँगा ही। मणिलालका तार जरा देरसे मिला था। तुम दोनोकी यहाँ आनेकी इच्छा तो होती ही होगी किन्तु उस इच्छापर अंकुश रखना ही उचित होगा। मेरे साथ रहकर इस देशको अच्छी तरह नहीं देखा जा सकता; खर्च बहुत होगा, जो हमारी सामर्थ्यके बाहरकी बात है।

जयाशंकर अपने दु:खोसे मुक्ति पा गये। अब यदि दोनो भाई वहीं रह जायें तो बहुत अच्छा हो। जबतक तुम वहाँ हो तबतक वहाँके कामको चमकाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७८६) से।

२७. पत्र : जमना गांधीको

२२ सितम्बर, १९३१

चि० जमना,

तुमने पुरुषोत्तमका पत्र पढ़ा ही होगा। अब मेरी सलाह है कि हम उसकी सगाईकी बात भूल जायें। तुम इतना याद रखना कि जब वह तैयार होगा तो मैं उसके लिए योग्य सहचरी खोज देनेको तैयार रहूँगा। यदि वह आजन्म ब्रह्मचर्यका पालन कर सके तो हमें प्रसन्न होना चाहिए।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८४९) से; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. मणिलाल गांधीकी पत्नी।

२८. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

२२ सितम्बर, १९३१

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। तेरा कल्याण ही है। यदि जमना तेरी सगाईकी बात सोचती रहती है तो इसमें दुःखी होनेका कोई कारण नहीं है। जबतक तेरा मन निर्विकार रहता है अथवा तू विवाहकी इच्छा नहीं करता तबतक तुझे कोई विवश नहीं कर सकता। बल्कि मेरी ओरसे तो तुझे मदद ही मिलेगी।

तू काम अच्छा कर रहा है। अभी तो यहाँ हमें एक महीने रहना पड़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९०३) से; सौजन्य : नारणदास गांधी

२९. भेंट : चार्ली चैपलिनसे[1]

लन्दन
२२ सितम्बर, १९३१

गांधीजी ने उनका नाम नहीं सुना था, पर जाहिर है, वे गांधीजी के चरखेके बारेमें सुन चुके थे। इसलिए पहला प्रश्न उन्होंने गांधीजी से यही किया कि वे मशीनोंके खिलाफ क्यों हैं। गांधीजी को इस प्रश्नसे खुशी हुई और उन्होंने उन्हें विस्तारसे यह बात समझाई कि भारतकी पूरी किसान आबादी छः महीने बेकार रहती है, इसलिए उसे उसके पहलेके सहायक उद्योगमें फिरसे लगाना उनके लिए महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

चार्ली चैपलिन : तो यह केवल कपड़ेके बारेमें है ?

गांधीजी : बिलकुल। कपड़े और भोजनके मामलेमें हर राष्ट्रको आत्मनिर्भर होना चाहिए। हम आत्मनिर्भर थे और फिर वैसा ही होना चाहते हैं। इंग्लैंडको, बड़े पैमानेके अपने उत्पादनके कारण, अन्यत्र बाजारकी तलाश रहती है। हम इसे शोषण कहते हैं, और शोषक इंग्लैंड संसारके लिए एक खतरा है। यदि यह बात ठीक है तो सोचिए कि भारत जब मशीनोंको अपनाकर अपनी आवश्यकताओंसे कई गुना अधिक कपड़ा तैयार करने लगेगा और इस तरह वह भी शोषक बन जायेगा तो वह दुनियाके लिए कितना बड़ा खतरा होगा।

१. भेंट डॉ० कटियालके घर, केनिंग टाउनमें हुई थी। रिपोर्ट महादेव देसाईके "लंदन लैटर" और चार्ली चैपलिनकी पुस्तक माई ऑटोबायोग्राफी से ली गई है।

चार्ली चैपलिन : तो प्रश्न केवल भारत तक सीमित है? लेकिन मान लीजिए आपको भारतमें रूसकी तरहकी स्वाधीनता मिलती है, और आप अपने बेरोजगारोंके लिए अन्य काम खोज सकते हैं, और सम्पत्तिके बराबर बँटवारेकी गारण्टी कर सकते हैं, तब तो आप मशीनकी उपेक्षा नहीं करेंगे? आप कामके घंटे कम करने और श्रमिकको आरामके लिए अधिक समय देनेका समर्थन करेंगे?

गाधीजी : बेशक।[1]

चार्ली चैपलिन : जैसा कि स्वाभाविक है, मेरी भारतकी आकांक्षाओं और उसके स्वाधीनता-संघर्षसे सहानुभूति है। फिर भी मशीनसे आपको जो चिढ़ है उसने मुझे कुछ उलझनमें डाल दिया है।

गाधीजी : आपकी बात मैं समझता हूँ। पर उन लक्ष्योंपर पहुँच सकनेसे पहले भारतको अपनेको अंग्रेजी शासनसे मुक्त करना चाहिए। मशीनके कारण हम अतीतमे इंग्लैडके अधीन हो गये, और हम अपनेको पराधीनतासे केवल इसी तरह मुक्त कर सकते है कि हम मशीनसे बनी सभी चीजोका बहिष्कार करें। इसीलिए हमने प्रत्येक भारतीयके लिए अपना सूत कातना और अपना कपड़ा बुनना देशके प्रति उसका एक कर्त्तव्य बना दिया है। यह इंग्लैड-जैसे अति शक्तिशाली राष्ट्रपर आक्रमणका हमारा अपना ढग है—और, निःसन्देह, अन्य कारण भी हैं। भारतकी जलवायु इंग्लैडसे भिन्न है; और उसकी आदतें और आवश्यकताएँ भी भिन्न हैं। इंग्लैडमे ठंडे मौसमके कारण कठिन उद्योग और पेचीदा अर्थव्यवस्था आवश्यक हो जाती है। आपको खाना खानेके उपकरणोकी जरूरत पडती है, जबकि हम अपनी अँगुलियोको काममे लाते है। और इस तरह यह चीज बहुत-सी भिन्नताओका रूप ग्रहण कर लेती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ८-१०-१९३१, और माई ऑटोबायोग्राफी,

३०. भाषण : संघ-संरचना समितिकी बैठकमें

लन्दन
२२ सितम्बर, १९३१

लॉर्ड चान्सलर,

भारत-मन्त्रीने कल बहुत ही सुचिन्तित वक्तव्य दिया था, और सर अकबर हैदरीने उस वक्तव्यमे दिये गये सुझावोका पूरे दिलसे समर्थन किया है। इसलिए काग्रेसकी ओरसे मैं अपना यह कर्त्तव्य समझता हूँ कि इस सम्बन्धमे उसकी स्थिति स्पष्ट कर दूँ।

ब्रिटिश राष्ट्रपर आज जो सकट छाया है उसमे हर विचारशील काग्रेसीकी उससे सहानुभूति होनी चाहिए। परन्तु भारतमे जिस ढगकी कार्रवाई की गई

१. इससे आगेका अंश चार्ली चैपलिनकी माई ऑटोबायोग्राफी से लिया गया है।

है' उसपर यदि मैं आश्चर्य और दु:ख प्रकट नहीं करता हूँ तो मैं अपने दायित्वके प्रति सच्चा नहीं रहूँगा। मैं अपनी सीमाएँ जानता हूँ। वित्तीय विषयोंकी मेरी जानकारी बिलकुल प्राथमिक स्तरकी है। इसलिए उसके गुण-दोषोंकी परीक्षाका कार्य मुझे कांग्रेसके विशेषज्ञोंपर छोड़ देना चाहिए। परन्तु मुझे जो चीज पीड़ा दे रही है वह यह तथ्य है कि भारतमें यह निर्णय विधानमण्डलोंकी, जैसी भी वे हैं, उपेक्षा करके लिया गया है, और वह भी एक ऐसे समयमें जब यहाँ हमसे शीघ्र ही पूर्ण उत्तरदायी सरकारकी स्थापना पर विचार करनेकी अपेक्षा की जा रही है। भारत सरकारकी यह कार्रवाई विचित्र है और, मेरी विनम्र रायमें, भारत सरकारके कठोर और अनम्य रुखका असंदिग्ध प्रमाण है। यह चीज साफ है कि राष्ट्रके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषयोंके सम्बन्धमें हमें, हमारे लिए क्या अच्छा है, यह निर्णय करने योग्य समझना तो दूर, इस लायक भी नहीं माना जाता कि हमसे परामर्श किया जाये। इस दृष्टिकोणकी मैं अपनी पूरी शक्तिसे निन्दा करता हूँ; और इन परिस्थितियोंमें, जहाँतक कांग्रेसका सवाल है, मुझे खेद है कि मैं भारतमें की गई कार्रवाइयोंका, जैसा कि भारत-मन्त्री चाहते हैं, समर्थन नहीं कर सकता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउण्ड टेबिल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐण्ड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २७८-७९

३१. पत्र: 'मैंचेस्टर गार्डियन' को

लन्दन
२३ सितम्बर, १९३१

महोदय,

मेरा ध्यान सोमवार, २१ सितम्बरके 'मैंचेस्टर गार्डियन' में छपे एक पत्रकी ओर आकर्षित किया गया है। उसमें कुछ ऐसे टिकटोंकी ओर ध्यान दिलाया गया है जिनपर "ब्रिटिश मालका बहिष्कार करो" शब्द छपे हैं। यदि इस तरहके टिकटोंका उपयोग किसी कांग्रेसी अधिकारीने ५ मार्च, १९३१के समझौतेके बाद किया है, तो यह साफ-साफ उस समझौतेके विरुद्ध है जिसमें यह घोषणा की गई है कि भविष्यमें केवल आर्थिक बहिष्कारकी ही अनुमति दी जानी चाहिए। परन्तु इस तरहके टिकट, निःसन्देह समझौता होनेसे पहले संघर्षके दिनोंमें प्रयुक्त किये गये थे। इस

१. वित्तीय संकटके बाद सरकारने २१ सितम्बरको स्वर्णमान छोड़नेके अपने निर्णयकी घोषणा की थी। एक आदेश जारी कर, सरकारको स्वर्ण या पौंड बेचनेके उसके उस दायित्वसे मुक्त कर दिया गया था जो उस पर मुद्रा अधिनियमके अनुसार आता था, और २२ से २४ सितम्बर तक तीन दिनकी छुट्टी घोषित कर दी गई थी। इंडिया इन १९३१-३२।

तरहके टिकट समझौतेके बाद प्रयुक्त नही हो सकते। जहाँ-कही मुझे समझौतेका कोई उल्लघन दिखाई दिया है, मैंने तुरन्त उसे रोकनेका यथाशक्ति प्रयास किया है।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
मैंचेस्टर गार्डियन, २६-९-१९३१

३२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन
२३ सितम्बर, १९३१

हमने अपने मतभेदोपर विचार-विमर्श किया और बातचीत बहुत ही मित्रतापूर्ण रही।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २६-९-१९३१

३३. भाषण : गिल्डहाउस चर्चमें[2]

लन्दन
२३ सितम्बर, १९३१

आपको मुझसे यह सुनकर आश्चर्य होगा कि यद्यपि मेरा ध्येय बाहरसे राजनीतिक लगता है, पर मैं आपको यह विश्वास दिलाना चाहूँगा कि इसकी जड़ें — यदि मुझे इस शब्दको प्रयुक्त करनेकी अनुमति हो तो कहूँगा — आध्यात्मिक हैं। यह बात आम तौरपर विदित है, यद्यपि इसपर शायद विश्वास नही किया जाता, कि मैं कमसे-कम अपनी राजनीतिको नैतिकता, आध्यात्मिकता और धर्मसे विच्छिन्न न होनेका दावा करता हूँ। मेरा यह दावा रहा है — और यह दावा व्यापक अनुभवपर आधारित है — कि जो आदमी ईश्वरकी इच्छाको जानने और उसका अनुसरण करनेकी कोशिश कर रहा है वह जीवनके किसी भी क्षेत्रको अछूता नहीं छोड सकता। अपने सेवा-कार्यके दौरान मैं इस निष्कर्षपर भी पहुँचा कि यदि जीवनका कोई ऐसा क्षेत्र है

१. गांधीजी ने यह वक्तव्य रिट्ज होटलमें आगाखाँ से अपनी भेंटके बाद काफी रात गये दिया था। इस भेंटकी कोई रिपोर्ट उपलब्ध नही है।

२. सभा फ्रेंसिस्कन सोसाइटीके तत्त्वावधानमें हुई थी और डॉ० मॉड रॉयडन उसके सभापति थे। विषय था "स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबी"।

जहाँ नैतिकता, सत्य, ईश्वरका भय आवश्यक नहीं है, तो वह क्षेत्र विलकुल छोड देना चाहिए।

परन्तु मैंने यह भी देखा है कि आजकी राजनीति राजाओंकी चिन्ताकी चीज नहीं रह गयी है, वल्कि वह समाजके सबसे निचले स्तरको प्रभावित करती है और कटु अनुभवसे मैंने यह जाना है कि यदि मैं समाज-सेवा करना चाहता हूँ तो मैं राजनीतिको छोड नहीं सकता।

कृपया यह मत सोचिए कि मैं आज रात आपके सामने राजनीतिपर बोलना चाहता हूँ और स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीको किसी-न-किसी तरीकेसे राजनीतिसे जोडना चाहता हूँ। ऐसा मेरा इरादा नहीं है। यह सब तो मैंने आपको केवल इस वातकी पृष्ठभूमि बतानेके लिए कहा कि मैं किस तरह इस विश्वासपर पहुँचा कि किसी भी सामाजिक कार्यकर्त्ताके लिए, या ऐसे राजनीतिक कार्यकर्त्ताके लिए जो इस समय साधारण राजनीतिमें व्याप्त घिनौनी अनैतिकता और असत्यसे अछूता रहना चाहता है, स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबी आवश्यक है। उस जीवनसे आती दुर्गन्ध कुछ लोगोको इतनी दम घोटनेवाली लगी है कि वे इस निष्कर्षपर पहुँच गये हैं कि राजनीति ईश्वरसे डरनेवाले व्यक्तिका क्षेत्र ही नहीं है।

मुझे ऐसा लगता है कि यदि सचमुच ऐसा होता तो यह मानव-जातिके लिए एक अभिशाप होता। जो-कुछ मैं अब कह रहा हूँ उसकी रोशनीमें आप खुद यह देखिए कि संसारके इस एक सबसे बड़े नगरमें आपकी प्रत्येक गति-विधि, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे, क्या राजनीतिसे जुडी नहीं है।

तो, जब मैंने अपनेको राजनीतिक गोरखधन्धेमें उलझा पाया तो मैंने अपने-आपसे पूछा कि अनैतिकता, असत्य और जिसे राजनीतिक लाभ कहते हैं, उससे बिलकुल अछूता रहनेके लिए मेरे लिए क्या-क्या आवश्यक है।

अपनी इस खोजमें मैंने कई बातोंका आविष्कार किया, जिनकी चर्चा मुझे आज नहीं करनी है। पर यदि मैं भूलता नहीं हूँ तो यह गरीबीकी आवश्यकता मुझे सबसे पहले महसूस हुई।

फिर मैंने गरीबीका वरण कैसे किया, इसका पूरा विवरण मैं आपको नहीं देना चाहता हूँ, यद्यपि वह दिलचस्प है और मेरे लिए तो पवित्र भी है। पर मैं आपको केवल इतना ही बता सकता हूँ कि प्रारम्भमें वह एक कठिन संघर्ष था और — जैसा कि मेरी स्मृतिमें आज भी स्पष्ट है — अपनी पत्नी और अपने बच्चोंके साथ वह एक तरहका मल्ल-युद्ध था।

वह जो भी कुछ रहा हो, पर मैं इस निश्चित निष्कर्षपर पहुँचा कि यदि मुझे उन लोगोंकी सेवा करनी है जिनके बीचमें मेरा जीवन ढला है और जिनके कष्टोंको मैं रोज देखता हूँ तो मुझे सारी सम्पत्तिका, हर तरहके परिग्रहका त्याग करना होगा।

यह कहना सच नहीं होगा कि यह विश्वास जब मुझमें जगा तो मैंने हर चीजका तुरन्त त्याग कर दिया। मैं आप लोगोंके आगे यह स्वीकार करता हूँ कि पहले-पहल

प्रगति धीमी रही, और अब जब मै संघर्षके उन दिनोका स्मरण करता हूँ तो मुझे यह याद आता है कि वह आरम्भमे कष्टदायी भी था। परन्तु, ज्यो-ज्यों दिन बीतते गये, मैंने देखा कि मुझे 'बहुत-सी अन्य चीजे भी, जिन्हे मै अपनी समझा करता था, छोडनी होंगी और फिर एक समय ऐसा भी आया जब उन चीजोको त्यागना वास्तविक उल्लासकी बात हो गई। और तब एक-एक कर, लगभग ज्यामितीय प्रगतिके साथ, चीजे मुझसे छूटती गईं। अपने उन अनुभवोका वर्णन करते हुए मै यह कह सकता हूँ कि मेरे कन्धोसे एक बडा बोझ उतर गया और मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मै अब निश्चिन्त चल-फिर सकता हूँ और अपने भाइयोकी सेवाका कार्य भी खूब आरामसे और पहलेसे अधिक आनन्दके साथ कर सकता हूँ। तब कैसा भी परिग्रह मेरे लिए एक झंझट और बोझ हो गया।

उस आनन्दके कारणकी खोज करनेपर मैंने देखा कि मै किसी चीजको अपनी मानकर अपने पास रखता हूँ तो मुझे उसकी सारी दुनियासे रक्षा करनी होती है। मैंने यह भी देखा कि बहुत-से ऐसे लोग है जिनके पास वह चीज नही है, यद्यपि वे उसे चाहते है और भूखे अकाल-पीडित लोग मुझे अकेला पाकर यदि उस चीजमे न केवल हिस्सा बँटाना बल्कि मुझसे उसे छीनना चाहे तो मुझे पुलिसकी भी सहायता लेनी होगी। और मैंने अपने-आपसे कहा: यदि वे उसे चाहते है और ले लेते है, तो वे ऐसा किसी द्वेषपूर्ण उद्देश्यके कारण नही करते है, बल्कि इसलिए करते है कि उन्हे उसकी मुझसे अधिक जरूरत है।

और फिर मैंने अपने-आपसे कहा : परिग्रह मुझे पाप लगता है। मै कुछ चीजोको केवल तभी अपने पास रख सकता हूँ जब मुझे यह मालूम हो कि अन्य लोग, जो उस तरहकी चीजोको अपने पास रखना चाहते है, उन्हे अपने पास रख सकते है। लेकिन हम यह जानते है — हममे से हरएक अपने अनुभवसे यह कह सकता है — कि इस तरहकी चीज असम्भव है। इसलिए एक ही बात है जिसे सब अपने पास रख सकते हैं और वह है अपरिग्रह, यानी कुछ भी अपने पास न रखना। दूसरे शब्दोमे स्वेच्छासे समर्पण।

इसपर आप मुझसे यह कह सकते है कि आप, स्वेच्छासे गरीबीके अलावा और किसी भी तरहकी कोई चीज न रखनेकी बात करते हुए भी, अपने शरीरपर बहुत-सी चीजे धारण किये हुए है। और जो-कुछ मै अब कह रहा हूँ यदि आप उसके अर्थको केवल सतही तौरपर ही समझे तो आपका यह ताना सही भी होगा। परन्तु वस्तुत: आशय उसकी भावनासे है। जबतक आपका शरीर है आपको उसे ढकनेके लिए कुछ-न-कुछ चीज लेनी होगी। लेकिन तब आप शरीरके लिए जितना भी ले सकते है उतना नही लेगे, बल्कि यथासम्भव कमसे-कम — बस जिससे काम चल सके- उतना ही लेगे। आप अपने रहनेके लिए बहुत-से भवन नही, बल्कि सिर छिपाने लायक कमसे-कम स्थान लेगे। और यही बात भोजन और अन्य चीजोके बारेमें होगी।

इस तरह आप यह देख सकते है कि जिसे आप और हम आजकल सभ्यता समझते है और जिस स्थितिको मै परमानन्दकी स्थिति कह रहा हूँ और एक अत्यन्त

वांछनीय स्थितिके रूपमें आपके आगे रख रहा हूँ, उनमे प्रतिदिन सघर्ष चलता है। एक ओर तो सभ्यता या सस्कृतिका आधार आपकी सभी जरूरतोका बढना समझा जाता है। आपके पास यदि एक कमरा है, तो आप दो कमरे, तीन कमरे चाहेगे, जितने ज्यादा होगे आप उतने ही ज्यादा खुश होगे। इसी तरह, आप अपने घरमें जितना भी फर्नीचर रख सकते है उतना रखना चाहेगे। इस सिलसिलेका कोई अन्त नही है और आपके पास जितनी अधिक चीजें होगी उतना ही अधिक आप सस्कृति या इसी तरहकी किसी चीजका प्रतिनिधित्व करेगे। मै शायद इस बातको उतने सुन्दर ढगसे नही रख रहा हूँ जैसे कि उस सभ्यताके समर्थक रखेंगे, पर मै इसे आपके आगे उस तरह रख रहा हूँ जिस तरह कि मै इसे समझता हूँ।

दूसरी ओर आप देखते है कि आपके पास जितनी कम चीजें होगी, जितनी कम आपकी इच्छाएँ होगी, आप उतने ही अच्छे रहेगे। अच्छे किस बातमे? इस जीवनका आनन्द लेनेमे नही, बल्कि अपने भाइयोकी आप जो सेवा कर रहे है उसका आनन्द लेनेमें, जिस सेवाके लिए आपने अपने-आपको — तन, मन और आत्माको — अर्पित कर दिया है।

आप देखेंगे कि यहाँ पाखण्ड और छलके लिए काफी स्थान है, क्योकि कोई भी स्त्री-पुरुष अपने-आपको या अपने पडोसियोको धोखा देनेके लिए यह कह सकता है: "भावनात्मक रूपसे मैने सब-कुछ त्याग दिया है और मै इन चीजोको केवल बाहरी तौरपर ग्रहण किये हुए हूँ। आपको मेरे कामकी नही, बल्कि मेरे इरादेकी जाँच करनी चाहिए और अपने इरादेका केवल मै ही अकेला साक्षी हूँ।" यह एक फंदा है और मौतका फंदा है। तो फिर आप एक गज चौडे और दो, तीन या चार गज लम्बे कपडेके टुकडे तकको अपने पास रखना न्यायोचित कैसे ठहराते है? आप जब यह जानते है कि यदि आप उस कपडेके टुकडेको छोड दे तो कोई उसे ले लेगा — किसी द्वेषके कारण नही, बल्कि इसलिए कि उसे उसकी जरूरत है, क्योकि उसके पास कपडेका वह टुकडा तक नही है — तो आप अपने शरीरको थोडा-बहुत ढकनेके लिए कपडेके उस टुकडे तकको अपने पास रखना न्यायोचित कैसे ठहरा सकते है? मैने देखा है, खुद अपनी आँखोसे देखा है कि लाखो लोगोके पास कपडेका उतना टुकडा तक नहीं है। तो फिर अपने पास कुछ भी न रखनेके अपने इरादेके साथ आप इस चीजको अपने पास रखनेकी सगति कैसे बैठा सकते है?

इस उलझन, इस कठिनाई, जीवनके इस अन्तर्विरोधसे निकलनेकी एक राह है: यदि आपको ये चीजे अपने पास रखनी ही पडे तो आप इन्हे अपने पास इस तरह रखिए कि जिन्हे इनकी जरूरत है वे भी उनका उपयोग कर सके। उस हालतमे यदि कोई आकर आपके इस कपडेके टुकडेको चाहेगा तो आप इसे उससे बचाकर नही रखेंगे, आप दरवाजे बन्द नही करेगे और इन चीजोकी रक्षार्थ अपनी सहायताके लिए निश्चय ही पुलिस नही बुलायेंगे।

साथ ही आपको, जो-कुछ दुनिया आपको देती है, उससे ही सन्तोष करना है। दुनिया आपको कपड़ेका यह टुकडा दे भी सकती है और नही भी दे सकती,

क्योंकि यदि आप अपने पास कुछ नही रखते है तो स्वभावतः आप अपने पास मुद्रा भी नही रखेंगे जिससे आप कपडा या भोजन खरीद सकें। आपको तब पूर्णतया दुनियाके दानपर रहना होता है। और दानी लोग आपको जब कोई चीज देते भी है तब भी वह चीज आपकी मिल्कियत नही होती है। आप उसे केवल इस पुख्ता इरादेके साथ अपने पास रखते हैं कि जो भी उसे लेना चाहेगा उसे वह दे दी जायेगी। यदि कोई आदमी आकर आपसे उसे छीननेके लिए बल-प्रयोग करता है, तो आप नजदीकके किसी पुलिसके सिपाहीके पास उसकी रिपोर्ट करने नही जायेंगे और यह नही कहेंगे कि आप पर हमला हुआ है। उस हालत मे तो आपके मनमे ऐसा खयाल ही नही आयेगा कि आपपर हमला हुआ है।

तो मेरे मनमें, स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीका यह अर्थ है। मैंने आपके आगे एक आदर्श रखा है। डॉक्टर रॉयडनने कहा है कि मै स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीका संसारमें सबसे बड़ा व्याख्याता हूँ। अपने बारेमे इस तरहके किसी भी दावेको मै, पूरी विनम्रताके साथ, अस्वीकार करता हूँ। ओर ऐसा मै आपसे झूठी विनयके कारण नही कह रहा हूँ, बल्कि इसे सच मानते हुए गम्भीरतापूर्वक कह रहा हूँ। मैंने आपको स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीकी अपनी धारणाकी केवल एक झलक दी है। और मुझे यह बात आपके आगे मान लेनी चाहिए कि उस आदर्शतक पूरी तरह पहुँचनेसे मै अभी बहुत दूर हूँ। उस आदर्शतक पूरी तरह पहुँचनेके लिए मेरे मनमे यह पक्का इरादा और विश्वास होना चाहिए कि इस पृथ्वी पर किसी भी चीजको सम्पत्तिके रूपमे अपने पास रखनेकी मुझे इच्छा नहीं है और न होनी चाहिए —यहाँ तक कि इस शरीरको भी रखनेकी इच्छा नही है, क्योकि यह शरीर भी एक सम्पत्ति है।

यदि आप चर्चके अनुयायी है, अर्थात् यदि आप ईश्वरमे आस्था रखते है, तो मेरी तरह आपका यह विश्वास होना ही चाहिए कि शरीर और आत्मा एक चीज नही है, बल्कि शरीर आत्मा या भीतरकी रूहके लिए केवल एक घर, एक अस्थायी बसेरा है। और यदि आपका यह विश्वास है—मै माने लेता हूँ कि आपका यह विश्वास है—तो इससे निष्कर्ष यही निकलता है कि यह शरीर तक आपका नही है। यह आपको एक अस्थायी सम्पत्तिके रूपमें दिया गया है और जिसने इसे आपको दिया है वह आपसे इसे ले भी सकता है।

इसलिए अपने भीतर इस पूर्ण विश्वासको रखते हुए मेरी निरन्तर यही इच्छा होनी चाहिए कि ईश्वरकी इच्छा पर यह शरीर भी समर्पित किया जा सकता है; और जबतक यह मेरे पास है, इसका उपयोग दुराचार, भोग-विलास या आनन्दके लिए नही, बल्कि केवल सेवाके लिए होना चाहिए, और जाग्रत अवस्थामे इससे सब समय सेवा ही करनी चाहिए।

यदि यह बात शरीरके बारेमे सच है, तो कपडो और उन बहुत-सी दूसरी चीजोके बारेमे तो, जिनका हम उपयोग करते है, कितनी अधिक सच होगी?

इस विश्वासपर पहुँचने और इतने साल इसपर जमे रहनेके बाद मै अब आपको अपने विरुद्ध यह साक्षी देता हूँ कि स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीकी पूर्णावस्था

पर मैं अभी नहीं पहुँचा हूँ। मैं इस अर्थमें तो गरीब जरूर हूँ कि उस आदर्शपर पहुँचनेके लिए संघर्ष कर रहा हूँ, लेकिन गरीब शब्दको आम तौरपर जिस अर्थमें प्रयुक्त किया जाता है उस अर्थमें गरीब नहीं हूँ।

वस्तुतः एक बार तो किसीके चुनौती देने पर मैंने यह कहा था कि अपने पड़ोसियों और दुनियाके लोगोंको मैं पृथ्वीका सबसे अमीर आदमी लगता हूँ, क्योंकि दरअसल सबसे अमीर आदमी वह है जो अपने पास कुछ नहीं रखता पर जिसके लिए हर चीज मौजूद है।

और जिन्होंने स्वेच्छा-गृहीत गरीबीके इस व्रतका वस्तुत. यथासम्भव पूरी तरह पालन किया है (मानव-प्राणीके लिए बिलकुल पूर्णता तक पहुँचना तो असम्भव है, इसलिए कहना चाहिए कि मनुष्यके लिए जहाँतक सम्भव है वहाँतक पूरी तरह पालन किया है), जो उस आदर्श स्थिति पर पहुँच गये हैं, वे इस बातकी साक्षी देते हैं कि जब आप अपनी हर चीजका त्याग कर देते हैं तो सचमुच आपको संसारका सारा खजाना मिल जाता है। दूसरे शब्दोंमें, आपको वह सब मिल जाता है जो वस्तुत आपके लिए आवश्यक है—ऐसी हर चीज आपको मिल जाती है। यदि भोजन आवश्यक है तो भोजन आपके पास आयेगा।

आपमें से बहुत-से स्त्री-पुरुष प्रार्थनाको अपने जीवनमें सबसे महत्त्वकी वस्तु मानते हैं, और मैंने यह बात बहुत-से ईसाइयोंके मुँहसे सुनी है कि प्रार्थना करने पर उन्हें भोजन मिला है, कि प्रार्थना करने पर उन्हें हर चीज मिल जाती है। मैं इस बातपर विश्वास करता हूँ। परन्तु मैं चाहता हूँ कि आप मेरे साथ एक कदम और आगे बढ़ें और इस चीजपर विश्वास करें कि जो स्वेच्छासे पृथ्वीकी हर चीजको, शरीर तकको, छोड़ देते हैं, अर्थात् जो हर चीजको छोड़नेके लिए तैयार रहते हैं (और ऐसे लोगोंको आलोचनात्मक ढंगसे और कड़ाईके साथ अपनी परीक्षा करनी चाहिए तथा अपने विरुद्ध प्रतिकूल निर्णय देनेको सदा तैयार रहना चाहिए) —जो इस मार्गका पूरी तरह अनुसरण करते हैं, वे वस्तुत. यह देखेंगे कि उन्हें कभी कोई कमी नहीं रहेगी।

मैं आपके आगे यह स्वीकार करूँगा कि जब मैं यह महसूस करता था कि ईश्वरने पृथ्वीकी दौलतका कुछ भाग मुझे दिया है और जब मैं अपने पास बहुत-सी चीजें रखता था, तब मुझे चीजें प्राप्त करनेकी उतनी सुविधाएँ नहीं थीं जितनी कि इस समय हैं। सेवाके लिए धन और जरूरतकी हर चीज प्राप्त करनेकी निश्चय ही तब मुझमें अबसे लाखवाँ हिस्सा भी योग्यता नहीं थी।

मैं जब वकालत करता था, रुपया कमाता था और कितनी ही चीजें अपने पास रखता था, सेवाकी भावना मुझमें तभी पैदा हो गई थी। परन्तु उस समय मुझमें सेवाके लिए हर चीज प्राप्त करनेकी क्षमता निश्चय ही नहीं थी। लेकिन आज मैं आपको इस बातकी साक्षी दे सकता हूँ कि मुझे कभी कोई कमी नहीं रही है (यह चीज मेरे लिए अच्छी है या बुरी, मैं नहीं जानता—ईश्वर ही जानता है)।

कुछ समय बाद जब मैंने स्वेच्छासे सब-कुछ छोड़ दिया, जब मुझे किसी भी ऐसी चीजकी, जिसे मैं अपनी कह सकूँ, लालसा नहीं रही, और मैं हर चीजमें—जो

मेरे पास थी—पड़ोसियोको अपना साक्षी बनाने लगा, तो फिर शीघ्र ही काफी हद तक मै उस स्थितिपर पहुँच गया जहाँ मुझे लगा कि मुझे कोई कमी नही है। (मै हर चीजमे सारी दुनियाको तो अपना साक्षी बना नही सकता। लेकिन यदि मै पडोसियोंको अपना साक्षी बनाता हूँ और पड़ोसी भी यही कहते है, तो मै सारी दुनियाको ही साक्षी बना लेता हूँ। सीमित शक्तिवाला मानव प्राणी बस इतना ही कर सकता है।)

कमीका भी शाब्दिक अर्थ नही लेना चाहिए। ईश्वरको मैंने इस पृथ्वी पर सबसे कडा स्वामी पाया है और वह आपकी पूरी तरह परीक्षा करता है। और जब आपको ऐसा लगता है कि आपकी आस्था आपका साथ नहीं दे रही है या आपका शरीर आपका साथ नही दे रहा है और आप डूबने लगे है, तो वह किसी-न-किसी रूपमे आपकी मददको आ जाता है और आपके आगे यह सिद्ध कर देता है कि आपको आस्था छोडनी नहीं चाहिए, कि वह सदा आपके पास ही है और पुकारने पर आ सकता है, पर अपनी शर्तों पर, आपकी शर्तो पर नहीं। मैंने यही देखा है। वस्तुत. मुझे एक भी मौका ऐसा याद नही आता जब बिलकुल आखिरी घडीमे उसने मेरा साथ न दिया हो। आपके आगे मै यह बात फिर दोहरा सकता हूँ कि मुझे भारतका सर्वश्रेष्ठ भिखारी होनेकी ख्याति प्राप्त है। और जैसा कि मेरे आलोचक आपको बतायेंगे, एक बार मैंने एक करोड रुपया इकट्ठा किया था। पौंड, शिलिंग, पेसमे यह कितना हुआ—यह तो मै हिसाब लगाकर बता नही सकता, पर यह एक बहुत ही बड़ी रकम है (लगभग ७,५०,००० पौंड), पर मुझे इसे इकट्ठा करनेमे कोई कठिनाई नही हुई। और तबसे, अपने अन्तःकरणमे गहरे झाँकने पर, किसी भी कारण, मुझे ऐसा एक भी अवसर याद नही आता जब कोई संकट उपस्थित होने पर मुझे सेवाके लिए आवश्यक कोई चीज न मिली हो।

लेकिन आप कहेगे: यह प्रार्थनाका फल है। यह केवल प्रार्थनाका फल नहीं है, यह अपरिग्रहके इस व्रतका या स्वेच्छासे अपनाई गई गरीबीके व्रतका एक वैज्ञानिक परिणाम है। आप कैसी भी किसी भी, चीजको अपने पास रखना नही चाहते है और अपने जीवनको इसलिए जितना सरल बनाते है, जितना अपरिग्रहका पालन करते है, आपके लिए उतना ही अच्छा रहता है।

जैसे ही आप उस अवस्थामें पहुँचते है, आप कोई भी चीज प्राप्त कर सकते है। आप उन निस्सार वस्तुओको भी प्राप्त कर सकते है, जिन्हे दुनिया सम्पत्ति कहती है परन्तु यदि आप एक बार भी उन्हे प्राप्त करते है और अपने पास रखते है तो यह शक्ति आपमे से तुरन्त चली जायेगी। आपको कुछ भी अपने लिए नही लेना चाहिए। यदि आप लेते है, तो बस आप नष्ट हो गये। मैंने बहुत बार ऐसा होते देखा है। बहुत-से आदमियोने कहा है: "जी हाँ, ईश्वरने मेरी धन या सम्पत्तिकी प्रार्थनाका अब फल दिया है, इसलिए मै अब इसे—इस कोहनूर हीरेको, या जो भी चीज वह हो—अपने पास रखूँगा।" लेकिन वह उसके लिए बस अन्तिम अवसर होगा। वह उस हीरेकी फिर रक्षा नही कर सकेगा।

इसलिए आपके सम्मुख इस समय मैं जो महान् चीज रख रहा हूँ वह यह है कि आप सेवाके लिए संसारके सभी साधन प्राप्त कर सकते हैं। जिसका इसमें विश्वास नहीं है उसे यह एक दर्पपूर्ण उक्ति लग सकती है। परन्तु जैसा कि मेरा विश्वास है, यह कथन दर्पपूर्ण नहीं है कि सेवाकी अपनी योग्यताके अनुसार, आप सेवाके लिए पृथ्वीके सभी साधन प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप सेवाके निमित्त संसारके सभी साधन प्राप्त करना चाहते हैं, तो केवल यही काफी नहीं है कि आप ईस्ट एंडके कुछ घरोंमें जायें, वहाँ रहनेवालोंके कष्टका पता लगायें और ताँवेके कुछ सिक्के उनके आगे फेंक दें। उसके वदले तो आपको संसारके सभी साधन प्राप्त नहीं होंगे, वल्कि ईश्वर आपके आगे भी ताँवेके कुछ सिक्के फेंक देगा।

परन्तु यदि आप अपने-आपको, तन, मन और आत्माको समर्पित कर देते हैं, और अपने-आपको संसारको दे देते हैं, तो मैं कहता हूँ कि दुनियाके खजाने आपके चरणोंमें होंगे, आपके आनन्दके लिए नहीं, वल्कि सेवाके आनन्दके लिए, केवल सेवाके लिए।

आपके सम्मुख दी गई मेरी इस वार्त्तासे मेरे खयालमें हमें जो शिक्षा लेनी चाहिए वह आज सचमुच वहुत ही समयोचित है। आप मेरी इस वात पर विश्वास करें कि मैं इस राष्ट्रके साथ उसकी मुसीवतमें पूरे दिलसे सहानुभूति रखता हूँ। आपकी वित्तीय कठिनाईका कोई अपना इलाज तो शायद म पेश कर नहीं सकूँगा। आप इतने महान् और इतने सूझ-वूझवाले हैं कि अपना इलाज खुद मालूम कर सकते हैं। परन्तु मैं आपसे यह कहूँगा कि मौजूदा मुसीवतमें आप इस विचार पर मनन करें।

श्री सी० एफ० एन्ड्रचूजने मेरा ध्यान किसी पत्र-लेखकके एक पत्रके उत्तरमें लिखे गये प्रधान मन्त्रीके पत्रकी ओर आर्कषित किया है और मुझे वताया है कि इस पत्रका क्षेत्रीय रेलवेमें सर्वत्र, और शायद भूमिगत रेलवेमें भी, एक विज्ञापन की तरह उपयोग किया जा रहा है। पत्र कुछ इस प्रकार है: "आपको केवल ब्रिटिश माल ही खरीदना चाहिए; ब्रिटिश मजदूरोंको ही नौकर रखना चाहिए और ज्यादासे-ज्यादा चीजें खरीदनेकी कोशिश करनी चाहिए।" यह एक ऐसा इलाज है जो मुझे मालूम है। लेकिन मैं आपको यह सुझाव देना चाहता हूँ कि दुनियाकी मुसीवतको दूर करनेके लिए स्वेच्छासे गरीवी अपनानेका यह विचार एक मूल विचार है। इसमें सन्देह नहीं कि आप अपनी सूझ-वूझसे इस कठिनाईको पार कर लेंगे और तव आपको लगेगा कि कोई भी चीज गलत नहीं थी। परन्तु यदि आपकी अनुमति हो तो मैं यह कहूँगा कि यह शायद अदूरदर्शिता होगी, क्योंकि अव शायद वह समय आ गया है जव मूल्यों पर फिरसे विचार होना चाहिए।

लेकिन मुझे विवादमें नहीं पड़ना चाहिए। मैं यह सुझाव केवल उन्हीं लोगोंको दे सकता हूँ जो सेवाके लिए स्वेच्छासे गरीवीकी आवश्यकताको अनुभव करते हैं। मैंने यह शुभ वात आज रात इसलिए नहीं रखी है कि सभी इसे स्वीकार कर लें। वैसे मैं यह कह सकता हूँ कि अपने अन्तःकरणमें मैं ऐसा अनुभव करता हूँ कि यदि हम सव स्वेच्छासे गरीवीका व्रत ले लें तो यह दुनिया चौपट नहीं हो जायेगी,

एकदम मूर्खोकी दुनिया नही बन जायेगी। पर मै यह जानता हूँ कि यह चीज प्रायः असम्भव है। ईश्वरके लिए तो सभी कुछ सम्भव है, पर मनुष्यकी दृष्टिसे सोचने पर यही कहना समझदारी है कि यह असम्भव है। किन्तु, वस्तुत. यह असम्भव नही है। जिन्होने अपने-आपको पूरी तरह अपने भाइयोकी सेवाके लिए समर्पित कर दिया है, उनके लिए तो मै यह चीज पूर्णतया अनिवार्य मानता हूँ कि वे स्वेच्छासे गरीबीका व्रत ले।

आप खुद यह जाननेकी कोशिश कीजिए कि आपके सामने आज जो यह भारी राष्ट्रीय समस्या उपस्थित है, क्या इस तरह आप इसके समाधानमे बहुत ही ठोस रूपसे सहायता नही पहुँचाते है।

जो लोग अपना वेतन या जिस चीजकी भी उनसे अपेक्षा की जाती है उसे देना न चाहते हो, उन्हे यदि कानूनसे उसे देनेके लिए बाध्य किया जाये, तो इस तरह आप इस समस्याको सुलझा नही सकेंगे। जब वे कहेगे कि "हम क्या कर सकते है? हम विरोध करना नही चाहते; हम विरोध कर नही सकते," तब वस्तुतः उनका मन उन्ही चीजोके लिए लालायित रहेगा जो उनसे छीनी जा रही है।

लेकिन कल्पना कीजिए कि इस लालसाके बीच सेवकोका एक दल ऐसा उभरता है जो स्वेच्छासे गरीब बन जाता है। वे उन लोगोके लिए जिन्हे यह मालूम नही है कि स्वैच्छिक गरीबी क्या होती है, क्योकि वे सिर्फ मजबूरीकी गरीबीको ही जानते है, प्रकाश-स्तम्भकी तरह होगे। मै अपने उन भाइयोके पास जाकर जो भूखो मरते है स्वैच्छिक गरीबीकी बात नही करता हूँ। मै उन्हे यह नही समझाता हूँ कि यदि वे मजबूरीकी गरीबीको स्वैच्छिक गरीबीमे बदल ले तो उनके लिए कितना शुभ होगा। इस पृथ्वी पर ऐसा कोई जादू नही है। यह एक कष्टदायी प्रक्रिया है और इससे पहले कि मै उनसे स्वैच्छिक गरीबीकी बात कर सकूं, उनके पास जीवनकी आवश्यक चीजे होनी चाहिए।

होता यह है कि मुझ-जैसा कोई आदमी जब उनके बीच जाकर यथाशक्ति उन्हीका-सा जीवन बिताता है, तो वह उनके दिलोमे आशाकी एक किरण पैदा कर सकता है। मुझ-जैसा आदमी जो इलाज उन्हे सुझायेगा उसे वे मान लेगे। यदि मै उन्हे कोई फौरी इलाज सुझा न सकूं, तो भी उन्हे मुझ-जैसे आदमीके रूपमे कमसे-कम एक मित्र तो मिलेगा ही। वे कहेगे: "इसके पास कुछ नही है, फिर भी यह खुश है; ऐसा कैसे है?" मुझे उनके साथ बहस करनेकी जरूरत नही होगी; वे खुद अपने-आपसे बहस करने लगेगे।

अपने अनुभवकी इन अमूल्य निधियोमे मै पृथ्वीके हर व्यक्तिको अपना साझी कैसे बना सकता हूँ? मै ऐसा नही कर सका। लेकिन आज, जब मैने स्वैच्छिक गरीबी पर बोलनेका दायित्व लिया है, मै कुछ हद तक अपने इन अमूल्य अनुभवोमे यहाँ उपस्थित कुछ सौ लोगोको ही नही बल्कि लाखो लोगोको अपना साझी बना रहा हूँ। मै आपको बताऊँ कि यह स्वैच्छिक गरीबी आदमीको जो आनन्द, सुख और क्षमता प्रदान करती है उसका वर्णन नही किया जा सकता। मै केवल यही कह सकता हूँ; इसे आजमाओ, परीक्षण करो, इसकी खुद जाँच करो।

आपने इतनी एकाग्रताके साथ मेरी बात सुनी इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। प्रार्थनाका समय होनेमें अभी पूरे दस मिनट रहते हैं, इसलिए आपमें से कोई यदि मुझसे कोई प्रश्न पूछना चाहे तो मुझे उससे खुशी होगी। आपके मनमें जो भी हो उसे कहनेमें आपको संकोच नहीं होना चाहिए। आपका कोई भी प्रश्न, चाहे वह कितना ही अटपटा क्यों न हो, मुझे कभी बुरा नहीं लगेगा।

प्रश्न: क्या महात्माजी हमें यह बतायेंगे कि भारी रकमें इकट्ठा करना वे कैसे न्यायोचित समझते हैं, जबकि ईसा, बुद्ध और अन्य महान् धर्मगुरुओंने, जो स्वेच्छासे गरीबीका पालन करते रहे, कभी भी भारी रकमें नहीं माँगी थीं और न ली थीं। उन्होंने जो-कुछ हमें बताया, उसके साथ मैं इसका मेल नहीं बैठा पा रहा हूँ।

उत्तर: क्या इन महान् गुरुओंने कभी धन नहीं माँगा था या नहीं लिया था? ईसाके बाद बहुत-से ईसाइयोंने, जो गरीबीमें आस्था रखते थे, धन लिया था और उसे सेवाके लिए प्रयुक्त किया था। और बुद्धके विषयमें तो, जिन्होंने कहते हैं, अपने जीवन-कालमें कई संस्थाएँ स्थापित की थीं, मैं और भी विश्वासके साथ यह कह सकता हूँ। धनके बिना वे उन संस्थाओंको स्थापित नहीं कर सकते थे। कहा यह जाता है कि जिन्होंने अपने-आपको तन, मन और आत्मासे समर्पित कर दिया था, उन्होंने अपना धन भी दिया था और उसे बुद्धके चरणोंमें धर दिया था, और बुद्धने उसे प्रसन्नतासे स्वीकार किया था — परन्तु अपने लिए नहीं।

प्रश्न: हमें अपने भाइयोंकी सेवा क्यों करनी चाहिए?

उत्तर: इसलिए कि हम उनके द्वारा ईश्वरकी एक झलक देख सकें, क्योंकि उनमें भी वही आत्मा है जो हममें है, और जबतक हम यह समझते नहीं हैं तबतक ईश्वर और हमारे बीच एक दीवार खड़ी रहती है। यदि हम उस दीवारको तोड़ना चाहते हैं तो उसका आरम्भ अपने भाइयोंके साथ अपनेको एकाकार करनेसे होगा।

[अंग्रेजीसे]

गिल्डहाउस, २३-९-१९३१

३४. भाषण: पार्लियामेंटके सदस्योंकी बैठकमें[1]

लन्दन
२३ सितम्बर, १९३१

कांग्रेसका ध्येय पूर्ण स्वाधीनता है और पूर्ण स्वाधीनताका अर्थ किसी भी रूपमे अलगाव नही है और न कभी रहा ही है, और इसमे बिलकुल बराबरीकी साझेदारी, जो किसी भी पक्षकी इच्छापर समाप्त हो सके, निषिद्ध नही है। मुझे यह बात विचित्र लगी है कि अग्रेज, जो स्वय पूर्ण स्वतन्त्रतासे कम किसी चीजपर कभी सन्तुष्ट नही रहे है, इस दावेका विरोध कर रहे है या मजाक उडा रहे है। मेरा यह खयाल है कि कोई भी राष्ट्र या जन-समुदाय, अपने राष्ट्रीय अधिकारके प्रति सचेत हो जानेके बाद, पूर्ण स्वाधीनतासे कम किसी चीजपर कभी भी सन्तुष्ट नही होगा।

इसका अर्थ हमारे लिए अपनी प्रतिरक्षा पर पूर्ण नियन्त्रण, अपने विदेशी मामलो पर पूर्ण नियन्त्रण और वित्त पर पूर्ण नियन्त्रण है। इन मुद्दो पर छिड़ी बहसने बहुचर्चित शब्द "संरक्षण"को जन्म दिया है। मुझे इसमें कोई सन्देह नही है कि पिछली गोलमेज परिषद्ने अस्थायी रूपसे जिन सरक्षणोकी व्यवस्थाकी थी, आपको उनकी बात मालूम है। कांग्रेसकी ओरसे, मुझे यह कहनेमे कोई सकोच नही है कि कांग्रेस उन सरक्षणोको स्वीकार नहीं करेगी। यदि हमारा सेना या प्रतिरक्षा पर कोई नियन्त्रण नही है—और गोलमेज परिषद्के अस्थायी आरक्षणोके अनुसार विदेशी मामले भी एक आरक्षित विषय है—तो यह निश्चय ही पूर्ण स्वाधीनता नही है, यह मामूली किस्मका स्वशासन तक नही है। यदि कोई व्यक्ति अपनी रक्षाके लिए दूसरों पर निर्भर है तो वह स्वशासनका उपभोग नही करता है।

मै जानता हूँ कि यह तर्क दिया गया है कि भारत अपनी रक्षा करनेकी योग्यता नही रखता है। मेरा कहना यह है कि अग्रेजोके आगमनसे पहले हम आक्रमणोको सफलतापूर्वक झेल पाये थे। आक्रमण बहुत हुए, पर हम अति प्राचीन कालसे चली आ रही अपनी सभ्यताको अक्षुण्ण रख सके।

हम भारतके लोग नि:शस्त्र हैं और यह नि:शस्त्रता स्वेच्छा-जनित नही, बल्कि ऊपरसे थोपी हुई है। ब्रिटिश भारतकी अपेक्षा तथाकथित नरेशोके भारतमे हिन्दू और मुसलमान अधिक शान्तिसे रह रहे है। बेशक कुछ दगे हुए है, पर मेरा कहना यह है कि ब्रिटिश शस्त्र उन्हे रोकनेके लिए काफी नहीं है। यदि ब्रिटिश सेनाएँ हटा ली जाती है, तो इसका अर्थ, जैसा कि कभी-कभी कहा जाता है, भारतके लिए "आत्महत्या" नही होगा।

१. यह सभा कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगके तत्त्वावधानमें कॉमन्स सभामें हुई थी। मॉर्ले इसके सभापति थे और पार्लियामेंटके तीनों दलोंके सदस्य इसमें उपस्थित थे।

अपनी प्रतिरक्षाका कार्यभार सँभालनेका अर्थ यह नही है कि हमें प्रत्येक ब्रिटिश सैनिक या अधिकारीको हटा देना चाहिए। यदि ब्रिटिश सैनिक या अधिकारी कृपा-भावसे हमारी सेवा करना चाहेंगे तो वे भारतमें रहेंगे।

इसके बाद श्री गांधीने कहा कि जो लोग यह कहते हैं कि भारतके अधीन ब्रिटिश लोग इस प्रकार कभी सेवा नहीं करेंगे, उन्हें मैं समझ नहीं पाता हूँ।

यदि भारतके साथ ठीक-ठीक बराबरीके आधारपर कोई समझौता करना है, तो क्या यह रुख उसके लिए ठीक होगा?

पूर्ण स्वाधीनताका अर्थ सेनापर पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि सैनिक सत्तापर असैनिक (सिविल) सत्ताका पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए, कि सेना असैनिक सत्ताकी स्वीकृतिके बिना कार्य नही करेगी।

श्री गांधीजीने फिर कहा कि भारतवासियोका यह खयाल है कि भारतमें जो प्रशासन है वह संसारमें सबसे अधिक खर्चीला है और भारत उसे अब और बरदाश्त नहीं कर सकता।

मेरा यह विश्वास है कि भारतके लिए उन संरक्षणोको स्वीकार करना और स्वाधीनताके सारके बजाय महज उसके बाहरी खोलको लेनेके लिए राजी हो जाना आत्मघातके समान होगा।

इन सरक्षणोको स्वीकार करनेका अर्थ अपने राजस्वको ८० प्रतिशत तक उडा देना होगा। क्या आप यह मानते हैं कि हम अपनी शिक्षा, स्वास्थ्य, अस्पतालो, सडको और रचनात्मक कार्योका खर्च केवल २० प्रतिशत राजस्वसे, जो हमारे पास शेष रह जाता है, चला सकते हैं? और ये कार्य ऐसे हैं जिन्हें हर हालतमें शुरू करना ही है, बल्कि एक पीढी पहले ही शुरू कर देना चाहिए था।

ऐसी स्वाधीनताको मैं छुऊँगा भी नही। जो सरकार, मुझे मालूम है, पाँच-दस सालमे दिवालिया हो जानी है, उसका कार्य-भार सँभालनेकी अपेक्षा मैं मजबूरीकी पराधीनतामें रहना और अपने-आपको विद्रोही घोषित करना कही अच्छा समझूँगा। कोई भी अग्रेज, यदि वह हमारी जगह हो तो, उसे स्वीकार नहीं करेगा। आप देखेंगे कि आपके साथ सहयोग करने और गुलाम बननेकी अपेक्षा — क्योकि मेरी विनम्र रायमे इन सरक्षणोका यही अर्थ है — मैं एक सत्याग्रहीकी हैसियतसे सघर्ष करते हुए अपना खून बहाऊँगा।

यूरोपीयोंके लिए "संरक्षण" के विषयमें श्री गांधीने कहा:

मुसलमानोका अपनी रक्षाके लिए कहना और सिखोका कहना मेरी समझमें आ सकता है, और अछूतोका तो और भी ज्यादा समझमें आ सकता है। लेकिन यूरोपीयोका, यानी शासकोका, तीस करोड गुलामोसे या रैयतसे — उन्हे आप चाहे कैसे भी मीठे नामसे क्यो न पुकारें, वास्तवमें हैं तो वे रैयत या गुलाम ही — अपनी रक्षाकी बात कहना मेरी समझसे परेकी चीज है। आपको हमारे साथ सद्भावनाके साथ रहना चाहिए। जिन लोगोकी आप सेवा करते हैं, क्या उन्हींसे आप अपनी रक्षा चाहते है?

ब्रिटिश व्यापार यदि भारतीय हितोके प्रतिकूल है तो रक्षाकी कोई भी व्यवस्था भारतमे उसे बचा नही सकेगी। ब्रिटिश या भारतीय, प्रत्येक 'हित' को इस कड़ी कसौटीपर परखना होगा कि वह जनताके हितमे है या नही।

साझेदारीका अर्थ साझीके साथ अनुग्रहपूर्ण व्यवहार जरूर है। परन्तु उस अनुग्रहपूर्ण व्यवहारमे स्वभावतः यह शर्त रहेगी कि माल ऐसा होना चाहिए जिसकी भारतमे जरूरत हो और उसका स्तर और मूल्य प्रामाणिक होना चाहिए। ब्रिटिश टाइपराइटर और ब्रिटिश घडी खरीदना मै ज्यादा अच्छा समझूंगा, चाहे मुझे उनके लिए कुछ अधिक ही दाम क्यो न देने पड़े। और तीस करोड़ साझेदारोके सिरसे जब वह बोझ, जो धीरे-धीरे उन्हे डुबाये दे रहा है, उतर जायेगा तो उनका भी यही रुख होगा। मै ऐसे भारतकी कल्पना कर रहा हूँ जो शायद बिलकुल बराबरीके आधार पर ग्रेट ब्रिटेनके साथ रहेगा। ऐसी साझेदारीको, जो पृथ्वीकी किसी भी नस्लके शोषणके लिए कायम नही की गई होगी और एक-दूसरेके लिए हितकारी होगी, देखनेके लिए स्वय देवता नीचे उतरेगे, क्योकि वह पृथ्वीके सभी राष्ट्रोकी भलाईके लिए होगी। भारत संसारके आगे सीना ताने खड़ा होगा, पर वह किसी भी अन्य राष्ट्रका शोषण नही करेगा; क्योकि शोषणके कड़वे फलको वह स्वय चख चुका है।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन न्यूज, ८-१०-१९३१

३५. पत्र : नारणदास गांधीको

२४ सितम्बर, १९३१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे यहाँ तो वहाँसे भी कम समय मिलता है। ११-१२ बजे सो पाता हूँ। ४ बजे मीराबहन सबको उठा देती है। प्रार्थनाके बाद मै फिर सो जाता हूँ और सवा छः बजे उठकर घंटे-भरके लिए टहलने जाता हूँ। यहाँ जो-कुछ चल रहा है उसकी खबर तो तुम्हे अन्य पत्रोसे मिल ही जाती होगी। मेरी तबीयत अच्छी रहती है। असल ठंड तो अभी शुरू ही नही हुई है। आशा है, आश्रमका वातावरण दिन-प्रति-दिन शुद्ध होता जा रहा होगा और प्रार्थना, चरखायज्ञ तथा अन्य प्रवृत्तियोमे सभी लोग रसपूर्वक तथा नियमित रूपसे भाग लेते होगे।

समय-समयपर वहाँके पूरे समाचार मुझे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

३६. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

२४ सितम्बर, १९३१

चि० गगाबहन (बड़ी),

आशा है, तुम निश्चिन्त और स्वस्थ होगी। मैं सभी पत्र तुरन्त नही पढ पाता, अत. मैं नही जानता कि तुम्हारा पत्र आया है या नही। मुझे हर सप्ताह लिखती रहना और उनमे अपना हृदय उँडेलना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने। सी० डब्ल्यू० ८७८६ भी; सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

३७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२४ सितम्बर, १९३१

चि० प्रेमा,

तू अब शान्त है, यह तो नारणदासने लिखा है। लेकिन मुझे पत्र 'लिखना तूने अभीतक शुरू नही किया, यह दु.खकी बात है। तू ऐसा कर सकती है जिससे तेरी चिन्ता मुझे बिलकुल न रहे। ज्यादा अभी नही लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६४) से। सी० डब्ल्यू० ६७१३ भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कटक।

३८. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन

२४ सितम्बर, १९३१

सर तेजबहादुर सप्रू : . . . अन्य देशोंके अनुभवसे यह सिद्ध हो गया है कि जनतन्त्रीय संविधान नौकरशाही संविधानोंसे बहुत अधिक खर्चीले होते हैं। मेरा मतलब यह है कि यदि हममें से किसीका यह खयाल हो कि एक जनतन्त्रीय संविधान अपनाकर हम खर्च कम कर सकेंगे, तो वह अपने कल्पित स्वर्गमें रह रहा है। इसके लिए आम तौरपर जो मुहावरा इस्तेमाल किया जाता है, वह मैं नहीं करूँगा। पार्टी संगठन उभरेंगे; पार्टी कोष स्थापित करने होंगे; पाश्चात्य संविधानोंका सारा यन्त्र-तन्त्र और ताम-झाम खड़ा करना होगा, तभी हम अपने दायित्वको पूरा कर सकेंगे। सेवाओंमें वेतन यदि घटाकर ५०० रुपये भी कर दिया जाये और श्री जिन्ना-जैसे वकीलोंके लिए यदि एक अधिकतम आय भी निर्धारित कर दी जाये, तो भी महात्मा गांधीके सामने जनतन्त्रीय संविधानकी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए धन जुटानेकी समस्या रहेगी ही।

गांधीजी : नहीं, मैं तुरन्त बीकानेर या पोरबंदरमें जाकर शरण लूँगा!

महाराजा बीकानेर : आपका वहाँ स्वागत किया जायेगा। हमारे लिए यह एक सम्मानकी बात होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कान्फरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ३४६, ३७१

३९. भेंट : 'जॉन बुल' के प्रतिनिधिको

लन्दन

[२५ सितम्बर, १९३१ या उसके पूर्व]

मैं एक बहुत ही सामान्य लड़का था और अपनी भावी नियतिका मुझे आभास तक नही था। नगे पाँव मैं गलियोमे दौडा करता था और दूसरे लडकोके साथ खेला करता था।

मैं एक भारतीय स्कूलमे पढता था, क्योकि मेरा जन्म — जैसा कि कुछ लोग सोचते है, आफ्रिकामें नहीं — भारतमे ही हुआ था। मेरा बचपन सुखसे बीता और मुझमें किसी भी तरहकी कोई विलक्षणता नहीं थी। जिस रियासतमे मेरा जन्म हुआ, मेरे पिता उसके दीवान थे।

भारतका नेतृत्व करनेका आह्वान मुझे अचानक किसी इलहामकी तरह नहीं मिला। वह जब मिला तो वैसे ही मिला। बल्कि ऐसा कहूँ कि मुझे उसका ज्ञान धीरे-धीरे हुआ। मैंने अनशन और आत्मसंयमसे अपनेको उसके लिए तैयार किया। मेरा राजनीतिक कार्य मेरी आध्यात्मिक तैयारीमें से ही उभरा।

आप मुझसे पश्चिमकी गरीबीसे पूर्वकी गरीबीकी तुलना करनेके लिए कह रहे हैं? यह असम्भव है। दोनोकी तुलना नही हो सकती। पूर्वमें गरीबी उस हद तक है जिसकी पश्चिममें कल्पना तक नही की जा सकती। हजारो लोगोके पास खानेको कुछ भी नहीं है और सिर छिपानेको कोई स्थान नही है।

आप पूछते है कि यदि मुझे सत्ता प्राप्त हो जाये तो मै अपने स्वप्न कैसे पूरे करूँगा, "लाखों मूक और भूखे लोगो" को उनकी जडतासे जगाने, मुखर बनाने और भोजन देनेके लिए मै क्या करूँगा।

मै उनसे काम कराऊँगा — चरखे पर और हाथ-करघे पर। मै उन्हें शिक्षा दूंगा और वह भारतीय पद्धति पर होगी।

मै नई सडकें बनवाऊँगा। सुन्दर सडकें, जो मनुष्य और पशु दोनोंके लिए सुखदायी होंगी। नये भारतकी जो तसवीर मेरे मनमें है उसमें गाँव एक-दूसरेसे जुड़े होगें और अपने उद्योग-धन्धोसे सुखी होगे।

भारत जब स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा तो परिस्थितियाँ ही यह निर्देशित करेगी कि मै राष्ट्रके प्रमुखका स्थान लूँ या चुपचाप अपने आश्रमको लौट जाऊँ।

मुझे प्रिय तो वापस लौटना ही होगा, पर यदि नेतृत्वका भार मेरे कधो पर आया तो उसे वहन करनेमें मुझे कोई झिझक नहीं होगी। मेरे अन्दरकी आवाज जो राह दिखायेगी मै उसी पर चलूँगा।

क्या मै अमेरिका जाऊँगा? मुझे निमन्त्रण मिले है, पर इस विषयमें भी मेरे अन्दरकी आवाज मुझसे जैसा कहेगी मै वैसा ही करूँगा।

आप पूछते हैं: क्या यह एक सचमुचकी और सुस्पष्ट आवाज है? नहीं। यह अन्त.करणकी आवाज है। गौण विषयोपर मै समझौता करनेको तैयार हूँ, पर मुख्य विषयोपर नहीं।

जी हाँ, निश्चय ही मै यह मानता हूँ कि सफल स्वराज्यके लिए भारतीय नरेशोका सहयोग आवश्यक है।

भारतके शत्रुओका यह कहना है कि ब्रिटिश शासनके हटते ही हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरेका गला काटने लगेंगे, मै इस बात पर विश्वास नहीं करता। हम पहले सत्रहवी सदीमें — अंग्रेजोके आगमनसे पहले — पूरी एकतासे साथ-साथ रहे हैं और आगे भी इसी तरह रहेंगे।

लेकिन मान लीजिए, हमें लड़ना पडा, तो हम लडेंगे। आप पूछते है, क्या विजय हिन्दुओकी होगी। नही, विजय किसी भी पक्षकी नही होगी। भारतमें संघर्ष छिड सकता है, पर हममे सुलह हो जायेगी और हम किसी समझौतेपर पहुँच जायेगे।

हम इससे पहले भी लड़े है और फिर हममें मेल हो गया है। हिन्दू और मुसलमान, दोनो पक्षोके नेताओंमें सुलह हो जायेगी।

लड़ेंगे कौन? आम लोग नहीं लड़ेंगे। वे आजकी तरह आगे भी पूरी शान्तिसे रहते रहेंगे। जिन्हे अपने स्वार्थ साधने है वे ही लडेंगे। मै समझता हूँ, ब्रिटेनको स्वराज्य देना होगा। देर-सवेर वह आकर ही रहेगा।

मेरी पत्नी मेरे लिए असाधारण भली सिद्ध हुई है, और मेरे शारीरिक हिता-हितका वही खयाल रखती है। उससे मेरा विवाह कैसे हुआ? मेरे माँ-बापने वह विवाह तय किया था, क्योंकि भारतमे ज्यादातर माँ-बाप ही विवाह तय करते है, पर मैं उसे पहलेसे जानता था और हममे प्रेम भी था।

मैंने जीवन दक्षिण आफ्रिकाकी एक मुसलमान फर्मके कानूनी सलाहकारकी हैसियतसे शुरू किया। जब मैंने देखा कि वहाँ भारतीयो पर अत्याचार होता है, तो मैंने सोचा कि उनके हितोके लिए खड़े होना मेरा कर्त्तव्य है। इसलिए मै दक्षिण आफ्रिकामे बस गया, और मै सफल रहा। जिन निर्योग्यताओंको दूर करानेके लिए हम लड़ रहे थे, वे दक्षिण आफ्रिकाकी सरकारके साथ हुए एक समझौते द्वारा दूर कर दी गई।

स्वराज्यमें भारतमे महिलाओंकी स्थिति क्या होगी? वे हमारी सहकर्मी और सहयोगी होगी और उन्हीं अधिकारो और सुविधाओंका उपभोग करेगी जो पुरुषको प्राप्त होगी।

नहीं, यहाँ अपने इतने सारे हमदर्द पाकर मुझे कोई अचम्भा नहीं हुआ। मुझे इसकी पूरी आशा थी। मुझे आशा है कि ग्रेट ब्रिटेनके लोग भारतके दावेके पूर्ण औचित्यको महसूस करेगे।

[अंग्रेजीसे]

जॉन बुल, २६-९-१९३१

४०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन

२५ सितम्बर, १९३१

हमारी बातचीत अच्छी और मैत्रीपूर्ण — बहुत ही मैत्रीपूर्ण रही।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, २६-९-१९३१

१. गांधीजीने यह वक्तव्य लॉर्ड इर्विनसे अपनी भेंटके बाद दिया था। भेंट लॉर्ड इर्विनके निवास-स्थान पर, ईटन स्क्वेयरमें हुई थी और दो घंटे बीस मिनट चली थी। उस बातचीतकी कोई रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

४१. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन
२५ सितम्बर, १९३१

लंकाशायरकी इस बहुत ही छोटी यात्रामें, मैं खास तौर पर सूती कपड़ेके व्यवसायमें लगे वहाँके श्रमजीवियोंको यथासम्भव अधिकसे-अधिक देखना चाहूँगा और जब भी मौका मिलेगा उनसे मिलना और दिल खोलकर बातचीत करना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, २६-९-१९३१

४२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

स्प्रिंगवेल गार्डेन विलेज
२६ सितम्बर, १९३१

मैं इंग्लैंड और अब लंकाशायर कठिनाईमें से निकलनेका कोई मार्ग खोजने आया हूँ। बेरोजगारी चाहे किसी भी देशमें हो, सदा बुरी है, और मैं यदि उसे कम करनेमें किसी भी रूपमें कोई योग दे सका तो मुझे उससे सबसे अधिक प्रसन्नता होगी। लेकिन मैं लंकाशायर और ग्रेट ब्रिटेनके अन्य भागोंके अंग्रेजोंके सक्रिय सहयोगके बिना कुछ भी कर सकनेमें असमर्थ हूँ।

जो गरीबी मैंने देखी है उससे मुझे दुःख होता है, और यह जान कर तो और भी अधिक दुःख होता है कि इस बेरोजगारीमें मेरा भी एक तरहका हिस्सा है। फिर भी यह जानकर उस दुःखसे कुछ राहत मिलती है कि मेरा ऐसा अभीष्ट कदापि नहीं था। यह उन कदमोंका नतीजा है जो मैंने इसलिए उठाये, और मुझे इसलिए उठाने पड़े, कि बेरोजगारोंकी दुनियाकी उस सबसे बड़ी फौजके प्रति, यानी भारतके लाखों भूखे लोगोंके प्रति, यह मेरा एक कर्त्तव्य था। उनकी गरीबी और कंगालीकी तुलनामें लंकाशायरकी गरीबी नगण्य लगती है।

इसीलिए मैं अधिकसे-अधिक अंग्रेजोंसे मिलने और उनकी मनःस्थितिको समझनेकी कोशिश कर रहा हूँ और उनके आगे भारतकी सही स्थिति, उसे जिस रूपमें मैं समझता हूँ, रखनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

संडे ऑब्ज़र्वर, २७-९-१९३१

१. गांधीजीने यह वक्तव्य शामको यूस्टनमें लंकाशायरके लिए रेलगाड़ीपर चढ़ते समय दिया था।

४३. बातचीत: कपड़ा-उद्योगके प्रतिनिधियोंसे[1]

एजवर्थ
२६ सितम्बर, १९३१

श्री गांधीने अपने भाषणमें भारतके सम्बन्धमें अपनी आर्थिक नीतिकी रूपरेखा काफी विस्तारके साथ पेश की। उन्होंने समझाया कि खादीका एक उद्देश्य भारतीय ग्रामवासियोंमें आत्मसम्मानकी भावना पैदा करना है और इस तरह उसका एक सामाजिक महत्त्व भी है। उन्होंने भारतीय गरीबीकी बहुत हृदय-विदारक तसवीर खींची और कहा कि लंकाशायरकी मौजूदा हालतसे मुझे दुःख हुआ है, किन्तु उसकी यह हालत भारतकी हालतसे तो अनन्त गुनी बेहतर है।

प्र०: क्या आर्थिक उद्देश्यसे किये जानेवाले बहिष्कारसे राजनीतिक हेतुसे प्रेरित बहिष्कारको अलग करना सम्भव है?

उ०: जब बहिष्कारका एकमात्र उद्देश्य ब्रिटेनको दण्डित करना था — जैसा कि १९३० मे था, जब लोग ब्रिटिश मालकी जगह अमेरिका और जर्मनीमे बना हुआ माल खरीदते थे — तब तो निश्चय ही वह राजनीतिक उद्देश्यसे प्रेरित था। उस समय तो ब्रिटेनमे बनी मशीनो तकका बहिष्कार किया गया था। किन्तु अब हम जो कर रहे है वह आर्थिक बहिष्कार ही है, जैसा कि वह मूलतः था। आप उसे बहिष्कार कह सकते है, किन्तु वस्तुतः वह लोगोंको शिक्षित करनेका आन्दोलन है, या ऐसा कहिए कि आत्मशुद्धिका प्रयत्न है। उसके द्वारा हम लोगोसे यह अनुरोध कर रहे है कि वे अपना पुराना धन्धा फिर अपना ले, आलस्य छोड़ दें और कितनी भी स्वल्प क्यो न हो, अपने पसीनेकी कमाई खाये, भिक्षा पर पलनेका खयाल छोड दे।

प्र०: लेकिन उसमें भी राजनीतिक रंग तो रहेगा, क्योंकि आप विदेशोंके मालपर अपनी मिलोंके मालको तरजीह देंगे ही।

उ०: बहिष्कार मिलोके हितमे शुरू नही किया गया था। सच तो यह है कि हमारे इस प्रथम रचनात्मक प्रयत्नका आरम्भ स्थानिक मिल-मालिकोंके साथ झगडेसे

१. गाधीजीके साथ कपडा उद्योगके प्रतिनिधियोंकी इस बैठका आयोजन कपडा उद्योग संगठनोंकी संयुक्त समिति (ज्वाइट कमिटी ऑफ कॉटन ट्रेड ऑर्गैनाइजेशन्स) के अध्यक्ष टी० डी० बार्लोने तीसरे पहर अपने घरपर किया था और उसमें कपडा उद्योगके कई प्रमुख प्रतिनिधि उपस्थित थे। **मैंचेस्टर गार्डियनके** अनुसार गाधीजी ४० मिनट बोले किन्तु उनके भाषणकी पूरी रिपोर्ट प्राप्त नहीं हैं, क्योंकि वहाँ कोई रिपोर्टर नहीं था। किन्तु उपस्थित व्यक्तियोंमें से कुछने गाधीजीके भाषणके अपने विवरण **मैंचेस्टर गार्डियनको** भेजे थे (देखिए परिशिष्ट १)। यहाँ भाषणकी जो संक्षिप्त रिपोर्ट दी गई है वह **मैंचेस्टर गार्डियनसे** ली गई है और प्रश्नोत्तरवाला हिस्सा महादेव देसाईके **यंग इंडियामें** प्रकाशित "गांधीजी— लंकाशायरमें" शीर्षक लेखसे।

हुआ था। हमारे करोड़पति इस आन्दोलनका समर्थन कर रहे हैं, यह बात सही है; किन्तु वे हमारी नीतिका नियन्त्रण नही करते बल्कि हम ही उन्हे प्रभावित करनेकी कोशिश कर रहे है। और जब हम लोग गाँवोमे जाते है तो हम उनसे भारतीय मिलोका कपडा पहननेको नही कहते, खादी पहनने या अपनी जरूरतकी खादी खुद बनानेको कहते है तथा हरएक काग्रेसीसे यह अपेक्षा की जाती है कि वह खादी पहनेगा।

प्र० : आप जो भी कहें, आप अधिकाधिक राजनीतिक सत्ता प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहे हैं और यह निश्चित है कि वह आपको मिल जायेगी और ज्यों ही आपको राजनीतिक सत्ता प्राप्त होगी त्यों ही ये मिल-मालिक लोभवश न्याय-अन्यायका खयाल छोड़कर टैरिफकी ऊँची दीवारें खड़ी कर देंगे और आपके गाँवोंके लिए लंकाशायरके कपड़ा-उद्योगसे भी कहीं ज्यादा गम्भीर खतरा बन जायेंगे।

उ० : अगर ऐसी विपत्ति आई और मै उस समय जीवित हुआ तो मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि तब जो होगा उसमे मिलोका नाश हो जायेगा और वास्तविक राजसत्ता मिलनेपर तो सार्वत्रिक वयस्क मताधिकार आ जायेगा और उस हालतमे धनाढ्य वर्गोंके लिए गरीब ग्रामवासियोंके हितोंको कुचलना असम्भव हो जायेगा।

प्र० : क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि जिस तरह अमरीकियोंने पुनः शराब पीना शुरू कर दिया है उसी तरह आपके यहाँ भी लोग मिलका कपड़ा फिर पहनने लगेंगे?

उ० : नही, मुझे ऐसा नही लगता। अमेरिकाकी वह शराबबन्दी एक शक्तिशाली सरकार द्वारा अनिच्छुक जनता पर थोपी हुई चीज थी। वहाँ लोगोंको शराबकी आदत थी। मद्यपानका फैशन था। भारतमे मिलका कपडा कभी फैशनकी चीज नही रहा, जबकि खादी फैशनमें दाखिल हो गई है — प्रतिष्ठित समाजमें प्रवेश पानेका अधिकारपत्र बन गई है। और असल बात तो यह है कि जो भी हो, मैं अपने देशवासियोंके आर्थिक उद्धारके लिए लड़ता ही रहूँगा। यह तो आप स्वीकार करेंगे कि यह एक ऐसा लक्ष्य है जिसके लिए जीने और मरनेमें मनुष्य अपनेको कृतार्थ मान सकता है।

प्र० : आपकी यह लड़ाई एक ऐसे दुश्मनके खिलाफ होगी जिसके मुकाबलेमें आपका बल अपर्याप्त सिद्ध होगा। आर्थिक प्रतियोगितामें निहित लोभका प्रवाह इतना प्रबल होगा कि उसे रोकनेके लिए किया गया हरएक उपाय विफल हो जायेगा।

उ० : आप गोया यह कह रहे हैं कि ईश्वर धनके देवताके हाथो पराजित होता रहा है और होता रहेगा। लेकिन मेरा विश्वास है कि भारतमें वह पराजित नही होगा।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, २८-९-१९३१ और यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

४४. बातचीत : कपड़ा-उद्योगके प्रतिनिधियोंसे[1]

डारवेन
२६ सितम्बर, १९३१

आप कृपया मुझे यह बताइए कि मानव-समाजके उस पंचमांशके उद्धारके लिए, जो भुखमरीकी जिन्दगी जी रहा है और जिसकी आत्मसम्मानकी भावना बिलकुल चुक गई है, मैं क्या करूँ। यह एक ऐसा सवाल है जिसपर लंकाशायरके बेरोजगार मजदूरो तकको विचार करना चाहिए। आपने मुझे लंकाशायरकी ओरसे १८९९-१९०० के दुर्भिक्षके दौरान दी गई सहायताकी याद दिलाई है। आपकी उस सहायताके लिए हम बदलेमे गरीबोंके आशीर्वादके सिवा और क्या दे सकते है? मै आपको न्यायोचित व्यापारकी सुविधाका आश्वासन देने आया हूँ। लेकिन उसे दिये बिना ही मुझे वापस जाना पड़ा तो उसमे मेरा कोई दोष नहीं होगा। मेरे मनमें किसी तरहकी कटुता नही है। मै तो जीवोमे जिन्हे निम्नतम माना जाता है उनके साथ भी बन्धुताका दावा करता हूँ। तो फिर जिन अंग्रेजोंके साथ हमारा सम्बन्ध — उससे कल्याण हुआ हो या अकल्याण — पिछले सौ वर्षोंसे रहा है और जिनमे मेरे कुछ प्रियतम मित्र है उन अंग्रेजोका बन्धु होनेका दावा तो मै कर ही सकता हूँ। भला क्यो न करूँ? आप देखेंगे कि मै एक सीधा आदमी हूँ जिससे सम्बन्ध निबाहना बहुत आसान है, किन्तु यदि आप इस दोस्तीके हाथको अस्वीकार कर देते है तो मै चला जाऊँगा — अपने मनमे कटुता लेकर नही, बल्कि इस भावनाके साथ कि आपके हृदयोंमें जगह पाने योग्य पवित्रता मुझमे नही थी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

४५. भेंट : बेरोजगार मजदूरोंके शिष्टमण्डलको[2]

स्प्रिंगफील्ड गार्डन विलेज
२६ सितम्बर, १९३१

५ मार्चको अस्थायी समझौतेपर दस्तखत होनेके बादसे विदेशी कपड़ोके बहिष्कारसे भिन्न ब्रिटिश कपड़ेके विशेष बहिष्कार-जैसी कोई बात अब नही रही है। राष्ट्रके

१. गांधीजी मेयरसे मिलनेके लिए डारवेन गये थे। मेयरने कपड़ा-उद्योगके दोनों पक्षोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले थोड़े-से लोगोंको उनसे मिलनेके लिए बुलाया था। यह रिपोर्ट गांधीजीकी लंकाशायर-यात्राके महादेव देसाई द्वारा लिखित विवरण "गांधीजी इन लंकाशायर" (गांधीजी — लंकाशायरमें) से ली गई है।

२. महादेव देसाईके "गांधीजी इन लंकाशायर" (गांधीजी — लंकाशायरमें शीर्षक लेखसे उद्धृत।

रूपमे तो हमने सारे विदेशी कपडेके बहिष्कारका संकल्प किया है, किन्तु इंग्लैण्ड और भारतमे सम्मानजनक समझौता हो जानेकी — यानी स्थायी शान्ति हो जानेकी — हालतमें मै सारे दूसरे विदेशी कपडोकी तुलनामे लकाशायरके कपडेको परस्पर स्वीकृत शर्तोपर तरजीह देनेमें नही हिचकूँगा — अलबत्ता, यह उसी हदतक सम्भव होगा जिस हदतक हमें अपने कपडेमें रह गई कमीकी पूर्ति करनेकी जरूरत होगी। लेकिन उससे आपको कितनी राहत मिलेगी, यह मै नहीं जानता। आपको यह तो समझ ही लेना चाहिए कि दुनियाके सारे बाजार अब आपके लिए खुले नहीं रह गये है। आपने जो-कुछ किया वही सब आज दूसरे राष्ट्र भी कर रहे है। भारतीय मिले भी अब दिन-प्रतिदिन अधिक कपडा पैदा करेगी। यह तो आप नही चाहेगे कि लका-शायरकी सहायता करनेके लिए मै भारतीयोके अपने व्यवसायकी वृद्धि करनेके प्रयत्नोंपर रोक लगाऊँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

४६. भाषण : लंकाशायरमें

[२६/२७ सितम्बर, १९३१][1]

यहाँ फैली हुई बेरोजगारी देखकर मुझे दुःख हुआ है। लेकिन यहाँ भुखमरी या अर्ध-भुखमरी नहीं है। भारतमे ये दोनो है। यदि आप भारतके गाँवोमें जायें तो आप वहाँ उन ग्रामवासियोंकी आँखोंमे सम्पूर्ण निराशा झाँकती देखेगे, आपको वहाँ भूखसे अधमरे अस्थि-पजर या सजीव शव नजर आयेगे। अगर भारत इन लोगोको काम-धन्धेके रूपमे भोजन मुहैया करके उन्हे सजीवन प्रदान कर पाये तो वह दुनियाकी एक बडी सेवा करेगा। आज तो भारत एक अभिशाप है। हमारे देशमे एक ऐसी पार्टी भी है जो भुखमरीसे पीडित इन लाखो लोगोका मर जाना पसन्द करेगी ताकि बाकी लोग जीवित रह सकें। मैंने इस समस्याका मानवीय हल ढूँढ निकाला है। मेरा हल यह है कि इन लोगोको ऐसा काम दिया जाये जिससे वे परिचित हैं, जिसे वे अपनी झोपडियोमे कर सकते है, जिसे करनेके लिए औजारो आदिके रूपमें बहुत पूँजीकी आवश्यकता नहीं होती और जिस कामके द्वारा तैयारकी गई चीजे आसानीसे बेची जा सकती है। यह एक ऐसा कार्य है जिसपर लकाशायर भी ध्यान दे सकता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

१. "गाधीजी इन लंकाशायर" (गांधीजी — लंकाशायरमें) शीर्षक लेखसे उद्धृत। अपने इस लेखमें महादेव देसाईने भाषणकी तिथि और स्थानका स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है।

४७. लिपि-सुधार

भाई किशोरलाल मशरूवाला लिखते है :[1]

मै यह पत्र केवल परिचर्चाके विचारसे प्रकाशित कर रहा हूँ। इस सम्बन्धमे मेरी अपनी कोई विशेष राय नही है, किन्तु मै इसके महत्त्वको समझता हूँ। भाई किशोरलालने विद्वानोंकी राय माँगी है। लिपि-सुधारका निर्णय उसके गुण-दोषके आधार पर नही होगा, बल्कि उसकी लोकप्रियता पर निर्भर होगा। इस दृष्टिसे 'नवजीवन' के पाठकोकी राय माँगना उचित ही है। यदि विद्वान और सामान्य जन इसके पक्षमे होगे तो सम्भव है, पत्रकार भी इसका समर्थन करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-९-१९३१

४८. पारसियोंका विरोध

गत १० अगस्तको श्री आबिद अली आदि कांग्रेसके पिकेटरोंके साथ जो दुर्व्यवहार किया गया उसकी निन्दा करते हुए एक विरोध-पत्रक प्रकाशित किया गया है, जिस पर १७५ पारसियोने हस्ताक्षर किये है। इन हस्ताक्षरकर्त्ताओमे बैरिस्टर, डाक्टर, सॉलिसीटर, प्रोफेसर आदि भी है। यह विरोध प्रकट करनेके लिए मै इन हस्ताक्षरकर्त्ताओंका अभिनन्दन करता हूँ। किन्तु साथ ही मुझे यह भी कह देना चाहिए कि इन उपद्रवोंमे जिन लोगोंका हाथ था उनपर इस विरोधका शायद ही कोई प्रभाव पडेगा। वस्तुत. आवश्यकता है शराब बेचनेवालोसे व्यक्तिगत सम्पर्क साधनेकी, उनके लिए कोई दूसरा प्रतिष्ठित धधा ढूँढ निकालनेकी, उसके सम्बन्धमे उपयुक्त योजना बनानेकी और उनके इस मौजूदा धधेके खिलाफ पारसियोंमे मजबूत लोकमत उत्पन्न करनेकी है। शराबके इन विक्रेताओकी दलील यह है कि यदि हम लोग यह धंधा छोड दे तो उसे कोई दूसरा शुरू कर देगा। मैंने उनसे यह कहा है कि यदि वे यह धधा छोड़ देते है तो उसके परिणामस्वरूप पारसी समाजके बाहर भी ऐसा लोकमत उत्पन्न हो जायेगा कि दूसरोके लिए भी यह अनीतिपूर्ण धधा अपनाना असभव हो जायेगा। मैंने इस सम्बन्धमे 'नवजीवन'[2] मे

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने गुजराती लिपिमें सुधारके लिए कुछ सुझाव दिये थे ताकि उसे नागरी लिपिके अधिक निकट लाया जा सके।

२. तात्पर्य शायद ३०-७-१९३१ के **यंग इंडिया** में प्रकाशित "प्रोहिबिशन वर्क इन मलवाण" (मलवाणमें मद्य-निषेध-कार्य) शीर्षक लेखसे है और यहाँ भूलसे **नवजीवन** लिखा गया प्रतीत होता है। लेखमें भंडारी समाज द्वारा सविनय अवज्ञा आदोलनके प्रभावमें ताड़ी निकालनेका धन्धा छोड दिये जानेकी चर्चा थी।

रत्नागिरि जिलेके भंडारी समाजके उदाहरणका उल्लेख किया है। उन लोगोंने शराब बेचनेका अपना परम्परागत धंधा छोड़ कर शराबके खिलाफ युद्धका श्रीगणेश किया। अनेक कोलियोंने भी ऐसा ही किया है। इसलिए यदि पारसी भी इस सुधारको अपनायें तो यह तो नहीं कहा जा सकेगा कि उन्होंने इस दिशामें पथ-प्रदर्शन किया है किन्तु उन्हें एक अच्छे उदाहरणके अनुसरणका श्रेय अवश्य मिलेगा और यह भी कहा जायेगा कि उन्होंने एक ऐसे व्यापारकी जड़ खोदनेके देश-हितकारी कार्यमें अपना योगदान दिया है जिससे मजदूर-वर्गकी अपूरणीय हानि हो रही थी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-९-१९३१

४९. पत्र : दादूको

रेलगाड़ीमें
२७ सितम्बर, १९३१

प्रिय दादू,

हाजी इस्माइल भाभाने पत्र लिखकर शिकायत की है कि सत्याग्रही हिंसापूर्ण आचरण कर रहे हैं। जूनमें हुई सभामें वे अपने साथ घातक हथियार लेकर गये थे, और वे मुस्लिम महिलाओंसे गैरवाजिब फायदा उठा रहे हैं। मैंने उनको लिखा है कि इस बारेमें तुमको लिख रहा हूँ। मैं चाहूँगा कि तुम उनसे मिलो। हमारा कर्त्तव्य है कि विरोधियोंके दृष्टिकोणको भी समझें और जहाँ-कहीं उनकी आपत्तियोंको दूर कर सकते हैं, उन्हें दूर करें।

मुझे आशा है कि वहाँका मामला ठीक चल रहा होगा।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९०५) से।

५०. भाषण: वयस्कोंके स्कूलमें[1]

वेस्ट ब्रैडफोर्ड
२७ सितम्बर, १९३१

श्री गांधीने अपना भाषण आरम्भ करते हुए कहा कि मैं लंकाशायरवालोंके इस विचारसे सहमत हूँ कि इस देशमें आज जो बेरोजगारीकी समस्या उठ खड़ी हुई है उसका आंशिक कारण भारतमें मेरे द्वारा उठाया गया कदम है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि राजनीतिक रुचिके बहुत-से लोगोंने बदलेकी भावनासे बहिष्कार शुरू किया है और उन्हे इंग्लैंडको चोट पहुँचानेमें आनन्द आता है। मगर मेरे लिए यह कोई आनन्दका विषय नहीं है, और मेरे गिरफ्तार हो जानेके बाद आन्दोलनने, वह अन्यथा जैसा हो सकता था, उससे कुछ भिन्न रूप ले लिया। यदि सरकारने लॉर्ड इर्विनके नाम लिखे मेरे उस पत्रके[2] पीछे खड़ी ताकतको समझा होता जिसमें मैंने प्रसिद्ध ग्यारह-सूत्री माँग रखी थी तो इतिहास कुछ और ही ढंगसे लिखा जाता। मेरी गिरफ्तारीके बाद बहिष्कार एक सर्वव्यापी नारा बन गया। मेरी अपनी योजना तो सारे विदेशी कपड़ेके बहिष्कारकी होती, लेकिन सारा सूत्र-संचालन जनताने अपने हाथोंमें ले लिया, बहिष्कार आन्दोलनको ब्रिटिश मालके बहिष्कारका रूप दे दिया और जापानी कपड़े, अमेरिकी टाइपराइटर वगैरह खरीदती रही।

मार्चमें[3] मेरे जेलसे छूटनेपर ब्रिटिश मालका बहिष्कार बन्द हो गया, लेकिन मेरे कहनेपर विदेशी मालका बहिष्कार जारी रखा गया। इसके बाद श्री गांधीने शराब तथा मादक पदार्थों और विदेशी कपड़ेके बहिष्कारके सम्बन्धमें लॉर्ड इर्विनसे हुई अपनी वार्त्ता, लॉर्ड इर्विनकी ब्रिटिश कपड़ोंका बहिष्कार समाप्त करवानेकी चिन्ता, इसके खिलाफ दी गई दलीलों, और लॉर्ड इर्विनके अन्तमें इस बातपर राजी हो जानेकी चर्चा की कि वे बहिष्कार समाप्त किये जानेपर आग्रह रखकर समझौतेकी सम्भावनाओंको खतरेमें नहीं डालना चाहते।

अपने अन्य भाषणों और वक्तव्योंकी तरह यहाँ भी श्री गांधीने ब्रिटेनके ३०,००,००० बेरोजगारोंकी तुलना भारतके ३०,००००,००० बेरोजगारोंसे की। उन्होंने

१. सभा हेज फार्म गेस्ट हाउसमें आयोजित की गई थी। यहीं यह स्कूल चलाया जाता था और गांधीजी रातमें यहीं ठहरे थे।

२. यह पत्र वाइसरायके निजी सचिवके नाम लिखा गया था; देखिए खण्ड ४३, पृष्ठ २-९।

३. गांधीजी जनवरीमें रिहा हुए। गांधी-इर्विन समझौतेके अनुसार ब्रिटिश मालका बहिष्कार समाप्त किया गया। देखिए खण्ड ४५, परिशिष्ट ६।

बेरोजगारोंको दिये जानेवाले गुजारा-भत्तेको आत्म-सम्मानकी भावनाके खिलाफ कहा और बताया कि किस प्रकार भारतमें हड़तालोंका नेतृत्व करते हुए उन्होंने गुजारा-भत्तेकी बातको बिलकुल तिलांजलि दे दी थी और हड़तालियोंको निठल्ले रहनेके बजाय बहुत कम मजदूरीपर भी कोई और काम करनेको प्रेरित किया था। उन्होंने उन हड़तालियोंकी भी चर्चा की जिन्हें बुनाईका प्रशिक्षण देकर स्वावलम्बी बनना सिखाया गया था।

इसके बाद श्री गांधीने अपने इस विचारका पल्लवन किया कि भारतकी गरीबी ब्रिटिश नीतिका — सौ साल पहले लंकाशायरकी मशीनोंके बलपर भारतके पुराने वस्त्र-उद्योगको समाप्त कर देनेका — परिणाम है। उन्होंने कहा कि जिन लोगोंकी आजीविकाके सहायक साधन (जिसके बलपर उन्हें जमीनसे मिलनेवाली रोटीके अलावा और भी जो चीज अपेक्षित है वह चीज मिल जाती थी)को नष्ट किया गया, अगर उन स्वत्ववंचित लोगोंकी सन्तानें अपनी स्थितिको फिरसे सुधारनेकी कोशिश करती हैं तो उस सहायक धन्धेको नष्ट करनेवालोंकी सन्तानोंको उसपर कोई शिकायत नहीं करनी चाहिए।

उन्होंने कहा कि अब यह तो असम्भव है कि लंकाशायर अपना पहला व्यापारिक वैभव फिरसे प्राप्त कर ले, और अगर वह ऐसी कोशिश करता है तो मैं उसमें सहायक नहीं हो सकता। इसी तरह मैं भारतीय कपड़ा-मिलोंको सहारा देनेके लिए कुछ नहीं कर सकता। हो सकता है, किसी दिन मुझे उनके विनाशके लिए प्रयत्न करना पड़ जाये, लेकिन इस समय वे ग्रामवासियोंके रोजगार पानेके मार्गमें बाधक नहीं हो रही हैं, और इसीलिए मैं उनके अस्तित्वको बरदाश्त कर रहा हूँ। मैं गाँववालोंसे यह नहीं कहता कि उन्हें देशी मिलोंके ही कपड़े खरीदने चाहिए। मैं तो उनसे यह कहता हूँ कि उन्हें विदेशी कपड़े नहीं खरीदने चाहिए और अपनी जरूरतके कपड़े खुद तैयार करने चाहिए।

श्री गांधीने भारतके ग्रामीण लोगोंकी दशाका वर्णन करते हुए कहा कि उनकी औसत मासिक आय ७ शिलिंग ६ पेंस है। यदि इसमें ३ शिलिंग और जुड़ जायें तो यह उनके लिए बहुत बड़ी बात होगी। जिन लोगोंने चरखेको अपना लिया है, उनपर आज कर्जका कोई बोझ नहीं है। इसके बाद उन्होंने गाँवोंके खेलते हुए बच्चों द्वारा सूत कातनेकी क्रियाका बड़ा ही काव्यात्मक वर्णन किया और धनाभिमानियों द्वारा दानमें दिये मुट्ठी-भर चावलपर जीनेवाले ग्रामीण लोगोंकी अवस्थाका और जब कताईका शानदार काम उनके घरोंमें चल रहा होता है उस समयकी उनकी स्थितिका अन्तर बताया। लंकाशायरवालोंसे उन्हें एक ही सांत्वना देनेवाली बात कहनी थी। वह यह कि भारतके उन करोड़ों अभावग्रस्त मानवोंके मनमें उनके प्रति कोई दुर्भावना नहीं है और वे यह भी नहीं जानते कि लंकाशायर क्या है। उन लोगोंके तनपर चिथड़ेके अलावा और कोई वस्त्र नहीं होता।

इसपर से गांधीजीको स्वभावतः अपने पहनावेके विषयमें कहनेका खयाल आया। उन्होंने कहा कि मैं करोड़ों भूखे-नंगे मानवोंका सच्चेसे-सच्चा प्रतिनिधि दिखना चाहता हूँ। मुझे सम्राट् महोदयके समक्ष उपस्थित होनेका अवसर आये तो वहाँ भी मैं अपनी यही लँगोटी पहनकर जाऊँगा, क्योंकि ऐसा न करनेपर मैं अपनेको अशिष्टताका दोषी मानूँगा। उन करोड़ों लोगोंको अपनी लज्जा-निवारणके लिए जितने कपड़ेकी जरूरत होती है, उससे गज-भर भी अधिक कपड़ेका इस्तेमाल करना मैं अपने लिए अशोभनीय मानता हूँ। उन लोगोंको दिनमें एक ही वक्त खाना मिलता है, दूधका वे स्वाद भी नहीं जानते और गर्मीके मौसममें उन्हें कभी-कभी घास-पातपर भी गुजारा करना पड़ता है। ये करोड़ों लोग आपके दरवाजोंपर दस्तक दे रहे हैं। अन्तमें श्री गांधीने कहा कि मुझे लगता है कि इंग्लैंडने अपने सुख-वैभवका महल उन करोड़ों लोगोंकी कब्रोंपर खड़ा किया है, लेकिन अब उसे वैसा नहीं करना चाहिए।

फिर बातचीतके दौरान श्री गांधीने अपनी यह दलील दोहराई कि हो सकता है, लंकाशायरकी व्यापारिक स्थिति पहले ही इतनी बिगड़ चुकी हो कि बहिष्कार आन्दोलनके इस अपेक्षाकृत हलके-से झटकेको भी सँभाल पाना उसके लिए मुश्किल हो गया हो, इस बातमें कोई सन्देह नहीं कि यह आन्दोलन उसके व्यापारमें मन्दी आनका अकेला नहीं, बल्कि अनेक कारणोंमें से सिर्फ एक कारण है। इसके बाद उन्होंने लंकाशायरके व्यापारमें कमी आनेके उन अन्य कारणोंका उल्लेख किया जो आज दुनियामें मौजूद हैं। उन्होंने अपना यह सुझाव भी दोहराया कि अगर ग्रेट ब्रिटेनके साथ कोई ठीक समझौता हो जाये तो सरकारकी ओरसे लंकाशायरके साथ एक ऐसा अनुबन्ध किया जा सकता है कि भारत उससे माल खरीदेगा — लेकिन साल-दर-साल घटती हुई मात्रामें। लेकिन उन्होंने यह स्वीकार किया कि इससे केवल इतना ही होगा कि लंकाशायर कुछ समयके लिए अपनी कठिनाइयोंसे पार पा लेगा।

एक व्यक्तिने जब यह कहा कि आपकी नीति तो एक खतरनाक ढंगकी राष्ट्रवादिताकी नीति लगती है तो श्री गांधीने उसका प्रतिवाद करते हुए कहा कि मैं तो सिर्फ यह चाहता हूँ कि भारत खाने-कपड़ेके सम्बन्धमें स्वावलम्बी हो किन्तु बाकी सभी तरहके विदेशी मालके लिए उसका दरवाजा खुला रहे। अन्तमें श्रोताओंसे विदा लेते हुए उन्होंने जापानके व्यावसायिक तरीकोंके बारेमें कुछ बातें कहीं, और उन्हें समझाया कि लंकाशायरके लिए बेहतर यह होगा कि भारतकी ओरसे अपना ध्यान हटाकर दुनियामें जो आर्थिक संकट मौजूद है और जिसमें भारतका योग समुद्रमें बूँदके समान है, उसका खयाल करते हुए अपनी समस्याओंको सुलझाये।

[अंग्रेजीसे]

क्लिथरो ऐडवर्टाइजर ऐंड टाइम्स, २-१०-१९३१

५१. भेंट : बेरोजगार मजदूरोंके शिष्टमण्डलको[1]

वेस्ट ब्रैडफोर्ड
२७ सितम्बर, १९३१

यदि मैं आपको सबकुछ साफ-साफ न बता दूँ तो उसका मतलब यह होगा कि मैं आपके साथ कपट कर रहा हूँ, मैं आपका सच्चा मित्र नहीं हूँ। पिछले मार्च महीनेमें मैंने लॉर्ड इर्विनको शराब और विदेशी कपड़ोंका बहिष्कार करनेकी छूट देनेपर राजी करनेके लिए उनसे बहुत अनुनय-विनय की थी। उन्होंने कहा कि आप सद्भावके प्रदर्शनके तौरपर तीन महीनेके लिए बहिष्कार बन्द करके चाहे तो उसे फिर शुरू कर सकते हैं। मैंने कहा कि तीन महीने तो क्या, मैं इसे तीन मिनटके लिए भी बन्द नहीं कर सकता। आपके यहाँ तीस लाख लोग बेरोजगार हैं, लेकिन हमारे यहाँ वर्षके छ महीने लगभग तीस करोड़ लोग बेरोजगार रहते हैं। आप अपने यहाँके बेरोजगार लोगोंको प्रति व्यक्ति प्रति मास औसतन ७० शिलिंग गुजारेके लिए देते हैं। हमारी तो मासिक आय ही प्रति-व्यक्ति औसतन ७ शिलिंग ६ पेंस है। उस कारीगरका यह कहना बिलकुल सही है कि वह अपनी ही नजरोंमें गिर गया है। मैं निश्चय ही यह मानता हूँ कि किसी भी मनुष्यके लिए बेकार रह कर दानपर गुजारा करना बहुत पतनकारी चीज है। मैंने एक हड़तालका नेतृत्व किया था, उस दौरान मैं इस बातको सहन नहीं कर सका कि हड़ताली लोग एक दिनके लिए भी बेकार रहे। मैं उनसे पत्थर तोड़ने या रेत ढोने और सार्वजनिक सड़कोंकी मरम्मत वगैरहका काम लेता था और अपने साथी कार्यकर्त्ताओंसे भी उनके काममें हाथ बँटानेको कहता था। इसलिए जरा सोचिए तो कि तीस करोड़ लोगोंका बेरोजगार रहना, आत्म-सम्मानकी भावनासे विहीन, ईश्वरके प्रति आस्थासे रहित करोड़ों लोगोंका प्रति-दिन पतितावस्थामें पहुँचते जाना — यह कितनी भयकर बात है! मैं उनके सामने ईश्वरकी बात करनेकी हिम्मत नहीं करता। यदि उनसे ईश्वरकी बात करना उचित हो तब तो वहाँ खड़े उस कुत्तेसे भी ईश्वरकी बात करनेमें कोई हर्ज नहीं होगा। उनकी आँखोंमें नूर नहीं है। उनका ईश्वर तो उनकी रोटी है। उनके पास मैं ईश्वरका कोई सन्देश लेकर तभी जा सकता हूँ जब उनके सामने किसी पवित्र कामका सन्देश लेकर जाऊँ। अच्छा-सा नाश्ता करके अच्छे कलेवेका इन्तजार करते हुए तो ईश्वरकी चर्चा बड़े मजेमें की जा सकती है। लेकिन जिन करोड़ों लोगोंको दिनमें दो वक्त भी खानेको नहीं मिलता, उनके सामने मैं ईश्वरकी बात कैसे करूँ? उन्हे तो ईश्वरके दर्शन रोटी और उसके साथ और भी जो-कुछ

१. गांधीजी कई शिष्टमण्डलोंसे मिले थे, लेकिन महादेव देसाईने, जिनकी लिखी "गांधीजी इन लंकाशायर" (गांधीजी लंकाशायरमें) शीर्षक रिपोर्टसे यह भेंट-वार्ता ली गई है, इस शिष्टमण्डलके नाम-धामके बारेमें कुछ नहीं बताया है।

अपेक्षित है, उसीमे हो सकते हैं। रोटी तो, खैर, भारतके किसान अपनी जमीनसे पा रहे थे। मैंने उनके सामने चरखेको पेश किया, ताकि रोटीके साथ और भी जो-कुछ आवश्यक है, वह उन्हे प्राप्त हो सके। और आज अगर मैं ब्रिटेनकी जनताके सामने लँगोटी पहनकर आया हूँ तो इसलिए कि उन करोडो अर्धबुभुक्षित और अर्ध-नग्न मानवोंके एक-मात्र प्रतिनिधिके रूपमे यहाँ आया हूँ। हमने यह प्रार्थना की है कि हम अपने प्राणोको ईश्वरकी कृपाकी स्निग्ध धूपमे जुड़ाये। मगर मैं आपसे कहता हूँ कि जबतक करोड़ो अभावग्रस्त मानव आपका दरवाजा खटखटा रहे हो तबतक आप वैसा नही कर सकते। आप कष्टमे हो, तब भी उनकी तुलनामे सुखी ही है। मुझे इस सुखसे कोई जलन नही है। मैं आपके लिए शुभकामनाएँ करता हूँ, लेकिन आप भारतके करोड़ों दीन-हीन लोगोकी कब्रो पर अपनी समृद्धिका महल खडा करनेकी न सोचे। मैं यह नही चाहता कि भारत दुनियासे बिलकुल कटकर रहे, लेकिन मैं यह भी नही चाहता कि वह अपने खाने-कपडेके लिए दूसरे देशो पर निर्भर रहे। हम वर्त्तमान सकटसे निकलनेका उपाय तो कर सकते हैं, लेकिन मैं आपको बता दूँ कि आपको लकाशायरके पुराने व्यापारिक वैभवको फिरसे लौटा लानेकी आशा नही रखनी चाहिए। यह असम्भव है। नीतिकी दृष्टिसे इस प्रक्रियामे मैं आपकी मदद नही कर सकता . . .[1] मान लीजिए एकएक मेरी साँस रुक जाती है और कुछ देर तक मुझे कृत्रिम श्वासोच्छ्वासकी विधिसे सहायता पहुँचाई जाती है और मैं फिर साँस लेने लगता हूँ। उस हालतमे क्या मुझे बराबर उस कृत्रिम विधि पर ही निर्भर रहना चाहिए और अपने फेफड़ोका प्रयोग करना ही नही चाहिए? नही, वैसा करना आत्मघात होगा। मुझे अपने फेफडोको मजबूत बनाने और अपने प्रकृत साधनोपर ही जीनेकी कोशिश करनी चाहिए। आपको ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि भारत अपने फेफड़ोको मजबूत बनाये। आप अपने कष्टोका दोषी भारतको न ठहराये। आप ससारकी उन ताकतोका विचार कीजिए जो आपके खिलाफ काम कर रही हैं। वस्तुस्थितिको बुद्धिके प्रकाशमे देखिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

५२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

वेस्ट ब्रैडफोर्ड
२७ सितम्बर, १९३१

यहाँ आकर निश्चय ही मुझे बडी प्रसन्नता हुई है और मुझे अधिकसे-अधिक प्रेम और सौजन्य ही मिला है। श्रमिको और मालिकोकी विभिन्न मण्डलियोसे मै मिला हूँ और उनके साथ मेरा बहुत ही मैत्रीपूर्ण विचार-विमर्श चला है।

मुझे ऐसा लगता है कि लंकाशायरकी व्यथाको मैंने कुछ जाना है, और मेरा हृदय कष्ट भोगते श्रमिकोंके लिए सहानुभूतिसे भरा है। मैंने श्री डेविसका कारखाना और वह पूरा शेड देखा है, जहाँ करघे बेकार पडे है। अपनी निजी स्थिति और काग्रेसकी स्थिति मैंने उनके आगे स्पष्ट कर दी है। मैंने उन्हे यह बता दिया है कि यदि स्थायी समझौता हो गया तो भारतसे किस हदतक सहायता मिल सकती है। परन्तु मुझे इस तथ्यसे भी पीडा होती है कि बेरोजगारी इतनी व्यापक है कि भारतसे जो सहायता आ सकती है वह एक छोटे-से वर्गको ही प्रभावित करेगी।

मुझे ऐसा लगा है कि लकाशायरकी विपत्तिके लिए भारतीय बहिष्कारकी अपेक्षा विश्वकी परिस्थितियाँ कही अधिक जिम्मेदार है। पिछले साल भारतीय बहिष्कारके अपने तीव्र रूपमें आनेसे पहले भी, भारतके साथ लकाशायरका व्यापार कुल उत्पादनके १५ प्रतिशत भागसे बहुत अधिक नही था। मेरे खयालसे बहिष्कारका कुप्रभाव उसपर ३ प्रतिशतसे ज्यादा नही पड़ा है, या उससे थोडा ही अधिक हो सकता है।

इसलिए, जहाँतक भारतका सम्बन्ध है, यह प्रश्न बहुत ही छोटी परिधितक सीमित है। लकाशायरकी वर्त्तमान विपत्तिको कम करने या बिलकुल दूर करनेके लिए और क्या किया जा सकता है, यह कहना मेरे लिए धृष्टता होगी। जहाँतक भारतका प्रश्न है, मै आपको यह बता ही चुका हूँ कि अधिकसे-अधिक क्या सम्भव है। अन्तमें कोई परिणाम चाहे निकले या न निकले, पर कर्मचारियो और मालिकोके साथ दो दिनके घनिष्ठ सम्पर्कने मुझे यह दिखा दिया है कि लकाशायरके लोगोने अपनी विपत्तिको बहुत ही बहादुरीसे सहा है और इस बातसे मुझे बहुत अधिक सन्तोष हुआ कि भारतके प्रति उन्होने कोई कटुता नही दिखाई है। इसे मै एक शुभ लक्षण मानता हूँ।

लंकाशायरके श्रमजीवी लोगोंसे मुझे सदा भद्र व्यवहारकी ही आशा थी। पर कल सड़कोंके किनारे एकत्रित लोगोकी भीड़ने स्वेच्छासे मेरे प्रति जिस गहरे प्रेमका प्रदर्शन किया, उसके लिए मै बिलकुल तैयार नही था। उस प्रेमको मै अपने जीवनकी एक सुखद स्मृतिके रूपमें सदा सँजो कर रखूँगा।

बस, मुझे इतना ही कहना था।

१. साधन-सूत्रके अनुसार, गाधीजी प्रेस रिपोर्टरोंके दलसे दोपहरमें मिले थे।

यह पूछनेपर कि क्या वे इस बयानकी, जो उनका ही बताया जाता है, पुष्टि कर सकते हैं कि यदि भारतको स्वराज्य प्राप्त हो गया तो वे विदेशोंसे आयात होनेवाले सारे कपड़ेपर पाबन्दी लगाना स्वीकार कर लेंगे और सिर्फ लंकाशायरके कपड़ेका ही आयात होने देंगे, गांधीजीने कहा :

सभी विदेशी कपड़ेपर पाबंदी लगकर सिर्फ लंकाशायरके कपडेकेका आयात मैं उसी हदतक स्वीकार करूँगा जिस हदतक विदेशी कपडा भारतकी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए आवश्यक होगा। जैसा कि आवश्यक है, उसकी कोटि और कीमतके प्रतिमानके बारेमें शर्तें रखनी होंगी, परन्तु वे आपसमें तय हो सकती हैं।

यह पूछनेपर कि अपना सूती कपड़ा खुद बनानेकी भारतकी नीतिका क्या उसके कच्चे मालके निर्यातपर असर नहीं पड़ेगा, गांधीजीने कहा कि भारत दुनियाके अन्य राष्ट्रोंसे या इंग्लैंडसे, राष्ट्र-विशेषके साथ रियायती व्यवहारकी व्यवस्था करनेवाली किसी धाराके अधीन, सूती कपड़ेके थान ही नहीं बल्कि और भी बहुत-सी चीजें खरीदेगा। उन्होंने कहा :

भारत अपनी सभी जरूरतोंके लिए पूरी तरह आत्मनिर्भर न तो है और न लम्बे अरसेतक होगा। उदाहरणके लिए, भारत इस समय भारी मात्रामें लोहेका सामान, चीनी आदि आयात करता है।

प्र० : क्या आप इस बातसे सहमत हैं कि आयात किये जानेवाले मालमें कमी होनेसे उसके साथ-साथ भारतीय रुईकी माँगमें भी कमी हो जायेगी?

उ० : कपास कोई ऐसी खास फसल नहीं है कि यदि वह एक बार उगाई गई है तो सदा ही उगाई जानी चाहिए। काश्तकार बदली हुई परिस्थितियोंके प्रति तुरन्त अपनी प्रतिक्रिया दिखायेगा और जो अन्य फसलें लाभदायक हैं उन्हें उगायेगा।

यह पूछनेपर कि क्या वे जापानी सूती कपड़ेको विशेष रूपसे रोकेंगे, गांधीजीने कहा :

मैं जापानी कपडेके थानोंपर और अन्य थानोंपर भी और प्रत्येक अन्य विदेशी मालपर प्रतिबंधक शुल्क लगाऊँगा। यह जापानके विरुद्ध भेद-भावका सवाल नहीं होगा। उसके खिलाफ मुझे कोई शिकायत नहीं है। मैं केवल अपना सामान अपने साझीसे लूँगा। जापान या किसी अन्य राष्ट्रकी चीजें यदि मैं इसलिए नहीं लेता हूँ कि उन चीजोंको मैं खुद बना रहा हूँ, तो उन्हें कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए, और यदि मैं उन चीजोंको अपने साझीसे लेता हूँ तो भी उन्हें कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए।

प्र० : वह सब स्वराज्यपर निर्भर है ना?

उ० : हाँ, वह सब पूरी तरह स्वतन्त्र इच्छा और अपनी मर्जीकी चीज होनी चाहिए। मैं भारतको हानि पहुँचाकर लंकाशायरका फायदा नहीं करूँगा। यदि मुझे और विदेशी कपडेकी जरूरत है और यदि इंग्लैंड मेरा साझी है, तो उससे उसे न लेना मेरी मूर्खता होगी।

प्र० : मान लीजिए यह वार्ता टूट जाती है?

उ० : तब भगवान ही भारतको बचाये। भारतको तब कष्टोकी अग्निमें से गुजरना होगा। भारतको जबतक उसकी स्वतन्त्रता नही मिलती है, भारतके शान्ति प्राप्त करनेका प्रश्न ही पैदा नही होता। यह एक निश्चित बात है।

यह पूछनेपर कि क्या वे आशान्वित है, गांधीजीने कहा :

यह सब ईश्वरके हाथमें है। कुछ कहना बहुत ही कठिन है।

प्र० : आप क्या यह महसूस करते है कि इंग्लैडकी वर्त्तमान राजनीतिक परिस्थितिके समझौतेकी सम्भावनाएँ खतरेमें पड़ गई है?

उ० — ब्रिटिश राजनीतिज्ञ यदि इस निष्कर्षपर पहुँचते है कि वर्तमान समस्याको सुलझानेके लिए भारतके साथ समझौता जरूरी नही है तो ये सम्भावनाएँ खतरेमें पड जायेंगी, या पड सकती हैं। अगर वे यह महसूस करे कि इसे टाला जा सकता है, तो खतरा है। लेकिन अगर वे यह महसूस करे कि घरेलू समस्यासे निबटनेमें भारतके प्रश्नका ध्यान रखना ही है, तब तो निश्चय ही घरेलू समस्याके कारण इस प्रश्नको कुछ अधिक महत्त्व भले ही न मिले, लेकिन इसका जितना महत्त्व रहा है, उतना तो रहेगा ही।

इस जिज्ञासाके उत्तरमें कि यदि आम चुनाव होता है तो वे क्या उसके समाप्त होनेतक प्रतीक्षा करेंगे, गांधीजीने कहा :

मै यहाँ अनिश्चित कालतक प्रतीक्षा करना नही चाहता हूँ। यहाँ प्रतीक्षा करते हुए समय बिताना मेरे लिए असुविधाजनक होगा। यदि अगले सप्ताह पार्लियामेंट भग कर दी जाती है तो मेरा रुख ब्रिटिश मन्त्रियोके रुखसे निर्धारित होगा कि वे क्या करना चाहते है। वे समय बिताना, परिषदकी कार्रवाइयोको स्थगित करना, या प्रभावी निर्णयोको स्थगित करना चाहते हैं, तो मैं निश्चय ही चला जाना चाहूँगा। परिषद् फिर शुरू होनेपर मैं लौटूंगा या नही, यह उस परिस्थितिपर निर्भर होगा जो उस समय मेरे सामने होगी। मैंने निश्चय ही यह नही सोचा था कि परिषद् स्थगित हो सकती है, मैंने तो बल्कि यह सोचा था कि अन्तिम निर्णयपर पहुँचा जा सकेगा।

प्र० : आपके खयालमें प्रगति हुई है या पीछे हटे हैं?

उ० : मेरे खयालसे न प्रगति हुई है और न पीछे हटे हैं।

प्र० : क्या आप प्रगतिकी प्रत्याशा रखते है?

उ० : यह एक पेचीदा समस्या है।

प्र० : क्या कांग्रेस किसी निष्कर्षपर पहुँच गई है?

उ० : किसी ठोस निष्कर्षपर नही पहुँची है। यह कठिन है।

प्र० : क्या आपने ब्रिटिश मन्त्रियोको यह बता दिया है कि यदि आम चुनाव हुआ तो आपकी योजनाएँ क्या है?

उ० : मेरी कोई योजनाएँ नही है। मेरी योजनाएँ क्या होगी, मुझे नही मालूम।

मुद्रा-सम्बन्धी एक प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि वे अपनेको इसका विशेषज्ञ नहीं मानते हैं।

[अंग्रेजीसे]

क्लिथरो ऐडवर्टाइज़र ऐंड टाइम्स, २-१०-१९३१

५३. भेंट : शिष्टमण्डलको[1]

वेस्ट ब्रैडफोर्ड
२७ सितम्बर, १९३१

श्री गांधीने कहा कि उनके मनमें न तो लंकाशायरके खिलाफ और न इंग्लैंडके खिलाफ कोई दुर्भावना है। उन्होंने कहा, यद्यपि मैं बहिष्कार आन्दोलनका जनक होनेका दावा कर सकता हूँ, किन्तु यह आन्दोलन कटुताकी भावनासे प्रेरित होकर नहीं शुरू किया गया। यह मुख्यतः एक आर्थिक नीति है। मैं इस आन्दोलनके माध्यमसे विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारके लिए उतना उत्सुक नहीं हूँ जितना कि भारतीयोंको इस बातपर राजी करनेके लिए कि वे मशीनसे बने किसी भी प्रकारके कपड़ेका उपयोग न करें। मैं यह मानता हूँ कि इस उद्देश्यको सिद्ध करना लगभग असम्भव है, फिर भी मैं जहाँतक सम्भव है, वहाँतक उन्हें मशीनके बने कपड़ेको खरीदनेसे विमुख करना चाहता हूँ। श्री गांधीने शिष्टमण्डलका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित किया कि भारतमें सालमें छः महीने ऐसी परिस्थितियाँ रहती हैं कि किसानोंके पास लगभग कोई काम नहीं रहता, क्योंकि इन महीनोंमें वे खेतोंमें काम नहीं कर सकते। इसलिए इन छः महीनोंतक किसान लगभग भुखमरीकी अवस्थामें रहते हैं। मैं यह चाहता हूँ कि इस अन्तरालमें किसान बुनाईका काम करें, ताकि वे थोड़ी-बहुत कमाई कर सकें। इसलिए हजारों भारतीय फिरसे चरखेको अपना रहे हैं, और पिछले एक-सवा वर्षमें एक लाखसे अधिक किसान कताई या बुनाईका काम करने लगे हैं।

महात्माजीने कहा कि राजनीतिमें मुझे कोई रस नहीं मिलता। मेरे हृदयको जिस बातकी लगन है वह सिर्फ हमारे अपने वर्गके लोगोंका नैतिक उत्थान है। इस देशमें आनेके बादसे वस्तु-स्थितिका खुद ही अध्ययन करनेपर मैंने यह महसूस किया है कि लंकाशायर निश्चय ही आजकी भारी व्यापारिक मन्दीसे परेशान है। मैं चाहता हूँ कि लंकाशायरके लोग यह समझें कि गरीबीमें भी कम और ज्यादा गरीबी-जैसी कोई चीज होती है और यदि आप इस तरह देखें-सोचें तो पायेंगे कि भारतमें जैसी गरीबी है, उस लिहाजसे तो आप लोग बहुत अच्छे हैं। यदि हम भारतके लखपतियोंको

१. गांधीजी क्लिथरो बुनकर-संघके शिष्टमण्डलसे तीसरे पहर मिले थे। शिष्टमण्डलके नेता संघके अध्यक्ष एच० एल० पार्किन्सन और मन्त्री जी० ब्रेम थे और उसमें चार बेरोजगार बुनकर भी शामिल थे।

भी शामिल करके चलें तो भी वहाँके लोगोंकी औसत मासिक आय प्रति व्यक्ति ७ शिलिंग ६ पेंस ही है। इसीसे आप सोच सकते हैं कि गरीबोंमें भी गरीब उन लोगोंकी अवस्था कैसी होगी।

श्री ब्रेमने पूछा कि क्या ऐसा कुछ नहीं किया जा सकता जिससे लंकाशायरके भी कष्ट दूर हों और भारतके भी।

श्री गांधीने कहा कि अगर गोलमेज परिषद्के निर्णयसे मैं सन्तुष्ट हो सका तो वादा करता हूँ कि भारतमें जापानी और इतालवी कपड़ोंका आयात बन्द करवानेके लिए मुझसे जो-कुछ भी बन पड़ेगा, करूँगा और भारत अपने बनाये कपड़ोंसे अपनी आवश्यकताकी पूर्ति जहाँतक नहीं कर पायेगा वहाँतक उसकी पूर्ति करनेका पहला अवसर लंकाशायरको दिलवानेकी कोशिश करूँगा। लेकिन साथ ही आप इस तथ्यको भी नजरअन्दाज न करें कि भविष्यमें भारतके साथ लंकाशायरके व्यापारमें मन्दी ही आती जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
क्लिथरो ऐडवर्टाइजर ऐंड टाइम्स २-१०-१९३१

५४. मैं, मेरा चरखा और महिलाएँ

मैं यहाँ क्यों आया हूँ? मेरा विश्वास किस चीजमें है? मैं कैसा भारत बनाऊँगा? मेरा उत्तर यह है कि सबसे बढ़कर मैं यहाँ सत्यकी — उसे मैं जिस रूपमें जानता हूँ उस रूपमें — रक्षा करनेके लिए आया हूँ, क्योंकि मैं मानता हूँ कि यह जीवनका आधार-स्तम्भ है। बाकी सबकुछ इसी पर निर्भर है। सबसे पहले और सबसे बादमें, बल्कि सदा, सर्वोपरि महत्त्व उसीका है। और सभी बातोंमें सत्यको सबसे पहला स्थान देना सम्भव है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैंने सदा ऐसा करनेकी कोशिश की है। मेरी राजनीतिक आकांक्षाओंमें असत्य और धोखा-धड़ीको कोई स्थान नहीं है।

मैंने अपने बारेमें तरह-तरहके वर्णन पढ़े हैं। कुछमें मुझे सन्त कहा गया है, कुछमें धूर्त। मैं न सन्त हूँ और न धूर्त। मैं जो-कुछ बनना चाहता हूँ और आशा है कि जो-कुछ बननेमें किसी हदतक मैं सफल हो पाया हूँ, वह है एक सच्चा और ईश्वरसे डरनेवाला आदमी। लेकिन मैं अपने बारेमें जो-कुछ पढ़ता हूँ, उससे मुझे कोई नाराजगी नहीं होती। क्यों होनी चाहिए? मेरा एक अपना जीवन-दर्शन है और अपना काम है। प्रतिदिन मैं कुछ देर चरखा चलाता हूँ। चरखा चलाते हुए मैं सोचता भी हूँ। मैं बहुत-सी बातोंके सम्बन्धमें सोचता हूँ। लेकिन उन विचारोंसे मैं कटुताको बराबर दूर ही रखनेकी कोशिश करता हूँ।

आप जरा मेरे इस चरखेको परखकर देखिए। आपको जितना मैं सिखा सकता हूँ, उससे बहुत अधिक यह सिखा सकता है। यह आपको धैर्य सिखायेगा, उद्योग

करना सिखायेगा और सादगीकी सीख देगा। यह चरखा भारतके करोड़ो क्षुधार्त्त मानवोके लिए मुक्तिका प्रतीक है।

मेरी लँगोटी

मेरे पहनावेकी, जिसे अखबारोमें लँगोटी कहा गया है, आलोचना की जाती है, उसका मजाक उड़ाया जाता है। मुझसे पूछा जाता है कि मै इसे क्यों पहनता हूँ। जान पड़ता है, कुछ लोगोको मेरा यह पहनावा बुरा भी लगता है।

जब अग्रेज लोग भारत जाते है तब क्या वे यूरोपीय पोशाकको छोडकर भारतीय पोशाक पहनने लगते हैं जो वहाँकी आबोहवाके लिए बहुत ज्यादा उपयुक्त है? नही, वे ऐसा नही करते। और यही उन लोगोके प्रश्नका उत्तर है जो मुझसे पूछते है कि यहाँ इग्लैडमे मै यह भारतीय पोशाक, जिसे पहननेका मै आदी हूँ, क्यो पहनता हूँ।

यदि मै यहाँ एक अंग्रेज नागरिककी तरह रहने और काम करनेके लिए आऊँ तब तो मुझे इस देशके रीति-रिवाजोके अनुसार चलना ही चाहिए और अग्रेजोंवाली पोशाक पहननी चाहिए। लेकिन मै तो यहाँ एक बड़ा और विशेष उद्देश्य लेकर आया हूँ और मेरी लँगोटी — अगर आप इसे लँगोटी ही कहना पसन्द करें तो — मेरे मालिकोकी, भारतकी जनताकी पोशाक है। मुझे एक पवित्र थाती सौंपी गई है, मुझे एक विशेष काम करनेके लिए नियुक्त किया गया है। इसलिए मै तो वही पोशाक पहनूंगा जो मेरे उद्देश्यकी प्रतीक है। मेरा जो तरह-तरहका वर्णन किया जाता है, वह मुझे दिलचस्प लगता है, कभी-कभी तो वह मजेदार भी लगता है। लेकिन मै तो केवल अपने देशभाइयोका प्रतिनिधि हूँ और उन्होने मुझे जो काम सौंपा है, उसे पूरा करनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

हाँ, मै महिलाओको पूर्ण रूपसे पुरुषके समान दर्जा दिये जानेमे विश्वास रखता हूँ, और मै जिस भारतका निर्माण करना चाहता हूँ, उसमें उन्हें वह दर्जा प्राप्त होगा। मेरे साथ जो इतनी सारी महिला कार्यकर्त्रियाँ काम कर रही है, उसका कारण मेरे खयालसे मेरा ब्रह्मचर्य और महिलाओके प्रति मेरी सहज सहानुभूतिकी भावना है।

आपने शायद ऐसा सुना होगा कि मेरे देशमें महिलाएँ पुरुषोके अधीन है। ऐसा सिर्फ देखनेमे ही है। वास्तवमें उनका प्रभाव सदासे बहुत प्रबल रहा है। सदियोसे महिलाएँ पुरुषोंके साथ कन्धेसे-कन्धा मिलाकर काम करती आई है। अगर वे काम करना बन्द कर दें तो बहुत-से पुरुष भूखों मरने लगेंगे।

खिलौना बननेकी प्रवृत्ति

फसले उगानेमे स्त्री-पुरुष दोनों साथ-साथ मेहनत-मशक्कत करते है। उनका जीवन बडा कठिन है। स्त्री-पुरुषका भेद उन वर्गोंके बीच ज्यादा है जिनके पास धन-सम्पत्ति और पर्याप्त अवकाश है। धनके कारण वे स्त्रियाँ अपनी उपयोगिताको भूल गई है, अपने इस गुणको उन्होने ताकपर रख दिया है। इस प्रकार सम्पन्न स्त्रियोमे मात्र एक शोभाकी वस्तु, एक खिलौना बनते जानेकी प्रवृत्ति आ गई है।

मै चाहता हूँ कि सभी पदो, व्यवसायो और रोजगारोके दरवाजे स्त्रियोंके लिए खुल जायें। अन्यथा सच्ची समानता नही आ सकती। लेकिन मै हृदयसे यह आशा करता हूँ कि हमारे देशकी स्त्रियाँ अपना प्राचीन गृह-लक्ष्मीका दर्जा बनाये रखेंगी, उसके अनुसार आचरण करती रहेगी।

इस उच्च पदसे उन्हे कभी च्युत नही करना चाहिए। वास्तवमें वह एक निरानन्द गृहस्थी होगी जिसका केन्द्र-बिन्दु स्त्री नही होगी। उदाहरणके लिए, जिस परिवारमें पत्नी टाइपिस्टका काम कर रही हो और वह घरमें शायद ही कभी रहती हो, उस परिवारके सुखी होनेकी मै कल्पना नही कर सकता। बच्चोंकी देख-रेख कौन करेगा? और बिना बच्चोके, गरीब गृहस्थीके इन सबसे जगमगाते जवाहरातोके बिना, कोई घर क्या घर है?

सबसे पहले परिवार

ऐसे परिवारोके उदाहरण दिये जा सकते है जिनमें चतुर महिलाएँ बाहर जाकर जीविका उपार्जित करती हो, अधिक पैसा कमाती हो और उस पैसेसे किसीको बच्चोकी देख-रेख करनेके लिए रखकर बच्चोके लिए ज्यादा ही कर पाती हो। लेकिन जो स्त्रियाँ अपवादरूप हैं, उनको तो अपवाद ही माना जायेगा। अपवाद तो जीवनके हर क्षेत्रमें होते हैं, लेकिन उनसे हम कोई सामान्य धारणा कैसे बना सकते हैं?

सामान्यत. परिवारके पालन-पोषणके लिए वित्तोपार्जनका कार्य पिताको ही करना चाहिए। और यदि उसे यह प्रतीति हो कि उसके घरमें सुख-शान्ति है तो वह अपना कार्य और अच्छी तरह कर सकता है। किसी बच्चेको दुलार-भरी उस सेवासे वचित करना जो कि उसे उसकी माँ ही दे सकती है, उस बालकके प्रति गम्भीर अन्याय है।

बच्चोका लालन-पालन करना और उनका चरित्र-निर्माण करना स्त्रीका काम है। यह काम बडा महत्त्वपूर्ण भी है। मै स्त्रियोके लिए पुरुषोके साथ समानताका दर्जा अवश्य चाहता हूँ, लेकिन अगर माँ अपने बच्चोके प्रति अपना पवित्र कर्त्तव्य निभानेमें चूक जाती है तो उस भूलके परिमार्जनका कोई उपाय नही है।

नृवश-शास्त्रकी दृष्टिसे हमारी जाति कुछ भी हो, पारिवारिक जीवन तो सबसे पहली और सबसे महत्त्वपूर्ण चीज है। उसकी पवित्रता सदा बनी रहनी चाहिए। उसी पर राष्ट्रके कल्याणका आधार है। परिवारका प्रभाव सदा बना रहता है—चाहे वह इष्ट सिद्ध हो या अनिष्ट। इस बातमे तो कोई सन्देह हो ही नही सकता, और यदि पारिवारिक जीवनमें प्राप्त होनेवाली पवित्र सुरक्षा कायम नही रहती तो कोई भी राज्य टिका नही रह सकता। इक्के-दुक्के ऐसे व्यक्ति हो सकते है जो किसी बडे सिद्धान्त या आदर्श पर चलते हुए मेरी ही तरह पारिवारिक जीवनकी शीतल छायाको छोडकर आत्म-त्याग और ब्रह्मचर्यका व्रत ले ले, लेकिन जनसाधारणके लिए तो पारिवारिक जीवनको कायम रखना आवश्यक है।

[अग्रेजीसे]

डेली हेराल्ड, २८-९-१९३१

५५. पत्र : सर सैम्युअल होरको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२८ सितम्बर, १९३१

प्रिय सर सैम्युअल,

साथमे तीन तारोकी[1] नकले भेज रहा हूँ। आज सुबह लकाशायरसे लौटा तो ये तार यहाँ पडे हुए थे। मैने अभी पिछले दिनो आपको जो बात समझानेकी कोशिश की थी, इन तारोसे उनकी पुष्टि होती है।

तारोमे आप श्री बिडलाके नामका उल्लेख देखेगे। वित्तीय मामलोके वे अधिकृत जानकार है। मै चाहूँगा कि सर हेनरी स्ट्रैकॉश और श्री बिड़ला तथा मुद्रा-सम्बन्धी समस्याओपर अच्छा अधिकार रखनेवाले अन्य भारतीयोकी एक बैठक बुलाई जाये।[2]

अगर भारत सरकारका पक्ष मजबूत है तो मुझे मानना चाहिए कि इन भारतीय विशेषज्ञोको कायल करनेमे उसे कोई कठिनाई नही होगी।

श्री वल्लभभाई और कोई नही, स्वय कांग्रेस अध्यक्ष सरदार पटेल ही है।

हृदयसे आपका,

संलग्न पत्र ३
परम माननीय सर सैम्युअल होर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८६९)से।

१. इन तारोंमें, जिनमें से एक वल्लभभाई पटेलने और एक बम्बईके व्यापारिक संघ-मण्डलने भेजा था, उस अध्यादेशका विरोध किया गया था। जिसके द्वारा रुपयेको स्टर्लिंगसे जोड़कर उसका मूल्य १८ पेंस निर्धारित कर दिया गया था। इससे भारतकी रही-सही स्वर्ण-संचितिके भी उसके हाथोंसे निकल जानेका खतरा था।

२. स्ट्रैकोशने अपने नाम लिखे गांधीजीके पत्र (देखिए अगला शीर्षक) का उत्तर देते हुए कहा था कि उन्हें श्री बिड़लासे मिलकर खुशी होगी। बैठक ६ अक्तूबरको हुई थी।

५६. पत्र : सर हेनरी स्ट्रैकॉशको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०—१
२८ सितम्बर, १९३१

प्रिय सर हेनरी,

भारतसे प्राप्त तारोकी प्रतियाँ मै साथमें भेज रहा हूँ। अब आप किसी निर्णयपर पहुँचनेमें मेरी कठिनाईको समझ सकेगे।

इन तारोको देखकर यदि आप लिख सकें तो अपने तर्कको फिरसे लिख भेजिएगा। मै उसका अध्ययन करूँगा और पूरी जानकारी और निर्देशके लिए आपसे मिलना चाहूँगा।

हृदयसे आपका,

सर हेनरी स्ट्रैकॉश, के० सी० बी०

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८६८) से।

५७. पत्र : तेजबहादुर सप्रूको

२८ सितम्बर, १९३१

प्रिय डॉ० सप्रू,

अभी-अभी प्राप्त तीन तारोकी प्रतियाँ इस पत्रके साथ आपको भेज रहा हूँ। इन्ही तारोके आधारपर मैंने मन्त्री महोदयको पत्र भेजा है।[1] साथमें उस पत्रकी प्रति भी भेज रहा हूँ। मेरी सलाह है कि आप इस मसलेपर श्री बिडला या प्रोफेसर शाह या दोनोसे बातचीत करके एक राय बनाये और बने तो मन्त्रीको लिखे मेरे पत्रके मुद्दोका समर्थन करें।

क्या मै आपसे यह पत्र श्री शास्त्री व जयकरको भी दिखानेको कह सकता हूँ?

रगस्वामीने मुझे बताया कि आप ऐसा महसूस करते हैं कि मै आपसे सम्पर्क नही रख रहा हूँ। आप मुझे सदा अपना आज्ञानुगामी ही समझें। यदि मुझे यह पता लग जाये कि आप मेरे विचारोको जानना चाहते है तो आपको अपने विचार बताकर मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। मैं ऐसा महसूस करता रहा हूँ कि मुझे बहुत-से महत्त्वपूर्ण मामलोमे आपके समर्थनका भरोसा नही रखना चाहिए। यदि मुझे यह पता चल जाये कि मेरा ऐसा सोचना गलत है, तो यह मेरे लिए सबसे बडी खुशीकी

१. देखिए "पत्र : सर सैम्युअल होरको", २८-९-१९३१।

बात होगी। मेरी इस धारणाके अलावा अगर आप मेरे संकोची स्वभावकी ओर भी ध्यान दे तो मुझमें ऊपरसे अलगावकी जो प्रवृत्ति दिखाई देती है, उसका पूरा कारण आपकी समझमें आ जायेगा।

हृदयसे आपका,

संलग्न पत्र : ३

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८६७) से।

५८. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

लन्दन

२८ सितम्बर, १९३१

हमारी ढाई घंटे दिल खोलकर बातचीत हुई। कोई गतिरोध पैदा नहीं हुआ है, लेकिन अभी यह कहना जल्दबाजी होगी कि इस बातचीतका क्या नतीजा निकलेगा और यह बातचीत आगे चलेगी या नहीं।

[अंग्रेजीसे]
डेली टेलीग्राफ, २९-९-१९३१

५९. पत्र : एच० हारकोर्टको

८८, नाइट्सब्रिज,
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[2] मिला; धन्यवाद। मैं अभी बहुत व्यस्त हूँ, इसलिए मैं आपको भेंटके लिए जल्दी समय नहीं दे सकता। यदि आप १३ अक्टूबरको ९.३० पर ८८, नाइट्सब्रिजमें आ जायें तो मुझे आपसे मिलकर खुशी होगी।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एच० हारकोर्ट
११९, जिप्सी हिल
अपर नॉरवुड, एस० ई० १९

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८२४) से।

१. गांधीजीने आगाखाँसे रातमें रिज होटलमें बातचीतके बाद यह वक्तव्य दिया था। भेंटकी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

२. श्री हारकोर्ट भारतमें जिला अधिकारी रह चुके थे, और उन्होंने सेवा-निवृत्तिके बाद भारतपर एक पुस्तक लिखी थी। उन्होंने गांधीजीसे भेंटके लिए समय माँगा था।

६०. पत्र : शॉ डेसमंडको

८८, नाइट्सब्रिज,
लन्दन, डब्ल्यू०–१
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके स्नेहपूर्ण पत्र[1] के लिए धन्यवाद। यदि आप सुविधापूर्वक ८८, नाइट्सब्रिजमे . . .[2] बजे आ सके तो आपसे मिलकर मुझे खुशी होगी।

हृदयसे आपका

श्रीयुत शॉ डेसमड
लेस्टर हाउस
मोन्टपेलियर रो
ट्विकेनहम

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८२) से।

६१. पत्र : ए० फेनर ब्रॉकवेको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय श्री फेनर ब्रॉकवे,

आपका इसी १८ तारीखका पत्र मिला। 'आइरिश फ्री प्रेस' को मै एक सन्देश पहले ही दे चुका हूँ।

मुझे श्री वेलेराके सचिवसे भी मिलनेका सुयोग प्राप्त हुआ था। क्या आपके मित्र श्री फॉक्सको कोई सन्देश[3] चाहिए? अभी तो मेरे पास कहनेको कुछ रह नही गया है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८०) से।

१. आयरलैंडके प्रसिद्ध पत्रकार एव कवि डेसमडने कहा था कि मुझे अब विश्वास नहीं रहा कि भारत स्वतन्त्रताके लिए तैयार है। उन्होंने गाधीजीसे मेंटके लिए समय माँगा था।

२. यहाँ साधन-सूत्रमें ही स्थान खाली है।

३. ब्रॉकवेने लिखा था कि फॉक्स मेरे मित्र हैं और वे आइरिश फ्री प्रेसमें काम करते है। उन्होंने यह भी लिखा था कि वे आपसे (गाधीजीसे) अपने अखबारके लिए कोई सन्देश चाहते हैं।

६२. पत्र : एच० स्टैनली जेवन्सको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] पाकर बडी प्रसन्नता हुई। आपको जब भी अवकाश हो, आ जाइए, लेकिन मैं चाहूँगा कि आप जिस समय यहाँ पहुँचेगे उस समय मैं यहाँ रहूँगा या नही, यह जाननेके लिए आप (स्लोन ४२३२ पर) टेलीफोन कर ले। मैं इतना अधिक व्यस्त हूँ कि मुलाकातका निश्चित समय आपको सूचित नही कर रहा हूँ। लेकिन, अगर आपसे मिलना सम्भव हो तो मुझे मिलकर प्रसन्नता होगी। मिलनेके स्थानका पता है — ८८, नाइट्सब्रिज।

हृदयसे आपका,

श्री एच० स्टैनली जेवन्स
११, रसेल स्क्वेयर मैंशस,
१२२, साउथम्पटन रो, डब्ल्यू० सी० १

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८६) से।

६३. पत्र : फ्रेडरिक बी० फिशरको[2]

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके भक्त-हृदयसे निकली सद्भावनाओको पढकर मेरा हृदय गद्गद् हो गया। विश्व-शान्ति और नि:शस्त्रीकरणपर अमेरिकी ईसाइयोको मेरा यही सन्देश है कि यह प्रश्न ऐसा नही है जिसके सम्बन्धमे आदान-प्रदानकी नीतिसे काम लिया जाये। अगर कभी सच्ची शान्ति और नि:शस्त्रीकरण हुआ तो वह अमेरिका-जैसे किसी सबल राष्ट्रके पहल करनेसे ही होगा — चाहे दूसरे राष्ट्रोकी सहमति और सहयोग उसमे हो या न हो।

१. अर्थशास्त्रके सेवा-निवृत्त प्राध्यापक स्टैनली जेवन्सने गांधीजीसे मुलाकातका समय माँगा था।

२. अमेरिकी पादरी, दैट स्ट्रेंज लिटिल ब्राउन मैन – गांधी के लेखक। वे १९२० से ३० तक कलकत्तामें रहे थे। उन्होने गाधीजीसे अमेरिकी ईसाइयोंके लिए सन्देश देनेको कहा था।

संघर्षके बीच शान्तिको प्राप्त करने और ईश्वरकी प्रेम-शक्ति और हमारी रक्षा करनेकी उसकी क्षमताका अनुभव करके सभी शस्त्रोंका त्याग करनेके लिए किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्रके लिए यह आवश्यक है कि उसे अपने-आपमें विश्वास हो और यह भरोसा हो कि ईश्वर सबका रक्षक है। और जबतक सबल राष्ट्र निर्बल राष्ट्रोंका शोषण करना पाप नहीं मानने लगते तबतक मैं ऐसी शान्ति असम्भव ही समझता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परम पूज्य बिशप फिशर
मार्फत – 'क्रिश्चियन हेराल्ड'
न्यूयॉर्क

[अंग्रेजीसे]
'दैट स्ट्रेंज लिटिल ब्राउन मैन – गांधीमें प्रकाशित मूल पत्रकी अनुकृतिसे, एस० एन० १७८७२ भी

६४. पत्र : एवलिन क्लेयरको[1]

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका इसी २४ तारीखका पत्र मिला। तदर्थ धन्यवाद।

आपकी सोसाइटीके दोपहर अथवा रातके भोजमें मैं सहर्ष शामिल होऊँगा — और किसी कारण नहीं तो केवल पुरानी स्मृतियोंको ताजा करनेके लिए ही। लेकिन मैं चाहूँगा कि आप मोटे तौरपर ऐसी दो-चार तारीखें बता दें जिनमें से किसी एक दिन आप आयोजन करना चाहती हों, और साथ ही यह भी कि उसमें कितना समय लगनेकी सम्भावना है।

हृदयसे आपका,

कुमारी एवलिन क्लेयर
फ्रूटेरियन सोसाइटी
डॉडिंगटन, केंट

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८३७) से।

१. फ्रूटेरियन सोसाइटी (फलाहारी-मण्डल) की अवैतनिक मन्त्री।

६५. पत्र : ए० फेनर ब्रॉकवेको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय श्री फेनर ब्रॉकवे,

मेरठ-केसके कैदियोसे सम्बन्धित घोषणापत्रके[1] साथ भेजे आपके पत्रके लिए धन्यवाद। मैंने अपने ढगसे कोशिश की है और यहाँ भी कर रहा हूँ, लेकिन मैं समझता हूँ कि मुझसे इस घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करनेको न कहा जाये। इसका पहला कारण तो यह है कि इससे, मैं और आप जिस उद्देश्यका पक्ष-पोषण करना चाहते हैं, उसीको क्षति पहुँच सकती है।

दूसरा कारण यह है कि आपसे कही गई सारी बातोंको मैं सही नही मानता।[2]

हृदयसे आपका,

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८७७) से।

१. यह घोषणापत्र प्रार्थनापत्रके ढगका था और इसमें कहा गया था: "हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले लोग उन लोगोंकी गिरफ्तारी और लगातार कैदमें रखे जानेका तीव्र विरोध करते है जिनपर मेरठ, भारतमें सम्राट्के खिलाफ षड्यन्त्र करनेके आरोपमें मुकदमा चलाया जा रहा है।

"हम मानते हैं कि इन ३१ राजनीतिक कैदियोंको मार्च, १९२९ में इसलिए गिरफ्तार किया गया था कि उन्होंने, जिन असह्य परिस्थितियोंमें भारतीय मजदूरोंको काम करना पड़ता है, उनके खिलाफ मजदूरोंके विद्रोहका नेतृत्व किया और वे सफलतापूर्वक ऐसे श्रमिक-संगठन खड़े कर रहे थे जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद और भारतीय शोषकोंके लिए सचमुच एक चुनौती थे।

"इन कैदियोंको मुकदमेके सिलसिलेमें दो वर्षसे भी अधिक समयतक जेलमें रखा गया है; कई सौ गवाहोंकी गवाहियाँ ली गई है और श्रमिक-वर्गका झण्डा उठानेवाले इन बहादुरोंपर चलाये मुकदमेमें सरकारने हजारों पौंड खर्च किये है।

"हम न केवल उनकी बिना शर्त और तत्काल रिहाईकी माँग करते है, बल्कि यह माँग भी करते है कि उन गढवाली बन्दूकचियोंको तुरन्त रिहा कर दिया जाये जिन्होंने अपने देशभाइयोंके निहत्थे समूहपर गोलियाँ चलानेसे इनकार करनेकी बहादुरी दिखाई और फलतः जिन्हें आजीवन कारावासका दण्ड दिया गया है।" (एस० एन० १७८४०)। फेनर ब्रॉकवेने गाधीजी से, अगर वे ठीक समझें तो, इसपर अपने हस्ताक्षर करनेको कहा था।

२. साधन-सूत्रमें यह वाक्य जिस रूपमें है उसका अनुवाद यही होता है।

६६. पत्र : जी० हाइनीजको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपने मुझे पत्र लिखा और मेरे स्वास्थ्यके लिए इतनी चिन्ता दिखाई, इस कृपाके लिए धन्यवाद।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि यद्यपि मैं संतरेका रस और शहद मिलाकर नहीं लेता,[1] लेकिन प्रतिदिन तीन संतरे और सुबह-सुबह नीबूके थोड़े-से रसके साथ शहद भी अवश्य लेता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्रीमती जी० हाइनीज
एबॉट्सफोर्ड
१०, मार्केट प्लेस, वार्विक

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८३) से।

६७. पत्र : एस० एस० जहीरको[2]

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०-१
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय जहीर,

तुम लोग मुझसे अलगसे क्यों मिलना चाहते हो? क्या विद्यार्थियोंकी किसी सभामें तुम नहीं मिलोगे? मैं चाहता हूँ, ये सभाएँ ऐसी हों जहाँ तुम लोग मुझसे चाहे जो भी प्रश्न पूछ सको। इससे एक सही उद्देश्यकी पूर्ति होगी और मेरा बहुत-सा समय भी बचेगा।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८७४) से।

१. श्रीमती हाइनीज नर्स थीं और उन्होंने गांधीजी को "थोड़ा-सा संतरेका रस और शहद प्रतिदिन" लेनेका सुझाव दिया था।

२. एस० एस० जहीरने गांधीजी के राजनीतिक अथवा सामाजिक विचारोंसे सहमति न रखनेवाले कुछ भारतीय विद्यार्थियोंकी ओरसे उनसे मिलनेका समय माँगा था।

६८. पत्र : क्रिश्चियन शेल्डरुपको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके इसी २१ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। नॉर्वेको बिलकुल छोड दिया गया हो, ऐसा कुछ मुझे तो मालूम नही है।

खैर, जो भी हो, आप जो लेख चाहते है,[1] उसे न लिख सकनेके लिए मुझे क्षमा करेंगे। मुझे एक मिनटकी भी फुरसत नही है। अगर मै नॉर्वे बिलकुल आ ही न पाऊँ तो मुझे फिर लिखिएगा। हो सकता है, तब मै कुछ लिखकर आपको भेज सकूँ।

हृदयसे आपका,

डॉ० क्रिश्चियन शेल्डरुप
ओसलो विश्वविद्यालय, नॉर्वे

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८१०) से।

६९. पत्र : जे० थियोडोर हैरिसको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

श्री अलेक्जैंडरने[2] आपका पत्र मुझे दिया है। मै अगले बुधवारको डॉ० मॉण्टेसरीसे[3] मिलनेकी आशा कर रहा हूँ। अगर वे ठीक १० बजे यहाँ नही पहुँच पाईं तो भी मै उनकी प्रतीक्षा करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री जे० थियोडोर हैरिस
४, ग्राहम रोड, ई०-८

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८७३) से।

१. क्रिश्चियन शेल्डरुपने क्रिस्ट ऑर्ड नामक पत्रिकाके लिए गाधीजी से "आजके मनुष्यके लिए ईसा मसीहका सन्देश" पर अपने विचार लिख भेजनेका अनुरोध किया था।

२. हॉरेस अलेक्जैंडर।

३. शिक्षाशास्त्री डॉ० मारिया मॉण्टेसरी; इनकी मुलाकातके लिए देखिए शीर्षक १०१।

७०. पत्र : आर० बी० ग्रेगको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय गोविन्द,

तुम्हारा गत २७ जुलाईका पत्र[1] मिला। अगर मैं भारतको फिरसे वस्तु-विनिमय-पद्धति अपना लेनेके लिए राजी कर सकूँ तो सचमुच यह बहुत बडी बात हो। लेकिन, मैं नही समझता, अभी इसके प्रति किसी भी हलकेसे कोई अनुकूल प्रतिक्रिया दिखाई जायेगी। लेकिन, इसके *अलावा भी उस दिशामे बहुत-कुछ सम्भव है और* उनको आजमाकर देखा जा रहा है।

मेरे पास समयकी बडी कमी है, इसलिए इसमें ज्यादा तफसीलमे नही उतर रहा हूँ।

यह पत्र मैं लन्दनमें बैठकर लिखा रहा हूँ। मुझे लगा कि ईश्वर मुझे यहाँ आनेका स्पष्ट निर्देश दे रहा है, सो मैं यहाँ चला आया। अगर मैं तुम्हे विस्तारसे बताऊँ कि मुझे कैसे लन्दन आना पडा, तो तुम भी आश्चर्यमे पड जाओगे — जब सब-कुछ समाप्त हो गया लगता था तब फिर यह कैसे हो गया? मैं तो आश्रमके लिए प्रस्थान करनेके लिए अपना सामान बाँध रहा था लेकिन हुआ यह कि जिस जहाजसे मैं आया उसपर पहुँचनेके लिए विशेष गाडी पकड़नेकी जल्दीमे मुझे आधे घटेके अन्दर सारा सामान बाँधकर ठीक करना पडा।

१. पत्रमें लिखा था: "...हालमें मेरे मनमें एक सवाल उठता रहा है कि स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद यदि भारत अपने यहाँ सदियों पूर्व प्रचलित लगानकी उस व्यवस्थाको लागू कर दे जिसमें किसानोंको अपनी उपजका एक हिस्सा राज्यको देना पड़ता था, तो क्या यह उनके लिए एक बहुत बडी राहत नहीं होगी।...इधर मैंने अपने एक अंग्रेज मित्रसे बातचीत की, जो पहले हारवर्ड कालेजमें अध्यापक थे।...उनका नाम है एच० जे० लास्की। उन्होंने मुझे बताया कि पहली गोलमेज परिषद्में वे न्यायमूर्ति सैंकीके मुख्य साचिविक सहायक (चीफ सेक्रेटेरियल एसिस्टेंट) थे।...स्पष्ट ही उनको कुछ ऐसा भ्रम हो गया है कि वहाँ जिन आर्थिक संरक्षणोंका प्रस्ताव किया गया है, वे व्यवहारमें भारतीयोंके ही नियन्त्रणमें रहेंगे, हालाँकि मेरी समझमें नहीं आता कि मैग्नाकार्टासे परिचित कोई भी ईमानदार अंग्रेज ऐसा कैसे सोच सकता है।...और अब चूँकि सरकारने प्रतिनिधियोंकी सूचीमें मालवीयजीका भी नाम शामिल कर लिया है, इसलिए मुझे लगता है, ब्रिटिश सरकार ऐसा मानती है कि आपपर जितना प्रभाव मालवीयजीका है, उतना और किसीका नहीं है। इस तरह वह एक ओर लॉर्ड इर्विन द्वारा और दूसरी ओर मालवीयजी द्वारा आपको प्रभावित करनेकी कोशिश करेगी।...ये दोनों आदमीके रूपमें बहुत ईमानदार [illegible] अच्छे हो सकते हैं, लेकिन मैं नहीं समझता कि जिस प्रणालीकी रक्षा करनेकी वे कोशिश कर रहे हैं उसके [illegible]से वे वाकिफ हैं।..." (एस० एन० १७३९४)

प्रो० लास्कीसे तो मै मिल भी चुका हूँ और उनसे मै काफी निकट-सम्पर्क बनाये हुए हूँ।

ऐसा मत मानना कि मालवीयजी और श्रीमती नायडू यहाँ कांग्रेसकी मर्जीके खिलाफ आये है। वे यहाँ इसलिए आये है कि उनका एक स्वतन्त्र दर्जा है और वे कांग्रेसकी सहमतिसे आये है। कांग्रेस उन्हे प्रतिनिधि-मण्डलमे शामिल भी कर सकती थी, लेकिन मुझे कांग्रेसका एकमात्र एजेंट नियुक्त करनेका निर्णय पूरा विचार-विमर्श करने के बाद किया गया और उस निर्णयके बहुत-से कारण थे, जिससे उसे किसी भी वजहसे बदला नही जा सकता था।

यहाँ क्या चल रहा है, उसका पूरा विवरण देनेको मेरे पास समय नही है। जो-कुछ हो रहा है, उसमे से ज्यादातर तो अखबारोसे मालूम ही हो जाता होगा। शेष सब महादेव या प्यारेलाल अथवा देवदाससे या मीराको समय मिला तो उससे मालूम हो जायेगा।

सबको मेरा स्नेह-वन्दन,

शुभाकांक्षी,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६६५)से, एस० एन० १७८७६ भी।

७१. पत्र : जूलियट ई० ब्लूमको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके इसी १३ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। मेरा खयाल है, आपने औपनिवेशिक स्वराज्यका जो अर्थ[1] उद्धृत किया है, वह प्रशसनीय है। लेकिन, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका उद्देश्य तो बराबरकी साझेदारी या सन्धि-सम्बन्ध कायम करना है। स्वशासित उपनिवेशोमे तो आमतौरपर अंग्रेजीभाषी जातियाँ ही रहती है, जिन्हे दूसरे शब्दोमे "अगज राष्ट्र" भी कहा जाता है। इस अर्थमे भारत एक विजातीय

१. जूलियट ई० ब्लूमने, जो कोलम्बिया विश्वविद्यालयकी छात्रा थीं, लॉर्ड बाल्फोर द्वारा औपनिवेशिक स्वराज्यकी की गई परिभाषा उद्धृत करते हुए गांधीजी को पत्र लिखा था। उस परिभाषाके अनुसार औपनिवेशिक स्वराज्यका मतलब था: "ब्रिटिश साम्राज्यके अन्तर्गत आनेवाले ऐसे स्वशासित समुदाय जो एक-दूसरेकी बराबरीके दर्जेके हों और अपनी घरेलू या विदेशी नीतिके किसी भी क्षेत्रमें किसी भी प्रकारसे किसीके अधीन न हों, यद्यपि ताजके प्रति वफादारीके सामान्य सूत्रसे एक-दूसरेसे संयुक्त हों और स्वेच्छासे ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके सदस्यके रूपमें एक-दूसरेसे सम्बद्ध हों।" पत्र-लेखिकाने गांधीजी से औपनिवेशिक स्वराज्यकी अपनी परिभाषा बतानेको कहा था।

राष्ट्र है, इसलिए उचित रूपसे तो वह केवल एक साझेदार या सन्धि-सम्बन्धोमे बँधा मित्र ही हो सकता है।

जो कथन मेरा बताया गया है और जिसे आपने उद्धृत किया है,[1] वह तो उस बातसे ठीक उलटा है जो मैंने हजारो मचोसे कही है। अहिंसा-धर्म तो ऐसा धर्म है जिसमे उससे तनिक भी भिन्न आचरणकी कोई गुजाइश ही नही है। इसलिए मैंने ऐसी कोई बात नहीं कही होगी जिससे किसी भी प्रकारसे इस धर्मके मूल्यका क्षय होता हो। काग्रेसने अपने आचरण और सिद्धान्तमे स्वेच्छासे ही हिंसाको कोई स्थान नहीं दिया है, क्योकि वह यह मानती है कि यही सही चीज है। लेकिन, भारत और इग्लैंडके राष्ट्र-सघके सदस्य होने-भरसे दोनोमें से किसीके हिंसाका सहारा लेनेकी सम्भावना खत्म नही हो जायेगी। अगर इनमे से कोई भी राष्ट्र हिंसाका सहारा लेना चाहे — इग्लैंड भारतपर अपना प्रभुत्व बनाये रखनेके लिए और भारत उस प्रभुत्वसे निकलनेके लिए — तो राष्ट्र-सघकी सदस्यता उसे उससे रोक नही सकती। आज भी जो स्थिति है उसमे भारत नाम-मात्रको ही सघका सदस्य है, वह उसका सदस्य अपने अधिकारके बलपर नही, बल्कि ग्रेट ब्रिटेनकी संरक्षकताके बलपर और उसीकी इच्छासे है।

हृदयसे आपका,

कुमारी जूलियट ई० ब्लूम
७७१, वेस्ट एड ऐवेन्यू
न्यूयॉर्क, स० रा० अ०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८७८)से।

७२. पत्र : वी० जी० कूर्माको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके[2] लिए धन्यवाद। मैं इतना ज्यादा व्यस्त हूँ कि आपको मिलनेका कोई निश्चित समय देनेकी हिम्मत नही कर सकता। अगर आप किसी दिन सुबह १०

१. जुलियट ब्लूमने अपने पत्रमें गांधीजीके कथनके रूपमें यह वाक्य उद्धृत किया था : "स्वतन्त्रतासे वंचित ३६ करोड लोग सदैव अहिंसाका पालन करते नहीं रह सकते।" देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ ४६४-६५।

२. वी० जी० कूर्माने, जो भारत सरकारके दक्षिण आफ्रिका-स्थित एजेंटके निजी सचिव रह चुके थे, लिखा था कि उन्हें गाधीजी को दक्षिण आफ्रिकी भारतीय काग्रेसका एक सन्देश देना है। इसी उद्देश्यसे उन्होंने उनसे मिलनेके लिए समय माँगा था।

बजे ८८, नाइट्सब्रिज आ जाये तो मैं आपको कुछ-एक मिनटका समय देनेकी कोशिश करूँगा।

मैं चाहूँगा, आप मुझे जो-कुछ भी बताना चाहें उसे लिख रखें। मैं आपसे वादा करता हूँ कि आपकी टिप्पणियाँ पढ़ जाऊँगा और उनमें उठाये किसी भी सवालपर आपसे बातचीत करना जरूरी लगा तो फिर आपसे मिलूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री वी० जी० कूर्मा
रैंगलन होटल
अपर बेडफोर्ड प्लेस, डब्ल्यू० सी०-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८५) से।

७३. पत्र : एच० सी० ढाँडाको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय ढाँडा,

इधर कई दिनोसे पत्रकी प्रतीक्षा करता रहा हूँ।[1] जब भी तुम्हारी इच्छा हो, आकर मुझसे ८८, नाइट्सब्रिजमे मिल लो। अगर ऐसा हो कि जिस समय तुम आओ उस समय मैं अपने आवासपर न रहूँ या किसी और काममे व्यस्त रहूँ तो मिलनेके लिए उसी दिनका कोई और समय निश्चित करा लेना।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री एच० सी० ढाँडा
८६, विक्टोरिया रोड
ऑक्सफोर्ड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८१) से।

१. एच० सी० ढाँडा लाला दुनीचन्दके पुत्र थे। इनके २४ सितम्बरके पत्रके अनुसार शायद दुनीचन्दने उनके बारेमें गांधीजी को लिखा था।

७४. पत्र : आर्थर हैरिसनको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
२९ सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके[1] लिए धन्यवाद। अगर आप . . .[2] तारीखको ८८, नाइट्सब्रिज आ जायें तो मैं आपको कुछ मिनटका समय दे सकता हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री आर्थर हैरिसन
ब्रदरहुड ऑफ द वे हाउस
६१, ह्यू स्ट्रीट, एस० डब्ल्यू०-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८२५) से।

७५. पत्र : सर हेनरी स्ट्रैकॉशको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
३० सितम्बर, १९३१

प्रिय सर हेनरी,

पत्रके लिए धन्यवाद। आपकी और श्री बिडलाकी आगामी बातचीतमें मैं सहर्ष शामिल होऊँगा। क्या अगले शनिवारको ११ बजेका समय आपके लिए ठीक रहेगा? आपका उत्तर मिलनेपर मैं श्री बिडलाको बातचीतके समयके बारेमें लिखूँगा।

हृदयसे आपका,

सर हेनरी स्ट्रैकॉश, के० सी० बी०

अंग्रेजीकी फोटो-नकलसे (एस० एन० १७८८७)।

१. आर्थर हैरिसन "सर्मन ऑन द माउंट" (गिरि-प्रवचन) पर आधारित ब्रदरहुड ऑफ द वे नामक आन्दोलनसे सम्बद्ध थे। उन्होंने गांधीजी से मुलाकातके लिए समय माँगा था।

२. साधन-सूत्रमें यहाँ स्थान खाली है।

७६. पत्र : एस० एन० हाजीको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू० ई०
३० सितम्बर, १९३१

प्रिय हाजी,

पत्रके लिए धन्यवाद। 'सिटीजन'[1] (नागरिक) शब्दकी परिभाषाके सम्बन्धमे भेजी आपकी टिप्पणी पाकर प्रसन्नता हुई। यह मेरे काम आयेगी।

हृदयसे आपका,

श्री एस० एन० हाजी
रंगून

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १७६७९) से।

७७. पत्र : पेस्टर फॉरेलको

नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
३० सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

भारतीय आन्दोलनपर सुन्दरम्‌के भाषणकी खबर देते हुए आपने जो तार[2] भेजा है, उसके लिए धन्यवाद देता हूँ; और मेरे कार्यके प्रति आपकी सहानुभूति

१. गोलमेज परिषद्‌में तेजबहादुर सप्रूने कहा था कि 'इंडियन सिटीजन' ('भारतीय नागरिक') की ऐसी परिभाषा की सकती है, जिससे उसमें भारतमें रहनेवाले अंग्रेजोंको भी शामिल किया जा सके। इसपर आपत्ति करते हुए एस० एन० हाजीने लिखा था कि इस तरह तो ब्रिटिश सरकारके किसी भी नागरिकको चाहे वह अंग्रेज हो या दक्षिण आफ्रिकी, कनैडियन हो या आस्ट्रेलियाई, भारतमें जन्मे भारतीयोंकी बराबरीके ही अधिकारोंका उपभोग करनेका हक मिल जायेगा। उन्होंने यह सुझाव दिया था कि 'सिटीजन' शब्दकी ऐसी परिभाषा की जाये जिससे उसमें भारत-विरोधी उपनिवेशोंके नागरिक शामिल न हो सकें।

२. तार इस प्रकार था: "कल रात गांधीजी के आन्दोलनपर भाई सुन्दरम्‌के भाषण सुननेको एकत्र भारतके स्वीडिश मित्र आपके कार्यके प्रति अपनी सहानुभूति और उसकी सफलताके लिए शुभकामनाएँ भेजते हैं।" पेस्टर फॉरेलने ही इस सभाकी अध्यक्षता की थी। (एस० एन० १७८४६)

तथा उसकी सफलताके लिए की गई आपकी शुभकामनाओंके लिए अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

हृदयसे आपका,

हर पेस्टर फॉरेल
स्वीडिश चर्च
बर्लिन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८९८)से।

७८. पत्र : डॉ० मॉड रॉयडनको

लन्दन
३० सितम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। आपसे मिलना और आप लोगोंकी सभामें भाषण देना[1] मेरे लिए सौभाग्यका विषय था। आपके लोगोंने मुझे चन्दा दिया और अब अगर मैं वह राशि फिर आपको दे दूँ तो आपको परेशानी क्यों होनी चाहिए? इस भेंटका मैं इससे अच्छा और कोई उपयोग नहीं कर सकता था।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
गिल्डहाउस, नवम्बर १९३१

७९. भेंट : रैम्जे मैकडॉनाल्डसे[3]

लन्दन
३० सितम्बर, १९३१

गांधीकी बातोंसे ऐसा कोई संकेत नहीं मिला कि वे परिषद्को भंग कर देना चाहते हैं। उनकी शिकायत यह थी कि यह परिषद् निरर्थक है, क्योंकि केवल वही जनताके सच्चे प्रतिनिधि हैं और शेष लोग तो सरकारके नामजद किये हुए हैं। उनका खयाल था कि जो लोग मुसलमानों और दलित वर्गोंके प्रतिनिधियोंके रूपमें आये

१. देखिए "भाषण . गिल्डहाउस चर्चमें" २३-९-१९३१।
२. गांधीजी चाहते थे कि चन्देकी राशिका उपयोग वहाँके बेरोजगारोंके बीच किये जानेवाले कामके लिये किया जाये।
३. इस दफ्तरी टिप्पणीके अलावा इस मुलाकात की और कोई रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

हैं, इन दोनों समुदायोंका उनसे कहीं अच्छा प्रतिनिधित्व स्वयं गांधी कर सकते हैं। यदि उन्हे सबका प्रतिनिधि मान लिया जाये तो वे और ब्रिटिश सरकार पूरे सवालका निबटारा कर सकते हैं। प्रधान मन्त्रीने कहा कि परिषद् कमसे-कम इस हदतक तो सफल हुई ही कि इसके कारण गांधी लन्दन आये और यहाँ सरकारसे उनका सीधा सम्पर्क हुआ। उन्होंने गांधीकी बातोंका खण्डन करते हुए कहा कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन गलत चीज है और उससे ब्रिटिश सरकारके भारतके प्रति अपनी सदिच्छाओंको कार्य-रूप देनेके मार्गमें केवल बाधा ही पड़ती है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८१)से। सौजन्य : इंडिया ऑफिस पुस्तकालय

८०. भाषण : भारतीय व्यापार-मण्डलमें[1]

लन्दन
३० सितम्बर, १९३१

गांधीजी ने कहा कि राष्ट्रहितमें भारतके व्यापारियों द्वारा किये गये बलिदानोंसे मैं भली-भाँति अवगत हूँ। उन्होंने बहुत-कुछ किया है, लेकिन राष्ट्र उनसे अभी बहुत अधिककी आशा रखता है। दादाभाई नौरोजी और सर फीरोजशाह मेहताको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए गांधीजीने कहा कि उन दोनों नेताओंने इस बातको समझ लिया था कि जबतक भारतके व्यापारी लोग कांग्रेसकी प्रवृत्तियोंके साथ सहयोग नहीं करते तबतक भारत अपने स्वतन्त्रताके लक्ष्यकी ओर ठीक प्रगति नहीं कर सकता।

जो लोग सचमुच जानते हैं कि भारत क्या चाहता है, उनके विचारोंकी कोई परवाह न करके भारत-मन्त्रीके निर्देशपर वित्तीय मामलोंके सम्बन्धमें भारत सरकार जो हेराफेरी कर रही है, उसकी गांधीजी ने आगे आलोचना की।

आपकी तरह मेरा मन भी इस बातसे आशंकित है कि आज हमारे मनमें यह आशा तो जगा दी गई है कि सत्ता हमें हस्तान्तरित कर दी जायेगी, किन्तु वास्तवमें केन्द्रके रवैयेमें तो किसी प्रकारके परिवर्तनका संकेत ही नहीं मिलता। मुझे लगता है कि सत्ता हमें एकाएक नहीं मिलने जा रही है, लेकिन अगर महामहिमके सलाहकार सचमुच बड़े-बड़े परिवर्तनोंकी बात सोच रहे हों तो हमें ऐसे मामलोंमें उन परिवर्तनोंका कुछ पूर्वानुभव तो करा ही दिया जाना चाहिए।

कांग्रेस बहुत सोच-समझकर ही इस निष्कर्षपर पहुँची थी कि वित्तीय मामलोंपर पूर्ण नियन्त्रण रखे बिना किसी भी प्रकारका स्वशासन राष्ट्रकी आवश्यकताओंकी पूर्ति

१. भारतीय व्यापार-मण्डलने होटल मेट्रोपोलमें गांधीजी के सम्मानमें एक स्वागत-समारोहका आयोजन किया था।

नही कर सकता। मुझे जो प्रादेशपत्र दिया गया है उसके एक हिस्सेमे इसी बातपर तो जोर दिया गया है कि प्रतिरक्षा, विदेशी मामलो और वित्तपर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त किये विना स्वराज्य लेनेका कोई मतलब नही है। मै तो ऐसी किसी भी सरकारके उत्तरदायी सरकार कहे जानेकी कल्पना ही नही कर सकता जिसका इन मामलोपर नियन्त्रण न हो।

उन्होंने भारतमें व्यापार करनेवाली ब्रिटिश पेढ़ियोंको आश्वस्त किया कि उनके ऐसे हितोको राष्ट्रीय सरकारकी ओरसे कोई खतरा नहीं है जिन्हें उन्होने न्यायोचित और वैध तरीकेसे निर्मित किया है और जो भारतकी आम जनताके महत्त्वपूर्ण हितोके खिलाफ नहीं है।

कोई भी सरक्षणात्मक उपाय भारतकी सद्भावनाकी बराबरी नही कर सकता। भारतके पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर लेनेके बाद भी यही बने रहनेकी इच्छा रखनेवाला व्यक्ति अगर भारतकी सद्भावनापर भरोसा करके चलेगा तो उसका कोई नुकसान नही होगा। मगर इस सद्भावनाके बिना चाहे जितने भी सावधानीपूर्वक चुने शब्दोमे सरक्षणात्मक उपाय किये जाये, उनकी कीमत उस कागजके बराबर भी नही होगी जिस पर वे लिखे जायेंगे। प्रतिनिधिगण जिस भारी समस्यापर अपना दिमाग लडा रहे है, उसके समाधानमे तो ऐसे सरक्षणात्मक उपाय सहायक होनेके बजाय बाधक ही होगे।

गांधीजी ने कहा कि साम्प्रदायिक प्रश्नके सम्बन्धमें, जो सचमुच बहुत पेचीदा है, कांग्रेसने तो लाहौर प्रस्ताव और फिर उसमें कार्यसमिति द्वारा किये संशोधन-परिवर्धनके रूपमें अपनी नीति अधिकसे-अधिक स्पष्ट शब्दोमें रख दी है।[1]

उसके बाद तो मै अपनी ओरसे केवल यह निजी आश्वासन ही दे सकता हूँ कि कोई समाधान ढूँढनेके लिए मैं कुछ भी उठा नही रखूँगा, लेकिन साथ ही आपको यह भी बता दूँ कि मै अपने रास्तेमे बहुत बडी-बडी बाधाएँ देख रहा हूँ। मै तो आपसे शुद्ध मनसे सहायता करने और विभिन्न समुदायोपर जितना भी प्रभाव आप डाल सकते हो उतना प्रभाव डालनेकी ही आशा करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-१०-१९३१

१. तात्पर्य कांग्रेसके जनवरी, १९३० के लाहौर अधिवेशनमें पास किये गये प्रस्ताव (देखिए खण्ड ४२, पृष्ठ ३७०) और कार्यसमिति द्वारा बम्बईकी बैठकमें जुलाई महीनेमें स्वीकृत प्रस्तावसे (देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ ३५७-५८) है।

८१. पत्र : आर्थर जे० डेविसको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०-१
१ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके[1] लिए धन्यवाद। नीचे मैं अपना सन्देश दे रहा हूँ :

"पूर्ण मद्य-निषेध अमेरिकाके लिए सबसे कठिन कार्य है, किन्तु इसे सम्पन्न करनेका बीडा उठाकर उसने एक ऐसा बहादुरी-भरा कदम उठाया जो अमेरिकाके योग्य ही था। अगर अमेरिकाको किसी भी कारणसे अपनी इस नीतिका त्याग करके फिरसे मद्यपानकी बुराईमे फँसना पडा तो यह दुनिया-भरके सुधारकोके लिए बहुत लज्जास्पद और गहरा आघात पहुँचानेवाली बात होगी।"

हृदयसे आपका,

श्री आर्थर जे० डेविस
मैसाचुसेट्स एटी-सैलून लीग
३४५, ट्रेमोट बिल्डिग
७३, ट्रेमोट स्ट्रीट
बोस्टन, मैसा०

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८०८)से।

८२. पत्र : उज्जलसिंहको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
१ अक्टूबर, १९३१

प्रिय सरदार उज्जलसिंह,

आपका पिछले माहकी ३० ता० का पत्र मिला, तदर्थ धन्यवाद।

यह बात बिलकुल सही है कि मैंने व्यक्तिगत तौरपर कहा है कि मुसलमानोकी माँगोके सम्बन्धमे मैं उन्हे मनचाही करनेकी छूट देनेको तैयार हूँ, लेकिन इस कथनके साथ यह बात भी सहज ही जुडी हुई है कि सिखोको, और सिखोको ही क्यो, सभी समुदायोको मैं इसी प्रकारका आश्वासन देता हूँ।

१. अपने २१ सितम्बरके पत्रमें आर्थर जे० डेविसने १६ अक्टूबरको होनेवाली राज्य-व्यापी मद्य-निषेध कांफ्रेंसके लिए गांधीजी से सन्देश माँगा था।

मैं सारी जिन्दगी यही मानता आया हूँ कि जो राष्ट्रकी सेवा करना चाहता है उसे अपने लिए किसी अधिकारकी माँग नही करनी चाहिए और जो लोग अधिकारोकी माँग करे उनके लिए अधिकारोकी गुजाइश कर दें, लेकिन मुसलमानोको पूरी छूट दे देनेसे मेरा मतलब यह कभी नही था कि सिखो अथवा किसी भी अन्य समुदायकी न्यायोचित माँगोकी पूर्णत. अथवा अशतः उपेक्षा हो।

हृदयसे आपका,

सरदार उज्जलसिंह
सैंट जेम्स कोर्ट
बकिंघम गेट, एस० डब्ल्यू०-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७९२५)से।

८३. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

हमने गोलमेज परिषद्की अल्पसख्यक-समस्या समितिकी बैठकको एक हफ्ता और स्थगित रखनेका अनुरोध करनेका निर्णय किया है।

अगले हफ्ते यह बातचीत जारी रहेगी। कोई गतिरोध नही है। कुछ भी तय नही हो पाया है। जो स्थिति है, उसकी मुझे न खुशी है, न गम। प्रधान मन्त्रीसे हुई मेरी बातचीतका साम्प्रदायिक सवालसे कोई सम्बन्ध नही था।

[अंग्रेजीसे]
न्यज क्रॉनिकल, १-१०-१९३१

८४. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

लन्दन
१ अक्टूबर, १९३१

इतनी दूर रहकर बजटके फलितार्थोको समझना मुश्किल है, लेकिन यह बात मुझे बहुत भयावह लगती है कि गरीबो द्वारा इस्तेमाल किये जानेवाले नमकपर लगे करमे भी वृद्धि की गई है। मैं जानता हूँ कि काग्रेस इसके खिलाफ भी लडेगी। बजटको सतुलित करनेका उपाय करोमे वृद्धि करना नही, बल्कि सैनिक तथा असैनिक खर्चोंमे भारी कटौती करना है। मैं परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदयको इस बातके लिए बधाई देता हूँ कि उन्होने स्वेच्छासे अपने वेतनमे कटौती करना स्वीकार किया है,

१. गाधीजी ने यह वक्तव्य रिट्ज होटलमें आगाखाँ तथा अन्य मुसलमान नेताओसे ढाई घटेतक बातचीत करनेके बाद जारी किया था।

लेकिन मैं अपने मनसे इस भावनाको दूर नही कर सकता कि अगर भारतको असली स्वशासनमें हिस्सेदार बनना है तो कटौती भारी परिमाणमें की जानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-१०-१९३१ तथा बॉम्बे क्रॉनिकल, २-१०-१९३१

८५. कुछ प्रश्नोंके उत्तर[1]

लन्दन
१ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधीने कहा कि इस पैसेका उपयोग कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमकी मदमें किया जायेगा। करोड़ों भारतीय गरीबीमें इस तरह गरक है कि उनमें अपनी जीविका आप उपार्जित करनेकी आशा जगा सकना लगभग असम्भव है। इसलिए कांग्रेसके सामने बहुत दुष्कर कार्य पड़ा हुआ है। अगर मैं लोगोंको जीवनकी दूसरी आवश्यकताके सम्बन्धमें, अर्थात् कपड़ेके सम्बन्धमें, स्वावलम्बी बननेको समझा सकूँ तो उन्हें सच्चा स्वराज्य मिल जाये।

(१) कांग्रेसका मौजूदा लक्ष्य पूर्ण स्वराज्य है। यहाँ मैं तत्काल स्वतन्त्रता देनेकी माँग करने आया हूँ, लेकिन इसका मतलब यह नही है कि ब्रिटेनके साथ पूर्ण समानताके दर्जेपर ऐसी साझेदारी करनेकी कोई सम्भावना नही है जिसमे कोई भी साझेदार इच्छा होने-भरसे साझेदारीसे अलग हो जा सकता है। ऐसी साझेदारीको भी मैं पूर्ण स्वराज्य ही मानूंगा।

(२) कांग्रेसका आशय (लाहौर प्रस्तावके अनुसार) ब्रिटिश साम्राज्यसे सम्बन्ध तोड लेनेका था, लेकिन साम्राज्यसे सम्बन्ध तोड लेना और ग्रेट ब्रिटेनके साथ सम्मानजनक साझेदारी न करना, दोनो एक ही बात नही है। अगर भारतके साम्राज्यमे रहनेका मतलब उसका अधीन राष्ट्र होना है तो भारत साम्राज्यमे नही रहेगा, लेकिन अगर भारत और ग्रेट ब्रिटेन दोनो चाहे तो भारत ब्रिटेनके साथ एक सम्मानजनक साझेदारीका सम्बन्ध कायम करना चाहेगा।

और भारत ऐसी साझेदारी चाहता है, यह तो इसी बातसे स्पष्ट है कि मैं यहाँ जिस पूर्ण स्वराज्यकी माँग करने आया हूँ उसमे साझेदारीके लिए भी गुंजाइश रखी गई है, बशर्ते कि इंग्लैंडको भी ऐसी साझेदारी कायम करनेकी उतनी ही इच्छा हो।

(३) स्वराज्य चाहनेवाले लोगोका प्रतिनिधित्व कांग्रेसकी ओरसे मैं कर रहा हूँ।

(४) देशी राज्योकी प्रजाका प्रतिनिधित्व उनके द्वारा नियुक्त या चुने प्रतिनिधि नही कर रहे हैं। देशी राज्योके इन प्रजाजनोके प्रति भी मैं अपना एक कर्त्तव्य

१. गांधीजी के जन्म-दिवससे एक दिन पहले लन्दनवासी भारतीयोंने गिल्ड हाउसमें उनके सम्मानमें एक स्वागत-समारोहका आयोजन किया था। समारोहकी अध्यक्षता विट्ठलभाई पटेलने की थी। वहाँ गांधीजी को ५७५ पौंडकी एक थैली भी भेंट की गई थी।

मानता हूँ और अपनी समझ तथा योग्यताके अनुसार मै उसे पूरा करनेकी आशा रखता हूँ।

(५) मैं जिस महान् लक्ष्यकी प्राप्तिका प्रयत्न कर रहा हूँ उसकी तुलनामें यह सौदा कुछ भी नही है। इसलिए मुझे कहना पडेगा कि मैं अपनेको इतना भोला तो नही मानता हूँ कि मनमे ऐसा कोई भ्रम रखूँ कि इस सौदेबाजीके बलपर मैं भारतको स्वतन्त्रता दिला सकता हूँ।

मैंने जो दूसरे देशोंके कपड़ेकी तुलनामे ब्रिटेनके कपड़ेको प्राथमिकता देनेकी बात की है, उसका अपना कारण है और वह कारण इस प्रकार है: अगर ग्रेट ब्रिटेन हमारा साझीदार बन जाता है तो जिस प्रकार मैं किसी भी अन्य कपडेके मुकाबले भारतीय कपडेको तरजीह दूँगा उसी प्रकार जो देश हमारे साझेदार नही है उनकी तुलनामे मैं अपने साझेदार द्वारा तैयार किये कपडेको प्राथमिकता दूँगा।

(६) सघ-सरचना समितिमें मताधिकारका प्रश्न उठने पर मेरा इरादा उस बातको साबित करनेमे अपनी सारी शक्ति लगा देनेका है जो अभी मैंने मोटे तौरपर कही है। तात्पर्य यह कि मैं अपनी पूरी शक्तिसे इस बातको सिद्ध करनेकी कोशिश करूँगा कि मैंने जो तरीका सोचा है, उस तरीकेसे वयस्क मताधिकारको तत्काल लागू किया जा सकता है।

मैं निश्चयपूर्वक यह नही कह सकता कि पूरी कार्य-समिति मेरे विचारोसे सहमत है, लेकिन कार्य-समितिने मुझे जो अधिकार दिये हैं, उनमे यह बात भी शामिल है कि वयस्क मताधिकारके तरीकोंके बारेमे मैं अपनी समझके अनुसार काम कर सकता हूँ।

जहाँतक वयस्क मताधिकारका सवाल है, मेरे हाथ बँधे हुए हैं, लेकिन उसके क्या तरीके हो सकते हैं, इस सम्बन्धमें मुझपर ऐसा कोई बन्धन नही है। कार्य-समितिमे कुछ ऐसे सदस्य भी हैं जिन्हे वास्तवमें यह मालूम नही है कि इस तरीकेसे मेरा तात्पर्य क्या है।

(७) मुझे दिया गया कांग्रेसका वह लिखित प्रदेशपत्र मैं सरकारके सामने पेश कर चुका हूँ जिसमें कांग्रेसकी सारी माँगे बिलकुल स्पष्ट शब्दोमे रख दी गई हैं।

सरकारने अबतक साफ-साफ यह नही बताया है कि उसके मनमें क्या है, लेकिन वह समय बहुत जल्दी आ रहा है जब सरकारको अपनी नीति इस या उस दिशामें बिलकुल स्पष्ट कर देनी होगी, क्योकि मैं समझता हूँ कि गोलमेज परिषद्के सभी सदस्य बहुत व्यस्त आदमी हैं और कल शायद अपने-आप कुछ हो जाये, ऐसी निरर्थक आशा करते हुए वे यहाँ अपना समय गँवानेवाले नही हैं।

मुझे निश्चित आदेश मिले है कि मैं यहाँ अपना समय व्यर्थ न गँवाऊँ। इस-लिए ज्यो ही मुझे मालूम होगा कि मेरे यहाँ रहनेसे कुछ बननेवाला नही है, मुझे भारतके लिए प्रस्थान कर देना होगा।

(८) गढवाली कैदियों (उनका उल्लेख इसी नामसे किया जाता है)ने जान-बूझकर आदेशोका उल्लघन किया। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि उनकी वह कार्रवाई

अहिंसात्मक थी, लेकिन साथ ही यह उन लोगोके द्वारा, जिन्होने अपने अधिकारियोके आदेशोका पालन करनेकी शपथ ली थी, अनुशासन-भगका भी मामला है।

लेकिन जबतक वर्त्तमान सरकार कायम है तबतक मै उसके पास जाकर उन्हे रिहा कर देनेको नही कह सकता। इतना अवश्य कह सकता हूँ कि उन्हे जो सजा दी जा रही है वह उनके जुर्मको देखते हुए बहुत भारी है।

आखिरकार उन्होने तो यही सोचकर वैसा किया कि ये आदेश दुष्टतापूर्ण है। अगर ठीक सजा दी जाती तो शायद उन्हे कोई शिकायत न होती।

इस समय तो मै इस विषयमे सरकारसे बातचीत करनेवाला नही हूँ। मुझे जिस चीजके लिए यहाँ भेजा गया है, उसे अगर मै पा लेता हूँ तो मै सरकारसे बातचीत कर सकता हूँ, अन्यथा ऐसा करना तो उस आन्दोलनकी पूरी भावनाके ही खिलाफ है जिसमे हम यह मानकर चल रहे है कि कुछ लोगोको कारावास — आजीवन कारावास भी — भोगना पड़ सकता है।

(९) आप कृपया इस बातको समझनेकी कोशिश कीजिए कि जिस तरीकेको मै राष्ट्रकी गरिमाके अनुकूल समझता हूँ उस तरीकेसे मेरठके कैदियोके सम्बन्धमे मैंने अपनी शक्ति-भर सब-कुछ करनेका प्रयत्न किया है।

जब-कभी मै उनके लिए कुछ कहनेकी स्थितिमे होऊँगा, मै अपने उस कर्त्तव्यसे कभी जी नही चुराऊँगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-१०-१९३१ और ३०-१०-१९३१

८६. अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी कार्यवाहीका अंश

लन्दन
१ अक्टूबर, १९३१

श्री गाधी: प्रधान मन्त्री महोदय, पिछली रात महाविभव आगाखाँ और अन्य मुसलमान भाइयोसे बातचीत करनेके बाद हम इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि यहाँ हम जिस उद्देश्यसे इकट्ठे हुए है, उसके हकमे यह ज्यादा अच्छा होगा कि हम समितिकी कार्यवाहीको एक सप्ताहतक स्थगित रखनेका अनुरोध करे। मुझे अन्य सदस्योसे परामर्श करनेका मौका नही मिला, लेकिन इस बातमें मुझे कोई सन्देह नही है कि मै जो प्रस्ताव कर रहा हूँ उसपर वे भी सहमत हो जायेंगे। मुसलमान मित्रोके साथ मेरी बातचीत बहुत गम्भीरतापूर्वक चलती रही है, और पिछले दिन दोपहर बाद मुझे कुछ अन्य समुदायो या वर्गोंके लोगोसे भी मिलनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।

१. रायटरकी एक रिपोर्टके अनुसार इस बातचीतके अन्तमें कुछ भारतीय साम्यवादियोंने उपद्रव मचा दिया, जिससे वहाँसे उन्हें जबरदस्ती निकाल देना पड़ा।

हम ज्यादा प्रगति नही कर पाये, लेकिन वे लोग भी ऐसा महसूस करते है कि हमारे पास समय इतना कम है कि विचार-विनिमय भी ठीकसे नही हो सकता। खुद अपनी हदतक मै यह कह सकता हूँ कि इस सप्ताहके एथगनके अलावा मै और स्थगनकी माँग नही करूँगा, वल्कि मै इस समितिको यह सूचित कर दूँगा कि अगले सप्ताह मे जो प्रयत्न करूँगा उसका परिणाम क्या हुआ।

इस समितिको यह वता देनेमे मै कोई हर्ज नही मानता कि महाविभवने और जिन अन्य सज्जनोंके साथ कल रात मैने विचार-विमर्श किया, उन सवने मेरे सिर यह जिम्मेदारी डाली है कि मै विभिन्न समुदायोके प्रतिनिधियोको साथ वुलाकर उनसे सलाह-मशविरा करूँ ताकि कोई अन्तिम समाधान निकल सके। प्रधान मन्त्री महोदय, अगर मेरा यह प्रस्ताव आपको और इस समितिके शेष सदस्योको ठीक लगता है तो मेरे लिए यह खुशीकी वात होगी। मै जानता हूँ कि महाविभव इस प्रस्तावका अनुमोदन करेगे और अव हम सवको यही आशा करनी चाहिए कि सप्ताहके अन्तमें मै किसी-न-किसी प्रकारके समाधानकी सूचना दे सकूँगा।

लेकिन यह आशा व्यक्त करते हुए मै एक वात साफ कह देना चाहता हूँ, अर्थात् कोई यह न समझे कि चूँकि मै ऐसी आशा व्यक्त कर रहा हूँ इसलिए कोई-न-कोई ऐसी अनुकूल वात जरूर होगी जिसे मै जानता हूँ और जिसके आधारपर मै ऐसी आशा कर रहा हूँ। सचाई यह है कि मै हर परिस्थितिमें आशावान रहनेवाला आदमी हूँ और मैने अपने जीवनमे अकसर ऐसा पाया है कि जव सारी सम्भावनाएँ सर्वथा प्रतिकूल दीख रही हो, तभी कोई ऐसी बात हो गई है जिससे आशा करनेका कोई अच्छा-सा आधार मिल गया है। खैर, चाहे जो भी हो, मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि इस समितिके वहुत-से सदस्य कोई समाधान ढूँढनेके लिए, जितना आदमीके वसमे है, उतना प्रयत्न अवश्य करेगे।

इन शब्दोके साथ मै आपके विचारार्थ अपना यह प्रस्ताव पेश करता हूँ कि आजसे एक सप्ताहके लिए समितिकी कार्यवाही स्थगित रखी जाये।

महाविभव आगाखाँ: मै इस प्रस्तावका सहर्ष अनुमोदन करता हूँ।

सरदार उज्जलसिंह: मै इस प्रस्तावका हृदयसे समर्थन करता हूँ और श्री गांधीके साथ स्वर मिलाकर यह आशा व्यक्त करता हूँ कि अगर दोनो ओरसे सद्भावनासे काम लिया गया तो हम कोई समाधान ढूँढ़ सकेगे।

डॉ० अम्बेडकर: इस समितिको जिस समस्यासे निवटना है उसके समाधानके लिए किये जानेवाले किसी भी सम्भव प्रयत्नके मार्गमें मै वाधक नहीं वनना चाहता, और अगर महात्मा गांधीके सुझाये तरीकेसे समाधान ढूँढ़ा जा सकता हो तो जहाँ तक खुद मेरा सवाल है, मुझे उस प्रस्तावपर कोई आपत्ति नहीं होगी।

लेकिन दलित वर्गोके प्रतिनिधिकी हैसियतसे एक कठिनाई मेरे सामने आती है। मै नही जानता कि जवतक इस समितिकी कार्यवाही स्थगित रहेगी तवतक इस

सवालपर विचार करनेके लिए महात्मा गांधी किस प्रकारकी समिति नियुक्त करेंगे, लेकिन मैं समझता हूँ कि उसमें दलित वर्गोंको भी प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा।

श्री गांधी : बेशक। . . [१]

प्रधान मन्त्री महोदय और मित्रो, मैं देखता हूँ कि हममे से कुछ लोगोने जो काम करनेका निश्चय किया है उसकी व्याप्तिके सम्बन्धमे सदस्योके मनमे कुछ गलतफहमी है। मैं तो समझता हूँ कि जो-कुछ होने जा रहा है उसको लेकर डॉ० अम्बेडकर, कर्नल गिडनी और कुछ अन्य मित्र बेकार ही परेशान है। भारतके किसी भी हित या वर्ग, बल्कि व्यक्तिको भी वाजिब राजनीतिक दर्जा देनेसे इनकार करनेवाला मैं कौन होता हूँ? यदि मैं राष्ट्रके किसी भी हितकी बलि चढा देनेका दोषी बनता हूँ तो काग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैं उस दायित्वके अयोग्य साबित होऊँगा जो मुझे सौपा गया है। यह सही है कि इन बातोके सम्बन्धमे मैंने अपने विचार व्यक्त किये है और मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैं उन विचारोपर कायम भी हूँ, लेकिन प्रत्येक हितको सुरक्षा प्रदान करनेके अनेक अलग-अलग तरीके है। हममे से जो लोग मिल-बैठकर परामर्श करेगे उनका यह कर्त्तव्य होगा कि इसके लिए कोई योजना तैयार करे। इस अत्यन्त अनौपचारिक काफरेस या बैठकके सदस्योको अपना दृष्टिकोण समझानेसे किसीको रोका नही जायेगा। सच तो यह है कि इसे समिति कहनेकी भी जरूरत नही है। मुझे किसी समितिका सयोजन करने या गठन करनेका कोई अधिकार नही है। मैं तो केवल शान्तिके एक अदना सन्देशवाहककी ही तरह काम कर सकता हूँ, विभिन्न हितो और समुदायोके प्रतिनिधियोको विचारार्थ एकत्र करके इस बातका पता लगानेकी ही कोशिश कर सकता हूँ कि एक कमरेमे बैठकर आपसमे दिल खोल कर बाते करके क्या हम गलतफहमियोके कुहासेको दूर नही हटा सकते और हम अपने लक्ष्यतक ले जानेवाले उस रास्तेको साफ-साफ नही देख सकते जो आज बहुत धूमिल बना हुआ है।

इसलिए मैं नही समझता कि इसमे किसीके भी अपना विचार व्यक्त करने या दूसरोसे स्वीकार करवानेके बारेमे आशका रखनेका कोई कारण है। वहाँ मैं अपना विचार भी व्यक्त करूँगा, लेकिन उसकी वकत उतनी ही होगी जितनी कि किसी और के विचार की होगी। किसी भी अन्य व्यक्तिके विचारके मुकाबले उसका ज्यादा वजन नही होगा। मुझे ऐसी कोई सत्ता प्राप्त नही है, जिसके बलपर मैं किसीके भी खिलाफ अपने विचारको स्वीकार करवा सकूँ। मैंने तो राष्ट्रहितका ध्यान रख कर केवल अपने विचार व्यक्त किये है और आगे भी जब-कभी उपयुक्त अवसर आयेगा मैं इन्हे व्यक्त करूँगा। उन्हे स्वीकार अथवा अस्वीकार करना आपका काम

१. इसके बाद बोलनेवाले सभी लोगोने आम तौरपर स्थगन-प्रस्तावका समर्थन किया, लेकिन डॉ० आम्बेडकर, सर हेनरी गिडनी और रावबहादुर पन्निरसेल्वमने यद्यपि प्रस्तावका विरोध नही किया तथापि यह सवाल उठाया कि चूँकि गाधीजी मुसलमान और सिख, इन्हीं दो अल्पसख्यक समुदायोंको मान्यता देते हैं, इसलिए हमारी समझमें यह बात नहीं आती कि हम लोग उस समितिके कार्योंमें कैसे शामिल हो सकेंगे जिसका गठन वे अनौपचारिक विचार-विमर्शके लिए करना चाहते है।

होगा, आपका ही काम है। इसलिए आप सबसे प्रार्थना है कि अपने मनमें ऐसा कोई विचार न रखे कि इस काफरेसमे और मैंने जिन अनौपचारिक बैठकोकी चर्चा की है उनमे सबको दबा देनेवाली स्टीम-रॉलर-जैसी कोई चीज होगी। लेकिन अगर आपको लगता हो कि इस तरह मेजके चारो ओर सख्त रुख अपनाये बैठे रहनेके बजाय परस्पर एक-दूसरेके निकट आनेका यह एक रास्ता है तो आपसे अनुरोध करूँगा कि आप न केवल इस स्थगन प्रस्तावको पास कर देंगे, बल्कि मैंने इन अनौपचारिक बैठकोके सम्बन्धमे जो प्रस्ताव रखा है उसके कार्यान्वयनमे भी आप हार्दिक सहयोग करेगे।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, पृष्ठ ५२८-९

८७. एवलिन क्लेयरको लिखा पुर्जा

[१ अक्टूबर, १९३१के पश्चात्][2]

१-१५। ३० अक्टूबर। डेढ घटेसे ज्यादा समय न लीजिएगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७९२७)से।

८८. भेंट: 'ज्यूइश क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

लन्दन

[२ अक्टूबर, १९३१के पूर्व]

यहूदियोके बीच मेरे मित्रोकी सख्या बहुत अधिक है। दक्षिण आफ्रिकामे तो मै यहूदियोसे घिरा ही रहता था, और मेरी आशुलिपिक और टाइपिस्ट एक यहूदी लडकी थी, जो परिवारकी एक सदस्य ही मानी जाती थी।

फिर भी, मै यह नही कह सकता कि मैंने यहूदी धर्मका ठीक अध्ययन किया है। हां, उसका उतना अध्ययन जरूर किया है, जितना एक सामान्य व्यक्ति कर सकता है। मै मानता हूँ कि यहूदी धर्म एक उत्कृष्ट धर्म है और कई दृष्टियोसे

१. अध्यक्षने प्रस्तावको सदस्योंकी राय जाननेके लिए रखा और वह पास हो गया।

२. एवलिन क्लेयरके सूचनार्थ ये वाक्य गाधीजी ने उन्हींके लिखे १ अक्टूबर, १९३१ के एक पत्रपर लिखे थे। पत्रमें एवलिन क्लेयरने फ्रेटेरियन सोसाइटी, डॉडिंग्टन, केंटकी एक बैठकमें आयोजित भोजमें गाधीजी को निमन्त्रित किया था। एवलिन क्लेयरके ही लिखे एक अन्य पत्रके अनुसार यह आयोजन लन्दनके ग्रोसवेनर हाउस होटलमे हुआ था।

ईसाई धर्मसे इसका बहुत निकटका सम्बन्ध है। उदाहरणके लिए 'ओल्ड टेस्टामेंट' के सभी मसीहा यहूदी है और खुद ईसा मसीह भी यहूदी थे।

यहूदियोके 'पासओवर' पर्वके अवसरपर मै जोहानिसबर्गके यहूदी उपासना-गृह (सिनेगॉग)मे जाया करता था, और लगभग ऐसा कहा जा सकता है कि अपने यहूदी मित्रोके साथ मै भी 'पासओवर' के व्रतका पालन किया करता था, क्योकि मै हर रोज रातमे उन यहूदी मित्रोके घर जाता था और वहाँ आप लोग उन्हे क्या कहते है? . . .

यहाँ हमारे प्रतिनिधिने बताया, 'मतजो।'

हाँ, हाँ, 'मतजो' खानेका पूरा आनन्द उठाया करता था। मेरा खयाल है, वे बडे स्वादिष्ट और खस्ता होते है।

जो हो, मै यहूदियोके दो-तीन सार्वजनिक उपासना-समारोहोमे शामिल हुआ हूँ, और मै समझता हूँ ये बहुत भव्य होते है, लेकिन खुद मुझे ऐसा लगता है कि उनमे "हृदय-तत्त्वका अभाव था।" मतलब यह कि पूजाकी सच्ची भावनाका अभाव था। उनमे विधि-विधानोकी बडी बहुलता थी, हालाँकि मुझे कहना चाहिए कि ये विधि-विधान बहुत अच्छे थे। यहूदी 'रैवान्' (धर्मशास्त्री) एक जाना-माना विद्वान् था, और उसने बहुत ही विद्वत्तापूर्ण प्रवचन दिया, किन्तु वह मेरे हृदयको स्पर्श नही कर पाया।

यहूदियोके प्रति मेरा रुख बहुत सहानुभूतिपूर्ण है, उनके प्रति मेरा बहुत आकर्षण है। इसका पहला कारण तो स्वार्थ-प्रेरित है; मतलब यह कि बहुत-से यहूदी मेरे मित्र है। दूसरा और इससे बहुत गहरा कारण यह है कि उनमे एकताकी अद्भुत भावना है। तात्पर्य यह कि आप जहाँ-कही यहूदियोको देखेंगे, उनमे सहचर-भावना होगी ही। इसके अलावा वह ऐसी जाति है जो अपने मनमे एक भव्य भविष्यकी कल्पना सँजोये हुए है। वैसे अगर इसे धृष्टता न माना जाये तो मै कहूँगा कि अपनी इस कल्पनाके फलितार्थ और पूरे अर्थको वे खुद भी नही समझते।

मुझसे कभी-कभी यह पूछा जाता है कि क्या मै यहूदियोको दुनियामे कुछ विशिष्ट कार्य करनेके लिए ईश्वर द्वारा चुनी गई विशेष जाति मानता हूँ। मेरा उत्तर यह होता है कि एक अर्थमे तो मै ऐसा मानता हूँ। लेकिन वैसे तो सभी जातियाँ अपनेको ऐसा ही मानती है।

अपने आध्यात्मिक अर्थमे तो यहूदीवाद एक बहुत ही ऊँचा आदर्श है। आध्यात्मिक अर्थसे मेरा मतलब यहूदियोसे की जानेवाली इस अपेक्षासे है कि वे अपने जीवनमे अन्दरके जेरूसलेम [तीर्थस्थल] को साकार करे। जहाँतक यहूदीवादका मतलब यहूदियो द्वारा फिरसे फिलस्तीनपर अधिकार कर लेना है, वहाँतक तो इस चीजके प्रति मुझे कोई आकर्षण नही है। किसी यहूदीकी फिलस्तीन लौट चलनेकी वाछाको मै समझ सकता हूँ और अगर वह अपनी अथवा ब्रिटेनकी सगीनोके जोरके विना वैसा कर सके तो यह अच्छी वात होगी। उस हालतमे वह शान्तिपूर्वक और अरबोके प्रति पूरा मैत्री-भाव लेकर फिलस्तीनमे प्रवेश करेगा। सच्चा यहूदीवाद, जिसका अर्थ मैने अभी आपको बताया है, एक ऐसी वस्तु है जिसके लिए प्रयत्न करना, जिसकी

वाछा करना और जिसके लिए मर मिटना श्रेयकी बात होगी। जिओन (दिव्य जेरूसलेम) तो मनुष्यके हृदयमें निवास करता है। वह ईश्वरका निवास-स्थल है। सच्चा जेरूसलेम आध्यात्मिक जेरूसलेम ही है। इस प्रकार वह यहूदीवादको दुनियाके किसी भी हिस्सेमे रहकर अपने जीवनमे साकार कर सकता है।

श्री गांधीने आगे कहा कि दुर्भाग्यवश वे अबतक फिलस्तीन नहीं गये हैं, लेकिन किसी दिन वहाँ जानेकी आशा अवश्य रखते हैं।

वहाँ जाकर मुझे बडी प्रसन्नता होगी, क्योकि उस पवित्र स्थलके बारेमे मैंने बहुत-कुछ पढा है। सामी-विरोधी प्रवृत्ति वास्तवमे बर्बरताका एक अवशेष है। यहूदियोके प्रति इस विरोधकी भावनाको मै कभी समझ ही नही पाया हूँ। मैंने जैंगविलकृत 'चिल्डरन ऑफ द घेटो' पढा है और उसे पढकर मैंने जाना कि बिना किसी अपराधके यहूदी लोग पहले ही कितनी यातना सह चुके है। मुझे तब भी लगा था और अब भी लगता है कि यह सारा प्रपीडन, यदि ऐसा कहना धृष्टता न हो तो कहूँगा, उन लोगोके लिए बडे अपयशकी बात है जिन्होने चिरकालसे कष्ट सहनेवाली इस जातिको ईसाई-धर्मके नामपर यातनाएँ दी हैं।

सवाल यह है कि इसका उपाय क्या है? मै तो दुहरा उपाय सुझाऊँगा। एक ओर तो जो लोग अपनेको ईसाई कहते हैं उन्हे सहिष्णुता और उदारताका गुण सीखना चाहिए और दूसरी ओर यहूदियोको, उन पर जो दोषारोपण न्यायपूर्वक किया जा सकता हो, उसके कारणोको दूर करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

ज्यूइश क्रॉनिकल, २-१०-१९३१

८९. भेंट : हेनरी कार्टरको

लन्दन

[२ अक्टूबर, १९३१][1]

भारतमे मद्यपानका प्रश्न ऐसा प्रश्न है जिसका समाधान तत्काल ढूंढना आवश्यक है। हिन्दुओ और मुसलमानो, दोनोके धर्मोंकी यह सीख है कि मद्यपान न करो। भावी अखिल भारतीय विधानमण्डल निश्चय ही सभी तरहके नशीले पेयोका आयात, उत्पादन या बिक्रीका निषेध कर देना आवश्यक समझेगा और इस मामलेमे उतनी ही छूट देगा जितनी कि औषधीय, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक प्रयोजनोके लिए आवश्यक एलकोहल मुहैया करनेके लिए जरूरी होगी। औषधीय प्रयोजनोके लिए वह उतना ही दिया जायेगा जितना कि डाक्टरके नुस्खेपर लिखा रहेगा। निषेध तो भारतमे शराब तैयार करने और विदेशोसे आयात करने, दोनोपर समान रूपसे लागू होना चाहिए।

१. कार्टरके अनुसार यह भेंट-वार्ता गांधीजी के जन्म-दिवसपर हुई थी।

मैंने श्री गांधीसे पूछा कि फिर आप, भारत सरकारको आबकारीसे जो भारी राजस्व प्राप्त होता है, उसकी कमीको कैसे पूरा करेंगे? उन्होंने जवाब दिया कि इसका उपाय है — भारतके सैनिक खर्चमें उतनी ही कटौती करना।

हमने भारतकी मद्य-समस्याओंके समाधानके विभिन्न तरीकोंकी चर्चा की। मैंने उन्हें बताया कि यहाँ इंग्लैंडमें तो हम लोग स्कूलोंमें विद्यार्थियोंको वैज्ञानिक ढंगसे यह समझानेपर जोर देते हैं कि नशीले पेय क्या होते हैं और उन्हें पीनेके क्या-क्या परिणाम हो सकते हैं। श्री गांधीने कहा कि एक हदतक तो इस विषयकी शिक्षा भारतीय स्कूलोंमें भी दी जाती है, लेकिन मैं तो मानता हूँ कि शराबखोरीके खिलाफ राष्ट्रके विरोधको कायम रखनेके लिए लोगोंकी धार्मिक भावनापर भरोसा रखना काफी है। मेरी समझसे भारतमें मद्यपानकी वृद्धिका औद्योगीकरणसे निकट-सम्बन्ध है। उन्होंने इस बातपर जोर दिया कि कारखानोंका नीरस वातावरण मद्यपानको बढ़ावा देता है।

लोगोंकी इच्छापर स्थानीय रूपसे मद्य-निषेध लागू करने और राष्ट्रीय पैमानेपर मद्य-निषेध लागू करनेमें उनके विचारसे निम्नलिखित अन्तर है:

ब्रिटेन-जैसे देशमें, जहाँ मद्यपानकी जड़ें परम्परासे जमी हुई है और जहाँ शायद अधिकांश लोग मद्यपान करते है, लोगोकी इच्छापर स्थानीय रूपसे मद्य-निषेध-नियम लागू किया जा सकता है। लेकिन भारतको कोई बीचकी नीति अपनानेकी जरूरत नही है। वह तो राष्ट्रीय पैमानेपर पूर्ण मद्य-निषेध लागू किये जानेके लिए पूरी तरहसे तैयार है। देशमे इस चीजके प्रति लोगोकी जो भावना है, वह असन्दिग्ध रूपसे ऐसे निषेधके लिए अनुकूल है।

अफीम खानेकी लतके बारेमें उन्होंने बताया कि अब भारतमें यह लत उतने बड़े पैमानेपर मौजूद नहीं है, जितने बड़े पैमानेपर मद्यपानकी आदत देखनेको मिलती है। पिछले कुछ वर्षोंमें यहाँ पोस्तका उत्पादन कम हो गया है। सरकारने अफीमके निर्यातकी मात्रा निर्धारित कर दी है, जिससे अफीमके निर्यातमें प्रतिवर्ष १० प्रतिशतकी कमी होती जा रही है। यह बहुत ही समझदारी-भरा और लाभदायक कदम साबित हुआ है। श्री गांधीने कहा:

वैसे तो अफीमखोरीकी आदत भारतमे किसी और देशसे नही आई लेकिन भारतीयोंकी नैतिक भावनाका तकाजा यही होगा कि अफीमके सम्बन्धमे भी जल्दी ही पूर्ण निषेध लागू कर दिया जाये। भारतमे अफीम खानेके खिलाफ राष्ट्रीय पैमाने पर निषेध लागू कर देना आवश्यक है। हाँ, जहाँतक औषधीय तथा वैज्ञानिक प्रयोजनोंके लिए वह आवश्यक है, वहाँतक उसके उपयोगकी छूट देनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, १४-१०-१९३१

९०. भाषण : भोजके अवसरपर[1]

लन्दन
२ अक्टूबर, १९३१

मै जबसे लन्दन आया हूँ, मुझे लोगोका मैत्रीभाव और सच्चा स्नेह ही प्राप्त होता रहा है। हर दिन नये-नये लोगोसे मेरी मैत्री होती रही है। लेकिन, महोदय, आप सबने मुझे फिर यह दिखा दिया है कि आप मेरे मुसीबतके साथी है और मुसीबतके साथी ही तो सच्चे साथी, सच्चे दोस्त होते है। जब यह लग रहा था कि भारत, बल्कि कहिए, कांग्रेसियोका साथ शायद दुनियाके सभी लोग छोड देंगे, तब आपने दृढतासे काग्रेसका साथ दिया और काग्रेसकी स्थितिको अपनी स्थिति बना लिया। आज आपने काग्रेसके कार्यक्रममे फिरसे अपनी आस्था व्यक्त की है और इस तरह मेरा काम आसान कर दिया है।

काग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मुझे यहाँ जो सन्देश देनेको भेजा गया है वह सन्देश आपको देना तो वैसा ही होगा जैसा कोयलेके भण्डार न्यूकैसलमे किसी और जगहसे कोयला पहुँचाना। काग्रेसके पक्षके औचित्यसे आप भली-भाँति अवगत है और मेरा यह निश्चित विश्वास है कि आपके हाथोमे काग्रेसका पक्ष बिलकुल सुरक्षित है तथा अपने आजके कार्यके द्वारा, काग्रेसके माध्यमसे, भारतके गाँवोके करोडो मूक और अर्ध-बुभुक्षित मानवोके साथ अपनी मैत्रीपर आपने अन्तिम मुहर लगा दी है।

यह मान लिया गया है कि आप लोग भोजमे शामिल हो रहे है। आपके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। अग्रेजी ढगकी भोज्य सामग्रीको मैने देखा-ही-देखा है, उसका स्वाद नही लिया है। और जब मैंने फलोसे भरी यह मेज देखी तो महसूस किया कि भोजके नामपर सिर्फ ये फल खाना आपके लिए कितने बड़े त्यागका विषय है। आशा है, चायका समय आनेपर जब आप अग्रेजी होटलो और उपाहारगृहोमें सुलभ कुछ थोडी-सी सुस्वादु खाद्य सामग्रीका आस्वादन करेंगे उससे पहले तक तो आपकी त्यागकी यह भावना कायम ही रहेगी। मगर ऊपरसे परिहास दीख पडनेवाली इस बातके अन्दर एक गम्भीरता भी छिपी हुई है। मै जानता हूँ कि आपने कुछ त्याग किया है। आपमें से कुछ लोगोको भारतकी 'स्वतन्त्रता' का — अग्रेजीमें इस शब्दका जो पूरा अर्थ होता है, उस अर्थमे उसका — पक्ष-पोषण करनेके कारण बहुत-कुछ बलिदान करना पडा है। लेकिन हो सकता है कि अगर आप आगे भी भारतके पक्षका समर्थन करते रहेंगे तो आपको इससे बहुत अधिक बलिदान करना पडे। यहाँ आनेका निश्चय करते समय मेरे मनमे किसी प्रकारका भ्रम नही था। मेरे लन्दनमें प्रवेश करने पर

१. गाधीजी के ६३ वें जन्म-दिवसके उपलक्ष्यमें इस भोजका आयोजन इडिपेंडेंट लेबर पार्टी, इडियन नेशनल काग्रेस लीग और गाधी सोसाइटीने वेस्ट मिंस्टर पैलेस-कक्षमें किया था। अध्यक्षता फेनर ब्रॉकवेने की थी। कुल ३८८ आदमी मौजूद थे। इस अवसरपर गाधीजी को एक चरखा भी भेंट किया गया था।

पहले ही दिन आपने मुझे यह कहते सुना कि मेरे लन्दन आनेका एक सबसे महत्त्वपूर्ण कारण यह था कि मैं एक सम्माननीय अंग्रेजको[1] दिये गये अपने वचनका पालन करना चाहता था और उस वचनको पूरा करनेके लिए ही मैं अपनेसे मिलनेवाले प्रत्येक अंग्रेज पुरुष और स्त्रीको अपनी शक्ति-भर समझानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि कांग्रेस जो चीज चाहती है वह वही है जिसका भारत योग्य पात्र है, और साथ ही यह बतानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि कांग्रेस अपनी माँगें बहुत गम्भीरतापूर्वक कर रही है और मैं कांग्रेसके प्रादेशपत्रमें शामिल प्रत्येक वस्तुकी माँग करके उसको और भारतको उसका प्राप्य दिलानेके लिए यहाँ आया हूँ। कांग्रेसकी जो माँग है उसमें मुझे, जिस हृदतक कांग्रेसका प्रादेशपत्र मुझको इजाजत देता है, उससे आगे कोई कमी करनेका अधिकार नहीं है। स्थिति चूँकि ऐसी है, इसलिए यहाँ रहते हुए मुझे प्रतिदिन इस बातकी अधिकाधिक प्रतीति होती जा रही है कि मेरा काम बहुत कठिन है — मनुष्यकी शक्तिसे लगभग बाहर। यहाँ तो भारतकी स्थितिके बारेमें इतना अज्ञान है कि कुछ समझमें नहीं आता; सच्चे इतिहाससे लोग इतने अनभिज्ञ हैं कि आश्चर्य होता है। जब मैं यहाँ आनेवाला था, एक नौजवान क्वेकरने मुझे आगाह करते हुए कहा था कि जबतक हम लोगोंको [अंग्रेजोंको] बचपनसे ही सच्चे और यथार्थ इतिहासकी नहीं, बल्कि गलत इतिहासकी शिक्षा दी जा रही है, तबतक आपके [गांधीजी के] यहाँ आनेसे कोई लाभ होनेवाला नहीं है; और यहाँ मैं जैसे-जैसे अंग्रेज पुरुषों और स्त्रियोंके सम्पर्कमें आता हूँ, उस क्वेकर मित्र द्वारा कहा सत्य उदाहृत होता देखता हूँ।

उनके लिए यह समझ सकना अत्यन्त कठिन, लगभग असम्भव, है कि कमसे-कम भारतीय लोग तो ऐसा ही मानते हैं कि भारतमें ब्रिटिश प्रशासनके कार्य-कलापका कुल परिणाम राष्ट्रके लिए लाभदायक होनेके बजाय हानिकारक ही सिद्ध हुआ है। भारतको ब्रिटेनसे सम्बन्ध रखनेसे जो-कुछ लाभ मिल सकता था, उसकी बात करना व्यर्थ है। पक्ष-विपक्षकी तमाम बातोंपर विचार करके यह निश्चित करना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात है कि वास्तवमें ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत भारतपर कैसी बीती है।

मैंने इसके लिए दो अचूक कसौटियाँ रखी हैं: यह तथ्य है अथवा नहीं कि भारत आज दुनियाका सबसे गरीब देश है और यहाँके करोड़ों लोग वर्षके छः महीने बेकार रहते हैं?

यह तथ्य है या नहीं कि भारतको न केवल अनिवार्य रूपसे निःशस्त्र रखकर, बल्कि किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्रके सदस्योंको जिन अनेक सुअवसरोंका लाभ उठानेका बराबर अधिकार होता है, उनसे भारतीयोंको वंचित रखकर इस देशको पौरुषहीन बना दिया गया है?

अगर जाँच-पड़ताल करने पर आपको पता चले कि इन दो मामलोंमें इंग्लैंड असफल रहा है — मेरा मतलब सर्वथा असफल होनेसे नहीं, बल्कि बहुत हृदतक

१. लॉर्ड इर्विन।

असफल होनेसे है — तो क्या अब वह समय नहीं आ गया है जब उन्हे अपनी नीतिमें परिवर्तन करना चाहिए।

जैसा कि एक मित्रने कहा और जैसा स्वर्गीय लोकमान्य तिलकने सार्वजनिक मंचसे हजारो बार कहा था, "स्वतन्त्रता और स्वाधीनता भारतके जन्मसिद्ध अधिकार है।" मेरे लिए यह समझाना कोई जरूरी नहीं है कि ब्रिटिश शासन अन्तत. ब्रिटिश कुशासन ही साबित हुआ है। मेरे लिए तो इतना ही बता देना काफी है कि चाहे यह शासन सुशासन रहा हो या कुशासन, जिस क्षण भारतके करोडो मूक जनोकी ओरसे स्वतन्त्रताकी माँग की जाती है, उसी क्षण उसे उसको पा लेनेका अधिकार है।

उत्तरमें ऐसा कहनेका कोई मतलब नहीं होगा कि भारतमें कुछ लोग ऐसे हैं जो 'स्वतन्त्रता' और 'स्वाधीनता' शब्द सुनकर डरते है। मैं स्वीकार करता हूँ कि हममें से कुछ लोगोको, जिसमें स्वतन्त्रता देनेके साथ-साथ भारतसे ब्रिटिश संरक्षण — तथाकथित ब्रिटिश सरक्षण — हटा लिया जाये भारतकी वैसी स्वतन्त्रताकी बात करते भी डर लगता है। लेकिन मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि करोड़ों क्षुधार्त्त मानवो और जिन लोगोंमें राजनीतिक जागृति आ गई है उन लोगोंको ऐसा कोई डर नही है और वे स्वतन्त्रताके लिए जो जरूरी हो वह कीमत चुकानेके लिए तैयार है। लेकिन जबतक कांग्रेसके मौजूदा कार्यकर्त्ता बने हुए हैं और जबतक कांग्रेसकी आस्था अपनी वर्तमान नीतिमें बनी हुई है तबतक इस सम्बन्धमें कुछ निश्चित मर्यादाएँ बनी हुई हैं। अगर भारतकी आजादी दूसरोंकी जान लेकर ही मिलती है — यदि इसे हम शासकोंका खून बहाकर ही पा सकते हैं — तो हम ऐसी आजादी नही चाहते। लेकिन अगर उस आजादीको पानेके लिए राष्ट्रके द्वारा, हम सबके द्वारा कोई बलिदान किया जा सकता है तो आप देखेंगे कि जिस आजादीसे हमें इतने दिनोतक वंचित रखा गया है उसे प्राप्त करनेके लिए हम भारतमे अपने खूनकी नदी बहा देनेमें भी कोई हिचकिचाहट नहीं दिखायेंगे। और, महोदय, जैसा कि आपने याद दिलाया है, मैं यह जानता हूँ कि आपके बीच मैं कोई अजनबी नहीं हूँ, बल्कि मै आपका साथी-सहयोगी रह चुका हूँ। मैं जानता हूँ कि मुझे इस बातका पूरा आश्वासन प्राप्त है कि जहाँतक आपका और जिनका आप प्रतिनिधित्व करते हैं उनका सम्बन्ध है, आप सब हमेशा हमारे साथ रहेंगे और एक बार फिर यह सिद्ध कर देंगे कि आप भारतके मुसीबतके दोस्त और इसलिए सच्चे दोस्त हैं।

आपने मेरा जो इतना स्वागत-सत्कार किया है, उसके लिए मै आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ। मै जानता हूँ कि यह सब मेरा सम्मान नहीं है। आपने यह सम्मान उन सिद्धान्तोको दिया है जो, मुझे आशा है, आपको भी उतने ही प्रिय हैं — बल्कि शायद उससे ज्यादा प्रिय है — जितने कि मुझे हैं। मैं यह आशा करता हूँ कि आपकी शुभकामनाएँ और सहायता प्राप्त रही तो मैंने आज जिन सिद्धान्तोकी घोषणा की है उनसे मैं कभी विचलित नहीं होऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

९१. भाषण : अल्पसंख्यक-समस्या-सम्बन्धी गोष्ठीमें[1]

लन्दन
२ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधीने कांग्रेसकी ओरसे दलित वर्गोंके लिए विशेष प्रतिनिधित्वकी व्यवस्थाका भी विरोध किया। उन्होंने कहा कि मैं तो केवल मुसलमानों और सिखोंके लिए ही एक अनिवार्य बुराईके रूपमें विशेष प्रतिनिधित्वका समर्थन करूँगा। . . .

जान पड़ता है कि श्री गांधीने गोष्ठीको यह चेतावनी दी कि अगर विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया तो सभी अल्पसंख्यक समुदायों और वर्गोंको देना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३-१०-१९३१

९२. भाषण : महिलाओं द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें[2]

लन्दन
२ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधी पौन घंटा देरसे पहुँचे। इस देरीका कारण बताते हुए उन्होंने कहा कि वे अल्पसंख्यकोंकी समस्यापर विचार करनेके लिए बुलाई गई अनौपचारिक बैठकमें भाग ले रहे थे। उन्होंने कहा :

मैंने अपने सिर बहुत बडी जिम्मेदारीका काम ले लिया है, और जिस उद्देश्यको लेकर मैं भारतसे यहाँ आया हूँ, उसीके सम्बन्धमे चल रही बैठकसे बीचमे ही उठकर मै नही आ सकता था।

श्री गांधीने कहा कि भारतमें ७,००,००० गाँव हैं, जो अभावमय परिस्थितियोंमें जीवन व्यतीत करते हैं। कांग्रेसकी एक सबसे अच्छी रचनात्मक प्रवृत्ति यह है कि

१. गोलमेज परिषद्से बाहर परस्पर सलाह-मशविरा करनेके लिए एक अनौपचारिक समझौता समितिकी बैठक बुलाई गई थी। उक्त गोष्ठीसे तात्पर्य इसी समितिसे है। देखिए "अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी कार्यवाहीका अंश", १-१०-१९३१।

२. गांधीजी के जन्म-दिवसके अवसरपर उनके स्वागतार्थ वीमेंस इंडियन एसोसिएशन तथा सरोज नलिनी दत्त मेमोरियल एसोसिएशनकी ओरसे दोपहर बाद सेंट्रल वाई० एम० सी० ए० के किंग जॉर्जेज हॉलमें इस समारोहका आयोजन किया गया था। अध्यक्षता श्रीमती ब्रिजलाल नेहरूने की थी। इस अवसरपर गांधीजी को १६५ पौंडकी एक थैली भी भेंट की गई थी।

वह गाँवोंके बेरोजगार स्त्री-पुरुषोंको, जाति, धर्म या वर्णका भेद-भाव किये बिना रोजगार दे रही है। इस समय शायद ५०,००० स्त्रियोंको घर बैठे ही कताईका काम मिल रहा है। स्त्रियो और पुरुषोको दान-भिक्षा नहीं, बल्कि काम देकर गरीबीको दूर करनेसे बड़ा रचनात्मक कार्य भारतमें और कुछ नहीं है। विशाल ग्रामीण समुदायके पास सालमें छः महीने कोई काम नहीं होता। जब हम इस पुरानी और गहरी बेरोजगारीके विषयमें सोचते हैं तो इंग्लैंडमें मौजूद बेरोजगारी नगण्य जान पड़ती है। मैंने लंकाशायरमें बेरोजगारी देखी है और इस देशमें इस तरहकी बेरोज-गारीसे उत्पन्न होनेवाली कठिनाइयोको मैं कम नहीं बताना चाहता, लेकिन यह अवश्य कहता हूँ कि भारतकी बेरोजगारी सारी दुनियाकी सहानुभूति और सहायताकी पात्र है। मेरा मतलब आर्थिक सहायताके रूपमें व्यक्त की गई सहानुभूतिसे नहीं है। अगर हम भारतमें लोगोंको काम दे सकें तो फिर पैसेकी कोई कमी ही नहीं रह जायेगी, क्योंकि श्रम तो पैसेका ही एक दूसरा रूप है। इसके बाद श्री गांधीने "भारतके पिछले स्वातन्त्र्य संग्राममें भारतकी महिलाओंके योगदान" की प्रशंसा की।[1]

भारतके पिछले सत्याग्रह आन्दोलनके दौरान महिलाओने जिस शक्ति, निष्ठा और वलिदानकी भावनाका परिचय दिया, वह चमत्कारसे कुछ भी कम नही था। यद्यपि मुझे पूरा विश्वास था कि उनमें अपने कर्त्तव्यका अच्छी तरह पालन करनेकी क्षमता है, किन्तु यह नही सोचता था कि उनमे ऐसी जागृत्ति आयेगी जैसी कि आई। इस जागृतिके परिणामस्वरूप देश शायद देखते-ही-देखते एकाएक इतना आगे वढ गया जितना आगे वढनेमे उसे कई वर्ष लगते। अठारह महीने पूर्व भारत जहाँ था, यदि आज वह उससे वहुत आगे वढ गया है तो इसमे महिलाओका योगदान सवसे अधिक रहा है। मुझे यह देखकर आश्चर्य नही होता कि भारतका विशाल महिला-समाज विशेष सरक्षण और विशेष सुविधाओके लिए छीना-झपटीमे नही पडना चाहता। महिलाओने विशेष सुविधाओकी माँग न करके पुरुषोके सामने एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है।

जो कार्य मुझे सौंपा गया है, उसे सम्पादित करनेमे मुझसे कोई चूक न हो, इसके लिए मै उनका आशीर्वाद प्राप्त करना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]
टाइम्स, ३-१०-१९३१ और अमृतबाजार पत्रिका, ४-१०-१९३१

१. आगेका अंश अमृतबाजार पत्रिका से लिया गया है।

९३. दिगम्बर मुनि

दिगम्बर जैन मुनियोके सम्बन्धमे मैंने जो अभिप्राय प्रकट किया था उसके सम्बन्धमे कुछ गलतफहमी पैदा हो गई मालूम होती है। मैंने जो लेख[1] लिखा उसका यह मतलब कभी नही था कि कोई व्यक्तिगत रूपसे कानूनको अपने हाथमे ले और दिगम्बर मुनियोको सताये अथवा उनका अपमान करे। मैंने सुना है कि माडवीमें आजकल तीन दिगम्बर मुनि ठहरे हुए हैं। वे चातुर्मासमे कही दूसरी जगह नही जा सकते। माडवीमे जैनोकी काफी सख्या है। किन्तु मेरे कानोतक बात पहुँची है कि वहाँ कुछ दूसरे लोग मेरे लेखका आधार लेकर उन मुनियोको सताते है। यदि यह सच है तो कहना चाहिए कि मेरे लेखका अनर्थ हो रहा है। मैंने नीतिके प्रश्नकी चर्चा की थी। उससे किसीको, और उसमे भी दिगम्बर मुनियोको, कष्ट पहुँचे, यह मै कैसे चाहूँगा? मै आशा करता हूँ कि कोई व्यक्ति उन्हे या उन-जैसे मुनियोको नही सतायेगा। यह टिप्पणी मै शिमलाकी आखिरी मुलाकातसे पहले लिखना चाहता था, किन्तु दूसरे जरूरी काम और दौड-धूपमे लिखना रह गया, इसका मुझे दु ख है। मै आशा करता हूँ कि मेरे मूल लेखका आधार लेकर किसीने भी कोई उपद्रव न किया होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ४-१०-१९३१

९४. वक्तव्य: खातेदारोंके मामलेके सम्बन्धमे[2]

[लन्दन
५ अक्टूबर, १९३१के पूर्व][3]

वारडोली और बोरसदमे लगान-वसूलीके सम्बन्धमे प्रारम्भसे ही साफ-साफ ऐसा समझा जाता रहा है कि सविनय अवज्ञासे प्रभावित खातेदार उतना ही लगान देगे जितना वे पैसा उधार लिये बिना दे सकते है। खेडाके कलक्टर श्री पेरी और उनके उत्तराधिकारी श्री भद्रपुर और सूरतके कलक्टर श्री कोठावालाके बीच हुई बातचीतमे यह

१. देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ १२०-२२।

२. बारडोली-जाँचमें जिन अनेक मुद्दोंके सम्बन्धमें फैसला होना था, उनमें से एक यह था कि खातेदारोंसे वसूल किया गया लगान क्या उससे अधिक था जितना कि उनसे उस हालतमें वसूल किया जाता जब, इन गाँवोंके सम्बन्धमें भी वही मापदण्ड लागू किया जाता जो दूसरे गाँवोंके सम्बन्धमें लागू किया गया था। देखिए खण्ड ४६ भी।

३. यह ५ अक्टूबर, १९३१की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा था।

बात बार-बार स्पष्ट की गई थी। उनके साथ हुए पत्र-व्यवहारसे इस कथनकी पुष्टि होती है। जहाँतक जाँच-अधिकारीको विचारार्थ सौपे विषयोका सम्बन्ध है, मैंने साफ-साफ यही समझा है कि उसमे जिस मापदण्डका उल्लेख है उसका मतलब पैसा उधार लिये बिना अदायगीकी क्षमतासे ही है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१०-१९३१

९५. भाषण: अल्पसंख्यक-समस्या-सम्बन्धी गोष्ठीमे

लन्दन
५ अक्टूबर, १९३१

अल्पसंख्यकोसे सम्बन्धित समस्यापर विचार करनेके लिए बुलाई गई गोष्ठीकी कार्यवाही दोपहर बाद ३ बजे शुरू हुई और ५.४५ तक भी चल ही रही थी। ऐसा समझा जाता है कि अल्पसंख्यक-समुदायोंकी पूरी मांगें ठीक-ठीक सामने आ जायें, इस खयालसे सभी समुदायोके प्रतिनिधियोने अपनी-अपनी स्थितिकी एक मोटी रूपरेखा प्रस्तुत की और जिन प्रश्नोपर विचार किया गया उनका सम्बन्ध मुख्यतः प्रतिनिधित्वके अनुपात और वर्ग-विशेषको अनुपातसे अधिक सीटें देने और सीटोंके आरक्षणसे था।

चर्चाके दौरान अल्पसंख्यक-समस्याके केन्द्र-बिन्दुके रूपमें हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नके हल किये जानेको बड़ा महत्त्व दिया गया। बहससे एक ऐसी धारणा बनी कि अगर हिन्दू-मुस्लिम समस्याका निबटारा हो जाये तो अन्य अल्पसंख्यक समुदायोकी मांगोंका निबटारा अपने-आप हो जायेगा।

खबर है कि इस अनौपचारिक समितिकी बैठकके अन्तमें, जब विभिन्न अल्पसंख्यक-समुदायोके प्रतिनिधि पृथक् प्रतिनिधित्व और प्रतिनिधित्वके अनुपातके सम्बन्धमें अपने-अपने दावे प्रस्तुत कर चुके, श्री गांधीने साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व और पृथक् प्रतिनिधित्वके खिलाफ अपना दृष्टिकोण पेश किया।

समाचार है, श्री गांधीने कहा कि अगर सभी दावोंको ज्योका-त्यों सही मान लिया जाये तो यह तो अवास्तविकतापूर्ण स्थिति होगी। दावोंके इस ढेरके बीच तो मै अपने-आपको जकड़ा हुआ महसूस करता हूँ। यद्यपि मै कोई बेकार नहीं बैठा रहा हूँ, फिर भी अबतक मुझे प्रकाश नहीं दिखाई दिया है, लेकिन अगर दिखाई दिया तो उसके अनुसार मै काम करूँगा।

खबर है कि श्री गांधीने ऐसा विश्वास प्रकट किया कि वे इस काममें सहायता देनेमें सक्षम हैं, लेकिन साथ ही ऐसा भी सुना गया है कि उन्होंने गोष्ठीमें भाग लेनेवाले लोगोंको इस बातके लिए आमन्त्रित किया कि वे जरूरी समझें तो दूसरा

अध्यक्ष चुन लें, क्योंकि उन्हें यह कहनेमें किसी प्रकारका संकोच नहीं होगा कि उन्होंने कोशिश करके देख लिया और वे असफल रहे हैं।

खबर है कि श्री गांधीने समझौतेकी भावनाकी आवश्यकतापर जोर देते हुए गोष्ठीमें भाग लेनेवाले सदस्योसे कहा कि जरूरत हो तो आप लोग ज्यादा समय भी ले सकते हैं, लेकिन साथ ही उन्होने साफ-साफ कहा कि इस विषयमें अपनी बुनियादी मान्यताओंमें कोई परिवर्त्तन करनेको मैं तैयार नहीं हूँ और यद्यपि कांग्रेस भारतको एक महान् राष्ट्रके रूपमें देखनेकी इच्छुक है, फिर भी वह कभी भी साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वको स्वीकार नहीं करेगी और अगर वह पृथक् प्रतिनिधित्वको मंजूर कर लेती है तो कांग्रेस कांग्रेस नहीं रह जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ६-१०-१९३१

९६. पत्र : ई० डॉल्बी शेल्टनको

६ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्र पाकर बडी प्रसन्नता हुई। उसे पढकर मुझे वेटनरमे आपके घर बिताये आनन्दपूर्ण दिनोका स्मरण हो आया।[1]

मैंने 'वेजिटेरियन न्यूज' नही देखा है।[2] मै तो जन्मसे ही निरामिषाहारी था, लेकिन जवानीके दिनोमे मूर्खतावश कुसगतिमे पड़कर कुछ दिनोके लिए उसका त्याग कर दिया था। लन्दन आने पर जब मैंने श्री सॉल्टका लेख पढा तो पक्का निरामिषाहारी बन गया।

बात स्पष्ट हो गई न?

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७८८९)से।

१. आत्मकथामें ऐसा उल्लेख मिलता है कि एक बार गाधीजी वेंटनरमें किसी अन्नाहारी परिवारमें ठहरे थे। यहाँ तात्पर्य शायद उसीसे है। देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ ५२।

२. गाधीजी यहाँ उक्त पत्रिकाके हालके अंकके सम्बन्धमें कह रहे है। वैसे तो वे उससे परिचित थे और उन्होंने १८९०-९१ में उसमें कुछ लेख भी लिखे थे; देखिए खण्ड १।

९७. भाषण : फ्रेंड्स ऑफ इंडियाकी सभामें[1]

लन्दन
[७ अक्टूबर, १९३१][2]

जहाँतक मानवीय प्रयत्नोका सम्बन्ध है, लगता है, मै विफल हो रहा हूँ। मुझपर ऐसी जिम्मेदारियाँ डाली जा रही है जिन्हे सँभालनेमें मै असमर्थ हूँ। यह काम बहुत कठिन है और हो सकता है, इसके अन्तमे आगे कुछ भी करने को न रह जाये और इन प्रयत्नोका कोई परिणाम न निकले। लेकिन इससे कोई फर्क नही पडता। ईमानदारीसे किया कोई भी सच्चा प्रयत्न कभी विफल नही हुआ है। अपने कार्यके सम्बन्धमें यदि मुझे पस्त करनेवाली जबरदस्त कठिनाइयोका सामना करना पड रहा है तो कांफरेस और कमेटियोके बाहर मुझे आनन्द और उल्लास भी प्राप्त हो रहा है। ऐसा जान पड रहा है कि सामान्य लोग स्थितिको सहज ही समझ लेते है। यद्यपि मै उनके लिए बिलकुल अजनबी हूँ, फिर भी वे मेरी और मेरे उद्देश्यकी सफलताकी कामना करते है। वे जानते है कि मै और मेरा उद्देश्य एक ही है और इसलिए वे मुस्कराते हुए और मेरी सफलताके लिए शुभकामनाएँ करते हुए मुझसे मिलते है। छोटे-बडे सभी ऐसा ही करते है और इसलिए मुझे यह सोचकर राहत मिलती है कि जबतक मेरा उद्देश्य सत्यपरक और उसे प्राप्त करनेके साधन पवित्र और अहिंसामय है तबतक निराशाकी कोई बात नही है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २२-१०-१९३१

९८. भाषण : अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकमें

लन्दन
२ अक्टूबर, १९३१

प्रधान मन्त्रीजी और मित्रो,

मुझे यह घोषणा करते हुए गहरा खेद और उससे भी गहरी लज्जा अनुभव हो रही है कि विभिन्न दलोके प्रतिनिधियोके साथ अनौपचारिक बातचीतमें मै साम्प्रदायिक प्रश्नका कोई सर्वसम्मत समाधान निकालनेमें पूर्णतया असफल रहा हूँ। एक मूल्यवान सप्ताह यो ही बेकार गया, इसके लिए, प्रधान मन्त्रीजी, मै आपसे और अन्य

१. महादेव देसाईके "लन्दन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत।

२. महादेव देसाई कहते है कि यह सभा अल्पसंख्यक-समस्या-समितिकी उस बैठकसे एक दिन पूर्व हुई थी जिसमें गांधीजी ने साम्प्रदायिक समस्याके सम्बन्धमें कोई समझौता करा सकनेमें अपनी विफलताकी घोषणा की थी।

सहयोगियोसे क्षमा चाहता हूँ। मुझे तसल्ली सिर्फ इस बातसे है कि इस बातचीतको चलानेका भार जब मैंने लेना स्वीकार किया था तब भी मै यह जानता था कि सफलताकी बहुत आशा नही है। इससे भी अधिक तसल्ली इस बातसे है कि किसी समाधानपर पहुँचनेके लिए मैंने अपने जानते कोई भी कोशिश उठा नही रखी

लेकिन यह कहना कि बातचीतका असफल रहना हमारे लिए बहुत ही लज्जाकी बात है, पूरी सचाई नही है। असफलताके कारण भारतीय प्रतिनिधि-मण्डलके गठनमे ही निहित थे। हममे से प्राय· सभी, हम जिन दलो या समुदायोके प्रतिनिधि समझे जाते है, उनके निर्वाचित प्रतिनिधि नही है। हम यहाँ सरकार द्वारा मनोनीत होकर आये है, और जिनकी उपस्थिति एक सर्वसम्मत समाधानके लिए अत्यन्त आवश्यक थी, वे भी यहाँ आपको नही मिलेगे। इसके अलावा, आपकी यदि अनुमति हो तो मै यह भी कहूँ कि अल्पसख्यक-समितिकी बैठकके लिए यह समय उपयुक्त नही था। इसमे वास्तविकताकी भावनाका अभाव है, क्योकि हमे यह नही मालूम कि हमे क्या मिलनेवाला है। यदि हमे निश्चित रूपसे यह मालूम होता कि जो-कुछ हम चाहते है वह हमे मिलनेवाला है तो हम उसे इस अपराधपूर्ण वाक्-कलहमे उलझकर गँवा देनेसे पहले पचास बार सोचते। लेकिन यदि हमसे यह कहा जाये कि उसका मिलना साम्प्रदायिक गुत्थीका एक सर्वसम्मत समाधान निकालनेकी इस प्रतिनिधि-मण्डलकी योग्यतापर निर्भर करेगा तो परिणाम जो-कुछ हुआ वही होगा। वह समाधान स्वराज्यके सविधानका शिखर हो सकता है, उसका आधार नही हो सकता, यदि और किसी कारण नही तो केवल इस कारण कि विदेशी आधिपत्यने हमारे मतभेदोको अगर पैदा नही किया तो दृढ तो किया ही है। मुझे इसमे रत्ती-भर भी सन्देह नही है कि साम्प्रदायिक मतभेदोका हिम-शैल स्वतन्त्रताके सूर्यकी गर्मीसे गल जायेगा।

इसलिए, मै यह सुझानेकी धृष्टता करता हूँ कि अल्पसख्यक-समिति अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर दी जाये और सविधानके मूल सिद्धान्त शीघ्रातिशीघ्र तैयार किये जाये। इस बीच साम्प्रदायिक समस्याका वास्तविक समाधान खोजनेका अनौपचारिक कार्य जारी रहना चाहिए और जारी रहे। अलबत्ता वह सविधानकी रचनाकी प्रगतिमे बाधक नही बनना चाहिए और उसे बाधक नही बनने देना चाहिए। हमे अपना ध्यान उधरसे हटाकर, जो ढाँचा हमे खडा करना है, उसके मुख्य भागपर केन्द्रित करना चाहिए।

मुझे समितिको यह बतानेकी आवश्यकता नही है कि मेरी असफलताका अर्थ एक सर्वसम्मत समाधानकी समस्त आशाका अन्त नही है। मेरी असफलताका अर्थ मेरी पूर्ण पराजय भी नही है। इस तरहका कोई शब्द मेरे भाषा-कोशमे है ही नही। मेरी इस स्वीकृतिका अर्थ केवल उस विशेष प्रयासकी असफलता है जिसके लिए मैंने एक सप्ताहका समय माँगा था और आपने उदारतापूर्वक दे दिया था।

मेरा विचार इस असफलताको सफलताकी सीढीकी तरह इस्तेमाल करनेका है, और मै आप सबसे भी ऐसा ही करनेकी प्रार्थना करता हूँ। लेकिन अगर गोलमेज परिषद्का कार्य समाप्त होनेतक भी समझौतेकी हमारी सारी कोशिश बेकार ही

रहे, तो म यह सुझाव रखूँगा कि प्रस्तावित संविधानमें एक धारा इस आशयकी जोड दी जाये कि एक न्यायाधिकरण नियुक्त किया जायेगा, जो सभी दावोंकी जाँच करेगा और उन सभी मुद्दोंपर, जो सुलझ नहीं पाये हैं, अपना अन्तिम निर्णय देगा।

न ही इस समितिको यह सोचना चाहिए कि अनौपचारिक बातचीत चलानेके लिए जो समय दिया गया था वह बिलकुल बेकार गया है। आपको यह जानकर खुशी होगी कि बहुत-से मित्र, जो इस प्रतिनिधि-मण्डलके सदस्य नहीं हैं, इस प्रश्नपर ध्यान दे रहे हैं। इनमें मैं सर जॉफरे कॉर्बेटका उल्लेख करना चाहूँगा। उन्होंने पंजाबके पुनर्विभाजनकी एक योजना प्रस्तुत की है। यद्यपि वह स्वीकृत नहीं हुई है, पर, मेरे खयालमें, वह इस लायक है कि उसका अच्छी तरह अध्ययन किया जाये। मैं सर जॉफरेसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि वे कृपया उसे विस्तृतरूपमें प्रस्तुत कर सदस्योंमें वितरित कर दें। हमारे सिख सहयोगियोंने एक और योजना प्रस्तुत की है। वह भी कमसे-कम इस लायक तो है ही कि उसका अध्ययन किया जाये। सर ह्यूबर्ट कार ने कल रात एक मौलिक और अनोखा सुझाव रखा कि पंजाबमें विधान-मण्डलके दो सदन स्थापित किये जायें — निम्न सदन मुसलमानोंके दावेको पूरा करनेके लिए और ऊपरी सदन सिखोंके दावेको पूरा या लगभग पूरा करनेके लिए। यद्यपि मेरा दो सदनोंवाले विधान-मण्डलमें विश्वास नहीं है, फिर भी सर ह्यूबर्टके सुझावने मुझे बहुत आकर्षित किया है, और मैं उनसे प्रार्थना करूँगा कि जिस उत्साहके साथ उन्होंने अनौपचारिक विचार-विमर्शको सुना है और उसमें योग दिया है — जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ — उसी उत्साहके साथ वे सुझावको और आगे बढ़ायें।

अन्तमें, क्योंकि इस विचार-विमर्शमें मेरी उपस्थितिका एकमात्र कारण यह है कि मैं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका प्रतिनिधित्व करता हूँ, इसलिए उसकी स्थिति मुझे स्पष्ट कर देनी चाहिए। ऊपरसे देखनेमें स्थिति यद्यपि कुछ और ही लगती है, विशेषकर इंग्लैंडमें, पर कांग्रेसका यह दावा है कि वह पूरे राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करती है, और उन लाखों मूक लोगोंका तो बिलकुल निश्चितरूपसे प्रतिनिधित्व करती है जिनमें असंख्य अस्पृश्य शामिल हैं, जो अपेक्षाकृत अधिक दलित और उत्पीड़ित हैं और जिनमें एक तरहसे पिछड़ी जातियोंके नामसे जाने जानेवाले वर्ग भी शामिल हैं, जो और भी अधिक अभागे और उपेक्षित हैं।

कांग्रेसकी स्थिति संक्षेपमें यह है। इस विषयपर कांग्रेसका प्रस्ताव मैं आपके आगे पढ़ता हूँ।

> कांग्रेसने, आरम्भसे ही, विशुद्ध राष्ट्रीयताको अपना आदर्श रखा है, उसकी प्राप्तिमें वह चाहे कितनी ही असफल क्यों न रही हो। साम्प्रदायिक बाधाओंको तोड़नेके लिए वह प्रयत्न करती रही है। निम्नलिखित लाहौर प्रस्ताव राष्ट्रीयताकी ओर उसकी प्रगतिका चरम बिन्दु था:
>
> "नेहरू रिपोर्टकी अवधि बीत जानेके कारण वह समाप्त हो गई है, इसलिए साम्प्रदायिक प्रश्नोंके सम्बन्धमें कांग्रेसकी नीति घोषित करना आवश्यक है:
>
> कांग्रेसका यह विश्वास है कि स्वतन्त्र भारतमें साम्प्रदायिक प्रश्न केवल

राष्ट्रीय नीतियोंसे ही सुलझाये जा सकते हैं। परन्तु क्योंकि नेहरू रिपोर्टमें सुझाये गये साम्प्रदायिक प्रश्नोके समाधानपर सिखोंने खासतौरपर और मुसलमानों व अन्य अल्पसंख्यकोंने आमतौरपर, असन्तोष प्रकट किया है, इसलिए यह सम्मेलन सिखों, मुसलमानों और अन्य अल्पसंख्यकोंको यह विश्वास दिलाता है कि भावी संविधानमें उन प्रश्नोंका कोई भी ऐसा समाधान, जो सम्बन्धित पक्षोंको पूर्ण सन्तोष प्रदान न करता हो, कांग्रेसको स्वीकार नहीं होगा।"

अतः कांग्रेसके लिए साम्प्रदायिक समस्याका कोई साम्प्रदायिक समाधान पेश करना सम्भव नहीं है। लेकिन राष्ट्रके इतिहासकी इस नाजुक घड़ीमें ऐसा महसूस किया गया कि कार्य-समितिको देशके आगे स्वीकृतिके लिए कोई ऐसा समाधान रखना चाहिए, जो चाहे देखनेमें साम्प्रदायिक लगता हो, पर यथा-सम्भव बहुत-कुछ राष्ट्रीय हो और सम्बन्धित समुदायोंको आमतौरपर स्वीकार हो। इसलिए कार्य-समितिने, पूर्ण और मुक्त विचार-विमर्शके बाद, सर्वसम्मतिसे निम्नलिखित योजना पास की है :

१. (क) संविधानके मूल अधिकारोंसे सम्बन्धित अनुच्छेदमें सम्बद्ध समुदायोंके लिए उनकी संस्कृतियों, भाषाओं, लिपियों, शिक्षा, अपनी इच्छानुसार किसी भी धर्मको मानने और उसका आचरण करने तथा धर्मादायोंकी रक्षाकी गारन्टी रहेगी;

(ख) वैयक्तिक कानूनोंकी रक्षाके लिए संविधानमें विशिष्ट व्यवस्थाएँ रहेंगी;

(ग) विभिन्न प्रान्तोंमें अल्पसंख्यक समुदायोंके राजनीतिक और अन्य अधिकारोंकी रक्षा संघीय सरकारके अधिकार-क्षेत्रका विषय होगी।

२. सभी बालिग पुरुषों और स्त्रियोंको मताधिकार प्राप्त होगा।

और फिर इसपर एक टिप्पणी है :

कार्य-समिति कांग्रेसके कराची प्रस्ताव द्वारा बालिग मताधिकारके लिए प्रतिबद्ध है और किसी और तरहके मताधिकारका स्वागत नहीं कर सकती। फिर भी, कुछ क्षेत्रोंमें मौजूद आशंकाओंको ध्यानमें रखते हुए, समिति यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि मताधिकार, हर हालतमें, एक-समान होगा और इतना व्यापक होगा कि प्रत्येक समुदायका आबादीमें जो अनुपात है वह निर्वाचक-सूचीमें प्रतिबिम्बित होगा।

३. (क) भारतके भावी संविधानमें संयुक्त चुनाव पद्धति प्रतिनिधित्वका आधार होगी; (ख) हिन्दुओंके लिए सिन्धमें, मुसलमानोंके लिए असममें, सिखोंके लिए पंजाब और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें और हिन्दुओं व मुसलमानोंके लिए हर उस प्रान्तमें, जहाँ उनकी संख्या आबादीके २५ प्रतिशत भागसे कम है, संघीय और प्रान्तीय विधानमण्डलोंमें, आबादीके आधारपर, सीटें सुरक्षित रहेंगी और उन्हें अतिरिक्त सीटोंके लिए चुनाव लड़नेका अधिकार होगा।

४. नियुक्तियाँ निर्दलीय लोकसेवा आयोगों द्वारा होंगी, जो न्यूनतम योग्यताएँ निर्धारित करेंगे और जो लोकसेवाकी कार्य-कुशलताका और सभी समुदायोंको देशकी लोकसेवाओंमें उचित हिस्सा देनेके लिए बराबरीका अवसर देनेके सिद्धान्तका समुचित खयाल रखेंगे।

५. संघीय और प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलोंके निर्माणमें अल्पसंख्यक समुदायोंके हित रूढ़ि द्वारा मान्य होंगे। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त और बलूचिस्तानमें सरकार और प्रशासनका रूप अन्य प्रान्तों-जैसा ही होगा।

६. सिन्धके लोग यदि एक पृथक् प्रान्तके वित्तीय भारको वहन करनेको तैयार होंगे तो सिन्धको एक पृथक् प्रान्त बना दिया जायेगा।

७. देशका भावी संविधान संघीय होगा। आगे और जाँचसे यदि यह चीज भारतके सर्वोच्च हितोंके विरुद्ध सिद्ध नहीं हुई, तो अवशिष्ट अधिकार संघकी इकाइयोंके पास रहेंगे।

कार्य-समितिने पूर्वोक्त योजना खालिस साम्प्रदायिकता और खालिस राष्ट्रीयतापर आधारित सुझावोंके बीच एक समझौतेके तौरपर स्वीकार की है। कार्य-समितिको जहाँ एक ओर यह आशा है कि पूरा राष्ट्र इस योजनाका समर्थन करेगा, वहाँ दूसरी ओर वह उन लोगोंको, जो चरम-पंथी विचारोंके हैं और इसे स्वीकार नहीं कर सकते, यह विश्वास दिलाती है कि यदि कोई अन्य योजना सभी सम्बन्धित पक्षोंको मान्य होगी तो समिति उसे खुशीसे, बिना-किसी शर्तके स्वीकार कर लेगी, क्योंकि वह लाहौर प्रस्ताव द्वारा इस बातके लिए वचनबद्ध है।[1]

यह है कांग्रेसका प्रस्ताव। परन्तु यदि कोई राष्ट्रीय समाधान सम्भव न हो और कांग्रेसकी योजना किसीको स्वीकार न हो तो किसी ऐसी अन्य युक्तियुक्त योजनाका समर्थन करना, जो सम्बन्धित पक्षोंको स्वीकार हो, मेरे लिए निषिद्ध नही है। इसलिए कांग्रेसकी स्थिति इस प्रश्नपर सम्बन्धित पक्षोंके विचारोंको यथासम्भव ज्यादासे-ज्यादा मान लेनेकी रही है। जहाँ वह सहायता नही दे सकती वहाँ वह रोड़े नही अटकायेगी। यह बतानेकी कोई जरूरत नही है कि कांग्रेस गैरसरकारी पच-फैसलेकी किसी भी योजनाका पूरे दिलसे समर्थन करेगी। यह कहा गया लगता है कि मैं विधानमंडलमें अस्पृश्योंके प्रतिनिधित्वके विरुद्ध हूँ। यह सचाईका मजाक है। जो-कुछ मैंने कहा है, और जिसे फिर दोहराना जरूरी है, वह यह है कि मैं उनके विशेष प्रतिनिधित्वके विरुद्ध हूँ। मुझे यकीन है कि इससे उनकी कोई भलाई नही हो सकती, और बहुत हानि हो सकती है। परन्तु कांग्रेस बालिग मताधिकारके लिए वचनबद्ध है। इसलिए, उनमें से लाखोंके नाम मतदाता-सूचीमें आ सकते है। अस्पृश्यता क्योंकि तेजीसे समाप्त हो रही है, इसलिए यह सोचा नहीं जा सकता कि इन मतदाताओं द्वारा मनोनीत व्यक्तियोंका और लोग बहिष्कार कर सकते है। लेकिन इन लोगोंको,

१. देखिए खण्ड ४७, पृष्ठ १५७-८।

विधानमंडलोमे उनके प्रतिनिधियोका चुनाव हो, उससे कही ज्यादा आवश्यकता सामाजिक और धार्मिक अत्याचारसे सुरक्षाकी है। रूढियोने, जो अकसर कानूनसे भी अधिक शक्तिशाली होती है, इन्हे इतना नीचे गिरा दिया है कि हर विचारशील हिन्दूको उसपर लज्जा और पश्चात्ताप अनुभव होना चाहिए। इसलिए मै एक ऐसा बहुत ही कठोर कानून बनाना चाहूँगा जो तथाकथित उच्च जातियो द्वारा मेरे इन देशवासियोपर होनेवाले सभी तरहके विशेष अत्याचारको अपराध करार देगा। हमे ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिए कि हिन्दुओका विवेक जाग रहा है, और अस्पृश्यता शीघ्र ही हमारे पापपूर्ण अतीतका एक अवशेष-मात्र रह जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, पृष्ठ ५३०-१

९९. लॉर्ड इर्विनको लिखे पत्रका अंश

८ अक्टूबर, १९३१

आपने मेरे प्रथम प्रयत्नोकी विफलताका समाचार दुःखी मनसे देखा होगा। लेकिन मै हताश नही हूँ। प्रयत्न जारी रखूँगा। आपको दिया अपना यह वचन फिर दोहराता हूँ कि हमारे बीच जिन महत्त्वपूर्ण प्रश्नोपर बातचीत हुई थी उनके सम्बन्धमे निर्णय लेनेसे पहले आपसे मुलाकातका समय लेकर अपनी कठिनाइयाँ आपके सामने अवश्य रखूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हैलिफैक्स, पृष्ठ ३१७

१००. भाषण : ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंडकी मिशनरी संस्थाओंके सम्मेलनमे[1]

लन्दन
८ अक्टूबर, १९३१

सभा कुछ क्षणके मौनसे आरम्भ हुई। रेवरेंड डब्ल्यू० पैटन ने, जो अध्यक्ष थे, गांधीजी का स्वागत किया और मिशनरी संस्थाओकी ओरसे इस बातकी सराहना की कि गांधीजी कामके जबरदस्त दबावके बीच भी उनसे मिलनेके लिए समय निकाल पाये हैं।

गांधीजी ने कहा कि उन्हे वहाँ आकर और ऐसे लोगोसे मिलकर, जो उपस्थित श्रोताओंसे कहीं अधिकका प्रतिनिधित्व करते हैं, प्रसन्नता हुई है और फिर वे बोले :

१. सम्मेलन चर्च मिशनरी हाउस, ६ सैलिसबरी स्क्वेयरमें हुआ था और रेवरेंड डब्ल्यू० पैटन उसके अध्यक्ष थे। सभा अन्तरंग थी और उसकी जो रिपोर्ट समाचारपत्रोंके लिए जारी की गई उसमें केवल इतना ही कहा गया था कि इसमें मैत्रीपूर्ण विचार-विमर्श हुआ है।

मैं आपके आगे आज इस तरह उपस्थित हो रहा हूँ जैसे कोई कैदी अदालतके आगे उपस्थित होता है। पर मेरे जो जेलर है वे दोस्त है। हमारे बीच कोई दीवार नही होनी चाहिए और किसी भी पक्षको अपने मनमे कोई शिकायत नही रखनी चाहिए। युवावस्थासे ही दुनिया-भरके मिशनरियोके साथ मेरे बहुत ही मैत्री-पूर्ण सम्बन्ध रहे है और दक्षिण आफ्रिकामे तो मेरा कुछ उच्च कोटिके ईसाई मिशनरियोके साथ घनिष्ठ सम्पर्क था। मैं बहुत ही नियमित रूपसे आपके गिरजाघरोमें जाता रहा हूँ और अन्तरग प्रार्थना-सभाओमे भी भाग लेता आया हूँ, और जो विचार मैं अब व्यक्त करनेवाला हूँ वे मैंने तब भी व्यक्त किये थे।

आपके और मेरे बीच कुछ अस्थायी गलतफहमी पैदा हो गई थी। अखबारवाले जब सार्वजनिक नेताओके मामलोकी टोह लेते है तो, कभी-कभी दुर्भावनावश और कभी अनजाने ही, वे उन्हे गलत रूपमे पेश करते है।

जिम्मेदार लोगोको मेरे बहुत ही कटु अनुभवसे यह सीख लेना चाहिए कि रिपोर्टर जो कहे उसपर आमतौरपर विश्वास नही करना चाहिए। मिशनोके प्रति मेरे रुखके बारेमे हालमे ही जो रिपोर्ट निकली थी वह अनजानमे हुई गलतबयानी थी, क्योकि उसके स्रोत और उस रिपोर्टरका मुझे पता चल गया। मै उस समय थका हुआ था और बहुत तडके सैरको निकला था। रिपोर्टर मेरे साथ चल रहा था और मुझपर सवालोकी बौछार कर रहा था। वह कोई नोट्स नही ले रहा था और हम बहुत तरहके विषयोपर बातचीत कर रहे थे। जब मैंने आलोचना और व्यग्योक्तियाँ देखी तो मैं तुरन्त समझ गया कि उस रिपोर्टरने, यद्यपि वह मित्र था, जो-कुछ लिखा है, मुझे उसका फल भोगना होगा।

एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता और तीस सालका अनुभव रखनेवाले एक गैर-पेशेवर पत्रकारकी हैसियतसे मैं यह बात कह रहा हूँ। सच, पूरा सच और केवल सच कहनेमे जो कठिनाई है, और अपने विरोधियोके साथ न्याय करनेमे जो भारी कठिनाई है, और उससे भी अधिक तथ्योको ढगसे रखनेमे जो कठिनाई है, उसे मैं जानता हूँ। रिपोर्टर मेरे बारेमे जो-कुछ कहते है, उसपर आप आमतौरपर यकीन मत कीजिए। उनके बयानोके बारेमे यदि आपको कोई सन्देह हो तो आप बयान मेरे पास भेजिए और उनके बारेमे मुझसे पूछिए। मेरे पास भारतके सभी भागोसे और इग्लैड और अमेरिकासे पत्र आये है, जिनमे मुझसे पूछा गया है कि क्या यह सच है कि मैं समस्त मिशनरी गति-विधिपर और खास कर धर्म-परिवर्तनपर प्रतिबन्ध लगाना चाहूँगा। मेरा जो आशय था वह इससे बिलकुल उलटा था।

मैं किसी भी तरहकी जबरदस्तीका समर्थन नही कर सकता। मिशनरी गति-विधिपर प्रतिबन्ध लगाने या दूसरोके धार्मिक विश्वासोमे हस्तक्षेप करनेके लिए मैं कोई कानून चाहता हूँ, इस तरहकी बातकी कल्पना तक नही की जा सकती।

लोगोको भाषण और लेखो द्वारा, उनकी बुद्धि और भावनाको उकसाकर, और उन्हे यह समझाकर कि उनके पूर्वजोका धर्म बुरा है, अपने धर्ममे दीक्षित करनेसे, मेरे खयालमें, मानव-सेवाकी सम्भावनाएँ सीमित हो जाती है। मेरा यह

विश्वास है कि ससारके सभी बडे धर्म, कमोबेश, सच्चे है और वे हमारे पास भगवान्से आये है। परन्तु क्योकि वे हमारे पास मनुष्यके माध्यमसे आये है, इसलिए उनमे दोष मिल गये है। यह विश्वास रखनेके कारण, मेरी यह भी धारणा है कि कोई भी धर्म सर्वथा पूर्ण नही है। भगवान्के यहाँ तो कुछ भी अपूर्ण नही है, परन्तु जैसे ही वह मनुष्यके माध्यमसे आता है, उसमे बराबर परिवर्तन और विकार आने लगता है। सत्यका अन्वेषक इस सम्भावनाको अत्यन्त विनम्रतापूर्वक स्वीकार कर लेता है। मैने देखा है कि बोला गया शब्द सत्यकी प्रगतिको रोकता है, क्योकि उसमे विचार सीमित हो जाता है। कोई भी व्यक्ति विचारको शब्दोमे पूर्णतम अभिव्यक्ति नही दे सका है। विचार अपनी प्रकृतिसे ही असीम और अनन्त है।

प्रार्थना करनेवालेका यह विश्वास होता है कि ईश्वर रहस्यात्मक ढगसे काम करता है, और वह यह चाहता है कि जिस सत्यको उसने स्वय देखा है वह समस्त ससारको प्राप्त हो। वह औरोमे बँट जाये, इसके लिए वह प्रार्थना करता है। और वह सत्य आगे बढता है; उसके पख लग जाते है।

मै एक उपमा दूँ, जिसे देते मै कभी थकता नही हूँ, और आशा है, आप मुझे इसके लिए क्षमा कर देगे। धर्म गुलावकी तरह है। वह अपनी सुगध छोडता है, जो हमे चुम्बककी तरह आर्कपिक करती है और हम बरबस उसकी ओर खिच जाते है। धार्मिक ससर्गकी सुगध गुलावकी सुगधसे अधिक तीव्र होती है। धर्म-परिवर्तनके सम्बन्धमे इसीलिए मेरा ऐसा विचार है। जब हमे यह सन्तोष हो जाये कि हमने ईश्वरको पा लिया है और उसकी वाणी हमने सुनी है, तो हममे उस रहस्यको बाँटनेकी इच्छा होना अच्छा और उपयुक्त ही है। परन्तु जिस तरह ईश्वरकी वाणी हमारे पास रहस्यात्मक ढगसे आई है. हमारी यह रहस्यात्मक प्राप्ति भी हमारे पाससे दूसरोकी ओर उसी तरह जानी चाहिए।

मिशनरी कार्यके इस अशकी जहाँ मै आलोचना करता हूँ, वहाँ मै स्वेच्छासे यह भी स्वीकार करता हूँ कि मिशनोने परोक्ष रूपसे भारतकी भलाई की है। इसमे जरा भी सन्देह नही है। यदि मुझपर ईसाई धर्मका प्रभाव न पडा होता तो अपने सामाजिक कार्योमे से कुछको तो मैने कभी हाथ लगाया ही न होता। मै खुशीके साथ यह कहता हूँ कि बाल-विवाहके प्रति मेरी तीव्र घृणा ईसाई प्रभावके कारण ही है। मै ऐसे बहुत-से लोगोके सम्पर्कमे आया हूँ जो ईसाई मिशनरियोके शानदार नमूने थे। मतभेदोके बावजूद, मै उनकी योग्यतासे प्रभावित हुए बिना नही रहता था। इसीलिए आपको मेरे आश्रममे बडी उम्रकी अविवाहित लडकियाँ मिलेगी, यद्यपि उन्हे इच्छा होने पर विवाह करनेकी स्वतन्त्रता है। मै विश्वविद्यालयोकी शिक्षा प्राप्त करनेवाली महिलाओकी नही, बल्कि उन लडकियोकी बात कर रहा हूँ जो अशिक्षित परिवारोकी है।

ईसाई धर्मके बारेमे कुछ भी जाननेसे पहले ही मै छुआछूतका दुश्मन था। मेरी माँ, जिसकी मै पूजा करता था, जब अपने वस्त्रोको अछूतोके स्पर्शसे बचाती थी तो मुझे उसका वह कार्य समझमे नही आता था। इस बुराईपर ईसाई क्षेत्रोके जबरदस्त आक्षेपसे मेरी भावनाओमे और तीव्रता आ गई।

आदर्श मिशनरीका यदि मैं कोई नमूना बताना चाहूँ तो मैं सी० एफ० एन्ड्रचूजका उदाहरण रखूँगा। यदि वे यहाँ होते तो जो-कुछ मैं कहना चाहता हूँ उसे सुनकर वे शरमा जाते। मेरा यह विश्वास है कि ससारके अन्य मुख्य धर्मोके प्रति सहिष्णुताका रुख अपनानेके कारण वे आज पहलेसे कही अधिक सच्चे, उदार और अच्छे है। यद्यपि हम बहुत ही गहरे मित्र है, पर वे मुझसे कभी धर्म-परिवर्तन और लोगोको ईसाई बनानेकी बात नही करते है। मेरे बहुत-से मित्र है, परन्तु चार्ली एन्ड्रचूजकी और मेरी मित्रता खास तौरपर गहरी है।

पहली बार जब मैंने उन्हे डर्बनमे देखा तो पहली भेटमे ही हममे प्रेम हो गया। यदि आप मुझसे यह पूछे कि क्या मुझे उनमे अपनी मूलस्थितिके बारेमे कोई ढील या उदासीनता नजर आई है, तो मैं कहूँगा कि वे अपनी निष्ठामे और दूसरोके प्रति अपने प्रेममे पहलेसे अधिक दृढ हो गये है। मेरा ऐसा खयाल है कि जहाँ वे पहले हिन्दू धर्ममे दोष देखा करते थे, वहाँ आज शायद वह उन्ही दोषोको एक और परिवेशमे देखते है, और इसीलिए हिन्दुओके अधिक निकट आ गये है। वे आज सैकडो-हजारो हिदुओके जीवन-सुधारका एक शक्तिशाली हेतु बने हुए है।

दक्षिण आफ्रिकाके उनके भारतीय मित्रोने मुझे लिखा कि वे तो 'दीनबन्धु' है। वे भगियो, अछूतोतकके प्रिय हो गये है। वे उनके पास स्वाभाविक रूपमे गये और उनके आचरणको उन्होने बिलकुल सीधे ढगसे प्रभावित किया, और आज वे लोग उनसे बहुत ही प्रेम करते है। यदि मैं उनके साथ इस बातकी होड करूँ कि दक्षिण आफ्रिकामे इन लोगोपर हममे से किसका प्रभाव अधिक है, तो वे मुझे परास्त नही करेगे — यह मैं निश्चयके साथ नही कह सकता।

मैं आपके सामने अपने विचार साफ-साफ रख देना चाहता हूँ और आपसे भी ऐसा ही करनेकी अपेक्षा रखता हूँ। मुझे आशा है कि आप अन्तमे यह कह सकेंगे, 'उस दिन शामको हमने उस बूढेकी बातें सुनी और उनमे कुछ भी ऐसा नही था जो सच्चा और हार्दिक न हो।'

गांधीजी के भाषणके बाद, और प्रश्न पूछे जानेसे पहले, श्री पैटनने वह प्रस्ताव पढ़कर सुनाया जो १९२४ में दिल्लीके एकता सम्मेलनमें धार्मिक स्वतन्त्रतापर पास किया गया था।[1]

> **इस सम्मेलनका यह दृढ़ मत है कि अन्तःकरण और धर्मकी अधिकसे-अधिक स्वतन्त्रता अत्यावश्यक है, और सम्मेलन किसी भी उपासना-स्थानके, चाहे वह किसी भी धर्मका क्यो न हो, अपवित्रीकरणकी निन्दा करता है, किसी भी व्यक्तिको कोई धर्म अपनाने या उसमें लौटनेपर किसी भी तरह सताने या दण्डित करनेकी निन्दा करता है, और लोगोंको जबरदस्ती अपने धर्ममें दीक्षित करने या दूसरोंके अधिकारोको कुचलते हुए अपने धार्मिक आचारको**

१. यह उस समयकी बात है जब गाधीजी दिल्लीमें, सितम्बर १९२४ में, साम्प्रदायिक एकताके लिए अनशन कर रहे थे। देखिए खण्ड २५।

जबरदस्ती लागू करनेके हर प्रयासकी निन्दा करता है। यह सम्मेलन भारतके विभिन्न सम्प्रदायोंमें और भी अच्छे सम्बन्ध विकसित करनेके आम सिद्धान्तोंको, जो पूर्वोक्त प्रस्तावमें रखे गये हैं, प्रयोगमें लानेकी दृष्टिसे और सभी धर्मों, विश्वासों और धार्मिक आचारोंके प्रति पूर्ण सहिष्णुता पैदा करनेकी दृष्टिसे, अपना यह मत व्यक्त करता है:

कि प्रत्येक व्यक्ति या समुदायको, दूसरोंकी भावनाओंका समुचित आदर करते हुए और उनके अधिकारोंमें हस्तक्षेप किये बिना, अपने विश्वासोंको रखने और व्यक्त करने और किसी भी धार्मिक आचारका पालन करनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता होगी। इस तरहके व्यक्ति या समुदायको, किसी भी हालतमें, किसी अन्य धर्मके संस्थापकों, पूज्य व्यक्तियों या सिद्धान्तोंका अपमान नहीं करना चाहिए।

कि प्रत्येक व्यक्तिको किसी भी धर्मका अनुगमन करने और जब इच्छा हो तब उसे छोड़ देनेकी स्वतन्त्रता है और इस तरहके धर्म-परिवर्तनके कारण जिस धर्मको उसने छोड़ा है उसके अनुयायी उसे कोई दण्ड नहीं दे सकेंगे और उसपर कोई अत्याचार नहीं कर सकेंगे।

कि प्रत्येक व्यक्ति या समुदायको यह स्वतन्त्रता है कि वह तर्कसे या समझा-बुझाकर किसीका धर्म-परिवर्तन कर सकता है, या उसे उसके पुराने धर्ममें फिरसे ला सकता है। पर उसे बल-प्रयोग, धोखाधड़ी या अन्य अनुचित साधनोंसे, जैसे कि भौतिक प्रलोभन देकर, ऐसा करने या इसे रोकनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। १६ वर्षसे कम आयुवालोंका, यदि उनके माता-पिता या संरक्षक धर्म-परिवर्तन न कर रहे हों तो, धर्म-परिवर्तन नहीं करना चाहिए। यदि अपने माता-पिताके या संरक्षकके बिना, और अपने लोगोंसे बिछुड़ा हुआ १६ वर्षसे कम आयुका कोई व्यक्ति किसी अन्य धर्मवालेको मुसीबतमें पड़ा मिल जाये तो उसे तुरन्त उसके अपने धर्मके किसी व्यक्तिको सौंप देना चाहिए। धर्म-परिवर्तन या पुराने धर्ममें फिरसे लौटनेकी कोई भी घटना गुप्त नहीं रहनी चाहिए।

मिस्टर पैटनने बताया कि गांधीजी यद्यपि उस समय अनशन कर रहे थे, फिर भी उन्होंने इन प्रस्तावोंका मसविदा तैयार करनेमें मुख्य भाग लिया था। उन्होंने कहा, मुझे आशा है कि ये प्रस्ताव गांधीजी के विचारोंका अब भी प्रतिनिधित्व करते हैं।

इस बातको गांधीजी ने स्पष्टरूपसे स्वीकार किया।

लन्दन मिशनरी सोसाइटीके रेवरेड गॉडफ्रे फिलिप्सने कहा:

मैं चाहता हूँ कि ईसाई मिशनोंको लेकर अछूतोंमें इस समय जो-कुछ चल रहा है, उसके बारेमें हम एक-दूसरेको अच्छी तरह समझ लें। दुनियामें ऐसे स्थान

है जहाँ 'गुलाबकी सुगंध' नहीं है। अपने अनुभवसे हमने यह देखा है कि असली अछूत, यानी ऐसे अछूत वर्गके वे लोग, जो समाजसे सर्वथा बहिष्कृत होते है, जब बिलकुल ही दीन-हीन और असहाय अवस्थामें होते हैं तब हम, उनके अन्तःकरणमें कोई ऐसी चीज रोपे बिना जो जीवनदायी शक्ति रखती हो, कोई स्थायी कार्य नहीं कर सकते। और हमारा अनुभव हमें बताता है कि वह चीज है—ईसाके माध्यमसे ईश्वरके साथ नाता जोड़ना। हम उनतक उनकी पूरी बिरादरीके जरिये ही पहुँच सकते हैं। भूखे जन-साधारणके लिए महात्माजी की जो भावनाएँ हैं उन्हें हम स्वीकार करते हैं। छुआछूतको मिटानेकी उनकी जो आकांक्षा है उसमें भी हम उनके साथ है। पर, हम यह भी महसूस करते हैं कि अछूतके भीतर हमें कोई चीज ऐसी भी रखनी चाहिए जो उसके भीतर सदा काम करे। क्या हम एक-दूसरेको और अच्छी तरह समझ नहीं सकते? कभी-कभी जब हम अपने कार्यके लिए जमीन लेनेकी कोशिश करते हैं, तो महात्माजी के अनुयायी ही हमें रोकते हैं। महात्माजी चाहे यह न चाहते हो कि हम लोगोका धर्म-परिवर्तन करे, पर धर्म-परिवर्तनमें हमारा जो विश्वास है उसका कारण यह तथ्य है कि हमें सचमुच कोई और मार्ग दिखाई नहीं देता।

गाधीजी: श्री फिलिप्सने जो प्रश्न रखा उसके लिए मै उनका आदर करता हूँ। कानून या बल-प्रयोगसे मै धर्म-परिवर्तनके कार्यको रोकना नही चाहता हूँ। पर, मै श्री फिलिप्स और अन्य मिशनरियोको यह जरूर समझाना चाहता हूँ कि मेरी अपनी विनम्र रायमे यह एक गलत तरीका है। उन्होने गुलाबकी मेरी उपमाका प्रयोग किया है। उनका कहना है कि मिशनरीको मानो अछूतोके पास गुलाब ले जाना होता है। मै तो उसे एक चलता-फिरता गुलाब कहना चाहूँगा, और उसे कुछ और बननेकी जरूरत ही नहीं है। उसे ईश्वरकी चर्चा करनेकी जरूरत नहीं है, क्योकि ये लोग ईश्वरको उसमे और उसके आचरणमे अकित देख ही सकेगे, जैसे कि यदि किसी अछूतके घरके बाहर गुलाब रोप दिया जाये तो वह चुपचाप अपनी सुगध फैलायेगा। गुलाबको बोलनेकी जरूरत नही होगी। यदि श्री फिलिप्स यह सोचते है कि अछूतोकी सहायताको जानेसे पहले उन्हे अछूतोके पास ईश्वरका सन्देश, या बाइबिलका सन्देश ले जाना चाहिए, तो मुझ-जैसे आदमीके पास तो उन्हे वह सन्देश और अधिक ले जाना चाहिए। हजारो अछूतोसे मिलने-जुलने और इस तरहका बहुत काम करनेके बाद ही मै इस चीजपर जोर दे रहा हूँ। उनकी [मिशनरियोकी] भाषा वे लोग नही समझते। मै क्योकि उनकी भाषा बोलता हूँ, इसलिए मुझे वे ज्यादा अच्छी तरह समझते है। मै उनसे उनकी अधोदशाके बारेमे बात करता हूँ, ईश्वरके बारेमे मै बात नही करता। मै ऐसा महसूस करता हूँ कि इसी ढगसे मै उनके पास ईश्वरका सन्देश ले जाता हूँ, जैसे कि किसी भूखे आदमीको जो रोटी मै देता हूँ उसीके द्वारा मै उसके पास ईश्वरका सन्देश ले जाता हूँ। मुझे कोई स्वार्थ सिद्ध नही करना है। मुझे उसका शोषण नही करना है। मै उसे बस रोटी दे देता हूँ। यदि मै ईश्वरको अछूतके पास ले जाना चाहता हूँ, तो मुझे उसे उसी रूपमें ले

जाना चाहिए जिस रूपमें उसे उसकी जरूरत है। मैं अछूतोंके पास जाता हूँ और कहता हूँ, 'जिस ईश्वरकी आपको जरूरत है उसके सिवा और कौन-सा ईश्वर मैं आपको दे सकता हूँ।'

गांधीजी ने फिर 'अछूत' जातिके एक बूढ़ेकी दयनीय दशाका उदाहरण दिया, जिसे किसीके सामने आनेतककी इजाजत नहीं थी। गांधीजी ने कहा :

उसे एक मान-पत्र भेंट करनेके लिए मेरे पास लाया गया था। वह हर चीजसे डरता था, जैसे कि किसी देहातीको लन्दनकी रेलपेलके बीच खड़ा कर दिया गया हो। जो मान-पत्र उसे देना था वह उसके हाथसे गिर पड़ा। पर मैंने उसे उठा लिया और उसे उसको पकड़नेका सही ढंग बताया। अपने रवैयेसे मैं उसका विश्वास प्राप्त करनेमें सफल हो गया, और मुझे लगा कि ऐसा करके मैंने उसे ईश्वरका एक सन्देश दिया है। यदि मैं एक ईसाई मिशनरी होता (और ईसाई मिशनरियोंके हृदयमें मैं प्रवेश कर सकता हूँ) तो उन लोगोंके बीच मैं उसी तरह जाता जिस तरह कि एल्विन[1] गये हैं। वे आजकल अछूतोंमें काम करनेकी योजना बना रहे हैं। वे अछूतोंके बीच एक ईसाई आश्रम स्थापित करेंगे, जिसमें मिट्टीकी एक झोपड़ीके अन्दर उनके अपने लिए और उनके साथियोंके लिए एक गिरजा होगा। वे अपने जीवनको ईश्वरके निर्देशानुसार चलाते हुए, केवल उनके बीच रहना चाहते हैं।

बैप्टिस्ट मिशनरी सोसाइटीके रेवरेंड सी० ई० विल्सनने कहा :

मेरे विचारसे धार्मिक जीवनकी व्याख्या एक शिष्यके जीवनसे की जा सकती है। हम सब शिक्षार्थी हैं। सच्चा धर्म-प्रचारक अपनेको एक शिष्य मानता है, जिसपर अपने प्रभुके आदेशको पूरा करने और दूसरोंको शिष्य बननेके लिए राजी करनेका दायित्व होता है। मुझे लगता है कि श्री गांधी धार्मिक शिक्षाको नापसन्द करते हैं, उसकी लगभग निन्दा करते हैं। वे ऐसा कहते मालूम होते हैं कि हमें लोगोंके बीच जाना चाहिए और रहना चाहिए, पर उन्हें शिष्य बनाने या उनमें नई आस्था जगानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। यह चीज मुझे श्री गांधीके पूरे जीवनका खण्डन करती लगती है। क्या श्री गांधीका आशय यह है कि यद्यपि हम ईसा मसीहको ज्ञात विभूतियोंमें सर्वोच्च मानते हैं, तो भी हमारा भारत या किसी जगह जाना और लोगोंको शिष्य बनानेकी कोशिश करना, ईसाके परम सत्यकी शिक्षा देना ठीक नहीं है? गांधीजी आज हमें उपदेश ही तो देते रहे हैं। क्या उनका आशय सचमुच समस्त उपदेशके बहिष्कारसे है?

गांधीजी . भाषा अर्थके सम्प्रेषणमें असफल रहती है, बोला गया शब्द विचारको सीमित कर देता है। लिखने और बोलने दोनोंके लिए गुंजाइश है, यद्यपि मुझे लगता है कि यदि मैं कम लिखूँ और बोलूँ तो वह प्राय ज्यादा अच्छा रहेगा। पर मैं किसीको अपने धर्ममें दीक्षित करनेकी कोशिश नहीं करता हूँ। अपनी मान्यताओंमें मेरी निष्ठा इतनी दृढ़ तो अवश्य है कि मैं उनके लिए अपने

१. वेरियर एल्विन।

प्राण भी दे दूँ, लेकिन इतनी नही कि मै अन्य लोगोसे भी उन्ही वातोमे विश्वास करनेको कह सकूँ। मै यह जानता हूँ कि ईश्वर मेरे लिए क्या चाहता है। पर मै इतना अहकारी नही हूँ जो यह मानूँ कि मै यह भी जानता हूँ कि ईश्वर औरोके लिए क्या चाहता है। धार्मिक सत्य हमारे पास रहस्यात्मक ढगसे पहुँचता है। पॉल और दूसरोके जीवनमे जो क्रान्ति आई वह किस तरह अचानक ही आ गई थी! धर्म एक ऐसा मामला है जिसे ईश्वरपर छोड देना चाहिए। मै यह नही कहता कि 'उपदेश मत दो'; [मै इतना ही कहता हूँ कि] मनुष्यको उस चरम प्रकाश तक ले जाओ जो उसका अपना धर्म उसे देता है। मै यह जानता हूँ कि वाइविलका सन्देश जिनके लिए स्वय अपने जीवन-जितना ही पवित्र है, उनसे एक विलकुल अनजान व्यक्तिका यह सव कहना कितनी धृष्टता है। पर मै आपसे एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे वात कर रहा हूँ जिसे ईश्वरकी तलाश है—ठीक उसी तरह जिस तरह कि आपको भी है।

एक वार मेरे कुछ मित्रोने सोचा कि यदि मेरी श्री एफ० वी० मेयरके साथ वातचीत हो तो मै धर्म-परिवर्तन कर लूँगा। उनका यह खयाल था कि ईसाके सन्देशको स्वीकार किये विना मै अपूर्ण हूँ, और इसलिए वे मुझे श्री मेयरके सम्पर्कमे लाये। उन्होने मुझसे पूछा. "क्या आपको शान्ति प्राप्त हो गई है?" मैने जव कहा "हाँ," तो वे वोले, "मुझे आपसे अव कुछ नही कहना है।" धर्म एक व्यक्तिगत मामला है, और मै किसी दूसरे आदमीसे हिन्दू या पारसी वननेके लिए नही कहूँगा। ऐसा करके मै अपने विश्वासके प्रतिकूल आचरण करूँगा। मै आपके आगे अपना अनुभव रख रहा हूँ और आपको, साथी कार्यकर्त्ता होनेके नाते, यह दिखानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि यदि आप मेरे दृष्टिकोणसे चीजोको देख सके तो आपका कार्य अधिकाधिक फूले-फलेगा। आपमे आत्मत्यागकी आश्चर्यजनक भावना है, आप महान् सगठनकर्त्ता है, आप भले आदमी है। आपके लिए सेवाके अवसरोको मै वढाना चाहता हूँ। मै आपके और भी निकट आकर काम करना चाहता हूँ। पर मै यह नही चाहता कि आप भारतसे उसका धर्म वदलवायें।[1]

कलकत्ताके ऑक्सफोर्ड मिशनके रेवरेड डब्ल्यू० एच० जी० होम्सने कहा:

दक्षिण भारतमें मैं कुछ भारतीय छात्रोके साथ एक पगडंडीसे जा रहा था जो एक खेतमें से गुजरती थी। जब हम भारतीयोकी एक टोलीके पास पहुँचे तो वे लोग एकदम कोई ४० गज दूर, खेतके बीचमें चले गये। मैंने उन भारतीयोके पास जाकर पूछा कि आपने ऐसा क्यों किया। उन्होने ऐसा इसलिए किया था कि उन्हे डर था कि हम ब्राह्मण हैं और इसलिए उन्हें वहाँसे हट जाना चाहिए। मैंने तब उनसे कहा, आपको ऐसा करनेकी जरूरत नहीं थी, क्योकि हम ईसाई हैं और आपको अपना भाई मानते हैं, स्वर्गमें एक पिता है, जिसे आप हमारे-जितने ही प्रिय हैं। उन्होने जवाब दिया, "ये शब्द मधुर हैं, क्या आप हमारे गाँव आने और वहाँ एक

१. देखिए खण्ड ४६, पृष्ठ २७-९।

स्कूल खोलनेकी कृपा करेंगे।" क्या हमारे लिए यह ठीक नहीं होगा कि हम उन्हें उस परम पिताके बारेमें उपदेश दें जिसके विषयमें मैंने उनसे कहा था कि वह उनसे उतना ही प्रेम करता है जितना कि हमसे? और क्या श्री गांधी उन्हें इस बातके लिए प्रोत्साहित करेंगे कि वे हमें इन लोगोंकी शिक्षाके लिए जमीन लेने दें और उसपर इमारत आदि बनाने दें?

गाधीजी . हाँ, मै ऐसा करूँगा, पर एक शर्तपर कि आप उन्हे उस धर्मके द्वारा, जो उनका है, उनके पूर्वजोके धर्मकी शिक्षा दे। उनसे यह मत कहिए: 'उस पिताको जाननेका एकमात्र मार्ग केवल हमारा मार्ग है।' ईश्वर अछूतोका पिता है, हम सबका पिता है। पर वह पिता आपके आगे एक और वेशमे प्रकट होता है। अछूतको वह पिता उस रूपमे दिखाइए जिस रूपमे वह उसकी परिस्थितियोमे प्रकट होता है। वैसे यदि आपको यह विश्वास हो कि असली पिताको हम बिलकुल जानते ही नही है, तो और बात है। तब, नि सन्देह, यह कहना आपका कर्त्तव्य हो जाता है कि 'जिसे तुम पिता समझते हो वह पिता है ही नही। तुम जिस बातपर विश्वास करते हो वह शैतानकी बात है।' मुझे कभी-कभी ऐसे पत्र मिलते है जिनमे यह कहा गया होता है कि मै अच्छा आदमी हूँ, पर शैतानका काम कर रहा हूँ। मुझे ऐसा महसूस होता है कि मै भी उसी पिताकी पूजा करता हूँ, यद्यपि एक भिन्न रूपमे करता हूँ। 'गॉड' के रूपमे उसकी पूजा करना मेरे लिए उचित नही होगा। वह नाम मुझपर कोई प्रभाव नहीं डालता, पर जब मै उसे रामके रूपमे सोचता हूँ तो वह मुझे पुलकित कर देता है। ईश्वरको गॉडके रूपमे सोचनेसे मुझमे वह भावावेश नही आता जो रामके नामसे आता है। उसमे कितनी कविता है। मै जानता हूँ कि मेरे पूर्वजोने उसे रामके रूपमे ही जाना है। वे रामके द्वारा ही ऊपर उठे है, और मै जब रामका नाम लेता हूँ, तो उसी शक्तिसे ऊपर उठता हूँ। मेरे लिए 'गॉड' नामका प्रयोग, जैसा कि वह बाइबिलमे प्रयुक्त हुआ है, सम्भव नही होगा। वह अनुभवके इतना प्रतिकूल है कि मै उसकी ओर आकर्षित नहीं हूँगा। उसके द्वारा मेरा सत्यकी ओर उठना मुझे सम्भव नही लगता। इसलिए मेरी समूची आत्मा इस शिक्षाको अस्वीकार करती है कि राम मेरा ईश्वर नही है। अछूतोके पास जाइए, उनके लिए स्कूल खोलिए, उन्हे सब-कुछ दीजिए, पर अपने इस विचारको मनमे रखकर नहीं। यदि कोई मुझे यह समझा सके कि परमेश्वरतक एक विशेष मार्गसे ही पहुँचा जा सकता है, तो मै एक क्षणके लिए भी झिझकूँगा नही, बल्कि उसको पानेके लिए मै दुनियामे कहीं भी जा सकूँगा। लेकिन तब मुझे अपने जीवनको नये सिरेसे ढालना होगा। मेरा अपने सिवा कोई शिष्य नही है, और वह शिष्य जबरदस्त है। मेरे अनुगामी है, पर वे शिष्य है, ऐसा मै नही मानता। मुझे शान्तिकी तलाश है, और जो जीवन मै जीता हूँ उसीमे से मुझे ईश्वरको दिखाना है। मै अपनेको अपने बधु-मानवोके लिए समर्पित करता हूँ। शान्तिका और सुखका भी यही रहस्य है।

१. देखिए खण्ड ४०, पृष्ठ ६१-५।

सम्मेलनके एक सदस्यने दो प्रश्न पूछे। पहला यह कि क्या गांधीजी ने डाक्टर मॉटसे अपनी भेंटमें यह कहा था कि ईसाई मिशनोंका प्रभाव सर्वथा बुरा रहा है।[1] गांधीजी ने कहा कि उनका इस कथनसे कोई सम्बन्ध नहीं है, और यह बात फिर दोहराई कि उन्हें गलत पेश किया गया है। प्रश्नकर्त्ताने इसके बाद ईसाइयोंको दिये गये इस आदेशका उल्लेख किया कि सारी दुनियामें जाओ और प्रत्येक प्राणीको बाइबिलका उपदेश दो। इसका उत्तर गांधीजी ने यह दिया कि यदि प्रश्नकर्त्ताको यह विश्वास है कि ये बाइबिलके ईश्वर-प्रेरित शब्द हैं, तो उसे निश्चयके साथ उनका पालन करना चाहिए — एक गैर-ईसाईसे वे इसकी व्याख्या क्यों चाहते हैं?

श्री पैटनने सभी उपस्थित लोगोंकी ओरसे गांधीजी को हृदयसे इस बातके लिए धन्यवाद दिया कि वे उनके आगे निश्छलता और सौहार्दपूर्ण ढंगसे बोले। . . .

चर्च मिशनरी सोसाइटीके रेवरेंड डब्ल्यू० विल्सन कैशने श्री गांधीकी सभाकी ओरसे धन्यवाद दिया।

[अंग्रेजीसे]

ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंडकी मिशनरी संस्थाओंके सम्मेलनके रेकार्ड से। सौजन्य : रेवरेंड सी० बी० फर्थ

१०१. भेंट : मदाम मॉन्टेसरीसे

[९ अक्टूबर, १९३१ या उसके पूर्व][1]

गांधीजी ने उनका अभिवादन करते हुए कहा :

हम एक ही परिवारके सदस्य हैं।

मदाम मॉन्टेसरी बोलीं : "मैं आपके लिए बच्चोंका अभिवादन लाई हूँ।"

गांधीजी : यदि आपके बच्चे हैं तो मेरे भी बच्चे हैं। भारतमें मित्रगण मुझसे आपका अनुकरण करनेके लिए कहते हैं। मैं उनसे कहता हूँ, नहीं, मुझे आपका अनुकरण नहीं करना चाहिए, बल्कि आपको और आपकी प्रणालीमें जो मूल सत्य है उसे आत्मसात् करना चाहिए।

मदाम मॉन्टेसरी : मैं अपने बच्चोंसे गांधीजी के हृदयको आत्मसात् करनेके लिए कहती हूँ। मैं जानती हूँ कि वहाँ, विश्वके आपवाले भागमें मेरे लिए यहाँसे अधिक गहरी भावनाएँ हैं।

गांधीजी : हाँ, यूरोपसे बाहर, भारतमें आपके सबसे अधिक अनुगामी हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-१०-१९३१

१. यह भेंट-वार्ता महादेव देसाईके ९ अक्टूबरके "लन्दन लेटर" (लन्दनका पत्र) से ली गई है। यह भेंट अनुमानतः ७ अक्टूबरको हुई होगी, देखिए "पत्र : जे० थिओडोर हैरिसको", पृष्ठ २९-९-१९३१। बुधवार ७ अक्टूबरको था

१०२. भेंट : शॉ डेसमंडको[1]

लन्दन

[९ अक्टूबर, १९३१ या उसके पूर्व]

उन्होंने बच्चेकी शिक्षाके प्रश्नपर बातचीत की। गांधीजी ने आत्मसंयमका महत्त्व और वयस्क आदमीकी तरह बच्चेके जीवनमें भी वह कितनी महान् भूमिका अदा करता है — इसका अपना जीवन-भरका अमूल्य अनुभव उन्हें बताया, और उन्होंने बहुत ही एकाग्रतासे वह-सब सुना। उन्होंने पूछा, "आजकी इस विश्रृंखलताका कारण क्या है?" गांधीजीने कहा :

शोषण, शक्तिशाली राष्ट्रो द्वारा दुर्बल राष्ट्रोका तो मै नही कहूँगा, पर बधु राष्ट्रो द्वारा बन्धु-राष्ट्रोका शोषण। और मशीनपर मेरी आपत्तिका मूल आधार यह तथ्य है कि इन राष्ट्रोको दूसरोका शोषण करनेकी सामर्थ्य मशीन ही देती है। अपने-आपमे वह एक जड वस्तु है और उसे अच्छे या बुरे किसी भी उद्देश्यमे लगाया जा सकता है। पर, जैसा कि हम जानते है, उसे आसानीसे बुरे उद्देश्यमे लगाया जा सकता है।

श्री डेसमंडने पूछा : "आपके खयालमें क्या यहाँ इन सब लोगोंको आवश्यकतासे अधिक खाना नहीं मिलता है? हम इन्हें कम खानेकी शिक्षा कैसे दे सकते है?" गांधीजी ने कहा :

परिस्थितियाँ शिक्षा देगी। इन्हे जल्दी ही एक दिन यह समझना होगा कि इग्लैंड अपनी पुरानी खुशहालीपर अब लौटनेवाला नही है। इन्हे यह समझ लेना चाहिए कि बहुत-से राष्ट्र इस लूटमे इसके साथ हिस्सा बाँटनेकी घातमे है। जैसे ही उन्होने ऐसा किया, ये फिर जितनी चादर होगी उतने ही पाँव फैलायेगे।

"इसलिए यह संकट", श्री डेसमंड अपनी बातपर पूरा जोर देते हुए बोले, "निःसन्देह, एक बड़ी चीज है।"

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-१०-१९३१

१. महादेव देसाईके ९ अक्टूबरके "लंडन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत है।

१०३. पत्र : अर्नेस्ट एस्डेलको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
९ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। यदि सोमवार, इसी १९ तारीखको ८ बजेका समय आपके लिए सुविधाजनक रहे, तो क्लबके सदस्योंके आगे भाषण देना मुझे सहर्ष स्वीकार है।

हृदयसे आपका,

श्री अर्नेस्ट एस्डेल,
कास्टीट्यूशनल क्लब
नॉर्दम्बरलैंड एवेन्यू, डब्ल्यू० सी०-२

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८०४५)से।

१०४. पत्र : महमूदुल्लाको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
९ अक्टूबर, १९३१

आपका पत्र मिला। आप अकारण क्षुब्ध हैं। मैं आपको अपना विश्वासपात्र नही मानना चाहता, ऐसी कोई बात नही है।[2] बात केवल यह है कि जिसे विश्वास-पात्रको ही दिया जा सके, ऐसा कुछ गुह्य मेरे पास था ही नही। मेरे पास अपना कोई रहस्य नही हैं, हाँ, कभी-कभी मुझे दूसरोके रहस्य अपनेतक रखने होते हैं। पर मुझसे आपके सम्बन्धोपर उसका कोई असर नही पड सकता।

१. श्री अर्नेस्ट एस्डेलने ७ अक्टूबरके अपने पत्रमें गांधीजी से 'लन्दनके सबसे महत्त्वपूर्ण राजनीतिक क्लब', कास्टीट्यूशनल क्लबमें भाषण देनेकी प्रार्थना की थी। अर्नेस्ट एस्डेलके इस पत्रसे ज्ञात होता है कि इससे पहले भी गांधीजी ने उन्हें एक पत्र लिखा था, लेकिन उक्त पत्र उपलब्ध नहीं है।

२. श्री महमूदुल्लाने ७ अक्टूबरके अपने पत्रमें कहा था कि वे 'हिन्दू-मुस्लिम विवादको निपटानेमें' हाथ बँटाना चाहते हैं, पर 'आपका विश्वासपात्र होनेका दावा न कर सकने' के कारण इसमें अड़चन आती है।

यदि कोई बातचीत चलानी थी तो वह श्रीमती नायडू चला रही थी। इसलिए ऐसा कुछ नही था जो मै वस्तुत. कर सकता। आप मुझे कुछ सूचना देनेके लिए आये, और मै इसके लिए आपका आभारी हूँ।

जहाँतक हिन्दू प्रतिनिधियोका सवाल है, मै शिकायत को सचमुच समझ नही सका। मै हर उस आदमीसे मिला हूँ जो मुझसे मिलना चाहता था। जहाँ परामर्शकी इच्छा प्रकट की गई, वहाँ मैंने इस तरहके परामर्शमे भाग लिया। जहाँतक नेतृत्वका सवाल है, मै अपनेको किसी एक वर्गका नेतृत्व करनेके योग्य नही समझता, और आम नेतृत्वके लिए मेरे पास कोई आधार नही है।

हृदयसे आपका,

श्री महमूदुल्ला

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८०४६)से।

१०५. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
९ अक्टूबर, १९३१

प्रिय सत्यमूर्ति,

आपका पत्र मिला, जिसमे आपने हमारी माँगोकी व्याप्तिके बारेमे — भारतीय रियासतोकी प्रजा, प्रतिरक्षा, विदेशी मामलो और वित्तके बारेमे — मुझे अपने विचार लिखे है। पता नही, इन विषयोपर हम कब पहुँचेगे, पर इन चार मुद्दोपर जो-कुछ आपने कहा है, बेशक मै उसका ध्यान रखूंगा।

हृदयसे आपका,

श्री एस० सत्यमूर्ति
२/१८, कार स्ट्रीट
ट्रिप्लीकेन,
मद्रास

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८०४७)से।

१०६. टिप्पणी : सी० लेवेलीन हॉवेलके पत्रपर

९ अक्टूबर, १९३१

असम्भव।[1]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १७७१९) से।

१०७. भाषण : संघ-संरचना समितिके समक्ष

लन्दन
९ अक्टूबर, १९३१

श्रीमान् लॉर्ड चासलर, मैं जानता हूँ कि इस समितिकी कार्यवाहीके स्थगित होनेमे कुछ हदतक मैं हेतु रहा हूँ; और उस दुर्भाग्यपूर्ण स्थितिमे होनेके कारण मुझे अब यह कहते हुए कि हम एक मिनट भी बरबाद नही कर सकते,[2] सकोच महसूस हो रहा है। जैसा कि आपने बहुत ही ठीक फरमाया है, हम यहाँ, कई हजार मील दूर, काम करनेके लिए आये है, मनोरजनके लिए या छुट्टियाँ बिताने नही आये है। इसलिए निश्चय ही मैं यह कहूँगा कि यदि यह किसी तरह सम्भव हो तो हमे एक मिनटकी भी प्रतीक्षा किये बिना सघ-सरचना समितिका काम जारी रखना चाहिए। यदि हमारे मनमे, व्यक्तिगत या सामूहिक रूपसे, कही यह विचार छिपा है कि चाहे हम सघ सरचना समितिकी कार्यवाहीमे भाग लेते रहे, पर जबतक अल्पसख्यकोका प्रश्न सुलझता नहीं है, हम वस्तुतः अपने कार्यमें आगे बढे बिना प्रतीक्षा ही करते रहेगे — यदि सचमुच हमारे मनमे यह भावना है जिसे व्यक्त करनेकी हममे इच्छा या हिम्मत नही है — तो मै यह सुझाव दूंगा कि हम इस भावनाको व्यक्त करे और एक निश्चयपर पहुँचे।

मैंने खुद कल अपना यह सुचिंतित मत व्यक्त करनेकी कोशिश की थी कि इस समितिके कार्यसे उसका कोई वैसा अनिवार्य सम्बन्ध नही है। अल्पसख्यकोका प्रश्न यदि सबसे महत्त्वपूर्ण नही तो एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रश्न तो है ही। मेरे अपने मनमे उसका सदा एक स्वाभाविक स्थान रहा है। पर, वह दूसरे उतने ही महत्त्वपूर्ण प्रश्नोपर कभी भी हावी नहीं हुआ है। और अब, सात दिनतक इस प्रश्नपर इतनी मेहनत करनेके बाद, मेरे आगे यह चीज पहलेसे भी अधिक साफ

१. यह टिप्पणी हॉवेलके १४ सितम्बरके पत्रके ऊपर लिखी थी। पत्रमें गाधीजी से "मेरी पुस्तकमें से लिये गये कुछ पृष्ठोंपर हस्ताक्षर" करने का अनुरोध किया गया था।

२. अध्यक्षने यह सुझाव रखा था कि सभा मगलवार १३, अक्टूबरतकके लिए स्थगित कर दी जाये।

हो गई है कि जबतक बड़े बुनियादी प्रश्न सुलझ नही जाते, अल्पसंख्यकोंका प्रश्न शायद सुलझेगा ही नही। अपनी इस धारणाके कारण मैं यह चाहूँगा कि इस समितिकी कार्यवाहीमे वास्तविकता लाई जाये और कई मुद्दोपर, जिनका आप अपनी आश्चर्य-जनक कर्मशीलताके साथ कई दिनो और सप्ताहोंसे हमारे सामने बराबर ढेर लगाते जा रहे है, हमे अब भाषण देनेके बजाय शीघ्र ही निर्णयपर पहुँचना चाहिए। इसलिए अगर मुझे अपनी राय साफ-साफ बतानेकी इजाजत हो तो मैं कहूँगा कि यदि हम महसूस करते है — जैसा कि मै करता हूँ — कि इस समितिके सामने मौजूद सवालोपर हमे उनके गुण-दोषके आधारपर ही विचार करना है, और अल्प-संख्यकोकी समस्याके सन्दर्भमे उनका क्या होगा, इसकी कोई फिक्र अभी नही करनी है, तो फिर हमे सारी छुट्टियाँ छोड़ देनी चाहिए, और अगर हम सचमुच इस कामको निबटाना चाहते है तो मै जानता हूँ कि हमे इसे सकुशल निबटा देनेकी शक्ति भी प्राप्त होगी।

परन्तु अन्तमे, मै यह बात फिर दोहराता हूँ कि यदि हमारे मनमे कही यह भाव है कि हमे कामको जारी रखते हुए भी करना नही चाहिए, तो मै समझता हूँ कि यह भारतके साथ न्याय नही होगा, यह हमारे साथ न्याय नहीं होगा और यह ब्रिटिश मन्त्रियोके साथ भी न्याय नही होगा। इसलिए मै बहुत ही तीव्रताके साथ यह महसूस करता हूँ कि हमे किसी छुट्टीकी जरूरत नही है। हमारा प्रत्येक मिनट वस्तुतः किसी और बातके लिए नही, इसी कार्यके लिए निर्धारित है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ १६०

१०८. भेंट : एच० एन० ब्रेल्सफोर्डको[1]

लन्दन

[११ अक्टूबर, १९३१ या उसके पूर्व][2]

गांधीजी : यदि ये ठेठ किसानोके[3] चित्र बनाना चाहती है तो इन्हे गुजरात नही जाना चाहिए। गुजरात अपेक्षाकृत खुशहाल है। इन्हे उडीसा जाना चाहिए। वहाँके किसानोके बस खाल और हड्डियाँ है, और कुछ नही है। बैलतक ककाल-मात्र है। आप उनकी पसलियाँ गिन सकते है। इन्हें निश्चय ही उड़ीसा जाना

१. स्वयं ब्रेल्सफोर्ड द्वारा दिये गये भेंटके विवरणसे उद्धृत। यहाँ जिस कलाकारका जिक्र है वह ब्रेल्सफोर्डकी मित्र थी।

२. इसके प्रकाशित होनेके ठीक एक दिन पहले, १२ अक्टूबरको, मौन-दिवस था। इसलिए अनुमान है कि यह भेंट ११ अक्टूबरको, या उससे कुछ पूर्व हुई होगी।

३. ब्रेल्सफोर्डने कहा था कि उक्त कलाकार भारतीय किसानोंके जीवनके चित्र बनानेको उत्सुक थीं।

चाहिए। एक कलाकार दुनियाको यह दिखाकर कि ये किसान किस तरह रहते है, सहायता कर सकता है।

कलाकार: आपको उन्हे मानव-जातिका वाकई एक बढ़िया नमूना बनानेमें कितना समय लगेगा? क्या मलेरिया इसमें एक बड़ी बाधा नहीं है?

गाधीजी. मेलरियाको खत्म करना बिलकुल आसान है। सिर्फ अच्छी खुराककी जरूरत है। प्रचुर दूध और फलसे उसका इलाज हो सकता है।

कलाकार: मेरा खयाल है, आपको उन्हे इस खुराकके बारेमें शिक्षा देनी होगी।

गाधीजी. उन्हे शिक्षाकी जरूरत नही है। उन्हे क्या चाहिए, यह वे खूब अच्छी तरह जानते हैं। गरीबी ही सारी मुसीबत है। हम भारतमे फल उगा सकते है, फिर भी किसान उन्हे कभी नही खाते। आप उन्हे इग्लैंडमे नही उगा सकते, फिर भी आपके गरीब लोगोको फल खानेको मिलते है। यहाँ आसपासकी गदी बस्तियोमें लोग उस तरहका जीवन विताते है जैसा कि भारतमे मध्यमवर्गके लोगोका है। जब मैं सोचता हूँ कि हमारे किसान कैसी गरीबीमे रह रहे है तो मुझे इस बातसे शर्म महसूस होती है कि मेरे पास खानेको फल है और पीनेको फलोका रस है। जबतक यह अष्टभुज दानव हमारा खून चूस रहा है, सत्त्व खीच रहा है और हमपर बराबर दबाव डाले हुए है, हम कुछ कर नही सकते। अरे, वे तो हमारे नमक तकपर जो जीवनके लिए हवा और पानीसे कुछ ही कम आवश्यक है, कर लगाते हैं। वह हवा और पानीकी तरह मुफ्त होना चाहिए। मैं जानता हूँ कि इग्लैंडमे आप लोग जल-कर देते हैं। पर यह नमक-कर किसी भी महसूलसे बुरा है। यह एक एकाधिकार है। इस तरहकी प्राकृतिक और जरूरी चीजपर — जो हवा और पानीके बाद सबसे जरूरी है — कर लगानेकी बात कितनी अजीब है। प्रकृति हमे वह देती है, पर हम उसका उपयोग नही कर सकते। समुद्रके पास नमक फैला है, पर उसे वे हमे इकट्ठा नही करने देते।

एच० एन० ब्रे०: नमक-कर खत्म करनेके बाद आप राजस्वकी कमीको पूरा करनेके लिए क्या विकल्प रखेंगे?

गाधीजी · नमककी बात तो एक छोटी बात है। वाकई जिससे फर्क पड़ता है, वह है ताडी और अफीमका उत्पादन-शुल्क। राजस्वका वस्तुत वह एक बडा भाग है। जबतक हम सेनाका खर्च कम न कर सके, उस कमीको पूरा करनेका कोई उपाय नही है।

यही वह अष्टभुज दानव है जो हमे जकडे हुए है। यह जबरदस्त खर्च जरूर खत्म होना चाहिए।

एच० एन० ब्रे०: मेरे खयालसे यह गोलमेज परिषद्‌में मुख्य प्रश्न होगा।

गाधीजी बेशक होगा, हम इससे मुँह नही चुरा सकते।

कलाकार: तो क्या आप गोरी सेनाको हटा देना चाहते हैं?

गाधीजी: निश्चय ही मै उसे हटा देना चाहता हूँ।

कलाकार : क्या आप प्रशासन-अधिकारियोंको भी सैनिकोंमें शामिल करते हैं?

गाधीजी : वे उस बोझका एक हिस्सा है जो हमे ढोना पडता है; उनसे शासन बहुत महँगा हो जाता है। वे जो मोटी-मोटी तनख्वाहे लेते है, उनका कोई औचित्य नही है। जिस वर्गके वे है उस वर्गके लोग अपने देश [इग्लैण्ड]मे जैसा जीवन जीते है, वे उससे बहुत अच्छा जीवन बिताते है।

एच० एन० ब्रे० : इन ऊँची तनख्वाहोंकी आम सफाईमें क्या कुछ भी नहीं कहा जा सकता? ये प्रशासन-अधिकारी परदेशमें और बहुत ही कष्टकर जलवायुमें रह रहे हैं।

गाधीजी . अब वह हालत नही है। सचारकी बेहतर सुविधाओंसे सारी स्थिति बदल गई है। सप्ताहमे दो बार डाक आती है, देशमे अपने परिवारके साथ वे सम्पर्क रख सकते है, और गर्मियोमे वे पहाडोपर चले जाते है। यदि वे हमारे बीच भारतीयोकी तरह रहे तो हम उनका स्वागत करेगे। पर वे अपनेको अलग-अलग रखते है। वे अपनेको अपनी छावनियोमे बन्द रखते है। इस नाममे ही एक सैनिक गध है और ये छावनियाँ वस्तुत अब भी फौजी कानूनके अधीन है। उन इलाकोके किसी भी मकानपर, सेनाके सिर्फ यह कहनेपर कि उसे उसकी जरूरत है, कब्जा किया जा सकता है। हमारे एक मित्रके साथ यही हुआ, यद्यपि उसने वह मकान अपने रहनेके लिए बनवाया था।

एच० एन० ब्रे० : सेनाके बारेमें दो अलग-अलग प्रश्न हैं, या कहिए कि एक ही प्रश्न है, जिसकी दो शाखाएँ हैं। एक सिद्धान्तका, सेनापर भारतके नियन्त्रणका, प्रश्न है; और एक आर्थिक प्रश्न है, जो सेनाको घटानेसे सुलझ जायेगा। क्या आप दोनोंपर जोर देते हैं?

गाधीजी · मुझे इसका खयाल रखना होगा कि अपनी सेनापर मेरा नियन्त्रण रहे।

एच० एन० ब्रे० : जबतक ऐसा न हो, कोई राष्ट्र पूरी तरह राष्ट्र नहीं है।

गाधीजी . वे मुझसे कहते है कि मुझे पठानोसे अपनी रक्षाके लिए यह सेना जरूर अपने पास रखनी चाहिए। मुझे उसका सरक्षण नही चाहिए। मै अपना रास्ता चुननेकी स्वतन्त्रता चाहता हूँ। मै उनसे लडनेका निश्चय कर सकता हूँ, और उनसे समझौता करनेका निश्चय भी कर सकता हूँ। पर मै यह सब अपने-आप करनेकी स्वतन्त्रता चाहता हूँ। हम कुछ समयके लिए भारतमे गोरी सेना रखनेको राजी हो जायेगे, पर वे हमसे कहते है कि गोरे सैनिकोको भारतीय सरकारके नियन्त्रणमे नही सौंपा जा सकता।

एच० एन० ब्रे० : उनकी मर्जीके बिना उनका तबादला नहीं किया जा सकता। मेरा खयाल है कि उनमें से बहुत-से लोग तो सन्तोषजनक परिस्थितियोंमें भारतीय सेनामें फिरसे भरती होनेको राजी हो जायेंगे।

गाधीजी . हाँ, यह समाधान हो सकता है, पर जब सेना घटा दी जायेगी तो मुझे डर है कि उससे आपके बेरोजगार लोगोकी सख्या बढ जायेगी।

एच० एन० ब्रे० : तो, यदि भारतके नियन्त्रणका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाये, तो क्या आप घटाई जानेवाली गोरी सेनाके — जिसे आप कुछ सालोंके लिए रखनेको राजी होंगे — सैनिकोंकी संख्या और खर्चके बारेमें बातचीतके लिए सहमत हो जायेंगे ?

गाधीजी . हाँ, यदि वह भारतके हितमे हुआ तो हम उस तरहकी किसी भी चीजके लिए सहमत हो जायेंगे।

एच० एन० ब्रे० : देखिए, मेरे खयालसे वह आपके हितमें उतना नहीं होगा जितना हमारे हितमें होगा।

गाधीजी . कोई बात नही, हम उसके लिए सहमत हो जायेंगे।

एच० एन० ब्रे० : सारी कठिनाई नियन्त्रणके सिद्धान्तकी है। मेरे खयालसे वह आपको प्राप्त नहीं होगा। सेनाको घटानेकी बात दूसरी है, कुछ हदतक वह चीज आपको मिल जायेगी। शीघ्र ही हम निरस्त्रीकरण-सम्मेलनमें भाग लेनेवाले है। यह चीज विश्व-निरस्त्रीकरणमें हमारे योगदानका एक हिस्सा हो सकती है।

गाधीजी : मै क्या चाहता हूँ, यह मैंने बता दिया है। मेरी शर्ते सबको मालूम हैं। पर वे अपनी छिपा रहे है, मानो उन्हे यह कहते डर लगता हो कि वे क्या मजूर करेगे। लेकिन मै इतजार करनेको बिलकुल तैयार हूँ।

एच० एन० ब्रे० : जबतक हम अपने आर्थिक संकटमें फँसे है, प्रगति धीमी ही रहनी है। पर यह चीज सुविधाजनक भी हो सकती है। यह ऐसी परिस्थिति है जब सूझ-बूझवाला राजनीतिज्ञ इस भयसे मुक्त रहकर समुचित समझौता कर सकता है कि उस समझौतेके खिलाफ कोई जन-आन्दोलन भी उठ सकता है।

गाधीजी . मुझे जिस चीजसे आश्चर्य हुआ वह यहाँ, वो, के मजदूरोका — जिनसे मै मिलता रहा हूँ — मैत्रीभाव है।

कलाकार : विरोध तो मध्य वर्गकी ही ओरसे है।

गाधीजी : मै मजदूरोके द्वारा उनतक पहुँचूंगा। असल कठिनाई यह है कि उन्हे इस बातकी कोई कल्पना ही नही है कि भारत कैसी यातना सह रहा है। वे हृदयसे यह विश्वास करते है कि भारत ब्रिटिश ताजका सबसे उज्ज्वल रत्न है। ब्रिटिश शासनके कृतित्वोपर वे ईमानदारीसे गर्व करते है। उसमे कोई दोष हो सकता है, यह चीज उनके दिमागमें कभी आती ही नही है।

कलाकार : मै महज एक बाहरी व्यक्ति हूँ; पर क्या एक और कठिनाई नहीं है ? क्या भारतीय नरेश आपके रास्तेमें सबसे बड़ी बाधा नहीं है ?

गाधीजी . नरेशकी तो वही स्थिति है जो ब्रिटिश अधिकारीकी है, उसे आज्ञा-पालन करना होता है।

एच० एन० ब्रे० : तो, क्या आप नरेशोको वाइसरायके नियन्त्रणमें छोड़ सकते है ?

गाधीजी . हमे भारतीय सरकारका नियन्त्रण स्थापित करना होगा।

एच० एन० ब्रे० : पर क्या वे वाइसरायके नियन्त्रणमें रहना पसन्द नहीं करते हैं ?

गांधीजी : उनमे से किसीसे भी पूछिए, वह ऐसा ही कहेगा। पर क्या यह सम्भव है कि वे इस स्थितिसे हृदयसे, सन्तुष्ट रह सके? आखिर वे भी उसी रगके हैं जिस रगके कि हम है। वे भी भारतीय है।

एच० एन० ब्रे० : लेकिन मौजूदा व्यवस्थामें उन्हें कुछ लाभ है, जो आप कभी नहीं दे सकते। नौकरशाही उन्हें विनम्रता और सही राजनीतिक शिष्टाचारका पालन करनेके लिए बाध्य करती हैं। पर वह उन्हें अपनी प्रजाके साथ जैसा वे चाहते हैं वैसा बरताव करने देती है।

गाधीजी · "विनम्रता" इसके लिए ठीक शब्द नही है। उसकी बजाय 'निकृष्ट दासता' कहिए। उनमे से कोई भी अपनी आत्माको अपनी नही कह सकता। मान लीजिए, निजाम कोई योजना या कोई और चीज शुरू करते है। वाइसरायका एक क्रोध-भरा पत्र ही उन्हे उससे रोकनेके लिए काफी है। लॉर्ड रीडिंगके समयमे क्या हुआ था, आपको मालूम ही है।

एच० एन० ब्रे० : नियन्त्रणके इस प्रश्नके अलावा, यदि नरेश संघीय विधान-मण्डलके ४० प्रतिशत सदस्योंको नामजद करते हैं, तो क्या आपके "करोड़ों अध-पेट खानेवालोंकी" ओरसे कानून बनाये जाने कोई आशा है?

गाधीजी · जैसे हम आपसे निवटे है वैसे ही उनसे भी निबट सकते है। वह कही ज्यादा आसान होगा।

एच० एन० ब्रे० : मेरा खयाल है, उनका उत्तर हमारेसे अधिक क्रूर होगा। हमने लाठी इस्तेमाल की थी। वे रायफल इस्तेमाल करेंगे।

गाधीजी : यह आपका जाति-गर्व है। और यह ठीक ही है। इसके कारण आप मुझे अच्छे लगते हैं। हम सबमे यह होना चाहिए। पर आप यह नही समझ रहे है कि भारतमे ब्रिटिश सत्ता किस हदतक अपने रुतबेपर टिकी हुई है। भारतीय उससे सम्मोहित है। 'आप एक बहादुर जाति है, और अपने रुतबेके कारण आप हमे आतकित कर पाते है। मै यही चीज दक्षिण आफ्रिकामे देख चुका हूँ। जुलू एक योद्धा जाति है, फिर भी एक जुलू रिवालवरको देखते ही, चाहे वह खाली ही क्यों न हो, काँपने लगेगा। यदि हमारा नरेशोके साथ सघर्ष हुआ, तो उन्हे रुतबेका लाभ प्राप्त नही रहेगा। यदि हमारे लोगोको मराठे सैनिकोका सामना करना पडे तो वे अपने मनमे सोचेगे · 'हम भी मराठे है।' दक्षिण आफ्रिकाकी बातसे मुझे उस परिवर्तनका एक दृष्टात मिलता है जो हम नरेशोसे अपने सम्बन्धोमे लाना चाहते है। स्वाजीलैंड पहले डाउनिंग स्ट्रीटके नियन्त्रणमे हुआ करता था, लेकिन जब सघ बनाया गया तो नियन्त्रण उसे सौप दिया गया। हमारा तर्क यह है कि इसी तरह नरेशोको भारत सरकारके नियन्त्रणमे सौप दिया जाना चाहिए।

कलाकार: भारतके स्वतन्त्र हो जानेपर क्या आपके लिए ब्रिटिश मालका कोई उपयोग होगा?

गाधीजी · हाँ, हम तब भी उन चीजोको चाहेगे जो आप निर्यात करते है, पर एक चीज इसका अपवाद होगी। सूती कपडेके सिवा हम हर चीज चाहेगे। वह हमे खुद ही बनाना होगा।

एच० एन० ब्रे०: हमारे निर्यातमें काफी भाग मशीनोंका होता है। क्या आपके लिए उनका कोई उपयोग होगा?

गाधीजी . जरूर होगा। मै खुद साबुन बनानेके लिए मशीन इस्तेमाल करता हूँ और वह मैने इग्लैडसे मँगाई थी। केवल थोडे-से निष्ठावान आदमी ही ऐसे है जो बिना मशीनके सादा जीवन बिता सकते है। जन-साधारणका उसके बिना कभी काम नही चलेगा। फिर भी, उसके बिना काम चल सकता है। बहुत-सी चीजें, जिन्हे आवश्यक समझनेकी हमे शिक्षा मिली है, कतई आवश्यक नही हैं। साबुनकी ही मिसाल लीजिए। तीन महीनेसे मै साबुनकी एक टिकिया इस्तेमाल कर रहा हूँ, और वह अब भी खत्म नहीं हुई है। शरीरको अच्छा रखनेके लिए वह सचमुच आवश्यक नही है, यद्यपि पहले मै खुद ऐसा सोचता था, और जवानीमे उसका बहुत अधिक उपयोग करता था। मशीनो द्वारा पैदा की गई कृत्रिम आवश्यकताओके बिना भी सभ्यता — ऐसा सुसस्कृत जीवन, जिसमे साहित्य और कलाओका स्थान होगा — सम्भव है। पर मै अपने-आपको धोखा नही देता। मै यह जानता हूँ कि जन-साधारण इस तरहका जीवन कभी नही बितायेगा। वह तो थोडे-से व्यक्तियोके लिए है।

ये वाहियात कृत्रिम आवश्यकताएँ व्यापारको कितना बढाती है, यह देखकर आश्चर्य होता है। बहिष्कारसे मैंने यह जाना है। खिलौनो और चीनी आतिशबाजीका भी कुछ महत्त्व है, यह भला कौन सोच सकता था? पर आप इस तरहकी चीजे भारतमे भारी मात्रामे निर्यात करते है। इन महीनोमें हमने बहिष्कारकी जबरदस्त शक्ति जानी है, वस्तुत हम उसे पूरी तरह सिर्फ अभी समझने लगे हैं। मैंने जब उसे शुरू किया था तो मै सिर्फ कपडेकी बात सोचता था, पर उसमे सभी तरहके छोटे व्यवसाय, इत्र-फुलेलतक आते है। छोटे लोगोको इससे जो क्षति पहुँची, उसके लिए मुझे खेद है, यद्यपि लकाशायरकी बडी-बडी कम्पनियोके लिए मुझे उतनी चिन्ता नही है।

एच० एन० ब्रे०: हाँ, बहिष्कारका बड़ा असर पड़ा है। यदि आप पीछेकी ओर देखें तो भारतीय स्वशासनके प्रति आजका ब्रिटिश रुख लगभग अविश्वसनीय लगता है।

गाधीजी · हाँ, आप आगे बढे है। पर आप अब भी हमे आजादी देनेको तैयार नही है। अभी ऐसा नही होगा। भारतको कुछ महीने और प्रतीक्षा करनी होगी। इस परिषद्से मुझे कोई आशा नहीं है। मै यहाँ सिर्फ इसलिए आया कि लॉर्ड इर्विनसे मैने वादा कर लिया था कि मै इसमें भाग लूँगा और हर चीजपर विचार-विमर्श करूँगा।

कलाकार : आप यह मत सोचिए कि आपके विदा किये बिना हम चले जायेंगे।[1]

गांधीजी : (हँसते हुए) इस विषयमें मैं आपके जनरल डायरसे सहमत हूँ। आपको उनका यह महान् कथन याद होगा कि एक अंग्रेजका जीवन हजार भारतीयोंके बराबर है। उनकी स्पष्टवादिताकी मैंने सदा सराहना की है। तो, इस समय मेरे लिए एक अंग्रेज हजार भारतीयोंके बराबर है।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, १३-१०-१९३१

१०९. पत्र : हे० सॉ० लि० पोलकको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
१२ अक्टूबर, १९३१

प्रिय हेनरी,

हाँ, मैंने 'टाइम्स'की रिपोर्ट पढ़ी है। मैं दोषी नहीं हूँ। बातचीतमें जब निश्चित कुछ था ही नहीं, तो मैं क्या रिपोर्ट देता। सम्बद्ध अंशकी मैंने अनौपचारिक समितिको रिपोर्ट दे दी थी। 'टाइम्स'की सभी रिपोर्टोंकी तरह यह भी एकपक्षीय, अभिप्रेरित और दुष्टतापूर्ण है। उस पत्रमें इससे कहीं अधिक दुष्टतापूर्ण बातें छपी हैं और उसने प्रतिवादोंकी उपेक्षा की है। परन्तु मित्रोंको उससे धक्का लगना चिन्ता-जनक है। इस दुष्टताका क्या इलाज किया जाये, मैं नहीं जानता। आप बीचमें आइए और राह दिखाइए। मैं इतना संकोची हूँ कि अपने-आपको आगे नहीं कर सकता। मेरे अपने कोई रहस्य नहीं है। मैं सभी मित्रोंसे मिलने, उनकी सहायता लेने और जितनी सेवा मैं उनकी कर सकता हूँ उतनी सेवा करनेको उत्सुक हूँ।

बीमारी क्या है, यह आप जानते हैं, और आप मुझे व शिकायत करनेवालों को भी जानते हैं। आपको इसका इलाज ढूँढ़ना चाहिए और उसे अमलमें लाना चाहिए।

सप्रेम,

भाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८०६३)से।

१. यह बात इसलिए कही गई कि म्यूरियल लेस्टरने गांधीजी को तभी यह याद दिलाया था कि कई भारतीय मुलाकाती उनसे मिलनेके लिए इंतजार कर रहे हैं।

११०. पत्र : नारणदास गांधीको

१२ अक्टूबर, १९३१

चि० नारणदास,

तुम सबके पत्र मिले किन्तु यहाँ तो मुझे लिखनेका समय नही मिलता। अत. अन्य चार साथी जो-कुछ लिखें उतनेसे ही सन्तोष करना।

आज सोमवार है और कमेटीकी बैठक नही हो रही, इसलिए इतना लिखनेका समय मिल गया। लोग तो मेरे पास बैठ ही हुए हैं। किन्तु वे आपसमे बातचीत कर रहे हैं और इस बीच मैं यह लिख रहा हूँ।

ऐसा लगता है कि तुम्हारी और छगनलालकी आपसमें बनती नही। अब तुम उससे बातचीत करना। वह दुखी रहता है। यदि बातचीतसे कुछ न बने तो मेरे लौटनेतक इस मामलेको स्थगित रखना।

जमना फिर क्योकर बीमार हो गई?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सूरजभानकी कहानी करुणाजनक है। आशा है, अब वह शान्त हो गया होगा। रुक्मिणीके बारेमें जो-कुछ तुम कहना चाहते हो सो मैं समझ गया।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

१११. भाषण : नेशनल लेबर क्लबके स्वागत-समारोहमें[1]

लन्दन

१२ अक्टूबर, १९३१

उन्होने श्री हेंडरसनको धन्यवाद दिया कि . . . "उन्होने यह दिखानेके लिए कि मैं उनसे कितनी सहायता और सहानुभूतिकी अपेक्षा कर सकता हूँ, इस सभामें आनेका कष्ट उठाया है।" गांधीजी ने श्रोताओको प्रश्न पूछनेके लिए आमन्त्रित किया और कहा कि स्पष्टवादितासे बहुत ही सहायता मिलती है। उन्होने बताया कि वे प्रश्नोंके निःसंकोच उत्तर देंगे। अपनी बात जारी रखते हुए गांधीजी ने कहा :

यद्यपि मैं यहाँ परिषद्के लिए आया हूँ, पर मेरा यह विश्वास है कि मेरा कार्य परिषद्के बाहर इस तरहके सम्पर्क स्थापित करनेमे है। परिषद्में मैं अपना

१. स्वागत-समारोह कैक्सटन हॉलमें आयोजित किया गया था और आर्थर हेंडरसनने उसकी अध्यक्षता की थी।

हृदय खोलकर रखने और अपनी सारी योजनाएँ उजागर करनेको कितना ही उत्सुक क्यों न होऊँ, पर प्रत्येक अन्य प्रतिनिधिकी तरह, मैं भी कुछ प्रतिबन्धोंके अधीन हूँ, जिनका मुझे अवश्य पालन करना होता है। इसलिए मैं अपना पक्ष पूरी तरह रखनेमे सफल नही होता। यद्यपि मुझे यकीन है कि एक मैत्रीपूर्ण समझौतेकी अपनी सारी कोशिशोंके बावजूद, मुझे खाली हाथ जाना है, फिर भी मै यदि उन लोगोके आगे जो भारतके बारेमे जानने-समझनेकी सच्ची इच्छा रखते है पर दुर्भाग्यसे, जो कांग्रेसके विषयमे पूर्णतया अवगत नहीं हैं, अपना पक्ष रख सका, तो मुझे पूर्ण सन्तोष होगा। मेरा यह दावा है कि कांग्रेस भारतके जन-साधारणका प्रभावशाली ढगसे प्रतिनिधित्व करती है और मै आपसे यह चीज मान लेनेको कहता हूँ कि मै यहाँ उस स्वाधीनताकी वकालत करने आया हूँ जिसके लिए हजारो-लाखो नर-नारियोने जेल-यात्रा की है, लाठियाँ खाई हैं और जिसके लिए कुछने अपने अमूल्य प्राणतक न्यौछावर कर दिये है। पूर्ण स्वाधीनता ग्रेट ब्रिटेनके साथ ऐसी साझेदारीका, जो पूर्ण समानतापर आधारित हो, और जो किसी भी पक्ष द्वारा समाप्त की जा सकती हो, बहिष्कार नही करती है।

इसके बाद गांधीजी ने कांग्रेसका पक्ष रखा और यह बताया कि आरक्षण तथा संरक्षणोंके बारेमें उन्हें अपने विवेकसे कितना-कुछ करनेकी अनुमति है।

उन्होंने यह भी कहा कि अंग्रेजोंमें एक लॉर्ड इविन ही ऐसे है जो उन्हें खींचकर इंग्लैंड ला सके हैं। भारतके हितके लिए आवश्यक संरक्षणोंकी चर्चा करते हुए, गांधीजी ने कहा कि संरक्षण पारस्परिक हितके लिए होंगे, क्योंकि वे ऐसी व्यवस्थाएँ नहीं चाहेंगे जो ब्रिटेनको नैतिक क्षति पहुँचाती हों, यद्यपि उनमें से कुछका अर्थ भौतिक हानि भी हो सकता है।

भारतमे हम इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि ब्रिटिश सरकारके कुछ आर्थिक सौदे ऐसे हैं जिनके औचित्यके बारेमे शंका की जा सकती है। उनसे भारतीय जनताको जबरदस्त आर्थिक हानि हो रही है। यह आवश्यक है कि भारतके साथ — देरसे सही — न्याय करते हुए ब्रिटेन कुछ आर्थिक हानि उठाये।

अन्तमें, महात्मा गांधीने अपनी यह हार्दिक आशा व्यक्त की कि भावी इतिहासकार यह कहेंगे कि भारत स्वतन्त्रताके लिए बिना किसीका खून बहाये लड़ा था और विजयी हुआ था।[1]

प्रश्न : यदि हम भारतसे ब्रिटिश सेनाके नियन्त्रणको पूरी तरह हटा लें, तो क्या हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच पारस्परिक झगड़ा खड़ा नहीं हो जायेगा और क्या उससे एक गम्भीर और भयानक परिस्थिति पैदा नहीं हो जायेगी? भारतसे आनेवाले लोग मुझे यह यकीन दिलाते हैं कि परिणाम यही होगा।

उत्तर : यह एक अच्छा प्रश्न है और एक ऐसा प्रश्न है जो जबसे मैं यहाँ आया हूँ मुझसे बहुत बार पूछा गया है और भारतमे भी पूछा जाता रहा है।

१. यहाँतक इंडियन न्यूज़से लिया गया है। इससे आगेका अंश अमृतबाजार पत्रिकासे है।

मेरा उत्तर यह है कि ऐसा हो सकता है। यह सम्भव है कि अगर ब्रिटिश सेना हटा ली जाये तो हम, हिन्दू और मुसलमान, एक-दूसरेसे लड़ने लगें। यदि हमारी दशा इसी तरहकी होनी है, तो मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं है। यह बहुत सम्भव है। लेकिन अगर हम इस अग्नि-परीक्षामें से इसी समय नही गुजरते हैं, तो इससे पीडा केवल कुछ समयके लिए टल-भर जायेगी। इसीलिए व्यक्तिगत रूपसे मुझे इसकी कोई चिन्ता नही है और पूरी कांग्रेसने, जो आज करोड़ो लोगोंके मतो और मनोंपर अधिकार रखती है, यह खतरा मोल लेनेका निश्चय किया है। साथ ही, मुझे स्वय यह आशा है कि यदि हम सचमुच अहिंसात्मक रूपसे और सचाईके साथ सघर्ष करते रहे, तो हम उस भयानक सकटको टाल सकेंगे। पर मुझे जो चीज हैरान करती है वह यह है कि ब्रिटिश प्रशासक या ब्रिटिश जनसाधारण इस चिन्तासे परेशान क्यो है कि ब्रिटिश सेनाको हटा लेनेपर क्या होगा। वे अपने खुदके इतिहासको याद क्यो नही करते? क्या ब्रिटिश लोगोंने अपनी स्वतन्त्रता कायम रखनेके लिए खुद उन्मत्त होकर बहुत ही विकट खतरे मोल नहीं लिये थे? क्या उनके यहाँ 'वार्स ऑफ रोजेज' के नामसे भयानक युद्ध नही हुए थे? क्या अग्रेज लोग स्कॉट लोगोंसे नही लडे थे? क्या अग्रेजों और आयरिशोंतकके बीच लड़ाई नही हुई थी? अगर आप विदेशी शासनको थोपे रखते हैं, तो पुंसत्वहीनता रोज गहरी होती जायेगी और आप इस दुर्लंघ्य स्थितिपर पहुँच जाते है कि ये लोग एक-दूसरेसे अपनी रक्षा नही कर सकते, इसलिए हमारा वहाँ सदैव शासक बने रहना जरूरी है। इसलिए मै जो भी खतरा हमारे भाग्यमें है, उसे उठाकर आज ही स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहूँगा।

प्र० : हिन्दुओं और मुसलमानोंके दो पक्षोको जिसका भय है, वह चीज आखिर क्या है?

उ० : मै नही समझता कि हिन्दुओं और मुसलमानोंने यह प्रश्न उठाया है। उन्हे भय न हो, यह बात नहीं है। जहाँतक मुझे मालूम है, यह प्रश्न प्रशासकोंकी ओरसे उठाया गया है, भारतीयों या भारतकी ओरसे नहीं उठाया गया है।

लेकिन, आज जो चीज हिन्दुओ और मुसलमानोंके दिमागमें काम कर रही है वह मैं आपको बताता हूँ। हिन्दुओंको, जिन्हे 'शान्त और सौम्य' कहा गया है — यह प्रयोग प्राय: लाक्षणिक ढगसे उनकी कायरताको ही सूचित करनेवाला माना जाता है — दुर्भाग्यसे यह भय है कि हो सकता है, ब्रिटिश सेनाओंके हटनेपर उत्तर-पश्चिमसे लुटेरोंके झुंड भारतपर टूट पड़ें और उसे सभी तरहकी क्षति पहुँचायें। यह भय निश्चित रूपसे है, पर हमें खतरा मोल लेना चाहिए।

मुसलमान कहते है कि वे हिन्दुओसे कम पढ़े-लिखे हैं, संख्यामें कम हैं और आर्थिक रूपसे भी उतने खुशहाल नहीं हैं। इसलिए उन्हे पता नहीं कि उनका क्या होगा। हिन्दू, अग्रेजोंके आनेसे पहले, आखिर मुसलमानोंके साथ आजादी और बराबरीसे रहते ही थे। भारतमें आज हजारो गाँव है और उनमें से अधिकांशमें मुसलमानोंकी बहुत ही छितरी आबादी है।

परन्तु वे लोग पूरी शान्तिसे एकसाथ रह रहे है। आप पजाब और बगाल जाइए, सिंध जाइए, वहाँ आपको हजारों गाँव ऐसे मिलेंगे जहाँ आबादी मुख्यतया मुसलमानोकी है, हिन्दू सिर्फ थोडे-से है। आप मुझसे पूछते है, क्या उन हिन्दुओको अपनी जानका डर है। अगर उन्हे डर होता, तो वे उन गाँवोमें न रह रहे होते।

यदि आप बलूचिस्तान जाये, जहाँ प्राय· मुसलमान-ही-मुसलमान है, तो आपको वहाँ हिन्दू अकेले व्यापार करते मिलेगे, और आप मेरी इस बातपर आम तौरपर विश्वास कर सकते है कि वे वहाँ त्रस्त और आतकित अवस्थामे नही रह रहे है। इसी तरह काबुलमे आपको अनेक हिन्दू और उनसे भी अधिक सिख मिलेंगे।

इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि यह तथाकथित भय असलमे बहुत-कुछ गढ़ा हुआ है और यह उतना भय नही है जितनी कि सत्ताके उपभोगकी इच्छा है। मै मानता हूँ कि यह बहुत ऊँची महत्त्वाकाक्षा नही है। पर दुनियामे कोई भी — लेबर पार्टीतक — इस महत्वाकाक्षासे मुक्त नही है।

प्र० : युद्धके बाद यूरोपके जिन छोटे राज्योंको स्वतन्त्रता दे दी गई थी उनमें घटनेवाली घटनाओंको ध्यानमें रखते हुए, क्या श्री गांधीके खयालमें यदि भारत अपनी मौजूदा नीति जारी रखता है तो वहाँ एक युद्धप्रिय राष्ट्रवादके विकसित होनेकी आशंका नहीं है, जो विश्वके लिए एक खतरा होगा? और क्या श्री गांधीके खयालमें, उनका यह कहना कि स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए वे लाखों लोगोके जीवनके बलिदानके लिए भी तैयार रहेंगे, एक खतरनाक विचार नहीं है?

उ० : अपने खुदके जीवनको बलिदान करना मेरे खयालमे कोई खतरनाक आदर्श नही है, और ये अमूल्य जीवन एक ऐसे राष्ट्र द्वारा बलिदान किये जायेंगे जो जबर-दस्तीके निरस्त्रीकरणमे रह रहा है। मुझे डर है कि हमारे मित्रने शायद मुझे उतने ध्यानसे नही सुना है जितनी कि मै आशा करता था या यदि वीरोचित ढगसे मै दोष अपने सिर ले लूं तो कहूँगा कि मै अपने आशयको बिलकुल स्पष्ट नही कर पाया हूँ।

भारत आज अहिंसाके लिए वचनबद्ध है, इसलिए किसी औरकी जान लेनेका कोई सवाल पैदा नही होता। हम अपने जीवनको इतना सस्ता नही समझते है कि वह व्यर्थ त्याग दिया जाये। पर हम अपने जीवनको स्वतन्त्रतासे अधिक महँगा भी नही समझते है। इसलिए यदि हमे लाखो जीवन भी बलिदान करने पड़ें तो हम कल ही ऐसा करनेको तैयार है, और इसके लिए ईश्वर इसके सिवा और कुछ नही कहेगा कि 'बच्चो, शाबाश!'

हम अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहे है। दूसरी ओर, आप एक साम्राज्यवादी विचारोवाली जाति रहे है। आतक पैदा करनेकी आपकी आदत रही है। स्वर्गीय जनरल डायरने अदालतमे एक प्रश्नका उत्तर देते हुए कहा था: "हाँ, मैंने यह आतक जान-बूझकर पैदा किया था।" मै यहाँ यह कहना चाहता हूँ कि आतकका सहारा लेनेकी योग्यता रखनेवाले अकेले एक जनरल डायर ही नही थे।

आप नही चाहेंगे कि मै आपके अपने ही इतिहासके अनेक और उदाहरण दूं। इसलिए, यदि हम अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके इस प्रयासमें अपने-आपको बलिदान करते है, तो मेरे खयालसे इस हॉलमे किसीको हमारी आलोचना नही करनी चाहिए। यह आप लोगोका, जिनपर ब्रिटिश राष्ट्रके सम्मानकी रक्षाका दायित्व है, काम है कि यदि आप इस विनाशको रोक सकते है तो रोके।

आप लोगोसे यह सम्पर्क स्थापित करनेमें मेरा उद्देश्य आपके आगे मूल स्थिति रखना और यह कहना है कि 'यह भारतका अधिकार है।'

प्र० : आपको स्वाधीनता देकर क्या हम गलती नहीं करेंगे? [1]

उ० : मेरा खयाल है कि यदि आप किसीको भी स्वाधीनता दें तो गलती करेंगे। इसलिए कृपया यह याद रखे कि मै स्वाधीनताकी भीख माँगने नही आया हूँ, बल्कि पिछले साल हमने जो कष्ट भोगे उनके फलस्वरूप और उनके अन्तमे आया हूँ। हमे लगा कि वह घडी आ गई है जब हम भारतसे यह देखनेके लिए यहाँ आ सकते है कि क्या हम अपने कष्टोसे ब्रिटिश मनको इतना प्रभावित कर चुके है कि मै एक सम्मानपूर्ण समझौतेके साथ यहाँसे जा सकूँ।

लेकिन यदि मै एक सम्मानपूर्ण समझौतेके साथ यहाँसे जाता हूँ तो मै अपने मनमें यह विश्वास लेकर नही जाऊँगा कि इस राष्ट्रसे मुझे कोई दान मिला है।

एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्रको स्वाधीनताका दानदेने-जैसी कोई चीज इस दुनियामें नही है। वह अपने खूनसे प्राप्त करनी और खरीदनी होती है, और मै ऐसा महसूस करता हूँ कि हम इस प्रक्रियामे, जो १९१९ से सोच-विचारकर चलाई जा रही है, अपना काफी खून बहा चुके है। पर यह हो सकता है कि ईश्वर यह समझता हो कि हमने अभी काफी यातना नही सही है, कि हम अभी आत्मशुद्धिकी प्रक्रियामें से पूरी तरह नही गुजरे है।

उस स्थितिमे मै यहाँ यह घोषित करूँगा कि हम *आत्मबलिदानकी इस प्रक्रियाको* उस समयतक जारी रखेंगे जब कि कोई भी ब्रिटेनवासी शासककी हैसियतसे भारतमें रहना नही चाहेगा।

प्र० : इस समय प्रचलित इस विचारके बारेमें श्री गांधीकी क्या राय है कि यदि ब्रिटिश शासक भारतसे हट गये तो रूसी बल-प्रयोग द्वारा अपना प्रभाव-क्षेत्र उस देशपर फैलाना चाहेगे।

उ० : मै आपसे स्पष्ट कहूँ कि मै इसपर एक क्षणके लिए भी विश्वास नही करता हूँ। लेकिन मान लीजिए, रूसके भारतके बारेमे इस तरहके गदे इरादे है और वह यह सोचता है कि ब्रिटेनके बाद उसे वहाँ एक साम्राज्य स्थापित करना है, तो मै सिर्फ यही कह सकता हूँ कि जिन साधनोसे ब्रिटिश यह समझ पायेंगे कि भारत-पर शासन असम्भव है और बुद्धिमत्ता इसीमें है कि वहाँसे अपना शासन हटा लिया जाये, वही साधन हम रूसके खिलाफ भी सफलतापूर्वक काममें लायेंगे।

१. यह प्रश्न **यंग इंडिया**, २९-१०-१९३१ में प्रकाशित महादेव देसाईके "लंडन लेटर" (लंदनका पत्र) से लिया गया है।

एक मिनटके लिए कल्पना कीजिए कि रूस एक विरोधी जनताके खिलाफ क्या कर सकता है। कोई भी जनता, अपनी मर्जीके बिना, किसी दूसरे राष्ट्र द्वारा अभी तक शासित नही हुई है। मुझे आशा और विश्वास है कि मेरे लोगोने यह चीज सीख ली है कि अब अनिच्छासे भी सहयोग देनेकी जरूरत नही है। इसके साथ बलिदानका कुछ अश — असहयोगके साथ जुडा बलिदान — रहता ही है।

यदि हम रूसियोके साथ व्यापार करने, उनकी चीजे और उपाधियाँ लेनें, उनका धन लेनेंसे इनकार कर दें, तो रूसी या पृथ्वीका कोई भी और राष्ट्र क्या करेगा? मै यह मानता हूँ कि भारत अभी किसी भी राष्ट्रसे युद्ध करनेको तैयार नही है, पर मुझे आशा है कि इस अवसरका उपयोग मै अपने लोगोंको एक कदम और आगे ले जानेके लिए कर सकूँगा।

यदि आप यह समझ गये है कि हम सचमुच काफी यातना सह चुके है और हमारे पास इस असहयोग और सत्याग्रहके रूपमे, विदेशी आक्रमण और शोषणसे अपनी रक्षा करनेके अनोखे साधन है, यदि आप यह समझ गये है, तो आप मुझे अपने लोगोके लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करनेमे सहायता देंगे। फिर आप यह भी देखेंगे कि जो लोग इन साधनोसे स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते है वे इन साधनोसे उसे कायम भी रख सकते है। तब आपको लगेगा कि भारतने युद्धके खिलाफ छेडे युद्धमे बडेसे-बडा योगदान किया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन न्यूज, १५-१०-१९३१ और अमृतबाजार पत्रिका, ३०-१०-१९३१

११२. भेंट : समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंको

लन्दन
१३ अक्टूबर, १९३१

मै आक्रामक रुख अपनाना नही चाहता हूँ। मै यह कहता हूँ कि साम्प्रदायिक प्रश्नका हल खोजनेमे यह असफलता बहुत हदतक नये सविधानके बारेमे जानकारीके अभावके कारण है, और इस कारण भी है कि परिषद्मे आये लोग प्रातिनिधिक हैसियत नही रखते है। सरकार यह बात खूब अच्छी तरह जानती है कि अकेली काग्रेस ही ऐसी सस्था है जो कुछ करके दिखा सकती है। फिर उसकी इस दिखावटी बातसे क्या फायदा है कि काग्रेस विभिन्न दलोमे से — जैसे हिन्दू, दलित वर्ग, ईसाई, जागीरदार, जमीदार — एक दल है। जब सघर्ष चल रहा था तो हिन्दू सभा काग्रेससे भिन्न नही थी। मुझे यकीन है कि यदि आज जनमत-सग्रह हो, तो हिन्दू और दलित वर्ग भारी बहुसख्यामे काग्रेससे सहानुभूति रखनेवाले निकलेगे। मुझे यकीन है कि राष्ट्रवादी मुसलमान अपना महत्त्व सिद्ध कर पायेगे। यदि मेरा बस चले तो मै निश्चय ही मुसलमानोके आगे आत्मसमर्पण कर दूँगा। पर सरकारको उन मतभेदोको

बढा-चढ़ाकर रखनेसे, जो ज्यादातर प्रतिनिधि-मण्डलके गठनके कारण हैं — और यह गठन उसका ही किया हुआ है, कोई लाभ नही होगा। यदि सरकार साम्प्रदायिक समझौता होनेसे पहले सविधान तैयार करनेके सचमुच पक्षमे नही है, तो मै उसे इस काममे जुटनेके लिए आमन्त्रित करता हूँ। मै काग्रेसको मान्य न्यूनतम शर्तोपर सरकारके साथ सहयोग करनेको तैयार हूँ। काग्रेस इस बातपर जोर देती है कि सेना, विदेशी नीति और वित्तपर हमारा पूर्णतम नियन्त्रण रहना चाहिए। अब सरकार काग्रेसकी इन माँगोको चाहे स्वीकार करे, चाहे रद कर दे।

मुझे सरकारसे यह अपेक्षा नही है कि वह भारतके प्रश्नको इस सम्मेलनमें सुलझायेगी। पर मै इसमें इसलिए भाग ले रहा हूँ कि मैंने लॉर्ड इर्विनसे हर मुद्देपर विचार-विमर्श करनेका वादा किया था, जो मुझे पूरा करना है। और फिर सम्मेलनके बाहरके सम्पर्क मेरे लिए और भी अधिक मूल्य रखते है।

[अग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १५-१०-१९३१

११३. भाषण: भारतीय छात्रोंकी सभामें[1]

लन्दन
१३ अक्टूबर, १९३१

गांधीजी ने, भारतके बुनियादी दावोंको दोहरानेके बाद, कहा कि मै भारतसे रवाना होनेसे पहले ही यह जानता था कि इनके मंजूर होनेकी सम्भावना नहीं है, क्योंकि किसी भी राष्ट्रको अपनी खोई हुई आजादी अभीतक अपनी बात [प्रतिपक्षीकी] बुद्धिको समझाने-बुझानेसे नहीं मिली है। उसके लिए सदा इससे कहीं अधिक गम्भीर चीजकी जरूरत रही है। भारत इसका अपवाद होगा, ऐसा मैं नहीं सोचता हूँ। अब यह चीज और भी साफ हो गई है कि विजय केवल कष्ट सहकर ही प्राप्त की जा सकती है। पर मैं यह आशा कर रहा था कि जो कष्ट अबतक हमने सहे हैं उनका शायद ब्रिटिश मनपर इतना असर तो पड़ा ही होगा कि वह तर्क और वार्त्ताके लिए अनुकूल हो।

मुझे यह बात अवश्य स्वीकार कर लेनी चाहिए कि जैसे-जैसे मै आगे बढता हूँ, यह मुझे भगीरथ प्रयत्न लगता है। शायद इसमे से कुछ भी नही निकलेगा। पर, आशावादी होनेके कारण, मै तबतक बिलकुल आशा नही छोडूंगा जबतक कि मुझे यह न लगने लगेगा कि अब कुछ और किया ही नही जा सकता। फिर भी ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि जो बीज इस समय बोया जा रहा है वह इस देशकी चेतनामें

१. सभा गोवर स्ट्रीट होस्टल, ब्लूम्सबरीमें हुई थी और भारतीय यं० मे० क्रि० ए० के सर एवर्ट ग्रीव्ज उसके सभापति थे।

फलीभूत हो और मन्त्री लोग उस राष्ट्रके साथ समझौता करनेको अपनेको बाध्य अनुभव करे जिसके लोग अपने अधिकारोके लिए इतना अधिक कष्ट सह रहे है।[1]

यह हो सकता है कि जो बीज इस समय बोया जा रहा है उसके फलस्वरूप अंग्रेजोका रुख नरम हो जाये और इस तरह मनुष्यके पाशवीकरणकी यह प्रक्रिया रुक जाये। पजाबमे मैने ब्रिटिश स्वभावके घिनौने रूपको जाना है। मैने उसे अन्यत्र भी जाना है। इन पन्द्रह वर्षोके अनुभव और इतिहाससे मैने जाना है कि यही चीज हो रही है। मेरा उद्देश्य अपने पास उपलब्ध सभी साधनोसे इस तरहके विनाशकी पुनरावृत्तिको रोकना है। अपने लोगोके कष्टोको रोकनेसे भी अधिक मुझे मानव-स्वभावके पाशवीकरणको रोकनेकी चिन्ता है।

मैने प्राय: अपने लोगोके कष्टोपर हर्ष प्रकट किया है। मै जानता हूँ कि जो लोग स्वेच्छासे कष्ट सहते है, वे अपने-आपको और समस्त मानव-जातिको ऊपर उठाते है। परन्तु मै यह भी जानता हूँ कि जो लोग अपने विरोधियोपर विजय प्राप्त करने, या दुर्बल राष्ट्रो या लोगोका शोषण करनेके अपने दु साहसिक प्रयत्नोमे अपना पाशवीकरण कर लेते है, वे न केवल अपने-आपको बल्कि मानव-जातिको भी नीचे ले जाते है। और मानव-स्वभावको रसातलमे जाते देखना मेरे या किसी औरके लिए आनन्ददायी नही हो सकता। यदि हम सब एक ही ईश्वरकी सन्तान है और एक ही दिव्य सत्त्वके भागीदार है, तो हमे प्रत्येक व्यक्तिके, चाहे वह हमारी जातिका हो या किसी औरका, पापका भी भागीदार बनना चाहिए। आप यह समझ सकते है कि किसी मानव-प्राणीमे पाशविकताको चेताना कितना घृणित होगा, और अंग्रेजोमे, जिनमे मेरे अनेक मित्र है, ऐसा करना तो बहुत ही अधिक घृणित होगा। इसलिए जो प्रयत्न मै कर रहा हूँ उसमे मै आपसे यथाशक्य अधिकतम सहायता देनेका अनुरोध करता हूँ।

भारतीय छात्रोसे मेरी यह अपील है कि वे इस प्रश्नका पूरी तरह अध्ययन करे। और यदि आपका अहिसा और सत्यकी शक्तिमे सचमुच विश्वास है, तो ईश्वरके लिए इन दोनोको केवल राजनीतिक क्षेत्रमे ही नही, बल्कि अपने दैनिक जीवनमे व्यक्त कीजिए। आप देखेगे कि इस दिशामे आप जो कुछ भी करेगे उससे मुझे इस सघर्षमे सहायता मिलेगी। यह सम्भव है कि जो अंग्रेज स्त्री-पुरुष आपके निकट-सम्पर्कमे आये वे ससारको यह विश्वास दिलाये कि भारतीय छात्रो-जैसे अच्छे और सच्चे छात्र उन्होने पहले कभी नही देखे थे। आपके खयालमे क्या उससे हमारे राष्ट्रकी माँगके न्यायसगत सिद्ध होनेमे बहुत सहायता नही मिलेगी? १९२० के काग्रेसके एक प्रस्तावमे[2] आत्मशुद्धि शब्दका प्रयोग हुआ है। तबसे काग्रेसने यह महसूस किया कि हमे अपने-आपको शुद्ध करना है। हमें आत्मबलिदान द्वारा अपनेको शुद्ध करना है, जिससे कि हम स्वाधीनताके अधिकारी हो सके और ईश्वर भी हमारे साथ हो सके। यदि ऐसा होता है तो ऐसा प्रत्येक भारतीय, जिसका जीवन आत्मबलिदानकी भावनाका

१. इसके बादका अंश **यंग इंडियामें** प्रकाशित महादेव देसाईके "लन्दन लेटर" (लन्दनका पत्र)से लिया गया है।

२. कलकत्तामें ४ से ९ सितम्बर, १९२० तक हुए काग्रेसके विशेष अधिवेशनमें पास किया गया प्रस्ताव।

प्रमाण होगा, कुछ किये बिना ही, अपने देशकी सहायता कर सकेगा। काग्रेसने जो साधन अपनाये है, मेरे खयालसे, उनमे इसी तरहकी शक्ति है। इसलिए स्वतन्त्रता-सग्राममे यहाँके हर छात्रको अपने-आपको शुद्ध करने और ऐसा चरित्र पेश करनेके सिवा, जो अपवाद और सन्देहसे परे हो, और कुछ करनेकी आवश्यकता नही है।

प्र० : सुना यह गया है कि लॉर्ड इर्विनने सेंट्रल हॉलमें एक भाषणमें कहा है कि वे यह जानते थे कि आप पूर्ण स्वाधीनतापर जोर नहीं देंगे। क्या यह सच है?

उ० : देखिए, पहली बात तो यह है कि जो भाषण लॉर्ड इर्विनका दिया बताया गया है वह उन्होने दिया है, यह मुझे नही मालूम। दूसरे, लॉर्ड इर्विनकी ओरसे मुझे कुछ कहना नही चाहिए। वह प्रश्न उन्हीसे किया जाये तो अच्छा हो। पर मैंने लॉर्ड इर्विनसे यह कभी नही कहा कि मै पूर्ण स्वाधीनतापर जोर नही दूंगा। इसके विपरीत, यदि मेरी स्मृति मुझे धोखा नही दे रही है तो मैंने उन्हे बता दिया था कि मै पूर्ण स्वाधीनतापर जोर दूंगा, और मेरे लिए उसका अर्थ भारतपर एजेंटोके जरिये — अग्रेज एजेंटोकी बजाय भारतीय एजेंटोके जरिये — शासन नही है। पूर्ण स्वाधीनताका अर्थ मेरे लिए राष्ट्रीय सरकार है।

प्र० : आप ब्रिटिश सैनिकोको रखनेसे पूर्ण स्वाधीनताका मेल कैसे बैठाते है?

उ० : ब्रिटिश सैनिक भारतमे रह सकते है और यह चीज उस व्यवस्थापर निर्भर करेगी जो दोनो पक्ष तय करेगे। यह चीज एक सीमित अवधिके लिए भारतके हितमे होगी, क्योकि भारत हतवीर्य हो चुका है और राष्ट्रीय सरकारके अधीन और उसकी सेवामे ब्रिटिश सैनिको या ब्रिटिश अधिकारियोके कुछ अशको रखना आवश्यक है। मै साझेदारीका समर्थन करूँगा और उन सैनिकोको रखनेका भी समर्थन करूँगा।

प्र० : स्वाधीन भारतकी बात करते हुए क्या आप वहाँ वाइसरायके रहनेकी कल्पना करते है?

उ० वाइसराय रहता है या नहीं, यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका दोनो पक्ष निर्णय करेगे। अपनी ओरसे यदि मै कहूँ तो मै वाइसरायके रहनेकी कल्पना नही कर सकता। किन्तु मै एक ब्रिटिश एजेटके वहाँ रहनेकी कल्पना कर सकता हूँ, क्योकि बहुत-से ब्रिटिश हित वहाँ होगे जो ब्रिटेनवासियोने पैदा किये है और जिन्हे मै व्यक्तिगत रूपसे नष्ट करना नही चाहता हूँ। वह एजेट उन हितोका प्रतिनिधित्व करेगा। गरज यह कि उन हितोको ध्यानमे रखते हुए और यदि वहाँ कुछ ब्रिटिश सैनिक और अधिकारी रहे तो उनका भी खयाल करते हुए मेरे लिए यह कहना नामुमकिन है कि 'नही, वहाँ कोई ब्रिटिश एजेट नही रहेगा।' और क्योकि इससे नरेश भी सम्बद्ध है, इसलिए नरेश क्या करेगे, यह मै नही कह सकता। इसीलिए मेरे मनमें जो योजना है उसमे वहाँ कोई ब्रिटिश एजेट — चाहे उसे वाइसराय कहिए या गवर्नर-जनरल — नही होगा, ऐसी मुझे आशा नही है। किन्तु मै उसका एक ऐसी साझेदारीके रूपमे समर्थन करूँगा जिसमे यह शर्त रहेगी कि वह पूर्ण समानताके आधारपर होगी और किसी भी पक्षकी इच्छापर समाप्त हो सकेगी। मै एक ऐसी स्लेटपर लिख रहा हूँ जिसपरसे मुझे बहुत-सी चीजे मिटानी है।

प्र० : इस तरहकी साझेदारी किन समान उद्देश्योंको आगे बढ़ायेगी?

उ० : वह साझेदारी जिस समान उद्देश्यको आगे बढानेवाली है वह है, पृथ्वीपर जातियोके शोषणको समाप्त करना। भारत यदि शोषणके इस अभिशापसे, जिसमे वह इतने सालोसे तडप रहा है, मुक्त हो जाता है तो भारतको यह देखना होगा कि अब और शोषण न हो। सच्ची साझेदारी एक-दूसरेके लाभके लिए होगी। वह साझेदारी ऐसी दो जातियोके बीच होगी जिनमे से एक अपने पौरुष, शूरवीरता, साहस और सगठनकी अपनी अतुलनीय शक्तियोके लिए प्रसिद्ध है, और दूसरी एक प्राचीन जाति है, जिसकी सस्कृति शायद किसी भी अन्य सस्कृतिसे नीची नही है, जो अपने आपमे एक महाद्वीप है। इन दो राष्ट्रोकी साझेदारीका फल दोनोकी भलाई और मानव-जातिकी भलाई ही हो सकता है।[1]

साम्प्रदायिक समस्याकी विस्तारसे चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि वे अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंको बेच नहीं सकते और इस बातपर फिर जोर दिया कि कांग्रेस मुख्य रूपसे करोड़ों मूक लोगोंकी प्रतिनिधि है।

स्वर्णिम नियम यह है कि इस तरहके मामलोपर समाचार-पत्र जो-कुछ कहते है उससे बिलकुल उलटा मानो। मै हिन्दुओ और सिखोको इस चीजके लिए राजी करनेकी कोशिश कर रहा हूँ कि मुसलमान जो चाहते है वह उन्हे दे दिया जाये, और मुसलमानोको इस बातके लिए राजी करनेकी कोशिश कर रहा हूँ कि वे अपनी माँगे ऐसी रखे कि वे अन्य सम्प्रदायोको स्वीकार हो सके।

छोटे अल्पसंख्यक समुदायोंकी चर्चा करते हुए, उन्होंने बम्बईके पारसियोंकी भूमिकाको इस बातके उदाहरणके तौरपर रखा कि संख्याकी दृष्टिसे नगण्य समुदाय, विशेष सुविधाओंके बिना, क्या-कुछ कर सकते हैं और यह बताया कि बालिग मताधिकार सबको समान रूपसे कितने महान् अवसर प्रदान करेगा।

मुसलमानों व सिखोंके सिवा अन्य अल्पसंख्यकों और अछूतोंके दावोंका गांधीजी ने बहुत ही डटकर विरोध किया। उन्होंने कहा:

मै अपनी जानकी बाजी लगाकर भी उन दावोका विरोध करूँगा और आपसे यह अनुरोध करता हूँ कि आप मेरे साथ उन प्रतिनिधियोको इतनी शर्म दिलाये कि वे उन्हे वापस ले ले।

उन्होंने इस बातका खण्डन किया कि उन्होंने मुसलमानोंके आगे यह प्रस्ताव रखा है कि यदि वे अछूतोंकी माँगोके विरोधमें उनका साथ देंगे तो वे उनकी माँगें स्वीकार कर लेंगे। उन्होंने कहा कि वे मुस्लिम और सिख-माँगोंको स्वीकार करनेके लिए ऐतिहासिक कारणोंसे बाध्य हुए हैं, पर वे किसी अन्य समुदायके विशेष प्रतिनिधित्वको मंजूर करनेके लिए किसी भी हालतमें राजी नहीं होंगे।

१. इससे आगेका अंश हिन्दूसे लिया गया है।

इंग्लैंडके लोगोंके सद्भावनाके प्रदर्शनोंसे उन्हें यह विश्वास हो गया है कि अंग्रेज जनता भारतमें दमनको फिर कभी सहन नहीं करेगी। उन्होंने छात्रोंसे यह अपील की कि यदि भारतीयोंके लिए अहिंसात्मक प्रतिरोध और असहयोग फिर शुरू करना आवश्यक हो जाये तो उनको आदर्श व्यवहार करना चाहिए और उन्हें अंग्रेज जनताका सम्मान अर्जित करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १४-१०-१९३१, और यंग इंडिया, २९-१०-१९३१

११४. तार: डॉ० मु० अ० अन्सारीको

८८, नाइट्सब्रिज
[१४ अक्टूबर, १९३१ के पूर्व][1]

डॉ० अन्सारी
दरियागंज
दिल्ली

आपके बारेमें तीन कष्टदायी वार्ताएँ हो चुकी हैं जिनका कोई फल नहीं निकला। उन्हें बता दिया है कि उनकी माँगका मैं आपकी स्वीकृति बिना समर्थन नहीं कर सकता और यह कि आपकी सहायता प्रतिक्षण आवश्यक है। फिर भी इसपर सहमत हो गया हूँ कि आपके बिना भी समझौतेके हर प्रयत्नमें सहायता करूँगा, यद्यपि सफलताकी कोई सम्भावना नहीं है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२१७) से।

१. साधन-सूत्रमें तारीख नहीं दी गई है। किन्तु गांधीजीने "वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको", १४-१०-१९३१ में डॉ० अन्सारीके उपस्थित न रहनेके कारण 'बाधा' का उल्लेख किया है।

११५. वक्तव्य : 'आइलैंड' को[1]

लन्दन

[१४ अक्टूबर, १९३१ या उसके पूर्व][2]

कलाकारो और कवियोका अपने-आपको इस युगके व्यापारिक और औद्योगिक प्रभावोकी बेडियोसे मुक्त करनेका आन्दोलन एक बहुत ही प्रशसनीय साहसिक कार्य है, बस उनमे उसे करने-लायक शक्ति होनी चाहिए। धर्म कलाका सही और चिर-कालीन साथी है। धर्म लोगोको जिसकी शिक्षा देता है, कलाकार उसीको शिल्पके धरातलपर रूपमे उनके निकट लाता है। 'कला कलाके लिए' की बातसे, जो मेरे विचारमे मानव-मनकी एक शोचनीय भूल है, मुझे नफरत है। कलाकी धर्मसे इस बातमें गहरी समानता है कि उन दोनोमे मूल अनुभूतिका क्षेत्र मनुष्यका ईश्वरसे सम्बन्ध होता है। भारतीय कला इस सम्बन्धको प्रतीकोमे व्यक्त करती है और साथ ही धार्मिक उपासनाकी क्रिया-विधिको भी व्यक्त करती है। यदि कोई कलाकार, यह मानकर कि उसके इर्द-गिर्द जो लोग है उनमे कोई धार्मिक भावना नही है, धर्मका मजाक उडाता है, तो वह अनिवार्य रूपसे अपने पेशेको निरर्थक बनाता है। दूसरी ओर यदि वह ऐसा महसूस करता है कि उसका एक ध्येय है, तो कवि या कलाकारको यह अधिकार है कि वह प्रचलित विश्वास या विश्वासहीनताका विरोध करे, और उसके अपने अन्तर्ज्ञानके बृहत्तर मूल्यके कारण उसका वह कार्य न्यायोचित होगा। कलाके बारेमे कुछ जाननेका मैं दावा नही करता, पर मेरा यह दृढ विश्वास है कि धर्म और कला दोनोको नैतिक और आध्यात्मिक उत्थानके एक-जैसे उद्देश्योकी पूर्ति करनी है। ईश्वरके साथ मनुष्यका सम्बन्ध ही सदा जीवनका केन्द्रीय अनुभव रहेगा, और कोई अन्य चीज कभी भी उसपर हावी नही होगी या उसका स्थान नही लेगी, जैसे कि मानव-शरीर कभी भी गुरुत्वाकर्षणके नियमसे मुक्त नही होगे। ईश्वरके साथ मनुष्यके इस सम्बन्धमे रहस्यात्मक शक्तियोका ही महत्त्व है, शब्दोमे अभिव्यक्त अपर्याप्त वचनोका महत्त्व नही है। जैसा कि मानव-जातिके विभिन्न और पूर्वापर धर्म दिखाते है, ईश्वरके साथ मनुष्यके इस सम्बन्धमे परिवर्तन हो सकते है। पर कार्डिनल न्यूमनके शब्दोमे "मेरे लिए एक डग काफी है।"

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५५-ए)से।

१. गाधीजी ने यह वक्तव्य पत्रके सम्पादक जोजेफ बार्डके साथ अपनी बातचीतमें दिया था। सम्पादकने उसे लिपिबद्धकर उसकी प्रति स्वीकृतिके लिए गाधीजी को भेजी। गाधीजी ने अन्तिम पैरेको छोड बाकीकी स्वीकृति दे दी। अन्तिम पैरा इस प्रकार था: "उपासक और कलाकार, दोनों तरहके मनुष्य जो पवित्र है, उसतक पहुँचनेकी आकांक्षा रखते हैं और असंस्कृत मनवाले जब उनके बलिदानोंके कारण उनपर तरस खाते है, तो वे यह भूल जाते हैं कि वे बलिदानमें आनन्दका अनुभव करते है, उनके लिए बलिदान —'सैक्रीफाइस'--अपने मूल अर्थ, 'पवित्रतक पहुँचनेके मार्ग' का ही द्योतक होता है।"

२. आइलैंडमें इसपर १४ अक्टूबरकी तारीख दी गई थी।

११६. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

लन्दन

१४ अक्टूबर, १९३१

यद्यपि यह बहुत ही दुःखकी बात है कि साम्प्रदायिक समझौतेकी वार्त्ता विफल रही, पर मैंने सफलताकी आशा छोडी नही है।

प्रधान मन्त्रीके जबरदस्त प्रतिवादके बावजूद, मेरी अब भी यही धारणा है कि विफलताके कारण सम्मेलनके गठनमे ही निहित थे। मुझे अब इस बातपर और भी अधिक विश्वास हो गया है कि संविधानकी रचना साम्प्रदायिक प्रश्नके पहले सुलझाये जानेपर निर्भर नही होनी चाहिए। इसलिए प्रधान मन्त्रीका यह सुझाव गलत था कि संविधानकी रचनामे आगे और प्रगति, बहुत हदतक, साम्प्रदायिक 'समझौतेपर निर्भर करती है। यहाँकी घटनाओका विवेचन करते हुए, भारतीय जनताके लिए सरकारी प्रक्रियाके इन दो दोषोको ध्यानमें रखना अच्छा रहेगा। तब वह हर विफलतापर विक्षुब्ध नही होगी।

मुस्लिम प्रतिनिधि-मण्डलके साथ मेरी कई लम्बी वार्त्ताएँ हुई है, पर हम किसी अन्तिम निष्कर्षपर नही पहुँच सके। डॉ० अन्सारीकी अनुपस्थिति मुझे एक भारी बाधा लगी, पर जबतक मुस्लिम प्रतिनिधि-मण्डल एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे उनके चुनावको चाहता या स्वीकार नही करता है, उनका कोई वास्तविक उपयोग नही हो सकेगा।

मैंने जो रुख अपनाया है वह दो तरहका है। व्यक्तिगत रूपसे मैंने अपना पहलेका रुख कायम रखा है, अर्थात् सभी पक्षोकी सभी बाते मान लेना। परन्तु कांग्रेसके एक प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैंने एक मध्यस्थकी तरह काम करनेका प्रयत्न किया है, जिसमें अबतक सफलता नही मिली है। मैंने यह चीज स्पष्ट कर दी है कि किसी भी योजनाको स्वीकार करनेसे पहले मुझे कार्य-समितिकी स्वीकृति लेनी होगी। मेरे आगे क्योंकि निश्चित कुछ भी नही है, इसलिए मैंने कार्य-समितिसे कुछ नही पूछा है।

साथ ही मैं सभी पक्षोसे सम्पर्क रख रहा हूँ। जैसे ही मेरे सामने कोई चीज ऐसी आयेगी जिसपर मुझे कारंवाही करनी होगी, मैं निर्देश माँग लूँगा। इस बीच मैं जन-साधारणको इस चीजसे सावधान करना चाहूँगा कि वह समाचारपत्रोकी रिपोर्टोंसे प्रभावित या उत्तेजित न हो।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १५-१०-१९३१

११७. भाषण: संघ-संरचना समितिके समक्ष

लन्दन
१४ अक्टूबर, १९३१

लॉर्ड चासलर महोदय और मित्रो,

बहसमे हस्तक्षेपके लिए मै क्षमा चाहता हूँ। मेरा इरादा आपसे यह प्रार्थना करनेका था कि इस विचार-विमर्शके अन्तमे मुझे संक्षेपमे कुछ बाते रखनेके लिए कुछ मिनट दिये जाये। लेकिन कल विचार-विमर्शको सुनते हुए मैने सोचा कि शायद मै एक ऐसा सुझाव रख सकूँ जिससे, जिस कठिनाईसे इस समितिको जूझना पडा, वह दूर हो सकती है। श्री जिन्नाने जब अपनी कठिनाई रखी तो मुझे इस बातका और भी ज्यादा यकीन हो गया। इसीलिए, लॉर्ड चांसलर महोदय, डॉ० शफात अहमदसे क्षमा चाहते हुए मैने आपसे यह प्रार्थना की कि मुझे बीचमें बोलने और कुछ बाते रखने दी जाये। मै ऐसा, यदि सम्भव हो तो, समय बचानेके लिए कर रहा हूँ।

अपना सुझाव रखनेसे पहले, मै लॉर्ड पीलकी उप-समितिको, जो श्रम उसने किया है और जिस तरहकी विस्तृत रिपोर्ट हमे दी है, उसके लिए अपनी बधाई देना चाहता हूँ। पर मै ऐसा महसूस करता हूँ कि उप-समितिने अपना लक्ष्य अत्यधिक ऊँचा रखा और इसलिए, अनजाने ही, हमारे बीच झगडेका बीज बो दिया। यह सकेत, साफ-साफ, उन आम सिद्धान्तोके विवेचन और उनकी रिपोर्टकी ओर है जिनके आधारपर भारतके वित्तीय साधनो और दायित्वोका सघ आदिके बीच बँटवारा होना चाहिए। मेरी विनम्र रायमे, यदि उप-समितिने अपना लक्ष्य अत्यधिक ऊँचा न रखा होता, तो वह हमे एक सुनिश्चित योजना दे सकती थी। श्री जिन्नाकी आपत्तिसे मुझे सहानुभूति है, पर मेरे खयालमे उनकी आपत्तिका मूल कारण सर तेजबहादुर सप्रूने अपना जो पक्ष रखा है, उसे ठीकसे न समझना है। यदि मै उनकी बात ठीकसे समझ पाया हूँ तो मुझे तो यही लगता है। जिन्नाकी आपत्ति यह है कि जबतक किसी तरहकी एक योजना न हो, किसी भी तरहका कोई सघ हो ही नही सकता। मेरे विचारसे यह आपत्ति यदि सच्ची हो तो एक घातक आपत्ति होगी। सर तेजबहादुर सप्रूकी बातको यदि मैने ठीक-ठीक समझा है तो वह यह है कि योजना तो होनी चाहिए, पर — अगर सघीय सरकार बनती है तो — सघीय सरकार द्वारा बनाई गई एक विशेषज्ञ समिति हो सकती है और होनी चाहिए, और यह समिति सारे प्रश्नपर नये सिरेसे विचार करे और उस सरकारको एक विस्तृत रिपोर्ट पेश करे। वह रिपोर्ट, जैसा कि स्वाभाविक है, विचार किये बिना ही उठाकर रखी जा सकती है, फाडी भी जा सकती है और सभी पक्ष उसपर विचार भी कर सकते है, और यदि वह उन्हे अच्छी लगे तो सघीय सरकार उसे स्वीकार कर सकती है। उस रिपोर्टको किसी सविधानका अग बनानेका कोई सवाल नही था। सविधान तो सघीय सरकारके अस्तित्वमे आनेसे पहले बन चुका होगा। निजी तौरपर, मै यह स्वीकार करता हूँ

कि मै किसी ऐसे सविधानकी कल्पना नही कर सकता — चाहे वह ससारकी बडीसे-बडी ससद द्वारा ही निर्मित क्यो न हो — जो हमे सारे खतरो और सारी कठिनाइयो-से बचा सके। मै यह मानता हूँ कि सघीय सरकार यदि अस्तित्वमे आई तो उसके सामने आरम्भमे ही बहुत-सी ऐसी कठिनाइयाँ आयेगी जिनसे उसे साहसके साथ जूझना होगा। लेकिन मै यह महसूस करता हूँ कि हमे एक ऐसी प्राथमिक योजना देना, जिसके बारेमें सभी पक्ष सहमत हो, इस उप-समितिकी सामर्थ्यसे बाहरकी बात नही होगी। यह योजना कितनी ही साधारण हो, मुझे उसकी चिन्ता नही है, पर वह ऐसी योजना होनी चाहिए जो रियासतोको अच्छी लगे। रियासतोको इस सम्मेलनके अन्य सदस्योके साथ परामर्श करके स्वय यह निर्णय करना चाहिए कि वे कहाँतक जानेको तैयार है।

जो-कुछ मै कह रहा हूँ उसे एक उदाहरणसे स्पष्ट करता हूँ। यहाँ, क्योकि उन्होने बात उन कठिनाइयोसे शुरू की है जिनसे उन्हे जूझना होगा, यह पूरी रिपोर्ट एक प्रयोगात्मक रिपोर्ट है और इसका अन्तिम रूप उन दो विशेषज्ञ समितियोपर निर्भर करता है जो इस उप-समिति द्वारा सुझाई गई है। मै यह महसूस करता हूँ कि जैसे उसने अनुच्छेद १० मे यह कहा है कि इतनी मदे 'सघीय' बताई गई है, उसी तरह यदि वह अपनी बैठक फिर करे और यह रिपोर्ट उसीको फिर वापस भेज दी जाये, तो वह फिर हमारे सामने कोई प्रयोगात्मक सुझाव लेकर नही, बल्कि इस बातका एक सम्मत सुझाव लेकर आयेगी कि राजस्वकी इतनी मदे सघीय होगी। यदि एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त कर भी दी जाती है, तो भी हमें निश्चय ही बिलकुल सही आँकडे नही मिलेगे। बिलकुल सही आँकडे तो सिर्फ घटनाके घट चुकने — राजस्वके एकत्रित हो जाने — के बाद ही मिल सकते है। पर हमें शुरू करनेके लिए कुछ चीज चाहिए। मैं यह सुझाव देना चाहता हूँ कि कौन-सी मदें सघीय समझी जायेगी और कौन-सी नही समझी जायेगी — इसपर हमारा कोई समझौता होनेसे पहले, इस तरहकी चीज हमारे प्रयोजनके लिए आवश्यक नही है। इसलिए मै केवल इन मदोको लेता हूँ और कहता हूँ कि उसे हर दूसरी चीजसे हटकर अपना सारा ध्यान इन मदोपर ही केन्द्रित करना चाहिए और निश्चित रूपसे कहना चाहिए, 'हाँ वैदेशिक सीमा-कर, निर्यात शुल्क-समेत, सघीय होगा' या 'सघीय नही होगा।' तब वह तुरन्त यह जान जायेगी कि राजस्वके स्रोत क्या है। इसी तरह उसे अपनी बैठकमे विचार करके कहना चाहिए, 'ये वे दायित्व है जो सघीय होगे", और रियासतोको अपने लिए खुद फैसला करना चाहिए। आखिर उन्हे यहाँ आनेके लिए निमन्त्रित किया गया है, या वे अपनी इच्छासे यहाँ आये है। महाविभव नवाब भोपालने, और महाविभव बीकानेर नरेशने भी, जो आश्वासन दिया है, मै उसका कृतज्ञताके साथ स्वागत करता हूँ। सर अकबर हैदरीकी इस बातसे मुझे पूर्ण सहानुभूति है कि वे, हैदराबादके प्रतिनिधिकी हैसियतसे या रियासती प्रतिनिधि-मण्डलके प्रतिनिधिकी हैसियतसे भी, अँधेरेमे छलाँग नही लगा सकते। इसलिए मै कहता हूँ कि कोई भी अँधेरेमे छलाँग न लगाये, और, इस तरहकी विपत्तिसे बचनेके लिए, इसी

समय साझेदारीकी एक बहुत ही साधारण योजना होनी चाहिए और हमें वह साधारण योजना शुरू कर देनी चाहिए। तब संघीय सरकारको यह गुंजाइश रहेगी कि वह जो भार वहन करना पसन्द करे वह वहन करे; और जैसा कि महाविभव नवाब भोपालने कहा है, स्वयं संविधानमें काफी लचक रहनी चाहिए, जिससे कि संघीय सरकार और संघीय संसद ऐसा कर सकें। हम कोई फौलादी संविधान नहीं चाहते जिसमें से हम कभी निकल ही न सकें या जिसमें हम कभी कोई संशोधन या परिवर्धन ही न कर सकें। यदि हमारे पास एक लचकदार संविधान हो तो संघीय सरकार, जैसे-जैसे उसका अनुभव बढ़ेगा, एक विशेषज्ञ समिति नहीं, बल्कि दस विशेषज्ञ समितियाँ नियुक्त कर सकेगी, जो बहुत-सी चीजोंकी जाँच करेंगी। और तब संघीय सरकार जब अपना अभियान शुरू करेगी तो और जिम्मेदारियाँ लेगी और जैसे-जैसे वह जिम्मेदारियाँ लेती जायेगी उसे विभिन्न स्रोतोंसे राजस्व प्राप्त करनेके मार्ग भी मिलते जायेंगे। यदि एक बार शुरुआत हो जाये तो, मैं समझता हूँ, आगे किसी तरहकी भी कोई कठिनाई या मुसीबत नहीं होगी।

इसलिए मेरा ठोस सुझाव, यदि यह आपको अच्छा लगे, तो यह है कि हम इस रिपोर्टको धन्यवाद-सहित उप-समितिको वापस भेज दें और उप-समितिसे कहें कि जो सामग्री उसे उपलब्ध है उससे वह हमें एक ऐसी न्यूनतम योजना दे जो रियासतोंको स्वीकार हो, और हम उस योजनाको, किसी विशेषज्ञ समितिकी शक्लमें कोई अड़ंगा खड़ा किये बिना, एक प्रारम्भिक योजनाके रूपमें स्वीकार कर लें। यदि हम ऐसा करते हैं तो मेरे खयालमें, हम श्री जिन्नाकी आपत्तिका पूरी तरह समाधान कर देते हैं। सर अकबर हैदरीकी न्यायोचित आशंकाओंको भी हम इस तरह दूर कर देते हैं। और जो चीज मुझ-जैसे आदमीको अधिक युक्तियुक्त लगती है वह यह कि इस तरहके महत्त्वपूर्ण विषयपर भी हमारा और समय बरबाद नहीं होता। मुझे आपके आगे यह बात मान लेनी चाहिए कि मुझे एक ऐसी समितिसे, जो अपनी रिपोर्ट शायद बारह महीनोंमें या तीन महीनेमें या एक महीनेमें या तीन सप्ताहमें ही देगी, डर लगता है। मैं समझता हूँ कि यह परिषद् एक विशेष भारको वहन करनेके लिए बुलाई गई है। इसे साहसके साथ उस भारको अपने कंधोंपर लेना चाहिए और जिम्मेदारियोंको किन्हीं और समितियोंपर नहीं फेंकना चाहिए। जो भी ढाँचा हम गढ़ सकते हैं, उसे हमें सम्राट्की सरकारके आगे, पार्लियामेंटके आगे और भारतकी जनताके आगे भी रखना चाहिए। पर मेरा यह खयाल है कि जबतक हमारा इस कार्यके प्रति इस तरहका रुख नहीं होगा, जहाँतक मैं सोच सकता हूँ, हम आजके इस अभेद्य अंधकारमें कदापि प्रकाश नहीं देख सकेंगे।

बीचमें मेरे हस्तक्षेपका वस्तुतः यही कारण है। मेरा खयाल है कि मैंने जिस सुझावको इस समितिके आगे रखनेकी हिम्मत की है उसे मैंने काफी स्पष्ट कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउण्ड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी एँड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ १९२-३

११८. पत्र : कैंटरबरीके आर्कबिशपको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
१५ अक्टूबर, १९३१

प्रिय आर्कबिशपजी,

आपका पत्र पाकर बडी प्रसन्नता हुई। श्री एन्ड्रयूजने मुझे आज प्रात उसके लिए तैयार कर दिया था। मगलवार २० तारीखको सायकाल ५-३० पर मैं पैलेस पहुँच जाऊँगा। आपसे परिचित होने और जिस कार्यके लिए यहाँ आया हूँ उसपर आपके साथ विचार-विमर्श करनेके लिए मैं बहुत उत्सुक था।

इस विषयमे मैं आपसे बिलकुल सहमत हूँ कि हमारी बातचीत केवल हम दोनोतक ही सीमित रहनी चाहिए।

हृदयसे आपका,

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१०८)से।

११९. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
१५ अक्टूबर, १९३१

सर मानेकजी दादाभाई : श्रीमान्, महात्माजीने आगे बढ़कर यह कहा है कि उनका ठोस सुझाव, यदि यह इस सभाको अच्छा लगे तो, यह है कि यह रिपोर्ट धन्यवाद-सहित उप-समितिको वापस भेज दी जाये और उप-समितिसे कहा जाये कि जो सामग्री उसे उपलब्ध है उससे वह इस परिषद्को एक ऐसी न्यूनतम योजना दे जो रियासतोको स्वीकार हो, और कि हम उस योजनाको, किसी विशेषज्ञ समितिकी शक्लमें कोई अड़ंगा खड़ा किये बिना, एक प्रारम्भिक योजनाके रूपमें स्वीकार कर लें। परन्तु महात्माजी ने यह स्पष्ट नहीं किया कि न्यूनतम योजनासे उनका अभिप्राय क्या है। न्यूनतम योजनाका अर्थ क्या है, यह मैं अभी भी समझ नहीं पा रहा हूँ। पर, मुझे एक गम्भीर वैधानिक आपत्ति है। यदि आप संघको चालू करने जा रहे हैं, तो यह काम आप थेगलियाँ लगाकर और थोड़ा-थोड़ा करके नहीं कर सकेंगे। यदि संघको कार्य करना है तो वह पूरा, सम्पूर्ण, सर्वग्राही संघ होना चाहिए, जिसमें

१. जिस विषयपर बहस हो रही थी वह था, सघ और उसकी इकाइयोके बीच वित्तीय साधनोंका बँटवारा।

सन्देह या कठिनाईकी कोई गुंजाइश न रहे। आप एक प्रकारके आंशिक संघकी व्यवस्था नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त, यदि संघकी स्थापना करनी है तो वह उन आम सिद्धान्तोंके अनुरूप होना चाहिए जो इस तरहके सभी संघोंका आधार होते हैं। इसके अतिरिक्त, क्या महात्मा गांधीको यह विश्वास है कि यदि हमारे पास एक न्यूनतम योजना हो भी तो रियासतें उससे सहमत हो जायेंगी?

गाधीजी: मेरी योजनामे इसी मूल कठिनाईको हल करनेकी बात है।

[अग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबिल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २०५

१२०. भाषण: छात्रोंकी सभामे[1]

लन्दन
[१५ अक्टूबर, १९३१][2]

सहाध्यायिओ,

मैं लोगोंके आगे सभी तरहके विषयोपर, लेकिन खास तौरसे उस ध्येयके बारेमे बोलता रहा हूँ जो मुझे यहाँ लाया है, और अपने ध्येयके सिलसिलेमें मुझे जो कहना है वह तो अबतक आपको जबानी याद हो गया होगा। मेरा इरादा आपके आगे किसी खास विषयपर बोलनेका नही था। इसलिए मैंने सोचा कि एक नपे-तुले भाषणमें समय नष्ट न करके यदि मैं प्रश्नोके उत्तर दूं तो वह शायद हमारे समयका सबसे सुन्दर उपयोग होगा।

आप अपनी इच्छानुसार कोई भी प्रश्न मुझसे पूछ सकते हैं। जिस विषयके बारेमे आप पूछते हैं यदि उसकी जानकारी मुझे नही हुई तो मैं अपना अज्ञान साफ-साफ स्वीकार कर लूंगा। इसके सिवा, और कोई असमंजस आप मेरे लिए पैदा नही करेंगे। आप भी यदि मेरे प्रति स्पष्टवादिताका रुख अपनाये तो यह आपका सौजन्य होगा। मैंने आपको 'सहाध्यायी' कहा है। यह कोई औपचारिकता नही है। मैं अपनेको मूल रूपसे अध्येता ही समझता हूँ और यदि आप समझदार हैं, जैसा कि मैं हूँ (हँसी), तो जीवनमे आगे चलकर आप भी अपनेको अध्येता ही समझेंगे, विद्यार्थी ही मानेंगे।

जीवनके अपने अबतक के विविध अनुभवोसे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि हमारा विद्यार्थी-जीवन अपने कॉलेजो, विश्वविद्यालयों और लॉ चेम्बरोसे निकलनेके बाद आरम्भ होता है। वहाँ हमसे यह अपेक्षा की जाती है कि हम अपने पढ़ाईके विषयोको

१. सभा इंटरनेशनल स्टूडेंट्स मूवमेंट हाउस, रसेल स्क्वेयरमें हुई थी। विश्वके सभी भागोंके लगभग २०० छात्र उसमें उपस्थित थे।

२. तारीख महादेव देसाईकी डायरीके अनुसार दी गई है।

ज्ञानकी कुंजी मानकर और उनसे अतरग भावसे जुडकर अध्ययन करे। और उन स्थानोको जब हम छोडते है तो जो-कुछ हमने सीखा होता है उस सबको लगभग भूल जाते है। वस्तुत, बादके जीवनमे ही हमे बहुत-सी चीजें सीखनी होती है। तथाकथित विद्यार्थी-जीवन असली विद्यार्थी-जीवनके लिए महज एक तैयारी होती है। आप जब कालेजमे या कहीं अन्यत्र होते है, तो आपके पास निश्चित विषय होते है। वैकल्पिक विषयोमे भी आपको उन्हे एक विशेष ढगमे सीखना होता है, क्योकि आप एक साँचेमे कसे हुए होते है। परन्तु जब वह अवस्था समाप्त हो जाती है, तो आप एक आजाद पछीकी तरह हो जाते है, जो अपने पखोसे खूब ऊँचा उड सकता है। और आप जितना ऊँचा उडते है उतने ही शक्तिशाली होते जाते है। इसलिए मैं अभी भी एक ऐसा विद्यार्थी हूँ जो ससारके इस विद्यालयमें अभी अपनी शिक्षा समाप्त नही कर पाया है।

जब आप इधर-उधरसे लहरोके थपेडे खाते है और आपको अपनी सूझ-बूझका ही सहारा रह जाता है, तो एक कठिन समस्या सामने आती है। यदि आप अपनेको अध्ययनमे लगायें, यदि आप अपनेको अध्ययनके लिए, अनन्त शोधके लिए समर्पित कर दे, तो उस अध्ययनसे मिलनेवाले उल्लास और आनन्दकी कोई सीमा नही होगी। सत्यकी खोज बराबर मेरे अध्ययनका विषय रहा है। अध्ययन और खोजके अपने प्रारम्भिक दिनोमे मैंने देखा कि मैं सत्यको तबतक नही खोज सकता जबतक कि दूसरोपर नही बल्कि खुद अपनेपर चोटको न्योता न दूँ। मैं सत्यको केवल तभी खोज सकता था जब दूसरोको चोट पहुँचानेकी सारी भावनाको त्याग देता बल्कि आवश्यक होनेपर, खुद अपनेको चोट पहुँचाता। क्योकि जैसा कि आप जरूर जानते होगे, सत्य और हिंसा एक-दूसरेके विरोधी हैं। हिंसा सत्यको छिपाती है, और यदि आप सत्यको हिंसासे पानेकी कोशिश करते है तो आप सत्यकी खोजमें अपने भयानक अज्ञानका परिचय देते है। इसलिए सत्यकी खोजके लिए बिना किसी भी तरहके अपवादके अहिंसा ही एकमात्र साधन है। जीवनका सार मैंने जो पाया है वह अहिंसा है।

इस सक्षिप्त भूमिकाके साथ मैं अपनेको आपकी सेवामे प्रस्तुत करता हूँ। आपको मुझसे सभी तरहके प्रश्न पूछनेकी स्वतन्त्रता है।

गोल्ड कोस्टका एक नीग्रो छात्र: अपनी दांडी यात्रामें आपने पुलिसको और नम्बरदारोंको — सरकारके साथ वफादारीसे बँधे पुलिसके सिपाहियोको — इस्तीफे देनेकी सलाह दी थी। आपने गोरखाओसे भी कहा था कि वे आदेशोंको न मानें। क्या यह अहिंसाके विपरीत नहीं है?

गाधीजी प्रश्न रोचक है, पर यह ऊपरी ज्ञानका सूचक है। लेकिन लाचारी है, क्योकि यह दर्शन पुस्तकोसे पढा नहीं जा सकता। अन्तर्विरोध कोई नही है। पहली बात तो यह है कि मैंने नम्बरदारोसे यह कहा था कि अगर वे यह जान गये हो कि वे ऐसी सरकारकी सेवा कर रहे है जो गलत काम कर रही है, तो वे इस्तीफा दे दें। गलत काम करनेके लिए कोई व्रत, वचन या सकल्प नही हो सकता — जैसे कि किसी पुरुष या स्त्रीका प्रतिदिन ५० सिगार पीने या प्रतिदिन

व्हिस्कीकी दो बोतले पीने या भोजनसे पहले एक आदमीकी जान लेनेका व्रत या सकल्प कोई व्रत नही हो सकता। यदि पुलिसका सिपाही ऐसी सरकारकी सेवामे नियुक्त है जो गलत काम करती है, तो उस सेवाको छोडना उसका आवश्यक कर्त्तव्य हो जाता है। इसलिए मैंने लोगोको यह समझाया कि वे अपने साथ और अपने देशके साथ हिंसा कर रहे है और खुद सरकारको भी हानि पहुँचा रहे है। उसका परिणाम यह हुआ कि वे जेल गये और उन्होंने उसे बिना किसी शिकायतके सहन किया। सत्य और अहिंसाका उसमे कोई उल्लघन नहीं था। वह उनके लिए और मेरे लिए अच्छी चीज थी।

नम्बरदारो और दाडीके पुलिसके सिपाहियोको छोडकर अब मै पजाबपर आता हूँ। गढवाली सैनिकोंको अपने अधिकारियोसे आदेश मिला था। मैंने उसकी कभी हिंसाका कार्य कहकर निन्दा नही की है। वह भी देशभक्तिका कार्य था। उन्हे जेल हुई, जो और भी खराब थी। वह अनुशासनको तोडना था और उनमे से कुछको मार्शल लॉ के अधीन सजा दी गई। जहाँ मै उनकी इस बातके लिए सराहना करता हूँ कि उन्होने अपने देशवासियोपर गोली चलानेसे इनकार कर दिया और उसके लिए अभी भी कष्ट सह रहे हैं, वहाँ मै उनके लिए एक अहिंसात्मक प्रतिरोधीकी हैसियतसे दयाकी प्रार्थना नही कर सकता।

यदि सरकारकी बागडोर काग्रेसको दे दी जाये, तो काग्रेस उन्हे कल ही रिहा कर देगी। इस तर्कमे क्योकि कोई दोष नही है, इसलिए उसमे कोई अन्तर्विरोध नही है। जिसे पूरे इतिहासका पता है वह पूरे समझौतेको उठाकर मेरे मुँहपर फेक सकता है। उन्होने यही किया। कुछ देशवासियोने बिना विचारे ही मुझसे यह कहा कि मै इन लोगोको रिहा करवाऊँ। परन्तु मैंने कहा, 'नहीं।' यह चीज काग्रेसके आन्दोलनका अग नही थी कि इस तरहके सैनिकोको अनुशासन भग करना चाहिए। काग्रेसने इस तरहके आदेश नही दिये थे। वे अहिंसात्मक प्रतिरोधी नही थे, और यह बात याद रखिए कि हर देशभक्त अहिंसात्मक प्रतिरोधी नही है और न हर प्रतिरोधी देशभक्त ही है।

एक रूसी छात्र : यदि आप कम धार्मिक होते तो क्या आप जल्दी किसी समझौतेपर नहीं पहुँच जाते?

गाधीजी : ओह, मै आपका प्रश्न समझा। आप यह सुझाना चाहते है कि मुझे वादा कर लेना चाहिए और तोड देना चाहिए (हँसी)। मै आपको अब यह बताता हूँ कि मै राजनीतिमे क्यो आया। मै राजनीतिमे राजनीतिको इस बदनामीसे मुक्त करनेके लिए आया हूँ। आमतौरपर राजनीतिज्ञ कानूनके हर दावेसे मुक्त होता है। परन्तु मैंने सोचा कि इससे काम नही चलेगा। राजनीति साँपकी कुडलीकी तरह आपको चारो ओरसे कस लेती है और पीस डालती है। यह देखकर कि मै इसके बीचमे हूँ, मै लाचारीकी अपनी स्थितिको समझता हूँ और राजनीतिको काबूमे लानेकी कोशिश करता हूँ। यह माना जाता है कि मै, किसी-न-किसी तरह, विश्वके सबसे बडे सगठन—भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसका सचालन कर रहा हूँ। वह आज करोड़ो

लोगोका प्रतिनिधित्व करती है, जो उसकी पुकारका जवाब देते हैं। यदि कांग्रेस वास्तवमें सचाईके साथ अहिंसा और सत्यके आधारपर राजनीतिक कार्य करे, तो राजनीतिज्ञ इस निष्कर्षपर पहुँचेगे कि झूठे वादे करना आवश्यक नही है, और कि जब आप इस तरहके किसी साधनको अपनाते है तो राजनीति भ्रष्ट हो जाती है। क्योंकि कुछ धार्मिक व्यक्ति खराब है, इसलिए यह कहना कि धर्म ही खराब है, एक गलत अनुमान है। इस तरहका दृष्टिकोण बनाना बिलकुल गलत होगा। इसी तरह, क्योंकि राजनीतिज्ञ कुटिल तरीके अपनाते है, इसलिए यह कहना कि राजनीतिको सुधारा नही जा सकता, गलत है।

श्री कीर हार्डीको उकताहटके कारण ऐसा महसूस हुआ कि कॉमस सभा एक सच्चे ईसाईके लिए अच्छी जगह नही है, क्योंकि उसमे बहुसख्या बुरे लोगोकी है। पर यह चीज गलत है। हमें असहाय पक्षोके समर्थनमे अवश्य खडे होना चाहिए और उनके लिए लडनेको हमारा कॉमस सभामे होना सर्वथा न्यायोचित होगा। सफलतापर अधिकार मानव-प्राणियोको नही दिया गया है, पर प्रयत्नपर अधिकार हममे से प्रत्येकको दिया गया है। साथ ही, यह भी मत भूलिए कि यह दम भरना कि आप हर चीज अपनी निजी कोशिशसे ही करते है, अहकार है, क्योंकि आप घासका तिनकातक हिला नहीं सकते। ऐसा करनेसे पहले, आपका हाथ पक्षाघातका शिकार हो सकता है, क्योंकि जीवन इतना अनिश्चित है। हम ईश्वरकी दयापर निर्भर हैं। हमे सारी महत्त्वाकाक्षा छोड देनी चाहिए। हर कीमतपर सच्चे रहो और प्रयत्न करो, और फल ईश्वरपर छोड दो।

एक कोरियाई छात्र: अहिंसाके आधारपर आप पुलिस या राज्य या सेनाका विरोध क्यों [नहीं] करते?

गाधीजी मैं मानता हूँ, यह असगति है। यदि मै यह कहूँ कि सेना राज्यके लिए आवश्यक है, तो यह असगत होगा। मै सभी राज्योको पुलिस या सेनाके बिना काम चलानेके लिए आमन्त्रित तो कर सकता हूँ, पर मै अभी इस विश्वासपर नहीं पहुँच पाया हूँ कि आप पुलिसके बिना समाजको कायम रख सकते है। यदि हम चोरो और लुटेरोको समाजमे स्वच्छन्द विचरने दे तो मै पुलिस-विहीन समाजकी कल्पना कर सकता हूँ। टॉल्स्टॉयने 'दुखोबोर्स'की कल्पना की है। ससारमे सब-कहीं ऐसे लोग है जिन्हे पुलिसकी रक्षाकी जरूरत नहीं है। परन्तु उन्हे यह बात स्वीकार कर लेनी चाहिए कि यदि उनके आस-पासका परिवेश व्यवस्थित न हो, तो वे वैसा जीवन भी जी नही सकेंगे। यह चीज मेरी योजनाके बाहर नहीं है, पर मै इस समय अपने सीमित कार्यमे फँसा हूँ। इसलिए आप यह कह सकते है कि मेरा पुलिसको बरदाश्त करना अहिंसाको मर्यादित करना है। सेना अहिंसाके विपरीत है। पहले मामलेमे कारण मुझमे साहसका अभाव है, और दूसरेमे अपने लोगोको यह विश्वास दिलानेकी असमर्थता है कि वे सेनाके बिना काम चला सकते है। मैंने अभी इतनी शक्ति अर्जित नही की है कि चोरो, बदमाशो और हत्यारोके विरुद्ध अहिंसाको रख सकूँ, परन्तु मै लोगोसे यह कह सकता हूँ कि वे सेनाके झुडोके विरुद्ध अहिंसाको रखें।

यदि भारत दैवयोगसे अहिंसा द्वारा अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेता है, तो शायद हम दुनियाको यह दिखा सकेंगे कि सैनिक राज्य आवश्यक नहीं है। सेना-विहीन राज्यके विचारको मैं कोरा काल्पनिक नहीं मानता हूँ, पर उसके लिए और भी उच्च कोटिका साहस और पवित्रता आवश्यक है।

एक अंग्रेज छात्र : आपके लोग भूमिपर जीवन-निर्वाह करते हैं, हमारे लोग कामपर जीवन-निर्वाह करते हैं। वे हड़तालको अनिश्चित कालतक चला नहीं सकते। आप इसका क्या इलाज सुझाते हैं?

गांधीजी : यह सचमुच असमंजसमें डालनेवाला प्रश्न है। मेरे लिए कोई इलाज बताना धृष्टता होगी। इस देशमें मैं बिलकुल अजनबी हूँ और यहाँकी परिस्थितियोंकी मुझे जानकारी नहीं है। पर क्योंकि हम सहाध्यायी हैं, इसलिए परस्पर विचार-विनिमय कर सकते हैं। मैं अपने निजी विचार रखूँगा। मैं आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि आपकी विपत्ति मुझे भी व्यथित करती है। यदि ईश्वरने मुझे इसे समाप्त करनेकी हिम्मत दी तो मैं खुशीसे ऐसा करूँगा। तो देखिए, मैंने हड़तालें चलाई हैं। अपने बारेमें मेरा यह दावा है कि मैं हड़तालोंको काफी सफलताके साथ चलानेमें विशेषज्ञ हूँ।

पर एक अनिवार्य शर्त यह है कि हड़तालियोंको दानसे गुजारा नहीं चलाना चाहिए, उन्हें अपनी मेहनतसे गुजारा चलाना चाहिए। जिन लोगोंने उन्हें हड़ताल करनेकी सलाह दी थी और जो उसमें उनका नेतृत्व कर रहे थे, उनमें एक मिल-मालिककी बेटी थी।[1] हड़तालियोंने जब नगरपालिकाके लिए इमारत बनाई तो वह उनके साथ काम करती रही और रेत इधरसे-उधर पहुँचाती रही। एक और अवसर-पर जब मैं जेलमें था, मेरे लोगोंने हड़तालियोंको कताई और बुनाईका काफी काम दिया और उस कामके लिए उन्हें बाजारमें मिलनेवाली मजदूरीसे अधिक मजदूरी दी। वे आठ घंटे काम करते थे और अपने गुजारे-लायक पैदा कर लेते थे। परन्तु लन्दनमें, जहाँ एक सुसंगठित समाज है, परिस्थिति कठिन है। लेकिन हम कठिनाई-पर अवश्य काबू पा सकेंगे, क्योंकि जहाँ चाह है वहाँ राह है। कमर कस लीजिए और दानसे जीवन-निर्वाह करनेको तैयार मत होइए। कोई उपाय खोजिए।

इस समस्यापर जो अंग्रेज मुझसे सलाह-मशविरा कर रहे हैं, उनसे मैं कहता हूँ : इस अत्यन्त संगठित औद्योगीकरणको तोड़ दो। गाँवोंको लौटो। आपको जीवन-की अपनी धारणाको बदलना है। आपका रहन-सहनका स्तर बनावटी है, यह ज्यादा दिन टिकनेवाला नहीं है। आधुनिक सभ्यता एक खिलौना है। आप अपने रहन-सहनके स्तरको बढ़ाते जा रहे हैं। आदमीकी जरूरतें जितनी बढ़ती जाती हैं, उतना ही वह दूषित होता जाता है और उनके बोझसे टूटता जाता है। लंकाशायरके एक अंग्रेजने कहा था : "भूखों मरनेकी मुझे चिन्ता नहीं है, पर मैं खुद अपनी नजरोंमें गिर गया हूँ।" मैं एक ऐसे आदमीको जानता हूँ जो सच्चरित्र और देशभक्त था, पर अपने लोभके कारण जब उसने दस लाख रुपया कमा लिया, तो मैंने उसे बधाई नहीं, बल्कि अपनी संवेदना भेजी। परन्तु बादमें उसने सब-कुछ खो दिया। तब वह

१. अनसूया साराभाई, देखिए खण्ड १४, पृष्ठ २०२।

किसीके सामने ही नही आ पाता था और आखिर एक दिन उसने जहर खा लिया। अफसोस, इस तरहका एक सच्चरित्र और अच्छा मित्र अपनी उत्तरोत्तर बढती जरूरतो-के कारण ही आज नही रहा। मेरे तरीकेको अपनानेके लिए आपको, खासकर अंग्रेज जातिके लोगोको अपने जीवनका ढग बदलना होगा।

आपकी जाति शोषकोकी जाति है। (हँसी)

आपका राजा इंग्लैंड और 'डोमीनियनो' का महाराजा है, परन्तु वह भारतका सम्राट् है। यह चीज उसके पीछे छिपे गर्वकी सूचक है। इसलिए आपकी स्वतन्त्रता झूठी है। आपने भारतीयोको अपनी इच्छानुसार झुकाने और आपकी वस्तुएँ लेनेको बाध्य करनेके लिए अनेक अपराध किये है। आपका सबसे धनी देशोमें होना कोई आश्चर्यकी बात नही है। पर आपने अपनी यह दौलत कहाँसे प्राप्त की है? इस धरतीसे तो नही की है। यह साम्राज्यके सभी भागोसे आई है। आपके लोग कहते है, उनकी भारतमें रुचि है। किसलिए? क्योकि वहाँ इतने-सारे लोगोको जीविका मिलती है? मेरी योजनापर यदि आप चले, तो जिस क्रान्तिका मै आपके आगे सुझाव रखना चाहूँगा वह यह है कि अपने जीवनका ढग बदलो। उस वक्तका इतजार मत करो जब आपको ऐसा करनेके लिए मजबूर हो जाना है। जो चीज मेरे मनको उद्वेलित कर रही है वह मैंने आपके आगे रख दी है। यद्यपि मै यह चाहता था कि मै अपने रास्तेपर चलूँ और आप अपनेपर, पर सहाध्यायियोकी हैसियतसे आपने मुझे चुनौती दी। इसलिए मैंने अपना हृदय खोलकर रख दिया।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-१०-१९३१। महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी १९३१, से भी; सौजन्य: नारायण देसाई

१२१. प्रश्नोत्तर[1]

लन्दन

[१६ अक्टूबर, १९३१के पूर्व][2]

प्र०: यदि सब बातोसे साम्प्रदायिक प्रश्नका अधिक महत्त्व नहीं है तो खुद आपने एक समय यह क्यो कहा था कि जबतक यह प्रश्न हल न हो जायेगा, आप गोलमेज परिषद्में जानेका विचार भी न करेंगे?

उ०: आप ठीक कहते है। परन्तु आप यह भूल जाते है कि भारतमें मेरे अंग्रेज मित्र और दूसरे मित्रोने इस बातके लिए कि मुझे इंग्लैंड जाना ही चाहिए,

१. महादेव देसाईके "लंडन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। महादेव देसाई बताते है कि ये प्रश्नोत्तर एकही व्यक्तिके साथ नहीं हुए, बल्कि यहाँ अलग-अलग लोगोंके साथ हुई गांधीजी की बातचीतके दौरान उनसे पूछे प्रश्न और गांधीजी के उत्तर दिये जा रहे हैं।

२. "लन्दनका पत्र" में महादेव देसाई अन्यत्र कहते है कि जब मैं यह लेख लिख रहा हूँ, मद्य-निषेधवादी कार्यकर्ताओंके साथ गांधीजी की बातचीतका समय निकट आता जा रहा है। इन लोगोंके साथ गांधीजी की बातचीत १६ अक्टूबर को हुई थी।

मुझपर इतना दबाव डाला कि मै विवश हो गया। और मुझे भी ऐसा लगा कि और किसी कारण नही तो लॉर्ड ईविनको दिये गये वचनकी रक्षा करनेके लिए ही मुझे यहाँ आना चाहिए। अब यहाँ मै अपनेको उन लोगोके सामने पाता हूँ जो राष्ट्रवादी नही है और केवल साम्प्रदायिक नेता होनेके कारण ही चुने गये है। इसलिए यद्यपि मैंने कहा कि किसी निर्णयपर न पहुँच सकना हमारे लिए शर्मकी बात है, फिर भी इसका कारण तो इस समितिके सदस्य जिस तरह चुने गये है, उसीमे समाया हुआ है। स्थिति ऐसी अवास्तविक है कि शब्दोमे उसका वर्णन नही किया जा सकता है। कुछ सदस्य तो ऐसे है कि यदि वे भारतमे हों तो जिन साम्प्रदायिक समुदायोका प्रतिनिधित्व करनेका वे दावा करते है, उन्ही समुदायोंका मत लिया जाये तो वे उन्हे अस्वीकार कर देगे।

प्र० : अस्पृश्योंके विषयमें क्या स्थिति है? डॉ० अम्बेडकर आपपर बहुत बिगड़े थे और उन्होंने कहा कि कांग्रेसको अस्पृश्योंका प्रतिनिधि होनेका दावा करनेका कोई अधिकार नहीं है?

उ० : आपने यह प्रश्न पूछा, इससे मुझे प्रसन्नता हुई है। डॉ० अम्बेडकरकी बातका मै बुरा नही मानता। हरएक अस्पृश्यकी तरह डॉ० अम्बेडकरको मुझपर थूकने तकका अधिकार है। और वे मुझपर थूके तो भी मै हँसता ही रहूँगा। परन्तु मै आपको यह बताना चाहता हूँ कि डॉ० अम्बेडकर देशके उसी एक भागकी तरफसे बोलते है जिस भागमे वे रहते है। हिन्दुस्तानके दूसरे भागोकी तरफसे वे नही बोल सकते। मुझे देशके कई भागोसे तथाकथित 'अस्पृश्यो' की ओरसे असख्य तार मिले है, जिनमे उन्होने डॉ० अम्बेडकरको अपना प्रतिनिधि माननेसे इनकार किया है और काग्रेसमे अपना पूरा विश्वास प्रगट किया है। इस विश्वासका कारण भी है। काग्रेस उनके लिए जो काम कर रही है उसे वे जानते है और वे यह भी जानते है कि यदि अपनी आवाजकी ओर लोगोंका ध्यान आकर्षित करनेमे वे सफल न होगे तो उनकी तरफसे मै उनके सत्याग्रह-सग्रामका नेतृत्व करूँगा और यदि कट्टरपथी हिन्दुओकी ओरसे कोई विरोध हुआ तो उसे ठण्डा कर दूँगा। दूसरी ओर अगर उन्हे पृथक् प्रतिनिधित्व, जिसकी माँग डॉ० अम्बेडकर इतना आग्रहपूर्वक कर रहे है, दे दिया जाता है तो इससे खुद उन्हीका बहुत बडा नुकसान होगा। इससे हिन्दू समाज दो सशस्त्र छावनियोमे बँट जायेगा और उससे अनावश्यक विरोध-भाव पैदा होगा।

प्र० : मै आपकी बातको समझता हूँ, और आप न्यायतः अस्पृश्योंकी तरफसे बोल सकते है, इसमें भी मुझे कोई सन्देह नहीं है। परन्तु मालूम होता है, आप इस बातपर ध्यान नहीं दे रहे है कि दुनियामें सब जगह सब कौमें अपने लोगोंको ही अपना प्रतिनिधि बनानेका आग्रह रखती है। उत्तरके निष्ठावान उदारदलीय नेता मजदूरोके सच्चे प्रतिनिधि बन सकते है, परन्तु वे अपने लोगोंमें से ही अपने प्रतिनिधि भेजना पसन्द करते है और आपके विरुद्ध जो सबसे बड़ी बात है, वह यह है कि आप अस्पृश्य नहीं है।

उ० · मै यह अच्छी तरह जानता हूँ। परन्तु मै उनका प्रतिनिधि होनेका दावा करता हूँ, इसका यह मतलब नही है कि मै व्यवस्थापिका सभाओमे भी उनका प्रतिनिधि बनकर जाऊँगा। ऐसा तो किसी भी तरह नही हो सकता। मै तो चाहूँगा कि व्यवस्थापिका सभाओमें उन्हीमें से चुने हुए लोग उनका प्रतिनिधित्व करे, और यदि वे न चुने जा सके तो मै ऐसा कानून चाहूँगा जिससे चुने गये सदस्य उन्हे अतिरिक्त सदस्योके रूपमे चुन ले। जब मै उनका प्रतिनिधित्व करनेकी बात कहता हूँ तब गोलमेज परिषद्मे प्रतिनिधित्व करनेकी बात कहता हूँ। और मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि कोई हमारे इस दावेको चुनौती देता है तो मै खुशीसे जनमत-सग्रहका सामना करूँगा और उसमे सफल होऊँगा।

प्र०: मुसलमानोके बारेमें भी आप जो-कुछ कहेंगे, उपर्युक्त दृष्टिसे उसे सुनना रोचक होगा। आप यह तो नहीं कहते कि जो मुसलमान यहाँ हैं वे अपनी कौमके प्रतिनिधि नहीं हैं?

उ० · वे चुने नही गये है, और मै आपको यह बताता हूँ कि मैंने कई सच्चे राष्ट्रवादी मुसलमानोको इससे अलग रहनेको कहा है। ऐसे युवा मुसलमान नेताओकी एक बहुत बडी तादाद है जो इस समस्याके साम्प्रदायिक हलके खिलाफ है। यहाँ मै दो के ही नाम बताता हूँ, जिन्हे मै उन्ही मित्रोके जरिये जान पाया हूँ जो आज काग्रेसके खिलाफ खडे है। ये दो नेता है श्री ख्वाजा और श्री शेरवानी। मै खुद तो मुसलमानोको जो-कुछ भी वे माँगते है देनेके लिए तैयार हूँ, और हिन्दुओ तथा सिखोको इस विषयमे मेरा साथ देनेपर राजी करनेको मै आधी-आधी रातके बाद तक जागता रहा हूँ, लेकिन अपने प्रयत्नमे सफल नही हो पाया हूँ। यदि सिख प्रतिनिधि सिखो द्वारा चुने गये होते और सरकार द्वारा नामजद न होते तो क्या आप समझते है कि मै असफल हुआ होता? तब शायद मास्टर तारासिह[1] यहाँ होते। मै उनके विचारोको जानता हूँ और श्री जिन्नाकी १४ माँगोके सामने उनकी १७ माँगे है। परन्तु मुझे विश्वास है कि मै उन्हे समझा लेता, क्योकि आखिरकार वे कन्धेसे-कन्धा मिलाकर लडनेवाले हमारे साथी ही तो है। फिर यदि वर्तमान परिस्थितिमे समझौता करनेमे हम असफल हो जाते है तो क्या यह कोई आश्चर्यकी बात होगी? इसीलिए तो मैंने यह कहा कि पहले ही हमारे मार्गमे अडचने डाली गई है और अब यह कहकर, कि शासन-विधानकी रचनाके प्रश्नका निर्णय होनेके पहले साम्प्रादयिक समस्याका निर्णय हो जाना चाहिए, हमारे मार्गमें और अधिक बाधा न डाले। मै उनसे यह कहता हूँ कि हमे क्या मिलेगा, यह जान लेने दीजिए, ताकि उसके आधार-पर मै इस बेमेल चुने हुए मण्डलमे भी एकता लानेका प्रयत्न करूँ।

ईश्वरके लिए हमारे सामने कोई ठोस चीज तो रखिए। हमारे धनुषकी यह दूसरी डोरी होगी और वह मसलेको हल करनेमे मदद करेगी, क्योकि फिर मैं उनसे यह कह सकूँगा कि वे एक बेशकीमती चीजको नष्ट कर रहे हैं। परन्तु आज मै

१. सिख नेता।

उनके सामने कुछ भी नही रख सकता हूँ। मसला हल न भी हो तो मैंने खानगी पच-फैसला, न्यायाधिकरण आदि कई मार्ग सुझाये है। यही स्थिति है। मै अपने मित्रोका सेवक हूँ, और लॉर्ड इर्विनकी मै अपने मित्रकी तरह इज्जत करता हूँ, इसी-लिए मै यहाँ आया हूँ। परन्तु अब मै यह देखता हूँ कि यह एक ऐसी विकट स्थिति है, जिससे निबटना असम्भव है।

प्र० : क्या यह बिलकुल असम्भव है? क्या आप यह मानते है कि आपको आना ही नहीं चाहिए था?

उ० : बिलकुल ऐसा तो नही है, और प्रयत्न करना मै आखिर तक नही छोडूँगा। जहाँतक केवल मेरे यहाँ आनेका सम्बन्ध है, मै यहाँ आया, इसके लिए मुझे जरा भी दुख नही है। कारण यह है कि मै जानता हूँ, परिषद्‌के बाहर, अप्रत्यक्ष रूपसे जो काम मै कर रहा हूँ वह सम्पूर्णतया सन्तोषजनक है और यहाँ मै ऐसे सम्पर्क स्थापित कर रहा हूँ जिन्हे मै अपने मनमे एक धरोहरकी तरह सँजोकर रखूंगा।

प्र० : तो इससे क्या मै यह समझ लूँ कि आप साम्प्रदायिक प्रश्नको अधिक महत्त्व नहीं देते है?

उ० : मैंने यह कभी नही कहा। मै यह कहता हूँ कि जिस मुख्य बातपर खास जोर देना चाहिए था, उसे इस प्रश्नके द्वारा दब जाने दिया गया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-१०-१९३१

१२२. भेंट : कैलेण्डरको[1]

लन्दन

[१६ अक्टूबर, १९३१]

प्र० : गांधीजी, क्या आप ऐसा मानते है कि थोक उत्पादनसे जनताका जीवन-स्तर ऊँचा हो जायेगा?

उ० : मै तो ऐसा कतई नही मानता। श्री फोर्डकी दलीलमें एक बहुत बडी भ्रान्ति है।[2] यदि थोक उत्पादनके साथ वितरण भी उतने ही बडे पैमानेपर नही हुआ तो इसके परिणामस्वरूप दुनिया बहुत बडी विपत्तिमे फँस सकती है। फोर्डकी

१. एक अमेरिकी पत्र-प्रतिनिधि। यह प्यारेलाल नैयरके लेख "थोक उत्पादन बनाम जनसाधारण द्वारा उत्पादन" से उद्धृत किया गया है। इसमें उन्होने भेंटकर्त्ताका नाम नहीं बताया है। उसका नाम और भेंटकी तिथि दोनों महादेव देसाईकी १९३१ की डायरीकी पाण्डुलिपिसे लिये गये हैं।

२. भेंटकर्ता इससे कुछ दिन पूर्व अमेरिकामें फोर्डसे मिले थे। उन्होंने यह विचार व्यक्त किया था कि सस्ती वस्तुओंकी माँगसे बड़े पैमानेपर उत्पादनको प्रोत्साहन मिलेगा।

मोटर गाडियोको ही लीजिए। देर-सवेर ऐसी स्थिति आयेगी ही जब और ज्यादा उत्पादनकी गुजाइश नही रह जायेगी। मोटर गाडियोका उत्पादन उस बिन्दुसे आगे नही बढाया जा सकता। फिर क्या होगा?

थोक उत्पादनमे उपभोक्ताकी सच्ची आवश्यकताका कोई खयाल नही रखा जाता। अगर थोक उत्पादन अपने-आपमे कोई अच्छाई होती तब तो इसमे अनन्त वृद्धिकी गुजाइश होती। लेकिन, यह बात साफ-साफ दिखाई जा सकती है कि थोक उत्पादनकी अपनी सीमाएँ भी है। अगर सभी देश उत्पादनके इसी तरीकेको अपना ले तो इतना अधिक उत्पादन होगा कि उसके लिए बाजार ही नही मिलेगा। फिर थोक उत्पादन बन्द करना पडेगा।

प्र० : आप ऐसा तो नहीं मानते कि पाश्चात्य संसारमें उत्पादन उस चरम बिन्दुपर पहुँच चुका है? श्री फोर्ड कहते है कि ऊँचे स्तरकी जरूरतसे ज्यादा वस्तुओंका उत्पादन कभी हो ही नहीं सकता; दुनियाकी जरूरतें लगातार बढ़ती जा रही हैं और इसलिए यद्यपि किसी खास वस्तुका उत्पादन उस सीमातक पहुँच सकता है जिससे आगे बाजारमें उसकी खपत न हो सके, लेकिन सभी वस्तुओके उत्पादनके सम्बन्धमें वह चरम-स्थिति कभी नहीं आयेगी।

उ० बहुत विस्तारसे अपनी दलील पेश किये बिना मैं अपना यह विश्वास साफ-साफ जाहिर कर देना चाहूँगा कि थोक उत्पादनका जो भूत आजकल हमपर सवार है, वही दुनियाकी मुसीबतोका कारण है। एक क्षणको यह मान भी ले कि मशीनोसे मानव-समाजकी सभी आवश्यकताएँ पूरी की जा सकती हैं तो भी यह तो है ही कि उत्पादन कुछ विशेष क्षेत्रोमे सिमट आयेगा, जिससे वितरणका नियमन करनेके लिए बहुत घुमावदार रास्ता अपनाना पडेगा। इसके विपरीत यदि किसी वस्तुका उत्पादन और वितरण उसी क्षेत्रमें होता है जिसमें उसकी आवश्यकता है तो वितरणका नियमन अपने-आप हो जायेगा और धोखा-धडीकी कम गुजाइश रहेगी और सट्टेबाजीकी तो कोई गुजाइश रहेगी ही नही।

इसके बाद उस अमेरिकी मित्रने श्री फोर्डकी एक प्रिय योजनाका उल्लेख किया। उसने बताया कि कोयले और बाष्पकी बुराईके सम्भावित उपचारके रूपमें बिजलीको अपनाकर और तारों द्वारा दूर-दूरके क्षेत्रोमें विद्युत्-शक्ति पहुँचाकर वे उद्योगोका विकेन्द्रीकरण करना चाहते हैं। इस योजनाके लागू कर दिये जानेपर छोटे-छोटे साफ-सुथरे और धुएँसे मुक्त ऐसे हजारो गाँव होंगे जिनमें अनेकानेक कारखाने होंगे और उन कारखानोका संचालन स्वयं ग्रामीण समुदाय करेंगे। अन्तमें उसने गांधीजी से पूछा, "अगर यह मान लें कि यह सब सम्भव है तो इससे आपकी आपत्तिका निराकरण किस हदतक हो जाता है?"

उ० : इससे मेरी आपत्तिका निराकरण नही होता, क्योकि जहाँ यह सच है कि उस योजनाके अन्तर्गत उत्पादन अनगिनत क्षेत्रोमे होगा, वही यह भी सही है कि शक्तिकी आपूर्त्ति किसी एक विशेष केन्द्रसे ही की जायेगी। मेरा खयाल है, अन्तमें

यह चीज घातक साबित होगी। इससे एक ही मानव-सस्थाके हाथोमे इतनी अधिक शक्ति आ जायेगी कि उसके बारेमे सोचते हुए भी मुझे भय लगता है। उदाहरणके लिए, शक्तिके स्रोतके ऐसे नियन्त्रणका परिणाम यह होगा कि मुझे रोशनी, पानी, यहाँतक कि हवा आदिके लिए भी उसीपर निर्भर रहना होगा। मै तो मानता हूँ कि यह स्थिति बहुत भयकर होगी।

प्र० : . . बहुत अधिक यन्त्रोंके उपयोगके कारण यूरोप और अमेरिकामें जो समस्या खड़ी हो गई है उसके समाधानके सम्बन्धमें क्या आपका कोई सुझाव है?

उ० : ये राष्ट्र दुनियाकी तथाकथित कमजोर या असगठित जातियोका शोषण कर रहे है। ज्यो ही इन जातियोको इस चीजका भान होगा और वे यह निश्चय कर लेगी कि अब वे अपना शोषण नही होने देगी, तुरन्त ऐसी स्थिति आ जायेगी कि वे केवल उन्ही चीजोसे सन्तुष्ट हो जायेगी जिनका उत्पादन वे खुद कर सकती है। उस हालतमे, कमसे-कम जहाँतक जीवनके लिए अत्यन्त आवश्यक वस्तुओका सम्बन्ध है, थोक उत्पादनका सिलसिला बन्द हो जायेगा।

प्र० : आपका मतलब क्या यह है कि यह एक जागतिक प्रणालीके रूपमें लुप्त हो जायेगा?

उ० हाँ, यही है।

प्र० : लेकिन, इन जातियोंको भी तो, जैसे-जैसे इनकी आवश्यकताएँ बढ़ेंगी, अधिकाधिक वस्तुओंकी जरूरत पड़ेगी।

उ० . तब वे अपनी जरूरतकी चीजोका उत्पादन खुद करेगी। और जब ऐसा होगा तो थोक उत्पादनका जो तकनीकी अर्थ है, उस अर्थमे वह बन्द हो जायेगा।

प्र० : मतलब यह कि वैसा उत्पादन स्थानीय तौरपर होने लगेगा?

उ० . जब उत्पादन और उपभोग दोनो सम्बन्धित क्षेत्रोतक ही सीमित हो जाते है तो किसी भी कीमतपर जितना बन पडे उतना अधिक उत्पादन करनेका प्रलोभन समाप्त हो जाता है। उस हालतमे हमारी आजकी अर्थ-व्यवस्थासे उत्पन्न तमाम कठिनाइयाँ और समस्याएँ भी समाप्त हो जायेगी। अब एक ठोस उदाहरण लीजिए। आज इग्लैड सारी दुनियाके लिए कपडेकी मण्डी बना हुआ है। इसलिए इसे दुनियाको अपनी दासतामे रखने और अपने कपडेके लिए बाजार कायम रखनेकी आवश्यकता है। लेकिन, मैंने जिस परिवर्तनकी तजवीज की है, उस परिवर्तनके सम्पन्न हो जानेपर वह अपने उत्पादनको अपनी साढ़े चार करोडकी आबादीकी वास्तविक आवश्यकताओतक ही सीमित रखेगा। जब उस आवश्यकताकी पूर्त्ति हो जायेगी तब उत्पादन अनिवार्यत. रुक जायेगा। तब केवल विदेशोसे सोना लानेके लिए एक राष्ट्रके लोगोकी जरूरतोका खयाल रखे बिना और उन्हे दरिद्रताकी स्थितिमे पहुँचा देनेका खतरा उठाकर उत्पादनको जारी नही रखा जायेगा। फिर, चन्द लोगोकी थैलियोमे अस्वाभाविक रूपसे धन इकट्ठा नही होगा और न उस अतिसम्पन्नताके बीच शेष लोग अभावकी जिन्दगी जियेंगे, लेकिन आज हो तो यही रहा है। उदाहरणके लिए

हम अमेरिकाको ले सकते हैं। वह तरह-तरहकी चमक-दमकवाली वस्तुओ या अपने अद्वितीय कौशलको बेचकर — इन्हे बेचनेका उसे अधिकार है — दुनियापर अपना आर्थिक साम्राज्य कायम किये हुए है। वह थोक उत्पादनके चरम-विन्दुपर पहुँच गया है, फिर भी अपने यहाँसे न तो बेरोजगारीको दूर कर पाया है और न अभावको। आज भी अमेरिकामे ऐसे हजारो, बल्कि शायद लाखो लोग है जो कष्टपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे है, हालांकि चन्द लोगोके पास अपार धन-वैभव है। थोक उत्पादनसे पूरे अमेरिकी राष्ट्रको लाभ नही हुआ है।

प्र० : वहाँ दोष तो वितरणके सम्बन्धमें है। इसका मतलब यही है कि जहाँ हमारे उत्पादनके साधनोंमें बहुत अधिक प्रगति हुई है, वितरण-व्यवस्था अब भी दोष-पूर्ण है। यदि वितरणमें समानता लाई जा सके तो क्या थोक-उत्पादनकी बुराइयाँ दूर नहीं हो जायेंगी?

उ० : नही, नही होगी, क्योकि यह बुराई तो अनिवार्यत. इस प्रणालीसे ही जुडी हुई है। वितरणमे समानता तभी आ सकती है जब उत्पादन स्थानीय आवश्यकताओंके लिए किया जाये। दूसरे शब्दोमें कह सकते है कि समान वितरण तभी सम्भव है, जब उत्पादन और वितरण दोनो साथ-साथ चले। जबतक आप अपने मालकी खपतके लिए दुनियाकी और मण्डियोकी टोहमें है तबतक वितरण कभी समान नही हो सकता। इसका मतलब यह नही कि पाश्चात्य राष्ट्रोने विज्ञान तथा सगठन-कौशलके क्षेत्रमे जो अद्भुत प्रगति की है, उसका दुनियाके लिए कोई उपयोग ही नही है। इसका मतलब इतना ही है कि पश्चिमी राष्ट्रोको अपने कौशलका उपयोग अपने घरमे ही करना चाहिए। अगर वे उसका उपयोग परोपकारकी भावनासे विदेशोमें करना चाहते हो तो अमेरिकाको कहना चाहिए, हम पुल बनाना जानते है, इस कौशलको हम दुनियासे छिपाकर नही रखना चाहते, बल्कि दुनियासे हमारा यह कहना है कि हम तुम्हे पुल बनाना सिखायेंगे और उसके लिए कोई कीमत नही लेगें। अमेरिका कहता है, 'जहाँ दूसरे राष्ट्र गेहूँका एक पौधा उगा सकते है वहाँ हम दो हजार पौधे उगा सकते है।' उस हालतमें अमेरिकाको, जो सीखना चाहे, उन्हे वह कौशल नि.शुल्क सिखाना चाहिए, लेकिन अपने मनमे सारी दुनियाके लिए गेहूँका उत्पादन करनेकी हवस नही रखनी चाहिए, क्योकि उससे तो दुनिया सचमुच दुर्दिनमे पड जायेगी।

इसके बाद उस अमेरिकी मित्रने रूसका उल्लेख करते हुए गांधीजी से पूछा कि क्या वह ऐसा देश नहीं है जिसने, आप शोषणका जो अर्थ लगाते हैं, उस अर्थमें कम उद्योगीकृत राष्ट्रोंका शोषण किये बिना या असमान वितरणकी खाईमें गिरे बिना थोक उत्पादन-पद्धतिका विकास कर दिखाया है।

उ० : मतलब यह कि आप मुझसे राज्य-नियन्त्रित उद्योगपर, अर्थात् जिस अर्थ-व्यवस्थामे रूसकी तरह उत्पादन और वितरण दोनोका नियन्त्रण और नियमन राज्य करता है, उस व्यवस्थापर अपने विचार व्यक्त करनेको कहते है। तो सुन

लीजिए मेरा विचार। यह एक नया प्रयोग है। अन्ततः यह कहाँतक सफल होगा, मै नही कह सकता। अगर यह बल-प्रयोगपर आधारित न होता तो मै इस व्यवस्था-पर मुग्ध हो जाता। लेकिन, आज चूँकि यह बल-प्रयोगपर आधारित है, इसलिए मै कह नही सकता कि यह व्यवस्था हमे कहाँतक और किधर ले जायेगी।

प्र० : तो भारतके आदर्श भविष्यकी आपकी जो कल्पना है, उसमें थोक-उत्पादनके लिए स्थान नहीं है?

उ० : क्यो नही, उसके लिए तो स्थान है, लेकिन बल-प्रयोगपर आधारित थोक उत्पादनके लिए कोई स्थान नही है। आखिरकार चरखेका सन्देश भी तो वही चीज है। यह भी बडे पैमानेपर किया जानेवाला उत्पादन ही है, लेकिन आम लोगोके अपने ही घरोमे किया जानेवाला। यदि आप एक व्यक्ति द्वारा किये गये उत्पादनको लाखोकी सख्यासे गुणा कर दें तो परिणाम क्या एक बहुत बडे पैमानेपर थोक उत्पादन-के रूपमे ही सामने नही आयेगा? लेकिन मै यह समझता हूँ कि आप जिस "थोक उत्पादन" शब्दका प्रयोग कर रहे है, वह एक पारिभाषिक शब्द है, जिसका मतलब होता है कमसे-कम लोगो द्वारा अत्यन्त जटिल यन्त्रोंकी सहायतासे अधिकसे-अधिक उत्पादन। मै इसी निर्णयपर पहुँचा हूँ कि यह गलत चीज है। मेरा यन्त्र बहुत ही साधारण ढगका होना चाहिए जिसे मै करोडो लोगोके घरोमे रख सकूँ। फिर, मेरी प्रणालीके अन्तर्गत आर्थिक विनिमयका साधन मुद्रा नही, श्रम ही होगा। जो भी अपने श्रमका उपयोग कर सकता है उसके पास वह साधन अर्थात् धन होगा। वह अपने श्रमको कपडेकी शक्ल देता है, अन्नका रूप प्रदान करता है। अगर उसे पैरॉफिन तेलकी जरूरत होती है, जिसे वह खुद नही बना सकता, तो वह अपना अतिरिक्त अन्न देकर उसे प्राप्त करता है। यह स्वतन्त्र, उचित और समान शर्तोपर श्रमका विनिमय है और इसलिए यह लूट और डाकाजनी नही है। आप कह सकते है कि यह तो वस्तुओकी अदला-बदलीकी आदिम विनिमय-व्यवस्थाको फिरसे स्वीकार कर लेना है। लेकिन क्या सारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार उसी विनिमय-व्यवस्थापर आधारित नही है?

इस प्रणालीके एक अन्य लाभकी ओर भी ध्यान दीजिए। इस लाभको आप चाहे जितना गुना बढ़ा सकते है। लेकिन उत्पादनके निस्सीम केन्द्रीकरणका परिणाम बेरोजगारी ही हो सकता है। आप कह सकते है कि सुधरे हुए आधुनिक यन्त्रोंके प्रयोगके कारण बेरोजगार होनेवाले मजदूर कोई और धन्धे ढूँढ लेगे। लेकिन आप तो अपने अनुभवसे जानते ही होगे कि किसी सगठित देशमे, जहाँ रोजगारके निश्चित और सीमित मार्ग ही है और जहाँ मजदूर लोग एक ही ढगके यन्त्रके प्रयोगमे बहुत दक्ष हो गये है, यह चीज सम्भव नही है। क्या आज इग्लैडमे तीस लाखसे ज्यादा लोग बेरोजगार नही पड़े हुए है? अभी पिछले ही दिनो मुझसे एक सवाल पूछा गया था: "इन तीस लाख बेरोजगारोके लिए आज हम क्या कर रहे ह?" उन्हे एकाएक कारखानोसे हटाकर खेतीके काममे तो लगाया नही जा सकता। यह बहुत भारी समस्या है।

प्र० : क्या यान्त्रिक कृषिसे अमेरिका और कैनेडाकी तरह भारतको भी बहुत लाभ नहीं होगा?

उ० : शायद होगा। लेकिन यह ऐसा सवाल है जिसका जवाब देने लायक मैं अपनेको नही मानता। भारतमें तो हम अभीतक कृषिके लिए बहुत जटिल यन्त्रों-का प्रयोग करके कोई लाभ नही उठा पाये हैं। हम यन्त्रोंका प्रयोग बिलकुल न करते हों, ऐसी बात नहीं। हम सँभल-सँभलकर उनका प्रयोग कर रहे हैं। लेकिन शक्ति-चालित कृषि-यन्त्रोंका प्रयोग हमें आवश्यक नहीं जान पड़ा।

प्र० : कुछ लोगोंकी ऐसी धारणा है कि आप तो यन्त्र-मात्रके विरोधी हैं। मेरा खयाल है, यह सही नहीं है?

उ० : हाँ, यह बिलकुल गलत धारणा है। चरखा भी तो यन्त्र ही है। यह एक सुन्दर कला-कृति है और यह यन्त्रके सार्वत्रिक प्रयोगका प्रतीक है। यह ऐसा यन्त्र है, जिसे सर्वसाधारणके उपयोगके लायक बनाया गया है।

प्र० : तो आप यन्त्रोंके विरोधी इसीलिए हैं और वहीं हैं जहाँ वह उत्पादन और वितरणको चन्द हाथोंमें सीमित कर देनेका साधन बन जाता है?

उ० : बिलकुल। मुझे विशेषाधिकार और एकाधिपत्यसे चिढ़ है। जो चीज सर्वसाधारणको सुलभ न हो सके उसे मैं अपने लिए त्याज्य मानता हूँ। बस, इतनी ही बात है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-११-१९३१

१२३. प्रश्नोत्तर[1]

लन्दन
१६ अक्टूबर, १९३१

प्र० : आप सफलताकी आशा रखते हैं?

उ० . मैं आशावादी हूँ, इसलिए कभी आशा नहीं छोड़ता। परन्तु मुझे यह कहना चाहिए कि मसलेके हल होनेके बारेमें बम्बईमें जो स्थिति थी, उससे मैं कुछ भी आगे नही बढ़ सका हूँ। उसमें बड़ी कठिनाइयाँ हैं। मैं जानता हूँ कि जो वाता-

१. महादेव देसाईके "लंदन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। सेवॉय होटलमें अमेरिकी पत्रकारों द्वारा दिये गये प्रीतिभोजमें ये प्रश्न पूछे गये थे। महादेव देसाई कहते हैं कि गांधीजीने इसके लिए उन्हें धन्यवाद देते हुए इसे उनका बहुत बड़ा सौजन्य बताया। कुछ मिनटतक उन्होंने उनको यह सब बताकर कि पत्रकार किस प्रकार उनकी बातोंको गलत रूपमें उद्धृत करते रहे हैं और किस प्रकार इसी तरह एक बार उनकी बातोंको गलत ढंगसे पेश करनेके कारण उनकी जानपर बन आई थी, उनका मनबहलाव किया। उन्होंने कहा कि भारतके एक पत्रकारके ही शब्दोंमें, जब पत्रकार जान-बूझकर उसपर रंग-सुर्खी चढ़ाकर और 'उसमें अपनी ओरसे कुछ जोड़कर' उसे पेश करते हैं तो कष्टोंका प्याला भर जाता है। उन्होंने उन पत्रकारोंसे 'सत्य, सम्पूर्ण-सत्य और सत्यके अतिरिक्त और कुछ नहीं' के सिद्धान्तका पालन करनेको कहा।

वरण आज यहाँ है, उसमे लोगोको काग्रेसकी माँगे बहुत अधिक जान पडती है, यद्यपि मै ऐसा नही मानता।

प्र० : इस कठिनाईमें से निकलनेका कोई उपाय नहीं है?

उ० : कई उपाय है। परन्तु जिन लोगोका इससे सम्बन्ध है, वे उन्हें ग्रहण करेगे या नही, मै नही जानता। हम लोगोसे यह कहा गया है कि शासन-विधानका प्रश्न साम्प्रदायिक प्रश्नके हल होनेपर निर्भर है। यह सच नही है और मेरा खयाल है कि इस तरह बातको उलटकर कहनेसे ही प्रश्नको अधिक कठिन बना दिया गया है और उसे सर्वथा कृत्रिम महत्त्व दिया गया है और क्योकि इसीको मूलाधार बनाया गया है, इसलिए सम्बन्धित पक्षोका खयाल है कि वे अपनी माँगे जितनी वे बढा सके, उतनी बढाकर रख सकते है। और इस तरह हम एक भारी दुश्चक्रमे उलझ गये है और सुलह-समझौतेका काम अधिकाधिक मुश्किल होता जाता है। लेकिन मै तो किसी भी तरह इन दोनो प्रश्नोमे कोई खास सम्बन्ध नही देख पा रहा हूँ। साम्प्रदायिक प्रश्न हल हो या न हो, भारत स्वतन्त्र होगा ही। स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके बाद बेशक हमारे सामने बहुत बडी-बडी कठिनाइयाँ आयेगी। परन्तु इस प्रश्नके लिए स्वतन्त्रता रोकी नही जा सकती। क्योकि जैसे ही हम उसके लायक होगे स्वतन्त्रता हमे मिल जायेगी और उसके लायक होनेके मानी है उसके लिए काफी कष्ट उठाना, स्वतन्त्रताके बेशकीमती इनामके लिए बडी कीमत चुकाना। परन्तु यदि हमने उसके लिए कष्ट नही उठाया, उसकी कीमत नही चुकाई तो यह प्रश्न हल होगा तो भी इससे हमे मदद नही मिलेगी। यदि हमने काफी कष्ट उठाया है, काफी बलिदान किया है तो कोई दलील या समझौता-वार्त्ता आवश्यक नही होगी। हमने काफी कष्ट उठाया है, इसका निर्णय करनेवाला मै कौन हूँ? हमने काफी कष्ट उठाया है, इसी आशासे मै यहाँ आया और यहाँ आनेके लिए मुझे जरा भी दु ख नही है, क्योकि मै देखता हूँ कि मेरा काम तो परिषद्के बाहर है और इसीलिए अनेक प्रकारसे बहुत व्यस्त रहनेके बावजूद मै यहाँ आनेको राजी हुआ, क्योकि इसे भी मै अपने कामका ही एक अग मानता हूँ।

प्र० : इंग्लैंडके आम चुनावके कारण क्या आपका कार्य मुश्किल नहीं होगा?

उ० : होना तो नही चाहिए। यदि ब्रिटिश राजनयिक यह समझ जाये कि हिन्दुस्तान और इग्लैंडके बीच सघर्ष होनेपर — वह सघर्ष चाहे जितना अहिंसक हो — आर्थिक स्थिति अधिक कठिन हो जायेगी, तो वे आम चुनावको हमारे प्रश्नको हल करनेमे बाधा-रूप न होने देगे। उन्हे यह समझ लेना चाहिए कि यदि हिन्दुस्तान-की माँग स्वीकार नही कि गई तो जोरदार बहिष्कार आन्दोलन चलाया जायेगा और ग्रेट ब्रिटेनको अपना सारा ध्यान भारतमे तेजीसे नष्ट हो रहे अपने व्यापारिक हितोकी ओर लगाना होगा। इसके बदले यदि दोनोमे बाइज्जत साझेदारी कायम हो गई तो अपने घरेलू मामलोको सुलझानेका ब्रिटेनको अधिक समय मिलेगा। जबतक ब्रिटेन सगीनोके जोरपर भारतपर अपना प्रभुत्व जमाये हुए है, तबतक ब्रिटिश मन्त्रियोकी गिद्ध-दृष्टि भारतकी क्षुधार्त्त जनतापर लगी ही रहेगी और वे भारतसे रत्ती-रत्ती

चाँदी और सोना खीच ले जानेके नये-नये उपाय निकालते रहेगे। जरूरी नही कि उनके इस व्यवहारका कारण भारतके प्रति उनकी दुर्भावना ही होगी। इसके बजाय यह भी सम्भव है कि वे परिस्थितियोसे मजबूर होगे, क्योकि जब देश मे बेरोज-गारी और अभाव बहुत बढ जाता है और किसी भी ओरसे कुछ राहत मिलनेकी सम्भावना दिखाई देती है—भले ही किसी अन्य देशका शोषण करनेसे ही वह राहत क्यो न मिलनेवाली हो—तब आप राजनयिकोसे औचित्य-अनौचित्यका पूरा विचार करने और अपना आचरण सोलहो आने नैतिक नियमोके अनुसार निर्धारित करनेकी अपेक्षा नही रख सकते। मजबूर होकर वे भारतकी मुद्राका मूल्य अपनी सुविधानुसार घटाने-बढाने-जैसे उपायोका सहारा लेगे ही। उससे कुछ समयके लिए दु ख भले दूर हो जाये, लेकिन आखिरकार तबाही और बरबादीको आनेसे ज्यादा दिन नही रोका जा सकता।

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २९-१०-१९३१

१२४. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
१६ अक्टूबर, १९३१

श्री गाधी: लॉर्ड चासलर महोदय, देशी राजाओ या उनके प्रतिनिधियो तथा मेजके इस ओर बैठे प्रतिनिधियोके बीच शीघ्र ही जो-वार्त्ता होनेवाली है, उसको ध्यानमे रखते हुए मेरे लिए शायद यह जरूरी नहीं है कि इस समितिके सामने रखे अपने सुझावके पक्षमे कुछ कहूँ; लेकिन अगर मै साफ-साफ यह न बता दूं कि अब भी (लॉर्ड पील या सर अकबर हैदरीका जो-कुछ भी कहना हो सकता था, उसे पूरे आदर और ध्यानसे सुननेके बाद भी) मै कायल नही हो पाया हूँ और अब भी अपने विचारोपर कायम हूँ तो इसका मतलब होगा कि मै लॉर्ड पील और सर अकबर हैदरीके साथ ईमानदारीका व्यवहार नही कर रहा हूँ। हो सकता है, मै इतनी मोटी बुद्धिवाला होऊँ कि उन कठिनाइयोको समझ पाना मेरे लिए सम्भव ही न हो, हो सकता है, मै ठोस चीज सामने देखनेके लिए इतना अधिक व्यग्र होऊँ कि उन कठिनाइयोको देख पाना मेरे लिए सम्भव ही न हो, लेकिन साथ ही मै यह भी जानता हूँ कि स्वय अपनेमे और अपने देशभाइयोमे मेरा इतना विश्वास तो है ही कि मै इस बातके लिए आश्वस्त रहूँ कि हम इस भारको और स्वशासनके परिणामस्वरूप हमपर जो जिम्मेदारियाँ आयेंगी उन्हे भली-भाँति ढो सकते है, और इसलिए कठिनाइयोसे, चाहे वे सच्ची हो या काल्पनिक, मुझे कोई घबराहट नही होती।

१. समितिने शीर्षक ४, अर्थात् संघ तथा उसके घटकोके बीच वित्तीय साधनोंके बँटवारेके प्रश्नपर विचार करना जारी रखा।

लेकिन भारत सरकारके राजस्व और व्ययके बँटवारेके इस प्रश्नपर मै अपनी अत्यन्त साधारण बुद्धिके अनुसार कुछ कहना चाहता हूँ। हम सिद्धान्तोकी बात करते रहे है। मगर हमारे सामने जो काम है, उसे जिन सिद्धान्तोके आधारपर किया जा रहा है उनमे से कई मै नही समझ पाया हूँ। निश्चय ही एक मामलेमे तो सिद्धान्त होना ही चाहिए अर्थात् हमे यह तो तय करना ही होगा कि हम आय-व्ययका बँटवारा किस मापदण्डके अनुसार करे। इस सम्बन्धमे हमे कोई मोटा और सहज-सुलभ सिद्धान्त अपनाना ही होगा और हमे इस सिद्धान्तके बारेमे निर्णय लेना है। मेरी कल्पनाके अनुसार तो वह सिद्धान्त यह है कि भारतके ब्रिटेन-शासित हिस्सेके सिरपर आज जितना बोझ है, क्या सघ बन जानेपर उसे उसके अलावा और भी बोझ उठाना पडेगा, और इसी तरह क्या देशी राज्योको भी कोई अतिरिक्त भार उठाना है, अथवा क्या संघमे शामिल होते हुए दोनो पक्षोमे से कोई भी पक्ष, समझ लीजिए अभी कुछ समयके लिए, कोई भी अतिरिक्त भार अपने सिरपर नही लेनेवाला है। मेरे विचारसे, आय-व्ययके उचित बँटवारेके सम्बन्धमे हमे इसी सिद्धान्तके अनुसार निर्णय लेना होगा।

इसलिए, इन सारे भाषणोको सुननेके बाद मुझे वास्तवमे जो कठिनाई प्रतीत हुई है वह सिद्धान्तकी कठिनाई नही है, बल्कि सदस्योकी अनिच्छासे उत्पन्न कठिनाई है। अगर हममे यह निश्चय हो कि हम सघ चाहते है, हम प्रत्येक पक्ष या प्रत्येक साझेदारके आत्मसम्मानकी रक्षा करते हुए कोई भी कीमत चुकाकर सघ चाहते है तो जैसा कि मैने पहले भी कहा है, एक विशेषज्ञकी हैसियतसे नही बल्कि केवल सामान्य ज्ञान रखनेवाले व्यक्तिके रूपमे मै फिर कहता हूँ कि मुझे तो सघकी स्थापनामे कोई कठिनाई दिखाई नही देती। हमे सिर्फ इतना ही करना है कि राजस्वकी जिन मदोको हम आसानीसे समझ सकते है, उनका निश्चय करके कहे, 'ये राजस्वकी ऐसी मदे है, जिनपर हमारा सयुक्त अधिकार रहेगा। शेष या तो सघ सरकारके अधिकारमे रहेगी या प्रान्तोके अधीन।' मेरे विचारसे यह विभाजन आसानीसे किया जा सकता है। आज हमारे सामने सबसे बडी कठिनाई यह है कि हम देशी राज्योके प्रतिनिधियो तथा अन्य प्रतिनिधियोको एक-दूसरेके निकट लाकर किसी निष्कर्षपर कैसे पहुँचे। अगर हम यह सिद्धान्त अपनाते है कि अभी किसी भी पक्षको अपने सिर कोई अतिरिक्त भार नही उठाना है, तो हम राजस्वकी मदोका विभाजन तदनुसार करेंगे, या अगर थोडा-बहुत आदान-प्रदान होना है और प्रत्येक पक्षको थोडी अधिक जिम्मेदारी अपने सिर लेनी है तो हम उसी सिद्धान्तके अनुसार किसी निष्कर्षपर पहुँचेगे। इसी तरह मुझे यह तय करनेमे भी कोई कठिनाई नही दिखाई देती कि राजस्वकी किन मदोपर हमारा संयुक्त अधिकार रहेगा। अगर हम इस निष्कर्षपर पहुँच जाते है कि इस समय हमारे पास राजस्वके 'क', 'ख', और 'ग', ये तीन साधन होंगे, तो जहाँतक हमारी जानकारी है, हम यह जानते है कि इन तीनो साधनोसे हमें इतना राजस्व प्राप्त होगा। इसके बाद हम व्ययकी ऐसी मदोको लेगे जिनपर वह सारा राजस्व खर्च हो जायेगा। मै जानता हूँ कि सम्भव है, हमारा अनुमान गलत

निकले। लेकिन उस घाटे या बचतको सन्तुलित करनेका काम सघ सरकार अपनी सुविधासे करती रहेगी। अगर बचत हुई तब तो कोई कठिनाई ही नही होनी चाहिए, लेकिन अगर घाटा हुआ तो स्वभावत कुछ कठिनाई होगी, लेकिन हममे से कोई भी ऐसा मानकर तो नही चल रहा है कि जब सघ सरकार जिम्मेदारियोके तूफानी समुद्रमे अपनी पतवार सँभालेगी, उस समय उसे कोई कठिनाई होगी ही नही।

देखता हूँ, कुछ प्रतिनिधियोके मनमें सघ सरकार द्वारा निर्णय लिये जानेके सम्बन्धमे भय है। इस भयका कारण यह है कि अबतक हम सघ सरकारमें ब्रिटिश भारतीय पक्षके बहुमतकी ही कल्पना करके चले हैं, जिससे यह धारणा बनी है कि संघमे देशी राज्योका भाग्य पूर्णरूपसे उस बहुमतके हाथोमें चला जा सकता है। अगर मनमें ऐसा कोई भय हो तो उसे छिपाकर रखनेकी जरूरत नही है। या हो सकता है, हमारे मनमें कोई ऐसी बात हो कि जबतक किसी प्रश्नपर एक ओर राजाओंके दो-तिहाई बहुमतके बीच मतैक्य न हो और दूसरी ओर दूसरे पक्षके बीच भी उस प्रश्नके सम्बन्धमें वैसा ही बहुमत न बने तबतक कोई भी निर्णय दोनों पक्षोके लिए बन्धनकारी नही होगा। यह सब मै पहले से सोचकर नही बोल रहा हूँ, बल्कि बोलते हुए मुझे जैसे-जैसे सूझता जाता है, वैसे-वैसे उदाहरणके रूपमें आपके सामने रख रहा हूँ। मेरा तो इतना ही कहना है कि ऐसी कठिनाइयोमे हमें चकरा नही जाना चाहिए, और मुझे लगता है कि हमे हर मुद्देपर विशेषज्ञोकी सलाह लेनेके इस भूतसे छुटकारा पा लेना चाहिए। आखिरकार, हम एक गरीब देशके निवासी हैं और हमे हर मोडपर विशेषज्ञोकी सहायता मिलनेवाली नही है। मै मानता हूँ कि भारतमे हम लोगोमे, विशेषज्ञोके मार्गदर्शनके बिना ही, इतना समझ सकने लायक बुद्धि तो है ही कि हम क्या चाहते है, और दुनियाका मुझे जो भी थोडा-बहुत अनुभव प्राप्त है, उसमे तो मैंने यही देखा है कि विशेषज्ञोके पास जाकर तो कभी-कभी हम बडे चक्करमे पड जाते है, क्योकि एक विशेषज्ञ एक बात कहता है और दूसरा दूसरी और जब हम वित्तीय मामलोपर आते है तो साधारण लोगोंके लिए, जिनकी बुद्धिके लिए यह एक अत्यन्त जटिल विषय है, यही तय कर पाना कठिन होता है कि वे किस विशेषज्ञके पास जायें। फलत यह कहते हुए कि हम इन विशेषज्ञोकी बातोमे पडकर निर्णय लेना छोड नही सकते, वे भविष्यपर भरोसा करते हुए पर्ची डालकर निर्णय ले लेते है, और मै लॉर्ड चासलर महोदयके प्रति सम्पूर्ण आदर रखते हुए कहूँगा कि कानूनके मामलेमें भी हम ऐसा ही करते हैं।

महाविभव महाराजा बीकानेर: आप तो खुद ही एक जाने-माने वकील हैं।

श्री गाधी. तभी तो मै अपने कटु अनुभवोके आधारपर यह सब कह रहा हूँ। डाक्टरोसे हमे भगवान् बचाये! हमारे मार्गमें विशेषज्ञ लोग जो बाधाएँ खडी करते है, उनसे हमे छुटकारा पाना चाहिए। अगर हम कोई गलती करेगे तो उसका परिणाम भी तो आखिरकार हम ही भोगेंगे। लेकिन अगर हम इस राहपर अपने मनमें भय और आशका लेकर चलते है तो हम ऐसी कोई योजना तैयार नही कर पायेंगे जो हमारे महान् और प्राचीन देशकी गरिमाके अनुरूप हो। इसलिए मैंने इस

समितिके समक्ष एक अत्यन्त साधारण व्यक्तिकी हैसियतसे अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी है, ताकि जब हमारे बीच अनौपचारिक वार्त्ताएँ हों तो हम इस प्रश्नपर भयाकुल मनसे नहीं, बल्कि ताजा मनसे विचार कर सकें।

अन्तमें, क्या मैं राजाओंसे यह कह सकता हूँ कि वे अपने विशेषज्ञोंको भी साथ लेकर यहाँ आये हैं। वे अपने सबसे अच्छे आदमियोंको लाये हैं। मैं उन विशेषज्ञोंपर भरोसा करूँगा और अगर उन्होंने मुझे गुमराह करनेकी हिम्मत की तो अपनी सामान्य बुद्धिका भी उपयोग करूँगा। लेकिन मैं पूर्णत. सन्तुष्ट हो जाऊँगा और कुछ ही घंटोंमें निश्चित कर लूँगा कि मैं क्या चाहता हूँ और क्या नहीं। इसलिए मैं अब भी पूर्णत. यही मानता हूँ कि हमें यह चीज या तो लॉर्ड पीलकी उप-समितिके पास भेजकर निश्चित निष्कर्षपर पहुँचनेकी जिम्मेदारी उसीपर डाल देनी चाहिए, या उस उप-समितिको तकलीफ देनेके बजाय हममें से कुछ लोगोंको मिल-बैठकर कोई बहुत ही साधारण और सबको स्वीकार्य योजना तैयार कर लेनी चाहिए, जिसके आधारपर हम संघके वित्तीय मामलोंके बारेमें विचार-विमर्श शुरू कर सकें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २२०-१

१२५. भाषण : मद्य-निषेधवादी कार्यकर्त्ताओंकी सभामें[1]

लन्दन
१६ अक्टूबर, १९३१

वक्ताने . . . इधर-उधरकी बातोंमें अपना समय गँवाये बिना सीधे कामकी बात शुरू कर दी। उनके पास घंटे-भरका समय था। इसमें से आधे घंटेमें उन्होंने भारतमें शराब और मादक पदार्थोंके व्यापारके सम्बन्धमें बहुत ही स्पष्ट, नपी-तुली और कायल करनेवाली शैलीमें तथ्योंका विवरण प्रस्तुत किया। शेष समय, स्वयं उन्हींके अनुरोधपर पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर देनेमें बीता। उनके विचारसे प्रश्नोत्तरका तरीका 'श्रोताओंके साथ सम्पर्क स्थापित करनेका सबसे अच्छा तरीका' था। और प्रश्न भी कुछ कम नहीं पूछे गये, बल्कि सचमुच तीखे-पैने प्रश्नोंकी झड़ी लगा दी गई। लेकिन इन सबका जवाब उन्होंने बहुत स्पष्ट ढंगसे और शिष्टतापूर्वक दिया।

उन्होंने बताया कि संयुक्त राज्य अमेरिका अथवा यूरोपीय महाद्वीपकी तरह भारतमें मद्यपानका आम चलन नहीं है। सच तो यह है कि वहाँके सभ्य समाजमें यह एक 'वर्जित' चीज है। भारत शराबके व्यापारसे छुटकारा पाना चाहता है, लेकिन अफसोस यह है कि इससे प्राप्त होनेवाला राजस्व प्रान्तीय सरकारोंके पास जाता

१. वेस्टमिंस्टरके केन्द्रीय कक्षमें ईसाई धर्म-संगठनोंकी मद्य-निषेधवादी समिति द्वारा आयोजित सभामें।

है और शिक्षाका खर्च चलानेका यह मुख्य साधन है। भारतीयोंको जब सरकारसे किसी प्रकारकी सहायताकी आशा नहीं रह गई तब हालके वर्षोंमें उन्होंने शराबकी दुकानोंपर शान्तिपूर्ण धरना देकर शराब आदिके व्यापारसे होनेवाली बुराइयोंको कम करनेकी कोशिश की। इस कामको (जिसमें बहुत ही त्याग-बलिदान अपेक्षित था) भारतकी स्त्रियोंने, जिनमें से कुछ तो बहुत ही ऊँची स्थितिवाली थीं, बहादुरीके साथ अपने हाथोमें लिया और जब श्री गांधीने लॉर्ड इर्विनसे इस विषयपर विस्तारसे बातचीत की तो उन्होने स्वीकार किया कि 'इन दो पापपूर्ण व्यापारों' के खिलाफ अपनी मुहिम चलानेके लिए भारतीयोंको यह रास्ता अख्तियार करनेका अधिकार है।

इस विलक्षण और सन्त-जैसे दिखनेवाले नेताके मुँहसे हमें ऐसी ही कुछ बातें मालूम हुईं। तथ्योंका ब्योरा प्रस्तुत करते हुए उन्होने केवल दो बार कुछ भावावेश या जोश दिखाया। इसका प्रसंग एक बार तो तब आया जब एक प्रश्नकर्त्ताने कहा कि अगर भारतीय सचमुच इस व्यापारको समाप्त करनेको उत्सुक हैं तो निश्चय ही विधान परिषदोंमें उनके प्रतिनिधियोके लिए राजस्वके वैकल्पिक साधन (जैसे नमक और आम लोगों द्वारा प्रयुक्त किसी अन्य वस्तुपर थोड़ा-बहुत कर लगाना) सुझाना मुश्किल नहीं होना चाहिए। गांधीजी ने इस सुझावको तुरन्त और बहुत ही तिरस्कार-पूर्ण भावसे अस्वीकार कर दिया। उन्होने कहा कि लोगोंके सिर जितना बोझ आज पड़ा हुआ है उससे अधिक बोझ डालनेकी किसी योजनामें मेरी सहमति नहीं हो सकती। भारतकी स्थायी सेनापर होनेवाले अनावश्यक खर्चमें और भारतीय असैनिक सेवापर जो अत्यधिक व्यय किया जा रहा है, उसमें कटौती करना ही वैकल्पिक उपाय हैं। जब किसीने उनसे शराबके व्यापारके परवानोंसे वंचित व्यापारियोंको मुआ-वजा दिये जानेके बारेमें पूछा तो उन्होंने इस बातपर बड़ा आश्चर्य प्रकट किया कि किसीके दिमागमें उनको मुआवजा देनेकी बात कैसे आ सकती है। उनके विचारसे, मुआवजेके हकदार उस व्यापारको चलानेवाले नहीं, बल्कि उसके कारण जिनकी तबाही हो रही है, वे लोग हैं।

[अंग्रेजीसे]

ब्रिटिश वीकली, २२-१०-१९३१

१२६. तार : जवाहरलाल नेहरूको[1]

[१६ अक्टूबर, १९३१के पश्चात्]

जवाहरलाल नेहरू
इलाहाबाद

तुम्हारा तार मिला। तुम्हे हर स्थितिका मुकाबला करनेके लिए जैसा जरूरी लगे वैसा कदम बेहिचक उठाना चाहिए। यहाँसे किसी प्रकारकी अपेक्षा मत करो।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२२४) से।

१२७. पत्र : लॉर्ड इर्विनको

किंग्सले हॉल
बो
१७ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र,[2] तो मानो मेरी प्रार्थनाके उत्तरमे ही आया। आपसे मुलाकातका समय माँगनेके लिए मै आपको पत्र लिखने ही जा रहा था कि यह पत्र आ गया, जिसे पाकर बडी प्रसन्नता हुई। मै बुधवारको १० बजे सुबह आपसे मिलना चाहूँगा, बशर्ते कि १० बजेका समय आपके लिए बहुत जल्दी न हो। जहाँतक मै देख सकता हूँ, गोलमेज परिषद्मे मेरा काम लगभग समाप्त हो चुका है। लेकिन आपसे बातचीत किये बिना मै कोई बड़ा कदम नही उठा सकता। इस सबके बारेमे आपसे मिलकर ही बातचीत करूँगा।

१. यह जवाहरलाल नेहरूके १६ अक्टूबरके तारके उत्तरमें था। अपने तारमें जवाहरलाल नेहरूने लगानकी वसूली वगैरहके विषयमें स्थितिके बहुत बिगड जानेकी सूचना दी थी। उन्होंने लिखा था कि इस सिलसिलेमें जोर-जबरदस्ती की जा रही है, जमीन नीलाम की जा रही है; बहुत-से किसानोंने जमीनपर अपना स्वामित्व सदाके लिए गँवा बैठनेके भयसे अपने पशु बेचकर और कर्ज लेकर लगान चुकाया है, अब चालू मौसमका लगान भी माँगा जा रहा है; किसानोंकी स्थिति बहुत बुरी है; गत छ. महीनोंसे उन्हें इतना परेशान किया गया है कि वे थक गये है। इन परिस्थितियोंमें इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटीने सत्याग्रह करनेकी इजाजत लेनेका फैसला किया है। (एस० एन० १८२२३)

२. लॉर्ड इर्विनने अपने पत्रमें सोमवार, १९ तारीखको अपने लन्दन आनेकी सूचना देते हुए लिखा था कि बुधवार, २१ तारीखको आपके पास समय हो तो एक-आध घंटेके लिए मिलना चाहूँगा। (एस० एन० १८१००)

बायें हाथसे पत्र लिखा है, इसके लिए क्षमा चाहता हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४३९) से।

१२८. भाषण: नॉटिंघम युनिवर्सिटी कॉलेजमें

नॉटिंघम
१७ अक्टूबर, १९३१

गांधीने कहा कि भारतीय कांग्रेस, स्वतन्त्रता शब्दका जो पूरा अर्थ है, उस अर्थमें पूर्ण स्वतन्त्रताकी माँग कर रही है। भारत अपनी प्रतिरक्षा, सेना, विदेशी मामलों तथा वित्त-व्यवस्थाके पूरे नियन्त्रणकी सत्ता चाहता है।

मैंने माँग शब्दका प्रयोग किया है। सचाई यह है कि माँग करनेसे आजतक किसी भी राष्ट्रको स्वतन्त्रता नही मिली है। स्वतन्त्रता तो बलिदान और कष्ट-सहनके द्वारा प्राप्त करनी होती है। इतिहास यह बताता है कि राष्ट्र खूनकी नदियाँ बहाकर स्वतन्त्र हुए हैं। उन्होने आक्रान्ताओ, उत्पीड़को या शोषकोको मार भगाया है। लेकिन इस प्रक्रियामें खुद उन्हे भी बहुत मार सहनी पड़ी है।

हम सत्य और अहिंसामय उपायोसे अपनी स्वतन्त्रताके लिए, जो हर राष्ट्रका जन्मसिद्ध अधिकार है, लड़ रहे हैं। मै दूसरोके प्रति हिंसा करनेवाले लोगोसे ऊब चुका हूँ। इस तरह न्याय नही मिलता। सविनय अवज्ञाकी अपनी मर्यादाएँ हैं, क्योकि करोड़ो लोग सविनय अवज्ञा नही कर सकते। हमारी रचनात्मक प्रवृत्तियोमें मद्य-अफीम आदिका निषेध तथा अस्पृश्यता-निवारण शामिल है। हममें अबतक कोई समझौता नही हो पाया है, इससे आप यह न समझें कि हममें कही कोई मेल है ही नही।

[अंग्रेजीसे]

बर्मिंघम पोस्ट, १९-१०-१९३१

१२९. भेंट : एवलिन रेंचको[1]

लन्दन

[१७ अक्टूबर, १९३१ के पूर्व][2]

रेंच : 'स्पेक्टेटर' के पाठकोंके लाभके लिए आपसे बातचीत करनेका यह सुयोग प्राप्त करके मुझे बहुत खुशी हुई है।

गाधीजी इग्लैंडमे रहते हुए मै जो-कुछ करना चाहता था उनमे से एक 'स्पेक्टेटर' के सम्पादकसे वातचीत करना भी था, क्योकि ग्रेट ब्रिटेनकी जनताको भारतीय समस्याओकी जानकारी कराते रहनेके लिए 'स्पेक्टेटर' जो-कुछ करता रहा है, उसकी भारतमे हम लोग बडी कद्र करते है। मै जानता हूँ कि आप शायद मेरे सभी विचारोसे सहमत न हो, लेकिन साथ ही इस बातसे भी मै बाखबर हूँ कि आपने 'स्पेक्टेटर' के स्तम्भोमे बार-बार ऐसा कहा है कि ग्रेट ब्रिटेन और भारतके भावी सम्बन्धोका एकमात्र सन्तोषजनक आधार मैत्रीपूर्ण समानता और इस तथ्यकी स्वीकृति ही हो सकती है कि अपने भाग्यके अन्तिम निर्णायक भारतके लोग हैं।

प्र० : देखें, क्या होता है। अच्छा श्री गांधी, यह बताइएगा कि आप पिछली बार कब इंग्लैंड आये थे? मेरा तो खयाल है कि लड़ाई छिड़नेसे कुछ समय पहले आये थे?

उ० . हाँ, मैं १९०९ मे इग्लैंड आया था और फिर लडाई छिडनेके ठीक दो दिन बाद।[3] उस अवसरपर मैंने रेड क्रॉस दलके सगठनमे सहायता की थी, लेकिन दुर्भाग्यवश मै बीमार हो गया और प्लूरिसीके आघातके कारण मै वह सब नही कर पाया जो उस वर्ष नवम्बर महीनेमें[4] भारत लौटनेसे पहले करना चाहता था।

प्र० : भारतीय समस्याके बारेमें ब्रिटेनवालोंके मौजूदा रुखके सम्बन्धमें आपकी प्रमुख प्रतिक्रिया क्या है? क्या आप ऐसा समझते हैं कि लोकमतमें बहुत परिवर्तन आया है?

उ० : हाँ, साधारण जनोके रुखमें मुझे बहुत परिवर्तन नजर आता है और मैंने ब्रिटेनके सभी वर्गोंके लोगोसे बातचीत करनेका खास खयाल रखा है। लन्दन

१. स्पेक्टेटरके सम्पादक। यह विवरण रेंचकी रिपोर्ट "एन ईवनिंग विद मि० गाधी" (श्री गाधीके साथ एक शाम) से लिया गया है। यह भेंटवार्ता रेंचके आवासपर रातके ८ और ११ बजेके बीच हुई थी।

२. साधन-सूत्रमें भेंटकी तिथि नहीं बताई गई है। सिर्फ इतना कहा गया है कि भेंटवार्ता 'पिछले हफ्ते' हुई थी।

३. अगस्त, १९१४ में प्रारम्भ होनेवाला प्रथम विश्व-युद्ध। इस अवसरपर गाधीजी के इग्लैंड-प्रवासके लिए देखिए खण्ड १२।

४. गाधीजी ने भारतके लिए १९ दिसम्बर, १९१४ को प्रस्थान किया और ९ जनवरी, १९१५ को वे बम्बई पहुँचे।

आकर मैं खुश हूँ और आपके यहाँके सामान्य जनोसे मुझे अद्भुत स्नेह प्राप्त हुआ है। ईस्ट एडमे लोगोने मेरे प्रति जैसा मैत्री-भाव दिखाया है उससे मैं बडा प्रभावित हुआ हूँ। लोग अपने-अपने घरोसे निकलकर मुझसे हाथ मिलाते है और मुझे अपनी शुभेच्छाएँ देते है। लकाशायरमे मेरा जैसा स्वागत हुआ, उससे मै बडा प्रसन्न हुआ और भारतमे मेरी नीतिके कारण लकाशायरको बहुत नुकसान पहुँचनेकी खबरोके बावजूद वहाँ मुझसे किसीको कोई शिकायत नही थी और कर्मचारियो तथा मालिको, दोनोने समानरूपसे मेरे प्रति मैत्री-भाव ही दरसाया।

प्र० : लेकिन तथाकथित उच्चतर और अधिकारी-वर्गके विषयमें आपका क्या खयाल है? क्या आप ऐसा मानते है कि उनके मतमें कोई परिवर्तन हुआ है और भारत जो-कुछ चाहता है, वह उसे देनेको तैयार है?

उ० : मुझे लगता है कि वे तो अब भी स्थितिको नही समझते और हमें स्वतन्त्रता, जिसका दावा हम अपने अधिकारके रूपमे कर रहे हैं, देनेके लिए तैयार नही हैं। वे मानते है कि भारत अभी अपना कारोबार खुद चलानेमे समर्थ नही है, और मुझे ऐसी आशका है कि उनमे से बहुत कम लोग यह माननेके लिए तैयार होगे कि हम भी वैसी ही स्वतन्त्रताके अधिकारी है जैसी कि ग्रेट ब्रिटेनको प्राप्त है। स्वतन्त्रताके उस अधिकारसे मेरा मतलब सेना, वित्तीय और परराष्ट्रीय मामलोको अपने नियन्त्रणमे रखनेका अधिकार है।

प्र० : श्री गांधी, आप यह तो जानते ही है कि 'स्पेक्टेटर' सदासे उस चीजमें विश्वास करता रहा है जिसे औपनिवेशिक स्वराज्य कहा जाता है। हम मानते है कि इस व्यवस्थाके अन्तर्गत परस्पर विरोधी-से लगनेवाले दो तत्त्वों, अर्थात् सहयोग और स्वतन्त्रताके बीच तालमेल बैठानेका वह काम कर दिखाया गया है, जो असम्भव प्रतीत होता था। आपके विचारसे क्या भारत उस दर्जेको प्राप्त करके सन्तुष्ट हो जायेगा जो ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके अन्तर्गत एक उपनिवेशके रूपमें दक्षिण आफ्रिकाको प्राप्त है?

उ० : भारतकी स्थितिको मै सबसे अलग मानता हूँ। आखिरकार हमारे देशमे मानव-जातिका पाँचवाँ हिस्सा निवास करता है। इसलिए मै ऐसा नही समझता कि जो राजनीतिक दर्जा ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके दूसरे उपनिवेशोके लिए ठीक हो सकता है वह भारतके लिए भी ठीक हो ही। आपको याद रखना चाहिए कि भारत दीर्घ कालसे एक पराधीन राष्ट्र रहा है। अगर ग्रेट ब्रिटेन दोनो देशोके लोगोके भावी सम्बन्धोकी समस्याके समाधानके लिए मनमे कोई दुराव रखे बिना मैत्री-भावसे आगे आता है, तो वह देखेगा कि उसकी इस सद्भावनाका उत्तर सद्भावनासे देनेमे भारत कभी पीछे नही रहेगा। एक बार जब हमारे स्वतन्त्रताके अधिकारको मान्यता दे दी जायेगी तो हम समानताके स्तरपर उससे कोई ऐसी सन्धि करने अथवा उसके साथ कोई ऐसी साझेदारी कायम करनेके लिए तत्पर रहेगे जिससे ग्रेट ब्रिटेन और भारतके सम्बन्ध एक सन्तोषजनक आधारपर स्थापित हो जाये।

प्र० : ग्रेट ब्रिटेन जब अन्तिमरूपसे और सदाके लिए ऐसी घोषणा कर देगा कि भारतकी जनताको अपने भाग्यका निर्णायक आप बननेका वैसा ही अधिकार प्राप्त है जैसा कि हमें है, तो आपके विचारसे क्या तब भी भारत ऐसी शर्तोंपर जिन्हें पूरा करना उसके बसमें हो, अंग्रेज अफसर, सिपाही और तकनीशियन रखेगा और भावी भारत राज्यके निर्माणमें हमारे अनुभवोंका लाभ उठायेगा?

उ० . बेशक, वह ऐसा करेगा। एक बार जब ग्रेट ब्रिटेन उस चीजको स्वीकार कर लेगा जिसे हम अपना न्यायसम्मत अधिकार मानते है तो निश्चय ही मै सभी अग्रेज अफसरोको भारतसे निकाल देना नही चाहूँगा।

मै तो आपके सारे अनुभवोका लाभ उठाना चाहता हूँ। जब आपकी ओरसे आदेश देना बन्द हो जायेगा तो मेरा खयाल है कि हम आपसमे ऐसी व्यवस्था कर सकते है जो हम दोनोके लिए सन्तोषजनक हो।

प्र० : क्या यह सच है, जैसा कि मेरे कुछ अधिक उग्र राष्ट्रवादी मित्रोंने कहा है, कि भारतको जब यूरोपीय सलाहकारोंकी जरूरत होगी तब वह अंग्रेजोके बजाय यूरोपीय महाद्वीपके देशोके विशेषज्ञों, जैसे जर्मनों, फ्रांसीसियों, स्वीडनवासियों, डचों आदिकी सहायता लेना ज्यादा पसन्द करेगा?

उ० : नही, मै नही समझता कि सामान्यरूपसे यह बात सच है। बेशक, हमे कई बातोमे यूरोपकी सलाह और मार्ग-दर्शनकी आवश्यकता होगी। अगर हमे यह सलाह और मार्ग-दर्शन ग्रेट ब्रिटेनसे ऐसी शर्तोपर मिल सके जिन्हे हम पूरा कर सकते हो तो हम उसका स्वागत करेगे। एक ही स्थिति है जिसमे हमे ग्रेट ब्रिटेनसे विमुख होना पडेगा। वह स्थिति तब आयेगी जब ग्रेट ब्रिटेन हमे वह चीज न दे जिसे हम अपनी वाजिब माँग समझते है।

अगर आप हमारे साथ न्यायका व्यवहार करेगे और अपनी सुरक्षा-व्यवस्थाको अपने नियन्त्रणमे रखनेके हमारे अधिकारको स्वीकार कर लेगे, तो हम आपके विशेषज्ञो-से बातचीत करके यह जानकारी प्राप्त करेगे कि हमारी आवश्यकताओके लिए कमसे-कम कितने ब्रिटिश सैनिक रखना जरूरी समझा जाता है। मै भारतस्थित ब्रिटिश सेनापतिको अपना सैनिक सलाहकार मानूंगा, लेकिन भारतस्थित ब्रिटिश सेनाको तो निस्सन्देह भारतकी राष्ट्रीय सरकारके अधीन रहना होगा।

प्र० : और इस कथनके बारेमें आपका क्या कहना है कि अपने-आपको भारत सरकारके भाड़ेके सैनिकोंकी स्थितिमें रखना ब्रिटिश प्रजाजनोके लिए अप्रतिष्ठाका विषय होगा?

उ० : मैने यह दलील सुनी है, लेकिन यह मुझे किसी तरह जँचती नही। इस आपत्तिके पीछे यह विश्वास छिपा हुआ है कि साझेदारी नामकी ही साझेदारी होगी और वास्तवमे हम सब एक गुलाम राष्ट्रकी तरह रहेगे। अगर ऐसा खयाल न हो तो फिर किसी साझेदार राष्ट्रको अपनी सेवा प्रदान करनेवाले ब्रिटिश सैनिकको भाडेका सैनिक कैसे कहा जा सकता है? लेकिन अगर ब्रिटिश सैनिक राष्ट्रीय

सरकारके अन्तर्गत काम करनेको तैयार न होंगे तो हमें उनके बिना ही काम चलाना होगा।

प्र० : गरज यह कि ब्रिटेनके स्वार्थकी दृष्टिसे भी आप ऐसा मानते हैं कि ग्रेट ब्रिटेनके साथ सन्धि-सम्बन्धों और साझेदारीके बन्धनमें बँधा, हमारे प्रति मैत्रीपूर्ण रुख रखनेवाला भारत हमारे लिए शक्तिका स्रोत-रूप होगा?

उ० यह तो आप लोगोंके ही तय करनेकी बात है। मैं तो ऐसा मानता हूँ कि भारतीय समस्याके ऐसे समाधानसे जो भारतकी आकांक्षाओंकी पूर्तिकी दृष्टिसे सन्तोषजनक हो, ग्रेट ब्रिटेनको अपनी आर्थिक समस्याको हल करनेमें बहुत अधिक सहायता मिलेगी। इससे ग्रेट ब्रिटेन को लाभ होगा, भारतको और सारी दुनियाको भी लाभ होगा। यदि ग्रेट ब्रिटेन भारतके साथ स्वेच्छापर आधारित, अर्थात् दो समान पक्षवालोंके बीच होनेवाली साझेदारी कायम करता है तो उसे व्यापार करनेके लिए एक मित्र राष्ट्र मिलेगा और इसके अलावा अन्य सारे ब्रिटिश मालका बहिष्कार बन्द हो जायेगा। मुझे ऐसी आशंका है कि लंकाशायरको कुछ अधिक सहायता नहीं मिल पायेगी, क्योंकि हम लोग अपनी जरूरतका कपड़ा खुद ही तैयार करनेको कृत-संकल्प हैं; किन्तु हमें दूसरी बहुत-सी वस्तुओंकी भी जरूरत है, जिन्हें विदेशोंसे मँगाना होगा। उदाहरणके लिए, मैं समझता हूँ, भारत अठारह करोड़ रुपयेकी चीनी और सात करोड़ रुपयेके लोहेका सामान वगैरह आयात करता है।

निश्चय ही, अभी बहुत दिनोंतक हम अपनी जरूरतकी सारी चीजें खुद ही तैयार नहीं कर पायेंगे।

प्र० : तो श्री गांधी, मैं समझता हूँ, आप यह चाहते हैं कि अपने भाग्यका निर्णायक स्वयं होनेके भारतके अधिकारको तत्काल सदाके लिए स्वीकार कर लिया जाये? और आप यह मानते हैं कि अगर ऐसा कर दिया जाये तो सारा वातावरण बदल जायेगा और तब ग्रेट ब्रिटेन उस भारतको, जिसका आप प्रतिनिधित्व करते हैं, पारस्परिक सहयोगसे सम्बन्धित तफसीलकी बातोंका निबटारा करनेके लिए सर्वथा तत्पर पायेगा? और गोलमेज परिषद् विफल हो जाये, इससे बेहतर आप यह मानते हैं कि भारतको अपने भाग्यका सम्पूर्ण नियामक बननेका अधिकार है, इस सिद्धान्तको स्वीकार कर लिया जाये और साम्प्रदायिक समस्या-जैसे प्रश्नोंका हल पंच-फैसलेके लिए छोड़ दिया जाये?

उ० : हाँ, बात ऐसी ही है, मैं समझता हूँ कि जैसे ही ब्रिटिश सरकार दुनियाके सामने यह घोषणा कर देगी कि भारतको उतनी ही स्वाधीनताका अधिकार है जितनी स्वाधीनताका अधिकार ग्रेट ब्रिटेनको है, हम कठिन साम्प्रदायिक समस्याके सम्बन्धमें पंच-फैसलेके सिद्धान्तको स्वीकार करनेके लिए पूरी तरह तैयार हो जायेंगे। लेकिन, मैं नहीं समझता कि गोलमेज परिषद्में जितना समय लगा है, सब व्यर्थ गया ही सिद्ध होगा। आप सच मानिए, कांग्रेस समझौतेकी राहमें कोई बाधा नहीं डाल रही है।

परिषद्मे से सर जॉफ्रे कॉर्बेटकी योजना सामने आई है। सर ह्यूबर्ट कारकी योजना भी ऐसी है जिसपर ध्यानसे विचार किया जाना चाहिए — उस योजनाके अन्तर्गत लोक-निर्वाचित सदनमे मुसलमानोको लगभग वह सब-कुछ मिल जाता है जो वे चाहते है और इसी प्रकार द्वितीय सदनमे सिख लोग जो-कुछ चाहते है वह सब उन्हे भी मिल जाता है। लेकिन जैसा कि मैंने कहा है, सबसे अच्छा तरीका तो शायद यही होगा कि सीटोकी व्यवस्था और पृथक् अथवा सयुक्त निर्वाचक-मण्डलोके सवालका निबटारा एक निष्पक्ष न्यायाधिकरणके ऊपर छोड दिया जाये। कहनेकी जरूरत नही कि जब अन्यथा कोई समझौता न हो पाये तभी ऐसा न्यायाधिकरण नियुक्त किया जायेगा।

प्र० : लेकिन अस्पृश्योंके बारेमें आपका क्या कहना है? मैं जानता हूँ कि कुछ हल्कोंमें ऐसा माना जाता है कि उनके लिए पृथक् निर्वाचन-मण्डलोंकी व्यवस्था की जानी चाहिए और आपको उनकी ओरसे बोलनेका हक नहीं है।

उ० . मुझे इस बातकी खुशी है कि आपने इस प्रश्नकी भी चर्चा की। मै बेहिचक कह रहा हूँ कि अगर भारतके सभी भागोके अस्पृश्योके मत लिये जायें तो उनका प्रतिनिधि मै ही चुना जाऊँगा। डा० अम्बेडकर निस्सन्देह बडे चतुर और उत्साही आदमी हैं। उनके मनमे कटुता होना सभी तरहसे उचित है। मैंने अपना अधिकांश जीवन अस्पृश्योका पक्ष-समर्थन करनेमे लगाया है। मै भारतके सभी भागोमे जाकर उन लोगोसे मिला हूँ। उनमे से कई मेरे आश्रममे हैं। एक अस्पृश्य लडकीको तो मैंने गोद भी लिया है। मेरी ही तरह बहुत-से काग्रेसजन यह सोचते और महसूस करते है कि अस्पृश्योकी समस्या कितनी गम्भीर है।

अस्पृश्योके ही हितोका खयाल करके मै ऐसा मानता हूँ कि विशेष निर्वाचक-मण्डल या सीटोका आरक्षण उनके लिए घातक होगा। अगर इसे प्राप्त करनेकी कोशिश की गई तो फिर उनके खिलाफ विरोध भड़केगा। मेरा खयाल है उनके "खुले दरवाजेसे आनेसे", उन्हे सामान्य हिन्दुओ-जैसे मताधिकार दिये जानेसे ही उनके हितोंकी सबसे अच्छी तरह रक्षा होगी। वे देखेंगे कि भारतीय जनमतका दिशा-दर्शन करनेवाले नेता उनके सामाजिक दर्जेको उठाने और उनको मन्दिरोमे प्रवेश करनेका अधिकार दिलानेको कटिबद्ध है और साथ ही उन तमाम बाधाओ और असुविधाओको दूर करनेको तैयार हैं, जिन्हे वे लोग अतीतमे झेलते आये है।

प्र० : कुमारी मेयोकी पुस्तक[1] पढ़नेवालोंकी समझमें पशुओंके प्रति भारतीयोंका व्यवहार किसी तरह समझमें नहीं आता। वे जानते है कि हिन्दू किसीकी जान लेना पाप समझते है, लेकिन यह बात उनको समझमें नहीं आती कि उन्हे रुग्णावस्थामें सड़कोके किनारे मरनेको छोड़ दिया जाये, लेकिन उन्हें उनके कष्टोंसे मुक्ति न दी जाये। इस विषयमें आपका क्या कहना है?

१. मदर इंडिया, उक्त पुस्तककी गाधीजी द्वारा लिखी आलोचनाके लिए देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ ५८४-९४।

उ० यहाँ आपने, भारतके सुधारक वहाँ जिन समस्याओंको यथासमय हल करनेकी आशा कर रहे हैं, उन्हींमे से एककी चर्चा छेडी है। मेरे आश्रममें एक बछडा मर रहा था।[1] वह लँगडा था और उसके कई जख्म हो गये थे जिनसे दुर्गन्ध आ रही थी। मैंने ऐसी सुइयाँ लगवाकर, जिन्हे लगाते हुए उसे कोई कष्ट नहीं हो सकता था, उसका प्राणान्त करवा दिया। इसपर मेरे कई देशभाइयोंने मेरी तीव्र आलोचना की। मेरे विचारसे अभी वे यह नही सीख पाये है कि अहिंसाका मतलब यह नही कि जिस कष्टका अंत किया जा सकता है उसे किसीको सहते रहने दिया जाये। मेरा खयाल है कि भारतमे आज पशुओंको जो कष्ट सहने पडते हैं उनमे से अधिकाशका कारण अहिंसाके असली अर्थका अनर्थ करना ही है।

प्र० : अब हम एक दूसरे विषयको ले। मै आपके धार्मिक विश्वासोंके बारेमें कुछ जानना चाहूँगा। आपके मनमें क्या कभी धर्मको लेकर शंकाएँ भी उठी हैं और पहले-पहल ईश्वरमें आपकी गहरी आस्था कब हुई और इस आस्थाके उदयके बादसे क्या कभी आपकी आत्माको शंकाओके अन्धकारसे भी गुजरना पड़ा है?

उ० हाँ, अपने छुटपनमें मै ईश्वरके प्रति अविश्वासके दौरसे गुजरा था। मैं वास्तवमे नास्तिक था। यह बात तब की है जब मै चौदह सालका था। लेकिन तबसे ईश्वरमे मेरी आस्था बराबर बनी रही है।

प्र० : तब क्या आप आत्माकी अमरतामें विश्वास करते हैं?

उ० : हाँ, उसमे मेरा विश्वास अवश्य है। यहाँ मै आपको सागरका उदाहरण देना चाहूँगा। जलकी बूँदोसे सागर बनता है। प्रत्येक बूँदका अपना एक अलग अस्तित्व है, लेकिन फिर भी वह सम्पूर्णका अंश है, 'अनेकमे-से-एक है।' इस जीवन-समुद्रमें हम सब छोटी-छोटी बूँदोके समान हैं।

मेरे धार्मिक सिद्धान्तका मतलब यह है कि मुझे [सृष्टिमे जो जीवन-तत्त्व नाना रूपोमे प्रगट हो रहा है] उस सम्पूर्ण जीवनसे, जो-कुछ भी है उस सबसे अपनी एकता साधनी है और ईश्वरकी उपस्थितिमे विराट जीवनके उस वैभवका हिस्सेदार बनना है। अपनी समग्रतामे यह जीवन ही ईश्वर है।

प्र० : क्या किसी पुस्तकने आपको बहुत अधिक प्रभावित किया और क्या उससे आपके जीवनमें एक नया मोड़ आया?

उ० हाँ, जिस पुस्तकका मुझपर सबसे अधिक प्रभाव पडा वह है रस्किनकृत 'अनटु दिस लास्ट'। उन दिनों मै दक्षिण आफ्रिकामे रहता था। १९०४ मे ३५ वर्षकी अवस्थामे रेलगाडीसे डर्बन जाते हुए मैंने वह पुस्तक पढी और उसीको पढकर मैंने अपना बाह्य जीवन पूर्णत बदल देनेका निश्चय किया।[2] उसको पढनेका मुझपर जो प्रभाव हुआ उसका वर्णन मै यही कहकर कर सकता हूँ कि रस्किनने मुझे अभिभूत कर लिया। मै पुस्तकको एक ही बारमे पढ गया और उसे पढनेके

१. देखिए खण्ड ३७, पृष्ठ ३२३-७
२. देखिए खण्ड ३९, पृष्ठ २२८-९

बाद मैं पूरी रात जागता रहा और तभी मैंने अपने जीवनकी सम्पूर्ण योजनाको बदल देनेका निश्चय किया। टॉल्स्टॉयको मैं उससे बहुत पहले पढ गया था। उन्होंने मेरे आन्तरिक जीवनको प्रभावित किया।

प्र० : उन दिनों तो आप काफी सफल वकील थे न? आपमें जो यह परिवर्तन आया उसका मतलब क्या यह था कि आप ऐसा मानने लगे कि इस जीवनकी अच्छी चीजोंका उपभोग करना गलत है? तब आपकी आय क्या थी?

उ० : जहाँतक मुझे याद आता है, मैं वकालतसे प्रतिवर्ष लगभग ३,००० कमा लेता था। जिसे आप मुझमे "परिवर्तन आना" कहते है, उस घटनाके बाद मैंने तय कर लिया कि भविष्यमे मैं अपनी सारी कमाई ऐसे उद्देश्योपर खर्च करूँगा जो मुझे अपने मानव-बन्धुओके लिए कल्याणकर लगे और आगेसे अपना गुजारा केवल शारीरिक श्रमके बलपर करूँगा। वैसे तो इस लक्ष्यको पूरा करनेकी कोशिशमे मैं सर्वथा सफल नही रहा हूँ, लेकिन मैं जानता हूँ कि इसी तरह रहकर मनकी शान्ति प्राप्त की जा सकती है।

प्र० : आपमें मुझे आश्चर्यजनक शक्ति और स्फूर्ति दिखाई दी है और उससे मैं बहुत प्रभावित हूँ। बासठ सालकी उम्रके बहुत कम लोगोंमें इतनी अधिक स्फूर्ति होती है। अखबारोंमें मैंने आपके आहारके सम्बन्धमें कुछ पढ़ा है। क्या आप मुझे यह बतायेंगे कि आपके दैनिक आहारमें क्या-क्या होता है?

उ० . वेशक। मेरा निश्चित मत है कि अधिकाश लोग बहुत ज्यादा खाते है। अपने मौजूदा आहारपर रहकर मैं जितना अच्छा महसूस करता हूँ, उतना अच्छा और कभी नही महसूस किया है। दवाओसे तो मुझे भय लगता है। मेरा दैनिक आहार इस प्रकार है : सुबहके आठ बजे नाश्तेमे मैं सोलह औंस बकरीका दूध और चार सन्तरे लेता हूँ, दोपहरका भोजन एक बजे करता हूँ और उसमे फिर सोलह औंस दूध, दाख, नाशपाती या कोई और फल लेता हूँ। शामका भोजन पाँच और छ बजेके बीच करता हूँ। उसमे एक छोटा चम्मच पिसे हुए बादाम, बीस-तीस खजूर, कई टमाटर और लेटिस या अन्य कोई सलाद होता है। इससे बदहजमी नही होती। इस सूचीसे आपको यह तो स्पष्ट हो ही गया होगा कि मैं श्वेतसार या अन्न बिलकुल नही खाता।

प्र० : अन्तमें मैं यह पूछना चाहूँगा कि क्या आप ऐसा मानते हैं कि परिषद्के विफल हो जानेपर यदि भारतीयोको आंशिक स्वशासनाधिकार दे दिया जाये और इस बातकी गुंजाइश रखी जाये कि दस-बीस वर्ष बाद जब ब्रिटिश संसद यह समझ ले कि भारत अपना सारा कारोबार आप ही सँभाल सकता है तब एक और परिषद् बुलाई जा सकती है तो क्या उससे वे सन्तुष्ट हो जायेंगे?

उ० . मुझे विश्वास है कि मेरा क्या उत्तर होगा, यह आप जानते हैं। इग्लैंडमे रहते हुए मैं इस बातकी कोशिश करता रहा हूँ कि उत्तेजित करनेवाली कोई बात न कहूँ, लेकिन आपके प्रश्नके उत्तरमे इतना जरूर कहूँगा कि भारतमे हममे से जिन

लोगोने अपने प्राणोकी बाजी लगा रखी है, वे किसी अधूरी चीजसे सन्तुष्ट होनेवाले नही है। अगर इस परिषद्के बाद भारतकी जनताको यह विश्वास हो जाता है कि ग्रेट ब्रिटेनकी भारतको तत्काल स्वराज्य देनेकी सच्ची इच्छा नही है तो वह उसे प्राप्त करनेके लिए अपनी सारी शक्तिका प्रयोग करेगी।

प्र० : अब 'स्पेक्टेटर' के पाठकोको आपका अन्तिम सन्देश क्या है?

उ० . आपके पाठकोको मेरा अन्तिम सन्देश यह है कि वे अपने मित्रोको हमारा दृष्टिकोण समझानेके लिए अपने पूरे प्रभावका उपयोग करे और हमारे देशोके बीच समानताके आधारपर स्थित सच्ची साझेदारी कायम करनेके महान् उद्देश्यके लिए कार्य करे। मेरा खयाल है कि इन दोनो अथवा दो से अधिक राष्ट्रोकी स्वेच्छापर आधारित सगठनका उपयोग विश्वकी अनेक समस्याओके समाधानके लिए किया जा सकता है—सो केवल अधिकतम लोगोके अधिकतम लाभके लक्ष्यको ही सामने रखकर नही, बल्कि सबके लाभके लक्ष्यको सामने रखकर।

[अंग्रेजीसे]
स्पेक्टेटर, २४-१०-१९३१

१३०. पत्र : अलबर्ट आइन्स्टीनको[1]

लन्दन
१८ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

सुन्दरम्की मार्फत आपका सुन्दर पत्र पाकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। इससे मुझे बहुत सन्तोष मिलता है कि मैं जो कार्य कर रहा हूँ, उसका आप समर्थन करते है। सचमुच मेरी बडी अभिलाषा है कि हम दोनोकी मुलाकात होती और वह भी भारत-स्थित मेरे आश्रममे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

प्रोफेसर आइन्स्टीन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५००)से।

१. आइन्स्टीनके २७ सितम्बरके पत्रके उत्तरमें जिसमें लिखा था : "अपने कारनामोंसे आपने बता दिया है कि हम अपने आदर्शोंको बिना हिंसाका सहारा लिए भी हासिल कर सकते है। हम हिंसावादके समर्थकोंको भी अहिंसक उपायोंसे जीत सकते है। आपकी मिसालसे मानव-समाजको प्रेरणा मिलेगी और अन्तर्राष्ट्रीय सहकार और सहायतासे हिंसापर आधारित झगड़ोंका अंत करने और विश्वशांतिको बनाये रखनेमें सहायता मिलेगी।

"अमित और आदरके इस उल्लेखके साथ मैं आशा करता हूँ कि आपसे साक्षात्कार कर सकूँगा।"

स्टेट्समैन, १९-४-१९६५

१३१. भेंट : बर्मिंघमके बिशपसे[1]

सेली ओक
बर्मिंघम
१८ अक्टूबर, १९३१

वैज्ञानिक बिशपने विज्ञान व मशीनोंकी जबरदस्त वकालत की। उन्होंने कहा कि इनके द्वारा मानवको शारीरिक श्रमसे बचाया जाये ताकि उसका सारा या अधिकांश समय बौद्धिक कार्यके लिए बच सके। गांधीजी ने बिशपको याद दिलाया कि मुझे यह विश्वास नहीं है कि औसत आदमी अपने बचे हुए समयका उपयोग लाभकारी कार्योंमें करेगा; क्योंकि एक पुरानी कहावत है, 'बेकारीमें शैतानी सूझती है।' लेकिन बिशपने इसपर आपत्ति करते हुए कहा, "मैं पूरे दिनमें एक घंटेसे अधिक शारीरिक श्रम नहीं करता। अपना बाकी समय मैं बौद्धिक कार्योंमें लगाता हूँ।" गांधीजी ने हँसते हुए कहा :

मै जानता हूँ, लेकिन यदि सभी बिशप बन जाये तो वे बिशप पायेंगे कि उनका धन्धा तो खत्म हो गया।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१३२. सन्देश : इंग्लैंडमें रहनेवाले भारतीयोंको[2]

सेली ओक
बर्मिंघम
१८ अक्टूबर, १९३१

ब्रिटिश द्वीपसमूहमे रहनेवाले मुट्ठी-भर भारतीय भारतके सुनामके थातीदार है। इसलिए आप सब सावधान रहे।[3]

अपनी प्रतिभाका उपयोग यहाँ पैसा कमानेके लिए करनेके बजाय देश-सेवामे कीजिए। अगर आप चिकित्सक है तो भारतमे इतना अधिक रोग है कि उसमे आपका सारा चिकित्सा-सम्बन्धी कौशल खप सकता है। अगर आप वकील है तो

१. महादेव देसाईकी 'बर्मिंघम-यात्रा' से उद्धृत। २४-१०-१९३१ के **अमृतबाजार पत्रिकाकी** रिपोर्टके अनुसार यह भेंट प्रातःकाल हुई थी।

२. महादेव देसाई द्वारा लिखे "बर्मिंघम-यात्रा" के विवरणसे उद्धृत।

३. इस छोटे-से सन्देशके बाद गांधीजी ने लोगों द्वारा पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर दिये।

मतभेदो और झगडोकी कमी नही है। तकरार बढानेके बजाय आप उन झगडोको शान्त कीजिए और मुकदमेबाजी बन्द करवाइए। अगर आप इजीनियर है तो ऐसे आदर्श घर बनाइए जो हमारे देशभाइयोकी औकात और आवश्यकताओके लायक भी हो और साथ ही बहुत स्वास्थ्यप्रद तथा हवादार हो। आपने जो-कुछ सीखा है, उसमे से ऐसी कोई चीज नही है, जिसका सदुपयोग वहाँ न किया जा सकता हो। आप वह कीजिए जो कुमारप्पा[1], जो आपकी ही तरह एक 'चार्टर्ड एकाउटेट' है, कर रहे है। काग्रेस तथा उससे सयुक्त सगठनोके हिसाब-किताबकी जाँचके लिए लेखा-परीक्षकोकी सभी जगह बहुत ज्यादा जरूरत है। आप भारत आइए। वहाँ मै आपको काफी काम दूंगा और पारिश्रमिकमे ४ आने रोज भी। यह राशि भारतमे करोडो लोगोको जितना मिलता है, उससे तो ज्यादा ही है।

पूर्व इसके, कि अग्रेज लोग यह कहनेके लिए बाध्य हो कि 'हमे खेद है, जो काम हमे बहुत पहले कर लेना चाहिए था वह हमने नही किया', भारतको अग्नि-परीक्षा-मे से गुजरना पडेगा। एक सबल राष्ट्र उतनी आसानीसे तो हार नही मान लेगा जितनी आसानीसे उसके हार मान लेनेकी बात हम शायद सोचते हो, और अहिंसा-धर्मको माननेवाले व्यक्तिकी हैसियतसे मै यह नही चाहूँगा कि इग्लैडकी इच्छाके खिलाफ उसे कुछ भी देनेपर विवश किया जाये। इग्लैड अपनी सत्ता छोडे, उसके पहले उसे यह प्रतीति हो जानी चाहिए कि यह चीज इग्लैड और भारत, दोनोके हितमे है कि इग्लैड भारतको उसकी स्वतन्त्रता दे दे। और भारत अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर ले।

प्र० : क्या आप समझते है कि इंग्लैंडको इस बातकी प्रतीति करानेके लिए आपको कुछ दिन और यहाँ रहना चाहिए?

नही, मै निश्चित अवधिसे ज्यादा समयतक यहाँ नही रह सकता। अगर मै जितना उचित है, उससे ज्यादा दिन यहाँ रह गया तो मेरा प्रभाव समाप्त हो जायेगा और लोग मेरे प्रति उत्साह दिखाना बन्द कर देगे। आज जो मेरा प्रभाव है वह स्थायी नही, अस्थायी ही है। मेरा स्थान तो भारतमे अपने उन देशभाइयोके बीचमे है जिन्हें कष्ट-सहनका एक और आन्दोलन छेडनेको निमन्त्रित करना पड सकता है। सच तो यह है कि आज अग्रेजोपर जो अनुकूल प्रतिक्रिया होती दिखाई देती है, उसका कारण यही है कि वे जानते है कि मै एक ऐसे राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करता हूँ जो कष्ट-सहन कर रहा है। और जब मै अपने देशभाइयोके साथ कष्ट-सहन कर रहा होऊँगा तो मै भारतमे रहकर भी इग्लैडवासियोको उसी तरह अपनी बात सुनाऊँगा जिस तरह हृदय, हृदयतक अपनी बात पहुँचा देता है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१. जे० सी० कुमारप्पा, अर्थशास्त्री।

१३३. भाषण : बर्मिंघमकी सभामें[1]

सेली ओक
बर्मिंघम
१८ अक्टूबर, १९३१

अन्य स्थानोपर तो मै कार्यवश, लोगोसे अपनी बात कहनेके लिए जाता रहा हूँ, लेकिन यहाँ तीर्थयात्रीके रूपमे आया हूँ — तीर्थयात्रीके रूपमे यो आया हूँ कि यही वह स्थान है जिसने श्री हॉरेस अलेक्जेडरको अपने यहाँसे छुट्टी देकर ऐसे समय[2] हमारे यहाँ भेजा जब हमे एक मित्रकी आवश्यकता थी। . यह वह समय था जब सत्याग्रहका समाचार भारतसे कही बाहर नही भेजा जा सकता था। जो भी चीज भेजी जाती थी उसे रोककर जाँचा जाता था, उसमे काट-छाँट की जाती थी और देशके प्रमुख लोग जेलोमे थे। ऐसे ही समय 'मित्रो'[3]ने यह तय किया कि भारतको एक मिशन भेजा जाये और इस कामके लिए श्री अलेक्जैडरको भेजा गया। न केवल आप सबने, बल्कि उनकी अपग पत्नीने भी उन्हे छुट्टी दे दी। अव आप समझ गये होगे कि मेरा यहाँ आना मेरे लिए तीर्थयात्रा क्यो है।

मेरे सामने जो काम है, उसके विषयमे मैंने यही सोचा कि अभी उससे सम्बन्धित बाते बताकर मुझे आपका समय नही लेना चाहिए। अधिकाश लोग अब जान गये है कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस राष्ट्रकी ओरसे क्या माँगती है। आप यह भी जानते है कि अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए हमने कौन-सा उपाय अपनाया है। इस तरहका उपाय इतिहासमे शायद पहली बार अपनाया गया है। आप यह भी जानते है कि देशने अपने लिए जो सिद्धान्त निश्चित किया है, उसके अनुसार वह गत वर्ष कहाँतक आचरण कर पाया है। मै आपको यह समझाना चाहूँगा कि गोलमेज परिषद्मे जो काम किया जा रहा है उसे अगर सफल होना है तो वह तभी होगा जब उसपर प्रबुद्ध लोकमतका दबाव पडेगा। मैंने अक्सर कहा है कि इंग्लैडमे मेरा असली काम परिषद्के अन्दर नही, बल्कि बाहर ही है। अपने कुछ सार्वजनिक भाषणोमे मैंने ऐसा सकेत देनेमे भी सकोच नही दिखाया है कि परिषद्में कुछ नही किया जा रहा है, वह सिर्फ समय बिता रही है और भारतसे आये सदस्यो तथा ब्रिटिश हितोका प्रतिनिधित्व करनेवाले सदस्योका बहुमूल्य समय नष्ट कर रही है।

१. गाधीजी की "बर्मिंघम-यात्रा" के महादेव देसाई द्वारा लिखे विवरणसे उद्धृत। यह सभा दिनके तीसरे पहर वुडब्रुक सेट्लमेंटमें हुई थी, जिसकी अध्यक्षता हॉरेस अलेक्जेडरने की थी। १९-१०-१९७१ के बर्मिंघम पोस्टमें प्रकाशित विवरणके अनुसार उक्त सभामें महापौर डब्ल्यू० डब्ल्यू० सॉण्डर्स, तथा बर्मिंघमके बिशप भी उपस्थित थे। यह सभा दो घटे चली थी।

२. सप्रू-जयकर मन्त्रणाकी विफलताके बाद, १९३० में; देखिए खण्ड ४४।

३. क्वेकर सम्प्रदायके सदस्य।

चूँकि परिपद्के विषयमे मेरा विचार ऐसा है, इसलिए मैं इस बातके लिए जितना आग्रह करूँ कम होगा कि ब्रिटिश द्वीपसमूहमे लोकमतका दिशादर्शन करनेवाले जिम्मेदार नेताओको उस सघर्षका सच्चा स्वरूप जान लेना चाहिए जिसे भारतीय बहुत ही कठिनाइयोको झेलते हुए चला रहे है। कारण, जबतक आप इस सघर्षके सच्चे और आन्तरिक अर्थको नही समझते तबतक आप उन लोगोपर कारगर ढगसे दबाव नही डाल सकते जो यहाँ राज-काज चला रहे है।

इस सभामे आये श्रोताओके विषयमे मुझे इतनी जानकारी तो है ही कि मै कह सकूँ कि आप सभी लोग सच्चे सत्यान्वेषी है और जो उचित है, वह करनेको उत्सुक है — सो विशेषरूपसे कुछ इसी मामलेके सम्बन्धमे नही, बल्कि ऐसे हर उद्देश्यके सम्बन्धमे जो मानव-सहायताके योग्य है। और अगर आप इस प्रश्नको इस दृष्टिकोणसे देखेंगे तो बहुत सम्भव है कि गोलमेज परिषद्में चल रही वार्त्ताएँ सफल हो जायें।

गांधीजी के भाषणके अन्तमें उनसे जो प्रश्न पूछे गये उनमें से एक यह था कि क्या भारतीय प्रतिनिधियोंके बीच साम्प्रदायिक प्रश्नपर आपसमें कोई सहमति न हो पानेके कारण ही समझौता असम्भव नहीं हो गया है। गांधीजी ने इस आक्षेपका तीव्र प्रतिवाद करते हुए कहा :

मै जानता हूँ कि आपको इसी ढगसे सोचना सिखाया गया है। यह बात बडी आकर्षक लगती है और आप इसके व्यामोहसे छुटकारा नही पा सकते। मेरा कहना यह है कि विदेशी शासकोने भारतपर 'फूट डालो और राज्य करो' के सिद्धान्तके बलपर शासन किया है। अगर शासक लोग कभी इस पक्षको और कभी उस पक्षको न फुसलाये-बहकाये तो भारतमे कभी भी किसी विदेशी साम्राज्यका शासन नही चल सकता। जबतक विदेशी शासन-रूपी पच्चर कायम है और वह अधिकाधिक गहरा धँसता जा रहा है तबतक हम आपसमे विभक्त ही रहेगे। पच्चरका काम ही यही है लेकिन आप ज्यो ही पच्चरको निकाल लेगे, विभक्त हिस्से आपसमे मिलकर तुरन्त एक हो जायेगे। फिर इस परिपद्का जिस तरह गठन हुआ है, उसके कारण एकता प्राप्त कर सकना अत्यन्त कठिन कार्य हो गया है, क्योकि यहाँ जितने सदस्य आये है, सभी मनोनीत है और कोई भी विधिवत् निर्वाचित सदस्य नही है। उदाहरणके लिए, अगर राष्ट्रवादी मुसलमानोसे अपना प्रतिनिधि चुननेको कहा गया होता तो डॉ० अन्सारी चुने गये होते। और अन्तमे, हमे यह नही भूलना चाहिए कि जो प्रतिनिधि आज यहाँ है, यदि चुनकर भी वही आते तो भी वे ज्यादा जिम्मेदारीकी भावनासे काम करते। इसके विपरीत, हम लोग यहाँ ब्रिटिश प्रधान मन्त्रीकी इच्छासे आये है। हम किसीके प्रति जिम्मेदार नही है, हमारा कोई निर्वाचन-क्षेत्र नही है जिसे हमे किसी बातके लिए मनाना पडे। इसके अलावा हमें यह याद दिलाया जाता है कि जबतक हम साम्प्रदायिक मसलेके सम्बन्धमे आपसमे किसी निर्णयपर नही पहुँचते तबतक किसी तरहकी प्रगति सम्भव नही है। इसलिए स्थिति ही कुछ ऐसी है कि हर सदस्य परिषद्की गाडीको एक अलग ही दिशाकी ओर खीचता है और जितना ज्यादा मिल सके उतना ऐंठ लेनेकी फिक्रमे रहता है। फिर प्रतिनिधियोसे

तो कोई सर्वसम्मत साम्प्रदायिक हल प्रस्तुत करनेकी अपेक्षा की जाती है, लेकिन उन्हे यह नही बताया जाता कि उनके बीच सहमति हो जानेपर उन्हे क्या मिलेगा, और इस तरह उस प्रेरणा-स्रोतको प्रारम्भमे ही समाप्त कर दिया गया है जिसके आधारपर सहमति पहले ही हो चुकी होती। निदान, समझौता हो पाना लगभग असम्भव हो गया है। सरकार जरा यह तो कहकर देखे कि भारतीयोमे आपसमे सहमति हो या न हो, हम तो भारतको छोडने ही जा रहे है। फिर आप देखिएगा कि भारतीय प्रतिनिधियोके बीच किस प्रकार तत्काल सहमति हो जाती है। सचाई यह है कि किसीको ऐसा नही लगता कि उसे सच्ची और जीवन्त स्वतन्त्रता मिलने जा रही है। जो-कुछ देनेकी तजवीज है वह केवल भारतका शोषण करनेके लिए नौकर-शाहीकी सत्तामे साझेदारी है। यह चीज हमारे बीच फूटके बीज बोती है। फिर चूँकि सरकारने सविधान-रचनाके प्रश्नको साम्प्रदायिक समस्याके समाधानपर आश्रित कर दिया है, इसलिए हर पक्षको सहज ही अपनी माँग अधिकसे-अधिक बढाकर पेश करनेका प्रलोभन होता है। अगर सरकार सचमुच कुछ करना चाहती हो तो वह बेहिचक मेरा सुझाव स्वीकार कर लेगी। मेरा वह सुझाव यह है कि साम्प्रदायिक प्रश्नका निर्णय करनेके लिए एक न्यायाधिकरण नियुक्त कर दिया जाये। अगर ऐसा कर दिया जाये तो इस बातकी पूरी सम्भावना है कि न्यायाधिकरणके हस्तक्षेपके विना ही कोई सर्वसम्मत समाधान निकल आये।

इसके बाद यह सवाल पूछा गया कि अगर ब्रिटिश सरकार वहाँ अपने दायित्वों-का निर्वाह करना बन्द कर दे तो संक्रान्ति-कालमें भारतमें क्या होगा। उत्तरमें गांधीजी ने कहा :

विदेशी शासन किसी सजीव शरीरमे स्थित बाह्य तत्त्वके समानहै। शरीरसे जहरको दूर करते ही शरीर अपनी खोई हुई शक्ति पुन. प्राप्त करने लग जाता है। यह कहना तो बिलकुल असगत है कि अगर ब्रिटिश सरकार भारतसे हटेगी तो वह अपने दायित्वोके निर्वाहका त्याग करेगी। आज वह जिस एकमात्र दायित्वका निर्वाह कर रही है वह है भारतका शोषण। ब्रिटेन भारतका शोषण बन्द कर दे तो भारत तुरन्त ही अपनी आर्थिक समृद्धिको प्राप्त कर लेगा।

प्र० : क्या खुद भारतके लोगोंके बीच आधारभूत बातोंके सम्बन्धमें कोई सहमति हो गई है?

काग्रेसने साम्प्रदायिक समस्याका एक सर्वसम्मत हल पेश किया है, लेकिन इसे स्वीकार नही किया जा रहा। यहाँ परिषद्में तो जिन विभिन्न पक्षोके प्रतिनिधियोके शामिल होनेकी बात कही जाती है, काग्रेस उनमे से एक पक्ष-मात्र है। लेकिन मूलभूत तथ्य यही है कि काग्रेस ही एकमात्र प्रातिनिधिक सस्था है और वह भारतके एक बहुत बड़े जनसमुदायका प्रतिनिधित्व करती है। यही एक सजीव, जीवन्त और स्वतन्त्र सगठन है, जो लगभग पचास वर्षोसे काम करता रहा है। सरकारके साथ समझौता काग्रेसने किया था और आप चाहे जो कहे, यही एकमात्र ऐसी संस्था है जो किसी दिन वर्तमान सरकारका स्थान लेगी। मेरा दावा यह है कि इसने अपने मन्त्रि-मण्डल

एक सिख, एक मुसलमान और एक हिन्दू सदस्यकी समितिके माध्यमसे जो योजना तैयार की है वह, जहाँतक औचित्य और न्यायका सम्बन्ध है, किसी भी न्यायाधिकरणकी कसौटीपर खरी उतरेगी।

श्रोताओंमें से एक व्यक्तिने पूछा कि क्या गोलमेज परिषद् विफल हो गई है और अब क्या भारतको स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए एक दूसरी परिषद्के गठनतक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। गांधीजी ने उत्तरमें कहा :

जबतक मैं गोलमेज परिषद्से अपने सारे सम्बन्ध तोड नही लेता तबतक यही समझना चाहिए कि मैंने पूरी तरह आशा नही छोड दी है। इसलिए स्पष्ट है कि अब भी मेरे मनमे कुछ आशा है, हालाँकि मुझे कहना चाहिए कि मेरे पास इस आशाका कोई आधार नही है। लेकिन यह मेरे स्वभावके विरुद्ध है कि जिस सगठनके साथ मैं सहयोग करता रहा हूँ उससे एकाएक अलग हो जाऊँ। मैं यह नही कह सकता कि आगे जब समाधान होगा तो वह किसी दूसरी गोलमेज परिषद्में ही होगा या नही, लेकिन इतना जरूर जानता हूँ कि अगर यह परिषद् विफल हो जाती है तो भारत तबतक अपना लक्ष्य प्राप्त नही कर पायेगा जबतक कि वह बहुत ही कठिन अग्नि-परीक्षासे — जैसी परीक्षासे वह पिछले साल गुजरा था उससे भी बहुत अधिक कठिन परीक्षासे — नही गुजरता।

प्र० : आप कहते हैं कि भारत अंग्रेजोंके शोषणके कारण दरिद्र हुआ है, लेकिन क्या यह सच नहीं है कि किसानोंके कष्टोंका असली कारण बनियोंकी लूट-खसोट और ब्याह-श्राद्धके अवसरोंपर की जानेवाली फिजूलखर्ची है? अन्तमें, आप ब्रिटिश सरकारपर फिजूलखर्चीका आरोप लगाते हैं। लेकिन देशी राजाओंकी फिजूलखर्चीके बारेमें आप क्या कहेंगे?

उ० : यद्यपि भारतीय बनिये अंग्रेज बनियोंके पासगके बराबर भी नहीं है, किन्तु अगर हमारा तरीका हिंसात्मक होता तो भारतीय बनिये गोलीसे उडा दिये जानेके पात्र माने जाते। लेकिन, अंग्रेज बनिये तो इस व्यवहारके सौ गुना अधिक पात्र हैं। भारतीय मुद्राके साथ वे किस तरह खिलवाड करते रहते हैं। लगान वसूल करनेमें कैसी हृदय-हीनतासे काम लेते हैं! इस तरह उन्होंने वहाँ जो लूट मचा रखी है उसकी तुलनामे भारतीय बनियो द्वारा लिये जानेवाले सूदकी दर तो कुछ भी नहीं है। मुझे तो इतिहासमे इतनी असगठित और विनम्र जातिके इतने सगठित शोषणका कोई दूसरा उदाहरण ही दिखाई नही देता। और जहाँतक देशी राजाओंकी फिजूलखर्चीका सम्बन्ध है, अगर मेरे हाथमें सत्ता हो तो उन्हे गरीबोंका उपहास करनेवाले उनके राजप्रासादोंसे निकाल बाहर करनेमें जहाँ मुझे कोई सकोच नही होगा, वहाँ ब्रिटिश सरकारको नई दिल्लीसे निकाल बाहर करनेमें मुझे और भी कम हिचक होगी। जब जनसाधारण भूखों मर रहा था, उस समय भारतमें इंग्लैंडकी नकल खड़ी करनेकी वाइसरायकी सनकको तुष्ट करनेके लिए नई दिल्लीपर जो हृदयहीन ढगसे करोड़ो रुपये पानीकी तरह बहाये गये, उसकी तुलनामे देशी राजाओंकी फिजूलखर्ची कुछ भी नही है।

इसके बाद एक भाईने एक बहुत ही मजेदार सवाल पूछा। उसने 'मंचेस्टर गार्डियन' के एक पत्रका उल्लेख किया, जिसमें पत्र-लेखकने गांधीजी के अस्पृश्योंका प्रवक्ता होनेके अधिकारको चुनौती दी थी, क्योंकि उसके अनुसार गांधीजी तो खुद ही उस पुरोहित वर्गके हैं जिसने आजतक अस्पृश्योंको दलित अवस्थामें रखा है। यह बतानेके बाद उसने पूछा कि क्या गांधीजी खुद ही समझौतेके मार्गमें एक बहुत बड़ी बाधा नहीं हैं।

मुझे नही मालूम था कि मै ब्राह्मण हूँ। अलबत्ता मै बनिया जरूर हूँ, और निस्सन्देह इस शब्दके साथ एक कष्टप्रद तिरस्कारकी भावना जुडी हुई है। लेकिन मै श्रोताओको बता दूं कि आजसे ४० वर्ष पूर्व जब मै इग्लैड आया, मेरी जाति-वालोने मुझे जाति-बहिष्कृत कर दिया और मै जो काम कर रहा हूँ वह मुझे किसान, जुलाहा और अस्पृश्य कहलानेका पात्र बनाता है। जब मेरा विवाह नही हुआ था, उससे भी बहुत पहले मैंने अस्पृश्यता-निवारणका काम अपना लिया था। अपने दाम्पत्य जीवनमे दो बार मै इस दुविधामे पडा कि अस्पृश्योके लिए काम करूँ या पत्नीके साथ रहूँ। अगर कोई रास्ता न निकलता तो मै पत्नीके साथ रहनेके बजाय अस्पृश्योके लिए काम करना जारी रखना ज्यादा पसन्द करता। लेकिन मै अपनी पत्नीका कृतज्ञ हूँ कि यह सकट दूर हो गया। मेरा परिवार मेरा आश्रम है और उसमे कई अस्पृश्य रहते है, जिनमे वह प्यारी लेकिन नटखट लड़की भी शामिल है जो वहाँ मेरी बेटीकी तरह रह रही है। जहाँतक समझौतेके मार्गमे मेरे बाधक होनेका सम्बन्ध है, मुझे स्वीकार करना पडेगा कि मै बाधक हूँ—और इसका सीधा-सादा कारण यह है कि भारतकी सच्ची और पूर्ण स्वतन्त्रतासे कम कोई भी बात मुझे सन्तुष्ट नही कर पायेगी।

प्र०: आपने संगठित विरोधके जिस विशिष्ट तरीकेकी शोध की है, उससे बुद्धिके धरातलपर समझाने-बुझानेके तरीकेका मेल बैठा पाना कभी-कभी हमको बहुत मुश्किल लगता है। क्या कारण है कि कभी-कभी आपको ऐसा लगता है कि समझाने-बुझानेके तरीकेसे काम लेनेके बजाय ज्यादा कड़ी कार्यवाही की जानी चाहिए?

उ०: १९०६ तक तो मै केवल समझाने-बुझानेके तरीकेपर ही निर्भर रहा। मै बडा लगनशील सुधारक था। सत्यका निष्ठावान उपासक होनेके कारण तथ्योको मै बहुत ठीक ग्रहण करता था और इसलिए मै एक अच्छा मजमूननवीस भी था। लेकिन जब दक्षिण आफ्रिकामे सकटकी घडी आई तब मैंने पाया कि समझाने-बुझानेके तरीकेका तो कोई असर ही नही हो रहा है। मेरे देशभाई बहुत उत्तेजित थे—कभी-कभी तो गायको भी यदि ज्यादा छेड़ा जाये तो वह सीग दिखायेगी और वास्तवमे दिखाती भी है—और प्रतिशोधकी चर्चा गरम थी। तब मेरे सामने दो ही रास्ते थे—या तो हिंसात्मक तत्त्वोसे गठबन्धन कर लूं या फिर इस सकटका मुकाबला करने और परिस्थितिको बिगडनेसे रोकनेका कोई और उपाय निकालूं। तभी मेरे मनमे यह विचार आया कि हमे ऐसे कानूनको माननेसे इनकार कर देना चाहिए जो

अपमानजनक हो और इसपर अगर सरकार हमें जेल भेजना चाहे तो खुशी-खुशी जेल चले जाना चाहिए। इस प्रकार सशस्त्र युद्धकी बराबरीके एक नैतिक उपायका जन्म हुआ। उन दिनों मैं राजभक्त था, क्योंकि मेरा यह दृढ़ विश्वास था कि ब्रिटिश साम्राज्यकी प्रवृत्तियोंका कुल परिणाम भारत और सम्पूर्ण 'मानवजाति' के लिए लाभदायक है। युद्ध प्रारम्भ होनेके शीघ्र बाद इंग्लैंड पहुँचकर मैं युद्ध-प्रयत्नोंमें कूद पड़ा, और बादमें जब मुझे प्लूरिसी हो जानेके कारण भारत जानेको विवश होना पड़ा तो जानको जोखिममें डालकर मैंने रंगरूटोंकी भरतीके अभियानका नेतृत्व किया, जिसे देखकर मेरे कुछ मित्र काँप उठे। मेरा भ्रम १९१९ में टूटा, जब कि रौलट अधिनियम नामक काला कानून पास हुआ और जब सरकारने प्रमाणित अन्यायोंके[1] मार्जनके लिए हमारी बहुत ही साधारण-सी माँगोंको भी ठुकरा दिया। और इस तरह १९२० में मैं बागी बन गया। तबसे मेरी यह प्रतीति बढ़ती ही गई है। जनताके लिए जो चीजें आधारभूत महत्त्वकी हैं वे केवल बुद्धिपूर्वक समझाने-बुझानेसे ही नहीं मिल जातीं, बल्कि उसकी कीमत कष्ट-सहनके रूपमें चुकानी पड़ती है। कष्ट-सहन मनुष्यका धर्म है, युद्ध पशु-जगत्का। लेकिन विरोधीका हृदय-परिवर्तन करने और उसके कानोंको, जो अन्यथा बन्द हैं, बुद्धिकी भाषा सुननेको तैयार करनेकी दृष्टिसे कष्ट-सहनका तरीका पशु-जगत्के नियमसे लाख गुना अधिक सक्षम है। मुझसे ज्यादा प्रार्थना-पत्र शायद किसीने नहीं लिखे होंगे, और जिनके बारेमें सभी ओर निराशा-ही-निराशा दिखाई देती थी, ऐसे जितने उद्देश्योंकी पैरवी मैंने की है उतनेकी पैरवी भी शायद ही किसीने की हो। लेकिन आखिरकार मैं इस आधारभूत निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि अगर हम सचमुच कोई महत्त्वपूर्ण बात मनवाना चाहते हैं तो हमें लोगोंको समझा-बुझाकर ही सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि उनके हृदयको प्रभावित करना चाहिए। बुद्धिके धरातलपर कही गई बातका असर मस्तिष्कपर ज्यादा होता है, लेकिन किसीके हृदयको तो कष्ट-सहनके द्वारा ही प्रभावित किया जा सकता है। कष्ट-सहन मनुष्यके अन्तःचक्षुको खोलता है। मानवजातिका शृंगार तलवार नहीं, कष्ट-सहन है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१. पंजाब और खिलाफत सम्बन्धी अन्याय; देखिए खण्ड १६

१३४. प्रश्नोत्तर[1]

[१८ अक्टूबर, १९३१ के पश्चात्][2]

प्र० : क्या आप नहीं समझते कि जब अंग्रेज भारतसे हट जायेंगे, तो वहाँ विभिन्न जातियोंमें आपसमें भयंकर रूपसे लड़ाई होनेकी आशंका है?

उ० मैंने ब्रिटिश शासनकी उपमा पच्चरसे दी है; यह पच्चर अलग हुआ नही कि आज जो हिस्से अलग-अलग हैं, वे आपसमे मिल जायेंगे। किन्तु यदि हम लडते ही रहे, तो मै इसे भी ईश्वरका भेजा वरदान समझूँगा। जो व्यक्ति हमेशा बुराई-ही-बुराईका खयाल करता रहता है, वह यदि अधिक नही तो उतना बुरा तो अवश्य है जितना कि बुराई करनेवाला व्यक्ति और इसलिए यदि हम एक-दूसरेका गला काटनेसे केवल ऊपरसे थोपी गई विदेशी सत्ताके कारण ही रुके हुए है, तो जितनी जल्दी वह सत्ता समाप्त हो जाये, उतना ही अच्छा है। कुछ समयके लिए हमे भले ही अधिक लडना पडे, किन्तु अन्तमे हम अच्छी तरह मिल जायेंगे।

प्र० : क्या आपको इस बातका पूरा विश्वास है कि यदि परिषद्में चुने हुए प्रतिनिधि होते तो आप सब तुरन्त एक हो जाते?

उ० . हाँ, मुझे तो पूरा विश्वास है। उस हालतमे हम बहुमतके निर्णयका पालन करते। मौजूदा स्थितिमे लोगोका उतना दोष नही है, जितना उत्तरदायित्वके उस अभावका, जिसमे कि हम काम कर रहे है। यही लोग यदि चुने हुए होते तो दूसरी ही तरह काम करते।

प्र० : क्या आप बजटको सन्तुलित करनेके लिए नमकपर टैक्स लगाया जाना पसन्द नहीं करेंगे?[3] क्या आप संघको कुछ वस्तुओंपर, जिनमें नमक भी शामिल है, कर लगानेकी असीम सत्ता देनेकी बात स्वीकार न करेंगे?[4]

उ० नही, सघको नमकपर कर लगानेका अधिकार नही होना चाहिए। जबतक मै गरीबोपर कर लगानेका पाप न करना चाहूँ, मै नमकपर कर लगाकर बजटको सन्तुलित करनेकी कल्पना नही कर सकता। यदि आप बजटको सन्तुलित करना चाहते है तो सैनिक व्ययको कम क्यो नही करते? पहलेसे ही अत्यधिक करके बोझसे दबे

१. यह महादेव देसाईके "मूलभूत बातें" शीर्षक लेखसे लिया गया है। महादेव देसाईका कहना है कि इस लेखमें उन्होने लन्दनमें अथवा अन्यत्र इस या उस सभामें गाधीजी ने जो-कुछ कहा, वह सब गाधीजी के ही शब्दोमें प्रश्नोत्तरके रूपमें प्रस्तुत कर दिया है।

२. महादेव देसाई कहते हैं कि इसे १८ अक्टूबर, १९३१ को बर्मिंघमकी सभामें गाधीजी की कही बातोंके साथ जोडकर पढना चाहिए।

३. यह प्रश्न बर्मिंघमकी सभामें पूछा गया था।

४. यह प्रश्न लॉर्ड सैंकीने पूछा था।

हुए गरीब भारतीय करदाताओंपर और कर लगाना मानवताके विरुद्ध अपराध करना होगा। नमकपर कर लगाना तो कुछ ऐसा ही होगा जैसे आप हवा और पानीपर कर लगाकर भारतसे जिन्दा रहनेकी अपेक्षा करे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१३५. पत्र : भोपालके नवाबको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
१९ अक्टूबर, १९३१

प्रिय नवाब साहब,

आज रात क्लैरिज होटलमें जो बैठक होनेवाली है, उसमें निम्नलिखित प्रस्तावोंपर विचार करनेका मेरा सुझाव है।

राजस्वके केवल कुछ मुद्दोंपर, जैसे.

क सीमा-शुल्क — इस विषयमें देशी राज्योंके मौजूदा अधिकारोंको अबाधित रखते हुए।

ख. नमक — इसी तरह।

ग निर्यात की जानेवाली अफीम।

घ सीमा-शुल्कके अतिरिक्त वस्तुओंपर लगाया जानेवाला (मौजूदा) आबकारी-शुल्क।

ङ. संघके व्यावसायिक विभागों – जैसे रेलवे, डाक और तार – से होनेवाली आय।

च संघकी मुद्रासे होनेवाला लाभ।

छ. प्रान्तोंसे सीधे प्राप्त होनेवाले मौजूदा राजस्व, जैसे आय-कर और इसी तरह देशी राज्योंके, उन्होंने ब्रिटिश-सरकारको अपने जो इलाके दे दिये हैं, माध्यमसे तथा अन्य प्रकारसे प्राप्त राजस्वको [संघकी ओरसे प्रान्तों या देशी राज्योंपर किये जानेवाले] संघकी आयके सामान्य साधनोंके रूपमें लिया जाये और खर्चकी पूर्ति इन मदोंके अन्तर्गत इस आयकी सीमातक ही की जाये। इस प्रणालीके अन्तर्गत देशी राज्योंको अपनी असली आयसे अधिक दायित्व लेनेका खतरा नहीं रह जायेगा।

अगर राजस्वके अन्य साधन ढूँढना आवश्यक जान पड़े तो उसको ध्यानमें रखकर संविधानमें यह व्यवस्था की जा सकती है कि जबतक संघीय संसदमें देशी राज्योंके दो-तिहाई या इससे भी अधिक प्रतिनिधि सहमत नहीं होंगे तबतक ऐसा कोई राजस्व संघीय राजस्व नहीं माना जायेगा।

महाविभव नवाब साहब भोपाल
देशी नरेश-मण्डलके चांसलर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१४२) से।

१३६. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
२० अक्टूबर, १९३१

श्री गाधी. अगर ऐसा कहा जानेको है कि इनके सम्बन्धमे निर्णय हो चुका है तो मेरा खयाल है कि इसपर मुझे दो शब्द कहने चाहिए।

अध्यक्ष : तो क्या आप समझते है कि इसकी कुछ मर्यादा होनी चाहिए?

श्री गाधी इतना ही नही, वल्कि व्यक्तिश मै तो नमकपर कोई भी कर लगानेका विरोध करूँगा। इस विषयमे केवल मर्यादा लगानेसे ही काम नही चलेगा। इसके अतिरिक्त, मै नही समझता कि पूरी तरह सोचे-विचारे विना मेरे लिए यह कहना मुनासिव होगा कि सीमा-शुल्कोके सम्बन्धमे कोई मर्यादा होनी ही नही चाहिए। ऐसी वहुत-सी चीजे है जिनके बारेमे मै कहूँगा कि 'नही, मै इससे आगे नही जाऊँगा।' यही वात अफीमपर भी लागू होती है।

अध्यक्ष : अफीमके विषयमें आपका क्या कहना है?

श्री गाधी. अफीमपर कर लगानेके सम्बन्धमें तो मै किसी भी तरहकी मर्यादा नही चाहूँगा।

अध्यक्ष : यह बहुत अच्छी बात है। कमसे-कम अफीमके सम्बन्धमें तो हम सबमें सहमति है। लेकिन श्री गांधी, सीमा-शुल्कोके बारेमें आपका क्या कहना है? क्या इस सम्बन्धमें आप कुछ मर्यादा रखना चाहेंगे?

श्री गाधी : मै तो समझता हूँ कि रखनी चाहिए।

अध्यक्ष : तो आप किस तरहकी मर्यादा रखना चाहेंगे?

श्री गाधी : मै सीमा-शुल्क-मात्रके वारेमे ऐसी कोई मर्यादा नही लगाना चाहूँगा। अलग-अलग वस्तुओके वारेमे मै अलग-अलग निर्णय करना चाहूँगा और मै किसी भी विशेषज्ञको यह कहनेका अधिकार नही दूंगा कि मुझे क्या करना चाहिए और क्या नही, क्योकि यहाँ तो हम किसी नीतिके अनुसार ही चलेगे।

अध्यक्ष : इसका मतलब तो यही हुआ कि संघकी सत्तापर कोई अंकुश नहीं लगाना चाहिए और इस तरह आप सीमा-शुल्कके सम्बन्धमें तो हमसे सहमत है। अफीमके सम्बन्धमें तो हम सब सहमत है ही और इस अर्थमें सीमा-शुल्कोके सम्बन्धमें

१. अध्यक्षने समितिके विचारार्थ यह सवाल सामने रखा कि वजटको सन्तुलित करनेके लिए संघको कुछ कर लगानेका अधिकार होना चाहिए या नही। सदस्यगण आम तौरपर संघको यह अधिकार देनेके पक्षमें थे। सर अकबर हैदरीने कहा कि यह तो पहले ही स्वीकार किया जा चुका है कि सीमा-शुल्क, नमक-कर और अफीम-करपर सबका अधिकार हो। इसके बाद एक प्रश्न यह था कि ये कर लगानेके सम्बन्धमें क्या कोई मर्यादा होनी चाहिए। कई वक्ताओंने कहा कि कोई मर्यादा नहीं होनी चाहिए। इसपर अध्यक्षने पूछा कि क्या अब यह मान लिया जाये कि इसपर निर्णय हो चुका।

भी क्योंकि आप कहते हैं, "मैं किसी भी विशेषज्ञको यह अधिकार नहीं दूँगा कि वह कहे मुझे क्या करना चाहिए और क्या नहीं।" संघ-सरकार भी यह नहीं चाहेगी। अब हम नमकके सम्बन्धमें विचार करें। मैं जानता हूँ कि यह सवाल कुछ कठिन है। लेकिन हम इस विषयकी गहराईमें उतरना चाहते हैं। नमक-करके सम्बन्धमें, आपके विचारसे, संघ-सरकारकी क्या स्थिति होनी चाहिए? क्या आप समझते हैं कि इसपर संघको कोई कर लगाना ही नहीं चाहिए?

श्री गांधी: केवल इतना ही नहीं कि इसपर कोई कर न लगाया जाये, बल्कि मैं तो चाहूँगा कि आज नमकपर जो कर लगा हुआ है उसे भी उठा लिया जाये।

लॉर्ड पील: श्री गांधी अपना निजी मत व्यक्त कर रहे हैं; लेकिन क्या उनका यह कहना है कि संविधिमें ही ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि संघ-सरकारको नमकपर कोई कर लगानेका अधिकार न हो?

श्री गांधी: हाँ, मेरा यही कहना है।

अध्यक्ष: ठीक है, हम इस बातका खयाल रखेंगे कि श्री गांधीको नमकपर कर लगानेमें आपत्ति है।

लॉर्ड पील: नहीं, बात इतनी ही नहीं है; वे जो-कुछ कह रहे हैं, वह व्यक्तिगत आपत्तिसे कुछ अधिक है। उनका विचार है कि नमकको संघकी आयके साधनोंमें शामिल ही न किया जाये।

अध्यक्ष: अच्छा, तो वे मानते हैं कि नमकको संघीय आयके साधनोंमें शामिल न किया जाये। लेकिन श्री गांधी, इस सम्बन्धमें क्या आप हमारी सहायता कीजिएगा? सबसे पहली बात तो यह है कि क्या कोई मुझे यह बता सकता है कि नमकपर अभी जो कर लगा हुआ है, उससे कितनी आमदनी होती है?

श्री गांधी: छ: करोड़।

सर अकबर हैदरी: ६.७ करोड़, जिसमें से १.२३ करोड़ घटा दिया जाये।

श्री गांधी: हाँ, अगर कोई छ: और ७ करोड़के बीच बताये तो मैं माननेको तैयार हूँ।

अध्यक्ष: ठीक है। तो हम ७ करोड़ कहेंगे।

सर अकबर हैदरी: भारत सरकारके आँकड़ोंके अनुसार तो वह लगभग ५.५० करोड़ होगा।

अध्यक्ष: श्री गांधी, अब आप इस तरह हमारी सहायता कर सकते हैं: मान लीजिए हम कहें, 'श्री गांधीका कहना ठीक है और यह कर नहीं लगाना चाहिए।' अब मैं आपसे यह पूछना चाहूँगा कि यह पचास लाख — अगर नमक-करसे होनेवाली आयको हम इतना ही मानें तो — कहाँसे आयेगा। क्या आप इस बातमें हमारी सहायता कर सकेंगे? आप इसके बारेमें क्या कहेंगे?

श्री गांधी: मेरा उत्तर यह है कि सैनिक खर्चमें ६ करोड़की कटौती की जाये।

अध्यक्ष : तो आप इस सम्बन्धमें खर्चमें कटौती करनेका तरीका अपनाना चाहते हैं।

श्री गांधी : हाँ, ऐसा ही है।

अध्यक्ष : सर अकबर, अब आप यह बताइए कि आपके विचारसे संघकी आय-के साधनोंमें और कौन-से कर शामिल किये जाने चाहिए।

सर अकबर हैदरी : दो-तीन साधन है, जिनका संकेत उप-समितिकी रिपोर्टमें किया गया है; फिर एक-दो साधनोंका उल्लेख भोपालके नवाब साहबने अपने भाषणमें भी किया था। लेकिन इनके सम्बन्धमें अपना मत मैं तभी व्यक्त करूँगा जब अन्तिमरूपसे जाँचे गये आँकड़े मेरे सामने आ जायें। यहाँ मैं 'विशेषज्ञ' शब्द-का प्रयोग नहीं करूँगा, क्योंकि कुछ लोगोंको यह शब्द एक तरहसे अरुचिकर-सा जान पड़ता है और ऐसा लगता है कि इससे एक उलझन पैदा हो जाती है — यह उलझन कि ये विशेषज्ञ इस मामलेका निबटारा करनेवाले पंच होंगे, अथवा समस्याको कैसे हल किया जाये, इसकी जाँच-पड़ताल करनेवाले लोग होंगे या इन्हें जो-कुछ तय किया जायेगा, उसकी सम्पुष्टि करनेका अधिकार होगा। इसीलिए मैंने कहा कि पहले मुझे आवश्यक आँकड़े प्राप्त हो जाने चाहिए, जिससे मैं यह जान सकूँ कि बजटको सन्तुलित करनेके लिए साधारणतया कितनी राशिकी जरूरत है या होगी और उक्त साधनोंसे कितनी आय होनेकी सम्भावना है। . . .

श्री गांधी : लॉर्ड पील, क्या आप कोई ठोस फार्मूला सोच निकालनेकी कृपा करेंगे? अगर आप कोई फार्मूला नहीं तय करते तो फिर शायद कोई और भी तय नहीं कर सकेगा और तब हम किसी तरह आगे नहीं बढ़ पायेंगे। लेकिन अगर आप हमारे विचारार्थ कोई ठोस फार्मूला प्रस्तुत करके हमारा मार्गदर्शन करें तो मैं आपके सुझावका स्वागत करूँगा।

लॉर्ड पील : मेरा खयाल है, मैं तो यही कह सकता हूँ कि सरकार अध्यक्ष अथवा अपने किसी अन्य सदस्यके माध्यमसे समितिके विचारार्थ कोई सुझाव सामने रखनेमें कोई हर्ज नहीं मानेगी।

श्री जिन्ना : जैसा मैं समझता हूँ, आपका प्रस्ताव केवल विचारार्थ विषयोंके निर्धारणसे ही सम्बद्ध है।

लॉर्ड पील : नहीं, मैं इसे केवल विचारार्थ विषयोंतक ही सीमित नहीं रखना चाहता। अपने प्रस्तावमें मैं यह सुझाना चाहता हूँ कि इस समितिकी वास्तविक कार्यविधि क्या हो और उसका कार्यक्षेत्र क्या हो। इसे मैं अधिक व्यापक भावमें रख रहा हूँ। इसे मैं बहुत मर्यादित नहीं करना चाहता।

श्री जिन्ना : मतलब यह कि इसे समितिके विचारार्थ सौंपना ही है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २२४-८।

१३७. भाषण : चैथम हाउसकी सभामे[1]

लन्दन
२० अक्टूबर, १९३१

आपने यह कहनेका सौजन्य दिखाया है कि बहुत व्यस्त रहनेके बावजूद इस संस्थाके तत्त्वावधानमे आयोजित सभामे बोलनेके लिए मैने कुछ समय निकाल लिया है। मुझे स्वीकार करना होगा कि मुझसे जहाँतक बन पडता है, ब्रिटेनकी जनताके सम्पर्कमें आनेके हर अवसरका मै लाभ उठाता हूँ और अपने यहाँ आनेका उद्देश्य उसके सामने रखता हूँ। इसलिए मै आपके पास सर्वथा स्वार्थवश ही आया हूँ, और मै आशा करता हूँ कि आजकी इस शाममे मै आपसे जो-कुछ कहूँगा उसे आप अपने हृदयमे स्थान देगे। मुझे जो-कुछ कहना है उसे कह चुकनेके बाद मै यह चाहूँगा कि आप मुझसे जिरह करे, जो भी प्रश्न पूछना चाहे, पूछे। मैने अनुभवसे यह जाना है कि गलतफहमीके कुहासेको दूर करनेका यही एकमात्र उपाय है। मैने देखा है कि मेरे रास्तेमे सबसे बडी बाधा यह है कि आप लोग असली तथ्योसे बिलकुल अनभिज्ञ है। वैसे, इसमे आपका कोई दोष नही है। कारण आप दुनियाके एक सबसे व्यस्त राष्ट्रके सदस्य है, आपकी अपनी अलग समस्याएँ है और इस समय तो आपका यह महान् द्वीप-समूह ऐसे सकटमे से होकर गुजर रहा है, जैसा सकट इसे आपके जीवन-कालमे कभी नही झेलना पडा। आपकी इन कठिनाइयोमे आपके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है और मै आशा करता हूँ कि अपनी अद्भुत शक्तिके बलपर आप शीघ्र ही इन कठिनाइयोमे से कोई-न-कोई रास्ता निकाल लेगे। फिर भी, इसमे कोई आश्चर्यकी बात नही है कि अपनी समस्याओमे व्यस्त रहनेके कारण आपको भारत-जैसे सुदूरवर्त्ती देशको प्रभावित करनेवाली समस्याओके अध्ययनके लिए समय नही मिल पाता। इसलिए मुझे यह देखकर बडा हर्ष हो रहा है कि आपमें से इतने-सारे लोग समय निकालकर, मै जो-कुछ भी कह सकता हूँ, उसे सुननेके लिए यहाँ आये है। और इस बातके लिए सचमुच मुझे दु ख है कि आपमे से बहुतोको, जो मेरी आवाज सुन रहे है, इस कमरेमे बैठनेका स्थान नही मिल पाया है। इन कुछ-एक प्रारम्भिक बातोके बाद अब मै असली विषयपर आता हूँ।

भारतके भविष्यकी मेरी जो कल्पना है उसका चित्र प्रस्तुत करनेके लिए मै यथासम्भव कमसे-कम शब्दोमे आपको बताऊँगा कि आज भारत क्या है। भारत अपने-आपमे एक उपमहाद्वीप है, जो उन्नीस सौ मील लम्बा और पन्द्रह सौ मील चौडा है और वहाँकी आबादी लगभग ३५ करोड है। इनमे से कोई २१ करोड हिन्दू

१. रॉयल इंस्टिट्यूट ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्सके तत्त्वावधानमें आयोजित इस सभामें प्रतिष्ठित, प्रभावशाली अंग्रेज स्त्री और पुरुष उपस्थित थे। अध्यक्षता लॉर्ड लोदियनने की थी।

है, ७ करोड मुसलमान, और ३० लाख सिख है। इनके अलावा भारतीय ईसाई भी अच्छी खासी तादादमे है और कुछ थोडे-से यूरोपीय, बल्कि ज्यादा ठीक कहूँ तो अंग्रेज लोग भी है। संख्याकी दृष्टिसे ये लोग नगण्य है, लेकिन जैसा कि आप जानते है, इन्हे वहाँ एक विशेष दर्जा प्राप्त है और इनसे अधिक प्रभावशाली वर्ग तो कोई है ही नही। इसका कारण यह है कि ये लोग शासक-जातिके है।

इस आबादीके अन्दर हमारी एक समस्या है — हिन्दू-मुस्लिम-सिख समस्या, या इसके लिए जिस शब्दका प्रयोग किया जाता है उसका प्रयोग करूँ तो कहूँगा अल्पसख्यकोकी समस्या। यह समस्या दूसरे अल्पसख्यक समुदायोको किस तरह प्रभावित करती है, इसके ब्योरेमें मै नहीं जाऊँगा, और न इन अल्पसंख्यक समुदायोके सम्बन्धमें अपने विचार स्पष्ट करनेमें ही आपका समय लूँगा। लेकिन एक अल्पसख्यक समुदाय, अभागे अस्पृश्योंकी चर्चा किये बिना मै नही रह सकता। अस्पृश्य शब्द भारतके बहुसख्यक हिन्दू समाजके लिए स्थायी कलकका द्योतक है। अस्पृश्यता हिन्दू धर्मके लिए अभिशाप-रूप है, और मुझे यह कहनेमें तनिक भी हिचक नही होती कि अगर हिन्दू धर्मसे अस्पृश्यताका उन्मूलन नही किया गया तो यह धर्म एक दिन अवश्य ही नाशको प्राप्त होगा। वह समय आ गया है जब हर प्रणालीको, चाहे वह जितनी प्रतिष्ठित और प्राचीन हो, तर्क और बुद्धिके प्रकाशको सहन कर सकना चाहिए, तीव्रसे-तीव्र आलोचनाकी कसौटीपर खरा उतरना चाहिए। और अगर हिन्दू धर्म अस्पृश्यताको प्रश्रय देता है तो धरित्रीपर इसके लिए कही कोई स्थान नही है।

आपको यह बताते हुए मुझे हर्षका अनुभव हो रहा है कि अस्पृश्यता-निवारणको काग्रेसने अपने कार्यक्रमका एक अभिन्न अग बनाया है और काग्रेसकी प्रेरणासे सैकड़ों, बल्कि शायद हजारो युवा हिन्दू सुधारकोंने हिन्दू धर्म और हिन्दुस्तानको इस कलकसे मुक्त करनेके लिए अपने जीवन अर्पित कर दिये है। ये युवा स्त्री-पुरुष अस्पृश्योकी तरह-तरहसे सहायता कर रहे है। हम उनके लिए कुएँ खोद रहे है, स्कूल खोल रहे है, नये मन्दिर बनवा रहे है और पुराने मन्दिरोमें उन्हें प्रवेशका अधिकार दिला रहे हैं। हम अधिक नही तो कमसे-कम पच्चीस हजार अस्पृश्य महिलाओंको घर बैठे ही काम दे रहे हैं। हमने उनके बीच चरखा चालू करवाया है। कई हजार अस्पृश्योंको हमने फिरसे उनके पुराने धन्धे, मोटे कपडोंकी बुनाईके धन्धेमें प्रतिष्ठित किया है। आधुनिक मिलोंके बने कपड़ोंकी प्रतियोगिताके कारण उनका यह धन्धा बन्द हो गया था। परिणाम यह हुआ था कि उन्होंने या तो भगीका काम अपना लिया था या कोई और काम, क्योकि वे बुनाईके अपने नेक पैतृक धन्धेसे अपनी जीविका कमानेमे असमर्थ हो गये थे। ईश्वरकी कृपासे और इन युवा सुधारकोंके प्रयत्नोसे कई हजार अस्पृश्योने मोटे कपडोकी बुनाईके अपने पुराने धन्धेको फिरसे प्राप्त कर लिया है। बहुत-से ऐसे परिवार है जो पहले कर्जके बोझसे दबे हुए थे, किन्तु जिन्होने आज न केवल उस बोझसे छुटकारा पा लिया है, बल्कि अपने पास काफी पैसा भी जमा कर लिया है। मुझे स्मरण है कि एक परिवारने तो इतनी राशि जमा कर ली है जो भारतके गरीब परिवारके लिहाजसे काफी अच्छी

राशि है। उसने दो हजार रुपये जोडे है। शिक्षकोके रूपमे इस परिवारकी माँग सारे देशमे हो रही है, क्योकि पति-पत्नी दोनो निष्णात बुनकर और ईमानदार तथा कुशल कार्यकर्त्ता है। जहाँ पहले उनकी माँग भगियोकी तरह होती और उनके साथ लगभग ऐसा व्यवहार किया जाता मानो वे किसी महामारीके वाहक हो, वहाँ आज सर्वत्र शिक्षकोके रूपमे उनकी माँग की जा रही है। आप सोच सकते है कि इससे उनमे आत्मसम्मानकी भावनाकी कितनी वृद्धि हुई होगी।

यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण अल्पसख्यक समुदाय है — महत्त्वपूर्ण इस अर्थमे कि इसे जितनी सहानुभूति और सहायता दी जाये, यह उस सबका पात्र है। मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि अस्पृश्यता तेजीसे मिटती जा रही है, और अगर ईश्वरकी कृपासे गोलमेज परिषद्मे चल रही वार्त्ताओके परिणामस्वरूप अथवा और किसी तरह भारत अपना प्राप्य प्राप्त कर लेता है तो आप देखेंगे कि हमारे देशसे अस्पृश्यता सदाके लिए चली गई है।

लेकिन भारत जैसा है, उसका वर्णन मै अभी पूरा नही कर पाया हूँ। ये ३५ करोड लोग कर क्या रहे है? इनमे से ८५ प्रतिशतसे भी अधिक लोग कृषि-कार्यमें लगे हुए है और मैंने जिस भूखण्डका वर्णन किया है उसमे फैले सात लाख गाँवोमे रह रहे है। कुछ गाँवोकी आबादी सौ-सौ से ज्यादा नही है, मगर कुछ ऐसे भी गाँव है जिनकी आबादी पाँच हजारतक है। भारतमे खेती-बाडी मुख्यत अनिश्चित वर्षापर निर्भर करती है, बल्कि इसे निर्भर रहना पडता है। उस उपमहाद्वीपके चेरापूंजी-जैसे कुछ हिस्सोमे तो प्रलयकारी वर्षा होती है — छ-छ सौ इचतक। लेकिन सिन्ध और मध्यभारत-जैसे कुछ क्षेत्रोमें ५ इच भी मुश्किलसे होती है और वह भी उस क्षेत्रमे सर्वत्र समानरूपसे नही; यानी, कही-कही ५ इचसे भी कम होती है।

खेतोका रक्बा औसतन एक या पौन एकडसे लेकर ढाई एकडके बीच होता है। यदि हम इस दृष्टिसे एक-एक प्रान्तको लेकर देखे तो मेरा खयाल है कि किसी भी प्रान्तमे जोतका रक्बा प्रति व्यक्ति ढाई-तीन एकडसे ज्यादा नही आयेगा। हो सकता है कि मुझसे भूल हो रही हो, लेकिन मेरा खयाल है, मेरा अनुमान तथ्यसे ज्यादा भिन्न नही होगा; और हजारो-हजार किसान ऐसे है जिनके पास एक-एक एकड जमीन भी नहीं है और दसियो हजार किसानोके पास बिलकुल भी जमीन नही है, जिससे वे भारतमे कृषि-दासो (सर्फ), बल्कि शायद कहा जा सकता है कि दासोकी तरह ही जी रहे है। इसे कानून-सम्मत दासताकी स्थिति तो नही कहा जा सकता लेकिन वास्तवमे यह स्थिति दासताके बहुत पासतक पहुँचती है। चूँकि जो वर्षा होती है, दो, तीन, चार या बहुत कहे तो पाँच महीने ही होती है, इसलिए इस आबादीको वर्षमे लगभग छ महीने बिना किसी नियमित धन्धेके रहना पडता है। जिन कुछ-एक क्षेत्रोमे दो फसले होती है, वहाँ चार महीने काम नही मिलता, लेकिन मोटे तौरपर कहा जा सकता है कि भारतके ये किसान आधे वर्ष बिना किसी नियमित धन्धेके रहते है।

तो स्वभावत सर्वसाधारणके बीच गरीबी बहुत अधिक है और वह उत्तरोत्तर बढती चली जा रही है। भारतके लोगोकी औसत आय प्रतिदिन दो पैंस है। अगर इन ३५ करोड लोगोकी औसत दैनिक आय प्रति व्यक्ति दो पैंस है—और यह औसत निकालनेमे चन्द करोडपतियोकी सम्पत्ति भी शामिल कर ली गई है—तो आप आसानीसे समझ जायेगे कि ऐसे लाखो लोग है जो रोजाना यह दो पैंस भी नही कमा पाते। नतीजा यह है कि लगभग दस प्रतिशत लोग आधा पेट खाकर जी रहे है। उन्हे प्रतिदिन एक बार ही खानेको मिलता है—सो भी सूखी चपाती और चुटकी-भर नमकके अलावा और कुछ नही। आपकी 'ब्रेड'-जैसी कोई चीज वे नही जानते, साल-साल-भर वे यह नही जानते कि दूध क्या होता है, यहाँतक कि उन्हे मट्ठा भी देखनेको नही मिलता, उन्हे नही मालूम कि मक्खन क्या होता है; वे नही जानते कि तेल क्या होता है, उन्हे कभी भी हरी सब्जियाँ नही मिलती। भारतमे विशाल जन-समुदाय आज इसी दलितावस्थामे जी रहा है।

अब मुझे आप लोगोको यह बताना है कि भारतका भविष्य होना क्या चाहिए और अगर कांग्रेसका बस चला तो वह क्या होगा। इस वर्णनमे मैंने भारतके नगरोको शामिल नही किया है; क्योकि भारत नगरोमे नही, गाँवोमे रहता है। इसी तरह मैंने देशी नरेशोकी भी बात नही कही है। इनके अधीन भी इनमे से कुछ गाँव है और इन गाँवोमे भी लोगोका जीवन बहुत-कुछ वैसा ही है जैसा कि ब्रिटिश भारतके अधीनस्थ गाँवोका है। अगर दोनोमे कोई अन्तर है—और अन्तर थोडा-सा है—तो वह परिमाणका ही अन्तर है, प्रकारका नहीं। राजे-महाराजे आयेगे और चले जायेंगे, साम्राज्य बनेंगे और मिटेंगे, लेकिन गाँवोमे रहनेवाला भारत ज्योका-त्यो बना रहेगा। सर हेनरी मेनने 'विलेज कम्युनिटीज ऑफ इडिया' नामक एक प्रबन्ध लिखा है। उसमे लेखकने कहा है कि एक समय ये गाँव आत्म-निर्भर "लघु गणतन्त्रो" के समान थे और एक सीमातक आज भी है। उनकी अपनी संस्कृति है, अपनी जीवन-पद्धति है, सुरक्षाके अपने तरीके है, अपने स्कूलमास्टर है, अपने पण्डित-पुरोहित, बढई-हज्जाम, बल्कि वास्तवमे किसी गाँवके लिए आवश्यक सब-कुछ है। निश्चय ही आज भी गाँवोमे किसी प्रकारका शासन या हुकूमत देखनेको नही मिलती, और उनका जीवन चाहे जैसा भी हो, ये आत्म-निर्भर तो है ही और अगर आप वहाँ जायेंगे तो देखेंगे कि ग्रामवासियोमे एक प्रकारका अनुबन्ध-सा है, जिसपर ग्रामीण समाजका ढाँचा खडा है। शायद इन्हीं गाँवोसे उस चीजका जन्म हुआ है जिसे आप जाति-प्रथाका फौलादी नियम कहते हैं। जाति-प्रथा भारतके लिए अन्दर-ही-अन्दर सडाँध पैदा कर देनेवाला कीडा साबित हुआ है, लेकिन साथ ही इसने इन ग्रामीण लोगोके लिए एक प्रकारके सुरक्षा-कवचका भी काम किया है। खैर, मुझे जाति-प्रथाकी जटिलता और रहस्य समझानेमे आपका समय नही लेना चाहिए।

मै कोशिश इस बातकी कर रहा हूँ कि आज भारत जैसा है, उसकी जितनी सच्ची तस्वीर मै आपके सामने रख सकूँ, रखूँ। भारतपर अंग्रेजी हुकूमतने क्या प्रभाव

छोडा है, वह हुकूमत आज कैसी है और उसके क्या परिणाम हो रहे हैं, यह सब वतानेमे भी मुझे आपका समय नही लेना चाहिए। इस सबपर मै दूसरी सभाओमें वोल चुका हूँ और आपके पास इसके सम्वन्धमे कुछ साहित्य भी है। लेकिन भारतके भविष्यके विषयमे आपके पास कोई साहित्य नही है। यह पृष्ठभूमि बताये विना मै आपके सामने भविष्यका चित्र प्रस्तुत नही कर सकता था। अगर मैं भारतके इस कृषक समुदायके बारेमे कुछ और कहूँ तो आशा है, अव आपको आश्चर्य नही होगा। काग्रेसने अपना परम सिद्धान्त वना लिया है कि उसके कार्य और प्रगतिका मापदण्ड उसका प्रमुख रूपसे किसानोका सगठन वनाना होगा, और हमने यह नियम बना लिया है कि भारतके ऐसे किसी भी हितका हम खयाल नही करेगे तो देशकी आवादीके इन अस्सी प्रतिशत लोगोकी आधारभूत कल्याण-साधनाके विरुद्ध हो।

अव सवाल यह है कि उस आवादीकी सरकार कैसी होनी चाहिए? भारतका भावी राज्य जिस चीजका सवसे अधिक ध्यान रखेगा वह है इस जनसमुदायका आर्थिक कल्याण। इसलिए आप सहज ही इस निष्कर्षपर पहुँचेगे कि वह सरकार किसानोकी बेकारीके इन छ. महीनोमे उन्हे देनेके लिए कोई धन्धा ढूँढेगी। वास्तवमे इस जवरदस्त कामको अपने हाथोमें लेनेवाले आदमीको सबसे पहले इसी वातकी ओर ध्यान देना चाहिए। प्रयोग और अनुभवकी पद्धतिसे जो उपाय हमारे कामके नही हैं उन्हे छोडते हुए हम इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि आपसमे सुसम्वद्ध और एक जैसी इस आवादीके लिए कोई एक मुख्य धन्धा होना चाहिए। वह धन्धा आसान होना चाहिए; उसके लिए ऐसे ही साधन होने चाहिए जिन्हे गाँवोमे ही बनाया जा सके और ग्रामोद्योगसे जो चीज तैयार की जाये उसकी खपत ग्रामवासियोके बीच ही हो सकनी चाहिए। अगर आप कोई ऐसा धन्धा उन्हे दे सकें जो ये तमाम शर्तें पूरी करता हो तो उसमे उत्पादन और वितरणकी आत्म-निर्भर प्रक्रिया काम करेगी और किसी बिचौ-लियेका सहारा लेनेकी जरूरत नही होगी। हाथ-कताई और हाथ-बुनाईका प्राचीन धन्धा इसी तरहका था। अव मै आपको यह सब नही बताऊँगा कि यह धन्धा कैसे नष्ट हुआ। लेकिन आप देखते है कि काग्रेसके प्रयत्नोके परिणामस्वरूप चरखा संघ जितनी शीघ्रतासे कर सकता है, उतनी शीघ्रतासे भारतके हजारो गाँवोमें प्रवेश कर रहा है। इस तरह हम दो हजार गाँवोमें प्रवेश कर चुके है, इस धन्धेने ग्रामीण लोगोकी आय लगभग दूनी कर दी है। आप समझ सकते है कि किसी गरीबकी दो पैसकी कमाईमे दो पैस और जुड जानेका मतलव क्या होता है। मै तो कहूँगा कि इसका मतलव भाग्यका खुल जाना होता है। फिर आप कपडेसे सम्बन्धित दूसरे धन्धोको ले, जिनमे हाथ-कताई और हाथ-बुनाईसे लेकर छपाई-रँगाई और धुलाईतक शामिल है। इन तमाम धन्धोपर विचार करनेपर आप पायेंगे कि कपडा तैयार करने-का धन्धा वास्तवमे लोगोकी आयको बहुत अधिक प्रभावित करता है, और जब हम लोगोको यह धन्धा दे देंगे तो उसका मतलव यह होगा कि हमने उनके निराशामय जीवनमें थोड़ी आशा, कुछ साहसका सचार किया है और उनकी वुझी आँखोमें कुछ चमक पैदा कर दी है। अगर आप मेरे साथ चलकर उडीसाके गाँवोका भ्रमण

करे तो आप तिहरी मुसीबतके मारे उस प्रदेशमे जीती-जागती मृत्युको चलते-फिरते देखेगे। वहाँ आपको मानव-जातिके ऐसे नमूने देखनेको मिलेगे जो अपनी मर्जीसे नही, बल्कि लाचारीके मारे हाड और चामके ढाँचे-मात्र रह गये है और जिनके अगोपर मासका कही कोई नामोनिशान नही है। अगर हम उन्हे यह धन्धा देते है तो वास्तवमे उनमे नये जीवन, नई आशाका सचार करते है।

लेकिन नय राज्यकी प्रवृत्तियाँ यही समाप्त नहीं हो जायेगी। ये लोग सफाईके नियमोसे सर्वथा अनभिज्ञ है और हमे इनके स्वास्थ्यकी, सफाईकी भी देख-भाल करनी है। इसलिए हम उनके बीच डॉ० पुअरके स्वास्थ्य-सम्बन्धी उपायोको दाखिल करनेकी कोशिश करते है। डॉ० पुअरने ग्राम-आरोग्य-शास्त्रपर एक पुस्तक लिखी है। सक्षेपमे कहूँ तो इसमे यह बताया गया है कि मानव-मलसे खाद कैसे तैयार की जाये। मानव-मलके उपयोगके ज्ञानकी दृष्टिसे दुनियामे चीनियोकी बराबरी कोई नही कर सकता, और डॉ० पुअर कहते है कि आर्थिक दृष्टिसे लाभकर ढगसे मानव-मलको ठिकाने लगानेके उपायकी खोजमे उनके शिक्षक चीनी ही थे। हम दो काम करनेकी कोशिश कर रहे है—एक तो राष्ट्रका धन बढानेकी और दूसरे, उसका स्वास्थ्य सुधारनेकी। अगर हम लोगोको मानव-मलको ठिकाने लगानेका यह तरीका सिखा देते है तो हम किसी हदतक अपनेको मक्खियोके उत्पातसे मुक्त कर लेगे और कुछ हदतक जहरीले मच्छरोको भी समाप्त कर देगे। मै जानता हूँ कि इस उपायसे यह काम पूरी तरह सम्पन्न नही हो जायेगा, लेकिन यह सही दिशामे उठाया गया कदम तो है ही।

फिर, इस मलेरिया-ग्रस्त देशमें उन्हे चिकित्सा-सम्बन्धी कुछ सहायता देना भी आवश्यक ही है। भारतमे रोग तो बहुत है, लेकिन मलेरिया मुख्यत अभावकी बीमारी है। ग्रामवासियोको केवल कुनैनकी गोलियोके पैकेट दे देनेसे ही यह रोग दूर नही हो जायेगा। कुनैन आवश्यक तो है, लेकिन यदि आप उन्हे थोडा दूध या फल नही देते तो वह बेकार ही है; क्योकि उनकी पाचन-प्रणाली कोई और चीज ग्रहण करने लायक होती ही नही। तो हमसे जहाँ भी बन पडता है वहाँ हम उन्हे चिकित्सा-सम्बन्धी साधारण-सी सहायता देनेकी कोशिश कर रहे है। यहाँ मै आपको यह बतानेकी कोशिश नही कर रहा हूँ कि हम यह काम कर चुके है, मै तो भावी राज्यकी बात कह रहा हूँ, लेकिन कल्पना-लोकमे विचरण करते रहनेवाले व्यक्तिके रूपमे नही, बल्कि एक व्यावहारिक आदमीकी हैसियतसे। हमने छोटे पैमानेपर इसे आजमाकर देखा है, और अगर हम भावी राज्यकी सहायतासे इस प्रवृत्तिमे कई गुना वृद्धि कर सके तो आप समझ सकते है कि बहुत बड़ी पूंजी लगाये बिना भारत क्या हो सकता है। चिकित्सा-सम्बन्धी यह सहायता हम पश्चिमी डाक्टरो द्वारा सिखाये अत्यन्त व्ययसाध्य तरीकेसे नही देते, बल्कि उपचारके अपने प्राचीन तरीकोसे ही हम फिरसे काम लेते है। किसी समय प्रत्येक गाँवमे एक वैद्य हुआ करता था। आप कह सकते है कि वह तो नीमहकीम था और हमारी इस छोटी-सी कायाका नियमन करनेवाले मोटे-मोटे सिद्धान्तोसे भी वह सर्वथा अनभिज्ञ था। यह सब सच है, लेकिन तब यह बात भी तो है कि वह ऐसा आदमी था जो उन

लोगोको थोडी-बहुत राहत दे सकता था और चूँकि उसका धन्धा पुश्तैनी था, इसलिए यदि वह बेईमान नही होता था तो सचमुच बडी कुशलतासे अपने समाजकी एक आवश्यकता पूरी करता था। अगर आप आरोग्य-विज्ञानकी यह प्राथमिक जानकारी उसे दे देते है और लोगोको मलेरियासे छुटकारा दिलानेका यह सीधा-सादा तरीका सिखा देते हैं तो समझिए कि आपने इस दिशामे बहुत-कुछ कर लिया।

मैंने आज आपको जो-कुछ बताया है, उसका अनुमोदन बम्बई प्रान्तके सर्जन-जनरलने भी किया था। जिन दिनो मैं सैसून[1] अस्पतालमें पडा हुआ था उन्ही दिनो जब वे मुझे देखने आये तो उनसे इस विषयपर मेरी चर्चा हुई। इस चर्चाके दौरान मैंने उनसे कहा कि "चिकित्साकी आपकी अंग्रेजी पद्धति तो इस गरीब देशके लिए बडी खर्चीली है और अगर आप किसी गाँवमे अपनी पद्धतिसे रोग-निवारण करना चाहे तो उसमे दो-तीन सदियाँ लग जायेगी।" उन्होने मेरी बातसे सहमति प्रकट करते हुए पूछा कि "लेकिन तब आप क्या करेगे?" इसपर मैंने उनको अपनी योजना बताई।

भविष्यका यह चित्र इतनेसे ही पूरा नही हो जाता। इस भावी राज्यकी शिक्षाकी समस्या भी होगी। मेरे दिये आँकडोको कोई गलत सिद्ध कर सकेगा, मनमें इसकी तनिक भी आशका रखे बिना मै कहता हूँ कि आज भारत पचास या सौ साल पहलेकी बनिस्बत ज्यादा निरक्षर है और यही हाल बर्माका भी है। इसका कारण यह है कि अंग्रेज प्रशासक जब भारतमे आये तो यहाँकी चीजोको ज्योका-त्यो स्वीकार करके आगे बढनेके बजाय उन्होने उनका मूलोच्छेद करना शुरू किया। उन्होने मिट्टी पलटकर जड देखना शुरू किया, लेकिन बादमे फिर उस जडपर मिट्टी नही डाली और नतीजा यह हुआ कि वह सुन्दर वृक्ष नष्ट हो गया। ग्राम्य पाठशालाएँ ब्रिटिश प्रशासकोके प्रयोजनोके लिए पर्याप्त अच्छी नही थी और इसलिए वे एक नई योजना लेकर सामने आये। उनके अनुसार प्रत्येक स्कूलमे अमुक साज-सामान, उसका अपना एक भवन आदि होना ही चाहिए। मगर ऐसे स्कूल देशमें नही थे। एक ब्रिटिश प्रशासक कुछ ऐसे तथ्य-आँकडे छोड गया है जिन्हे देखनेसे पता चलता है कि उन लोगोने इस सम्बन्धमें जहाँ-जहाँ सर्वेक्षण किया, वहाँ-वहाँ यह पाया कि प्राचीन पाठशालाएँ धीरे-धीरे नष्ट हो गई है, क्योकि उन पाठशालाओको मान्यता नही दी जाती थी, और चूँकि यूरोपीय ढगपर खोले गये स्कूल आम जनताके लिए बहुत खर्चीले थे, इसलिए वे शिक्षाकी आवश्यकताओको पूरा नही कर सके। मेरी यह चुनौती है कि कोई भी इस देशमे एक सदीके अन्दर अनिवार्य प्राथमिक शिक्षाका कार्यक्रम पूरा करके दिखा दे। मेरा गरीब देश ऐसी व्ययसाध्य शिक्षा-पद्धतिका भार वहन नही कर सकता। हमारा राज्य प्राचीन ग्राम-शिक्षककी परम्पराको फिरसे चालू करेगा और इस तरह हर गाँवमे लडको और लडकियो, दोनोके लिए स्कूलकी व्यवस्था अपने-आप हो जायेगी।

अब एक दूसरी चीजको ले। अंग्रेजोने कुछ-एक सिंचाई-योजनाओको पूरा करनेमे करोडो रुपये खर्च किये है, लेकिन हमारा दावा है कि इस काममे जितनी तेजीसे

१. जनवरी १९२४ में, जब गांधीजी का अपेंडिसाइटिसका ऑपरेशन हुआ था; देखिए खण्ड २३।

प्रगति की जा सकती थी, उतनी तेजीसे वे प्रगति नही कर पाये है। सैनिक प्रयोजनो-से देश-भरमे तैयार किये गये रेलमार्ग, परिवहन-कार्यमे निस्सन्देह कुछ लाभप्रद सिद्ध हुए है, लेकिन सिंचाईके द्वारा देशको जितना लाभ पहुँचाया जा सकता था वैसा कोई लाभ इनसे नही हुआ है। सिंचाईकी ये योजनाएँ वास्तवमे इतनी व्ययसाध्य थी और है कि पूरे देशमे इन्हे लागू किया ही नही जा सकता। लेकिन सिंचाईके हमारे अपने प्राचीन तरीके है कुछ हिस्सोमे गहरे कुओसे की जानेवाली सिंचाई और कुछमे ऐसे कुओसे की जानेवाली सिचाई जो बहुत गहरे नही है। मै यह स्वीकार करता हूँ कि इस क्षेत्रमे मै कोरा ही हूँ, लेकिन एक अग्रेज सज्जन, जो सघन कृषिका प्रयोग कर रहे है और इस समय यहाँ है, मुझसे कह रहे थे कि वे कविगुरु ठाकुरके गाँवमे काम करते रहे है। उस ग्राम्य प्रयोगको वास्तवमे श्री एमहर्स्टने ही जीवन प्रदान किया, और उस प्रयोगके परिणामस्वरूप नहरसे सिंचाईकी व्यवस्था की जा रही है, जिसके लिए ऐसे किसी कौशलकी आवश्यकता नही होती जो गाँववालोको मालूम न हो। उन्होने बताया है कि अब उन लोगोने सरकारको यह स्वीकार करने-को विवश कर दिया है कि उनका तरीका ज्यादा अच्छा है। मै तो इन सज्जन द्वारा नहर-सिंचाईके सम्बन्धमे दिया साक्ष्य ही आपके सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ, लेकिन खुद इतना जानता हूँ कि सिंचाईके ऐसे प्राचीन तरीके भी है जो जनताकी सामर्थ्यके अनुरूप है।

आपको मैंने यह तो बता दिया कि हम निर्माणके कौन-कौनसे कार्य करेंगे, लेकिन हमें कुछ ध्वसात्मक कार्य भी करने पडेगे। अन्यथा हमारा काम नही चल पायेगा, क्योकि दुर्वह सैनिक और असैनिक (सिविल) व्ययको वहन करनेके लिए भारतसे साल-दर-साल जो राजस्व जबरदस्ती वसूल किया जाता है, यह देश वास्तवमे उतना देने योग्य नही है। सैनिक व्यय ६२ करोडका है; जिस देशके लोगोकी औसत दैनिक आय केवल दो पैस हो उसके लिए यह रकम बहुत बडी है। इसकी तुलना आप दुनियाके किसी भी देशके सैनिक व्ययसे करके देख लीजिए। आप पायेंगे कि भारत एक दुर्वह भारसे दबा हुआ कराह रहा है। इसलिए हमे तत्काल पुन. सन्तुलन करनेमे जुट जाना होगा, और अगर मेरी चले तो हमे तीन चौथाई सैनिक व्ययसे छुटकारा पा लेना चाहिए। अगर हम सचमुच यह दिखा देते है कि हमने अपनी स्वतन्त्रता अहिंसक साधनोसे प्राप्त की है तो भारतके लोगोको इस बातकी प्रतीति करानेके लिए कि इसी अहिंसाके बलपर वे अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा भी कर पायेंगे, ज्यादा दलील देनेकी जरूरत नही होगी। कांग्रेसको अफ़गानो अथवा जापानियोके आक्रमणकी आशका नही सताती — बोलशेविक रूसके आक्रमणकी आशका तो बिलकुल भी नही। कांग्रेसको ऐसा कोई भय नही है, और अगर हम अहिंसात्मक असहयोगके पाठको समझ ले तो दुनियाका कोई भी राष्ट्र हमे अपनी इच्छाके आगे झुका नही सकता। अगर हम अग्रेजीका केवल एक शब्द, जिसके पर्याय भारतीय भाषाओमे भी है — सीख ले, तो हमें केवल इतना ही कहना होगा — 'नो' (नही), और भारतपर अपनी लोलुप दृष्टि डालनेवाले किसी भी आक्रमणकारीके पाँव वही रुककर

रह जायेंगे। हमारा यह निश्चित मत है कि भारतके पास जो शस्त्रास्त्र है, उनकी उसे कोई आवश्यकता नही है।

असैनिक (सिविल) मामलोसे सम्बन्धित व्ययके बारेमे मुझे यहाँ भी वह दृष्टान्त देना पडेगा जो मै कई सभाओमे दे चुका हूँ। यहाँ प्रधान मन्त्रीको औसत राष्ट्रीय आयका पचास गुना वेतन मिलता है, भारतमे वाइसरायको वहाँकी औसत आयका पाँच हजार गुना मिलता है। इस एक उदाहरणसे आप खुद ही यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि यह असैनिक व्यय भारतके लिए क्या अर्थ रखता है। यह सेवा चाहे जितनी सक्षम और कार्यकुशल हो, भारत इसका बोझ नही सह सकता। अगर मै भारतके प्रत्येक गाँवमे चिकित्सा-शास्त्रके विशेषज्ञ भेज सकूँ तो बहुत सम्भव है कि वहाँ कोई रोग न हो, लेकिन चूँकि प्रत्येक गाँवको ऐसा विशेषज्ञ भेजना हमारे बसका नही है, इसलिए हमे उन नीमहकीमोसे ही सन्तुष्ट रहना पडेगा जो हमारे गाँवोमे सुलभ है। दुनियाका कोई भी देश अपनी आमदनीसे ज्यादा खर्च नही कर सकता, वह वैसी ही सेवाओका लाभ उठा सकता है जिनका खर्च उठाना उसके लिए शक्य है। अगर मै प्रत्येक भारतीय ग्रामीणके लिए स्ट्राबेरी और मक्खन चाहूँ तो मै जानता हूँ कि वह दिवा-स्वप्न देखना ही होगा और यदि मै प्रत्येक ग्रामवासीको ये चीजे देना चाहूँ तो मै महामूर्ख समझा जाऊँगा। तो मै आपसे कहता हूँ कि यह सैनिक और असैनिक (सिविल) व्यय भारतके लिए स्ट्राबेरी और मक्खनके समान है। मै अपने देशभाइयोको यह भोजन नही दे सकता।

मै भविष्यका चित्र लगभग पूरा कर चुका हूँ। अगर आपको इसमे कही कोई स्थान खाली मिले तो मुझे स्मरण दिलाइए। फिर मै आपके प्रश्नोके उत्तर देकर रिक्त स्थानोकी भी पूर्त्ति कर दूँगा।

प्र० : क्या आप यह स्वीकार नहीं करेंगे कि फसलोंके खराब हो जानेसे जो आर्थिक तबाही होती थी, हमारी यादमें ही ग्रामीण लोगोंकी उसका मुकाबला करनेकी शक्ति बहुत बढ़ गई है और आज जब कि जनसाधारणके अधिक खुशहाल हो जानेके कारण अकाल कष्ट-निवारण नियमोंकी वैसी आवश्यकता नहीं रह गई है, इन नियमोकी संहिताको और भी निर्दोष-नीरन्ध्र बना दिया गया है?

उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि मेरा अनुभव तो यह है कि जनताकी कष्टोंका मुकाबला करनेकी शक्तिमें कोई वृद्धि नहीं हुई है; हुआ यह है कि रेलपथ यातायातके कारण अब लोगोंको दूसरी जगहोसे अन्न मिल जाता है, जबकि पहले नहीं मिलता था।

सर फिलिप हार्टोग : क्या आप अपने इस कथनकी पुष्टिमें कोई प्रमाण देंगे कि गत पचास वर्षोमें भारतमें साक्षरता कम हो गई है?

श्री गांधीने कहा कि मेरा प्रमाण पंजाब सरकारकी रिपोर्ट है, और 'यंग इंडिया' में मैंने पंजाबके शिक्षा-सम्बन्धी आँकड़ोंका अध्ययन प्रकाशित किया है।

सर फिलिप हार्टोग : क्या आप इसका कारण बतायेंगे कि पुरुषोंके बीच साक्षरोंकी संख्या चौदह प्रतिशत और स्त्रियोंके बीच केवल दो प्रतिशत ही क्यों है और ब्रिटिश भारतकी अपेक्षा कश्मीर और हैदराबादमें अधिक निरक्षरता क्यों है?

श्री गांधीने इसका उत्तर देते हुए कहा कि स्त्रियोंकी शिक्षाकी उपेक्षा की गई है, जो पुरुषोंके लिए बड़ी शर्मनाक बात है। कश्मीरके आँकड़ोंके सम्बन्धमें तो मैं ऐसा कुछ अनुमान ही लगा सकता हूँ कि अगर वहाँ ज्यादा निरक्षरता है तो उसका कारण या तो शासककी उदासीनता है या यह कि वहाँ मुख्यतया मुसलमान रहते हैं, लेकिन मेरा खयाल है कि वास्तवमें दोष दोनोंका बराबर-बराबर ही है।

प्र० : क्या कांग्रेसी ब्राह्मण अस्पृश्योंकी सहायता कर रहे हैं? अगर बात ऐसी है तो अस्पृश्योंके लिए अलग कुएँ खोदनेकी आवश्यकता क्यों पड़ती है? क्या वे ब्राह्मणोके कुओंको ही इस्तेमाल नहीं कर सकते? क्या अस्पृश्योंके बीच अधिकांश काम करनेका श्रेय साल्वेशन आर्मीवालों और मिशनरियोंको ही नहीं है?

उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि जब मैंने यह कहा कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मका अभिशाप है तो आपके इस सवालका उत्तर तो दे ही दिया कि अस्पृश्य लोग ब्राह्मणों-के कुओंका उपयोग क्यों नहीं कर सकते। अगर सभी ब्राह्मणोंमें यह सुधार आ गया होता तब तो कोई कठिनाई ही नहीं रह जाती; लेकिन यह सही है कि जो कार्य-कर्त्ता अस्पृश्योके लिए कुएँ खोदने और उनकी अन्य सेवाओंमें लगे हुए हैं उनमें ज्यादातर ब्राह्मण ही हैं। वे ऐसा मानते हैं कि इस तरह वे, उनके जातिवालोंने अस्पृश्योंको जो कष्ट दिया है, उसका थोड़ा-सा प्रायश्चित्त करते हैं। साल्वेशन आर्मी-वालो और मिशनरियोंका काम हिन्दू सुधारकों द्वारा किये जा रहे कामसे भिन्न है और इस समय मैं इस मसलेकी चर्चा नहीं करना चाहता।

प्र० : प्रस्तावित सुधारोंका भारतकी आबादीपर क्या असर होगा? अगर स्वास्थ्य-सफाईकी अवस्था सुधर गई तो उससे मृत्यु-दर कम हो जायेगी और आबादी बढ़ेगी, और अगर व्यक्तिगत उद्यमशीलता तथा सार्वजनिक व्ययमें किफायतशारीके परिणामस्वरूप लोगोंका जीवन-स्तर ऊँचा हो जायेगा तो क्या किसी ऐसी व्यवस्थाकी तजवीज है जिससे जन्म-दर इतनी न बढ़े कि जनसंख्यामें बहुत वृद्धि हो जाये और फलतः लोग फिर ऐसी अवस्थामें पहुँच जायें कि किसी प्रकार निर्वाह-भर कर सकें? क्या जन्म-दरपर रोक न लगाना स्थायी सुधारमें बाधक न होगा?

श्री गांधीने उत्तरमें कहा कि यह समस्या केवल भारतके साथ ही तो नहीं है; यह तो एक आधुनिक मान्यता है, जन्म-दरमें स्वाभाविक वृद्धिको मैं बुराई नहीं मानता और अगर कांग्रेसी कार्यकर्त्ता यह दिखा सकें कि स्वास्थ्य-सफाईकी दिशामें तथा अन्य क्षेत्रोमें उनके किये सुधारोके परिणामस्वरूप भारतकी जन्म-दरमें वृद्धि हुई है तो मैं उन्हे बधाई ही दूंगा। जन्म-दरमें वृद्धिके परिणामस्वरूप गरीबी बढ़नेसे मुझे भय नहीं लगता। हम अपने देशभाइयोंको ऐसे जीवनकी शिक्षा दे रहे हैं जिसमें जन्म-दरमें होनेवाली स्वाभाविक वृद्धिको एक चीज और विषय-भोगके अतिरेकसे होने वाली वृद्धिको बिलकुल दूसरी चीज माना जाता है, और इस तरहकी शिक्षापर जितना जोर दिया जाये, कम ही होगा। मैंने इस प्रश्नपर बहुत शान्त और

एकाग्र मनसे विचार किया है और इस विषयपर मैं सारे यूरोप और अमेरिकाके विचारकोंसे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि आधुनिक सुधारकों द्वारा सुझाये सन्तति-निग्रहके तरीके अन्ततः मृत्युपाश साबित होंगे। अगर यह सिद्ध कर भी दिया जाये कि इंग्लैंड, हालैंड, फ्रांस तथा यूरोपके दूसरे हिस्सोंमें और अमेरिकाके कुछ भागोंमें जन्म-दर रोकनेके आधुनिक तरीकोंसे कुछ लाभ हुआ है, तब भी भारतको तो इससे अपरिमित हानि ही होगी, क्योंकि वहाँ आम लोगोंको इन उपायोंका लाभ नहीं दिया जा सकता। जब भारत इन तरीकोंको किसी भी रूपमें समझ ही नहीं सकता तो उसके लिए इनका सुझाव देना दुष्टतापूर्ण बात होगी।

प्र० : क्या आप संक्षेपमें यह बतायेंगे कि भारतमें किस सिद्धान्तके आधारपर एक सबल और सुस्थिर कार्यकारिणीका गठन किया जा सकता है?

इसका उत्तर देते हुए श्री गांधीने कहा, सबल और सुस्थिर कार्यकारिणी बनानेका सबसे अच्छा तरीका सबल और सुस्थिर हृदयवाले व्यक्ति ढूँढ़ निकालना है और भारतमें ऐसे लोगोंकी कमी नहीं है। मैंने प्रश्नके राजनीतिक पहलूपर विचार नहीं किया है, क्योंकि भारतके भविष्यकी मेरी जो कल्पना है, उसमें बहुत अधिक राजनीतिक उपायोंकी गुंजाइश नहीं है? आर्थिक कष्टका इलाज आर्थिक ही है, लेकिन मैं राजनीतिमें इसलिए हाथ-पैर मार रहा हूँ कि राजनीतिमें पड़े बिना आर्थिक समस्याका समाधान नहीं किया जा सकता। अपनी राजनीतिक मान्यताओंका इजहार मैं कई मंचोंसे कर चुका हूँ, और मैंने यह माना था कि आप उन सिद्धान्तोंसे अवगत हैं जिनपर कांग्रेस चलती है, लेकिन अगर आप चाहें तो मैं अपनी राजनीतिक मान्यताएँ आपको फिरसे बतानेको तैयार हूँ। मैं टॉल्स्टॉयके इस विचारसे सहमत हूँ कि उस देशका शासन सबसे अच्छा है जहाँ सबसे कम शासन किया जाता है, और अगर कांग्रेसका बस चला तो राजनीतिवालोंको घरेलू जीवनमें जो-कुछ निजी और पवित्र है, उसपर हाथ नहीं डालने दिया जायेगा, बल्कि उनसे अपनी सीमाके भीतर रहनेकी अपेक्षा की जायेगी।

प्र० : ब्राह्मण सुधारकोंके प्रशस्त दृष्टिकोणसे देश-भरके सवर्ण हिन्दू कहाँतक सहमत हैं?

उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि जो अपनेको कांग्रेसी कहते हैं उनमें से तो बहुत अधिक लोग उनके दृष्टिकोणसे सहमत हैं, लेकिन अभी बहुत-कुछ करना शेष है। फसल तो पक चुकी है, लेकिन कटाई करनेवाले मजदूर बहुत कम हैं। ऐसे कुछ-एक हजार लोग हैं, लेकिन जिस दोषने राष्ट्रके ढाँचेको खोखला बना दिया है उससे मुक्त होनेके लिए इस तरहके दसियों हजार लोगोंकी जरूरत है। मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि अस्पृश्यता तेजीसे दम तोड़ रही है, क्योंकि कुछ लोगोंने अपने जीवन तक होम कर दिये हैं और इस अभिशापको दूर करनेके लिए अपने प्राणोंका कोई

मूल्य नहीं समझा है। अब तो स्थिति यह है कि या तो हिन्दू धर्म खण्ड-खण्ड होकर बिखर जायेगा या फिर चन्द वर्षोंमें ही अस्पृश्यता मिट जायेगी।

इसके बाद अध्यक्षने पूछा कि क्या आप राजनीतिक स्थितिके बारेमें कुछ और कहनेकी कृपा करेंगे।

श्री गांधीने कहा कि कांग्रेस पूर्ण राजनीतिक स्वतन्त्रता, और इसलिए सेना, विदेशी मामलों और वित्तपर सम्पूर्ण नियन्त्रणसे कम किसी भी चीजसे सन्तुष्ट होनेवाली नहीं है। कांग्रेसकी मनोवृत्तिका सही अन्दाज लगानेका सबसे अच्छा तरीका यह है कि आप अपनेको भारतीयोंकी स्थितिमें रखकर सोचें। कल्पना कीजिए कि आप सब भारतमें रह रहे हैं और भारतीय लोग ग्रेट ब्रिटेनमें। अब मान लीजिए ब्रिटिश द्वीपसमूहमें रहनेवाले भारतीय आपसे कहे कि "आप लोग अपना शासन आप चलाने लायक नहीं हैं; हमें यह देखना होगा कि आप अपनी सेनाकी व्यवस्था खुद कर सकते हैं अथवा नहीं या आपके यहाँसे हमारे हट जानेपर चीन, तिब्बत, अफगानिस्तान या रूससे जो आक्रमणकारी आपपर टूट पड़ेंगे उनसे आप अपनी रक्षा कर सकते हैं अथवा नहीं।" इसपर आपका उत्तर यही तो होगा कि "हम अपना हिताहित खुद देख लेंगे या कमसे-कम वैसी कोशिश तो करेंगे।" ज्यादासे-ज्यादा यही तो होगा कि भारतीय लोग एक राष्ट्रके रूपमें दुनियासे मिट जायेंगे। मौजूदा परिस्थितिसे हजारों भारतीयोंको मर्मान्तक पीड़ा हो रही है और वे विदेशी दासताके जुएको अपने कन्धोंसे किसी भी कीमतपर उतार फेंकनेको कटिबद्ध हैं — चाहे ब्रिटिश सिंह अपने पंजे फटकारकर भारतीयों द्वारा की जानेवाली सविनय अवज्ञाका कितना भी विरोध करे। भारतमें ग्रेट ब्रिटेनके बहुत बड़े आर्थिक हित हैं। लॉर्ड रॉदरमेयरके अनुमानके अनुसार उसकी कीमत एक अरब पौण्ड है। अगर ये हित उचित और न्यायसम्मत हैं तो भारतीय उनकी रक्षा करेंगे, क्योंकि वे जो लड़ाई लड़ रहे हैं, वह बदला लेनेके लिए नहीं, बल्कि भारतके जन्मसिद्ध अधिकारका उपयोग करनेके लिए लड़ रहे हैं। भारतीय अंग्रेजोंकी तरह शस्त्रसज्जित नहीं हैं; वे युद्ध-कला नहीं जानते; उन्हे एक विनम्र जाति कहा जाता है और मुझे इस बातका हर्ष है कि मैं ऐसी जातिमें जन्मा हूँ, लेकिन, अगर उनके हृदय मजबूत हैं तो शारीरिक कमजोरीसे कोई फर्क नही पड़ता। भारतीय महिलाओंके हृदय फौलादी हैं। उन्होंने सीना तानकर लाठियोंके प्रहार झेले, उन्होंने भागनेकी बात नहीं सोची, प्रहारोंकी ओर अपनी पीठ नहीं फेरी। ऐसे ही मजबूत हृदय ग्रामवासियोंके हैं, जिन्होंने अंग्रेजी स्कूलोंमें शिक्षा नहीं पाई है; और उनमें भी सबसे बहादुर एक स्त्री है, जो खुद अपनी मातृभाषाका एक अक्षर भी शायद ही पढ़ सकती हो। वे ऐसा इसलिए कर रहे हैं कि अपने देशकी आजादी हासिल कर सकें। भारतके जनसाधारणमें जागृति आ रही है, और अब वह समय बीत चुका है जब उन्हें ऐसा समझाया जा सकता था कि विदेशी सुशासन स्वदेशी कुशासनसे बेहतर है। सर हेनरी कैम्बेल-बैनरमैनने कहा था कि स्व-

शासनका स्थान सुशासन नहीं ले सकता। गलती करनेमें तो ब्रिटेनके लोग लासानी हैं, और लॉर्ड सैलिसबरीने कहा भी था कि अंग्रेज लोग गलतियाँ करते हुए और उनसे सबक लेते हुए सफलताकी मंजिलतक पहुँचनेकी कला जानते हैं। फिर अंग्रेज भारतीयोंको ही गलती करनेके अधिकारसे वंचित क्यों रख रहे हैं? जो अंकुश भारतको अपने उस अधिकारके प्रयोगसे वंचित रख रहा है, उससे वे तंग आ चुके हैं। यद्यपि मेरा धर्म अहिंसा है, फिर भी जिसका उल्लेख सर हेनरी गिडनीने किया, वह विपत्ति अगर आने लगे तो वह खतरा भी उठानेको मैं तैयार हूँ। लेकिन हम कौन-सी गलतियाँ कर सकते हैं? सभी अल्पसंख्यक समुदायोंको सुरक्षा मिलनी चाहिए, लेकिन सुरक्षा देनेके अनेक तरीके हैं। जिस स्वतन्त्रतासे भारत इतने दिनोंतक वंचित रहा, उसे उसको प्राप्त करना ही है — मिले तो ब्रिटेनकी सहायतासे और न मिले तो उसके बिना ही। मैं न केवल ब्रिटेनवालोंसे, बल्कि समग्र मानव-जातिसे यह अनुरोध करता हूँ कि इस राष्ट्रको, जो इतने व्यापक पैमानेपर अहिंसाका प्रयोग कर रहा है जिसका इतिहासमें कहीं कोई उदाहरण नहीं है, दुनियाके सभी राष्ट्रोंका पूर्ण समर्थन प्राप्त होना चाहिए।

अंग्रेजी हुकूमतसे भारतको लाभ हुआ है, यह बात अंग्रेजोंके जाननेकी है या भारतीयोंके? ब्रिटेनवालोंका किया सही है अथवा गलत, इसका निर्णय खुद ब्रिटेन-वाले करेंगे या इस सम्बन्धमें दादाभाई नौरोजी, रानडे, गोखले, सर फीरोजशाह मेहता-जैसे उन लोगोंके साक्ष्यको निर्णायक माना जायेगा जिन्हें इंग्लैंडसे एक प्रकारका मोह और पाश्चात्य सभ्यताका गर्व था, किन्तु जिन्होंने कहा कि यद्यपि अंग्रेजोंका आशय शुभ है, फिर भी उनका शासन कुल मिलाकर भारतके लिए हानिप्रद सिद्ध हुआ है, क्योंकि उन्होंने इस राष्ट्रको पुंसत्वहीन बना दिया है? ब्रिटेनने सौ वर्षोंतक भारतमें शासन किया है और अगर इसके बाद भी उसके वहाँसे हट जानेका परिणाम यही होना है कि वहाँके लोग आपसमें लड़ने लगेंगे तो इसके लिए दोषी कौन है? मैं मानता हूँ कि हम असहाय हैं, और मैं ब्रिटेनकी सहायता भी चाहता हूँ, लेकिन अपनी शर्तोंपर। भारत ऐसे द्वार-रक्षक नहीं रख सकता जो इतना ऊँचा पारिश्रमिक माँगें। अगर भारत अपनी कमाईका ७५ प्रतिशत उन्हींको दे देगा तो शेष पच्चीस प्रतिशतपर वह अपना जीवन कैसे बिता पायेगा? यह तो सामान्य गणितका विषय है। देश आज जिन अनेक बोझोंके नीचे पड़ा कराह रहा है, उन्हींके कारण वह दरिद्र हुआ है, और चूँकि मैं सिवाय उन अवधियोंके, जब मैं जेलमें रहा, १९१६ से १९३१ तक बराबर सारे भारतका दौरा करता रहा हूँ, इसलिए मैं यह दावा कर सकता हूँ कि वहाँके गाँवोंकी दशाकी ब्रिटिश अधिकारियोंकी अपेक्षा मुझे ज्यादा जानकारी है।

अपने देशके लिए संविधान तैयार करनेको मैं प्रस्तुत हूँ, और जब मुझे निरुपाय करनेके लिए मेरे सामने अल्पसंख्यकोंकी समस्या रखी जाती है तो मेरा धीरज समाप्त हो जाता है। अल्पसंख्यक-समस्याका यह हौआ आखिर क्या है? कांग्रेस अनेक राज-

नीतिक संगठनोंमें से एक संगठन-मात्र नहीं है। यही वह संगठन है जो आजादीके लिए मुख्य रूपसे लड़ा है और जिसने कष्ट सहे हैं। सैकड़ों गाँवोंपर जुल्म ढाये गये हैं, उनकी फसलें नष्ट कर दी गईं और हजारों रुपयेकी जमीन जब्त करके बेच दी गई। कांग्रेसके कहनेपर उन लोगोने यह सब खुशी-खुशी सहा। क्या कोई छोटी-मोटी चीजके लिए ऐसा कष्ट सहन कर सकता है? मैं ब्रिटेनवालोके चरित्रमें जो-कुछ उत्तम है उसीको जाग्रतकर उन्हे सम्पूर्ण सत्य बतानेको यहाँ आया हूँ। अगर इस अध्यायके अन्तमें मुझसे यही कहा जाता है कि जबतक मुसलमानों और दूसरे तमाम लोगोंसे सारे मतभेदोंको आप मिटा नहीं लेते तबतक कुछ नहीं किया जा सकता, तो मै तो यहाँसे चला जाऊँगा, लेकिन उसका मतलब यही होगा कि ब्रिटेनने एक और भारी भूल की है।

आपको याद रखना चाहिए कि गोलमेज परिषद्के सभी सदस्य प्रधान मन्त्री द्वारा मनोनीत हैं; उन्हे कॉमन्स सभाके उन निर्वाचित सदस्योंने नहीं चुना है जिन्हें कोई हटा नहीं सकता। वे प्रधान मन्त्रीकी इच्छाका प्रतिनिधित्व करते हैं, और किसीका नहीं। सम्पूर्ण भारतका प्रतिनिधित्व करनेवाला एकमात्र संगठन कांग्रेस ही है। जो लोग लड़े और जेल गये वे सबके-सब हिन्दू ही नहीं थे। उनमें कई हजार मुसलमान और सिख तथा ईसाई भी थे। अगर आप चाहें तो कांग्रेसको बहुसंख्यक समुदाय कह सकते हैं, लेकिन तब कांग्रेसके पास अल्पसंख्यक-समस्याके समाधानकी अपनी योजना है। जो योजना प्रस्तुत की गई है, वह एकताके हकमें एक ठोस योजना है। बहुसंख्यक कांग्रेस जो-कुछ कहती है, हिन्दू संस्थाके रूपमें नहीं कहती। उसमें हिन्दुओंको अल्पसंख्यकोंकी स्थितिमें पहुँचाया जा सकता है। संविधानका निर्माण हिन्दुओंके लिए नहीं, हिन्दुस्तानियोके लिए करना है। यह कैसे हो सकता है कि कांग्रेस भारतको हिन्दू समाजके अनेक हिस्सों, भारतीय ईसाई समाजके अनेक विभागों, आंग्ल-भारतीयों तथा अन्य समुदायोके बीच टुकड़े-टुकड़े करके बाँट दे? इन परस्पर विभक्त समूहोंसे कोई राष्ट्र कैसे बन सकता है? और अल्पसंख्यक समुदाय यही चाहते हैं। इन्हें पूर्ण नागरिक, सामाजिक तथा धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका पूरा हक है और वे खुले मैदानमें निर्वाचकोसे अपनी बात कह सकते हैं। लेकिन वे विशिष्ट निर्वाचक-मण्डल क्यों चाहते हैं? आंग्ल-भारतीय समाज आम निर्वाचक-समुदायका विश्वास करनेसे भय क्यों खाता है? इसलिए नहीं कि वे आंग्ल-भारतीय हैं, बल्कि इसलिए कि उन्होंने भारतकी कोई सेवा नहीं की है। पारसीलोग कोई विशेष सुरक्षा नहीं चाहते। इसका कारण सिर्फ यह है कि उन्होने भारतकी सेवा की है और उन्हें पूरा विश्वास है कि सेवाके बलपर प्राप्त अधिकारके कारण उन्हें योग्य प्रतिनिधित्व मिलेगा ही। दादाभाई नौरोजीकी पौत्रियोंका[1] लालन-पालन यद्यपि बड़े ऐशो-आरामके बीच हुआ, लेकिन उन्होंने भारतकी इतनी सेवा की है कि उनको जनताका प्रतिनिधित्व करनेका

१. पेरीन कैप्टेन और नरगिस कैप्टेन।

अवसर देनेसे कोई भी इनकार नहीं करेगा। अगर दूसरे अल्पसंख्यक समुदायोंके सदस्य भी खुले दरवाजेसे प्रवेश करे और भारतकी सेवा करे तो उन्हें भी चुना जायेगा। यह बड़ी लज्जाका विषय है कि अंग्रेज लोग इतने गरीब देशमें विशेष सुविधाओंका आग्रह करे और ऐसे गरीब लोगोंके विधानमण्डलमें अपने लिए विशेष स्थानोंकी माँग करे। विधानमण्डलमें प्रवेश करनेके लिए उन्हे हिन्दुओं, मुसलमानों, सिखों तथा अन्य सभी लोगोके मतोंपर क्यों नहीं भरोसा रखना चाहिए? और मुट्ठी-भर अंग्रेजोंके मतोंके बलपर उन्हें विधानमण्डलमें प्रवेश करनेकी जरूरत भी क्या है। अंग्रेजोंके हाथोंमें तो अब भी बहुत सत्ता है। भारतीयोंको उनके संगठनके अद्वितीय कौशल और क्षमताकी, और शायद उनकी पूँजीकी, अब भी जरूरत है। फिर उन्हें अपनी-अपनी सुरक्षाकी चिन्ता क्यो होती है? वे भारतमें सर्वथा सुरक्षित अवस्थामें रह सकते है। अगर वे सुरक्षाका पासपोर्ट माँगें तो उसे मै समझ सकता हूँ, लेकिन अगर वे विधानमण्डलमें प्रवेश करनेकी विशेष सुविधा चाहें तो इस अपराध-कर्ममें मै नहीं शरीक होऊँगा। उनकी संख्या बीस लाख भी नहीं है। यह ऐसी माँग है जिसे न्यायाधीशोंकी कोई भी मण्डली अस्वीकार कर देगी। जो भी हो, पूरे राष्ट्रको बाँटकर टुकड़े-टुकड़े कर देनेकी किसी योजनामें मेरी सहमति नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]

इन्टरनेशनल अफेयर्स, नवम्बर, १९३१

१३८. पत्र: प्रेमाबहन कंटकको

२१ अक्टूबर, १९३१

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र अब आने लगे है। लम्बे उत्तर देनेकी इच्छा बहुत है, लेकिन समय नही है। इसलिए पत्र-प्राप्तिकी स्वीकृतिसे ही सन्तोष करना।

तू क्यो डरती है? किसी भी ऐसी चीजको जो आवश्यक हो क्या मै छोड सकता हूँ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६५) से।

१३९. भाषण: चर्च हाउसमें[1]

लन्दन
२१ अक्टूबर, १९३१

मेरा सब अंग्रेजोसे आग्रह है कि वे भारतके पक्षका अध्ययन करे और यदि उन्हे लगे कि मेरी स्थिति ठीक है तो वे गोलमेज परिषद्को सफल बनानेके लिए जो भी मदद दे सकते हो अवश्य दे। लेकिन मुझे कोई आशा नही दिखाई देती। लॉर्ड सैकी समय बिता रहे है, और आजतक हम सफलताकी ओर जरा भी नहीं बढे है, यहाँतक कि इस बडे सवालके भी पहलेसे कुछ अधिक निकट नहीं पहुँचे है कि 'भारतको पूर्ण स्वराज्य मिलने जा रहा या नही ? अपनी प्रतिरक्षा, वित्त-व्यवस्था और विदेशी मामलोपर उसे पूरा अधिकार मिले या नहीं ?' हमने इन विषयोकी चर्चातक नही की है। हम दूसरे, बल्कि तीसरे दर्जेका महत्त्व रखनेवाली बातोपर विचार करनेमे ही अपना समय खो रहे है। कहा जाता है कि साम्प्रदायिक प्रश्न मार्गमे बाधक बना हुआ है, लेकिन इस तरह बाधा डालनेके लिए इसका उपयोग नही करना चाहिए था।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१४०. प्रश्नोत्तर[2]

लन्दन
[२१ अक्टूबर, १९३१के आसपास]

प्र० : क्या यह दुर्भाग्यपूर्ण बात नहीं है कि यद्यपि आप एक बहुत ही सशक्त लोकमतके प्रवक्ता है, फिर भी आज आप ऐक्यबद्ध भारतके नेता नहीं है?

उ० हाँ, मै ऐक्यबद्ध भारतका नेता नही हूँ। लेकिन उसका कारण यह है कि यहाँ एकता असम्भव है। क्या आप यह नहीं देखते कि यह सरकार द्वारा नामजद सदस्योसे भरी हुई परिषद् है। अगर हमसे अपने प्रतिनिधि चुननेको कहा गया

१. महादेव देसाईके "लन्डन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। सभाकी अध्यक्षता यॉर्कके आर्क-बिशपने की थी और इसमें ३२ बिशप तथा चर्चके अन्य अधिकारियोंने भाग लिया था।

२. यह महादेव देसाईके "लन्दनका पत्र" से लिया गया है। उसमें उन्होंने इसका उल्लेख नहीं किया कि ये प्रश्न कब पूछे गये या किसने पूछे थे, लेकिन इसे उन्होंने "भाषण: चर्च हाउसमें" (देखिए पिछला शीर्षक) के साथ दिया है।

होता तो मैं सिवा राजाओंके, जिनका अस्तित्व ब्रिटिश सरकारकी मर्जीपर कायम है और इसलिए जो उसके सामन्तोकी हैसियतसे बोलनेके अलावा और किसी तरह बोल ही नही सकते, अन्य सभी लोगोका प्रतिनिधि और प्रवक्ता होता। जिन मुसल-मानोको अभी कुछ ही दिन पहले किसी भी शर्तपर ब्रिटेनके साथ कोई सम्बन्ध रखना सह्य नही था, वही आज प्रबलतम राजभक्तोकी तरह बोल रहे है।

प्र० : तो 'डेली हेरॉल्ड' का कहना सच ही है?

उ० नहीं, मैं समझता हूँ, प्रधान मन्त्रीकी यह बात ठीक है कि सरकार जान-बूझकर परिषद्को विफल करनेकी कोशिश नहीं कर रही है। लेकिन यह हो सकता है कि उसे सिर्फ इस कारणसे परिषद् भग कर देनी पडे कि यह क्लेशप्रद खीचतान और ज्यादा दिन जारी रखना शोभनीय नही लगता, और जो-कुछ हो रहा है वह *ऐसी खीचतान तो है ही। हम ऐसे मुद्दोपर लगातार बातचीत करते जा रहे है* जिनका बुनियादी बातोसे कोई सम्बन्ध ही नही है। जब हम यही नहीं जानते कि हमारे पास वित्तके क्या-क्या साधन होगे, हमारे पास कौन-कौनसे अधिकार होगे और हमे कितनी बडी सेनाका खर्च उठाना होगा तब वित्तके बँटवारेके सम्बन्धमे बहस-मुबाहसा करनेसे क्या लाभ!

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ५-११-१९३१

१४१. पत्र : मिर्जा इस्माइलको

२२ अक्टूबर, १९३१

प्रिय सर मिर्जा,

यदि आप डॉ० अ० को[1] मना सके तो यह आपकी बडी भारी जीत होगी। दक्षिण आफ्रिकामे मैने खुद वह सब झेला था, जो वे झेलते रहे है। इसलिए उनकी सभी बातोके प्रति मेरी सहानुभूति है। उनके साथ मधुरतम व्यवहार करना चाहिए।

आपका,
मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-१) से।

१. डॉ० भी० अम्बेडकर।

१४२. भेंट : 'स्टेट्समैन' के प्रतिनिधिको

लन्दन

२२ अक्टूबर, १९३१

श्री गांधीने कहा कि अगर सरकार कोई उदार और निश्चयात्मक योजना सामने नहीं रखती तो मुझे भय है कि यह परिषद् विफल हो जायेगी। वैसे अभीतक तो ऐसा कोई संकेत नहीं मिला है कि वह ऐसी कोई योजना पेश करेगी।

अगर परिषद् विफल हो जायेगी तो मुझे इस बातकी पूरी आशका है कि कांग्रेसके सामने, जितनी जल्दी आवश्यक हो उतनी जल्दी, बहिष्कार और सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू कर देनेके अलावा और कोई चारा नहीं रह जायेगा।

श्री गांधीने कहा कि यह आरोप तो सही है कि गोलमेज परिषद्में जो देर होती रही, उसका दोष सरकारपर है, लेकिन मैं यह नहीं कह सकता कि देरका सिलसिला राष्ट्रीय सरकार बननेके साथ ही शुरू हुआ अथवा उससे पहले।

इस प्रश्नके उत्तरमें कि साम्प्रदायिक मसलेके समाधानका सबसे अच्छा तरीका क्या है, श्री गांधीने कहा कि सबसे अच्छा तरीका यह है कि सरकार घोषणा कर दे कि मतभेद दूर हो या न हों, संविधान-निर्माणका कार्य चालू रहेगा और अगर आपसी बातचीतसे इस प्रश्नका हल नहीं निकलता तो तीनों दावेदारोंके दावोंके बारेमें निर्णय करनेके लिए एक न्यायाधिकरण नियुक्त कर दिया जायेगा।

श्री गांधीने कहा कि मेरी समझमें यह बात बिलकुल नहीं आती कि 'डेली हेरॉल्ड' को मेरे और प्रधान मन्त्रीके बीच चल रहे पत्र-व्यवहारकी जानकारी कैसे मिली। इस पत्र-व्यवहारकी जानकारी तो केवल मेरे बहुत नजदीकी सहयोगियोंको ही थी और निश्चय ही किसीने गोपनीयता भंग की।

इस पत्र-व्यवहारमें मैंने श्री मैकडॉनाल्ड पर नीति-परिवर्तनका कोई आरोप नहीं लगाया।

आम चुनावपर अपना मत व्यक्त करते हुए कांग्रेसके नेताने कहा कि चुनाव-सम्बन्धी भाषणों और साहित्यमें भारतका कोई उल्लेख न किया जाना इस बातका सबूत है कि भारतके प्रति सभी दलोंकी नीति एक ही है।

[अंग्रेजीसे]

स्टेट्समैन, २३-१०-१९३१

१४३. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन
२२ अक्टूबर, १९३१

अध्यक्ष : . . . जिस कारणसे देशी राज्य अपने मामले संघीय न्यायालयमें पेश करनेको तैयार होंगे वह यह होगा कि अपनी प्रभुसत्ताका प्रयोग करके वे अपने ऊपर उस न्यायालयके न्यायाधिकारको स्वीकार करनेको राजी होंगे और उसे वह अधिकार सौंप देंगे। . . .तत्काल आपके उत्तर देनेके लिए नहीं, बल्कि केवल आपके विचार करनेके लिए मैं आपके सामने यह सुझाव रखनेका साहस करता हूँ कि अगर आप चाहें तो जिस प्रकार आप अपनी प्रभुसत्ताका प्रयोगकरके संघीय न्यायालय-जैसी नई अदालतको अपने ऊपर न्यायाधिकार प्रदान करेंगे उसी प्रकार वह अधिकार प्रिवी कौंसिलको भी प्रदान कर सकते हैं।

श्री गांधी: अगर इजाजत हो तो मैं सर मिर्जा इस्माइलसे एक सवाल पूछना चाहूँगा। सर मिर्जा, क्या आप ऐसा-कुछ भी सोचते हैं कि देशी राज्योंकी प्रजाको किन्हीं खास परिस्थितियोंमें इस संघीय न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार हो सकता है?

सर मिर्जा इस्माइल: हाँ महात्माजी, मैं ऐसा अवश्य सोचता हूँ। संविधान अथवा संघीय कानूनोंसे उठनेवाले मामलोंके सम्बन्धमें उन्हें, सामान्यतः, ऐसे सवालोंका निबटारा करनेके अधिकारसे युक्त उच्चतम न्यायाधिकरणके पास अपील करनेका हक होगा। . . .

लॉर्ड पील: . . . सबसे पहले तो देशी राज्योंके अंशदान, ब्रिटिश सरकारको उनके द्वारा दिये इलाकों, तटवर्त्ती राज्यों आदिसे सम्बन्धित प्रश्नोंपर विचार करनेके लिए एक छोटी-सी निष्पक्ष समिति होनी चाहिए। मैं समझता हूँ कि विधेयकके पास हो जानेसे पूर्व तटवर्त्ती राज्योंके सवालका निबटारा हो जाना कोई जरूरी नहीं है, लेकिन दूसरे मामलोंपर — देशी राज्योंके अंशदान और ब्रिटिश सरकारको देशी राज्यों द्वारा दिये इलाकोंके मामलोंपर — विचार किया जाना चाहिए और ध्यानपूर्वक किया जाना चाहिए। इसलिए पहला सुझाव यह है कि वह छोटी-सी निष्पक्ष समिति उन समस्याओंपर विचार करेगी और बेशक, अपनी रिपोर्ट जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी सौंप देगी। . . .

जो दूसरी समिति नियुक्त करनेका सुझाव दिया गया है वह किसी हदतक मूल प्रस्तावमें बताई गई समितिसे भिन्न है। मूल प्रस्तावमें सुझाई गई समितिको उसके विचारार्थ प्रस्तुत की गई विभिन्न समस्याओंपर विचार करना था और उसे

सिद्धान्तके मामलोंमें कुछ वैकल्पिक सुझाव देनेकी भी स्वतन्त्रता मिलनेवाली थी। लेकिन इस समितिको लेकर कुछ हलके बहुत चिन्तित हो उठे। मैं ऐसा तो नहीं कहूँगा कि उन्हें वित्तीय उप-समितिकी रिपोर्टमें निर्धारित सिद्धान्तोंके ध्वस्त कर दिये जानेकी आशंका थी, लेकिन कमसे-कम ऐसी आशंका उन्हें जरूर होने लगी थी कि इस तरह समितिको बहुत ज्यादा छूट मिल जायेगी। नये सुझावमें समितिके कार्य-क्षेत्रको बहुत कम कर दिया गया है और उसके अधिकार भी सीमित कर दिये गये हैं। ऐसा सुझाव है कि इसे तथ्योंकी जानकारी प्राप्त करनेवाली समिति होना चाहिए और इसकी नियुक्ति भारतमें होनी चाहिए तथा ऐसे अधिकारी इसके सदस्य हों जिन्हें वित्त-व्यवस्थाकी — कहनेकी जरूरत नहीं कि देशी राज्योंकी वित्त-व्यवस्थाकी भी — जानकारी हो। . . .

मुझे उम्मीद है कि ये सुझाव इस समितिके सदस्यों द्वारा व्यक्त विचारोंके अनुकूल होंगे। मैं अपनी बातका सार बहुत थोड़े-से शब्दोंमें प्रस्तुत कर सकता हूँ।

सबसे पहले तो विधेयक तैयार करनेके लिए वित्तीय उप-समिति द्वारा निर्धारित सिद्धान्तोंके आम तौरपर स्वीकार कर लिये जानेकी बात है। फिर इन दो समितियों-की नियुक्तिकी बात है, जिनमें से छोटी समिति तो देशी राज्योंके सवालपर विचार करेगी और दूसरीका काम तथ्योंका आकलन करना होगा। यह दूसरी समिति जल्दी ही काममें लगकर वह सामग्री प्रस्तुत कर सकती है जिसके आधारपर अन्तिम निर्णय लिये जायेंगे। और तीसरी बात यह है कि इस परिषद्के समाप्त होनेसे पहले सर-कारको अपने प्रस्ताव बता देने चाहिए और साथ ही इन समितियोंके लिए अपनी-अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर देनेके बाद जिन कुछ-एक मुद्दोंपर निर्णय लेना शेष रह जाये उनके बारेमें सम्बन्धित पक्षोंसे परामर्श करनेके सबसे अच्छे तरीकेके सम्बन्धमें अपनी सिफारिशें भी पेश कर देनी चाहिए। . . .

अध्यक्ष : हम लॉर्ड पीलके बहुत आभारी हैं। निश्चय ही हम सबके बीच कोई सहमति हो सकनेकी दिशामें बहुत अधिक प्रगति हुई है और मेरा खयाल है कि लगभग सारे मतभेद निबट गये हैं। मैं आशा करता हूँ कि इस तथ्यको स्वीकार कर लेनेकी हम सब पूरी कोशिश करेंगे।

सर अकबर हैदरी : महोदय, लॉर्ड पीलकी कही बातोंका मैं पूरा अनुमोदन करता हूँ। उन्होंने वास्तवमें वही सब कहा है, जो हमारे मनमें था।

डॉ० अम्बेडकर : मैं एक बात कहना चाहूँगा। अभी-अभी लॉर्ड पीलने कहा है कि संघीय वित्त उप-समितिकी रिपोर्टमें निर्धारित सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें हम लोग सामान्यतया सहमत हैं। संघ-शासन योजना समितिके अन्य सदस्योंके चाहे जो मत हों, लेकिन जहाँतक खुद मेरी बात है, मैं संघीय वित्त उप-समिति द्वारा निर्धारित सिद्धान्तोंसे निश्चय ही सहमत नहीं हूँ; और मैं अपनी ओरसे इतना कहना चाहूँगा कि इस समितिकी नियुक्तिपर मुझे कोई एतराज नहीं है, बशर्ते कि यह बात साफ

हो जाये कि संघ-सरकारकी भावी वित्त-व्यवस्था ठोस और मजबूत बनायी जा सके, इस खयालसे उक्त सिद्धान्तोंमें संशोधन-परिवर्तन करनेका अधिकार समितिको प्राप्त है।

श्री गांधी : लॉर्ड चान्सलर महोदय, आपकी इजाजत हो तो मैं कुछ बातें कहना चाहूँगा। इस प्रस्तावित समितिके परिणामके बारेमें मेरे मनमें गम्भीर आशंकाएँ हैं, यद्यपि इसके कार्य-क्षेत्रको बहुत मर्यादित कर दिया गया है और इस तरह आपत्तिके लिए कम अवकाश रह गया है। फिर भी, बातचीतके इस अवस्थातक पहुँच जानेपर मैं अपनी आपत्तिके दूर कर दिये जानेपर आग्रह न करूँ, इस खयालसे, जो रास्ता लॉर्ड पीलने बताया है, ठीक उसी रास्तेपर मैं सुझाव देता हूँ कि इस प्रश्नपर बादमें, जब हम बची-खुची बातोंको निबटाकर अपने कामको अन्तिम रूप देने लगेंगे, विचार किया जाये। वे कहते हैं — और मेरा खयाल है, उनका यह कहना बहुत ठीक है — कि महामहिमकी सरकार इस समय यह बतानेकी स्थितिमें नहीं है कि कोई समिति या मण्डली, जो एक प्रकारसे गोलमेज परिषद्की प्रतिनिधि ही होगी, प्रस्तावित समितिके निष्कर्षोंपर विचार करे, इसके लिए क्या व्यवस्था की जाये। मैं समझता हूँ, यह बहुत उचित आपत्ति है। इस समिति तथा गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाही समाप्त हो जानेपर भी, निस्सन्देह, अनेक मामलोंपर निर्णय लेना शेष रह जायेगा।

जो अफवाह फैली हुई है वह अगर बिलकुल निराधार नहीं है तो हम ऐसी आशा कर सकते हैं कि १० नवम्बर हमारी बैठकका — यहाँ मेरा मतलब गोलमेज परिषद्की बैठकसे भी है — अन्तिम दिन होगा, और अगर बात ऐसी हो — मैं आशा करता हूँ कि बात ऐसी ही होगी — तो कुछ तफसीलोंके सम्बन्धमें निर्णय लेना शेष रह जायेगा और शायद किन्हीं बुनियादी सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें भी। उसके लिए कोई-न-कोई व्यवस्था तो करनी ही होगी। उस हालतमें उस समितिकी नियुक्तिका अनुमोदन करना उचित हो सकता है जिसका सुझाव लॉर्ड पीलने दिया है और जिसकी नियुक्ति, लगता है, महामहिमकी सरकार भी करना चाहती है। अगर ऐसा कर दिया जाये तो फिर मेरे अपनी आपत्तियोंपर आग्रह करनेकी कोई जरूरत नहीं रह जायेगी। लेकिन तब भी मैं अपनी आपत्तियाँ बता देना चाहूँगा।

जैसा कि सदस्योंको ज्ञात है, कांग्रेसकी ओरसे यह माँग या दावा पेश किया गया है कि राष्ट्रीय सरकारसे वित्त और राजस्व-विषयक जो दायित्व अपने सिर लेनेको कहा जायेगा, उनकी निष्पक्ष जाँच कराई जानी चाहिए। कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैं यदि ऐसा कहूँ कि इन दायित्वोंका बँटवारा कर दिया जाये और इनके बँटवारेके लिए विशेषज्ञोंकी एक समिति बुलाई जाये तो यह तो उलटी गंगा बहाना होगा, क्योंकि मैं जानता हूँ कि किसी-न-किसी अवस्थामें मैं खुद इन दायित्वोंके खिलाफ ही आपत्ति करूँगा। यदि इस समितिको यह मालूम होगा कि ये दायित्व जितने भारी आज प्रतीत होते हैं उतने भारी नहीं हैं तो उनका बँटवारा दूसरे ढंगसे होगा, या अगर ये दायित्व बहुत सख्त हैं और उनमें एक रुपया भी इधर-उधर नहीं किया जा सकता तो बँटवारेके स्वरूपपर भी इसका प्रभाव पड़ेगा। इसलिए उस

समितिकी कार्यवाहीके परिणामोंके बारेमे मेरे मनमे बहुत ही गम्भीर आशकाएँ है और उस हालतमे काग्रेसकी ओरसे मेरे लिए जो कारंवाई करना उचित हो जायेगा उसके विषयमे भी मेरे मनमे ऐसी ही आशकाएँ है।

मेरी दूसरी आपत्ति यह है कि यद्यपि उस समितिका कार्य-क्षेत्र सीमित होगा, फिर भी वास्तवमे वह वह काम करेगी जो राष्ट्रीय सरकार या सघ-सरकारको करना चाहिए। अगर महामहिमकी सरकार इस सम्बन्धमे आश्वस्त न हो कि सघ-सरकार राजस्वके उन साधनोसे, जिन्हे सयुक्त साधन माना जायेगा, अपने दायित्वोका निर्वाह कर पायेगी, तो निश्चय ही राष्ट्रीय सरकारके सिरपर आनेवाले उचित दायित्वोका निर्वाह कर सकनेकी उसकी क्षमताके प्रति उसे आश्वस्त करानेके और भी तरीके है। मेरी विनम्र सम्मतिमे, इस तरहकी समितिके द्वारा यह काम नही किया जा सकता।

राजस्वके सर्वसामान्य साधनोके सम्बन्धमे मोटे तौरपर अपनी सहमति व्यक्त करते समय निश्चय ही मेरे मनमे यह बात थी कि मुझे नमक-कर — इसका उल्लेख मै केवल एक उदाहरणके तौरपर कर रहा हूँ — के पूर्णरूपसे उठा लिये जानेकी माँग स्वीकार करवा सकना चाहिए, लेकिन अन्य करोके सम्बन्धमे भी मुझे अपने-आपको बाँध नही लेना चाहिए। मै जानता हूँ कि ऐसा मै कानूनन नही कर रहा हूँ; लेकिन अगर समिति कोई सिफारिश करती है या अगर उसमे बताये गये करोकी अपरिवर्त्तनीयताके आधारपर कोई अनुमान लगाया जाता है तो इस मामलेमे भी मुझे मानना चाहिए कि मै यहाँ जिस उद्देश्यका प्रतिनिधित्व कर रहा हूँ, उसके साथ मैने न्याय नही किया।

इसलिए इन तीन कारणोसे इस समितिकी नियुक्तिपर सहमति देनेके सम्बन्धमे मेरे मनमे गम्भीर आशकाएँ है, क्योकि उसपर सहमति देकर तो मै प्रसग आनेपर बुनियादी ढगके एतराज पेश करनेकी सुविधासे वचित हो जाऊँगा। इसलिए काग्रेसके प्रतिनिधिके रूपमे मुझे जिस बातसे सन्तोष होगा वह यह है कि इस मामलेको पूरी तरहसे राष्ट्रीय सरकारके जाँचने-परखने और निर्णय करनेके लिए छोड दिया जाये। इस समय तो महामहिमकी सरकारके लिए इतना काफी होना चाहिए कि वह स्थिति-को जान ले और पूरी तरहसे आश्वस्त महसूस करे, और वह आश्वस्त महसूस करे, इसके लिए उसे कानूनी अथवा अन्य प्रकारका जो भी आश्वासन चाहे, वह प्राप्त करनेका अधिकार है। लेकिन इस नाजुक मामलेको (मेरे लिए यह नाजुक मामला ही है) राष्ट्रीय सरकारके निर्णयार्थ छोड देना चाहिए। अगर यह समिति इस मुद्देपर तत्काल कोई मत प्रकट करना चाहे तो उक्त कारणोसे मुझे भी अपनी आपत्तियोको स्वीकार किये जानेका आग्रह करना ही पडेगा। अन्यथा इस खयालसे कि हम इस मामलेमे सर्वसम्मत निर्णय ले सके, मै यह सुझाव दूँगा कि अभी इस मामलेको छोड दिया जाये ताकि जबतक हम अपने प्रयत्न समाप्त करे तबतक अपना-अपना मन स्थिर करनेकी दृष्टिसे ज्यादा अच्छी स्थितिमे पहुँच सके। . . .

सर तेजबहादुर सप्रू: मैं यह मान लेता हूँ कि लॉर्ड महोदयका कहना यह है कि तथ्योंका आकलन करनेवाली यह समिति रिपोर्टमें निर्धारित सिद्धान्तोंके अनुसार केवल तथ्योंका आकलन ही करेगी?

लॉर्ड पील: हाँ, ऐसा ही है।

सर तेजबहादुर सप्रू: जब बात ऐसी है तो फिर मुझे कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन श्री गांधी और श्री जिन्नाकी तरह मैं भी चाहूँगा कि अन्तिम निर्णयपर पहुँचनेके लिए अपनाये तरीकेके बारेमें मेरी शंका दूर कर दी जाये, क्योंकि श्री जिन्ना द्वारा यह सवाल उठाये जानेके बाद मैं यह मानता हूँ कि रिपोर्ट पेश किये जानेके तुरन्त बाद निर्णय कर लेनेका कोई इरादा नहीं था, बल्कि मंशा यह था कि उसके बाद अस्थायी तौरपर कुछ प्रस्ताव तय किये जायेंगे और वे प्रस्ताव समिति अथवा पूरी परिषद्के सामने रखे जायेंगे अथवा अन्तिम निर्णयपर पहुँचनेके लिए आप कोई अन्य व्यवस्था करेंगे। अगर बात ऐसी हो तो फिर मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

श्री गांधी: लेकिन स्पष्ट ही उसमें उन सिद्धान्तोंका तो खयाल रखा ही जायेगा जिनकी रूपरेखा स्वयं लॉर्ड पीलने बताई है।

सर तेजबहादुर सप्रू: जहाँतक दूसरी समितिका सम्बन्ध है, उसपर मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

अध्यक्ष: मेरा खयाल है, सभी पक्षोंकी सूझबूझ और सद्भावनाके परिणामस्वरूप अब स्थिति यह बनी है कि हम एक समाधानपर पहुँच गये हैं, जो काम चलानेके लिए अच्छा समाधान है; और इस सुखद परिणामके लिए हम लॉर्ड पील तथा उनके सहयोगियोंके बड़े आभारी हैं। मैं श्री गांधीकी उज्रदारीकी कद्र करता हूँ और समितिकी कार्यवाहीमें उसका उल्लेख किया जायेगा, और इसी तरह मैं डॉ० अम्बेडकरकी आपत्तिकी भी कद्र करता हूँ। फिर भी, इसके कारण हम ऐसा नहीं करने जा रहे हैं कि इस समाधानको, जो हमारे कामके लिए बड़ा सहायक है, स्वीकार न करें। हमने अपने भावी कार्यकी दिशामें एक बहुत बड़ा कदम उठाया है। हम अपनी रिपोर्ट इसी आशयको ध्यानमें रखकर तैयार करेंगे।

जो भी हो, मैं लॉर्ड पील तथा उप-समितिके प्रति अपनी तथा आपकी ओरसे भी व्यक्तिगत रूपसे आभार प्रकट करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कान्फरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी एंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २५२-५५

१४४. पत्र : सर फिलिप हार्टोगको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
२३ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपने अपने पत्रपर — बेशक भूलसे ही — अपने हस्ताक्षर नही किये हैं, लेकिन चूँकि पता पूरी तरह लिख दिया गया है, इसलिए मैं आशा कर रहा हूँ कि यह पत्र आपको मिल जायेगा।

आप यह तो मानेंगे ही कि मैं पहलेसे मालूम किये बिना एकदम ही तारीखे नही बता सकता था, लेकिन चूँकि आप इस पूरे प्रश्नका अध्ययन खुशी-खुशी करनेको तैयार हैं, इसलिए मैं 'यंग इंडिया' के जिन अंकोमे ये लेख[1] छपे थे उनका पता लगाकर आपको आवश्यक सन्दर्भ-सामग्री भेज दूँगा। मैं यह पता लगानेकी भी कोशिश करूँगा कि मैंने पंजाबके बारेमे जो निष्कर्ष निकाले हैं, उनके अलावा अन्य प्रान्तोके सम्बन्धमे क्या सिद्ध किया जा सकता है। फिलहाल तो पंजाब और बर्माके दृष्टान्तोके आधारपर अन्य प्रान्तोके सम्बन्धमे निष्कर्ष निकालनेमे मुझे कोई कठिनाई दिखाई नही देती। गत दस-पाँच वर्षोंमे पंजाबमे चाहे जितनी प्रगति हुई हो, उससे उस दलीलमे कोई फर्क नही पड़ता जो मैंने आपके सामने पेश की है।

कश्मीरके बारेमे तो, जैसा मैंने आपके प्रश्नके उत्तरमे कहा था, मैं अनुमान ही लगा रहा था, लेकिन इस प्रश्नमे चूँकि आपकी इतनी ज्यादा रुचि है, इसलिए मैं वहाँ शिक्षाकी वास्तविक अवस्थाका पता लगानेकी कोशिश करूँगा।

आप जो निश्चयपूर्वक यह मानते हैं कि अगर मेरे तर्कमे कोई दोष होगा या मेरे बताये तथ्य गलत होंगे, तो मैं तत्काल भूल सुधार कर लूँगा, वह बिलकुल सही है, और जहाँ मैं अपनी बातोकी सचाईके बारेमे और अधिक प्रमाण ढूँढनेकी कोशिश करूँगा, वहाँ आपसे भी यह अपेक्षा रखूँगा कि ऐसी सारी जानकारी जो आपके पास हो और जिससे मुझे वास्तविकताको समझनेमे सहायता मिले आप मुझे भेजनेकी कृपा करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३९५) से, सौजन्य . इंडिया ऑफिस पुस्तकालय

१. इन लेखोंमें पंजाब प्रशासनकी रिपोर्टसे पंजाबमें शिक्षाकी स्थितिसे सम्बन्धित आँकड़े उद्धृत किये गये थे; देखिए "भाषण चैथम हाउसमें", २०-१०-१९३१। सर हार्टोगने गांधीजी के इस दावेके बारेमें सन्देह व्यक्त किया था कि ब्रिटिश भारतमें पिछले पचास वर्षोंमें साक्षरताका अनुपात घटा है।

१४५. भेंट: रायटरके प्रतिनिधिको

लन्दन
२३ अक्टूबर, १९३१

आज एक विशेष भेंटमें रायटरके प्रतिनिधिने श्री गांधीसे लन्दनमें प्रकाशित इस खबरके बारेमें प्रश्न पूछा कि श्री गांधीने पण्डित जवाहरलाल नेहरूको तार भेजा है कि गोलमेज परिषद्से कुछ भी अपेक्षा नहीं की जा सकती।' उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि तारमें तो मैंने वह बात कही है जो मुझे महसूस होती है, लेकिन यह याद रखना चाहिए कि मैंने वह तार पण्डित जवाहरलालके उस तारके उत्तरमें भेजा था जिसमें उन्होंने संयुक्त प्रान्तमें कृषि-भूमि और लगान वगैरहको लेकर चल रहे झगड़ेका विस्तृत वर्णन किया था और मेरे तारका सम्बन्ध उसीसे था।

रायटरके प्रतिनिधिने जब यह पूछा कि क्या इस तारका ऐसा मतलब निकाला जा सकता है कि वे गोलमेज परिषद्की सफलताकी कोई आशा नहीं रखते तो श्री गांधीने कहा कि स्पष्ट ही इसमें कहीं कोई गलतफहमी है। पण्डित जवाहरलाल नेहरूको भेजे तारका गोलमेज परिषद्से कोई सम्बन्ध नहीं है। और उसका सम्बन्ध केवल संयुक्त प्रान्तकी स्थितिसे है।

जो भी हो, जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं तो अपनी ओरसे उसे सफलताका पूरा मौका दे रहा हूँ। मैं जहाँ कहीं सहायता कर सकता हूँ, करनेकी कोशिश कर रहा हूँ और मार्गमें कोई बाधा उपस्थित नहीं कर रहा हूँ। अगर परिषद् विफल हुई तो वह खुद उसीमें मौजूद कमजोरीके कारण होगी और इस कारण कि, जैसा मैंने बताया है, ब्रिटिश सरकार कांग्रेसकी माँगके प्रति कोई अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त कर रही है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-१०-१९३१

१. देखिए "तार: जवाहरलाल नेहरूको", १६-१०-१९३१ के पश्चात्।

१४६. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन

२३ अक्टूबर, १९३१

श्री गाधी: लॉर्ड चान्सलर तथा साथी प्रतिनिधिगण, मुझे इस विषयपर[1] जिसे इस वाद-विवादने बहुत प्राविधिक बना दिया है, बोलनेमे बहुत हिचकिचाहट मालूम हो रही है, परन्तु मै अनुभव करता हूँ कि आपके प्रति तथा काग्रेसके प्रति, जिसका मै प्रतिनिधि हूँ, मेरा एक कर्त्तव्य है। मै जानता हूँ कि काग्रेसके सघ-न्यायालयके प्रश्नपर कुछ निश्चित विचार है और मुझे लगता है कि वे विचार यहाँ अनेक प्रतिनिधियोको अप्रिय मालूम होगे। वे विचार चाहे जैसे भी हो, यह देखते हुए कि वे एक जिम्मेदार सस्थाके विचार है, उन्हे आपके सामने रख देना मै आवश्यक मानता हूँ।

मै देखता हूँ कि इन वाद-विवादोका आधार पूरी तरह नही तो बहुत हदतक हमारा स्वय अपने प्रति यह अविश्वास है कि राष्ट्रीय सरकार अपना कारोबार निष्पक्ष रूपसे नही चला सकेगी। साम्प्रदायिक उलझन भी हमारी बहसको प्रभावित कर रही है। दूसरी ओर काग्रेस अपनी सारी नीतिका आधार इस श्रद्धा तथा विश्वासपर रखती है कि जब अधिकार मिलेगे तब हमे अपनी जिम्मेदारियोका भी ज्ञान हो जायेगा और साम्प्रदायिक पूर्वग्रह अपने-आप मिट जायेगे। परन्तु यदि ऐसा न भी हो तो भी जिन बडेसे-बडे खतरोकी कल्पना की जा सकती है, काग्रेस उन्हे उठानेके लिए तैयार है, क्योकि ऐसे खतरे उठाये बिना हम वास्तविक उत्तरदायित्वको सँभालने योग्य न हो सकेगे। जबतक हमारे दिमागमे यह भाव बना रहेगा कि हमे सलाह तथा नाजुक परिस्थितिमे अपना काम चलानेके लिए किसी बाहरी शक्तिके सहारे रहना है, मेरे विचारसे, तबतक यही समझना चाहिए कि हमे (स्वराज्यके अर्थमे) कोई जिम्मेवारी नही दी गई है। यह बात भी उलझनमे डालनेवाली है कि हम बिना यह जाने कि हमारा ध्येय क्या है, इस विषयपर बहस करनेका प्रयत्न कर रहे है। यदि प्रतिरक्षा-विभाग स्वराज्य सरकारके मातहत न रहे तो मै एक राय दूंगा, परन्तु यदि वह हमारे अधिकारमे रहे तो मेरी राय दूसरी होगी। मै ऐसा मानकर चल रहा हूँ कि यदि हमें वास्तविक जिम्मेदारी मिलनेवाली है तो प्रतिरक्षा-विभाग हर तरहसे हमारे नियन्त्रणमे, राष्ट्रीय नियन्त्रणमे रहेगा।

डॉ० अम्बेडकरने जो शका उठाई है, उसमे उनके साथ मेरी भी पूर्ण सहानुभूति है। उच्चतम न्यायाधिकरणका निर्णय प्राप्त करना तो बहुत अच्छा है, लेकिन अगर उस न्यायाधिकरणके आदेशका उसकी कचहरीके बाहर कोई महत्त्व ही न हो तो ऐसा न्यायाधिकरण सारे राष्ट्र और सारे ससारके उपहासका पात्र होगा। फिर

१. संघीय न्यायालयपर।

उस आदेशका क्या होगा? श्री जिन्नाने जो कहा वह मेरी समझमें आ गया — अर्थात् यह कि इस कार्यके लिए सैनिक शक्ति होगी; परन्तु उस हालतमें उन न्यायाधिकरणके आदेशका पालन करवानेवाला ताज होगा। तब मैं कहूँगा कि उच्च न्यायालय अथवा संघ-न्यायालय भी ताजके ही अधीन क्यों न रहे। मेरे विचारसे यदि हमें जिम्मेदारी मिलनी है तो सर्वोच्च न्यायालयको स्वराज्य सरकारके ही मातहत रहना पड़ेगा; और इसलिए उस आदेशको अमलमें लानेकी व्यवस्था भी उसीको करनी पड़ेगी। खुद मुझे तो वैसा कोई भय नहीं है जैसा डॉ० अम्बेडकरको है, परन्तु मेरी समझमें उनकी आपत्ति बहुत उचित है और मैं भी यह मानता हूँ कि जो अदालत न्याय करे उसे यह भी भरोसा होना चाहिए कि जिनपर उसके फैसलोंका असर पड़ता है वे उनको मानेंगे। इसलिए मैं राय दूँगा कि न्यायाधीशोंको यह अधिकार भी होना चाहिए कि वे फैसलोंसे सम्बन्धित बातोंके ठीक नियमनके लिए नियम भी बना सकें। स्वभावतः उन फैसलोंपर अमल करवाना अदालतका काम नहीं होगा, बल्कि वह कार्यकारिणीका काम होगा, परन्तु कार्यकारिणीको इस अदालतके बनाये हुए नियमोंके अनुसार ही कार्य करना होगा।

किसी भी तरह हो, हम कुछ ऐसा मान रहे हैं कि इस न्यायालयके गठनसे सम्बन्धित छोटी-मोटी सभी बातोंकी पूर्ति संविधान द्वारा होगी। मैं विनयपूर्वक इस विचारसे अपनी पूर्ण असहमति जाहिर करता हूँ। मेरे विचारमें यह संविधान हमें संघ-न्यायालयका खाका बना देगा और उसका अधिकार-क्षेत्र निश्चित कर देगा, परन्तु बाकी तमाम बातें संघ-सरकारपर छोड़ दी जायेंगी कि वह उनको पूरा कर ले। मैं इस बातको कभी खयालमें नहीं ला सकता कि यह संविधान इन बातोंको भी तय कर देगा कि न्यायाधीशोंको कितने साल नौकरी करनी है या उनको ७० वर्षकी अथवा ९५ या ९० अथवा ६५ वर्षकी अवस्था होनेपर इस्तीफा देना या अवकाश प्राप्त करना है। मैं मानता हूँ कि ये बातें तो संघ-न्यायालय ही निश्चित करेगा। इसलिए मैं एक बिलकुल नया तरीका पेश करूँगा — आप उसे चाहे जिस लायक समझें। वह तरीका यह है कि संविधान शुरुआतके तौरपर न्यायाधीशोंकी व्यवस्था कर दे और यह बता दे कि वे एक निश्चित कालतक कार्य करेंगे ताकि स्वराज्य सरकारको उस संघ-न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालयका — उसे चाहे जो नाम दिया जाये — बोझ न उठाना पड़े जो देशकी जरूरतोंको पूरा न कर सके।

हम प्रत्येक वाक्यके अन्तमें ताज (क्राउन) शब्द अवश्य ले आते हैं। मुझे साफ बता देना चाहिए कि कांग्रेसकी धारणाके अनुसार तो ताजका कोई सवाल ही नहीं उठता। भारतवर्ष तो पूर्ण स्वाधीनता चाहता है और यदि वह पूर्ण स्वाधीनताका उपभोग करने लगे तो उस स्थितिमें जो कोई भी सर्वोच्च सत्ताधिकारी होगा वही न्यायाधीशोंकी नियुक्ति तथा आज जो अनेक मामले ताजके अधीन हैं, उन सबके लिए जिम्मेवार होगा।

कांग्रेसका यह मूलभूत सिद्धान्त है कि संविधानका रूप चाहे जैसा हो, भारतमें हमारी अपनी प्रिवी कौंसिल हो। प्रिवी कौंसिलको अगर वास्तवमें सबसे अधिक

महत्त्वकी बातोमे निर्धन लोगोकी रक्षा करनी है, तो उसके फाटक देशके दीनातिदीन जनोके लिए भी खुले रहने चाहिए, और मेरे विचारमें यदि यही की प्रिवी कौंसिल महत्त्वपूर्ण विषयोमें हमारी किस्मतका फैसला करती रही तो ऐसा होना असम्भव है। इस सम्बन्धमें भी मै अपने यहांके न्यायाधीशोकी बुद्धिमत्तापूर्ण तथा सर्वथा निष्पक्ष फैसला देनेकी योग्यतामे पूर्ण विश्वास रखनेकी सलाह दूंगा। मै जानता हूँ कि बडे-बडे परिवर्त्तन करनेका मतलब बड़ी-बड़ी जोखिमे उठाना है। यहांकी प्रिवी कौंसिल एक प्राचीन सस्था है, जिसकी बडी प्रतिष्ठा तथा बडा मान है और यह ठीक भी है। परन्तु इस प्रतिष्ठाको स्वीकार करते हुए भी मै कभी यह विश्वास नही कर सकता कि हम ऐसी एक निजी प्रिवी कौंसिल नही बना सकेगे जिसे सर्वत्र सम्मानकी दृष्टिसे देखा जाये। मै नहीं समझता कि चूँकि इग्लैंडके पास बहुत ही अच्छी सस्थाएँ है, इसलिए हमें उनसे बँधे रहना चाहिए। यदि हमे इग्लैंडसे कुछ सीखना है तो यही कि हम स्वय भी ऐसी सस्थाएँ स्थापित कर सके, अन्यथा हम जिस राष्ट्रके प्रतिनिधि होनेका दावा करते है, उसकी उन्नतिकी कोई आशा नही है। इसलिए मै आप सबसे प्रार्थना करूँगा कि इस समय हम अपने-आपमे पूर्ण विश्वास रखे। हमारा प्रारम्भ भले ही छोटा हो, परन्तु यदि हमारे हृदयोमे सचाई और ईमानदारीके साथ फैसले देनेकी शक्ति है तो फिर इस बातसे कोई फर्क नही पडता कि हमारे देशमे, इग्लैंडके न्यायाधीश जिस न्याय-परम्पराका दावा करते है और जिसपर वे सारे ससारके सामने गर्व करते है, वैसी न्याय-परम्परा नहीं है।

ऐसी राय रखते हुए, मै महसूस करता हूँ कि इस सघ न्यायालयका अधिकार-क्षेत्र अधिकसे-अधिक विस्तृत होना चाहिए और वह केवल उन्ही मामलोंका फैसला न करे जिनका सघ-कानूनसे सम्बन्ध है। सघ-कानून जरूर रहेगें, परन्तु उसको इतना अधिकार होना चाहिए कि भारतके किसी भी भागसे आनेवाले मामलेपर वह फैसला दे सके। अब यह प्रश्न है कि देशी नरेशोकी प्रजाकी क्या स्थिति रहेगी और उनका क्या होगा। इस विषयमें देशी नरेशोका जो-कुछ कहना हो उसका महत्त्व तो सर्वोपरि होगा ही, फिर भी मै बडे सम्मान तथा बड़ी हिचकिचाहटके साथ कहूँगा कि यदि इस परिषद्का कुछ फल निकलना है तो मुझे आशा है कि अन्तमे कोई ऐसी बात जरूर होगी जो सारे भारत तथा सारे भारतवासियोके लिए एक-सी होगी, फिर चाहे वे रियासतोके रहनेवाले हों या भारतके अन्य भागोके। यदि हम सबमे कोई समानता है तो स्वभावत. सर्वोच्च न्यायालय उन अधिकारोका रक्षक हो जिन्हे हम समान रूपसे सबके अधिकार मान सकते है। मै नही कह सकता कि ये अधिकार क्या-क्या होने चाहिए। यह देशी नरेश ही बतला सकते है कि वे अधिकार क्या हो सकते है और क्या नही हो सकते। चूँकि देशी नरेश अपने-अपने घरानोंके ही प्रतिनिधि बनकर नही आये है बल्कि उन्होने अपनी प्रजाके प्रतिनिधित्वकी भी बडी भारी जिम्मेवारी अपने सिरपर ले रखी है, इसलिए मै विनम्रतापूर्वक लेकिन पूरे जोरसे उनसे यह अनुरोध करूँगा कि वे स्वय ही कोई ऐसी योजना लेकर आगे आये जिससे उनकी प्रजाको यह लगे कि यद्यपि इस परिषद्में उनका कोई प्रत्यक्ष प्रतिनिधि

नही है, फिर भी उनकी इच्छाओको इन नेक देशी नरेशोके ही द्वारा पर्याप्त अभिव्यक्ति मिलेगी।

जहाँतक तनख्वाहका सवाल है, आप लोग मेरी बातपर स्वभावत. हँसेगे, परन्तु काग्रेसका — जो धनकी दृष्टिसे बौने, बिलकुल ही गरीब लोगोके राष्ट्रकी प्रतिनिधि है — विश्वास है कि इस सम्बन्धमें वर्त्तमान धनकुबेर इग्लैंडसे स्पर्द्धा करना असम्भव है। भारतवर्ष, जिसकी औसत आय २ पैस प्रतिदिन है, वैसी तनख्वाहोको बरदाश्त नही कर सकता जो यहाँ दी जाती है। मै समझता हूँ कि यदि हमें भारतमे स्वराज्य चलाना है, तो हमे इस बातको भूलना पडेगा। जबतक ब्रिटेनकी सगीनें वहाँ मौजूद है तबतक भले ही इन दीन मनुष्योको निचोडकर दस हजार, पाँच हजार या बीस हजार रुपये मासिक वेतन दिया जाता रहे। मगर मै नही समझता कि मेरा देश इतना गिर गया है कि वह भारतकी सचाईके साथ सेवा करनेवाले ऐसे लोग पर्याप्त सख्यामे उत्पन्न न कर सके जो किसी हदतक करोडो आम लोगोसे मिलता-जुलता जीवन व्यतीत करते हुए भी नेकी और सचाईसे भारतकी अच्छी सेवा कर सके। मैं इस बातको स्वीकार नही कर सकता कि कानूनी मेधावाले लोग ईमानदार रहे, इसके लिए कोई बडी कीमत देनेकी आवश्यकता है। यहाँ मुझे मोतीलाल नेहरू, चित्तरजन दास, मनमोहन घोष, बदरुद्दीन तैयबजी आदिकी याद हो आती है, जिन्होने अपनी कानूनी लियाकत बिलकुल मुफ्त बाँटी और बडी वफादारीके साथ अपने देशकी बहुत ही अच्छी सेवा की। आप शायद मुझे ताना दे कि वे लोग इस कारण ऐसा कर सके थे कि वे अपने व्यवसायमे बडी मोटी-मोटी फीस लेते थे। मै इस तर्कको इस कारण नही मान सकता कि मनमोहन घोषके सिवा मेरा और सबसे परिचय रहा है। ऐसा नही कहा जा सकता कि पासमें अधिक पैसा होनेकी वजहसे इन लोगोने भारतको आवश्यकता पडनेपर अपनी प्रतिभाका लाभ उदारतापूर्वक दिया। उसका उनके ऐशो-आरामसे रहनेकी सामर्थ्यसे कोई सम्बन्ध नही था। मैंने उनको बडे सन्तोष से गरीबोकी जिन्दगी बिताते देखा है। मै आपको ऐसे कई प्रसिद्ध वकीलोंके नाम बता सकता हूँ जो यदि राष्ट्र-कार्यमे न लग गये होते तो आज देशके विभिन्न हिस्सोमे उच्च न्यायालयोके न्यायपीठोपर आसीन होते। इसलिए मुझे पूर्ण विश्वास है कि जब हम अपने देशका कारोबार खुद चलाने लगेगे तो हम भारतके करोडो लोग जिस दयनीय दशामे पड़े हुए है उसका ध्यान रखते हुए देशभक्तिके भावोसे प्रेरित होकर उसे चलायेगे।

मै एक बात और कहकर समाप्त करूँगा। यह देखते हुए कि काग्रेसके विचारसे यह सघ-न्यायालय अथवा सर्वोच्च न्यायालय — आप इसे दोमे से जो भी नाम दें — देशका सबसे ऊँचा न्यायाधिकरण होगा, और अपने मामले लेकर भारतका कोई भी निवासी उससे आगे नही जा सकता, मेरी रायमे उसका अधिकार-क्षेत्र भी अपरिमित होगा। जहाँतक सघीय मामलोका सम्बन्ध है, उसका अधिकार-क्षेत्र, देशी नरेश जितना चाहेगे, उसी सीमातक जायेगा। परन्तु मै यह खयाल कभी नही कर सकता कि हमारे यहाँ दो सुप्रीम कोर्ट रहे — एक तो केवल सघ-कानूनोके लिए और दूसरा

उन अन्य सब बातोके लिए जो सघ-प्रशासन या सघ-सरकारके अन्तर्गत न आती हो। इस समय जैसी बाते हो रही है उससे मुझे लगता है कि सघ-सरकार कमसे-कम विषयोसे ताल्लुक रखेगी और अधिक महत्त्वपूर्ण बाते सघ-शासनसे बाहर रहेगी। सघ-शासनसे बाहरकी बातोपर यदि यह सर्वोच्च न्यायालय फैसला नही देगा तो और कौन देगा? इसलिए इस सर्वोच्च न्यायालय अथवा सघ न्यायालयका दोहरा अधिकार होगा और यदि आवश्यकता हो तो तिहरा भी। जितनी अधिक शक्ति हम इस सघ-न्यायालयको देंगे, मै समझता हूँ इसके प्रति उतने ही अधिक विश्वासका सचार हम ससारमे तथा स्वय अपने राष्ट्रमे कर सकेगे।

मुझे खेद है कि मैंने परिषद्का इतना अधिक बहुमूल्य समय लिया, परन्तु मैंने अनुभव किया कि सर्वोच्च न्यायालयके प्रश्नपर बोलनेकी अनिच्छा रखते हुए भी मै उन विचारोको आपके सामने रख दूं जो हम काग्रेस-जनोमे से बहुत-से लोग वर्षोसे रखते चले आये है और जिनको हम, यदि हमारा बस चले तो भारतके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक फैलाना चाहेगे। मै जानता हूँ कि मुझे किन कठिनाइयोका सामना करना पड रहा है। लगभग सारे प्रसिद्ध वकील मेरे खिलाफ है, और जहाँतक इस न्यायालयकी तनख्वाहो तथा अधिकारोका सवाल है, शायद देशी नरेश भी मेरे विरोधी है। लेकिन सघ-न्यायालयसे सम्बन्धित बातोके बारेमे काग्रेसके तथा अपने दृढ विचारोको यदि मै आपके सामने न रखता तो काग्रेसके प्रति तथा आपके प्रति भी अपने कर्त्तव्यसे विमुख हुआ माना जाता।

अध्यक्ष: हम इस बातके लिए महात्मा गांधीके बहुत आभारी हैं कि उन्होंने बहुत साफ शब्दोंमें अत्यन्त निर्भीकतापूर्वक अपना विचार व्यक्त किया। हम यहाँ परस्पर विचारोंका आदान-प्रदान करने और उनके सम्बन्धमें दी गई दलीलोंको सुननेके लिए ही एकत्र हुए हैं, परिषद्का उद्देश्य यही है। मैं उनसे यह कहनेकी इजाजत चाहूँगा कि जब आप जानते हैं कि कोई क्या चाहता है तभी आप उसको सन्तोष देनेकी पूरी कोशिश कर सकते हैं और निस्सन्देह, वह भी आपको सन्तोष देनेकी पूरी कोशिश करेगा। कठिनाई तो उस आदमीके साथ सुलहकी बातचीत करनेमें होती है जो यही नहीं जानता कि वह क्या चाहता है। श्री गांधीने इस प्रकार अपने विचार हमारे सामने रखे, इसके लिए मैं उनका बहुत आभारी हूँ। मेरी इच्छा बराबर यही रहेगी कि मैं उनकी माँगोंको, बल्कि वास्तवमें सबकी माँगोंको, पूरा करनेकी कोशिश करूँ और उसके लिए जहाँतक जाना सम्भव हो, जाऊँ। मुझे पूरा विश्वास है कि संघ-संरचना समितिकी पूरी कार्यवाहीके दौरान यह भावना बनी रहेगी। फिलहाल मैं श्री गांधीको इसके लिए व्यक्तिगत रूपसे धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने इस विषयमें अपने विचार इतने साफ शब्दोमें और ऐसी निर्भीकतासे व्यक्त किये।

श्री जिन्ना: महात्मा गांधीने मेरी कही बातका एक बार उल्लेख किया था। मैं उसे समझ नहीं पाया।

श्री गाधी. क्या नतीजा होगा, यह बताकर आपने डा० अम्बेडकरको धर्मसकटमें डाल दिया था और उनके मनमे अपनी ही कही बातोके स्वाभाविक परिणामोके बारेमे आशका पैदा हो गई थी। इसलिए मैंने आपके नामका उल्लेख किया और कहा कि अगर भारतको दो हिस्सोमे बाँट दिया जाता है जिनमे से एकका शासन ताजकी ओरसे किया जायेगा और दूसरेपर खुद भारतका शासन रहेगा तो हमारे दो पाटोके बीच पड जानेकी सम्भावना है।

श्री जिन्ना: मैंने कोई मत तो व्यक्त किया नहीं था।

श्री गाधी· हाँ, यह तो मै जानता हूँ कि आपने कोई मत व्यक्त नही किया। लेकिन आपने ऐसा कहा कि "मै मानता हूँ, प्रतिरक्षा ताजके मातहत है।"

श्री जिन्ना: मैंने यह नहीं कहा कि "मै मानता हूँ।" मैंने यह कहा था कि जहाँतक संघ-संरचना समितिकी रिपोर्ट जाती है, ऐसा समझा जाता है कि प्रतिरक्षा ताजके मातहत है। मैंने कोई मत व्यक्त नहीं किया।

श्री गाधी· हाँ, यह ठीक है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउण्ड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐण्ड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ २६७-६८

१४७. भाषण: विद्यार्थियोंकी सभामें[1]

ईटन
[२३ अक्टूबर, १९३१][2]

इग्लैडमे आपका स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। आपमे से कुछ लोग भविष्यमे प्रधान मन्त्री और सेनापति बनेगे, और अभी जबकि आपके चरित्रका निर्माण हो रहा है इसलिए आपके हृदयमे प्रवेश करना आसान है, और मै आपके हृदयमें प्रवेश करनेको उत्सुक हूँ। मै आपके सामने, परम्परासे आपको जिस झूठे इतिहासकी शिक्षा दी जा रही है, उससे भिन्न कुछ तथ्य रखना चाहूँगा। उच्चाधिकारियोमे मुझे अज्ञान देखनेको मिलता है। मेरा मतलब ज्ञानके अभावसे नही है, बल्कि यह है कि उनका ज्ञान गलत तथ्योपर आधारित है, और चूँकि मै आपको साम्राज्य-निर्माताओके रूपमे नहीं, बल्कि एक ऐसे राष्ट्रके सदस्योंके रूपमे देखता हूँ जो दूसरे राष्ट्रोका शोषण करना छोड चुका होगा और शस्त्र-बल नही बल्कि नैतिक बलके जोरपर विश्व-शान्तिका

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईटन और ऑक्सफोर्डमें सप्ताहान्त: भावी साम्राज्य-निर्माताओंके बीच"से उद्धृत।

२. गाधीजी ने अपनी डायरीमें लिखा है कि वे इसी तारीखको रातमें ईटन गये और युवकोंके सामने बोले।

सरक्षक बन चुका होगा, इसलिए मै आपके सामने सच्चे तथ्य रखना चाहता हूँ। तो इसी सन्दर्भमे मै आपको पहले यह बताता हूँ कि कमसे-कम जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, हिन्दू पक्ष-जैसी[1] कोई चीज नही है, क्योंकि अपने देशकी आजादीके मामलेमे मै उससे अधिक हिन्दू नही हूँ जितने कि आप है। हिन्दू पक्ष है जरूर, लेकिन उसे हिन्दू महासभाके प्रतिनिधि पेश कर रहे है, जो हिन्दुओंका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करते है, लेकिन मेरे विचारसे वास्तवमे उनका प्रतिनिधित्व नही करते। वे समस्याका राष्ट्रीय समाधान चाहते है, लेकिन इसलिए नही कि वे राष्ट्रवादी है, बल्कि इसलिए कि यह बात उनके अनुकूल पडती है। इसे मै विनाशकारी चाल कहता हूँ और चूंकि वे एक बडे बहुमतका प्रतिनिधित्व करते है, इसलिए उनसे मै अनुनय-विनय कर रहा हूँ कि वे छोटे समुदायोको, जो-कुछ वे चाहते है, वह सब देनेको आगे आये और फिर देखें कि वातावरण किस प्रकार बात-की-बातमे साफ हो जाता है। हिन्दुओंका विशाल समुदाय क्या महसूस करता है और क्या चाहता है, यह कोई नही जानता, लेकिन चूंकि मै इतने वर्षोसे उनके बीच घूमते रहनेका दावा करता हूँ, इसलिए मै समझता हूँ कि वे इन छोटी-मोटी निरर्थक चीजोकी परवाह नही करते, विधानसभाकी सीटो और प्रशासनिक पदोके रूपमे मिलनेवाले टुकडोके सवालको लेकर वे तनिक भी चिन्तित नही है। साम्प्रदायिकताका यह हौआ मुख्यत शहरोतक ही सीमित है और ये शहर भारत नही है। ये तो लन्दन तथा अन्य पश्चिमी नगरोके ऐसे प्रतिरूप-मात्र है जो जाने-अनजाने गाँवोको चूसते है और इग्लैडके कमीशन एजेटोकी तरह काम करके उनके शोषणमे आपके साझेदार बनते है। भारतकी आजादीके उस बडे मसलेके सामने, जिससे ब्रिटिश मन्त्रिगण अपनी आँखे चुरा रहे है, यह साम्प्रदायिक प्रश्न कुछ भी नही है। मन्त्रिगण भूल जाते है कि असन्तुष्ट और विद्रोही भारतको वे ज्यादा दिनोतक अपने शिकजेमें नही रख सकते। यह सच है कि हमारा विद्रोह अहिंसात्मक है, लेकिन फिर भी यह विद्रोह तो है ही। यहाँ कुछ समयसे जो रोग भारतीय समाजको खोखला बनाता जा रहा है, भारतकी आजादीका सवाल उससे ज्यादा महत्त्वपूर्ण और ध्यान देने योग्य है, और अगर सविधानके प्रश्नका सन्तोपजनक समाधान हो जाता है तो साम्प्रदायिक समस्या तत्काल मिट जायेगी। ज्यो ही विदेशी शासनरूपी पच्चर देशके अगसे बाहर निकाला जायेगा, परस्पर विभक्त समुदाय निश्चय ही अपने-आप आपसमे जुड जायेगे। इसलिए हिन्दू पक्ष-जैसी कोई चीज है ही नही और अगर है तो उसे त्याग देना चाहिए। इस प्रश्नका अगर आप अध्ययन करेगे तो आप पायेगे कि इसमे तो कुछ है ही नही और जब उसकी चिढ पैदा करनेवाली तफसीलोपर गौर करेगे तो बहुत सम्भव है कि आप हमारे बारेमे ऐसा समझने लगेगे कि ये लोग तो टेम्स नदीमें डूब मरने लायक है।

आप मेरी इस बातको परम सत्य माने कि साम्प्रदायिक प्रश्नका कोई महत्त्व नही है और इसपर आपको परेशान होनेकी जरूरत नही है। लेकिन अगर आप

१. गाधीजीसे कहा गया था कि जिस प्रकार शौकतअलीने मुसलमानोंका पक्ष प्रस्तुत किया था, उसी प्रकार वे भी हिन्दुओंका पक्ष पेश करें।

इतिहासका अध्ययन करना चाहे तो इस महत्तर प्रश्नका अध्ययन करे कि करोड़ों लोगोंने अहिंसाको अपनानेका निश्चय कैसे किया और किस प्रकार उसका दृढ़तासे पालन किया। मनुष्यका अध्ययन उसके पशु-स्वभावको ध्यानमे रखकर न करे, उसको पशु-ससारके नियमोका पालन करनेवाला प्राणी मानकर न करे, बल्कि उसका अध्ययन उस समस्त गरिमाके धारकके रूपमे करे जो मानवताकी शोभा है। जो साम्प्रदायिक झगडोमें लगे हुए हैं वे तो किसी पागलखानेके निवासियो-जैसे हैं। आप इस बातका अध्ययन करे कि मनुष्य किसीको तनिक भी कष्ट पहुँचाये बिना कैसे अपने देशकी आजादीके लिए अपने प्राणोकी बलि चढा देता है। मनुष्यका अध्ययन उसके गरिमामय रूपमे करे, अपने उच्चतर स्वभावके नियमो, प्रेमके नियमोपर चलनेवाले मनुष्यके रूपमें करे, ताकि बडे होकर आप अपनी विरासतको बेहतर बना सके। आपका राष्ट्र हमारे राष्ट्रपर शासन करता है, इसमे आपके लिए गौरवकी कोई बात नही हो सकती। किसीने भी अपने-आपको बेडियोमें डाले बिना किसी गुलामको बेडीमे नही डाला है। कोई भी राष्ट्र खुद पराधीन हुए बिना किसी दूसरे राष्ट्रको पराधीन नही रख पाया है। आज इग्लैड और भारतके बीच जो सम्बन्ध है, वह अत्यन्त पापमय, अत्यन्त अस्वाभाविक सम्बन्ध है, और मै आपसे अपने उद्देश्यकी सफलताके लिए आशीर्वाद देनेको इसलिए कहता हूँ कि हम स्वभावत. उस स्वतन्त्रताके पात्र है जो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हमने जो तपस्याकी है, जो कष्ट सहे है, उनके कारण तो इसपर हमारा दोहरा अधिकार हो जाता है। मै चाहता हूँ कि बडे होकर आप अपने राष्ट्रकी कीर्तिमे कुछ ऐसा योगदान करे जैसा अबतक किसीने नही किया है। इसका तरीका यह है कि आप इसे शोषणके पापसे मुक्त करके मानवताकी प्रगतिमे हाथ बँटायें।

दूसरा सवाल यह था कि अंग्रेजोंके भारतसे चले जानेके बाद वह अपने लोभी लुटेरे राजाओंकी समस्यासे कैसे निवटेगा? गांधीजी ने युवकोंको आश्वस्त करते हुए कहा कि इन राजाओंसे कोई खतरा नहीं है, लेकिन अगर उनपर पागलपन सवार हुआ तो अंग्रेजोंकी बनिस्बत उनसे निबटना कहीं ज्यादा आसान काम होगा। वैसे तो अपनी कमजोरीके कारण ही कोई शरारत करनेकी हिम्मत नहीं करेंगे। गांधीजी ने यह आश्वासन भी दिया कि भारतका गौरव अंग्रेजोंको वहाँसे निकाल बाहर करनेमें नहीं, बल्कि उन्हें शोषकोंके बजाय ऐसे मित्र बनाकर अपने यहाँ कायम रखनेमें होगा जो जरूरत पड़नेपर भारतके सम्मानकी रक्षा करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१४८. मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा

[२३ अक्टूबर, १९३१ या उसके पश्चात्][1]

अगर इस सवालका कोई सन्तोषजनक हल निकल सके तो यह बहुत बडी बात होगी।

मो० क० गां०

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-९) से।

१४९. भाषण: भारतीय मजलिसमें[2]

ऑक्सफोर्ड
२४ अक्टूबर, १९३१

मुसलमान और सिख, ये सब तो बहुत सगठित है। लेकिन अस्पृश्योके साथ ऐसी बात नही है। उनमे राजनीतिक जागृति बहुत कम आई है, और उनके साथ इतना बुरा व्यवहार किया जाता है कि मै उन्हे खुद उन्हीसे बचाना चाहता हूँ। अगर उन्हे पृथक् निर्वाचन-मण्डल प्राप्त हो जाये तो गाँवोमे, जो हिन्दू कट्टरपथिताके गढ है, उनकी जिन्दगी दूभर हो जायेगी। युगोसे अस्पृश्योकी उपेक्षा करते आनेका प्रायश्चित्त तो उच्चवर्गीय हिन्दुओको करना है। यह प्रायश्चित्त सक्रिय समाज-सुधारके द्वारा और सेवाके बलपर अस्पृश्योके जीवनको अधिक सह्य बनाकर किया जा सकता है। लेकिन इसका तरीका उनके लिए पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी माँग करना नही है। उनको पृथक् निर्वाचक-मण्डल देकर तो आप अस्पृश्यो और कट्टरपथियोमे वैर-वैमनस्यका बीज बो देगे। आपको यह समझ लेना चाहिए कि मै केवल मुसलमानो और सिखोके सम्बन्धमे ही, एक अनिवार्य बुराईके रूपमें, विशेष प्रतिनिधित्वके प्रस्तावको बरदाश्त कर सकता हूँ। मेरा निश्चित मत है कि अस्पृश्योके लिए पृथक्

१. यह मिर्जा इस्माइलके २३ अक्टूबरके पत्रपर लिखा गया था। अपने पत्रमें सर मिर्जा इस्माइलने लिखा था: "पिछली रात मैं आगाखाँसे मिला। उन्होंने कहा कि वे सोमवारको मुसलमानोंके प्रतिनिधि-मण्डलसे मिलकर उनके सामने इस मामलेकी चर्चा करेंगे और इसपर उनके क्या विचार है, यह मुझे सूचित कर देंगे। . . . मैं इस सम्बन्धमें आशान्वित हूँ कि इस उलझे सवालका कोई सन्तोषजनक समाधान शायद जल्दी ही निकल आयेगा।"

२. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईटन और ऑक्सफोर्डमें सप्ताहान्त भावी साम्राज्य-निर्माताओंके बीच" से उद्धृत। देसाई कहते है कि अन्य अवसरोंपर गाधीजी ने इस विषयपर जो बातें कहीं, उनके आधारपर इस रिपोर्टको परिवर्धित कर दिया गया है।

निर्वाचक-मण्डलका सुझाव इस शैतान सरकारकी नई कारस्तानी है। आवश्यकता सिर्फ इस बातकी है कि उनके नाम मतदाता-सूचीमे दर्ज कर लिये जाये और सविधानमे उनके लिए मूलभूत अधिकारोकी व्यवस्था कर दी जाये। अगर उनके साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार हो और उनके प्रतिनिधिको जान-बूझकर न चुना जाये तो उन्हे विशेष चुनाव न्यायाधिकरणके पास जानेका अधिकार होगा, जो उन्हे पूरा सरक्षण प्रदान करेगा। इन न्यायाधिकरणोको चुने हुए उम्मीदवारका चुनाव रद करके जिसे न चुना गया हो, उसे विधान-सभामे स्थान देनेका अधिकार होना चाहिए।

अस्पृश्योको पृथक् निर्वाचन-मण्डल देनेका मतलब उनकी बेडीको स्थायी बना देना होगा। पृथक् निर्वाचक-मण्डल मिल जानेपर भी मुसलमान तो सदा मुसलमान ही रहेगे। इसी प्रकार क्या आप यह चाहते है कि अस्पृश्य सदा अस्पृश्य ही बने रहे? पृथक् निर्वाचन-मण्डल अस्पृश्योके इस कलकको स्थायी रूप दे देगे। आवश्यकता इस बातकी है कि अस्पृश्यताका मूलोच्छेद कर दिया जाये और जिस क्षण आप वैसा कर देगे, उसी क्षण दम्भी 'उच्च' वर्गवालोने एक 'निम्न' वर्गपर जो निर्योग्यताएँ लगा रखी है वे नष्ट हो जायेंगी। जब आप उस निर्योग्यताको मिटा देंगे तो फिर पृथक् निर्वाचिन-मण्डल किसको देंगे? आप यूरोपके इतिहासपर गौर कीजिए। क्या यहाँ मजदूरो अथवा स्त्रियोके लिए पृथक् निर्वाचन-मण्डलकी व्यवस्था है? अस्पृश्योको वयस्क मताधिकार देकर आप उन्हे पूरी सुरक्षा प्रदान कर देगे। कट्टरपथी हिन्दुओको भी उनके पास उनसे वोट माँगने जाना पडेगा।

आप पूछते हैं कि फिर उनके प्रतिनिधि डॉ० अम्बेडकर उनके लिए पृथक् निर्वाचन-मण्डलकी माँग क्यों करते है। डॉ० अम्बेडकरके प्रति मेरे मनमें बडा सम्मान है। उन्हे कटु होनेका पूरा अधिकार है। अगर वे हमारा सर नही फोड देते तो इसीको उनका बहुत बडा आत्मसयम मानना चाहिए। आज उनका मन आशकाओसे इतना भरा हुआ है कि वे और-कोई चीज देख ही नही सकते। उन्हे प्रत्येक हिन्दू अस्पृश्योका पक्का विरोधी दिखाई देता है और ऐसा दिखाई देना सर्वथा स्वाभाविक है। मेरे दक्षिण आफ्रिका प्रवास-कालके प्रारम्भिक दिनोमे मुझपर भी यही गुजरी। वहाँ मै जहाँ-कही भी जाता था, यूरोपीय लोग मेरे पीछे पडे रहते थे। अपना क्रोध प्रकट करना उनके लिए बिलकुल स्वाभाविक है। लेकिन वे जिस पृथक् निर्वाचन-मण्डलके लिए प्रयत्नशील हैं, उससे उन्हे समाज-सुधारके क्षेत्रमे जो-कुछ मिलना चाहिए वह नही मिल सकेगा। हो सकता है, उससे खुद उन्हे सत्ता और पद मिल जाये, लेकिन अस्पृश्योकी कोई भलाई नही होनेवाली है। यह सब मै प्रमाणपूर्वक कह सकता हूँ, क्योकि मै इतने वर्षोसे उनके सुख-दुखका साझीदार बनकर उनके बीच रहता आ रहा हूँ।

प्र० : क्या आप इंग्लैंडकी नेकनीयतीमें अब भी विश्वास रखते हैं?

उ० : जिस हदतक मै मानव-स्वभावकी नेकनीयतीमे विश्वास रखता हूँ, उस हदतक इग्लैडकी नेकनीयतीमे भी मेरा विश्वास है। मै मानता हूँ कि कुल मिलाकर मानव-जातिकी प्रवृत्ति हमें गिरानेकी नही, बल्कि उठानेकी है। यह अनजाने किन्तु

निश्चित तौरपर काम करनेवाले प्रेमके नियमका परिणाम है। मानव-जातिका अस्तित्व आज भी कायम है, यह तथ्य इस बातका द्योतक है कि जोडनेवाली शक्ति अलग करनेवाली शक्तिसे बडी है, केन्द्रीकरणकी शक्ति केन्द्रापसारी शक्तिसे कही जबरदस्त है। और चूँकि मै केवल प्रेमका काव्य ही जानता हूँ, इसलिए आपको इसपर कोई आश्चर्य नही होना चाहिए कि मै अग्रेजोका विश्वास करता हूँ। मै अकसर कटु हो उठा हूँ और अकसर मैने अपने मनमे कहा है· "इस छद्मावरणका अन्त कब होगा? कब ये लोग गरीबोका शोषण करना बन्द करेगे?" तब अनायास ही मेरे मनसे यह उत्तर निकलता है: "इन्हे रोमसे यही चीज तो विरासतमे मिली है।" मुझे तो अपने आचरणका नियमन प्रेमके नियमके अनुसार ही करना है और यह आशा और अपेक्षा रखनी है कि अन्तत मै अग्रेजोके स्वभावपर असर डाल सकूँगा।

प्र० : भारतके औद्योगीकरणके बारेमें आपका क्या विचार है?

उ० · मुझे तो ऐसी आशका है कि उद्योगवाद मानव-जातिके लिए अभिशाप सिद्ध होनेवाला है। एक राष्ट्र द्वारा दूसरेका शोषण सदा नहीं चल सकता। उद्योग-वाद तो पूरी तरह आपकी शोषणकी क्षमता, विदेशोमे आपके मालके लिए बाजार मिलने और प्रतिस्पर्धियोके अभावपर ही निर्भर है। चूँकि इग्लैडके लिए ये बाते दिन-ब-दिन कम होती जा रही है, इसलिए यहाँ बेरोजगारोकी सख्या हर रोज बढती जा रही है। भारतीयो द्वारा किया बहिष्कार तो एक बहुत ही हलका दश था। और अगर इग्लैडका यह हाल है तो भारत-जैसा विशाल देश औद्योगीकरणसे लाभ उठानेकी आशा कैसे रख सकता है? सच तो यह है कि जिस दिन भारत दूसरे राष्ट्रोका शोषण करने लगेगा — और अगर उसका औद्योगीकरण होता है तो वह शोषण तो करेगा ही — उस दिन वह दूसरे राष्ट्रोके लिए एक अभिशाप बन जायेगा, दुनियाके लिए एक विपत्ति बन जायेगा। फिर दूसरे राष्ट्रोके शोषणके लिए मुझे भारतके औद्योगी-करणकी बात क्यो सोचनी चाहिए? क्या आप इस दु खद स्थितिको नही देखते कि हम ३० करोड बेरोजगारोके लिए रोजगार जुटा सकते है, लेकिन इग्लैड अपने तीस लाख लोगोके लिए भी कोई काम नही ढूँढ सकता और आज इग्लैडके सामने ऐसी समस्या उपस्थित हो गई है कि जिसने वहाँके बडेसे-बडे बुद्धिमान लोगोकी बुद्धिको भी चक्कर में डाल रखा है? उद्योगवादका भविष्य अन्धकारमय है। अमेरिका, जापान, फ्रास और जर्मनी इग्लैडके सफल प्रतिस्पर्धी बनकर आगे आ गये है। भारतमे जो कुछ थोडी-सी मिले है, वे भी उसकी प्रतिस्पर्धी है, और जिस प्रकार भारतमे जागृति आई है, उसी प्रकार दक्षिण आफ्रिकामे भी आयेगी, जो प्राकृतिक खनिज तथा मानव-शक्तिकी दृष्टिसे बहुत अधिक साधन-सम्पन्न है। जबरदस्त अग्रेज जाति आफ्रिकाकी जबरदस्त जातियोकी तुलनामे बौनी दिखाई देती है। आप कहेगे कि आखिरकार वे शरीफ जंगली ही तो है। वे शरीफ तो जरूर है, लेकिन जगली नहीं है और हो सकता है कि कुछ ही वर्षोमे पश्चिमी राष्ट्रोके व्यापारिक मालके लिए आफ्रिकाके दरवाजे बन्द हो जाये। और अगर उद्योगका भविष्य पश्चिमके लिए अन्धकारमय है तो क्या भारतके लिए वह और भी अन्धकारमय नही होगा?

प्र० : आई० सी० एस० के विषयमें आपका क्या विचार है?

उ० . आई० सी० एस० वास्तवमे इडियन सिविल सर्विस नही, ई० सी० एस०, अर्थात् इग्लिश सिविल सर्विस है। ऐसा मै यह जानते हुए कह रहा हूँ कि उसमें कुछ भारतीय भी है। जबतक भारत पराधीन राष्ट्र है तबतक इग्लैडके हितोकी सेवा करनेके अलावा वे कुछ कर ही नहीं सकते। लेकिन मान लीजिए भारत आजादी हासिल कर लेता है और सुयोग्य अग्रेज भारतकी सेवा करनेकी तत्परता बताते है, उस हालतमे वे सच्चे राष्ट्रीय सेवक होगे। आज तो आई० सी० एस० के नामपर वे शोषक सरकारकी ही सेवा करते है। स्वतन्त्र भारतमे अग्रेज या तो साहसिक वृत्तिसे प्रेरित होकर या प्रायश्चित्त करनेके भावसे जायेंगे और इसलिए मोटी-मोटी तनख्वाहें लेकर गरीब भारतपर बोझ बनने तथा जैसी फिजूलखर्ची वे इग्लैडमे भी नही करते वैसी फिजूलखर्ची करके रहने और यहाँतक कि इग्लैडकी आबोहवा भी वहाँ पैदा करनेके बजाय वे थोडा-सा वेतन लेकर खुशी-खुशी काम करेंगे और वहाँकी जलवायुकी कठोरताको सहेगे। हम उन्हे सम्मानित सहयोगियोकी तरह रखेंगे, लेकिन अगर हमपर अपना प्रभुत्व जमाने और एक उच्चतर जातिकी तरह बरताव करनेकी हलकी-सी इच्छा भी उनमे होगी तो हमे उनकी जरूरत नही है।

प्र० : आपका मतलब यह है कि आप लोग पूरी तरहसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके योग्य है?

उ० . अगर नही है तो योग्य बननेकी कोशिश करेंगे। लेकिन यहाँ योग्यताका सवाल तो उठता ही नहीं। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि जिन्होने हमसे हमारी स्वतन्त्रता छीनी है उन्हे हमको वह वापस देनी है। मान लीजिए कि आपको अपने किये पर पश्चात्ताप होता है, तो उस पश्चात्तापको व्यक्त करनेका तरीका तो यही है कि हमे आप अपने भाग्यके भरोसे छोड दे।

प्र० : लेकिन औपनिवेशिक स्वराज्य क्यों नहीं? बात यह है कि अंग्रेज यह तो समझते हैं कि औपनिवेशिक स्वराज्यका मतलब क्या है। लेकिन वे यह नहीं जानते कि साझेदारी क्या चीज है, जबकि औपनिवेशिक स्वराज्य बहुत-कुछ वही चीज है जो आप चाहते हैं। अगर यह दिया जाता है तो जिस प्रकार आयरलैण्डवासियोने स्वेच्छासे स्वतन्त्र राज्य (फ्री स्टेट) का दर्जा स्वीकार किया उसी तरह आप भी इसे क्यों नहीं स्वीकार कर लेते? क्या आपकी साझेदारीका इससे कोई ज्यादा मतलब है?

उ० . पहले आप मेरे सामने अपना पक्ष रखिए, उसमे जो-कुछ है, उसकी जाँच करने दीजिए तब अगर मुझे आपके द्वारा प्रस्तुत औपनिवेशिक स्वराज्य पूर्ण स्वराज्य-जैसा ही लगेगा तो उसे मै तत्काल स्वीकार कर लूँगा। लेकिन इसे सिद्ध करनेका दायित्व तो मैं उनपर ही डालूँगा जो कहते हैं कि औपनिवेशिक स्वराज्य भी वही चीज है जो पूर्ण स्वराज्य है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१५०. बातचीत : ऑक्सफोर्डमे[1]

ऑक्सफोर्ड
२४ अक्टूबर, १९३१

सर गिलबर्ट मरेका . . . विचार था कि अहिंसक क्रान्ति और राष्ट्रीयता बहुत भयंकर रूप धारण कर रही है और इस चीजको लेकर वे बहुत परेशान लग रहे थे। उन्होंने कहा, "आज तो आपके साथ मेरा श्री विन्स्टन चर्चिलसे भी अधिक मतभेद है।"

गांधीजी ने कहा :

आप सभ्यताकी रक्षा करनेके लिए राष्ट्रोके वीच सहयोग चाहते है। मै भी यही चाहता हूँ, लेकिन सहयोगकी एक पूर्वशर्त यह है कि परस्पर सहयोग करने योग्य राष्ट्र स्वतन्त्र हो। अगर मुझे शान्ति और सद्भावना पैदा करनी है या उसकी पुन.प्रतिष्ठा करनी है और उसमे पडनेवाले विघ्नोको रोकना है तो मुझमे वैसा करनेकी सामर्थ्य होनी चाहिए और जब-तक मेरे देशको स्वतन्त्रता नही मिल जाती तवतक मै वैसा नही कर सकता। अभी इस समय तो शान्तिकी प्रतिष्ठापनामे भारत-का योगदान उसका यह स्वतत्रता-आन्दोलन ही है। कारण, जवतक भारत एक पराधीन राष्ट्र है तवतक केवल उसीसे शान्तिको खतरा नही है, बल्कि उसका शोषण करने-वाले इग्लैडसे भी खतरा है। दूसरे देश इग्लैडकी साम्राज्यवादी नीति और उसके द्वारा अन्य राष्ट्रोका शोषण भले ही बरदाश्त कर ले, लेकिन निश्चय ही उन्हे यह अच्छा नही लगता, और वे इग्लैडको दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक खतरनाक बनते जानेसे रोकनेके लिए खुशी-खुशी सहायता देगे। बेशक आप यह कह सकते है कि भारत खुद भी तो स्वतन्त्र होकर एक खतरा बन सकता है। लेकिन हमे यह मानना चाहिए कि अगर वह अहिंसाके बलपर स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा तो उसके परिणाम-स्वरूप और फिर शोषणका शिकार होनेके नाते उसे जो कटु अनुभव हुए है उनके कारण वह अहिंसाके सिद्धान्तका ठीक पालन करेगा।

मेरे क्रान्तिकी भाषामे बोलनेके सम्बन्धमे जो आपत्ति की जाती है उसका उत्तर, राष्ट्रीयताके सम्वन्धमे पहले ही जो-कुछ कह चुका हूँ, उससे बहुत हदतक मिल जाता है। लेकिन मेरे आन्दोलनके साथ एक बहुत बडी शर्त जुडी हुई है और वही परेशानी का भी कारण है। बेशक, आप ऐसा कह सकते है कि अहिंसात्मक विद्रोह तो हो ही नही सकता और न इतिहासमे इसका कही उदाहरण मिलता है। लेकिन मेरा कहना

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईटन और ऑक्सफोर्डमें सप्ताहान्त: भावी साम्राज्य-निर्माताओंके बीच" से उद्धृत। बातचीतमें डॉ० गिलबर्ट मरे, डॉ० गिलबर्ट स्लेटर, प्रो० रेजिनाल्ड कूपलैण्ड और डॉ० दत्त शामिल थे।

है कि मेरी आकांक्षा वही उदाहरण कायम करनेकी है और मेरा स्वप्न यही है कि मेरा देश अहिंसाके द्वारा अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करे। और मैं सारी दुनियाके सामने इस बातको बार-बार दोहराना चाहूँगा कि अहिंसाकी कीमतपर मैं अपने देशकी आजादी नहीं खरीदूँगा। अहिंसाके साथ मैं इतने पूर्ण रूपसे बँधा हुआ हूँ कि उससे रंच-मात्र भी विचलित होनेकी अपेक्षा मैं आत्महत्या कर लेना ज्यादा पसन्द करूँगा। इस सम्बन्धमें मैंने सत्यका उल्लेख नहीं किया है, जिसका कारण सिर्फ यह है कि अहिंसाके अलावा और किसी माध्यमसे सत्यकी अभिव्यक्ति हो ही नहीं सकती। इसलिए अगर आप मेरी इस अवधारणाको स्वीकार कर लेते हैं तो फिर मेरी स्थितिमें कहीं कोई दोष नहीं रह जाता। . . .

आपका यह कहना उचित हो सकता है कि मुझे सँभल-सँभलकर चलना चाहिए, लेकिन अगर आप मूलभूत बातोंपर ही प्रहार करें तब तो आपको मुझे कायल करना होगा कि आपका यह रवैया सही है। और मैं आपको यह बता दूँ कि राष्ट्रीयतासे भी बहिष्कारका कोई सम्बन्ध न हो, ऐसा सर्वथा सम्भव है। यह विशुद्ध सुधारका भी सवाल हो सकता है, क्योंकि बहुत राष्ट्रवादी हुए बिना भी हम आपका कपड़ा न खरीदकर अपनी जरूरतका कपड़ा स्वयं बना सकते हैं। सुधारक बराबर प्रतीक्षा नहीं कर सकता। अगर वह अपने विश्वासपर अमल नहीं करता तो वह सुधारक है ही नहीं। या तो वह बहुत जल्दबाज होगा या बहुत आशंकित अथवा बहुत सुस्त। फिर इस मामलेमें उसे सलाह कौन देगा या उसे अपनी गति निर्धारित करनेके लिए बैरोमीटर कौन देगा? सुधारक तो अपनी प्रशिक्षित अन्तरात्मासे ही निर्देश ले सकता है, और उससे निर्देश लेते हुए उसे सत्य और अहिंसा-रूपी ढालपर भरोसा करके तमाम खतरे उठानेके लिए तैयार रहना होगा। सुधारक इससे भिन्न कुछ नहीं कर सकता।

प्र० : स्वशासनका कठिन कार्य अपने हाथोंमें लेनेके लिए क्या भारत कुछ समय प्रतीक्षा नहीं करेगा? अगर हम अपने सिपाही वहाँ भेजते हैं तो हमें उनकी जानके लिए जिम्मेदार होना होगा और इसलिए जल्दीसे-जल्दी भारतीय सेना तैयार कर लेना क्या आपके लिए ज्यादा अच्छा न होगा? पिछले वर्ष मुसलमानोंने एक स्वरसे कहा कि वे केन्द्रमें दायित्व नहीं चाहते। हम निर्णय कैसे लें?

उ० : इसका मतलब यह कि आप हमपर विश्वास करनेको तैयार नहीं हैं। ठीक, तो मैं कहता हूँ कि आप हमें भूल करनेकी स्वतन्त्रता दीजिए। अगर हम अपना कारोबार आज नहीं सँभाल सकते तो यह कौन बतायेगा कि हम उसे सँभालने योग्य कब होंगे? मैं नहीं चाहता कि गतिका निश्चय आप करें। जाने-अनजाने आप तो विधाताकी हैसियत अख्तियार कर लेते हैं। मैं आपसे उस उच्चासनसे क्षण-भरको नीचे उतरनेको कहता हूँ। हमें आप अपने भरोसे छोड़ दीजिए। मैं नहीं समझता कि आज जो-कुछ हो रहा है, एक पूरा जनसमुद्र जिस प्रकार एक छोटे-से राष्ट्रके कदमोंपर पड़ा है, तब उससे भी कुछ बुरा हो सकेगा।

और आपके सिपाहियोंकी जानोंके लिए जिम्मेदार होनेकी क्या बात चलती है? अगर मैं सभी विदेशियोंके लिए भारतकी सेनामें भरती होनेकी सूचना जारी

करता हूँ और अगर कुछ अंग्रेज भी सेनामे भरती हो जाते है तो क्या आप उन्हे रोक लेगे ? अगर वे भरती होगे तो उनकी जानके लिए जिम्मेदार हमे होना चाहिए — उसी प्रकार जिस प्रकार कोई और सरकार, जिसकी वे सेवा करेगे, जिम्मेदार होगी। निस्सन्देह स्वशासनकी कुजी सेनापर अपना नियन्त्रण है।

जहाँतक सर्वसम्मत माँगका सम्बन्ध है, मुझे फिर वही बात कहनी होगी जो मै पहले भी कई बार कह चुका हूँ — अर्थात् यह कि ऐसी परिषद्से सर्वसम्मत माँगकी आशा ही नही रखी जा सकती जिसके सदस्य सरकार द्वारा जहाँ-तहाँसे उठाकर भर दिये गये हो। मेरा कहना यह है कि काग्रेस सबसे अधिक भारतीयोका प्रतिनिधित्व करती है। ब्रिटिश मन्त्री इस बातको जानते है। अगर वे इस बातको नही जानते तो मुझे स्वदेश वापस जाकर जितना सम्भव होगा उतना जबरदस्त लोकमत तैयार करना होगा। हमने प्राणोका मोह छोडकर एक लडाई लडी। एक अत्यन्त नेक अंग्रेजने[1] हमारी परीक्षा ली और पाया कि हम खोटे नही है। फलतः उन्होने जेलोके दरवाजे खोल दिये और काग्रेससे गोलमेज परिषद्मे जानेका अनुरोध किया। हमारे बीच लम्बी बातचीत हुई, समझौतेके लिए सुदीर्घ वार्त्ताएँ हुई। इस सबके दौरान हमने अधिकसे-अधिक धैर्यसे काम लिया और अन्तमे एक समझौता हुआ जिसके तहत काग्रेस गोलमेज परिषद्मे अपना प्रतिनिधि भेजनेपर सहमत हो गई। मगर सरकारने इस समझौतेके पालनकी अपेक्षा उसका उल्लघन ही ज्यादा किया। मै बडी हिचकिचाहटके बाद यहाँ आनेको राजी हुआ — और किसी कारण नही तो कमसे-कम उस अंग्रेजको दिये अपने वचनके पालनका खयाल करके ही। यहाँ आकर मै देखता हूँ कि भारत तथा काग्रेसके विरुद्ध खडी ताकतोका मैने गलत अन्दाजा लगाया था। लेकिन इससे मै निराश नही हूँ। मुझे वापस जाकर अपने-आपको इस कामके योग्य बनाना है और कष्ट-सहनके जरिये यह सिद्ध करना है कि वास्तवमे सारा देश उस चीजको चाहता है जिसकी वह माँग कर रहा है। हटरने कहा है कि रणभूमिमे सफलता प्राप्त करना सत्ता हस्तगत करनेका सबसे जल्दीका तरीका है। तो हमने भी एक अलग तरहकी रणभूमिमे सफलता प्राप्त करनेके लिए काम किया। इस रणभूमिमे मै आपके शरीरके बजाय आपके हृदयको स्पर्श करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। अगर मै इस बार सफल नहीं हुआ तो अगली बार सही।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१. भारतके वाइसराय लार्ड इर्विन

१५१. प्रश्नोत्तर[1]

ऑक्सफोर्ड
२४ अक्टूबर, १९३१

प्र० : आप भारतको साम्राज्यसे कहाँतक अलग करना चाहेंगे ?

उ० : साम्राज्यसे तो पूरी तरह. लेकिन अगर मैं भारतको नुकसान नहीं, लाभ पहुँचाना चाहता हूँ तो ब्रिटिश राष्ट्रसे बिलकुल नहीं। ब्रिटिश साम्राज्य साम्राज्य है तो केवल भारतके कारण ही। यह सम्राट्शाही खत्म होनी चाहिए, और मैं ब्रिटेनका बराबरीका साझेदार, ऐसा साझेदार होना बहुत पसन्द करूँगा जो उसके सुख-दु:खका हिस्सेदार होगा और सभी उपनिवेशोंका भी साझेदार होगा। लेकिन इसे बराबरीकी शर्तोंपर आधारित साझेदारी होनी चाहिए।

प्र० : भारत किस हदतक इंग्लैंडके सुख-दुःखका साथी होगा ?

उ० : पूरा-पूरा।

प्र० : क्या आप ऐसा समझते हैं कि भारत अपने भाग्यको इंग्लैंडके साथ अभिन्न रूपसे जोड़ लेगा ?

उ० : हाँ, जबतक वह इंग्लैंडका साझेदार रहता है। लेकिन जिस क्षण वह देखेगा कि यह साझेदारी एक बहुत बड़े फरीक और एक बौने फरीकके बीचकी साझेदारी है, या अगर इसका उपयोग दुनियाकी दूसरी जातियोंके शोषणके लिए किया जायेगा तो उसी क्षण वह उस साझेदारीको समाप्त कर देगा। उद्देश्य दुनियाके सभी राष्ट्रोंका समान रूपसे हित-साधन करना है और अगर यह उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता तो पैवन्द लगाकर कोई अवास्तविक साझेदारी कायम करनेकी अपेक्षा युगों-तक प्रतीक्षा करते रहना मैं ज्यादा पसन्द करूँगा।

प्र० : किसी देशका शोषण किया जा रहा है या उसके साथ केवल व्यापार किया जा रहा है, आप यह कैसे तय करेंगे ?

उ० : इसके लिए दो कसौटियाँ हैं: (१) दूसरे राष्ट्रको हमारा माल खरीदने की इच्छा होनी चाहिए और वह माल उसपर उसकी इच्छाके विरुद्ध थोप न दिया जाये; (२) व्यापारके पीछे नौसेनाका बल नहीं होना चाहिए। और इस सम्बन्धमें मैं यह भी कह दूँ कि जब आपको महसूस हो जायेगा कि भारत-जैसे राष्ट्रोंके साथ इग्लैंडने कैसा अन्याय किया है तो "ब्रिटैनिया रूल्स द वेव्ज"वाला गीत आप गर्व-पूर्वक नहीं गायेंगे। आज अंग्रेजी पाठ्य पुस्तकोंमें जो बातें गौरव करने लायक मानी

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईटन और ऑक्सफोर्डमें सप्ताहान्त : भावी साम्राज्य-निर्माताओंके बीच" से उद्धृत। ये प्रश्न रेले क्लबमें हुई बातचीतके अन्तमें पूछे गये थे।

जाती है उन्हे तब लज्जाजनक मानना पडेगा और आपको दूसरे देशोकी पराजय या अपमानपर गर्वका अनुभव करना छोडना होगा।

प्र० : साम्प्रदायिक प्रश्नपर ब्रिटेनका रवैया किस हदतक आपके मार्गमें बाधक है?

उ०. बहुत हदतक या कहना चाहिए कि आधा-आधा। फूट डालो और राज्य करोवाली नीति, जाने-अनजाने, भारतकी तरह यहाँ भी काम करती रही है। ब्रिटिश अफसरोने कभी इस पक्षको रिझाया-फुसलाया है तो कभी उस पक्षको। बेशक अगर मै ब्रिटिश अफसर होता तो शायद मै भी वही करता और ब्रिटिश शासनको मजबूत करनेके लिए उनकी आपसी फूटका लाभ उठाता। हमारा दोष यह है कि हम आसानीसे उनकी चालमे आ जाते है।

प्र० : क्या आप ऐसा समझते है कि ब्रिटिश सरकारको साम्प्रदायिक समस्याका कोई हल सुझाना चाहिए?

उ० नही। लेकिन 'न' कहनेवाला पक्ष केवल मै ही हूँ। यह बहुत अपमानजनक बात है और न काग्रेस और न मै ही इसमे सहमति दे सकता हूँ। भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकारोके खरीतोमे सरकारकी ओरसे कुछ बाते स्वीकार की गई है, हालाँकि सरकारके सुझाये सभी हलोपर राजनीतिक उद्देश्योका रग चढा हुआ है। जहाँतक हम सबका सम्बन्ध है, करनेको तो सभी पक्ष न्यायकी बात करते है, किन्तु पच-फैसलेके नामसे उन्हे डर लगता है। इससे प्रकट होता है कि अपना-अपना मत-लब साधनेकी चाल खूब चली जा रही है और कौन सही है, कौन गलत है, इस सम्बन्धमे परिमाणका ही भेद है। न्यायाधिकरणपर बखूबी ऐसा भरोसा किया जा सकता है कि वह विभिन्न दावोके प्रति न्याय करेगा।

प्र० : उस न्यायाधिकरणमें कैसे लोग होने चाहिए, इस सम्बन्धमें क्या आप कुछ बतायेंगे?

उ०. वे भारतीय उच्च न्यायालयके गैर-हिन्दू और गैर-मुसलमान न्यायाधीश हो सकते है या फिर प्रिवी कौसिलकी न्यायिक समितिके न्यायाधीश।

प्र० : क्या उनका निर्णय स्वीकार किया जायेगा?

उ०. न्यायालयके निर्णयको स्वीकार करनेके बारेमे किसी तरहके सवालकी गुजाइश ही नही हो सकती। मै यह स्वीकार करता हूँ कि आपके इस सवालके पीछे कुछ चाल भी है। अगर सरकार न्यायका व्यवहार करे और मेरा सुझाव स्वीकार कर ले तो सारी फिजा ही बदल जाये और न्यायिक समितिकी नियुक्तिसे पूर्व ही सभी समुदाय कोई समाधान ढूँढ ले। कारण, अबतक जितनी प्रगति हुई है, उसमे ऐसा बहुत-कुछ है जिससे राजनीतिक दृष्टिकोण रखनेवालोको सतुष्ट किया जा सकता है, और फिर अपने-अपने दावोकी कमजोरियाँ तो सबको मालूम ही है।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१५२. प्रश्नोत्तर[1]

[२४ अक्टूबर, १९३१ या उसके पश्चात्][2]

प्र० : हिन्दू संयुक्त निर्वाचक-मण्डल क्यो चाहते है?

उ० : इसलिए कि वे मूर्ख है। मुसलमानोको तत्काल पृथक् निर्वाचक-मण्डल देकर वे उनकी बोलती बन्द कर सकते है और उन्हे यह सोचनेकी स्थितिमे डाल सकते है कि पृथक् निर्वाचक-मण्डलमें कही कुछ अमगलकारी बात तो नहीं छिपी हुई है।

प्र० : शराब पीनेवालोंके प्रति आप इतने अनुदार क्यो है?

उ० : क्योकि इस अभिशापके परिमाणस्वरूप कष्ट भोगनेवालोके लिए मेरे दिलमें दर्द है।

प्र० : क्या आपको क्रोध भी आता है?[3]

उ० : आप श्रीमती गाधीसे पूछकर देखिए। वे आपको यही बतायेंगी कि दूसरोके साथ तो मेरा व्यवहार सौजन्यपूर्ण होता है, लेकिन उनके साथ नही।

मेरे साथ तो मेरे पतिका व्यवहार बहुत अच्छा होता है।

निश्चय ही श्री माइल्सने आपको कुछ घूस दी है।

प्र० : चरखा क्या मध्ययुगीन चीज नहीं है?

उ० . मध्य-कालमें हम बहुतसे ऐसे काम करते थे जो बडे समझदारी-भरे थे। लेकिन अगर हममे से अधिकाशने आज उन्हे छोड़ दिया है तो मेरी इस समझदारीको आप मेरा अपराध क्यो मानते है? वह औजार चाहे जितना मध्यकालीन हो, उसके बलपर दीनहीन ग्रामवासियोकी आयमें पचास प्रतिशतकी वृद्धि करके मुझे किसी प्रकारकी लज्जाका अनुभव नही होता। युद्धके दौरान आप आलू पैदा करते थे और लीसियम क्लबकी फैशनपरस्त स्त्रियोने पुरुषोको सिपाहियोके लिए सीधी-सादी सुई और धागेसे सोनेकी पोशाकें तैयार करनेको आमन्त्रित किया था। क्या यह काम मध्यकालीन नही था? मैंने यह मध्यकालीन उपाय लीसियम क्लबकी महिलाओसे ही सीखा।

प्र० : स्वराज्यके मार्गमें मुख्य बाधा क्या है?

उ० : सत्ता त्यागनेकी ब्रिटिश अधिकारियोकी अनिच्छा; या अनिच्छुक लोगोसे सत्ता छीननेकी हमारी असमर्थता। आपको मैंने प्रत्याशित उत्तर नही दिया, इससे

१. महादेव देसाईके "लण्डन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत।

२. यहाँ महादेव देसाईने अलग-अलग तारीखोंपर अलग-अलग लोगोंसे हुई गाधीजी की बातचीतको एक साथ मिलाकर दिया है। लेकिन वे कहते है कि पहला सवाल ऑक्सफोर्डके कुछ विद्यार्थियोंने पूछा था। गाधीजी ऑक्सफोर्डमें २४ अक्टूबरको थे।

३. यह प्रश्न श्रीमती यूस्टेस माइल्सने पूछा था।

आपको दुःख हुआ होगा। मैं चाहता हूँ आप इस बातको समझ ले कि हम अपनी एकताके अभावके बावजूद आपसे सत्ता छीन सकते है, और जो हाथ आज सत्ता देनेको अनिच्छुक है, वे अगर उसके लिए तैयार हो जाये तो हमारे ये मतभेद भी मिट जायेगे। आप कहते है कि ब्रिटेनवाले तो निष्पक्ष प्रेक्षक-मात्र है। मैने भारत सरकारपर हमारे राष्ट्र-रूपी अगके बीच पच्चर होने और ब्रिटिश सरकारपर परिषद्के लिए मनमाने ढगसे जैसे-तैसे लोगोको प्रतिनिधि नामजद कर लेनेका आरोप लगानेकी धृष्टता की है। साम्प्रदायिक समस्याका हमारा अपना एक समाधान है, जो काग्रेसने प्रबुद्ध मुसलमानोके साथ ढूँढ निकाला है। लेकिन अगर कुछ मुसलमान, जो अपने पक्षमे मुस्लिम बहुमत होनेका दावा करते है, सन्तुष्ट नही है और उसके कारण अगर सरकार यह कहती है कि उसने हमे जो बेड़ियाँ पहना रखी है, उन्हे वह नही उतारेगी तो मै कहता हूँ कि हम उन बेडियो और अपनी इस फूट दोनोसे छुटकारा पानेके लिए एक साथ प्रहार करेगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

१५३. पत्र : मिर्जा इस्माइलको[1]

[२४ अक्टूबर, १९३१के पश्चात्][2]

प्रिय सर मिर्जा,

कतरनके[3] लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। इसे मै पढ गया हूँ। मुझे आशा है कि डॉ० अम्बेडकरको आप अपनी बात समझानेमे सफल होगे। ऑक्सफोर्डमे हुमायूँसे मिलकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई। इच्छा हो रही है कि उसके साथ कुछ देर और रहता।

आपका,

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-५) से।

१. यह मिर्जा इस्माइलके बिना तारीखके उस पुर्जेके उत्तरमें लिखा गया था जिसमें उन्होंने कहा था: "मेरा अनुरोध है कि आप इस कतरनको पढ़ें, विशेषकर उस पैरेको जिसपर मैंने निशान लगा दिया है। इसे पढकर लौटा दें तो कृपा हो। इसे मैं डॉ० अम्बेडकर तथा कुछ अन्य लोगोंको, मैं जो-कुछ कहता आया हूँ उसे सिद्ध करनेके लिए, दिखाना चाहता हूँ।"

२. ऑक्सफोर्ड जानेके उल्लेखसे।

३. यह उपलब्ध नहीं है।

१५४. पत्र : मणिबहन पटेलको

२६ अक्टूबर, १९३१

चि० मणि,

तुम्हारे पत्र मिलते रहते हैं। मेरा जवाब नहीं मिलता इससे लिखना बन्द न कर देना। आजकल मुझे पत्र लिखनेका समय ही नहीं मिलता। आज परिषद्की बैठकमें ही थोडा समय मिल गया है, उसीका उपयोग कर रहा हूँ।

डाह्याभाईकी तबीयत अच्छी हो गई है, यह पढकर प्रसन्नता हुई। उससे और यशोदासे मेरा आशीर्वाद कहना।

लक्ष्मीदास[1] और मजुबहनसे[2] पत्र लिखनेको कहना। मैं मानता हूँ अभी कमसे-कम एक और डाक तो मुझे इंग्लैडमें मिल ही सकती है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-४: मणिबहेन पटेलने, पृ० ७९-८०

१५५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

लन्दन
२६ अक्टूबर, १९३१

भाई वल्लभभाई,

पत्र लिखनेका समय ही नहीं मिलता। आज भी संघ-संरचना समितिमें बैठा लिख रहा हूँ। तुम्हें नाकका इलाज करा ही लेना चाहिए। यहाँ मेरा सब काम परिषद्के बाहर ही होता है। भले ही तत्काल इसका कोई नतीजा न निकले, लेकिन मैं मानता हूँ, बादमें इसके बहुत अच्छे नतीजे निकलेंगे। यहाँसे कुछ लेकर आनेकी आशा कम ही है। परन्तु नाक कटाकर नहीं आऊँगा। बहुत-से जिम्मेदार आदमियोंसे मिल रहा हूँ।

नवम्बरके मध्यमें परिषद्का काम पूरा हो जानेकी सम्भावना है। लगभग पूरे यूरोपसे निमन्त्रण मिले हैं। इन देशोंमें जानेकी हार्दिक इच्छा है। मैं समझता हूँ, जानेसे लाभ ही होगा। सबसे मिलकर अपना निर्णय तार द्वारा सूचित करो। अगर मेरा उन देशोंका दौरा करना जरूरी मानो तो समझ लो कि मुझे एक महीना और

१. लक्ष्मीदास आसर।
२. मजुबहन मशरूवाला।

लगेगा। इसलिए मै वहाँ जनवरीमे ही पहुँच सकूँगा। (इतना लिखनेके बाद मै कुर्सीपर ही ऊँघने लगा। लिखावटसे तुम देख सकते हो कि कलम आगे नही चली।) अगर इतना वक्त दे सको तो दो। वहाँ तो तुम्हे जो ठीक लगे, करो। जवाहरलाल के तारका जवाव[1] तो तुमने देख लिया होगा। यहाँ कुछ भी हो, मेरा यह निश्चित मत है कि वहाँ जब किसी भी प्रश्नपर सरकारसे लडना जरूरी लगे तब जरूर लड़ो। वहाँके प्रश्नोके बारेमे अभी यहाँ कुछ भी हो सकेगा, ऐसा मुझे नही दीखता। सोचा था कि बगालके नजरबन्दोके लिए कुछ हो सकेगा, मगर मुझे कुछ करनेका अवसर ही नही मिला। कह नही सकता कि चुनावके बाद कुछ हो सकेगा या नही।

मै देख रहा हूँ कि गुजरातमे सत्ताधारी लोग सब काम समझौतेसे उलटा ही कर रहे है। इन सब फैसलोके खिलाफ लडो। रासके बारेमें जो उत्तर आया है, उसे मै उद्धततासे भरा हुआ मानता हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि इन तमाम मामलोके सम्बन्धमे हम सरकारसे सफलतापूर्वक निबट लेगे।

मै समझता हूँ, अब मैने काफी लिख दिया।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो - २ : सरदार वल्लभभाईने, पृष्ठ १५-१६

१५६. पत्र : लेडी ईव क्रिररको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
२७ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रका उत्तर देनेमे इतना विलम्ब हो जानेके लिए मै क्षमा चाहता हूँ। बात यह है कि मेरे पास काम बहुत ज्यादा हो गया है और आपका पत्र उत्तर देनेके लिए बाकी बचे पत्रोके ढेरमे पडा रहा। आज उसे निकाला। अब आपको हस्ताक्षर-युक्त कार्ड भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

लेडी ईव क्रिरर
क्लॉन्स्कीग
राँदरफील्ड
ससेक्स

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१८४) से।

१. देखिए "तार : जवाहरलाल नेहरूको", १६-१०-१९३१ या उसके पश्चात्।

१५७. पत्र : एवलिन रेंचको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
२७ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। स्पष्ट है कि आपको पत्र लिखनेवाले भाईने चीजको ठीकसे समझा नही। काग्रेस नरम दल ही है। बहुत ज्यादाकी माँग नहीं की जा रही है। 'स्वतन्त्रता' माँगना तो बहुत ज्यादाकी माँग करना नहीं है। यह तो आत्म-सम्मानपूर्ण, तर्क-सम्मत और सर्वथा सगत माँग ही है। नरमी तरीकेमे है। काग्रेस किसी भी प्रकारकी हिंसाको त्याज्य मानती है। निस्सन्देह भारतमे एक ऐसा दल है जो स्वतन्त्रता नही चाहता, क्योकि उसे स्वतन्त्रतासे भय लगता है। लेकिन यह तो उनकी मनोरचनाका दोष है। जो उस रोगसे ग्रस्त नही है, वे स्वभावत उस चीजको चाहते हैं, जिसके लिए उनका मन व्याकुल है। इसे कोई भी बहुत ज्यादाकी लालसा करना नही कहेगा, और न जिस आदमीकी क्षुधा तीव्र है उससे उस चीजसे सन्तुष्ट हो जानेकी अपेक्षा की जायेगी जो ऐसे व्यक्तिको सतुष्ट करती हो जिसकी क्षुधा बिलकुल जाती रही है।

और उस मित्रका इस तरहकी बात करना भी गलत है कि इग्लैंडके त्यागका जवाब भारत भी समान त्यागके द्वारा दे। यहाँ मुझे डॉ० चामर्सका एक बडा ही महत्त्वपूर्ण वाक्य स्मरण हो आता है: "[ऋण-परिशोधके] कर्त्तव्यको उदारता तभी माना जा सकता है जब दाता यह मान ले कि उसने जो ऋण दिया वह दान था।" मै मानता हूँ कि इग्लैंडने भारतसे उसका जो-कुछ छीन लिया है, उसे वह सब लौटा देना उसका कर्त्तव्य है। दायित्वके निर्वाहमे त्यागकी बात कहाँ आती है? लेकिन जबतक इग्लैंड यह मानता है कि वह भारतको जितनी भी स्वतन्त्रता देगा वह उसका त्याग होगा, तबतक दोनो देशोके मेलजोलके लिए कोई आधार नहीं बन सकता, क्योकि उस हालतमे इग्लैंड, भारतका उसपर जो ऋण है, उसका मार्जन नही कर सकेगा।

कह नही सकता कि मै अपना आशय स्पष्ट कर पाया या नही, न कर पाया होऊँ तो आप अपनी शका बतायेंगे। मै फिर उसके समाधानकी कोशिश करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री एवलिन रेंच
९९, गोवर स्ट्रीट, डब्ल्यू० सी० १

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१८१) से।

१५८. पत्र : ए० कार्लाइल वाल्शको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
२७ अक्टूबर, १९३१

प्रिय मित्र,

देखता हूँ, आपके स्वर्गीय पिताकी लिखी पुस्तिकाओंकी[1] प्राप्ति पहले ही सूचित की जा चुकी है। पिछले वर्ष जब मैं जेलमे था, तभी आपके पिताके भारत-प्रेमके बारेमें सुना था।

यद्यपि अब बहुत देर हो चुकी है, फिर भी मैं आपकी माताजी के प्रति आदर-पूर्वक अपनी समवेदना प्रकट करना चाहूँगा। अगर आप मुझसे मिलनेका समय निकाल सकें — मसलन अगले मगलवारको उपर्युक्त पतेपर सुबहके ९ और ९-३० के बीच — तो आपसे मिलना चाहूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री ए० कार्लाइल वाल्श
नॉर्दम
एथनिअम रोड
व्हेटस्टोन, एन० २०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१८२) से।

१५९. मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा[2]

[२८ अक्टूबर, १९३१के आसपास][3]

इससे काम नही चलेगा। मसविदेका सम्बन्ध अन्य बातोसे भी है। आवश्यकता इस बातकी है कि सभी मामले एक पूर्णरूपेण उत्तरदायी मन्त्रि-मण्डलके अधीन होने चाहिए।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-४) से।

१. कार्लाइल वाल्शके पिता वाल्टर वाल्शकी लिखी पुस्तिकाओंमें एक गांधी एण्ड फ्री इंडिया, थी।

२. यह मिर्जा इस्माइलके भेजे निम्नलिखित पुर्जेपर लिखा हुआ था: "संक्रमण कालमें सेना तथा विदेशी मामलोंके सम्बन्धमें जो शर्तें और बन्धन भारतके हितमें आवश्यक हों, उनकी व्यवस्था किये जानेकी शर्तोंपर मुसलमान भारतके लिए पूर्ण स्वराज्यकी माँग करनेमें पूरा सहयोग देंगे। सुरक्षित मामलोंके अतिरिक्त सभी मामले विधान-मण्डलके प्रति उत्तरदायी मन्त्रि-मण्डलके अधीन होंगे।"

३. ठीक तारीख मालूम नही हो पाई है। लेकिन, संभवत· इसके और अगले शीर्षकके लेखनका समय प्राय. एक ही रहा होगा।

१६०. पत्र : मिर्जा इस्माइलको

[२८ अक्टूबर, १९३१के आसपास][1]

प्रिय सर मिर्जा,

आपका मसविदा दोषपूर्ण है। मेरा तैयार किया मसविदा उन लोगोंके पास ही है। वह इस प्रकार है:

१. पूर्ण स्वराज्य, जिसमें स्वेच्छा और पूर्ण समानताके सिद्धान्तपर आधारित साझेदारीकी भी गुंजाइश है।

२. इसलिए पूर्ण स्वराज्यमें प्रतिरक्षा सेनाओं, विदेशी मामलों और वित्तपर पूर्ण नियन्त्रण भी शामिल है।

३. विशेष आरक्षण या पृथक् निर्वाचक-मण्डलके क्षेत्रमें हर प्रकारके विस्तारका विरोध।

मेरा खयाल है, मसविदेमें यही बातें कही गई हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-२) से।

१६१. पत्र : अम्तुस्सलामको

२८ अक्टूबर, १९३१

प्रिय अम्तुल,

तुम्हारे पत्र मिलते रहे हैं। लेकिन आश्रमवासियों और दूसरोंके सभी पत्रोंके उत्तर मैं नहीं दे पाया हूँ। मुझे समय नहीं मिल पाता। मैं तुम्हें सविस्तार उत्तर नहीं दे सकता। तुम्हें आवश्यकताके अनुसार दवाई और डाक्टरी सलाह लेनी चाहिए। तुम्हें जल्दी ही अच्छा हो जाना चाहिए। अधिक मत सोचो। सभी बातोंमें केवल ईश्वरपर विश्वास रखो।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २४७) से।

१. इस पत्रमें उल्लिखित मसविदेके बाद मिर्जा इस्माइलने एक और मसविदा भेजा था, जिसे गांधीजी ने ठीक बताया, देखिए "मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा", २८-१०-१९३१ या उसके पश्चात्। इससे जान पड़ता है कि यह पत्र २८-१०-१९३१ के पूर्व ही लिखा गया होगा।

१६२. पत्र : सर हेनरी एस० लॉरेन्सको

८८, नाइट्सब्रिज
दक्षिण पश्चिम १
२८ अक्टूबर, १९३१

प्रिय सर हेनरी,

आपके कृपापत्रके लिए धन्यवाद। जहाँतक कांग्रेसका सम्बन्ध है, महिलाओंके मताधिकारके प्रश्नके बारेमे उसकी नीति बिलकुल स्पष्ट है। उन्हे बिना किसी प्रतिबन्धके पुरुषोंके समान अधिकार मिलने चाहिए। आपने जिन अन्य मुद्दोंका उल्लेख किया है, उन सबपर मैं आपसे सहमत हूँ। बडी इच्छा हो रही है कि आपका निमन्त्रण स्वीकार कर आपका आतिथ्य प्राप्त करूँ। लेकिन जहाँतक अभी देख पाता हूँ, इसका मौका नजर नही आता।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१९७) से।

१६३. भाषण : मॉण्टेसरी ट्रेनिंग कॉलेजमें[1]

लन्दन
[२८ अक्टूबर, १९३१][2]

मदाम,

आपने मुझे अपनी बातोसे[3] अभिभूत कर दिया है। मुझे अत्यन्त नम्रतापूर्वक यह स्वीकार करना चाहिए कि आपका यह कहना सर्वथा सत्य है कि कितना ही अधूरा क्यो न हो, मै अपने अस्तित्वके एक-एक अंशमे प्रेम प्रकट करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। मै अपने स्रष्टाका, जो मेरी दृष्टिमे सत्य-रूप है, साक्षात्कार करनेके लिए अधीर हूँ और अपने जीवनके आरम्भमे ही मैंने यह शोध कर ली थी कि यदि मुझे सत्यका साक्षात्कार करना हो, तो अपने जीवनको खतरेमे डालकर भी मुझे धर्मका पालन करना चाहिए। और ईश्वरने मुझे बच्चे दिये है, इससे मै यह शोध भी कर सका कि प्रेम-धर्म तो बच्चोके जरिये ही सबसे अच्छी तरह सीखा और समझा जा सकता है। यदि हम लोग — उनके बेचारे अज्ञानी माता-पिता — बाधक न होते तो बच्चे पूर्ण

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "मॉण्टेसरी ट्रेनिंग कॉलिजमें" से उद्धृत।

२. गाधीजी की डायरीके अनुसार वे इसी तारीखको मॉण्टेसरी ट्रेनिंग कॉलेज गये थे।

३. मदाम मॉण्टेसरीने गाधीजी का स्वागत करते हुए कहा था, "हम आपका स्वागत मनुष्यके रूपमें नही, एक आत्माके रूपमें करते है।"

रूपसे निष्कलुष ही रहते। मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि बच्चा जन्मसे शरारती — बुरे अर्थोंमें शरारती — नहीं होता। यह तो सभी जानते हैं कि बच्चेके विकास-कालमें, जब वह मांके उदरमें रहता है तब और फिर उसके जन्म लेनेके बाद, यदि माता-पिता शुद्धाचारका पालन करें तो बच्चे स्वभावसे ही सत्य और अहिंसाका पालन करेंगे। और अपने जीवनके आरम्भ-कालमें ही जब मुझे यह बात मालूम हुई, तभीसे मैंने जीवनमें धीरे-धीरे किन्तु सुस्पष्ट हेरफेर करना शुरू कर दिया।

मेरा जीवन कितने और कैसे-कैसे तूफानोंमें से होकर गुजरा है, मैं यहाँ उसकी चर्चा नहीं करना चाहता। किन्तु मैं सचमुच पूरी नम्रतासे इस बातकी साक्षी भर सकता हूँ कि जितने अंशमें मैंने मन, वचन और कर्मसे प्रेम प्रकट किया, उतने ही अंशोंमें मैंने "ऐसी शान्तिका अनुभव किया है जिसे 'अगम' कहा गया है।" मुझमें यह ईर्ष्या-योग्य शान्ति देखकर मेरे कई मित्र हैरान हुए हैं और उन्होंने मुझसे यह जानना चाहा है कि यह अमूल्य निधि मुझे कैसे प्राप्त हुई। मैं इस सम्बन्धमें उन्हें इससे अधिक कुछ नहीं बता सका कि यदि मित्रोंको मुझमें इतनी शान्ति दिखाई देती है, तो उसका कारण हमारे जीवनके सबसे महान् नियमका पालन करनेका मेरा प्रयत्न है।

जब सन् १९१५ में मैं भारत पहुँचा, पहले-पहले तभी मुझे आपके कार्योंका पता चला। अमरेलीमें मैंने मॉण्टेसरी प्रणालीपर चलनेवाली एक छोटी पाठशाला देखी। उससे पहले मैं आपका नाम सुन चुका था। मुझे यह जाननेमें जरा भी कठिनाई न हुई कि यह पाठशाला आपकी शिक्षण-पद्धतिके सिर्फ ढाँचेका ही अनुसरण करती थी, तत्त्वका नहीं; और यद्यपि वहाँ थोड़ा-बहुत प्रामाणिक प्रयत्न भी किया जा रहा था, किन्तु साथ ही मैंने देखा कि दिखावा ही अधिक था।

इसके बाद तो मैं ऐसी अनेक पाठशालाओंके सम्पर्कमें आया और जितना अधिक सम्पर्कमें आया, उतना ही अधिक यह समझने लगा कि बच्चोंको यदि प्रकृतिके नियमोंके अनुसार — प्रकृतिके उन नियमोंके अनुसार नहीं जो पशु-जगत्के लिए हैं बल्कि उन नियमोंके अनुसार जो मनुष्यके गौरवके अनुरूप हैं — शिक्षा दी जाये तो उसका आधार भव्य और सुन्दर है। बच्चोंको जिस प्रकार शिक्षा दी जाती थी, उससे मुझे सहज ही ऐसा प्रतीत हुआ कि यद्यपि उन्हें अच्छी तरह शिक्षा नहीं दी जाती, फिर भी उसकी मूल पद्धतिकी अवधारणा तो इन आधारभूत नियमोंके अनुसार ही की गई थी। इसके बाद तो मुझे आपके अनेक शिष्योंसे मिलनेका सुअवसर प्राप्त हुआ। उनमें से एकने इटलीकी यात्रा भी की थी और व्यक्तिगत रूपसे आपका आशीर्वाद भी प्राप्त किया था। मैं इन बच्चों और आप सबसे यहाँ मिलनेकी आशा मनमें सँजोये हुए था और इन बच्चोंको देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। इन बच्चोंके सम्बन्धमें मैंने कुछ जाननेका भी प्रयत्न किया है। यहाँ मैंने जो-कुछ देखा है, उसकी एक झलक बर्मिघममें भी दिखाई दी थी। वहाँ एक पाठशाला है। इस शालामें और उसमें एक अन्तर है। किन्तु वहाँ भी मैंने देखा कि मानव-प्रकृतिको प्रकाशमें लानेका प्रयत्न किया जा रहा है। यहाँ भी मैं वही देखता हूँ। यहाँ छुटपनसे ही बच्चोंको

मौनका गुण समझाया जाता है और अपने शिक्षकके सकेत-मात्रसे, सुई गिरे तो उस-तककी आवाज सुनाई दे जाये, इतनी शान्तिसे किस तरह एकके पीछे एक बच्चा सामने आया, यह देखकर मुझे अनिर्वचनीय आनन्द हुआ। उनकी सारी चेष्टाओमे एक तालबद्धता थी, जिसे देखकर मुझे बडी खुशी हुई और जब मै उनकी इन चेष्टाओको देख रहा था उस समय मेरा मन भारतके अर्ध-बुभुक्षित गाँवोके करोडो बच्चोकी ओर चला गया और मनमे उनका खयाल करते हुए मैने स्वय अपनेसे यह प्रश्न पूछा, "जो बाते आपकी प्रणालीके अन्तर्गत सिखाई जा रही है और जो शिक्षा दी जा रही है, वे बाते उन्हे सिखाना और वह शिक्षा उन्हे देना क्या सम्भव होगा?" भारतके गरीबसे-गरीब बालकोमे हम एक प्रयोग कर रहे है। वह कहाँतक सफल होगा, मै नही जानता। भारतके झोपडोमे रहनेवाले बालकोको सच्ची और जीवन-दायिनी शिक्षा देनेका प्रश्न हमारे सामने है, और हमारे पास कोई भौतिक साधन नही है।

हमे तो शिक्षक त्याग-भावसे जितनी सहायता दे सकते है उसीपर निर्भर रहना पडता है। लेकिन जब मै शिक्षकोकी तलाश करता हूँ तो बहुत कम शिक्षक मिल पाते है——खासकर उस ढगके शिक्षक जिस ढगके शिक्षक बच्चोको ठीकसे समझकर, उनकी व्यक्तिगत विशेषताओका अध्ययन करके उन्हे अपनी ही शक्तिपर इस तरह भरोसा करना सिखाकर मानो यह उनके लिए आनकी बात हो गई हो, उनमे जो अच्छेसे-अच्छे गुण हो, उनको निखार सके। और आप सच मानिए कि मै सैकडो बच्चो——बल्कि मै तो कहने जा रहा था कि हजारो बच्चो——के अपने अनुभवसे जानता हूँ कि उनमे अपनी आनके प्रति शायद उससे भी अच्छी जागरूकता है जितनी आपमे या मुझमे है। अगर हम तनिक झुके और विनम्रतासे काम ले तो जीवनके सबसे बडे सबक ज्ञानी वयस्कोसे नही, बल्कि अज्ञानी बच्चोसे ही सीख सकते है। ईसा मसीहके मुँहसे जो सबसे ऊँचा या भव्य सत्य नि.सृत हुआ वह यही था कि सच्ची बुद्धिमत्ताकी बाते केवल बच्चेके मुँहसे निकलती है। मैने इस बातको लक्षित किया है और स्वय अनुभवसे भी जाना है कि अगर हम बच्चोके पास नम्रतापूर्वक और निर्दोष भावसे जाये तो उनसे हमे सच्ची बुद्धिमत्ताकी शिक्षा मिलेगी।

मुझे आपका और समय नही लेना चाहिए। इस समय जो चीज मेरे मानसको मथ रही है, मैने तो वही आपको बताई है। मेरा मतलब मानवीय दृष्टिसे इस बहुत ही नाजुक सवाल से है कि अभी मैने आपके सामने जिनकी चर्चा की, उन करोडो बच्चोके अच्छेसे-अच्छे गुणोको कैसे निखारा जाये। लेकिन मैने यह पाठ अवश्य सीखा है कि जो चीज मनुष्यके लिए असम्भव है, वही ईश्वरके लिए बच्चोके खेलके समान आसान है, और अगर उस विधातापर हमारी श्रद्धा है जो अपनी सृष्टिकी तुच्छतम वस्तुका भी नियन्ता है, तो मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि सब कुछ सम्भव है और इसी अन्तिम आशाके बलपर मै जीता हूँ और अपना समय व्यतीत करता हूँ तथा उसकी इच्छाका पालन करनेकी कोशिश करता हूँ। इसलिए मै फिर कहता हूँ कि जिस प्रकार आप बच्चोंके प्रति अपने प्रेमसे प्रेरित होकर अपनी

इतनी सारी संस्थाओके जरिये उन्हे वह शिक्षा देनेकी कोशिश कर रही हैं जो उनके अच्छेसे-अच्छे गुणोको निखार सकती है, मै आशा करता हूँ कि उसी प्रकार न केवल धनी और सम्पन्न लोगोके बच्चोके लिए, बल्कि गरीबोंके बच्चोके लिए भी उस ढगकी शिक्षा प्राप्त करना सम्भव होगा। आपने बिलकुल ठीक कहा है कि अगर हमें दुनियामे सच्ची शान्ति स्थापित करनी है और युद्धके खिलाफ सच्चा सघर्ष जारी रखना है तो हमे शुरुआत बच्चोसे ही करनी होगी और अगर उनका विकास उनकी नैसर्गिक निष्कलुताके वातावरणमे होगा तो हमारे बीच न कोई सघर्ष होगा, और न हमे निरर्थक प्रस्ताव पास करने पडेंगे, बल्कि हम प्रेम और शान्तिकी एकके-बाद दूसरी मजिल तय करते जायेंगे और अन्तमे दुनियाके कोने-कोनेमे उस शान्ति और प्रेमका साम्राज्य स्थापित हो जायेगा जिसके लिए आज, जाने-अनजाने, सारा ससार आकुल है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-११-१९३१

१६४. मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा

[२८ अक्टूबर १९३१ या उसके पश्चात्][1]

इस मसविदेमे जितना कुछ कहा गया है, वहाँतक तो यह ठीक है, लेकिन आप तो जानते ही है कि इसमे सभी मुद्दे नही आ पाये है। कृपया उन मुद्दोको भी शामिल कर लें जो उनके पास हों और उनपर विचार करे।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-३) से।

१. यह टिप्पणी मिर्जा इस्माइल द्वारा गांधीजीको भेजे गये २८ अक्टूबर, १९३१ के पत्रपर लिखी हुई थी, जिसके साथ उन्होने एक दूसरा मसविदा भी भेजा था; देखिए "पत्र: मिर्जा इस्माइलको", २८-१०-१९३१ के आसपास।

१६५. भेंट : चार्ल्स पेट्रेश तथा अन्य लोगोंको[1]

लन्दन

[२९ अक्टूबर, १९३१][2]

प्र० : आपके विचारसे भारतके देशी राजा, जमींदार, उद्योगपति और साहूकार किस तरहसे धन इकट्ठा करते हैं?

उ० . अभी तो जनसाधारणका शोषण करके ही करते हैं।

प्र० : भारतीय मजदूरों और किसानोंका शोषण किये बिना भी क्या ये लोग धनी बन सकते हैं?

उ० : एक हदतक तो बन सकते हैं।

प्र० : क्या इन लोगोंको ऐसा कोई सामाजिक अधिकार है कि ये उन सीधे-सादे मजदूरों या किसानोंसे ज्यादा अच्छी तरह रहें जिनकी मेहनतकी बदौलत ये अपनी दौलत बढ़ाते हैं?

उ० . नहीं, ऐसा अधिकार तो नही है। मेरा सामाजिक सिद्धान्त यह है कि यद्यपि हम सब जन्मत समान है, अर्थात् हमे अवसरकी समानताका अधिकार है, लेकिन हम सबमे एक-सी योग्यताएँ नही हैं। प्रकृतिका नियम ही ऐसा है कि सबमे एक-सी योग्यता होना, सबकी चमडीका रग एक-जैसा होना और सवमे समान मेधाका होना असम्भव है। फलत यह स्वाभाविक है कि हममे से कुछमे दूसरोकी अपेक्षा सम्पत्ति अर्जित करनेकी अधिक योग्यता हो। जो कर सकते है, वे अधिक सम्पत्ति अर्जित करना चाहते है, और वे अपनी योग्यताओका उपयोग इस उद्देश्यके लिए करते है। अगर वे अपनी योग्यताओका उपयोग सही भावनासे करे तो उससे जनसाधारणको ही लाभ होगा। वे अपनी अर्जित की हुई सम्पत्तिके 'न्यासी' के अतिरिक्त और कुछ नही होगे।

मै तो कुशाग्रबुद्धि व्यक्तिको अधिक सम्पत्ति अर्जित करनेकी छूट दूंगा और इसके लिए उसे अपनी योग्यताओका उपयोग करनेसे नही रोकूँगा। लेकिन, उसके

१. इस भेंट-वार्त्ताका विवरण मूलत २०-२-१९३२ के *ली मॉंद* में प्रकाशित हुआ था और उसीसे बादमें *लेबर मंथली* में उद्धृत किया गया था। पेट्रेशका कहना है कि उन्होंने तथा उनके भारतीय मित्रोने गाधीजी के लन्दनसे प्रस्थान करनेके पूर्व उनसे पूछनेके लिए प्रश्नोंकी एक सूची तैयार कर ली थी। बादमें जब भेंट हुई तो जैसे-जैसे गाधीजी जवाब देते जाते थे, वे उन्हें लिखते जाते थे। महादेव देसाईने इस भेंटका विवरण २६-११-१९३१ के *यंग इंडिया* में प्रकाशित अपने "लन्दनका पत्र" में प्रस्तुत किया। दोनों विवरणोंमें कुछ शाब्दिक अन्तर है। हम दोनोंको मिलाकर दे रहे हैं।

२. दोमें से किसी भी साधन-सूत्रमें भेंट-वार्त्ताकी तारीख नहीं दी गई है, लेकिन महादेव देसाई कहते हैं कि सरोजिनी नायडूके पुत्र बाबा भी मुलाकातियोंमें शामिल थे। गाधीजी की डायरीमें २९ तारीखके इन्दराजोंमें यह भी दर्ज है कि वे बाबा तथा कुछ अन्य युवकोंसे मिले थे।

लाभका अतिरिक्त अंश फिर आम जनताके पास ही आना चाहिए — ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार किसी परिवारके कमाऊ पूतोंकी कमाई पूरे परिवारकी सम्पत्ति होती है। वे अपनी कमाई सम्पत्तिके 'न्यासी'-मात्र हैं, इससे अधिक कुछ नहीं। हो सकता है कि मुझे अन्ततः घोर निराशा ही मिले, लेकिन मैं इसी आदर्शका हिमायती हूँ और मौलिक अधिकारोंकी घोषणामें भी यही अर्थ निहित है।

प्र० : क्या आप बौद्धिक कार्यके लिए अधिक पुरस्कारकी माँग करेंगे?

उ० : आदर्श समाजमें तो कोई भी अपनी बौद्धिक योग्यताके लिए अधिक पुरस्कारकी माँग नहीं कर सकता। जो अधिक कमाता है उसे अपने अतिरिक्त धन-का उपयोग सामाजिक उद्देश्योंके लिए करना चाहिए।

हमने गांधी [जी] से पूछा कि क्या आप ऐसा नहीं मानते कि भारतीय किसानों और मजदूरोंकी गरीबीका एक मुख्य कारण यह है कि उनके श्रमके फलको जमींदार और पूँजीपति हड़प लेते हैं, क्योंकि इन जमींदारों और पूँजीपतियोंके लाभका एक बहुत ही छोटा अंश सरकारी खजानेमें जाता है। उत्तरमें गांधी [जी] ने अपनी सह-मति प्रकट की।

प्र० : क्या आप ऐसा नहीं मानते कि अपनी सामाजिक तथा आर्थिक मुक्ति और परोपजीवी वर्गोंका बोझ ढोनेसे सदाके लिए छुटकारा पानेके लिए किसानों और मजदूरोंका वर्ग-संघर्षमें कूद पड़ना सर्वथा उचित है?

उ० : मैं तो स्वयं ही बिना कोई हिंसा किये उनके लिए क्रान्तिका प्रवर्तन कर रहा हूँ।[1]

प्र० : संयुक्त प्रान्तमें लगानमें कमी करवानेके अपने आन्दोलनके बलपर आप किसानोंकी दशा सुधार तो सकते हैं, लेकिन आप इस प्रणालीकी जड़पर ही प्रहार नहीं करते।

उ० : हाँ, नहीं कर रहा हूँ। लेकिन सब-कुछ एक ही साथ तो नहीं किया जा सकता।

प्र० : अगर किसान और मजदूर देशी राजाओं, जमींदारों, पूँजीपतियों तथा उनके मददगार मित्र ब्रिटिश सरकारके खिलाफ क्रान्ति करें तो आपका रवैया क्या होगा? और यह भी बताइए कि स्वतन्त्र भारतमें अथवा प्रोटेक्टोरेटके अधीनस्थ भारतमें या औपनिवेशिक स्वराज्य-प्राप्त भारतमें अथवा चाहे जिस परिस्थितिमें पड़े भारतमें ऐसी क्रान्ति होनेपर आपका रवैया क्या होगा?

उ० : मेरा प्रयत्न यह होगा कि मैं धनी-मानी वर्गोंको समझा-बुझाकर उन्हें उनके पास मौजूद सम्पत्तिके न्यासियोंका स्थान ग्रहण करने पर राजी करूँ। मतलब यह कि वे पैसा तो अपने पास रखेंगे, लेकिन उन्हें उन लोगोंके हित-साधनके लिए काम करना होगा जिनकी बदौलत उन्हें धन मिलता है। इस कामके लिए उन्हें कमीशन मिलेगा।

१. इससे आगेके प्रश्नोत्तर यंग इंडियासे लिये गये हैं।

प्र० : आप उनमें यह न्यास-व्यवस्था (ट्रस्टीशिप) लायेंगे कैसे? लोगोंको केवल समझा-बुझाकर?

उ० : केवल वातचीतसे समझा-बुझाकर नही। मै अपने साधनपर ध्यान केन्द्रित करूँगा।[1] मुझे अपने समयका सबसे बडा क्रान्तिकारी कहा गया है। यह शायद सही नही है, लेकिन मै इतना अवश्य मानता हूँ कि मै क्रान्तिकारी हूँ — अहिंसक क्रान्तिकारी। मेरा शस्त्र 'असहयोग' है। कोई भी सहयोगके बिना फल-फूल नही सकता, चाहे वह सहयोग स्वेच्छासे दिया जाये या लाचारीसे।

प्र० : क्या आप आम हड़तालका समर्थन करेंगे?

उ० : आम हडताल एक प्रकारका असहयोग ही है। जरूरी नही कि हडताल हिंसात्मक ही हो। अगर ऐसा आन्दोलन हर तरहसे शान्तिपूर्ण और उचित हो तो मै उसका नेतृत्व करूँगा। इसे रोकना तो दूर रहा, उलटे मै इसको बढावा दूँगा।

प्र० : पूँजीपतियोंको न्यासी किसने बना लिया है और उनको कमीशन क्यों मिलना चाहिए?[2]

उ० उन्हे कमीशन इसलिए मिलना चाहिए कि पैसा उनके हाथोमे है। उन्हे कोई 'न्यासी' बननेको मजबूर नही करता, बल्कि मै उन्हे न्यासी बननेको आमन्त्रित करता हूँ। जिनके पास सम्पत्ति है, उन सबसे मै न्यासी बननेको कहता हूँ। मतलब यह कि वे न्यासी इसलिए न बने कि वे बा-हक सम्पत्तिके मालिक है, बल्कि इसलिए बने कि जिन लोगोका उन्होने शोषण किया है वे लोग उन्हे सम्पत्तिका स्वामित्व सौप रहे है। मै इस कमीशनके लिए कोई निश्चित प्रतिशत नही तय कर रहा हूँ, बल्कि उनसे उतनेकी ही माँग करनेको कहता हूँ जितनेका वे अपने-आपको पात्र समझते है।

उदाहरणके लिए, जिसके पास सौ रुपये होगे उससे मै पचास अपने पास रखने और पचास मजदूरोको दे देनेके लिए कहूँगा। लेकिन जिसके पास करोड़ रुपये होगे उससे मै — समझ लीजिए — एक प्रतिशत ही अपने पास रखनेको कहूँगा। तो इस तरह आप समझ सकते है कि मेरा कमीशन निश्चित अनुपातमे नही होगा, क्योकि वैसा अनुपात तय करनेसे कुछके साथ अन्याय होगा।

प्र० : महाराजाओ और जमींदारोंने तो अंग्रेजोंसे गठबन्धन कर रखा है और आप उन्हींको 'न्यासी' बनानेको कहते है। लेकिन, आपके सबसे अच्छे अनुगामी आम जनताके बीच है और वे लोग महाराजाओं और जमींदारोंको शत्रु मानते है। अगर आम जनताको सत्ता प्राप्त हो जाये और वह इन वर्गोका खात्मा कर देना तय करे तो आपका रवैया क्या होगा?

उ० : इस समय तो आम जनता महाराजाओ और जमीदारोको शत्रु नही मानती। लेकिन उसके साथ जो अन्याय किया जा रहा है, उसका बोध उसे करा

१. यह वाक्य यंग इंडियासे लिया गया है।
२. यह प्रश्न यंग इंडियासे लिया गया है।

देना जरूरी है। मैं आम जनताको पूँजीपतियोको शत्रु माननेकी शिक्षा नही देता, बल्कि यह माननेकी सीख देता हूँ कि पूँजीपति लोग अपना नुकसान आप कर रहे है। मेरे अनुगामियोने जनतासे कभी यह नही कहा है कि अंग्रेज या जनरल डायर बुरे आदमी हैं। उन्होंने उसे यह समझाया है कि वे एक प्रणालीके शिकार है और उन्हे व्यक्तियोका नही, बल्कि इस प्रणालीका खात्मा करना चाहिए। यही कारण है कि आज यद्यपि जनता स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए आकुल है, फिर भी ब्रिटिश अफसर उसके बीच निःशक भावसे रह सकते हैं।

प्र० : अगर आप इस प्रणालीपर प्रहार करना चाहते हैं तब तो ब्रिटिश पूंजीपतियों और भारतीय पूंजीपतियोंमें कोई अन्तर है नहीं। फिर आप उन करोंके सम्बन्धमें अपने करबन्दीके तरीकेको क्यों नहीं लागू करते जो खुद आपके यहाँके जमींदार आप लोगोसे माँगते हैं?

उ० : जमीदार तो इस तन्त्रका एक साधन-मात्र है। ब्रिटिश प्रणालीके साथ-साथ उनके खिलाफ भी आन्दोलन चलानेकी कोई जरूरत नही है। दोनोमें स्पष्ट भेद किया जा सकता है। हमने लोगोसे जमीदारोको लगान न देनेको कहा है, क्योकि वे इसमे प्राप्त पैसेसे ही सरकारी खजाना भरते हैं। लेकिन, जमीदारोंने वैसे हमारे अच्छे सम्बन्ध हैं।

प्र० : रवीन्द्रनाथ, बर्नार्ड शॉ तथा अन्य लोगोके अनुसार रूसमें जमींदारों, पूंजीपतियो और साहूकारोंके दमन तथा सोवियत शासन-प्रणालीकी स्थापनाके परिणामस्वरूप आम जनताकी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति थोड़े ही दिनोंमें बहुत सुधर गई है। यह तो देखा ही जा सकता है कि रूसमें, जो क्रान्तिके समय मुख्यतः एक कृषक देश था, धार्मिक तथा सांस्कृतिक दृष्टिसे वही परिस्थितियाँ मौजूद थीं जो आज भारतमें देखनेको मिलती हैं। इस सम्बन्धमें आपके विचार जाननेकी हमारी बड़ी तीव्र इच्छा है।

उ० : अव्वल तो मै दूसरोंके विचारोंके आधारपर अपना विचार स्थिर करनेका आदी नही हूँ। इसीलिए मै रूसकी अवस्थाके सम्बन्धमें अपनी कोई राय नही बना पा रहा हूँ। इसके अलावा चूंकि मै यह मानता हूँ—और इसलिए मानता हूँ कि खुद सोवियत नेता भी यही कहते है—कि सोवियत प्रणाली बल-प्रयोगपर आधारित है, इसलिए उसके अन्ततः सफल होनेके बारेमें मुझे बहुत अधिक सन्देह है।

प्र० : किसान और मजदूर अपने भाग्यका निर्णय स्वयं करें, इसके लिए उन्हें पूरी सत्ता देनेके लिए आपका ठोस कार्यक्रम क्या है?

उ० : वही कार्यक्रम जिसपर मै कांग्रेस द्वारा अमल करवा रहा हूँ। मेरा निश्चित मत है कि उसके परिणामस्वरूप किसानो और मजदूरोकी अवस्था मानवस्मृतिमें पहले कभी भी जैसी रही है, उसकी अपेक्षा लाख दर्जे अच्छी हो गई है। मेरा मतलब उनकी आर्थिक स्थितिसे नहीं है, बल्कि उनमें आई उस असाधारण जागृति

से है जिसने उन्हे बहुत अधिक प्रभावित किया है और जिसके कारण अन्याय और शोषणका प्रतिरोध करनेकी उनकी क्षमता बहुत बढ गई है।

प्र० : आप किसानोको पाँच अरबके ऋणसे कैसे छुटकारा दिलायेंगे?

उ० : ऋणकी ठीक राशि कोई नही जानता। अभी जो स्थिति है उसमे तो अगर काग्रेसको सत्ता प्राप्त हुई तो वह किसानोके तथाकथित दायित्वोकी उसी प्रकार जाँच करेगी जिस प्रकारकी जाँचका आग्रह वह उन दायित्वोके सम्बन्धमे कर रही है जो भावी भारतीय सरकार यहाँसे जानेवाली विदेशी सरकारसे अपने सिर लेगी।

गांधीजी से जो अगला सवाल पूछा गया — अर्थात् यह कि उन्होंने गोलमेज परिषद्में देशी राज्योंकी प्रजाके प्रतिनिधियोके शामिल किये जानेकी माँग क्यों नहीं की — उसका भी उन्होंने वैसा ही विशिष्ट उत्तर दिया। उन्होने कहा कि जिस परिषद्के गठनमें कांग्रेसका कोई हाथ ही नहीं था, उसमें किसीके भी शामिल किये जानेकी माँग करना कांग्रेसकी गरिमाके अनुकूल न होता। उन्होंने समझाते हुए कहा :

मै काग्रेसकी ओरसे अनुरोध नही कर सकता था और काग्रेस चूंकि अभी कलतक सरकारके खिलाफ बागी रही है इसलिए उसके लिए भी कोई अनुनय-विनय करना शोभनीय नही था — किसीके परिषद्मे शामिल किये जानेके लिए तो नही ही।

प्र० : मशीनसे आपका क्या मतलब है? क्या चरखा मशीन नहीं है? क्या कुछ मशीनें ऐसी होती हैं जिनसे शोषण नहीं किया जा सकता या आप यह मानते हैं कि वास्तवमें उनके इस्तेमालका तरीका ही उन्हें शोषणका साधन बनाता है?

उ० : चरखा और इस प्रकारके दूसरे साधन स्पष्ट ही मशीने है, और इसीसे आप मेरी मशीनोकी परिभाषा भी समझ सकते हैं। इस बातको मैं खुशी-खुशी स्वीकार करता हूँ कि दुनियाके मजदूरोके शोषणका कारण मुख्यतः यन्त्र-प्रणालीका गलत ढगसे उपयोग किया जाना ही है।

प्र० : आप जनसाधारणका शोषण खत्म करनेकी बात कहते हैं, जिसमें पूंजीवादके दमनकी बात भी निहित है। क्या आप पूंजीवादके दमनका इरादा रखते हैं, और अगर रखते हैं तो क्या आप पूंजीपतियोसे उनका अतिरिक्त धन छीननेको तैयार हैं, ताकि वे फिरसे नया पूंजीवाद आरम्भ न कर सकें?

उ० : अगर मुझे सत्ता प्राप्त होगी तो मैं पूंजीवादको तो अवश्य खत्म कर दूंगा, लेकिन पूंजीको नही। जाहिर है कि मैं पूंजीपतियोको भी खत्म नही करूँगा। मेरा निश्चित मत है कि पूंजी और श्रममे सामजस्य स्थापित करना बिलकुल सम्भव है। मैंने कुछ-एक मामलोमे ऐसा होते देखा भी है और जो बात एक मामलेपर लागू होती है वह सबपर भी लागू हो सकती है। मैं नही मानता कि पूंजी अपने-आपमे कोई बुरी चीज है — उसी तरह जिस तरह मैं मशीन-प्रणालीको अपने-आपमें बुरा नही मानता।

इसके बाद हमने धार्मिक मामलोंकी चर्चा शुरू की और गांधी [जी]से पूछा कि क्या आप ऐसा समझते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या-जैसी कोई चीज है। उनका उत्तर स्पष्ट रूपसे स्वीकारात्मक था। इसके बाद हमने पूछा कि क्या यह समस्या जनसाधारणके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है और अगर है तो क्या आप यह मानते हैं कि इसका उपचार राजनीतिक उपायों द्वारा किया जा सकता है या यह समझते हैं कि आपसी समझौता ही इसका इलाज है।

उ० : मैं नही समझता कि जनसाधारणके बीच इस समस्याका कोई अस्तित्व है, और अगर है भी तो बहुत कम। राजनीतिक उपायोसे इसका समाधान नही किया जा सकता लेकिन समझौतेसे किया जा सकता है, क्योकि जिस सीमातक समझौता जीवनके सिद्धान्तकी जडोको कोई नुकसान नही पहुँचाता उस हदतक यह वास्तवमे जीवन-कलाका एक आवश्यक अग है।

प्र० : अगर संघबद्ध भारतमें, जिसमें देशी राजाओंको अपने-अपने क्षेत्रोंमें स्वशासनका अधिकार प्राप्त होगा, उन राज्योंकी प्रजा भी उन मूलभूत राजनीतिक अधिकारोंकी माँग करे जिनका उपभोग ब्रिटिश भारतके लोग करेंगे और उसके लिए वह सविनय अवज्ञाका सहारा ले तथा उसकी माँगोंको स्वीकार करवानेके लिए जनान्दोलन शुरू हो जाये तो क्या उस आन्दोलनको दबानेमें राजाओंको सहायता देनेके लिए संघकी सेनाको भी बुलाया जायेगा? और उसके सम्बन्धमें आपका रवैया क्या होगा?

उ० : अगर मुझे सत्ता हो तो सविनय अवज्ञाको दबानेके लिए मै न खुद उस सेनाका उपयोग करूँगा और न किसी औरको करने दूँगा — चाहे सविनय अवज्ञा जिस रूपमे भी और जहाँ भी हो। कारण यह है कि सविनय अवज्ञाको मै मानव-जीवनका ऐसा स्थायी नियम मानता हूँ जो पूरी तरहसे हिंसाका स्थान ले सकता है — हिंसाका, जो पशु-जगत्‌का धर्म है।

प्र० : क्या यह सच है कि ब्रिटिश भारतमें आप जो अधिकार अंग्रेजोंसे माँगते हैं वही अधिकार देशी राजाओंसे माँगनेके लिए देशी राज्योंमें शुरू किये गये जनान्दोलनोंका समर्थन करनेसे आपने हाथ खींच लिया?

उत्तरमें गांधी[जी]ने आश्चर्य प्रकट करते हुए इस आरोपको झूठा बताया।

हमने उनसे पूछा कि "स्वतन्त्रता" और "साम्राज्य-सम्बन्धी मामलोंमें बराबरीके स्तर पर सहयोग करने" में उनके विचारसे क्या अन्तर है।

उ० : इन दोनोमे अन्तर है भी और नही भी है। मतलब यह कि साम्राज्यके अन्तर्गत दो स्वतन्त्र राज्य सच्चे अर्थोमे साझेदार हो सकते हैं और साम्राज्य-रूपी सगठनमे एक-दूसरेसे सहयोग कर सकते है। लेकिन, स्पष्ट ही भारत ऐसी स्थितिमे नही है। फलत: एक ही साम्राज्यके अन्तर्गत ब्रिटेनके साथ भारतका सम्बन्ध होना ऐसी अवस्था — या कहिए परिस्थिति — है जिसकी तुलना स्वतन्त्रतासे नही की जा सकती, क्योकि तुलना दो समान ढगकी चीजोके बीच ही की जा सकती है। इसलिए

अगर ब्रिटेन और भारतके बीच समानताके दर्जेपर कोई सम्बन्ध कायम होना है तो साम्राज्यका अस्तित्व मिटना ही चाहिए।

इसके प्रत्युत्तरमें हमने कहा कि लाहौर कांग्रेसमें तो साम्राज्यके अन्तर्गत बराबरीके दर्जेके सम्बन्धका कोई उल्लेख नहीं किया गया।

गांधी[जी]ने जवाब दिया कि कांग्रेसमें इसका उल्लेख करनेकी कोई जरूरत नहीं थी, लेकिन भाषणोंमें तो इस सवालका जिक्र किया ही गया था।

प्र० : तो क्या सम्बन्धोंके बराबरीके स्तरपर होनेकी बात में ऐसी भी कोई तजवीज है कि भारतमें वाइसराय न रहे?

उ० . "साम्राज्य" की कल्पना तो बिलकुल समाप्त होनी ही चाहिए। लेकिन मैं निश्चयपूर्वक यह नही कह सकता कि राजत्वकी कल्पनाको भी समाप्त कर देना चाहिए या नही। इस समय मैं यह कहनेकी स्थितिमे बिलकुल नही हूँ कि ग्रेट ब्रिटेनका राजा भारतका राजा नही रह जायेगा।

प्र० : क्या आप इस बातका खयाल करके चल रहे हैं कि लाहौर कांग्रेसके समयसे, जब कि स्वतन्त्रताके लक्ष्यकी घोषणाने कलकत्तामें स्वीकार किये गये समझौता-परक प्रस्तावका स्थान ले लिया, भारतके नौजवान यह मानते रहे हैं कि वे ऐसे स्वतन्त्र भारतके लिए लड़ रहे हैं जिसमें राजाके लिए कहीं कोई स्थान नहीं होगा? क्या अब भारतके नौजवानोंसे यह कहना कि राजत्व कायम रहेगा, अप्रामाणिक राजनीति नहीं है?

गांधी[जी] इससे तनिक भी विचलित नहीं हुए और उन्होंने कहा कि यहाँ विश्वासघातकी कोई बात ही नहीं है। अगर यह सवाल मुझसे कराचीमें पूछा गया होता तब भी मैं यही जवाब देता।

प्र० : तब यह बताइए कि आपमें और मालवीय[जी]में, जो लाहौर कांग्रेसके प्रस्तावके विरुद्ध थे, क्या अन्तर है?

उ० : अन्तर यह है कि जहाँ मालवीय [जी] साम्राज्यको एक मौका और देना चाहते हैं, मैं बिलकुल नही देना चाहता।

प्र० : क्या आप राजा जॉर्ज तथा उनके पूर्वजोंके बारेमें ऐसा मानते हैं कि उन्होंने भारतको जबरदस्ती हथिया रखा है?

उ० : हाँ, मैं यह मानता हूँ कि ग्रेट ब्रिटेन और राजा जॉर्जने भारतको जबरदस्ती हथिया रखा है।

हमने इसके बाद उनसे पूछा कि क्या वे शोषणके विरुद्ध लड़नेवाले देशका कमजोर जातियोके शोषणपर आधारित साम्राज्यका अंग बने रहना सम्भव मानते हैं।

उ० . नही, यह तो असम्भव है। ब्रिटिश शासन-प्रणाली और साथ ही पूँजीवादके निर्मूलनके प्रयत्नमे भी मैं जी खोलकर सहायता दूँगा, लेकिन पूंजी और पूँजीपतियोके विनाशके प्रयत्नमे नही। अगर ब्रिटिश साम्राज्य कमजोर जातियोका शोषण

बन्द नहीं करता तो हम उसके साथ सहयोग करनेसे इनकार कर देंगे। साम्राज्यवादी शोषणको समाप्त होना चाहिए। सहयोग स्वेच्छापर आधारित होगा और भारतको यह अधिकार होगा कि वह चाहे तो ब्रिटेनसे अपने सम्बन्ध तोड़ सकता है।

प्र० : आपने लॉर्ड इर्विनके साथ युद्ध-विराम समझौता किन कारणोंसे किया था? क्या इसका कारण — जैसा कि हमें बताया गया है — यह था कि कांग्रेस-आन्दोलन एक ही पक्षके सहारे चल रहा था और अगर समझौता न किया गया होता तो उसके बिलकुल कुचल दिये जानेका बहुत बड़ा खतरा था? और क्या इसका मतलब यह है कि कांग्रेसको और आपको यह डर था कि ब्रिटिश सरकारकी हिंसात्मक कार्रवाई आप सबको कहीं कुचल न दे? क्या अहिंसाके सिद्धान्तके हकमें यह ज्यादा अच्छा न होता कि आपमें से जो लोग उस सिद्धान्तमें विश्वास रखते हैं वे संघर्ष जारी रखते और ब्रिटिश सरकारके सामने किसी भी तरह झुकनेको तैयार न होते? उससे अगर आन्दोलनमें रुकावट भी आती तो उसकी पराजय ही उसकी विजय होती।

उ० : हमारे आन्दोलनके ठप हो जानेकी सम्भावनाके सम्बन्धमें जो-कुछ कहा जाता है, बिलकुल गलत है। आन्दोलनके शिथिल पड़नेके कोई लक्षण नहीं दिखाई दे रहे थे। यह सम्भव है, बल्कि ऐसा हुआ भी हो, कि कहीं-कहीं उत्साहमें कुछ कमी आई हो, लेकिन मुझे इसके बारेमें कुछ मालूम नहीं हुआ, क्योंकि तब मैं जेलमें था। लेकिन, जब सत्याग्रहियोंमें कुछ भी पस्ती दिखाई दे रही हो, उस समय कोई समझौता करना सत्याग्रहके नियमोंके बिलकुल खिलाफ होगा। दरअसल तो उसी समय वे कोई समझौता करनेको तैयार नहीं होते। मुझे ऐसा कोई भय नहीं था कि आन्दोलन कमजोर पड़ रहा है और जब मैंने सुलहकी बात रखी, न तब मेरे मनमें ऐसा कोई खयाल था। युद्ध-विरामकी बात अपनी ही खूबियोंके कारण स्वीकार की गई और जब उपयुक्त शर्तें सामने रखी जायें तब समझौता न करना सत्याग्रहके सिद्धान्तोंके खिलाफ है।

अगर हमने कष्ट-सहनके भयसे युद्ध-विराम स्वीकार किया होता तो आपकी राय सही होती, लेकिन अगर कोई सत्याग्रही अपने साथियोंको अकारण ही कष्ट-सहनकी स्थितिमें डाले तो वह अपने आदर्शसे च्युत हुआ माना जायेगा। अगर हमने किसी अधम अथवा स्वार्थमय उद्देश्यसे प्रेरित होकर युद्ध-विराम स्वीकार किया होता तो आपका कहना बिलकुल सही होता।

[अंग्रेजीसे]

लेबर मंथली, मार्च १९३२ और यंग इंडिया, २६-११-१९३१

१६६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
३० अक्टूबर, १९३१

श्री विलियर्स[1] तथा श्री डुर्नोकी[2] हत्या करनेके प्रयत्नोंके विषयमें सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ है। हमारा काम बहुत कठिन है, लेकिन इस तरहकी नासमझी-भरी कार्रवाइयोंसे वह और भी कठिन हो जाता है। मेरा यह निश्चित विश्वास है कि ऐसे आक्रमणोंसे कोई लाभ नहीं होता, उलटे हानि ही होती है, क्योंकि इनसे दोनों पक्षोंमें प्रतिशोधकी भावना बढ़ती है। मैं जानता हूँ कि इसपर मुझे दूसरे पक्षकी ओरसे लगातार की जानेवाली उत्तेजनात्मक कार्रवाइयोंका स्मरण दिलाया जायेगा — जैसे कि चटगाँवकी वह घोर बर्बरता जिसपर कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरका भी मन क्रोधसे भर उठा था और हिजलीके नजरबन्द शिविरमें अन्धाधुन्ध गोलियाँ बरसाया जाना।

लेकिन मैं कहना यह चाहता हूँ कि आपको बड़ीसे-बड़ी उत्तेजनाका कारण होनेपर भी अहिंसाकी भावनाको कायम रखना चाहिए। हमारी सफलताका मार्ग अहिंसा ही है।

काश, ये अधीर युवक कांग्रेसके कार्यक्रमको सफल बनानेमें सहायता देकर मुक्तिके दिनको निकट लाते — मुक्ति, जो मेरे जानते उन्हें भी उतनी ही प्रिय है जितनी कि कांग्रेसको!

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-१०-१९३१

१६७. भाषण : कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगकी सभामें[3]

लन्दन
३० अक्टूबर, १९३१

उन्होंने कहा कि भारतकी वास्तविक स्थितिके सम्बन्धमें अंग्रेजोंके बीच बहुत अधिक अज्ञान है। यहाँ भारतके इतिहासके सम्बन्धमें भी बहुत-सारा झूठ फैलाया गया है। मेरे विचारसे अंग्रेज लोग भारतके इतिहासपर जो पुस्तकें पढ़ते हैं, उनमें से

१. कलकत्ताके यूरोपीय संघके अध्यक्ष ई० विलियर्सपर २९ अक्टूबरको उनके कार्यालयमें ही गोली चलाई गई थी, जिससे उन्हें मामूली चोट पहुँची थी।

२. ढाकाके जिलाधीश।

३. सभा सेन्ट्रल हॉल, वैस्टमिन्स्टरमें हुई थी और उसकी अध्यक्षता हॉरेबिनने की थी।

अधिकांशमें एकांगी दृष्टिकोण पेश किया गया होता है। उदाहरणके लिए कलकत्ताकी "काली-कोठरीकी दुर्घटना" को लीजिए। अब पता चला है कि यह अधिकांशतः मनगढ़न्त ही थी। काल-कोठरीकी दुर्घटना-जैसी कोई बात हुई ही नहीं। भारतीय इतिहासकारो तथा अन्य निष्पक्ष लेखकोंने पाया है कि उतने सारे लोगोंको उस कमरेमें रखा ही नहीं जा सकता था।

आधुनिक इतिहाससे भी मै अनेक दृष्टान्त दे सकता हूँ, और जिन बातोको किसी समय परम सत्य माना जाता था, परवर्ती शोधोसे प्रकट हुआ है कि वास्तवमे वे कपोल-कल्पनाएँ ही थी। इसलिए कॉमनवेल्थ लीग-जैसी सस्थाओका यह कर्त्तव्य है कि वे भारतके अतीत और वर्त्तमान दोनोके सम्बन्धमे सही ज्ञान प्राप्त करे।

देखता हूँ, भारतमे आज जो-कुछ हो रहा है, उसके सम्बन्धमे भी चुप्पी लगाये रहनेकी एक साजिश चल रही है। चटगाँवमे बर्बरता — या कहना चाहिए नृशसता — बरती गई है। चटगाँव बगालका एक महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह और शहर है। उसकी आबादी बहुत अधिक है और वहाँ बहुत बडे-बडे व्यापारियोके कारोबार थे और है। बगालके एक किशोरने, जिसकी उम्र लगभग १६ साल थी, एक अधिकारीकी हत्या कर दी। इसका बदला लेनेके लिए दुकाने लूटी गई और ऐसे नृशस कृत्य किये गये कि कविगुरु ठाकुरका मन भी आक्रोशसे भर उठा।

आपमे से बहुत-से लोगोको मालूम होगा कि उनका स्वास्थ्य आजकल ठीक नही रहता और उनका शरीर जर्जर हो गया है अत सामान्यत: वे कभी आश्रमसे बाहर नही निकलते, बल्कि शान्तिनिकेतनमे अपने ढगके एक अनोखे महाविद्यालय और विद्यालयका सचालन करते हुए और तरह-तरहके प्रयोग करते हुए अपना समय पुस्तकोंके बीच बिताते है तथा अपने सपनोकी दुनियामे खोये रहते है। उनके लिए बाहर जाना बहुत कठिन है, लेकिन इस प्रसगपर तो उन्हे बाहर आये बिना चैन ही नही मिल सकता था।

चटगाँवके बाद हिजलीकी घटनाको लीजिए। यहाँ उन लोगोको रखा जाता है जिन्हे नजरबन्द कहा जाता है। अब शायद आप जानना चाहेगे कि नजरबन्दका मतलब क्या होता है। मै अभी बताता हूँ। नजरबन्द आदमी ऐसा आदमी है जिसे बिना मुकदमा चलाये जेलमे रखा जाता है। उसे यह भी नही मालूम रहता कि उसके खिलाफ क्या आरोप है। केवल आतकवादी होने अथवा किसी आतकवादी सगठनका सदस्य होनेके सन्देहपर उसे नजरबन्द करके रखा जाता है और सो भी अनिश्चित कालके लिए। वह किसी भी तरह साधारण कैदीकी कोटिमें नही रखा जा सकता।

ऐसा कहा जाता है कि हिजलीके इन नजरबन्दोने ठीक — मतलब, जिसे वहाँ तैनात गार्ड ठीक समझें, वैसा ठीक — व्यवहार नही किया। मै आपको सिर्फ अखबारोमें छपी खबरे या हालमे हुई एक जाँचकी रिपोर्टके रूपमे प्राप्त साक्ष्यका केवल सार-मात्र बता रहा हूँ। उनके अनुचित व्यवहारके लिए उनपर गोली चलाई गई, जिसमें दोकी मृत्यु हो गई और कई घायल हुए।

हिजलीकी नृशंसतापर कविगुरुका मन आक्रोशसे भर उठा है। मैंने आपके सामने केवल उन्हीके नामका उल्लेख इसलिए किया है कि उन्हे सब लोग जानते है। उनके अलावा भी बहुत-से ख्यातनाम लोग इस नृशसतापूर्ण कृत्यकी भर्त्सना करनेके लिए बुलाई गई सभाओमे शामिल हुए है।

लेकिन एक यह देश है! आपको मालूम ही नही कि भारतमें क्या-कुछ हो रहा है और जो-कुछ हो रहा है उससे जनमानस किस तरह उद्वेलित है।

आपको तो ब्रिटेनके अखबार केवल इतना बता देते है कि वे नजरबन्द लोग बहुत खराब है। वे उसी व्यवहारके पात्र है जो व्यवहार सरकार कानून और व्यवस्थाके नामपर उनके साथ कर रही है।

अब मै श्री विलियर्स और श्री डुर्नोकी जान लेनेके प्रयत्नोके बारेमे आपसे कुछ कहूँगा। यह बात बहुत खेदजनक है और मेरे दृष्टिकोणसे तो कलक-रूप है तथा मैं जिस चीजको लेकर चल रहा हूँ उसके खयालसे मुझे बहुत ही अटपटी स्थितिमें डालनेवाली है। फिर भी मेरी समझमे नही आता कि ऐसी घटनाओपर इतना शोर क्यो मचाया जाता है। मुझे आपसे साफ-साफ कहना चाहिए कि चटगाँव और हिजली-जैसी घटनाओको भी आपको, ब्रिटेनकी जनताको, उतना ही महत्त्व देना चाहिए।

आप इस तथ्यको नजरअन्दाज नही कर सकते कि भारत सरकार दमन-नीतिपर चल रही है, और परिणामस्वरूप, जिन लोगोपर पागलपन सवार हो गया है, जो लोग, मुझे कहना चाहिए, अपना सन्तुलन खो बैठे है, वे आतंकवादी नीतिका सहारा ले रहे है। वे लोग प्रतिशोध लेनेपर उतारू है और कुछ लोगोकी जाने लेनेको कृत-सकल्प है।

वे जो-कुछ कर रहे है, उसे सर्वथा अनुचित माननेका जितना दावा मै करता हूँ उससे अधिक कोई नही कर सकता। मुझे हिंसासे चिढ है—खासकर जब वह मेरे अपने ही लोगो द्वारा की जाये। इससे मेरे प्रयोगमे बाधा पड़ती है। मै अहिंसाके जिस उद्देश्यको लेकर इतने वर्षोंसे चल रहा हूँ, ऐसी कार्रवाई करना उसमे अविश्वास करना है।

यद्यपि ये नौजवान काग्रेसमें शामिल नही है और न उसके कार्यक्रमसे ही सह-मत है, फिर भी इस तरहकी परिस्थितिसे मेरी कठिनाई और भी बढ जाती है। इससे प्रकट होता है कि कांग्रेस इन लोगोपर इतना प्रभाव नही डाल सकी है कि वे ऐसे पागलपन-भरे कामसे बाज आ जाये।

चटगाँव और हिजलीमे जैसी बातें हुई है, वैसी बाते अगर किसी और देशमें होतीं तो वहाँ व्यापक विद्रोह भडक उठता, लेकिन मेरे देशमे चीजें इतनी तेजीसे नहीं होती। इसके दो कारण है।

आप विश्वास कीजिए, मै सचमुच ऐसा मानता हूँ कि मेरे देशवासी इतने पस्त हो गये है कि वे हिंसाका मुकाबला कर ही नही सकते, और गत दस वर्षोंसे मै उन्हे जिस अहिंसा-धर्मकी शिक्षा देता आया हूँ, उसने उन्हे दुविधामे डाल दिया है। अहिंसासे लोगोमे बडी जागृति आ गई है। इसीसे सरकार द्वारा की गई ऐसी उत्ते-

जनात्मक कार्रवाइयोके बावजूद वे शान्त है। लेकिन यहाँके अखबार और प्रेस भारत की सही स्थितिका जायजा लेनेकी कोई चिन्ता ही नही करते। उन्हे वही करना चाहिए जो रसेलने क्रीमियाकी लडाईके समय किया था।[1] दुर्भाग्यवश आज हमारे बीच रसेल-जैसे लोग नही है, जो इग्लैडकी जनताको सही स्थिति बताये। इसी प्रकार आज ऐसे अखबार भी नही है जो पूर्ण सत्य और मात्र सत्यको ही प्रकाशित करे। वे तो अपने हितोके अनुकूल अधूरा विवरण, बिलकुल गलत चित्र पेश करनेपर ही आरूढ है।

वाइसरायने एक और अध्यादेश स्वीकार किया है। क्या आप जानते है कि अध्यादेश क्या होता है? अध्यादेश विधान-सभाकी उपेक्षा करके पास किया जाता है और उसे वाइसराय अपने विशेषाधिकारके बलपर पास करता है। अध्यादेशसे पुलिस को लोगोको बिना मुकदमा चलाये गिरफ्तार करने और उन्हे नजरबन्द रखनेका विस्तृत अधिकार प्राप्त हो जाता है। यह कुछ इस तरह किया जाता है मानो पुलिस-को पहलेसे जो अधिकार प्राप्त है, वे काफी नहीं है। खुद मै समझता हूँ कि इन नये अधिकारोकी कोई जरूरत नही है, लेकिन भारत सरकार तो जब ऐसी कोई आतकवादी कार्रवाई होती है तब — अनुचित न हो तो कहूँ कि — अपना आपा ही खो बैठती है। इसे प्रतिशोध नही, बल्कि दमन कहा जाता है। आज यह शुरू हुआ है और बहुत दिनोतक चलता रहेगा। लेकिन इस दमनके बावजूद आतकवादी विचार-धाराके लोग सक्रिय हो उठे है। उन्होने सारा भय त्याग दिया है और अगर मै ऐसा कहूँ कि वे बेवकूफी-भरी बहादुरी दिखानेपर उतारू हो गये है तो अनुचित न होगा। वे कुछ भी करनेसे नहीं डरते। जान तो उन्होने पहलेसे ही हथेलीपर रख ली है। वे समझते है कि देश-सेवाके आगे उनकी जानकी कोई कीमत ही नहीं है।

चटगाँव और हिजली-जैसी घटनाओको रोकनेका एकमात्र उपाय यही है कि भारतको अपना कार्य-व्यापार खुद सँभालने दीजिए। अगर वह अपने कार्य-व्यापारका कुप्रबन्ध ही करता है तो उसे वह भी करने दीजिए। जिस प्रकार आपको अपने कार्य-व्यापारका कुप्रबन्ध या सुप्रबन्ध करनेका अधिकार है उसी प्रकार उसे भी यह अधिकार है। अभी हालमे आपने ऐसा किया है। आपने अपने कार्य-व्यापारका निरा कुप्रबन्ध ही तो किया। आप जिस आदमीको जहाँ रखना चाहिए उसे वहाँ नही रखते, जिसे जहाँ नही रखना चाहिए उसे वहाँ रख देते है। यह तो ढेकुलका खेल है। गलती कीजिए तो आप अनुभवसे उसे सुधार भी लेगे। यह बहुत अच्छा खेल है (जोरोकी हँसी)। मानव-स्वभाव ही ऐसा है। लेकिन भारतमे क्या स्थिति है? हम अपने कार्य-व्यापारकी व्यवस्था खुद नही कर सकते। आज भारत एक बडा कैद-खाना बनकर रह गया है। हम सब कैदी है। अग्रेज स्त्री-पुरुष हमारे जेलर है।

१. सर विलियम हावर्ड रसेलने टाइम्समें प्रकाशित अपनी क्रिमियासे भेजी रिपोर्टमें क्रिमियाई-युद्धके संचालनकी अव्यवस्थाका पर्दाफाश किया था और फ्लॉरेन्स नाइटिंगेलको सैनिकोंकी सेवा करनेकी प्रेरणा दी थी।

आपको अपनी जिम्मेदारी महसूस करनी चाहिए — जिस प्रकार हमे अपने कामका लेखा-जोखा देना है उसी प्रकार आपको भी जेलरके रूपमे अपने कामका हिसाब देना होगा।

तो इससे क्या प्रकट होता है? इससे हमारा अस्वाभाविक सम्बन्ध प्रकट होता है। मुझे आपसे साफ कह देना चाहिए कि इस अस्वाभाविक सम्बन्धको समाप्त करना चाहिए। हम भारतीयोको केवल अपनी स्वाधीनता प्राप्त करनी है। ईश्वरने चाहा तो देनेवालेकी इच्छा न होनेपर भी हम अपनी स्वाधीनता प्राप्त करके रहेगे। एक नेक अंग्रेजके प्रयत्नोसे हमें अपना-अपना दायित्व निभानेके लिए जो कुछ दिनोंका सुअवसर मिला है वह अब शायद जल्द ही समाप्त हो जाये। उसने सोचा कि हम काफी कष्ट भोग चुके है और इसलिए हमे जेलकी चारदीवारीसे निकाल दिया। उसने हमसे सुलहकी बातचीत की, जिसके परिणामस्वरूप एक समझौता हुआ; उसी समझौतेके कारण कांग्रेसके लिए गोलमेज परिषद्में आ पाना सम्भव हुआ।

उसने हमारे सामने जो प्रस्ताव रखा उसे अगर मैं स्वीकार नही करता तो एक सत्याग्रहीके नाते मेरा यह आचरण गलत होता।

अब मै आपके सामने कुछ बहुत बडे सत्य रख रहा हूँ। भारतमे जो स्थिति है उसे समाप्त कर देना बेहतर है, सचमुच बेहतर है। लेकिन आपको बता दूँ कि इसमे आपका कोई दोष नही है। यह मेरी अपनी कमियोका नतीजा है। हमने अभी पर्याप्त कष्ट नही सहा है। मै भारत जाकर अपने देशभाइयोका एक बार फिर उस अग्नि-परीक्षासे गुजरनेके लिए आह्वान करनेमे सन्तोष मानूँगा।

चटगाँव और हिजलीकी घटनाएँ मेरे लिए प्रकाश-स्तम्भ है। वे हमे किसी बातका सकेत दे रही है — इस बातका कि मुझे तुरन्त भारत चल देना चाहिए। लेकिन मै क्रोधमे आकर परिषद्को छोडकर एकाएक नहीं चला जाऊँगा।

इसका मतलब यह नही कि मुझे कभी क्रोध नहीं आता। लेकिन ईश्वरने मुझे क्रोधको दबानेकी पूरी शक्ति दी है। लेकिन चाहे मुझे क्रोध आये या न आये, मै इन बातोके कारण यहाँसे तुरन्त चला जानेवाला नही हूँ। मै परिस्थितियोको देखूँगा, प्रतीक्षा और प्रार्थना करूँगा तथा लोगोसे अनुनय-विनय करूँगा, लेकिन मै अपना यह अधिकार सुरक्षित रखता हूँ कि अगर गोलमेज परिषद् विफल हो जाती है, तथा कांग्रेस जो-कुछ माँगती है और जिसे पानेका उसे अधिकार है वह सब नही देती तो मै वही करूँगा जो अभी कुछ ही दिन पहले हमने किया था।

मै आशा करता हूँ कि समय आनेपर हमे जो-कुछ करना है, उसमे हम कुछ कम नही पाये जायेगे। तब आपकी बारी आयेगी कि आप इंग्लैंडको जगाये।

इसलिए आप आजसे यह समझनेकी कोशिश करे कि कांग्रेसका क्या मतलब है, चटगाँवका क्या मतलब है और हिजली-काड क्या अर्थ रखता है।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ४-११-१९३१

१६८. तार : वल्लभभाई पटेलको

३१ अक्टूबर, १९३१

सरदार वल्लभभाई
बारडोली (भारत)

बंगालके दमन[1] और अन्य बातोंसे मैं चिन्तित। यहाँ अपनी असहायावस्था महसूस करता हूँ फिर भी अभी यहाँ रहना और उसके बाद यूरोपका दौरा करना जरूरी मानता हूँ। इसका मतलब यह हो सकता है कि मैं जनवरीके मध्यसे पूर्व भारत न लौट सकूँ। सोच-विचारकर अपनी राय भेजिए।[2]

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२११)से।

१६९. तार : शैलेन्द्रनाथ घोषको[3]

३१ अक्टूबर, १९३१

घोष
३१ यूनियन स्क्वेयर
न्यूयार्क

आपका तार मिला। खेद है कि अमेरिका न आ सकूँगा। श्रीमती घोषके पत्रमें पूरा कारण बता दिया है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२०९)से।

१. सन् १९३१ के बंगाल अपराध-कानून अध्यादेश सं० ९ के अन्तर्गत बंगाल सरकारको और अधिक सत्ता देकर दमनकी कार्रवाई (देखिए पिछला शीर्षक) शुरू की गई थी।

२. इसके उत्तरमें वल्लभभाई पटेलने तार द्वारा सूचित किया था कि भारतमें स्थिति बहुत खराब होती जा रही है और गांधीजी का परिषद्के सिलसिलेमें रुके रहना कार्य-समितिकी दृष्टिसे बेकार है। फिर भी, इस बारेमें अन्तिम निर्णय गांधीजी पर ही छोड़ दिया गया था, क्योंकि इंग्लैंडकी परिस्थितिको तो वही ज्यादा अच्छी तरह जानते थे। लेकिन गांधीजी के यूरोपके दौरेके बारेमें कहा था कि उससे बात बिगड़ सकती है और गांधीजी के लिए जल्दी लौट आना वांछनीय है।

३. यह शैलेन्द्रनाथ घोषके ३०-१०-१९३१ के उस तारके उत्तरमें दिया गया था जिसमें उन्होंने गांधीजी को अपनी पत्नीके नाम लिखे पत्रके लिए धन्यवाद देते हुए अमेरिका आनेकी सलाह दी थी।

१७०. भाषण : फ्रेंड्स हाउसमें[1]

लन्दन
३१ अक्टूबर, १९३१

१ सक्षेपमे मुझे कहना चाहिए कि इस शब्दका[2] प्रयोग इसके शब्दकोशवाले अर्थमे ही किया जा रहा है, लेकिन काग्रेसके प्रादेशपत्रमे कहा गया है कि किसी भी पक्षकी इच्छा होनेपर साझेदारीको समाप्त कर देनेकी बातको इससे बाहर नही माना गया है। किसी प्रकारकी उलझन और अनिश्चितता न रहे इसलिए प्रादेशपत्रमें इस बातका स्पष्ट उल्लेख किया गया है। इसमे तीनो महत्त्वपूर्ण विषयोपर [जनताके प्रति जिम्मेदार] सरकारका नियन्त्रण भी शामिल है। किन्तु इन विषयोपर उसका नियन्त्रण उस हदतक मर्यादित रहेगा जिस हदतक भारतके हितकी दृष्टिसे ऐसी मर्यादा लगाना नितान्त आवश्यक समझा जायेगा। ऐसे दो राष्ट्रोके लिए जिनमे से एक पराधीन रह चुका है और दूसरा उसका शोषण करता रहा है, एक-दूसरेका साझेदार बनना कोई आसान बात नही है। अगर हमारा सघर्ष अहिंसात्मक न होता तो स्वाधीनता और साझेदारी, इन दो बातोके बीच किसी भी तरहसे सगति नही बैठाई जा सकती और उस हालतमे पूर्ण सम्बन्ध-विच्छेद आवश्यक होता।

२. कनाडाको ग्रेट ब्रिटेनका साझेदार नही माना जाता। वह तो ग्रेट ब्रिटेनका ही एक शाखा-राज्य है। दोनोकी सभ्यता एक है—जीवन-पद्धति एक है—और वैसे तो कहा जा सकता है अन्ततः सारी मानवता ही एक है, लेकिन हमारी एक अलग सभ्यता है। स्वाधीनताका उल्लेख इसलिए किया गया कि हमारे दिमागमें गुलाम राष्ट्र होनेका कोई भाव न रह पाये। इसके अलावा इसका प्रयोग औपनिवेशिक स्वराज्यके दर्जेसे हमारे दर्जेमे फर्क बतानेके लिए किया गया है। किसी समय तो मै औपनिवेशिक दर्जेके पक्षमें था, लेकिन जब विधि-विशेषज्ञोने मेरे विचारके खिलाफ दलील देते हुए यह समझाया कि स्वाधीनता औपनिवेशिक स्वराज्यसे उच्चतर वस्तु है तो मैने मनमे कहा कि निश्चय ही मै स्वाधीनतासे कम किसी दर्जेके पक्षमे नही हूँ। मैने उनसे कहा कि अगर औपनिवेशिक स्वराज्य निम्नतर वस्तु है तो मै स्वाधीनताके पक्षमे हूँ।

३. ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलसे तो अलग नही, लेकिन अगर भारत वास्तवमें स्वाधीन होना चाहता है तो साम्राज्यसे यह कोई सम्बन्ध नही रखेगा। यह साम्राज्य इसलिए है कि इसके अधीन राजे-महाराजे हैं, सामन्त राज्य है; ग्रेट ब्रिटेनको इन राजाओ-महाराजाओपर अपना प्रभुत्व रखना छोडना होगा। इसका मतलब साम्राज्य

१. क्वेकरोंके साथ गाधीजी की इस बातचीतका एक सक्षिप्त विवरण महादेव देसाईने *यंग इंडिया*, १९-११-१९३१ के अकमें प्रकाशित अपने "लन्दनका पत्र" में दिया है।

२. साझेदारी।

और साम्राज्य-भावनाकी समाप्ति है। जो राष्ट्र शोषणमें विश्वास रखता है और अपना व्यापार बलके आधारपर चलाता है, उससे मुझे कोई सरोकार नही रखना चाहिए। यहाँ सवाल एक बहुत बड़े सिद्धान्तका है। हम न केवल शोषणसे छुटकारा पानेको आतुर है, बल्कि भारतको बहुत अधिक औद्योगिक राष्ट्र बनने और किसी भी राष्ट्र या व्यक्ति-समूहपर अपना प्रभुत्व स्थापित करनेसे रोकनेको भी व्याकुल है। राष्ट्रोंके बीच सच्ची और जीवन्त समानता होनी चाहिए, और अगर इस स्थितिके आनेमें अभी वर्षों लगने है तो जबतक हम उसे पा नही लेते, हम वीरानेमें भटकते रहना पसन्द करेंगे। यह कोई शब्दोंका ढकोसला नही, बल्कि मानव-स्वभावकी एक मौलिक आकांक्षा है।

प्र० : अभी कुछ वर्ष तो ग्रेटब्रिटेन गोल्ड कोस्ट-जैसे कतिपय क्षेत्रोंको अधीन रखेगा। क्या आपको इसपर भी आपत्ति है?

उ० बेशक मुझे आपत्ति होगी। निस्सन्देह भारत ब्रिटेनकी नीतिको प्रभावित करना चाहेगा। मान लीजिए कि वैस्ट कोस्ट या स्वाजीलैंडमें स्वाधीनताकी माँग की जाती है तो भारत यह महसूस करेगा कि . ।[1] मैं भारतको दमनका साधन नहीं बनने देना चाहता। मैं वह दिन देखनेको आतुर हूँ जब भारत दूसरे राष्ट्रोंकी आक्रामक प्रवृत्तिपर एक अंकुशका काम करेगा। लेकिन मैं तत्काल सम्बन्ध-विच्छेद नही करूँगा, यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि जुलू और स्वाजी लोगोंको भ्रष्ट किया जा रहा है और उनका शोषण हो रहा है। यह नीति सर्वथा गलत है। इन्हें अपना उपनिवेश कहना गर्वकी बात नही होनी चाहिए। ऐसा कहना बेकार है कि जबतक ये ताजके उपनिवेश हैं तबतक हम इनके लिए सब-कुछ करते है, और जब इन्हें स्वराज्य मिल जायेगा तो हम कुछ नही करेंगे।

प्र० : साझेदारीका मतलब आर्थिक गठ-बन्धन है या इस सम्बन्धका आधार साझेदारोंके लिए एक सामान्य ब्रिटिश ताज होना है?

उ० यह सवाल मेरे मनको बहुत परेशान करता रहा है। ताज तो है, लेकिन उससे मुझे कहाँतक सम्बन्ध रखना चाहिए, यह मैं नही कह सकता। इसपर मुझे मित्रोंसे बातचीत करनी चाहिए। यह बहुत ही वास्तविक और अच्छा प्रश्न है कि भारतको ताजके साथ क्या सम्बन्ध रखना चाहिए। कौंसिलकी क्या परिभाषा की जायेगी, इसमें नैतिक अड़चन कम उपयुक्त भाषाके प्रयोगका सवाल ज्यादा है।

प्र० : आप राष्ट्रोंके बीच सन्धि-सम्बन्धोंकी तरह साझेदारीके समाप्त किये जानेकी बात कहते हैं, लेकिन उसकी समाप्तिकी शर्त क्या होगी?

उ० यह कि अगर साझेदारी ब्रिटेनके लिए लाभदायक नहीं है तो उसे उससे अलग हो जाना चाहिए। सामान्य सम्बन्धोंका स्वरूप अनुबन्धात्मक सम्बन्धवाला होगा। संवैधानिक साझेदारीके लिए मैंने कोई शर्त निर्धारित नहीं की है। हाँ, इसमें साझेदारीसे अलग होनेसे पहले उसकी सूचना देनेकी बात जरूर शामिल है।

१. मूलमें यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

४. अभीतक मैने [किसीके लिए भी] विशेष सुरक्षाकी व्यवस्थाको स्वीकार नही किया है। जब मुझे जवाब देनेके लिए बाध्य किया गया है तो मैने भारतीय सिविल सेवा तथा सेनाके उन अधिकारियोके सम्बन्धमे जिन्हे आप वहाँ रहने देगे, सुरक्षाकी बात कही है। कारण, हम दुनियाके सामने एक साखवाले राष्ट्रके रूपमे जाना चाहते है। हम अपने सिर जो जिम्मेदारियाँ ले रहे है, उनके सम्बन्धमे हमे अपने-आपको पूरी तरह आश्वस्त कर लेना चाहिए . . ।[1] मेरे बारेमे सरासर झूठी बात कही गई है कि मै तो कोई भी देनदारी स्वीकार करनेको तैयार ही नही हूँ। [भारत सरकार द्वारा चालू किये गये] कर्जोमे पैसा देनेवाली विधवाओकी बरबादी आदिका भयावह चित्र-पेश किया गया है। यह बिलकुल झूठ है। उस पक्षका तो किसी भी तरह कोई नुकसान किया ही नही जा सकता। इन देनदारियोके सम्बन्धमे साझेदारकी हैसियतसे ग्रेट ब्रिटेनकी ईमानदारी, प्रतिष्ठा बल्कि सब-कुछ कसौटीपर चढा हुआ है। जो-कुछ किसी व्यापारिक पेढीमे होता है, वह सब ब्रिटेन और भारतके बीच भी होना चाहिए। हमे लेनदारोको इस बातके लिए आश्वस्त कर देना चाहिए कि हम जो देनदारियाँ अपने सिर ले रहे है, उन्हे चुकाया जायेगा। एक तीसरी चीजके सम्बन्धमे भी सुरक्षात्मक पूर्वोपायकी बात आती है। वह चीज है भारतमे यूरोपीयोके मौजूदा हित। .[2] प्रत्येक न्यायोचित हितको कानूनन सुरक्षा प्रदान की जायेगी। हमारा जातिगत भेदभाव बरतनेका कोई इरादा नही है। हम दक्षिण आफ्रिकामे तथा अन्यत्र भी लडते रहे है। लेकिन यह एक बात है और विनाशकारी स्पर्धासे राष्ट्रकी रक्षा करना बिलकुल दूसरी बात है। स्वीडनकी दीयासलाईके कारखानोकी एक व्यावसायिक पेढी है। एक महारोगकी तरह वह अब भारतमे उतर आई है और उससे भारतके कारखानोकी बरबादीका खतरा पैदा हो गया है। उन व्यापारियोने बहुत अच्छी शर्तोपर सरकारसे सौदा कर लिया है। उन्हे बहुत उपयुक्त जमीन मिल गई है और यहाँतक कि वे अण्डमानमे भी प्रवेश कर गये है। इसपर मुझे आपत्ति इसलिए नही है कि ये स्वीडनके व्यवसायी है। यह तो भारतीय व्यवसायियोकी पेढी होती तब भी इसपर मै आपत्ति करता। हमारी साझेदारीमें विशेष सुविधा-प्राप्त राष्ट्रके दर्जेसे सम्बन्धित एक धारा रहेगी, लेकिन उसमे जातिगत भेद-भावकी कोई बात नही होगी।

५ प्रक्रिया तो स्वभावत. वही होगी जो अलग होनेवाली और शामिल होने-वाली पेढियोके बीच होती है।[3] अगर ब्रिटेन यह चीज करना चाहता है तो उसे शोभनीय ढगसे करना चाहिए। सुरक्षात्मक पूर्वोपायोसे स्वतन्त्रतामे किसी भी तरहकी कमी नही आती।

हॉरेस अलेक्जैंडर: शूस्टरका कहना है कि एक रिजर्व बैंक स्थापित करने और नया आन्तरिक ऋण इकट्ठा करनेका आश्वासन दिया जाये।

१. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नही है।
२ व ३. यहाँ कुछ वाक्य, जिनका आशय स्पष्ट नहीं है, छोड दिये गये है।

६. गाधीजी : हमे यह करना पडेगा । हम भी रिजर्व बैंक चाहते है, लेकिन उसके लिए कोई आरक्षित निधि नहीं है। हमारे पास आरक्षित स्वर्ण-निधि नही है। मै क्या चाहता हूँ, मैंने आपको इसका एक सकेत दे दिया है। स्वेच्छापर आधारित साझेदारी। लेकिन अवधिके बारेमें मै कुछ नही कह सकता।

७. कोई भी चुनावके बलपर नहीं आया — निमन्त्रणपर भी कोई नही आया। अगर प्रधान मन्त्री चाहते तो मुझे परिषद्‌मे शामिल होनेसे रोक सकते थे। किसी ससद-सदस्यको बाहर नही रखा जा सकता। किसीको बाहर रखनेके लिए किसी भी निश्चित कार्य-विधिकी आवश्यकता नही है। यह स्थिति बहुत अटपटी है। मै एक राष्ट्रके अतिथिके रूपमे आया हूँ और मुझे सँभल-सँभलकर चलना चाहिए और मै आपको यह नही बता सकता कि मै कितना सँभल-सँभलकर चल रहा हूँ। . .[1] मेरे सामने एक बहुत बडी नैतिक दुविधा है। मुझे राजाके यहाँ एक भोज-समारोहमें निमन्त्रित किया गया है। भारतमे जो-कुछ हो रहा है उससे मेरा मन इतना व्यथित है और मै इतना आहत महसूस कर रहा हूँ कि उस समारोहमे न जाना ही मुझे अच्छा लगेगा। अगर मै निर्वाचित प्रतिनिधि होता तो मुझे वहाँ जानेमे कोई सकोच न होता। वैसे तो यह समारोह सामाजिक है, लेकिन इसका असली स्वरूप राज-नीतिक है। लेकिन मै जल्दीमें कोई निर्णय नही लेने जा रहा हूँ। मैंने व्हाइट हॉलसे सम्पर्क किया। मै हर क्षण किसी चीजकी वैधता नही, बल्कि उसके नैतिक औचित्यको समझकर ही चलनेवाला आदमी हूँ।

इस परिषद्‌में सदस्य जहाँ-तहाँसे नामजद करके भर दिये गये है। दूसरे प्रति-निधि वाइसरायके चुने हुए हैं। परिषद्‌के गठनके सम्बन्धमे उनकी सारी कल्पना ही गलत थी। चुनाव उन्होंने किया और उनके लिए ऐसा निर्णय करना सम्भव नही था, जिसमे गलती न हो। मै आपको बता सकता हूँ कि इस सबके पीछे कितनी चाल रही है, और जो-कुछ हुआ है उसमें कितना जोड-तोड किया गया है। महासभाको हम निश्चय ही अपने बसमें कर लेते। अस्पृश्योका एकमात्र निर्वाचित प्रतिनिधि मै ही होता। अगर मै पृथक् प्रतिनिधित्वकी इस गन्दी योजनाको स्वीकार कर लेता हूँ तो उसका मतलब उनके जन्मसिद्ध अधिकारको बेच देना होगा। मुजे मेरे मित्र हैं, लेकिन प्रतिक्रियावादी हैं। क्या काग्रेस कभी भी देशी राज्योकी प्रजाके अधिकारोका इस तरह बेच दिया जाना स्वीकार कर सकती थी? राजाओके लिए यह कहना कि वे अपनी प्रजाका भी प्रतिनिधित्व करते है, शैतानी है। राजा लोग यहाँ दो हैसियतोसे आये, यह परिषद्‌के गठनमे एक घातक दोष है। एक देशी-राज्य प्रजा परिषद् है, लेकिन उनको अपने फौलादी नियमोमे बाँधकर मैंने ही रोक रखा है। उन्हे मैंने ही रोक रखा है और यद्यपि वे बडे ऊँचे दर्जेके और काफी योग्य लोग हैं, फिर भी मैंने उनसे अपनी वर्तमान स्थितिसे सन्तुष्ट रहनेको कहा है। लेकिन इससे आपको यह तो स्पष्ट हो गया होगा कि परिषद् सर्वथा अप्रातिनिधिक है। आज सम्प्रदायवादियोकी चर्चा अखबारोके मुख पृष्ठपर की जाती है। मै तो मुसल-

१. यहाँ मूलमें कुछ शब्द अस्पष्ट है।

मानो और सिखोसे बेहिचक कहूँगा कि आप जो ले सकते है, ले लीजिए। आज यह एक स्वप्नदर्शीका स्वप्न-मात्र है। इसलिए मैंने तीन सुझाव दिये है : (१) मैंने गोलमेज परिषद्के सामने हिन्दुओ, मुसलमानों और सिखो, तीनोकी समिति द्वारा तैयार की गई कांग्रेसकी योजना रखी है। उन लोगोने सभी प्रमुख मुसलमानो और प्रमुख सिखोसे मिलकर यह योजना तैयार की है। (२) यह योजना स्वीकार न हो तो आपसमे पच-फैसले द्वारा निबटारा कर लिया जाये। (३) यह भी न हो सके तो एक न्यायाधिकरण नियुक्त किया जाये। चौथी चीज — अर्थात् यह कि सरकारसे कोई समाधान सुझानेको कहा जाये — ऐसी है जिसमे मै कभी शरीक नही हो सकता। इसका मतलब तो देशको बेच देना होगा। कारण, ऐसे मामलोमे कोई भी सरकार ऐसा समाधान नही सुझायेगी जो खुद उसके अनुकूल न हो। मैंने कहा कि ज्यादासे-ज्यादा यही किया जा सकता है कि हम इस सवालको लेकर ब्रिटिश न्यायालयमे जाये। न्यायाधिकरणमें गैर-हिन्दू और गैर-मुसलमान न्यायाधीश हो अथवा प्रिवी कौसिलकी न्यायिक समितिके सदस्य। ये मेरे ठोस वैकल्पिक सुझाव है। अगर सरकार साहससे काम नही ले सकती तो परिषद्का विफल होना निश्चित है। सरकारने यह कहकर कि साम्प्रदायिक मसलेके हलके बिना कुछ नही किया जा सकता अपनेको बहुत अटपटी स्थितिमे डाल लिया। साम्प्रदायिक सवालसे सुरक्षा-व्यवस्थाका क्या सम्बन्ध है? कांग्रेसने मामलेके साम्प्रदायिक समाधानकी बात मान लेनेकी मूर्खता की और उससे जो भूल हो चुकी है, उसका मार्जन अब आसानीसे नही किया जा सकता। डाकगाडीसे कूदकर मै हवाई जहाजपर कैसे सवार हो सकता हूँ? वह तो अपने विनाशको निमन्त्रण देना होगा।[1] . . .

मैंने आपको मोटे तौरपर यह बता दिया कि कौन-सी चीजें मुझे परेशान कर रही है। आप चाहे तो यह सोच सकते है कि कांग्रेसको स्वराज्यके लिए किसी भी अल्पसख्यक समुदायके अधिकारोका सौदा करनेका हक नहीं है। पृथक् निर्वाचक-मण्डल स्वीकार करना कांग्रेसकी दृष्टिमे मुसलमानो, सिखो, हिन्दुओ और समूचे राष्ट्रके लिए बुरा है। लेकिन सबसे बुरा अस्पृश्योके लिए है। अस्पृश्योकी समस्या इससे ऊपर है। मै, जिसने अस्पृश्योके सुख-दु:खको अपना सुख-दु:ख समझा है और जो उनके जीवनको जानता-समझता है, ऐसा मानता हूँ कि उन्हे पृथक् निर्वाचक-मण्डल देना उनको मार देनेके समान होगा। वे उच्चतर वर्गोके हाथोमे है। वे लोग उन्हे पूरी तरह दबा सकते है और इनसे, जो पूरी तरहसे उनकी दयापर निर्भर है, प्रतिशोध ले सकते है।

मै आपके सामने अपनी शर्मनाक स्थितिका भले इजहार कर रहा हूँ। लेकिन मौजूदा परिस्थितियोमे पृथक् निर्वाचक-मण्डल स्वीकार करके मै उनके विनाशको आमन्त्रण कैसे दे सकता हूँ? मै इस अपराधका भागी नही बनूँगा। अपनी समस्त योग्यताओके बावजूद डॉ० अम्बेडकर इस सवालपर अपना विवेक खो बैठे है। जहाँ-

१. आगेके कुछ शब्द स्पष्ट नहीं है।

कही भी हिन्दू धर्म है, वहाँ उन्हे अन्याय ही दिखाई देता है। अगर वे अस्पृश्योके सच्चे प्रतिनिधि होते तो मै अलग हो जाता। आज वे इस सवालपर सुसम्बद्ध ढगसे और विवेकके साथ विचार नही कर सकते। मै उनका अस्पृश्योका प्रतिनिधि होनेका दावा स्वीकार नहीं करता। उनका प्रतिनिधि मै हूँ। आप उनसे पूछकर देखिए। हो सकता है, वे मुझे न चुने, लेकिन डॉ० अम्बेडकर तो कदापि नही चुने जायेंगे। काग्रेसकी योजनामे अल्पसख्यक समुदायोके सभी हितोकी रक्षाकी व्यवस्था है। मै एक पक्ति या धारा उसमे और जोडना चाहूँगा — न्यायाधिकरणसे सम्बन्धित। मैंने कहा था कि मै यह धारा जोडनेका सुझाव रखता हूँ और मै कोशिश करूँगा कि इसे स्वीकार कर लिया जाये।

अब दूसरे छोरपर बैठे लोगोकी बात ले। यूरोपीयोके लिए पृथक् प्रतिनिधित्वकी बातका विरोध मुझे दूसरे कारणोसे करना चाहिए। वे तो शासक जातिके है। उनका इतना बोलबाला रहा है कि उन्होने एक भारतीय गवर्नरतक की निगहबानी की और उसका जीवन दूभर बना दिया। खुद सिन्हाके सचिवालयके लोग उनपर जासूसी करते थे। यहाँतक कि उनके नौकर भी उनपर जासूसी करते थे। उनका मन इतना व्यथित हुआ कि उसीसे उनका देहावसान हो गया। मैंने उन्हे अपनी सत्ताकी पराकाष्ठा पर देखा था। और जब वे बिलकुल टूट चुके थे तब भी मै उनसे मिला। मैंने सर ह्यूबर्ट कारसे मुस्कराते हुए कहा था: "आप हमारे मत लेनेके लिए हमारे पास क्यो नही आते? आप इस बातके लिए आश्वस्त रह सकते है कि श्री एन्ड्रयूज-जैसे लोग भारतीय मतदाताओ द्वारा हर समय, हर स्थानमे चुन लिये जायेंगे।"[1] कारने कहा कि एन्ड्रयूज अग्रेजोके ठीक प्रतिनिधि नहीं हो सकते। जिस तरह कोई भारतीय अग्रेजोके मानसका प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता उसी तरह एन्ड्रयूज भी नही कर सकते। इसपर मैंने कहा कि "अगर अग्रेजोको भारतमे रहना है तो उन्हे तो भारतीय मानसका ही प्रतिनिधित्व करना चाहिए। दादाभाई नौरोजी, जिन्हे लॉर्ड सैलिसबरी काला आदमी कहते थे, सेन्ट्रल फिन्सबरीके मतदाताओ द्वारा चुने गये थे।"

अब आग्ल-भारतीयोकी बात ले। उन्हें जितना कर्नल गिडनी जानते है, उससे बहुत ज्यादा मै जानता हूँ। मैंने उन्हे अपने सामने रोते देखा है। वे मेरे पास आकर कहते है, "हम तो दोगले है। अग्रेज लोग हमे इज्जत नहीं देते, भारतीय अपनानेको तैयार नहीं है।" मै कहता हूँ, "आप हमारे पास आइए, अपना नकली रूप उतार फेंकिए, फिर हम आपको अवश्य अपनायेंगे।" मैं एक मोटे-ताजे आग्ल-भारतीयसे मिला। उसे यह विचार ही असह्य था कि उसकी माँ एक भारतीय स्त्री थी। राष्ट्रीय सरकारके अधीन अगर उन्हे पृथक् निर्वाचक-मण्डल मिल गया तो वे समाजके चाण्डाल और अस्पृश्य बनकर रह जायेंगे। सर हेनरी गिडनीकी स्थिति बहुत अच्छी हो सकती है, लेकिन दूसरोको भी तो नाइटकी उपाधिसे विभूषित नहीं किया जा सकता। लेकिन अगर वे हमारे पास आयेंगे और अपने उचित व्यवहारके बलपर हमारे देशभाइयोके

१. यह वाक्य *यंग इंडिया*से लिया गया है।

मताधिकारका लाभ उठाना चाहेगे तो हम उनका स्वागत करेगे — कुमारप्पा — जोजेफ कुमारप्पा[1] — अपनी सेवाओके बलपर गुजरातको अपनी अँगुलीके इशारेसे नचा सकते है।

हॉरेस एलेक्जेंडर : तो आप परिषद्का गठन निर्वाचनके आधारपर कराना पसन्द करते। जरा बताइए तो यह काम आप कैसे करते?

गाधीजी : किन लोगोको बुलाया जायेगा इसके सम्बन्धमे ठीक सिद्धान्त निश्चित किया जाना चाहिए था। जैनो और लिगायतोकी ओरसे भी तार आये है। अगर इन तथाकथित कृत्रिम समुदायोको भी सन्तुष्ट करनेकी बात हो तो आप वह कैसे कर सकते है?

काग्रेसकी योजनामे (१) समुदाय-विशेषको अतिरिक्त प्रतिनिधित्व देना, (२) अगर आर्थिक दृष्टिसे सम्भव हो तो सिन्धको एक अलग प्रान्त बनाना, (३) सयुक्त निर्वाचक-मण्डल और वयस्क मताधिकार, (४) अल्पसख्यक-समुदायोके लिए सीटोका आरक्षण और उन्हे अतिरिक्त सीट देना तथा (५) सभी समुदायोके लिए सुरक्षा एव अधिकार तथा स्वतन्त्रताकी समुचित व्यवस्था करना, ये तमाम चीजे स्वीकार की गई है।

प्र० : क्या यह सच नहीं है कि अगर बहुमतकी समस्याका समाधान न हो सके तो उस हालतमें अधिकांश मुसलमान जिम्मेदारी केन्द्रके हाथोंमें रखनेपर सहमत हैं?

उ० : मेरा कहना है कि चाहे वे परिषद्मे शामिल हो या न हो, उसकी कार्यवाही सम्पन्न होनी ही है। अगर ब्रिटिश सरकार सत्ता त्यागना चाहती है, तो उसकी प्रगतिके मार्गमे काग्रेसको भी बाधक नही बनने देना चाहिए। अगर कोई ठीक योजना तैयार की जाती है तो किसी पक्षके उसका विरोध करनेसे क्या फर्क पडता है? आखिरकार काग्रेस तो मुसलमानोका भी प्रतिनिधित्व करती है। न्यायाधिकरणमे पारसी, ईसाई या इन सभी जातियोके न्यायाधीश हो, लेकिन हिन्दू या मुसलमान नही। यह टालमटोलका खेल मूर्खतापूर्ण, चिढानेवाला और अपमानजनक है।

सर फ्रांसिस यंगहस्बेंड : क्या पार्लियामेंट द्वारा पास किये किसी कानूनमें पेश किये गये ऐसे उपायसे काम चलेगा जिसमें इस बातका संकेत हो कि भारतकी जनता अलग होना चाहती है या नहीं?

उ० : हाँ, चलेगा, लेकिन साझेदारी काफी मजबूत होनी चाहिए और ऐसी नही कि विघटनकारी तत्त्व उसे जब चाहे तोड दे।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, १९३१; सौजन्य : नारायण देसाई

१. डॉ० जे० सी० कुमारप्पा।

१७१. पत्र : रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्सको[1]

[अक्टूबर/नवम्बर, १९३१]

प्रिय रेजिनॉल्ड,

परिषदमें बैठे-बैठे ही ये दो पंक्तियाँ तुम्हारे प्रश्नके उत्तरमें लिख रहा हूँ। कठिनाईमें पड़े अपने साझेदार राष्ट्रकी सहायता करनी चाहिए, इस दृष्टिसे — बेशक यह मानते हुए कि साझेदारी सम्भव है — मैं लंकाशायरको प्राथमिकता देनेके पक्षमें हूँ। अगर मैं मुसीबतमें पड़े अपने एक साझेदारको प्राथमिकता देता हूँ तो उसपर जापानको क्यों बुरा लगना चाहिए? अगर भारत पराधीन राष्ट्रके बजाय साझेदार बन जाता है तो साम्राज्य रह ही नहीं जायेगा। तुम्हें मेरे सारे कार्योंको अहिंसाके सन्दर्भमें रखकर देखना चाहिए। अहिंसा अनैतिक कार्य-साधक उपायोंका सहारा लेनेकी छूट नहीं देती।

मेरे प्रस्थान करनेसे पहले मुझसे मिलना तो होगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५४१)से; सौजन्य : स्वार्थमोर कॉलेज, फिलाडेल्फिया

१७२. भाषण : पेम्ब्रोक कॉलेजमें[2]

कैम्ब्रिज

[१ नवम्बर, १९३१][3]

साझेदारी बराबरकी शर्तोंपर होनी चाहिए। ऐसा न हो कि सुन्दर शब्दोंमें साझेदारीके बजाय 'पराधीनता' ही दे दी जाये। इसका मतलब यह हुआ कि अगर

१. रेजिनाल्ड रेनॉल्ड्स टु लिव इन मैनकाइण्डमें लिखते हैं : "आर्थिक रियायतें देना उचित माननेकी नीतिका विरोध करते हुए मैंने एक और नाजुक प्रश्न पूछा था, जिसके जवाबमें यह पत्र आया। उनकी इस नीतिका कारण मैं भ्रमवश दृढ़ताका अभाव मानता था। उनके पत्रसे स्पष्ट हो गया कि उन्होंने कमजोरीके कारण ये रियायतें देनेकी बात नहीं कही बल्कि इसका कारण तो ब्रिटिश जनताके प्रति उनकी सहानुभूति थी, जिसकी आर्थिक समस्याओंके बारेमें उन्होंने बहुत-कुछ जान लिया था। लंकाशायरके वस्त्र-उद्योग कर्मचारियोंकी अवस्थामें उनकी विशेष रुचि थी।"

२. महादेव देसाईके "लन्दनका पत्र" से उद्धृत। महादेव देसाईके अनुसार यह कई घंटे तक चलनेवाली वार्ताका सार है। उस बैठकमें एलिस बार्कर, लाविज डिकिंसन, डॉ० जॉन मरे, डॉ० बेकर और एवलिन रेंच शामिल थे।

३. तारीख गांधीजीकी डायरीके अनुसार दी गई है। डायरीके अनुसार यह बैठक उस दिन सुबह हुई थी।

इच्छा हुई तो हम उस आगमें से अवश्य गुजरेंगे जो हमें शुद्ध और सक्षम बनायेगी। मैंने दूसरोके खूनकी नदियाँ बहानेकी बात नही कही है, क्योकि मै जानता हूँ कि भारतमें हिंसावादी दल मिटता जा रहा है। लेकिन, मैंने हमारे अपने खूनकी गगा बहा देनेकी — परिस्थितिका सामना करनेके लिए स्वेच्छापूर्वक पवित्र आत्मबलिदान करनेकी — बात अवश्य कही है। अगर भारतको उस आँचको सहना चाहिए तो उसे सहनेसे उसको लाभ ही होगा। जैसा आप सोचते हैं, उस तरह मै तो नही सोचता कि बहुत ज्यादा साम्प्रदायिक दगे होंगे। भारतके नब्बे प्रतिशत लोग गाँवोमें रहते हैं और यह झगडा शहरोमें रहनेवाले दस प्रतिशत लोगोतक ही सीमित है। इस धीमी, गर्हित और गरिमाविहीन मृत्युके सामने उस रक्तपातको मै कुछ भी नही मानूँगा। बेशक, इसमें यह तथ्य तो निहित है ही कि भारतको उसपर कब्जा जमाये रखनेवाली विदेशी सेना और दुनियाकी सबसे अधिक व्ययसाध्य सिविल सेवाका खर्च उठानेको मजबूर करके उसे भूखो मारा जा रहा है। जापानके पास बहुत बडी सेना और बहुत ज्यादा सैनिक साज-सामान है, किन्तु वह भी सेनापर उतना खर्च नही करता, जितना हमें करना पड़ता है।

आपसे मेरा यही झगड़ा है। मै जानता हूँ कि हर ईमानदार अंग्रेज भारतको स्वतन्त्र देखना चाहता है। लेकिन उनका ऐसा मानना क्या दु खकी बात नही है कि ब्रिटेनकी सेनाके वहाँसे हटते ही दूसरे देश उसपर टूट पडेंगे और देशके अन्दर आपसमें भी भारी मार-काट मच जायेगी? इसके विपरीत, मै यह मानता हूँ कि आन्तरिक अशान्तिका कारण अंग्रेजोंका वहाँ मौजूद रहना है, क्योकि आपने 'फूट डालो और राज्य करो' के सिद्धान्तके अनुसार ही भारतपर शासन किया है। आप अपने नेक इरादोके कारण ऐसा महसूस करते हैं कि 'पटेला मेंढकको चोट नही पहुँचाता'। लेकिन, उससे चोट न पहुँचे, यह हो ही नही सकता। आप भारतमें हमारे बुलानेसे नही बने हुए हैं। आपको इस बातको समझना चाहिए कि सर्वत्र घोर असन्तोष है और हर आदमी कह रहा है कि "हम विदेशी शासन नही चाहते।" और आपके बिना हमारा क्या होगा, इसकी इतनी अधिक चिन्ता आप लोगोंको क्यो हो रही है? आप अंग्रेजोंके भारत आनेसे पूर्वके इतिहासको देखें। उसमें आपको हिन्दू-मुस्लिम दगोंके आजसे ज्यादा उदाहरण नही मिलेंगे। सच तो यह है कि मेरे जमानेका इतिहास और भी ज्यादा काला है। सचाई यह है कि ब्रिटिश सेना दंगोंको रोकनेमें असमर्थ है, यद्यपि उसमें दोषी और निर्दोष दोनोको सजा देनेकी पर्याप्त सामर्थ्य है। औरंगजेबके शासन-कालमें भी हमें दगोंका कोई हवाला नहीं मिलता। और जहाँतक, विदेशी आक्रमणका सम्बन्ध है, भयंकरसे-भयंकर आक्रमण भी ग्राम्य जीवनको नही छू सका। महामारी भारतमें समय-समयपर प्रकट होती रही है। अगर उससे बचनेके लिए — जो हो सकता है, एक प्रकारसे हमारे शुद्धीकरणकी ही प्रक्रिया साबित हो — हम डाक्टरोकी एक पूरी फौज रखें और उसका खर्च चलानेके लिए अपनेको भूखों मारे, इससे तो अच्छा हम यही समझेंगे कि अगर हमें शुद्ध करनेवाली उस विपत्तिको आना है तो वह आये। बाघो और सिंहो द्वारा यदा-कदा मचाये जानेवाले उत्पातोको

लीजिए। क्या हम उन हिंस्र पशुओसे सीधे लड लेनेका खतरा उठानेके बजाय उनसे बचनेके लिए करोडो रुपये खर्च करके किले बनवायेगे? माफ कीजिएगा, हमारा राष्ट्र ऐसे कापुरुषोका राष्ट्र नही है जो सदा खतरेसे भागते रहेगे। विदेशी सगीनोके बलपर जीवित रहनेसे दुनियासे बिलकुल मिट जाना ही हमारे लिए बेहतर होगा। नही, आपको हमपर इतना भरोसा करना ही होगा कि हम अपने झगडे आपसमें ही निबटा लेना जानते है, विदेशी आक्रमणोका मुकाबला करना हमें आता है। भारतने बहुत-से आक्रमण झेले हैं और उसने ऐसी सभ्यता और सस्कृतिको जन्म दिया है जिससे अच्छी सभ्यता और सस्कृतिका जन्म दुनियामे कभी नही हुआ। तो अब उसपर तरस खाने और उसे मुलायम रुईमे लपेटकर रखनेकी कोई जरूरत नही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-११-१९३१

१७३. भाषण : भारतीय मजलिसमें

कैम्ब्रिज

१ नवम्बर, १९३१

गोलमेज परिषद्में आये प्रतिनिधियोंका रवैया भारतकी जनताके रवैयेका प्रतिरूप नहीं है। अगर गोलमेज परिषद् विफल हुई तो निश्चय ही भारतमें फिरसे सविनय प्रतिरोध आरम्भ किया जायेगा। वह तत्काल शुरू नहीं किया जायेगा। सविनय प्रतिरोध ऐसा आन्दोलन है जिसे फिलहाल समेट लिया गया है। और वह फिरसे तभी शुरू किया जायेगा जब कांग्रेस समुचित विचार-विमर्श करनेके बाद विधिपूर्वक उसे शुरू करनेका निश्चय करेगी।

कैम्ब्रिजमें भारतीय मजलिसकी एक सभामें बोलते हुए श्री गांधीने उक्त विचार व्यक्त किये।

बोलते हुए उन्हे यह भी स्मरण हो आया कि १९०८ में[1] भी उन्होंने मजलिसके सामने भाषण दिया था।

एक प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा कि मेरा समाधान तो वही है जो कांग्रेसका है, लेकिन वह चूँकि मुसलमानोको स्वीकार्य नहीं है, इसलिए मैंने सुझाव दिया है कि मामलेको या तो आपसी पंच-फैसले द्वारा तय कर लिया जाये या उसे एक न्यायाधिकरणके निर्णयार्थ सौंप दिया जाये। अगर ये दोनों वैकल्पिक सुझाव स्वीकार नहीं किये जाते तो समय ही इसका समाधान निकाल सकता है।

१. तात्पर्य शायद १९०९ से है, जब गांधीजी एक शिष्टमण्डलके सदस्यके रूपमें ब्रिटेन गये थे।

भारत इग्लैंडसे अलग न भी हो तो भी वर्तमान सम्बन्धोमे आमूल परिवर्तन किया जाये। इग्लैंडसे भारतका जो लगाव रहे वह सम्पूर्ण रूपसे मानव-जातिके कल्याणके लिए ही रहे। भारतमे अकेले दुनियाके राष्ट्रोंका शोषण करनेकी सामर्थ्य नही है, लेकिन ग्रेट ब्रिटेनकी सहायतासे वह वैसा कर सकता है। साझेदारीका मतलब यह भी होना चाहिए कि आगे शोषण न किया जाये और यदि इग्लैड उससे बाज न आये तो भारतको उससे सम्बन्ध तोड लेना चाहिए। आवश्यकता केवल इस बातकी है कि ब्रिटेनकी शोषणकी नीतिमे परिवर्तन किया जाये। साझेदारी कायम हो जानेके बाद ब्रिटेनको इस बातपर गर्व नही कर सकना चाहिए कि उसके पास एक जबरदस्त नौसेना है जो जलमार्गोंकी रखवाली करती है और जलमार्गसे होनेवाले उसके अन्तरर्राष्ट्रीय व्यापारकी रक्षा करती है।

सवाल है कि ब्रिटेनके दक्षिण आफ्रिकी उपनिवेशके बारेमे क्या किया जाये। हमारी साझेदारीकी पूर्व-शर्तके रूपमे मै दक्षिण आफ्रिकाके साथ ब्रिटेनके सम्बन्धोमे परिवर्तन किये जानेका आग्रह नहीं रखूंगा। लेकिन, निश्चय ही मै उन दक्षिण आफ्रिकी जातियोकी मुक्तिके लिए प्रयत्न करूँगा जिन्हे — मै अपने अनुभवके आधारपर कह सकता हूँ कि — शोषण-चक्रमे पीसा जा रहा है। लेकिन अगर यह न हो सके तो फिर ब्रिटेनके साथ साझेदारी रखनेसे मेरा कोई मतलब नही होगा — भले ही वह साझेदारी भारतके लिए लाभदायक ही क्यो न हो। मेरा निजी विचार पूछे तो कहूँगा कि दुनियाको शोषणसे मुक्त करनेकी सम्भावनासे युक्त साझेदारी मेरे राष्ट्रके लिए गर्वका विषय होगी और मै उसे सदा कायम रखूंगा। लेकिन भारत शोषणकी किसी भी नीतिको किसी भी तरहसे स्वीकार नहीं कर सकता और खुद मेरी बात पूछे तो मै कहूँगा कि अगर काग्रेसने कभी साम्राज्यवादी नीति अपनाई तो मै उससे भी अपने सम्बन्ध तोड़ लूंगा।

अब सवाल यह है कि क्या काग्रेस कमसे-कम फिलहाल दक्षिण आफ्रिका या कनाडाके समान दर्जा दे देनेसे सन्तुष्ट नही होगी। 'हाँ' कहनेमे जो खतरा है, उसे मैं देख रहा हूँ। यदि आपकी कल्पनामे इससे कोई ऊँचा और श्रेष्ठ दर्जा हो, जिसको पानेके लिए हमे आगे काम करना पडेगा तो मै कहूँगा 'नहीं'। लेकिन अगर यह ऐसा दर्जा है जिससे अधिक ऊँचे दर्जेकी आकाक्षा रखनेकी हमे जरूरत ही नही है तो मेरा उत्तर होगा — 'हाँ'। जो दर्जा दिया जाये उसे ऐसा होना चाहिए कि साधारण लोग भी समझ सके कि वह आजके दर्जेसे बिलकुल भिन्न है। इसलिए मै ऐसा अन्तरिम काल स्वीकार नही करूँगा जिसमे हमे, जो दर्जा हम पाना चाहते है, उससे घटिया दर्जेपर ही सन्तुष्ट रहना पडे। काग्रेस श्रेष्ठतम दर्जेसे कम किसी भी दर्जेसे सन्तुष्ट नही होगी।

लेकिन राजाओके बारेमे क्या किया जाये? वे तो स्वतन्त्रता नही चाहते? मै जानता हूँ कि वे नहीं चाहते — चाह भी नही सकते, क्योकि वे ब्रिटिश सरकारकी ही बोली तो बोलते हैं। लेकिन उनके अलावा भी ऐसे लोग है जो सोचते है कि वे ब्रिटेनके सरक्षणके बिना रह ही नही सकते। जहाँतक मेरी बात है, सेनाके पूरे निय-

न्त्रणसे कम किसी भी चीजको मैं स्वीकार नही कर सकता। अगर देशके अन्य सभी नेता सेनाके प्रश्नपर कोई बीचकी स्थिति स्वीकार कर ले तो मैं कहूँगा कि इस तरहके समझौतेसे मै अलग ही रहूँगा, लेकिन साथ ही मैं उसका विरोध भी नहीं करूँगा और न कष्ट-सहन करनेके लिए लोगोका आह्वान ही करूँगा। अगर कोई ऐसा बड़ा कदम उठाया जाता है जिससे अन्तत: और शीघ्र ही अन्तिम लक्ष्यकी प्राप्ति हो जाये तो मैं इससे सहमत तो नही होऊँगा, लेकिन इसे बरदाश्त कर लूँगा।

लेकिन, अगर आप यह कहे कि ब्रिटिश फौजी टुकड़ियाँ राष्ट्रीय सरकारके अधीन कभी भी काम नही करेगी तो इसका मतलब मुझे ग्रेट ब्रिटेनके साथ किसी भी प्रकारका सम्बन्ध रखनेके खिलाफ जबरदस्त आपत्ति करनेपर मजबूर करना होगा। हमपर कब्जा रखनेवाली सेना हम नही चाहते, उसे हम बरदाश्त नही कर सकते। भारतीयकरणकी किसी भी योजनासे हमारा कोई प्रयोजन सिद्ध नही होगा, क्योकि कमान तो अन्ततक अंग्रेजोके ही हाथोमें रहेगी और जिस तरह आज दायित्व सँभालनेकी हमारी क्षमतामे सन्देह किया जाता है उसी तरह तब भी किया जायेगा। सच्चा दायित्वपूर्ण शासन तभी स्थापित हो सकता है जब ब्रिटेनवाले भारत और भारतकी योग्यतामे विश्वास करने लगेंगे। अशान्ति तभी दूर होगी जब ब्रिटेनमे यह जीवन्त विश्वास पैदा हो जाये कि उसने भारतके साथ अन्याय किया है और उस अन्यायके मार्जन-स्वरूप अब उसे भारतीय मन्त्रियोंके अधीन ब्रिटिश सैनिक रखने चाहिए। आपको यह भय है कि भारतीय मन्त्रियोंके मूर्खतापूर्ण आदेशोंके परिणाम-स्वरूप ब्रिटिश सैनिकोको व्यर्थ ही अपने प्राण गँवाने पड़ सकते हैं। मगर आप बोअर युद्धको याद कीजिए, जब इंग्लैडमें ब्रिटिश जनरलोको बेवकूफ कहा गया था और ब्रिटिश सिपाहियोको शूरवीर। अगर ब्रिटिश जनरलोंसे गलती हुई तो भारतीय मन्त्रियोसे भी गलती हो सकती है। भारतीय मन्त्री सेनाध्यक्ष तथा अन्य सैनिक विशेषज्ञोसे तो हर मामलेपर विचार-विमर्श करेगे ही, लेकिन अन्तिम सत्ता और दायित्व मन्त्रियोंके ही हाथोंमें होगा। तब सेनाध्यक्ष चाहे तो त्यागपत्र दे दे या उनके आदेशोका पालन करे।

स्वतन्त्रताकी कीमत अपने खूनसे चुकानेका मेरा विचार सुनकर आप चौंक उठते हैं। मैं भारतकी दशाको ठीक-ठीक जाननेका दावा करता हूँ और मैं जानता हूँ कि आज वह तिल-तिलकर मर रहा है। जमीनके लगानकी जबरन वसूलीका मतलब है किसानोंके बच्चोंके मुँहका कौर छीनना। किसान लोग कैसी यातना भोग रहे है, उसका वर्णन नही किया जा सकता। उस अवस्थाको सुधारनेके लिए अन्तरिम व्यवस्था करनेसे काम नही चलेगा। अन्तरिम व्यवस्थाका जो अर्थ मैं लगाता हूँ, क्या ब्रिटिश सरकार उसका वह अर्थ समझती है? क्या वह ब्रिटिश सैनिकोको हमारे यहाँ हमारी सहायता करने, अर्थात् केवल हमारे ही हितोकी रक्षा करनेके लिए रखनेको तैयार है? अगर तैयार है तो हम उन सैनिकोको रखेंगे और उन्हे अपनी सामर्थ्य-के अनुसार वेतन देंगे। लेकिन अगर ब्रिटिश सरकार ईमानदारीसे ऐसा मानती है कि हम अक्षम हैं और इसलिए नियन्त्रण ढीला नही किया जाना चाहिए तो ईश्वरकी

१७५. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

लन्दन

३ नवम्बर, १९३१

गांधीजी का कार्यक्रम पूर्णतः भारतकी स्थितिपर निर्भर है। इस विषयकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा :

ख्रीष्ट जयन्तीके अवसरपर मैं यूरोपमे या भारतमे रहनेकी आशा करता हूँ। सब-कुछ भारतकी स्थितिपर निर्भर है। अपने ऊपर मेरा कोई अधिकार नही है, मै तो राष्ट्रका स्वेच्छासे बना हुआ दास हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ७-११-१९३१

१७६. भाषण : चिल्डरेंस हाउसकी बैठकमें[2]

मगलवार [३ नवम्बर, १९३१]

उन्होंने कहा कि अगर बच्चोंको सही ढंगका प्रशिक्षण दिया जाये और वैसी शिक्षा दी जाये जैसी देनी चाहिए — अर्थात् वह शिक्षा जो उनमें छिपे उत्तम गुणोंको निखार सके — तो हम भावी पीढ़ीसे बड़ी-बड़ी आशाएँ रख सकते है।

आजकी स्थिति सामान्यतया बडी अन्धकारपूर्ण है और आशाकी एकमात्र किरण बच्चोकी ओरसे ही आ रही है। यदि वे हमारी गलतियो, कटुता तथा ईर्ष्या-द्वेषसे सबक ले तो वे दुनियाको बेहतर बना सकते है।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, ४-११-१९३१

१. गांधीजी ने यह वक्तव्य प्रधान मन्त्री रैम्जे मैकडॉनाल्डके साथ ३ नवम्बरको सुबहके १०-१५ से लेकर ११ बजे तक चलनेवाली अपनी बातचीतके बाद दिया था।

२. यह किंग्सले हॉल बस्तीके तत्त्वावधानमें चलाये जानेवाले बो-स्थित चिल्ड्रेंस हाउसकी वार्षिक बैठक थी। बैठकसे पहले होनेवाले भोज-समारोहमें भी गाधीजी शामिल हुए थे।

१७७. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
४ नवम्बर, १९३१

श्री गांधी. देखता हूँ, यहाँ "क्षेत्र-अभ्यर्पण सन्धियों"का उल्लेख किया गया है। पता नहीं, सर सैम्युअल होर इस सम्बन्धमें कोई जानकारी दे सकेंगे या नहीं। ये सन्धियाँ गुप्त होंगी या खुली?

सर सैम्युअल होर: लॉर्ड रीडिंगका कहना है कि किसी तरहकी कोई गुप्त सन्धियाँ हैं ही नहीं।

सर तेजबहादुर सप्रू: हाँ ऐसा ही है।

श्री गांधी. लेकिन क्या नई सन्धियाँ खुली सन्धियाँ होंगी?

लॉर्ड रीडिंग: मैं समझता हूँ कि ऐसे मामलेमें, अर्थात् जब आप एसे अधिकारों पर विचार कर रहे हों जिनका अभ्यर्पण किया जाना हो, संविधानमें रुचि रखने वालों, उसकी रचना करनेवालों, उसमें हिस्सा लेनेवालों और उसमें सहयोग करने वालोंको यह मालूम होना ही चाहिए कि देशी राज्यों और भारत सरकारके बीच होनेवाली सन्धियोंकी शर्तें क्या हैं। . . .

श्री गांधी · क्या यहाँ आप इतना और जोड़ देंगे कि कांग्रेसकी राय यह है, अथवा कांग्रेसकी ओरसे यह मत व्यक्त किया गया है कि संघके सर्वोच्च न्यायालयको अपीलकी अन्तिम अदालत होना चाहिए?[2]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ३३७

१. समिति अपनी तीसरी रिपोर्टके अनुच्छेद ५२-६६ पर, जिसका सम्बन्ध संघ-न्यायालयसे था, विचार कर रही थी।

२. समितिने अभी-अभी अनुच्छेद ५८ पर विचार-विमर्श करना समाप्त किया था। इस अनुच्छेदमें कहा गया था कि सलाह लेनेके लिए किसी मामलेको न्यायालयमें पेश करनेका अधिकार केवल गवर्नर-जनरलको होगा जो "इस सम्बन्धमें निस्सन्देह, आम तौरपर अपने मन्त्रियोंकी सलाहपर चलेगा"। शफाअत अहमद खाँ, मुहम्मद शफी, जिन्ना तथा कुछ अन्य प्रतिनिधियोंने "मन्त्रियोंकी सलाहपर" शब्दोंके शामिल किये जानेका विरोध किया था। उनका कहना था कि इससे गवर्नर-जनरलके अधिकार मर्यादित हो जाते हैं। अध्यक्ष इन शब्दोंको निकाल देनेको राजी हो गये थे।

पंजाबके सवालका निबटारा न हो पानेका कारण हिन्दुओं, सिखों और मुसलमानोंका पारस्परिक अविश्वास था। लेकिन मैं आपसे कह दूं कि पंजाबके सवालको बहुत ज्यादा महत्त्व देनेकी जरूरत नहीं है।[1]

आप ऐसा न समझें कि भारतके हिन्दू, सिख और मुसलमान जनसाधारणको फाजिल मार गया है। अगर बात वैसी होती तो मैं भारतके सबसे बड़े संगठनके प्रतिनिधिके रूपमें यहाँ नहीं होता। लेकिन मूर्खता मौजूदा मण्डलीतक ही सीमित है। मौजूदा मण्डलीसे मेरा मतलब यहाँ इकट्ठे लोगोंसे नहीं, बल्कि गोलमेज परिषद्के प्रतिनिधियोंसे है, जिनमें मैं भी शामिल हूँ।

प्र० : गाँवोंमें रहनेवाले बेरोजगार लोग शहरोंमें जाकर किसी उद्योग-धन्धेमें काम क्यों नहीं करते?

उ० : यह उपाय तो कृषि-सम्बन्धी शाही आयोगने भी नहीं सुझाया।

प्र० : क्या आप यह बतायेंगे कि भारत जानेवाला अंग्रेज भारतीयोंके साथ कैसे सहयोग कर सकता है और किस तरह भारतकी सेवा कर सकता है?

उ० : सबसे पहले तो उसे चार्ली एन्ड्रयूजसे मिलकर पूछना चाहिए कि उन्होंने क्या किया और भारतकी सेवा करनेके लिए वे किस स्थितिसे गुजरे। उन्होंने अपने जीवनका प्रत्येक क्षण भारतकी सेवाके लिए अर्पित कर दिया है और जो काम कई हजार अंग्रेज कर पाते वह अकेले किया है। इसलिए वहाँ जानेवाला अंग्रेज पहला पाठ उन्हींसे सीखे। इसके अलावा उसे अपने मनमें कुछ सिखानेका खयाल लेकर नहीं बल्कि वह भारतकी सेवा कैसे कर सकता है, यह सीखनेका विचार लेकर जाना चाहिए, और अगर वह अपना काम इस भावनासे शुरू करेगा तो वह भारतीयोंको कुछ सिखायेगा भी जरूर। लेकिन, वैसा करते हुए वह अपने पृथक् अस्तित्वको भूल जायेगा और अपने-आपको भारतीयोंमें विलीन कर देगा। उदाहरणके लिए, हम श्री स्टोक्सको ले सकते हैं, जो शिमलाके पहाड़ी इलाकोंमें काम कर रहे हैं। वे अपने-आपको पूरी तरह भारतीयोंमें मिला दें और इस तरह उनकी सहायता करनेकी कोशिश करें। सच्चा प्रेम क्या नहीं कर सकता? तो जिनके मनमें भारतके प्रति प्रेम है, वे निश्चय ही भारत जायें। वहाँ सचमुच उनकी आवश्यकता है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-११-१९३१ और यंग इंडिया, १९-११-१९३१

१. आगेका अंश यंग इंडियामें प्रकाशित महादेव देसाईके "लन्दनका पत्र" से लिया गया है।

१७४. वक्तव्य : संघ-संरचना समितिके समक्ष[1]

लन्दन

२ नवम्बर, १९३१

आज मेरा मौनवार है। इसलिए मैं इस रिपोर्टके मसविदेकी अन्य बातोके अलावा निम्नलिखित बातोसे लिखित रूपमे अपनी असहमति प्रकट करूँगा.

मैं इस विचारपर अब भी दृढ हूँ कि जो उद्देश्य हमारे मनमे है, उसे पूरा करनेके लिए एक-सदनीय ससद सबसे अच्छी रहेगी। लेकिन, कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन कर दिये जाने पर, मैं सर मिर्जा इस्माइलके प्रस्तावका समर्थन करूँगा, बशर्ते कि उनके मनमे जिस सस्थाकी बात है, वह केवल सलाह-मशविरा देनेवाली सस्था ही रहे।

कांग्रेस जमीदारों, यूरोपीयों, भारतीय व्यापारियो तथा श्रमिकोके हितोके पृथक् प्रतिनिधित्वके बिलकुल खिलाफ है। इन हितोके प्रतिनिधियोको अपने चुनावके लिए सामान्य मतदाताओसे अनुरोध करना चाहिए।

इसी तरह कांग्रेस सदस्योंकी नामजदगीके भी खिलाफ है। लेकिन विशेषज्ञोंको जरूरी अवसरोपर सदनमें अपनी बात कहनेकी सुविधा दी जानी चाहिए।

देशी राज्योसे सम्बन्धित अनुच्छेदोके बारेमे — विशेषकर देशी राज्योकी प्रजाके प्रतिनिधित्वके मामलेपर — मैं बहुत-कुछ कहना चाहूँगा। लेकिन, फिलहाल मैं अपनी राय जाहिर नही कर रहा हूँ।

अप्रत्यक्ष चुनावके सम्बन्धमे — या यो कहिए कि गाँवोको इकाइयाँ मानकर उनके प्रतिनिधियो द्वारा चुनावके सम्बन्धमें — मुझे जो प्रस्ताव पेश करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था, उसपर मैं अब भी दृढ हूँ। यह योजना वयस्क मताधिकारपर आधारित है, जिसके लिए कांग्रेस प्रतिश्रुत है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी एंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ३३४

१. समितिने अपनी तीसरी रिपोर्टके १ से लेकर ५१ तकके उन अनुच्छेदोंपर विचार करनेकी कार्रवाई पूरी कर ली थी जिन्हें कुछ संशोधनोंके साथ स्वीकार कर लिया गया था। गांधीजी के इस लिखित वक्तव्यको मौनवार होनेके कारण लॉर्ड सैंकीने पढ़ा था।

पडा। मुझे लगता है कि यह सब-कुछ पूर्वनियोजित ढगसे किया गया है। मेरा मतलब यह नही कि सारी गडवडी योजनापूर्वक फैलाई गई और अग्रेज सिपाहियोको एक खास घड़ीमे बुलानेकी योजना थी। ऐसा नही है, लेकिन यह फूट डालो और राज्य करो की नीतिका परिणाम है। महाराजा कुछ नही कर सकते थे। आप नही जानते कि विदेशी शासनमे रहना और पराधीन जाति — निहत्थी पराधीन जाति — होना क्या चीज है। अगर आम लोगोकी हालत यह है तो देशी राजाओंकी हालत तो इससे भी वदतर है। वे अपने मनकी नही कर सकते। उन्हे २१ तोपोकी सलामियाँ दी जाती है, उनके पास राजमहल है, लेकिन वे अपने ही राजमहलोमे कैदी है, क्योकि जहाँ उन्हे अपनी प्रजाको जीवन और मृत्यु देनेका अधिकार है, वहाँ वास्तविक अधिकार कुछ नही है। उनके पास सेना है, लेकिन क्या उन्हे, वे जैसा चाहे, उस ढगसे उसे प्रशिक्षित करनेका अधिकार है? ये राजा आपके शस्त्रागारके कचरेको सोखनेका काम करते है। जिन शस्त्रास्त्रोको आप फेक देते है, ये उन्हीका उपयोग करते है। निजाम बहुत धनी है। क्या वे 'जत्थो' के खिलाफ जैसा चाहते, वैसा कर सके? ये राजा बिलकुल असहाय है; उनपर लगे प्रतिबन्ध उचित हों या अनुचित, वे स्वतन्त्र नही, नपुसक है। निर्णायक क्षणोमे वे जैसा चाहें, वैसा नही कर सकते। उन्हें जो अधिकार दिये गये है, उनके अलावा सारे अधिकार उनके प्रभु — ब्रिटिश सरकार — के हाथोंमे है। यह ऐसी स्थिति है, जिसके खिलाफ मेरा सारा मन-प्राण विद्रोह कर उठता है। [भारतीय सिविल सेवा] आपसमे साँठ-गाँठ किये हुए लोगोंका एक सगठन, दुनियाकी सबसे बडी गूढ सस्था है, इसलिए इस सिविल सेवाने आपको जिस व्यामोहमें डाल दिया है उसे तोड देना चाहिए। मै तो खुद ही उनकी प्रशंसा करते थकता नही था। अगर मै कभी एक बडा राजभक्त था, तो मुझे उस बातपर आनन्दका अनुभव होता था। लेकिन तीस वर्ष बाद मेरी आँखें खुली और तव मैंने पाया कि ऊपरसे सोना दिखनेवाली इस चीजके नीचे तो पीतल-ही-पीतल है। इसलिए जब कोई अग्रेज हमसे कहता है कि आप अपनी रक्षा स्वय नही कर सकते तो वास्तवमे वह भारतमे ब्रिटिश शासनकी ही आलोचना करता है। हम दुनियाके प्राचीन-तम राष्ट्रोमें से है — एक अद्वितीय सभ्यताके भण्डारी है। वेबिलोन, मिस्र, यूनान — इन तमाम सभ्यताओके रचयिता आज कहाँ है? किन्तु प्राचीन भारत आधुनिक भारतमें जीवित है। जो सभ्यता युगोसे कायम रही है, जो सभ्यता चंगेज और गज-नवीके आक्रमणोको झेलकर भी जीवित रही, वह भारतकी ही सभ्यता है। जब अग्रेज भारतमे आये और उन्होने यहाँके लोगोको आपसमे लड़ाया, उस समय भारत कोई वहुत बुरी अवस्थामे नही था। हम उस लडाईको भी झेल ले सकते थे। जिस राष्ट्रने तमाम मुसीबतोको सफलतापूर्वक झेला है, वह आज विलकुल पस्त है, हालाँकि वास्तवमे उसे विलकुल पस्त नही कहा जा सकता। मै एक वहुत वड़े संगठन, दुनियाके सवसे बड़े सगठनके एक विनम्र प्रतिनिधिकी हैसियतसे वोल रहा हूँ। वह एक ऐसा सगठन है जो विना किसी सेनाके ३० वर्षोंसे लगातार लड़ता आ रहा है। दुनियाके इतिहासमे इस किस्मका कोई दूसरा उदाहरण नही मिलता। यह एक रोमांचक कथा है, यद्यपि

मैं यह सब पूरी सचाई और विनम्रताके साथ कह रहा हूँ। यह वह राष्ट्र है जिसने समग्र साम्राज्यको चुनौती दी है। इस मुग्ध करनेवाली कहानीके दूसरे हिस्सेकी ओर — आश्चर्यजनक रचनात्मक कार्योकी ओर — देखिए। डाक-कर्मचारी सघो, रेलवे कर्मचारी सघोकी ओर देखिए, जिनमे हजारो सदस्य है। हमारे पास ऐसे लोग है जिन्होने अपना सारा जीवन राष्ट्रके लिए अर्पित कर दिया है। उदाहरणके लिए, मालवीयजी। ऐसा कहना कि हम अपना कार्य-व्यापार खुद नही सँभाल सकते, इग्लैंड और भारत दोनोके लिए कलंककी बात है। आप निश्चय ही जनमतको मोड सकते है। हमे कष्ट-सहनकी आँचमे से गुजरना पड़ सकता है और जब आप उसके सम्बन्धमें सुनेंगे तो मै आशा करता हूँ कि आप आजकी इस सभाको याद करेंगे और हमारे उस सघर्षमे अपना उचित योग देंगे। अगर जान-बूझकर, इच्छापूर्वक और सोच-समझकर हमें यह उपहार दिया जाता है तो हम इसे अवश्य स्वीकार करेंगे, सघर्ष अवश्य होगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, १९३१ से, सौजन्य. नारायण देसाई

१८०. पत्र: निक सॉलोमनको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
६ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। हाँ, मै आपकी बहनसे अकसर मिलता रहता हूँ।

आपने मुझे जो काम दिया है, उसके लिए तो आपको मुझे माफ ही करना पडेगा — किसीके कहनेपर सन्देश लिखनेकी कला मुझमें नही है। अखबार, वहाँके परिवेश और जीवनके बारेमे जाने बिना मै यह सोच ही नही पाऊँगा कि मुझे क्या लिखना है।

हृदयसे आपका,

श्री निक सॉलोमन
२१४, डिकिंसन एवेन्यू
स्वार्थमोर, फिलाडेल्फिया, स० रा० अ०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२४९) से।

१७८. भाषण : इंडियन मेडिकल एसोसिएशनके समक्ष

लन्दन
४ नवम्बर, १९३१

सचमुच मै समझ नही पा रहा हूँ कि मुझे यहाँ लाया ही क्यो गया। कुछ चिकित्साशास्त्री मित्रोने मेरे पास आकर कहा कि चूँकि मै विद्यार्थियोके समारोहमे गया, इसलिए यह आमन्त्रण भी मुझे स्वीकार करना चाहिए। बल्कि मै ऐसा कहूँ तो अनुचित नही होगा कि मुझे आनेपर लगभग मजबूर किया गया। मेरे पास सिर्फ पाँच मिनटका समय है। मेरे सामने जो योजना[1] प्रस्तुत की गई है उसके सम्बन्धमें कोई राय देनेका असली हक तो आपको ही है। मै सचमुच इसपर कोई राय नही दे सकता।

[अंग्रेजीसे]
मैंचेस्टर गार्डियन, ५-११-१९३१

१७९. भाषण : डाक-कर्मचारी संघकी सभामें

लन्दन
५ नवम्बर, १९३१

मै तो आपको अपना साथी-सहकर्मी कहकर सम्बोधित करने जा रहा था। कांग्रेस भारतमे सम्पूर्ण जीवन और सारी प्रवृत्तियोको अपनी कार्य-परिधिमे लानेकी कोशिश कर रही है, इसलिए हमारे यहाँके मजदूर-सघ, डाक-कर्मचारी सघ तथा और भी कई सगठन कांग्रेसके काममे हाथ बँटा रहे है। . . .[2] मुझे भारतके डाक-कर्मचारियोके जीवनकी कुछ जानकारी है। लेकिन उनके सम्बन्धमें कुछ कहनेसे पहले मुझे आपको यह बता देना चाहिए कि यहाँ आना मेरे लिए कितनी खुशीकी बात थी। आपका उत्साह ही — विशेषकर कुष्ठाश्रमके लिए किये आपके कामकी जानकारी — मुझे यहाँ खीच लाई। मै आपके प्रति सहज ही खिंच गया और यह जानकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई कि डाक-कर्मचारी भारतकी दलित मानवतामें इतनी अधिक रुचि लेते है। मुझे तो लगा कि क्या इतनी अच्छी बात सच भी हो सकती है! मेरे यहाँ आनेका मतलब वास्तवमे यह है कि मै आपके कार्योके लिए आपकी प्रशस्ति कर रहा हूँ। मै श्री कार्डिनलको बधाई देता हूँ। भारतमे इस

१. इस योजनाका सम्बन्ध लन्दनके भारतीय अस्पतालसे था।
२. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं है।

सम्बन्धमे[1] किया जानेवाला काम दरअसल इस समस्याकी परिधिको ही छू पाया है। भारतमे जीवनका सयोजन पश्चिमी दुनियासे बिलकुल भिन्न है। हमारे यहाँ दान-दयाका कार्य राज्यकी देख-रेखमे नही चलता। लोग खुद ही परमार्थका महत्त्व समझते है। इसलिए भारतमे लोगोकी परमार्थ-वृत्तिको सही दिशा मिल जाती है। मै यह नही कह सकता कि . . .[2] परमार्थ-वृत्तिका बराबर ठीक प्रयोग ही किया जाता है। आप वहाँकी सडकोपर कुष्ठ-रोगियोको अपनी ओर घूरते पायेंगे और उनकी उपेक्षा करके कुष्ठाश्रम तक जाना बहुत कठिन है। कुछ लोग धनी बन गये है और कुछ शोषक है। इन्ही परिस्थितियोमे पश्चिमके कार्यकर्त्ता वहाँ पहुँचे है। यह उन थोडी-सी चीजोमे से एक है जो पश्चिमी दुनियासे भारतके लिए वरदानके रूपमे पहुँची है।

आपके और हमारे डाक-कर्मचारियोके बीच तुलना नही की जा सकती। आपके विभागके अफसरोसे मिलकर मुझे खुशी होती है, लेकिन हमारे यहाँ इसके मुकाबलेकी कोई चीज नही है। हमारे यहाँ उन लोगोको बहुत कम वेतन (प्रति मास १०/६) दिया जाता है। उनसे काम बहुत लिया जाता है। जिन कुछ-एक विभागोका ठीक सचालन होता है उनमे एक डाक-विभाग भी है। . . .[3] डाक-कर्मचारियोके सघ केवल उनकी शिकायतोको स्वर देनेके लिए ही है। मै उनसे आपकी तरह कुष्ठ-रोगियोके कल्याणके लिए चन्दा देनेको कहनेका साहस नही कर सकता। आप कुष्ठ-रोगियोके लिए जो नेकीका काम कर रहे है, उसके लिए मै आपको बधाई अवश्य देता हूँ, लेकिन साथ ही मै चाहूँगा कि आप भारतके अपने सहकर्मियोमें अधिकाधिक रुचि ले। उनके पास कोई सगठित सस्था नही है। वे जीनेके लिए सघर्ष कर रहे है — और विदेशी भाषामे अपनी बात ठीक-ठीक कैसे कहे, यह वे नही जानते। अगर आप इन सवालोपर गहराईसे विचार करे तो यह आपके भारत-स्थित सहकर्मियो के प्रति, जो आपके छोटे भाइयोके समान है, उपकारका कार्य होगा। आपमें तरह-तरहके काम करनेकी योग्यता है। ईश्वरने आपको बहुत-कुछ दिया है। उसमे से कुछ उन्हे भी दीजिए।

आप जानते है कि डाकघर हमारे लिए क्या करता है। वह हमारे पत्रादिको जाँचनेका काम करता है। मै यहाँ अपने देशके लिए पूर्ण स्वतन्त्रता — शब्दकोशमे इस शब्दका जो अर्थ होता है उसी अर्थमे पूर्ण स्वतन्त्रता — प्राप्त करने आया हूँ। कुछ लोग मुझपर हँसते है। वे कहते है — देखो तो इस आदमीको, जो आपसमे ही बुरी तरह विभक्त राष्ट्रके लिए स्वतन्त्रता माँगने चला आया है। ऐसा वे इसलिए कहते है कि उन्हे झूठा इतिहास पढाया गया है — यह कि अगर अंग्रेज लोग भारतसे हट जायेगे तो वहाँ अव्यवस्था फैल जायेगी, घोर अन्धकारका साम्राज्य छा जायेगा। इसका एक उदाहरण दिया जाता है — कश्मीरका उदाहरण। महाराजाको कार्यके बोझसे बहुत अधिक दबे अंग्रेज सिपाहियोको व्यवस्था कायम करनेके लिए बुलाना

१. कुष्ठके सम्बन्धमें।

२ व ३. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं है।

१८३. प्रश्नोत्तर

लन्दन

६ नवम्बर, १९३१

प्र० : जब आप मुसलमानों और सिखोंको विशेष प्रतिनिधित्व दिये जानेपर राजी हैं तो फिर दलित वर्गोंको देनेसे ही इनकार क्यों करते हैं ?

उ० : मेरा बस चले तो मै मुसलमानो और सिखोको भी विशेष प्रतिनिधित्व दिये जानेका विरोध खुशी-खुशी करूँगा, लेकिन मुसलमानोके मामलेमें इस चीजको स्वीकार कर लेनेके पक्षमे मै १९१६से ही रहा हूँ। एक व्यावहारिक आदमीके नाते मै यह महसूस करता हूँ कि लखनऊ-समझौतेकी[1] विरासतसे बच पाना असम्भव है, लेकिन दलित वर्गों तथा राष्ट्रके हितचिन्तकके नाते यदि मै अपेक्षाकृत छोटे अल्प-सख्यक समुदायोको विशेष प्रतिनिधित्व दिये जानेपर राजी हो जाऊँ तो मै अपने कर्त्तव्यसे च्युत हुआ माना जाऊँगा। मुसलमानो और सिखोको दिया गया मेरा वचन अब भी कायम है, लेकिन मै उनसे यह अपेक्षा जरूर रखता हूँ कि वे यह स्वीकार करे कि जहाँ उन्हे अपने लिए विशेष सरक्षणकी माँग करनेके अलावा कोई चारा नही दिखाई देता, वहाँ वे यह महसूस करते है कि उनके सिवा औरोको संरक्षण देना अवाछनीय है। ऐसी स्थिति विशेषकर इसलिए है कि वयस्क मताधिकार, जिसका कि मै हिमायती हूँ, राष्ट्रकी सेवा करनेवाले सभी वर्गोके लोगोको विधान-सभाओमे प्रवेश करनेकी पूरी सुविधा देता है।

प्र० : चूँकि स्वराज्य तत्काल प्राप्त करना आवश्यक है, इसलिए आप दलित वर्गोंकी माँग स्वीकार क्यों नहीं कर लेते ?

उ० : क्योकि वह स्वराज्य नही है। इसे मै बुनियादी महत्त्वकी बात मानता हूँ। अस्पृश्योका मुझे पूरा खयाल है, लेकिन मै समाजको टुकड़ोमे बाँटनेके लिए तैयार नही हूँ। मै परिषद्के विफल हो जानेसे डरता नही हूँ। और चूँकि मुझे लगता है कि इसे विफल ही होना है इसलिए मै तो ऐसा सोचता हूँ कि हम स्वदेश लौट चले और स्वराज्य प्राप्त करनेके दूसरे रास्ते ढूंढे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-११-१९३१

१. कांग्रेस और मुस्लिम लीगके दरम्यान विभक्त मतदाता-संघको मानते हुए।

१८४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
६ नवम्बर, १९३१

पूर्व आफ्रिका-सम्बन्धी रिपोर्टपर अपने विचार व्यक्त करते हुए गांधीजी ने श्री शास्त्रीके निष्कर्षकी पुष्टि की। उनका तात्पर्य यही था कि प्रवासी भारतीयोंकी समस्याका समाधान स्वयं भारतकी स्वतन्त्रता है। गांधीजी ने अपनी अनूठी शैलीमें कहा :

अगर हम केन्द्रमें कुछ कर सके तो परिधि अपने-आप ठीक हो जायेगी। जब केन्द्र अव्यवस्थित है तब परिधि तो अस्थिर होगी ही।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-११-१९३१

१८५. भेंट : 'स्टार' के प्रतिनिधिको

[७ नवम्बर, १९३१के पूर्व]

गांधीजी ने जोरदार शब्दोंमें इस बातका खण्डन किया कि उनके समर्थक उनके भारत लौट आनेके लिए शोर मचा रहे हैं, क्योंकि वहाँ जल्दी ही क्रान्ति भड़क उठनेका खतरा है। उन्होंने कहा, सच तो यह है कि मैं परिषद्में अपना काम पूरा करने तक इंग्लैंडमें ही रहूँगा। उसके बाद भी, सम्भव है, मैं जल्दी-जल्दी यूरोपका दौरा भी कर लेना चाहूँ और मेरे लौटनेमें और भी देर लग जाये। उन्होंने कहा :

उपद्रव और अशान्तिकी खबरें बहुत बढ़ा-चढ़ाकर दी गई हैं और कांग्रेसके रवैयेको भी गलत रूपमें पेश किया गया है। अभी तो मुझे काम पूरा करनेसे पहले लौटनेकी कोई आशंका दिखाई नहीं देती, लेकिन अगर वहाँ मेरी उपस्थिति जरूरी लगी तो मैं बेशक लौट जाऊँगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-११-१९३१

१८१. पत्र : प्रधान मन्त्रीको[1]

लन्दन
६ नवम्बर, १९३१

प्रिय प्रधान मन्त्री,

हम ऐसी अफवाह सुन-सुनकर बड़े चिन्तित हो रहे है कि भारतके राजनीतिक पुनर्गठनके प्रथम चरणके रूपमें प्रान्तीय स्वायत्त शासन दिया जायेगा और सघ-निर्माण तथा केन्द्रमें उत्तरदायी शासनकी स्थापनाका सवाल आगेके लिए छोड दिया जायेगा।

आज (अर्थात् ६ नवम्बर)की सुवह एक अखवारमे हमने इससे उलटी खवर भी पढी है। लेकिन, यह अफवाह लगातार इतने जोरोसे फैल रही है कि हमे अपने विचार स्पष्ट रूपसे आपके सामने रख देना आवश्यक लग रहा है।

आजकी परिस्थितिके तकाजेको केवल सर्वांगपूर्ण और व्यापक योजनासे ही पूरा किया जा सकता है। सघीय केन्द्रमे उत्तरदायी शासनकी स्थापना उस योजनाका वैसा ही अभिन्न अग होनी चाहिए जैसा अभिन्न अग सघटक इकाइयोको स्वायत्त शासन दिया जाना होगा। योजनाको टुकडोमे बाँट देने और उसके एक हिस्सेको छोडकर दूसरेपर तत्काल अमल करनेका मतलब लोगोके मनमे अनिश्चितताका भाव पैदा करना और सरकारके मन्तव्यके वारेमे सन्देह उत्पन्न करना होगा।

हम अल्पसख्यक समुदायोके सवालके महत्त्वको समझते है। यह भी ठीक है कि अवतक उसका कोई सन्तोषजनक समाधान नही ढूँढा जा सका है। लेकिन उस चीजको उत्तरदायी शासनकी स्थापनाकी पूर्ण और व्यापक योजनाके मार्गमे बाधक नही वनने देना चाहिए, क्योकि ऐसी योजना ही तत्काल समाधानकी अपेक्षा रखनेवाली हमारी समस्याओका हल पेश करती है।

भवदीय,
मो० क० गांधी

म० मो० मालवीय, वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री, ते० व० सप्रू, पी० सेठना, कावसजी जहाँगीर, मु० रा० जयकर, रामचन्द्र राव, (श्रीमती) सुब्बरायन, ए० रगस्वामी अय्यगार, पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास, घ० दा० बिड़ला, जमाल मुहम्मद, एस० के० दत्त, उज्जलसिंह, मुजे, (श्रीमती) सरोजिनी नायडू, ताम्बे, राजा नरेन्द्रनाथ, रामस्वामी मुदलियार, जाधव, सम्पूरणसिंह, वरुआ, ना० म० जोशी, व० वे० गिरि, चिमनलाल सीतलवाड और शिवराव

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-११-१९३१

१. अनुमान है कि पत्रका मसविदा गांधीजी ने ही तैयार किया था।

१८२. भेंट: जॉर्ज बर्नार्ड शॉसे[1]

लन्दन

[६ नवम्बर, १९३१][2]

श्री बर्नार्ड शॉके मनमें गांधीजी से मिलनेकी इच्छा बहुत दिनोंसे थी और वे बड़े संकोचके साथ मिलने आये। वे गांधीजी के साथ लगभग घंटे-भर रहे। इस बीच उन्होंने न जाने कितने विषयोंपर प्रश्न पूछे — मानव-जाति-शास्त्र, धर्म, समाज, राजनीति, अर्थशास्त्र, किसी भी विषयको नहीं छोड़ा। अपनी बातचीतके दौरान वे अपनी हाजिरजवाबी और व्यंग्योक्तियोंकी फुलझड़ियाँ छोड़ते रहे। उन्होंने कहा, "मैं आपके बारेमें थोड़ी-बहुत बातें जानता था और उनसे मुझे लगा कि आपके और मेरे बीच कहीं कोई भाव-साम्य है। हम दुनियाके उस समुदायके जीव हैं जिसके सदस्योंकी संख्या बहुत कम है।" उनके दूसरे प्रश्न तो सार्वभौमिक महत्त्वके थे, किन्तु वे गोलमेज परिषद्के बारेमें भी एक प्रश्न पूछनेसे बाज नहीं आये। उन्होंने पूछा: "क्या गोलमेज परिषद्की कार्यवाहियोंसे आपका धीरज छूटने नहीं लगता?" गांधीजी को दुःखके साथ स्वीकार करना पड़ा:

यह असाधारण धीरजकी अपेक्षा रखती है। सब-कुछ एक भारी छद्मावरण है और हमारे सामने जो जोरदार तकरीरें की जाती हैं, वे सिर्फ समय बितानेके लिए दी जाती हैं। मैंने उनसे कहा कि आप अपने मनकी बात साफ-साफ क्यों नहीं कह देते और अपनी नीतिकी घोषणा करके हमें निर्णय करनेका अवसर क्यों नहीं देते। लेकिन, शायद अंग्रेजोंकी राजनीतिमें इस बातके लिए गुंजाइश ही नहीं है। उसे तो घुमावदार रास्तेसे ही चलना है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-११-१९३१

१. महादेव देसाईके "लन्दन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। इस मुलाकातकी कोई और रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

२. तिथि गांधीजी की दैनन्दिनीसे ली गई है।

१८६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

रविवार, ८ नवम्बर, १९३१

चि० प्रेमा,

तू यहाँके बारेमे व्यर्थ चिन्ता करती है। अखबारी खबरोसे कोई अनुमान मत लगाना। यह विश्वास रखना कि मै देशकी लाज नही खोऊँगा। काम लेनेकी मेरी पद्धति औरोसे भिन्न होनी ही चाहिए। इसलिए दूसरोके साथ तुलना नही की जा सकती। भेद कहाँ है, यह तो मै पहुँचूँ और बता सकूँ तभी तुझे मालूम होगा। इसलिए अच्छा यह होगा कि यहाँ क्या हो रहा है, इसका विचार करनेमे तू अपना मन बिलकुल न लगाये। मेरी बात समझमे आती है न?

और-कुछ लिखनेका समय नही है। इतनेसे ही सन्तोष करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६६)से।

१८७. पत्र : इन्दु पारेखको

लन्दन
८ नवम्बर, १९३१

चि० इन्दु,

तेरा पत्र मेरे सामने है। आशा है तू अपनी पढाई-लिखाई पर ठीक-ठीक ध्यान दे रहा होगा। मैंने तुझपर जो विश्वास किया है उसे सही सिद्ध करना। आशा है तेरा स्वास्थ्य भी ठीक होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६१)से।

१८८. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
८ नवम्बर, १९३१

यह पूछनेपर कि अगर कांग्रेसकी अस्सी प्रतिशत माँगें स्वीकार कर ली जायें तो भी क्या कांग्रेस संघर्ष शुरू करेगी, गांधीजी ने कहा :

खुद मुझे तो शत-प्रतिशतसे कम कुछ भी नही चाहिए। लेकिन अगर सचमुच अस्सी प्रतिशत दिया जानेवाला है तो सम्भव है कांग्रेस इस बातपर विचार करे कि वह संविधानको कार्यरूप दे अथवा संघर्ष शुरू करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-११-१९३१

१८९. सन्देश : दीवालीपर[1]

लन्दन
९ नवम्बर, १९३१

सच्ची दीवाली तभी आयेगी जब हमें स्वराज्य प्राप्त होगा। स्मरण रहे कि दीवाली रावणकी सेनापर — अर्थात् हिंसा और असत्यपर — रामकी सेनाकी — अर्थात् अहिंसा और सत्यकी — विजयके वार्षिक उत्सवका प्रतीक है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-११-१९३१

१. जब एक संवाददाताने गांधीजी के लिए दीवालीकी शुभकामनाएँ व्यक्त की तो उन्होंने कागजके टुकड़ेपर यह सन्देश लिख दिया, क्योंकि उस दिन उनका मौनवार था।

१९०. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

लन्दन
९ नवम्बर, १९३१

कांग्रेसकी कार्य-समितिके निर्णयका पूर्वानुमान लगाकर मैंने अपने यूरोपके दौरेका कार्यक्रम रद कर दिया है। मेरी दृष्टि बराबर भारतके घटना-क्रमपर लगी रही है, लेकिन मुझे लगता है कि जबतक गोलमेज परिषद्‌के कामसे मेरा इंग्लैंडमें रहना जरूरी है तबतक यहाँसे मेरा चल देना गलत होगा। मैं इसी हफ्ते अपने प्रस्थानकी तिथि तय कर लेनेकी आशा करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, १०-११-१९३१

१९१. भाषण : फ्रेंड्स हाउसमें[2]

लन्दन
९ नवम्बर १९३१

आपने मुझसे पूछा है कि भारतमें स्वतन्त्रताकी माँग तो की जा रही है लेकिन क्या वहाँ ऐसे लोग पर्याप्त संख्यामें हैं जो देशकी जिम्मेदारी अपने सिर लेनेको तैयार हों। मेरे खयालसे तो प्रश्न सर्वथा उचित है। मैं जितने संक्षेपमें दे सकता हूँ उतने संक्षेपमें इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नका उत्तर देनेकी कोशिश करूँगा। मैं आपको बता दूँ कि असली समस्या यह है कि एक ओर कांग्रेस अपनी माँग पेश कर रही है और दूसरी ओर जो जिम्मेदार लोग हैं उनमें उस माँगको पूरा करनेकी अनिच्छा है। कांग्रेस स्वराज्य चाहती है, जिसका मतलब यह है कि वह प्रतिरक्षा, विदेशी मामलों और वित्त-व्यवस्थापर नियन्त्रण, अर्थात् स्वेच्छापर आधारित ऐसी साझेदारी चाहती है जिसे दोनोंमें से कोई भी पक्ष इच्छा होनेपर तोड़ सके। यही कांग्रेसकी माँगका सार है। क्योंकि कांग्रेस ईमानदारीसे ऐसा मानती है कि देशमें ऐसे योग्य लोग हैं जो हुकूमतकी बागडोर विदेशी सरकारके हाथोंसे लेकर खुद सँभाल सकते हैं।

१. उस दिन गांधीजी का मौनवार पड़ता था। इसलिए उन्होंने ऑक्सफोर्डकी यात्रासे लौटनेपर ११ बजे दिनमें लिखित रूपमें यह वक्तव्य दिया था।

२. शामको हुई इस सभाका आयोजन फेलोशिप ऑफ रिकंसिलिएशन (समन्वय बंधुसमाज) ने किया था। हॉल खचाखच भरा हुआ था और सभामें शरीक होनेकी इच्छासे आये बहुत-से लोगोंको निराश लौट जाना पड़ा था।

लेकिन मैंने घूम-फिरकर और बातचीत करके जिम्मेदार लोगोमे जो-कुछ देखा है, उससे ऐसा कुछ नही लगता कि वे अनुकूल प्रतिक्रिया दिखानेको तैयार है। इसके विपरीत मै देखता यह हूँ कि काग्रेसकी जो माँग सर्वथा उचित है, उसकी स्वीकृति मार्गमे वे वहुत-सी बाधाएँ खडी कर रहे है। मै आपसे निस्सकोच कहूँगा कि काग्रेस सारी भारतीय जनताका प्रतिनिधित्व करनेका प्रयत्न कर रही है और वह उसका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है। आप जानते है कि भारत कलकत्ता, बम्बई या मद्रास-जैसे नगरोमें नही, बल्कि गाँवोमे बसता है। और देशी राजाओके न चाहने पर भी काग्रेस उनका भी प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है। बेशक, वह उनके अधिकारोको हडप नही जाना चाहती, बल्कि जहाँतक उनके दावे करोडो दीन-हीन जनोकी माँगोसे असगत नही है वहाँतक उनके साथ भी न्याय करना चाहती है। लेकिन साथ ही, काग्रेस उनका कमसे-कम विरोध भी करती है, क्योकि यह जन-साधारणकी ओरसे उसका दावा पेश करनेमे लगी हुई है।

चूँकि आप शान्तिके रास्ते ढूँढनेके लिए प्रतिश्रुत है, इसलिए आपको काग्रेसकी माँग स्वीकार करनेमे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए। दिल्लीके समझौतेसे पहलेके पन्द्रह महीनोका इतिहास आपको यह बताता है कि ये लोग सरकारसे सघर्ष कर रहे थे, लेकिन यह शान्तिपूर्ण सघर्ष था, जिसका कारण केवल यह था कि जनसाधारणने रक्तकी एक बूँद बहाये बिना स्वराज्य प्राप्त करनेकी प्रतिज्ञा की थी। इस सघर्षमे हजारो स्त्रियो और बच्चोपर लाठियाँ बरसी। दसियो हजार जेल भेजे गये। भारतकी स्त्रियाँ, मानो जादूके असरसे, एकाएक उठ खडी हुईं। उनमे अद्भुत जागृति आई। काग्रेसके सन्देशके प्रति हजारो गाँवोने उत्साह दिखाया। पता नही क्यो मै खुद ही यह नही सोचता था कि लोग इतना अधिक उत्साह दिखायेंगे। निश्चय ही इसके पीछे ईश्वरका हाथ रहा होगा। ये सभी गाँव और ग्रामीण लोग निहत्थे थे, क्योकि स्मरण रहे कि मेरे देशमे लोगोको शस्त्रास्त्र रखनेकी मनाही है।

लेकिन लाठियाँ और सगीनोसे सुसज्ज लोग यह नही महसूस कर रहे थे कि इन महिलाओ और ग्रामीण लोगोके हाथोमें एक ऐसा शस्त्र है जिसका कभी नाश नही हो सकता और जो उनके शस्त्रास्त्रोसे बहुत अधिक प्रभावकारी है। उनके शस्त्रास्त्रो और क्रूरतापूर्ण तरीकोके जवाबमे इनके पास प्रेम, अहिंसा और सत्य-रूपी शस्त्र था।

यद्यपि अग्रेजीके शब्दकोशमे 'इडिपेंडेस' (स्वतन्त्रता) शब्दका एक विशिष्ट अर्थ दिया गया है, किन्तु इन साधारण लोगोके लिए यह एक व्यापकतर और गहनतर अर्थ रखता है। वे 'विधान सभा', 'उत्तरदायी सरकार' या 'कौसिलो' का मतलब नही समझते, लेकिन 'स्वराज्य' शब्दका अर्थ वे तुरन्त समझ जाते है। आज वे लगान देते है, लेकिन वे यह नही जानते कि देशकी खातिर क्यो और कितनी राशि खर्च की जाती है। वे यह भी नही जानते कि सेनापर ५५ करोड रुपये खर्च किये जाते है। साथ ही यह भी याद रखिए कि उन्हे सीमावर्ती राज्यो या अफगानो अथवा अन्य किसी देशका कोई भय नही है। सच तो यह है कि भारतीय गाँवोपर

आक्रमणोका कभी कोई असर ही नही होता, क्योकि भारतपर आक्रमणोका सिलसिला ईस्ट इडिया कम्पनीसे ही शुरू नही हुआ। इससे पहले भी हमपर आक्रमण हुए थे। ये आक्रमणकारी शहरोसे आगे नही गये। वे दिल्लीसे आगे नहीं बढे और जैसा कि आपको भारतके भूगोलसे ज्ञात है, गाँवोमे रहनेवाली इस देशकी आबादीके मुख्य हिस्सेपर इन आक्रमणोका कोई असर नही हुआ। इसके अलावा आन्तरिक झगडोका असर भी गाँवोपर नही पडता। इसलिए उन्हे कोई सरक्षण नही चाहिए। आज अधिकाश लोग सर्वथा भुखमरीकी अवस्थामे रह रहे है। उन्हे प्रतिदिन दो बार खाना नसीब नही होता। उनके पास न अपने लिए रोटी और मक्खन है और न बच्चोके लिए बूँद-भर दूध।

हमने उनके जीवनको गरिमा प्रदान की है और उनमें यह आत्म-विश्वास पैदा हो गया है कि वे अपनी कमाईसे अपना काम मजेमे चला लेगे और दुनियाको अपनेसे दूर रखेंगे।[1]

काग्रेसने राजनीतिको पवित्र बना दिया है। इसने राजनीतिको लगभग धर्ममय (स्पिरिचुअलाइज्ड) बना दिया, यद्यपि मै इस शब्दके प्रयोगको यहाँ बहुत उपयुक्त नही मानता। हम सत्य और अहिंसाके बलपर, अस्पृश्यताको दूर करके और प्रत्येक ग्रामवासीको मनुष्यके उपयुक्त स्थिति प्राप्त करनेका अधिकारी मानकर स्वतन्त्रता प्राप्त करनेको कटिबद्ध है। हमारे असहयोग आन्दोलनका मतलब यह है कि दरअसल कोई भी किसीपर अत्याचार नही कर सकता। हमारा सारा आन्दोलन नैतिकता पर आधारित है। हम अपने शासकोकी इच्छाको सर्वोपरि माननेमे विश्वास नही रखते। आप जानते है कि भारतमे हमारा तरीका क्या है। जब सत्ताधारी कहते है कि तुम यह काम करो और वह काम हमें गलत लगता है तो हम कहते है, आदेशके लिए धन्यवाद, लेकिन हम यह काम नहीं करेंगे। हम उनसे कहते है कि जो हमारे आत्म-सम्मानके विरुद्ध हो, जो हमारी मानवीय गरिमाको ठेस पहुँचाने वाला हो, ऐसा कोई काम हम नही करेगे। इस सघर्षमे करोड़पतियोने भी अपनी सम्पत्तिपर अपना निजी अधिकार छोड दिया है और वे भारतीय ग्रामवासियोके कल्याणके निमित्त अपनी सम्पत्तिके न्यासी-भर बन गये है।

अगर ब्रिटेनके मन्त्री हमारी माँग स्वीकार नही करते और हमारे कन्धोंपर गुलामीका जुआ बनाये रखना चाहते है तो हमे एक बार फिर उस अग्नि-परीक्षासे गुजरना पड सकता है, क्योकि शायद अब भी हमें कष्ट-सहनकी आवश्यकता शेष है। आपकी सरकारसे हमारे देशको कोई लाभ नही हुआ है। इसने सिर्फ हमारे पुंसत्वका हरण किया है। यह बडी लज्जाजनक बात है कि हमें अपने-आपको विदेशी दासतासे बचाने, यहाँतक कि अपने आन्तरिक मामलोको भी सँभालनेमें असमर्थ बना दिया गया है। यह बहुत ही शर्मनाक बात है। और हमने क्या किया है? हमने हर गाँवमे आत्मत्यागी कार्यकर्त्ता तैयार किये है। ये हमारे गैर-सैनिक सेवक (सिविल

१. यहाँ गांधीजी का तात्पर्य अखिल भारतीय चरखा संघ द्वारा किये कार्योंसे था।

सर्वेंट्स) है और कांग्रेस उनसे जो-कुछ भी करनेको कहेगी, वे करेंगे। उनमे देशका शासन चलानेकी योग्यता है। मेरी ही तरह वे भी जानते है कि हमने अपने पीछेके सारे रास्ते बन्द कर दिये है और वापस लौटनेकी कोई भी गुजाइश छोडे बिना आगे बढ रहे है — क्योकि हम करोडो आम लोगोके लिए स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए काम कर रहे है।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १२-११-१९३१

१९२. भेंट : जे० एम० सेनगुप्तको

लन्दन
१० नवम्बर, १९३१

ज्यादा बाते मुझे इस हफ्ते मालूम होगी। मुझे न तो चटगाँव या हिजलीकी घटनाओ-जैसे[1] विशिष्ट सवालोके बारेमे और न सविधानके सम्बन्धमे ही किसी बातकी आशा है। मैंने हर आदमीसे सम्पर्क बनाये रखा है। मै यहाँ इसलिए ठहरा हुआ हूँ कि निबटारेका कोई मौका हाथसे न जाने दूँ और परिषद्की विफलताके लिए मुझे दोष न दिया जा सके। अगर इस बातचीतका कोई ठीक नतीजा निकलता है तब तो नजरबन्दोको रिहा कर ही दिया जायेगा। लेकिन मुझे ऐसी कोई चीज दिखाई नही दे रही है जिसके आधारपर मै कोई आशा बाँध सकूँ।

[अग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १३-११-१९३१

१९३. भाषण : लन्दन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्समें[2]

लन्दन
१० नवम्बर, १९३१

जिस कामसे मै यहाँ आया हूँ, उसमें सबसे बडी बाधा मै खुद हूँ। बहुत-से लोग मुझसे कहते है कि कांग्रेसकी माँग बहुत ऊँची है। जब मैं अपना दृष्टिकोण समझाने लगता हूँ तो वे मेरी बात ध्यानसे सुनते है। जिनपर सरकारकी जिम्मेदारी है वे

१. जे० एम० सेनगुप्तने गांधीजी को बंगालकी स्थितिका हाल सुनाया था।

२. इस भाषणके विषयमें अखबारोमें छपी खबरोंके अनुसार इस सभामें इतने लोग इकट्ठे हुए थे कि स्कूलके विद्यार्थी-सघके सदस्योंको स्कूलके थियेटरमें स्थान नहीं मिल सका था और गांधीजी ने इंग्लैंडमें जिन सभाओंमें भाषण दिया उनमें सबसे बड़ा अंग्रेज-श्रोतृ-समुदाय शायद यही था। श्रोताओंमें मुख्यत: अंग्रेज विद्यार्थी ही थे।

लोग भी कुछ कम दोषी नही हैं, क्योकि वे दूसरे पक्षकी बात सुननेको तैयार ही नही है। वैसा वातावरण ही दिखाई नही देता जिसमे कोई किसीकी बातको सुनने-समझानेको तैयार हो। कुछ बहुत ही अच्छे अंग्रेज स्त्री-पुरुषोको लगता है कि स्वतन्त्रताकी परिभाषा करनेके लिए कुछ करना जरूरी है . . .।[1] मै जेलसे छूटकर इंग्लैंड आया हूँ। मेरे साथ और भी हजारो लोग जेलमे थे। वाइसरायके साथ हुए समझौतेका स्वीकृत उद्देश्य यह था कि गोलमेज परिषद्मे कांग्रेसका प्रतिनिधि भी जाये। गोलमेज परिषद्में आम तौरपर वही लोग शामिल होते है जो जनताके चुने हुए होते हैं, जो उसमे अपने-अपने अधिकारोंके बलपर जाते हैं। लेकिन इस परिषद्मे मै अपने अधिकारके बलपर नही बैठता और सरकारकी इच्छासे ही इसमें शामिल होता हूँ। मनोनीत सदस्योसे आप बहुत शानदार नतीजेकी उम्मीद नही रख सकते। मुझे तो ऐसा एक भी उदाहरण मालूम नही है जब मनोनीत सदस्योकी किसी परिषद्ने सिद्धान्तोके आधारपर कोई निर्णय किया हो।

हम अपना खून देनेको कमर कसकर निकले है। लेकिन यहाँका रवैया इस प्रकार है: 'देखिए इन कृतघ्न लोगोको, ये ब्रिटिश शासनके वरदानोको देख ही नही पा रहे हैं।' यह मनोवृत्ति केवल अधिकारियोकी ही नही, उन लोगोकी भी है जो लोकमतको किसी खास दिशामे मोड सकते है। सर हेनरी कैम्बेल बैनरमैनने कहा था कि सुशासन स्वशासनका स्थान नही ले सकता। जिनका ब्रिटिश हुकूमतसे साबका पडा है, वे ऐसा नही समझते कि ब्रिटिश हुकूमतसे उन्हे कोई लाभ हुआ है। गोखलेने कहा था कि विदेशी हुकूमतने हमे पुसत्वहीन बना दिया है। उस देशको अचानक अपनी शक्तिका बोध कैसे हो गया है? समस्याके निबटारेके मार्गमें बाधा है, अच्छेसे-अच्छे अंग्रेजोका घोर अज्ञान। उनमे ऐसा अज्ञान है कि देखकर लगभग हैरान रह जाना पडता है। उन्हे जो जानकारी दी गई है, वह गलत है, जो इतिहास पढाया गया है, वह झूठा है। भारतमे जो-कुछ होता है, उसका कोई विवरण यहाँके अखबारोमे नही छपता। चटगाँवकी घटना इतिहासका एक काला पृष्ठ है। अधिकारी पागल हो उठे और वहाँके निहत्थे लोगो पर तबाही बरपा कर दी। हिजलीमे निर्दोष लोगोको गोलियोसे उडा दिया गया, १६ व्यक्ति गम्भीर रूपसे घायल हो गये। और जहाँतक अंग्रेजोकी हत्याके प्रयत्नोका सम्बन्ध है, मै ऐसे प्रयत्नोकी तीव्रतम शब्दोमे भर्त्सना करता हूँ।

लेकिन इस सबका मतलब क्या है? चटगाँव और हिजलीकी घटनाओंसे अंग्रेजो पर किये गये इन आक्रमणोका बहुत निकटका सम्बन्ध है।

सारा भारत अशान्त है। इसके निश्चित कारण है और उन कारणोसे ब्रिटिश शासनका सम्बन्ध है। भारतकी नैतिक और भौतिक प्रगति? कुल मिलाकर बस शून्य। जरा देखिए कि मुझे कैसी बाधा-दौड़ दौडनी पड रही है। मै आपको पूरा विश्वास दिलाता हूँ कि मै कोई समाधान पानेके लिए दिन-रात एक किये हुए हूँ और उसके रास्तेमे कोई बाधा नही डाल रहा हूँ। हमने अपने पीछेके रास्ते बन्द कर दिये हैं, अपने वापस लौटनेकी कोई गुंजाइश नही छोडी है। मै अस्पृश्योके लिए, गरीब

१. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं है।

जन-साधारणके लिए स्वराज्य चाहता हूँ। अगर उसके लिए मुझे दस लाख लोगोंकी जानें कुरबान करनी पड़े तो भी मैं समझूँगा कि हमें सस्तेमें ही आजादी मिल गई। करोड़ों लोग जिस प्रकार तिल-तिल कर मर रहे हैं, उसकी तुलनामें दस लाख लोगोंका स्वेच्छासे बलिदान हो जाना लाख गुना अच्छा है। मैं इस स्थितिको नहीं सह सकता। . . .[1] हमारी केवल एक ही मर्यादा है — यह कि हम अपने हाथ प्रतिपक्षीके रक्तसे अपवित्र नहीं करेंगे और असत्यका सहारा कभी नहीं लेंगे।

हम पर कब्जा कायम रखनेके लिए हमारे देशमें बरकरार एक विशाल सेनाका बोझ उठानेको हम तैयार नहीं हैं। . . .[2] हम अपनी बचतका अधिकांश अपने इन द्वारपालोंको दे देते हैं। आपके यहाँ ऐसे द्वारपाल नहीं हैं, केवल पुलिसके लोग हैं — ऐसी पुलिसके लोग जो दुनियामें अद्वितीय हैं, लासानी हैं। स्वाधीनता और पराधीनतामें यही अन्तर है। सैनिक व्ययको प्रमुखता देनेवाले बजटको समाप्त कर दिया जायेगा। जब मीर आलम खाँने मुझपर आक्रमण किया तो एक अंग्रेजने ही मुझे बचाया और उसकी लड़कीने मुझे "लीड काइंडली लाइट" वाला भजन सुनाया। जो दस हजार मुसलमान जेल गये वे क्या विश्वासघाती हैं? . . .[3] विदेशी शासन-रूपी पच्चरके हमारे बीचसे निकलते ही हम एक हो जायेंगे। यदि अफगानोंका भगवान् उनसे यह कहेगा कि तुम भारतीयोंकी जानें लो तो मैं भी उसी ईश्वरसे सहायताके लिए प्रार्थना करूँगा, हालाँकि वे लोग दिनमें पाँच बार उसकी इबादत करते हैं। यदि ईश्वर चाहेगा तो हम उसे भी चुनौती देंगे। हमें मनुष्यसे डरना छोड़ देना चाहिए।

एक हब्शी छात्र: आप अंग्रेजोंसे भी उतना ही प्रेम करते हैं जितना भारतीयोंसे करते हैं, फिर भी आप ब्रिटिश सरकारसे घृणा करते हैं। लेकिन सरकार भी तो ब्रिटेनकी जनतासे ही बनी है?

गांधीजी: मनुष्य अपनी कार्यपद्धतिसे कहीं बड़ा होता है। किसी मनुष्य द्वारा अपनाया तरीका बुरा हो सकता है, लेकिन उसके बावजूद उस मनुष्यको बुरा कहना उचित नहीं होगा। . . .[4] ब्रिटिश प्रणाली शैतानी प्रणाली है। इसके बावजूद मैं ब्रिटेनवालोंसे अपने भाइयोंकी तरह प्रेम करता हूँ। मेरे एक लड़केने मेरे खिलाफ विद्रोह कर दिया है। लेकिन, फिर भी मैं उस लड़केसे उतना ही प्रेम करता हूँ जितना उसके दूसरे भाइयोंसे करता हूँ। मैं उसके तौर-तरीकेसे घृणा करता हूँ। मैंने पारिवारिक नियमसे ही यह सीखा है कि यदि मुझमें मनुष्यता है तो मुझे ब्रिटेनवालोंसे प्रेम करना चाहिए। फिर भी मैं उनकी प्रणालीसे घृणा करता हूँ और उसे नष्ट करनेके लिए भरसक कोशिश कर रहा हूँ। . . .[5]

अपनी अहिंसात्मक लड़ाईमें हम ईश्वरसे डरकर चलते हैं, कुछ भी गोपनीय नहीं रखते और न मनमें धोखा-धड़ीका कोई खयाल रखते हैं।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी से, सौजन्य नारायण देसाई

१ से ५. यहाँ कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

१९४. पत्र : जॉन हाइनीज होम्सको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
११ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

मेरी बहु-चर्चित अमेरिका-यात्राकी बातके सम्बन्धमें आप मुझे तथा महादेवको बडी तत्परतासे पत्र लिखते रहे हैं और दूसरोको भी लिखनेके लिए प्रेरित करते रहे हैं। लेकिन मैं नही जानता कि आपको खुद अपने लिए अथवा दूसरोके लिए इतनी परेशानी उठानेकी जरूरत थी या नही। आपकी निर्णय-बुद्धिके बारेमे तो मेरे मनमे कभी भी कोई शका नही रही, और मैंने प्रत्येक पत्र-प्रतिनिधिसे बिलकुल साफ-साफ कहा है कि जबतक आप मुझे अमेरिका ले जाना तय न करेंगे तबतक मैं नही जाऊँगा। आपकी निर्णय-बुद्धिमे विश्वास रखकर चलनेका निश्चय कर लेनेके बाद लोगोसे अलग-अलग और सामूहिक रूपसे भी मेरा यह कहना क्या बिलकुल उचित नही था कि इस मामलेमे मेरे अन्तिम मार्ग-दर्शक आप ही है?

बेशक, इससे आपके सिर थोडी ज्यादा जिम्मेदारी पड गई है, लेकिन आपमे इस जिम्मेदारीको उठानेकी पूरी सामर्थ्य है और इधर मैं दुराग्रही मित्रो तथा सवाददाताओके साथ दलील करनेकी परेशानीसे बच गया हूँ।

श्री बोमनजी कुछ दिन यहाँ रुके थे, तब मै उनसे अकसर मिला करता था। अब वे भारतके लिए प्रस्थान कर चुके है।

हृदयसे आपका,

परम पूज्य जॉन हाइनीज होम्स, डी० डी०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२८३) से।

१९५. पत्र : एच० एच० मॉण्टगोमरीको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
११ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके इस लम्बे पत्रको मैं इतने दिनों तक रखे रहा और उत्तरमें मुझे केवल इतना ही लिखनेका समय मिल पा रहा है कि पत्रके लिए और उसमें व्यक्त भावनाओंके लिए मैं आपका आभारी हूँ। चार्ली एन्ड्रयूजने भी यह पत्र पढ़ा। उनके बारेमें आपने जो-कुछ लिखा है उसे पढ़कर वे बड़े प्रसन्न हुए।

हृदयसे आपका,

परम पूज्य बिशप मॉण्टगोमरी
न्यू पार्क
मोविले
काउंटी डोनेगल, आयरलैंड

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८१३१) से।

१९६. पत्र : विविअन बटलर बर्कको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
११ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

मैंने उन सज्जनके नाम लिखा आपका पत्र पढ़ा जो मेरे और आपके, दोनोंके मित्र हैं। आपके इससे पहलेके पत्रकी मुझे कोई जानकारी नहीं है।

आपने ठीक ही अनुमान लगाया है कि मेरे लन्दनसे बाहरके कार्यक्रम श्री एन्ड्रयूज निर्धारित करते हैं। मैं आपके विचारसे सहमत नहीं हूँ।[1] श्री एन्ड्रयूजके प्रति मेरे मनमें बहुत अधिक सम्मान है। लगभग बीस वर्षोंसे मैं उन्हें बहुत निकटसे

१. विविअन बटलर बर्कने कहा था कि यह बहुत दयनीय स्थिति है कि गांधीजी के कार्यक्रम सी० एफ० एन्ड्रयूज निर्धारित करते हैं। इसके सम्बन्धमें उन्होंने आइरिश भाषाकी इस आशयकी एक कहावत भी उद्धृत की थी कि "साँडके सींग और अंग्रेजकी मुस्कराहटका भरोसा कभी मत करो।"

जानता हूँ, और ऐसा एक भी अवसर नही आया जब उनकी सलाह माननेके लिए मुझे पश्चात्ताप करना पडा हो।[1]

मुझे दु खके साथ आपको सूचित करना पडता है कि भारतसे तत्काल लौटनेका बुलावा आ जानेके कारण मेरी आयरलैंड-यात्राके कार्यक्रमके रद हो जानेकी सम्भावना है। लेकिन किसी तरह कोई सम्भावना निकली तो मै आयरलैंड आनेकी उम्मीद करता हूँ। अगर आया तो एक निजी मित्रके यहाँ ठहरूँगा।

हृदयसे आपका,

कुमारी विविअन बटलर बर्क
डुगार्ट
वेस्टपोर्ट, काउटी मेयो

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२०७)से।

१९७. पत्र : एफ० बी० फिशरको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, पश्चिमी
११ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके अत्यन्त स्नेहपूर्ण पत्र मुझे मिलते रहे हैं। किसी तरह मै इतना ही लिखनेका समय निकाल पाया हूँ।

अमेरिका जानेके विषयमे तो मेरे मनने यह कहा कि मेरे वहाँ जानेका समय अभी नही आया है। वह अब भी यही कहता है। जब वहाँ जानेकी चर्चा पहले-

१. इसके उत्तरमें १४ नवम्बरको विविअन बटलर बर्कने लिखा था कि "... मैं तो श्री एन्ड्र्यूजको आपके सम्बन्धमें लिखी रोमाँ रोलाँकी पुस्तकके जरिये ही जानती हूँ। खुद आपके भारतीय अनुयायियोंने ही एक समय मुझे यह बताया था कि वे एन्ड्र्यूजका विश्वास नही करते। और मुझसे कहा गया है कि आयरलैंड आनेके मेरे निमन्त्रणके अस्वीकार कर दिये जानेका कारण शायद वे ही हों। मुझे ऐसे एक मामलेकी जानकारी है जिसमें भारतके पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके अधिकारके समर्थनमें सतत और साहस-पूर्वक बोलते रहनेवाले चुनिंदा अंग्रेजोंमेंसे एकने जब श्री एन्ड्र्यूजको पत्र लिखा तो उनके सचिवने उसके उत्तरमें अपमानजनक बातें लिखी। ... मैं ईसाई धर्म प्रचारकोंको सहज ही अविश्वासकी दृष्टिसे देखती हूँ — विशेषकर वहाँ जहाँ ईसाई-धर्म या साम्राज्यके हितोंका प्रश्न हो। ऐसे अंग्रेज बहुत ही कम हैं जो न्यायकी खातिर अपने साम्राज्यको ध्वस्त होते देखनेको तैयार हों।"

इसका जवाब गांधीजी के आदेशानुसार इन शब्दोंमें दिया गया "श्री गांधीको आपका पत्र मिला। आपने श्री एन्ड्र्यूजके सम्बन्धमें जो-कुछ लिखा, उसे लिखकर उनके और स्वय अपने प्रति घोर अन्याय किया है। जब आप इस चीजको महसूस करेंगी तो आपको बहुत पश्चात्ताप होगा।"

पहल चली तो मैंने तय किया था कि जैसा डॉ० हाइनीज[1] कहेंगे, वैसा ही करूँगा। यह तीन साल या इससे भी कुछ पहलेकी बात है और तभी सर्वप्रथम मेरे अमेरिका जानेकी बात चली थी।

और आप जानते ही है कि उसके बाद डॉ० हाइनीजसे मेरी मुलाकात भी हुई। वे लन्दनमें मेरी ही प्रतीक्षा कर रहे थे। मैंने उनसे कहा कि मेरे यहाँ आनेके बादसे ही अमेरिकासे जो आग्रहपूर्ण निमन्त्रण आ रहे है, उनके बारेमे मै पूरी तरहसे उन्हीकी सलाहपर चलूँगा।

डॉ० होम्स तथा अन्य अनेक मित्रोका निश्चित मत है कि अभी मेरा अमेरिका जाना गलत होगा। इसलिए आपका निर्णय जानकर मुझे बडा आश्चर्य हुआ है। आप भी मेरे उतने ही प्यारे मित्र है जितने कि डॉ० होम्स। इसलिए अब मै उनके साथ आपकी बातचीतके परिणामकी राह देखूँगा। आप रिचर्ड ग्रेगको भी जानते ही है। वे भी डॉ० होम्सकी रायसे सहमत है और डॉ० होम्सकी रायके समर्थनमें एक और भी दलील देते है कि सर्दीका मौसम मेरे अमेरिका जानेका ठीक समय नही होगा।

हृदयसे आपका,

परम पूज्य बिशप फिशर
फर्स्ट मेथाडिस्ट एपिस्कोपल चर्च
एन आरबर मिशिगन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८२८२)से।

१९८. भेंट : पत्रकारोंको

लन्दन
११ नवम्बर, १९३१

मै ऐसा नहीं सोचता कि परिषद् निश्चय ही विफल होगी। ऐसा सोचता तो फिर मै यहाँ ठहरता ही नहीं। हाँ, यह जरूर सोचता हूँ कि अगर कोई चौंकानेवाली बात घटित नही होती और अंग्रेजोके जीवनमे जो-कुछ श्रेष्ठ है वह सब अगर कोई सन्तोषजनक परिणाम प्राप्त करनेकी दिशामे सक्रिय नही हो उठता तो परिषद्के विफल हो जानेकी सम्भावना है।

प्र० : अगर परिषद् विफल हुई तो आप दोष किसको देंगे?

उ० : मै सरकार और परिषद्मे आये सभी प्रतिनिधियोको बराबर-बराबर दोष दूँगा। मै किसी एक ही पक्षको दोषी माननेको तैयार नही हूँ, लेकिन मेरा निश्चित विश्वास है कि अगर राष्ट्रीय सरकार सचमुच चाहे कि परिषद् विफल न हो तो वह विफल नही होगी।

१. डॉ० जॉन हाइनीज होम्स।

प्र० : आपको यह जाननेमें कितने दिन लगेंगे कि राष्ट्रीय सरकारमें ऐसी इच्छा है या नहीं ?

उ० : हफ्ते-भरमे जान जाऊँगा। जबतक मुझे इस बातके निश्चित प्रमाण नही मिल जाते कि अब और ज्यादा दिन मेरे इग्लैडमे रहनेसे कोई लाभ होनेवाला नही है, तबतक मै आशा बनाये रखूँगा। जबतक तनिक भी आशा है तबतक मै सविनय अवज्ञाकी बात सोचनेवाला नही हूँ। और मै सभी सम्बन्धित लोगोको पूरा आश्वासन दे सकता हूँ कि इस समय मै जैसी वार्त्तामे लगा हुआ हूँ वैसी वार्त्ता चलाते रहनेकी जबतक सम्भावना है तबतक परिषद्के सम्बन्धमे कोई सविनय अवज्ञा नही की जायेगी। मै यहाँ अपने मनमे निश्चित सकल्प लेकर आया हूँ कि कोई सम्मानजनक —ग्रेट ब्रिटेन और भारत दोनोके लिए सम्मानजनक—समाधान प्राप्त करनेके लिए मै कुछ भी उठा नही रखूँगा।

इंग्लैंडमें राज-काजकी देख-रेख करनेवाले प्रशासकोंकी चर्चा करते हुए श्री गांधीने कहा :

. . .[1] लेकिन मुझे ऐसा सन्देह है कि भारतके विषयमे और इन दिनो वहाँ जो-कुछ चल रहा है उसके सम्बन्धमे उनकी जानकारी वास्तविक वस्तु-स्थितिको जिस रूपमें मै जानता हूँ, उससे मेल नही खाती, और उनकी तमाम सद्भावनाओ और शुभेच्छाओके बावजूद यह एक बहुत बडी कठिनाई है। मुझे यह देखकर बहुत दु ख हुआ है कि पता नही क्यों, वहाँ घटित होनेवाली गम्भीरतम महत्त्वकी घटनाओकी खबर भी यहाँके अखबारोमे नही दी जाती और मुझे इसमें सन्देह है कि यहाँके अधिकारी किन्ही अन्य सूत्रोसे इनकी जानकारी पा सके होगे।

चटगाँवमे वहाँके अधिकारियोके सामने ही जो बर्बरतापूर्ण कृत्य किये गये और जिनके पीछे, मेरे सामने पडी रिपोर्टके अनुसार "अगर उनका प्रोत्साहन नही तो मूक सहमति तो थी ही", उनके सम्बन्धमे यहाँके अधिकारियोंको, लगता है, कोई जानकारी नही है और निश्चय ही, अखबारोने तो उसकी कोई खबर नही ही छापी है। मै इस तरहके और भी बहुत-से दृष्टान्त दे सकता हूँ।

[अग्रेजीसे]

यॉर्कशायर पोस्ट, १२-११-१९३१

१. साधन-सूत्रमें इस वाक्यका प्रारम्भिक अंश कोई सगत और पूर्ण अर्थ नही देता। इसलिए उस अंशका अनुवाद यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

१९९. भाषण : गोलमेज परिषद्के प्रतिनिधियोंकी बैठकमें

लन्दन
११ नवम्बर, १९३१

आज शाम गोलमेज परिषद्के प्रतिनिधियोकी एक बैठकमें महात्मा गांधीने प्रान्तीय स्वायत्त शासनकी अपनी कल्पना विस्तारसे समझाई। उनकी कल्पनाके प्रान्तीय स्वायत्त शासनका मतलब, साइमन रिपोर्ट तथा भारत सरकारके खरीतेमें उसकी जो रूप-रेखा खींची गई है, उससे बिलकुल भिन्न है। महात्मा गांधीका मुख्य आशय यह है कि सभी विषयोपर जनप्रतिनिधियोका निर्बाध नियन्त्रण हो। उनके अनुसार गवर्नरको कोई सुरक्षित अधिकार नहीं होना चाहिए और प्रान्तोकी इतनी पूर्ण स्वायत्तता होनी चाहिए जिससे केन्द्र आन्तरिक अव्यवस्था-जैसे मामलोमें प्रान्तोके अनुरोधके बिना कोई हस्तक्षेप न कर सके। इसके अलावा, प्रान्तोको यह छूट भी होनी चाहिए कि वे चाहे तो केन्द्रीय सरकारको आर्थिक अंशदान देनेसे इनकार कर सके।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-११-१९३१

२००. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

[१२ नवम्बर, १९३१के पूर्व][१]

सारी खबर तोड-मरोडकर सामने रखी गई है[२] और वह उस चीजसे ठीक उलटी है जिसे स्वीकार करनेको मै तैयार हूँ। यहाँ तफसीलकी बातोकी चर्चा करना मेरे लिए अनावश्यक है। इतना कह देना काफी होगा कि तत्त्वत देखा जाये तो जो-कुछ श्री शास्त्री तथा अन्य मित्र चाहते है ओर जो चीज स्वीकार करनेको मै तैयार हूँ, उन दोनोमे कोई अन्तर नही है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-११-१९३१

१. यह वक्तव्य सबसे पहले इसी तारीखके हिन्दूमें प्रकाशित हुआ था।

२. तात्पर्य इस आशयकी अफवाहोसे है कि गांधीजी प्रान्तीय स्वायत्त शासनकी बात स्वीकार कर लेना चाहते हैं और इस मामलेमें शास्त्री, सप्रू तथा अन्य लोग उनके विचारसे सहमत नहीं हैं।

२०१. भाषण : कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगमे[1]

लन्दन
१२ नवम्बर, १९३१

अध्यक्ष महोदय और भाइयो,

आजकी सुबह आपके बीच आकर मुझे बडी खुशी हो रही है। आपने अपने लक्ष्यकी शब्दावलीमे जो परिवर्तन किया है, वह बहुत अच्छा है, लेकिन मेरा सुझाव होगा कि आप एक कदम आगे बढकर पूर्ण स्वराज्यको अपना लक्ष्य बनाये। भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसका लक्ष्य पहले स्वराज्य था, लेकिन चूँकि स्वराज्यके साथ कुछ चलन सिद्ध अर्थ जुड गये, इसलिए अपनी माँगको बिलकुल स्पष्ट बनानेके लिए काग्रेसने उससे पहले 'पूर्ण' शब्द जोड दिया।

मै बराबर यह मानता रहा हूँ कि कॉमनवेल्थ ऑफ इडिया लीग-जैसी समिति को काग्रेससे सयुक्त नही होना चाहिए तभी वह अपना स्वतन्त्र अस्तित्व कायम रख सकती है, स्वतन्त्र रूपसे निर्णय ले सकती है। इस तरह अपना स्वतन्त्र अस्तित्व और निर्णयकी स्वतन्त्रता कायम रखकर वह यहाँके जनमतको जितना प्रभावित कर सकती है, उतना भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसकी ही बातोको दोहरानेवाली सस्था बनकर नही कर सकती। मै समझता हूँ कि ऐसी सस्थाका काग्रेसकी एक शाखा-मात्रकी स्थिति अपना लेना उसके लिए बहुत घातक होगा। मैने काग्रेसको भी बराबर यह सलाह दी है कि वह बाहरकी सस्थाओको अपनेसे सयुक्त न करे। अतीतमे भारतीय काग्रेसने इग्लैडमें अपनी शाखा स्थापित की थी,[2] लेकिन बादमे पता चला कि यह गलत कदम था। अब वह अमेरिका तथा अन्य देशोमे अपनी शाखाएँ स्थापित करनेको तैयार नही है, आपने अपनेको काग्रेससे बाहर रखकर निश्चय ही बहुत अच्छा काम किया है।

जहाँतक उस कामका सम्बन्ध है जो आप इस देशमे कर रहे है, मेरी राय यह है कि इस परिषद्का कोई नतीजा नही निकलनेवाला है। मैने यह बात कह तो दी है, लेकिन आप क्षण-भरको भी ऐसा न माने कि मै कुछ कर ही नही रहा हूँ या यह कि परिषद् भारतके लिए संविधान तैयार करनेका जो प्रयत्न कर रही है उसमे बाधा डाल रहा हूँ। मै अपने देशको फिरसे किसी अग्नि-परीक्षामे नही डालना चाहता, लेकिन अगर जरूरी हुआ तो मै वैसा करूँगा, और मै जानता हूँ कि इस बारका सघर्ष पिछली बारसे भी बहुत अधिक भयकर होगा, और इसलिए

१. यह लीगकी कार्यकारिणी समिति तथा संसदीय समितिकी बैठक थी। उपस्थित लोगोमें लीगके अध्यक्ष हॉरैबिन और उसके मन्त्री वी० के० कृष्ण मेनन भी शामिल थे।

२. काग्रेसने लन्दनमें ब्रिटिश कमेटीकी स्थापना की थी, जिसे काग्रेसके नागपुर अधिवेशनमें १९२०के एक प्रस्ताव द्वारा समाप्त कर दिया गया था। देखिए खण्ड १९।

मै बातचीतके द्वारा कोई सम्मानजनक समाधान ढूँढनेका वैसा हर प्रयत्न करूँगा जो मनुष्यके बसमे है। लेकिन याद रखिए कि मुझे जो आदेश दिया गया है, मै तो उसकी मर्यादाके भीतर ही काम करूँगा। इसका मतलब यह है कि मै उस आदेशमे विश्वास रखता हूँ और उसमे कही गई बातसे कम कोई भी चीज हमारी दृष्टिमें पर्याप्त नही होगी। हमे वित्त-व्यवस्था और सेनाका नियन्त्रण मिलना ही चाहिए। यह बात यहाँके लोगोको चाहे जितनी अव्यावहारिक प्रतीत हो, लेकिन काग्रेस मानती है कि वह इन मामलोको उतनी ही अच्छी तरह — बल्कि उससे भी अच्छी तरह — सँभाल सकती है जितनी अच्छी तरह सरकार सँभालती है।

विनिमय-दरके सम्बन्धमे जोड-तोडका सिलसिला लॉर्ड कर्जनसे भी पहले शुरू हो गया था और इस नीतिके कारण देशकी आबादीके ८५ प्रतिशत हिस्सेको भारी नुकसान हुआ है। रुपयेका सम्बन्ध पौडसे जोडकर उसका मूल्य एक शिलिंग छ पेस निर्धारित कर दिये जानेका नतीजा यह हुआ है कि भारतीय किसानोको अपनी उपज इतने कम मूल्यपर बेचनी पडती है कि उससे उसका उत्पादन-व्यय भी नही निकलता। इस देशमें इडिया ऑफिसके सलाहकारोने भी यह स्वीकार किया है कि अगर रुपयेको पौडसे बाँधकर न रखा जाये तो भारतीय किसानोको लाभ होगा। आयात की कीमत जरूर बढेगी, लेकिन भारतकी आम जनता आयातपर इतनी कम निर्भर है कि उसका उसपर कोई असर नही होगा। कठिनाई यह है कि ब्रिटेनवालोमे से ज्यादातर लोगोको भारतीय परिस्थितियोका ज्ञान नही है और वे भारतके सम्बन्धमे ऐसे दृष्टान्तो के आधारपर निर्णय लेते है जिन्हे भारतपर लागू करना बिलकुल गलत है।

रुपयेका मूल्य बढाकर इसलिए रखा गया है कि इस देशके लिए भारतको अपना सामान भेजनेकी ज्यादा गुजाइश रहे। जब भी रुपयेका मूल्य निर्धारित किया गया है, भारतीय विशेषज्ञोकी सलाहकी उपेक्षा करके किया गया है। इससे लाभ हुआ है, सरकारको। रुपयेका सम्बन्ध पौडसे जोडकर इसने अपनेको दिवालिया होनेसे बचाया है। अगर वित्त-व्यवस्थाका नियन्त्रण भारतीयोके हाथोमे हो तो वैसी वित्तीय नीतिका पालन किया जायेगा जो निर्यात करनेवालोके हकमे नही, बल्कि किसानोके हकमे होगी।

भारत निर्यात करनेवाला देश है, और प्रत्येक दस वर्षमे से नौ वर्ष उसका निर्यात आयातसे अधिक आया है, लेकिन जो बचत हुई उसका उपयोग या तो सिविल सेवाके लोगोको पेंशन देनेके लिए या ऐसी योजनाओपर लगाई जानेवाली पूँजीके रूपमे किया गया है जिन्हे मै अनर्गल योजनाएँ मानता हूँ। सक्खर बाँध एक ऐसी ही योजना है।

इसके बाद महात्मा गांधीने कहा कि यद्यपि सरकारने यह स्वीकार किया है कि इस योजनाके सम्बन्धमें खर्च वगैरहका अनुमान लगानेमें उससे भारी गलतियाँ हुई हैं, फिर भी यहाँके अखबारोंने इस बातको बहुत कम स्थान दिया है। एक अखबारके किसी एक कोनेमें मैंने देखा कि इस सिंचाई-योजनापर अनुमानित व्ययसे दूना खर्च हुआ है। सरकारकी इन बड़ी-बड़ी योजनाओंमें मेरा कोई विश्वास नहीं है, क्योंकि

इनसे छोटे किसानोंको कोई लाभ नहीं होता, बल्कि ये पूँजीवादी प्रणालीको ही सुदृढ़ और व्यापकतर बनानेमें सहायक होती हैं।

इसके बाद महात्मा गांधीने कांग्रेसकी वित्त तथा राजस्व-सम्बन्धी मामलोंपर नियन्त्रणकी माँगको दोहराया। उन्होंने कहा कि भारतको किसी कोमल शिशुकी तरह नरम रुईमें लपेटकर न रखा जाये। उसे गलतियाँ करने — भारी गलतियाँ भी — करने का मौका मिलना चाहिए। लेकिन अपनी तमाम कोशिशोंके बावजूद मैं अधिकारियोंको यह बात समझा नहीं सका। उनका दिमाग तो नीली पुस्तिकाओं और अंग्रेजों अर्थात् विजेताओं द्वारा लिखे भारतके इतिहासोंमें वर्णित तथ्योंसे भरा हुआ है। इस देशके चारों ओर भारतके सम्बन्धमें अज्ञानकी ऐसी दीवार खड़ी कर दी गई है कि मैं तो उसे देख-देखकर हैरान रह जाता हूँ।

उन्होंने आगे कहा :

इसलिए यह जरूरी है कि इंग्लैंडमें रहनेवाले आप लोगोंमें से कुछको इस अज्ञान को दूर करनेका काम अपने हाथमें लेना चाहिए और तेजीसे प्रचार-कार्य शुरू कर देना चाहिए। इस देशमें इतने सारे लोग हमारे लिए काम कर रहे हैं, यह जानकारी उन लोगोंकी व्यथाको कुछ कम कर देगी जो वहाँ भारतमें कष्ट सहन कर रहे हैं। आपकी मैत्रीकी स्मृति हमारे लिए हृदयमें सँजोकर रखनेकी चीज होगी और उससे हमारा उत्साह उसी प्रकार बढ़ेगा जिस प्रकार बोअर युद्धके समय दक्षिण आफ्रिकामें कष्ट-सहन करनेवालोंके उत्साहको एमिली हॉब हाउसने बढ़ाया था। मैं आपसे सहायता करने और अगर हम हतोत्साह हो रहे हों तो शायद इस प्रकारका कोई तार भेजनेकी प्रार्थना करता हूँ कि 'फिक्र मत करो, हम अंग्रेज लोग सब-कुछ देख-समझ रहे हैं और आपकी सफलताके लिए शुभकामनाएँ कर रहे हैं।' मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप कोई भी ऐसी प्रार्थना कीजिए जिससे हमें उत्साह और लोगोंकी सहानुभूति मिले। लेकिन आप यह एक शर्तपर ही कीजिए, तभी कीजिए अगर आप मानते हों कि हमारा पक्ष इसके योग्य है। अगर आप यह समझते हों कि हम बहुत बढ़ा-चढ़ाकर माँग कर रहे हैं तो आप हमसे साफ कह दीजिए और हमारी माँगोंको अस्वीकार कर दीजिए। तब अगर हम यह देखेंगे कि हमारे मित्र हमारा साथ छोड़ रहे हैं तो हम अपनी स्थिति पर दोबारा विचार करनेको मजबूर होंगे और यह सोचेंगे कि हम जो-कुछ माँग रहे हैं वह उचित है या नहीं। लेकिन अन्ततः हमारा भरोसा ईश्वरपर ही है। हम अपनी स्वतन्त्रता दानके रूपमें नहीं, बल्कि अपने प्रयत्नों और कष्ट-सहनके फलके रूपमें चाहते हैं। मैं यहाँ बातचीत करने इसलिए आया कि मैंने सोचा, हमने काफी कष्ट सहन कर लिया है। अगर परिषद् विफल हो जाती है तो मैं यह जान जाऊँगा कि इस देशको अपनी माँगका औचित्य समझानेके लिए भारतको अभी और कष्ट सहन करना चाहिए।

इसके बाद श्री हॉरेबिनने महात्मा गांधीसे पूछा कि लीग जो भारतके बारेमें सही ज्ञानका प्रसार करेगी उसके लिए उसे किन-किन स्रोतोंसे जानकारी मिलेगी।

उत्तरमें महात्मा गांधीने कहा कि कांग्रेसकी साधन-शक्ति बराबर लीगकी सेवामें प्रस्तुत रहेगी। उन्होंने आगे कहा :

आप जो भी जानना चाहें, उसके लिए हमसे कहें; हम आपको तत्काल सभी जानकारी दे देंगे। जरूरी हुआ तो हम तार द्वारा भी आपको जानकारी देनेमें हिचकिचाहट नहीं दिखायेंगे। आपको जिस साहित्यकी आवश्यकता होगी वह साहित्य भी मिल जायेगा। अगर आप चाहें तो आपको हम हर हफ्ते समाचारोंका संकलन भिजवानेकी भी व्यवस्था कर सकते हैं। आप हमसे कहें, हम अवश्य भेजेंगे। अगर हमारी दी गई जानकारीको लेकर अधिकारियोंके साथ आपकी कोई झंझट हो जाये तो आप हमसे हमारे दिये गये समाचारोंको सिद्ध करनेके लिए कहें। आप हमें परखकर देखिए। अगर हम गलत हुए तो हम माफी माँग लेंगे या हमारी ओरसे आप ही इंडिया ऑफिससे माफी माँग लीजिएगा। हम ईमानदारीसे काम लेंगे और न कोई बात बढ़ा-चढ़ाकर कहेंगे और न कोई भ्रामक सूचना देंगे, क्योंकि हमारे संघर्षकी सफलता झूठी या अतिरंजित सूचनाओंपर निर्भर नहीं है। कांग्रेसकी नीति अपनी गलती तत्काल स्वीकार कर लेनेकी और इसके सदस्य अगर कोई बात बढ़ा-चढ़ाकर कहें तो उसका पर्दा फाश करनेकी है।

कुमारी एलेन विल्किसनने महात्मा गांधीसे पूछा कि क्या आप यह ठीक समझते हैं कि भारतके राजनीतिक कैदियोंके लिए यहाँ कोई आन्दोलन छेड़ा जाये। उत्तरमें महात्मा गांधीने कहा कि इसके लिए तो पहले पूरी जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक है, क्योंकि हर मामला अपने गुण-दोषपर ही निर्भर है।

इस समय अधिकारियोंका पूरा ध्यान इस ओर नहीं दिलाया जा सकता, लेकिन बादमें जब परिषद् विफल हो जाये तब ऐसा आन्दोलन शुरू करनेका ठीक अवसर आयेगा। कांग्रेसके कार्यालय सभी जरूरी जानकारी भेजनेको सदा तत्पर रहेंगे, और आपको इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि आप लोगोंको जिस सरकारसे बरतना है वह बहुत ही हठी है।

इसके बाद महात्मा गांधीसे यह सवाल पूछा गया कि उनके विचारसे परिषद्के सफल न हो पानेके कारण क्या हैं? उत्तरमें उन्होंने कहा कि मैं मानता हूँ, इसमें भारतीय और ब्रिटिश सरकार दोनों समान रूपसे दोषी हैं। भारतीय साम्प्रदायिक प्रश्नका कोई समाधान नहीं ढूँढ़ पाये और ब्रिटिश सरकारने प्रारम्भिक अवस्थामें ही परिषद्को गलत दिशामें मोड़ दिया। साम्प्रदायिक प्रश्नको सारी समस्याका केन्द्र-बिन्दु बनाकर सरकारने हिन्दुओं, सिखों तथा मुसलमानोंके लिए अपने-अपने स्वार्थ साधनेके लिए इस परिषद्की गाड़ीको अलग-अलग दिशाओंमें खींचनेके रास्ते साफ कर दिये। सच तो यह है कि साम्प्रदायिक प्रश्न अनेक प्रश्नोंमें से केवल एक है और यह परिषद् साम्प्रदायिक समाधान ढूँढ़नेका कोई अनिवार्य साधन नहीं है। जब सरकारने परिषद् बुलाई तो वह जानती थी कि साम्प्रदायिक नेताओंमें कोई सहमति नहीं हो पाई है, और उसने साम्प्रदायिक प्रश्नको तत्काल सबसे पहले पेश करके फूट और मतभेदके लिए

रास्ता तैयार कर दिया और उस फूट तथा मतभेदको स्थायी बनाये रखनेका भी सामान जुटा दिया। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि यह परिषद् जहाँ-तहाँसे नामजद कर लिये गये ऐसे सदस्योकी परिषद् है जो किसीके प्रति उत्तरदायी नहीं है, ब्रिटिश सरकारने जिस चीजको नही समझा वह यह है कि जहाँतक स्वराज्यका सम्बन्ध है, कांग्रेस ही राष्ट्र है। अगर सरकारने कांग्रेसको भी अन्य पक्षोमें से केवल एक पक्ष मान लेनेके बजाय इस चीजको समझ लिया होता तो इतना सारा समय बरबाद न होता।

मुझे पूरा विश्वास है कि आपकी सरकारको अन्तत कांग्रेसके साथ ही सारा मामला तय करना पड़ेगा। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं भले ही सर मुहम्मद शफीका प्रतिनिधि न होऊँ, लेकिन मुसलमानोका प्रतिनिधि होनेका दावा अवश्य करता हूँ। इसी तरह यद्यपि मैं डॉ० अम्बेडकरका प्रतिनिधि नही हूँ, लेकिन दलित वर्गोंका अवश्य हूँ और डॉ० दत्तका प्रतिनिधि न होते हुए भी ईसाइयोका प्रतिनिधित्व जरूर करता हूँ।

ये लोग पृथक् प्रतिनिधित्व नही चाहते। मैं यह दावा करता हूँ कि कांग्रेस भारतके ३३ करोड़ लोगोका प्रतिनिधित्व करती है। सभी वर्गोंके हित सर्वसाधारणके हितोके अधीन होने चाहिए। सरकार कांग्रेसके इसी प्रातिनिधिक स्वरूपको स्वीकार नही करती और यही सबसे बड़ा दोष है।

फिर महात्मा गांधीसे यह पूछा गया कि क्या वे इस बातको जरूरी नहीं मानते कि परिषद्के विफल हो जानेपर उन्हे अपनी स्थिति या तो किसी सार्वजनिक सभामें या कमसे-कम इस देशके लोगोकी एक मण्डलीके सामने स्पष्ट कर देनी चाहिए? उत्तरमें उन्होंने कहा कि मैं जिस ढंगसे काम कर रहा हूँ उसी ढंगसे क्यों कर रहा हूँ, इसके कारण बतानेको मैं बहुत उत्सुक हूँ, इंग्लैंडके लोगोंकी किसी मण्डलीके सामने अपनी बात कहनेकी मेरी प्रबल इच्छा है, लेकिन चूँकि मैंने आरम्भमें सरकारसे वादा कर दिया है कि समस्याके समाधानके मार्गमें मैं कोई बाधा नहीं डालूँगा, इसलिए अभी मैं सार्वजनिक रूपसे कुछ नहीं कहना चाहता।

इस देशमें भारतके लिए काम करनेवाले संगठनोंकी बहुलताकी चर्चा करते हुए महात्मा गांधीने कहा कि इन संगठनोको एक साथ मिला देनेके लिए पूरा प्रयत्न करना चाहिए। सारी शक्तिको कामपर केन्द्रित करना चाहिए और उसका उपयोग एक ही जरियेसे होना चाहिए, तथा इस कामकी जिम्मेवारी अंग्रेज लोगोपर होनी चाहिए जो भारतीयोकी सलाह ले सकते है। आपको मेरी सलाह है कि आप अपनी संस्थाको यथासम्भव अधिकसे-अधिक व्यापक बनायें और जिस क्षेत्रसे भी सम्भव हो उससे सहायता माँगें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ४-१२-१९३१

२०२. तार: लॉर्ड इर्विनको

लन्दन
१३ नवम्बर, १९३१

परिषद् विफल हो रही है। अगले गुरुवारको[1] प्रस्थान कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-११-१९३१

२०३. भेंट: 'न्यूज क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको[2]

१३ नवम्बर, १९३१

प्र०: श्री गांधी, मैं यह जानना चाहता हूँ कि प्रधान मन्त्रीसे जो हिन्दू-मुस्लिम विवादके सम्बन्धमें . . . मध्यस्थता करनेका अनुरोध किया जानेवाला है, उसपर क्या आप हस्ताक्षर करेंगे?

उ०: मेरा खयाल है, मैं हस्ताक्षर नहीं कर सकता। श्री मैकडॉनाल्ड निजी हैसियतसे मध्यस्थ हों, इस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। यहाँ मुझे गलत न समझें।

लेकिन उनसे प्रधान मन्त्रीकी हैसियतसे मध्यस्थता करनेका मतलब ब्रिटिश सरकारसे मध्यस्थता करनेका निवेदन करना होगा और उससे कांग्रेसके प्रादेशपत्रको दृष्टिमें रखते हुए मैं अटपटी स्थितिमें पड़ जाऊँगा।

और उधर सरकार तुरन्त अपने-आपको ऐसे मामलोंपर सौदेबाजी करनेकी स्थितिमें देखने लगेगी जिनके सम्बन्धमें मेरी समझसे सौदेबाजीकी कोई गुंजाइश ही नहीं है। उदाहरणके लिए हम सेना और वित्तके मामलोंको ले सकते हैं।

श्री गांधीने आगे कहा कि मेरे हस्ताक्षर करनेसे इनकार करनेका मतलब यह नहीं है कि श्री मैकडॉनाल्ड मध्यस्थता करें ही नहीं। उन्होंने कहा:

मैं तो खुद ही अल्पसंख्यक समस्याके ऐसे किसी भी समाधानको स्वीकार कर लूँगा जिसे हिन्दू, मुसलमान और सिख स्वीकार कर लें।

लेकिन, मेरे लेखे अल्पसंख्यक समस्याका इन तीन समुदायोंसे बाहर किसीसे कोई सरोकार नहीं है, और अगर विधान सभाओंमें अन्य अल्पसंख्यक समुदायोंके प्रतिनिधित्वके सम्बन्धमें भी मध्यस्थताकी बात सोची गई तो इसे मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। मेरे विचारसे, उसका मतलब उत्तरदायी सरकारको निरर्थक बना देना होगा।

१. गांधीजी वास्तवमें ५ दिसम्बर, १९३१ को लन्दनसे रवाना हुए।

२. प्रतिनिधि उक्त पत्रका वैदेशिक सम्पादक था।

मैंने श्री गांधीसे पूछा कि इस आम भावनाको देखते हुए कि अब परिषद्का सर्वथा विफल हो जाना निश्चित है, क्या आपके मनमें कोई आशा शेष है?

उत्तरमें उन्होंने बताया कि यद्यपि इस समय उन्हे ऐसा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है जिससे आशा रखनेका कोई आधार मिले, फिर भी वे सर्वथा निराश नहीं हैं। उन्होंने आगे कहा :

लेकिन खुद मै और दूसरे लोग भी इस अन्तिम घडीमें भी परिषद्को विफलता से बचानेके लिए हर उपायसे काम ले रहे है और हर तरहका प्रयत्न कर रहे हैं।

अगर हमे ऐसे ही खाली हाथो लौट जाना पडा तो मै समझता हूँ कि भारतमें अनिवार्यत इसके जो परिणाम निकलेगे वे बहुत दु:खद होगे।

प्र० : लेकिन क्या मै ऐसा नहीं मान सकता कि लन्दनमें नई योजनापर जहाँतक सहमति हुई है, वहाँतक आप उसे कार्यान्वित करनेको तैयार होंगे?

उ० मै तो सहर्ष वैसा करना चाहूँगा, लेकिन तीनो समुदायोके सहयोगके बिना कुछ नही हो सकता। जबतक ऐसे सहयोगका निश्चय नही हो जाता तबतक प्रान्तीय विधान सभाओका अस्तित्व कायम होना असम्भव है।

जबतक केन्द्रमे स्वायत्त शासनका वैधानिक आश्वासन नही दिया जाता तबतक प्रान्तीय स्वायत्त शासन असम्भव है। हमे इतना समझ सकनेके पर्याप्त अनुभव प्राप्त हो चुके है कि केन्द्रमे पूर्ण उत्तरदायी शासनके बिना प्रान्तोमे स्वायत्त शासनकी बात चल ही नही सकती।

जनता अबतक जिस बातको समझ नही पाई है वह यह है कि केन्द्र तथा प्रान्तोके बीचका सम्बन्ध इतना महत्त्वपूर्ण है कि केन्द्रमे स्वायत्त शासनके अभावमें प्रान्त सर्वथा असहाय होगे।

प्र० : और प्रस्तावित संविधान सभा, केन्द्रीय सम्मेलन (सेंट्रल कन्वेंशन)के बारेमें आपका क्या कहना है? सुना है कि उसकी चर्चा हुई है। क्या इसका मतलब यह है कि इसपर सरकार तथा भारतीय नेताओंके बीच चर्चा हुई है?

उ० : चर्चा मेरे साथ हुई है। लेकिन, मुझे लगता है कि अब यह चर्चा समाप्त ही हो चुकी है।

जबतक केन्द्रमे उसी अनिवार्य दायित्वके सम्बन्धमे वैधानिक आश्वासन नही दिया जाता तबतक मै ऐसी कोई सभा बुलाये जानेपर सहमत नही हो सकता।

मैने केन्द्रीय स्वायत्त शासनसे अलग चीजके रूपमे प्रान्तीय स्वायत्त शासनपर चर्चा करनेका साहस केवल यह दिखानेके लिए किया है कि जबतक केन्द्रमे स्वायत्त शासन दिये जानेका आश्वासन न हो तबतक स्वायत्त शासन प्राप्त प्रान्तोकी रचना करना असम्भव है। लेकिन फिर भी मेरे फ्लीट स्ट्रीट स्थित कुछ मित्रोने ऐसी खबर फैलाई है कि मैने पहली किस्तके तौरपर प्रान्तीय स्वायत्त शासनकी योजना स्वीकार कर ली है।

ऐसी कोई बात तो मैंने कभी सोची भी नही है। हाँ, मैंने यह आश्वासन दिये जानेकी माँग अवश्य की है कि केन्द्रमे उत्तरदायी सरकारकी स्थापना प्रान्तीय सत्ताकी व्यवस्था कर देनेके 'लगभग तुरन्त बाद' हो जायेगी।

'लगभग तुरन्त बाद' मैंने इसलिए कहा है कि मैंने ऐसा माना है कि मेरे सामने जो कुछ-एक कठिनाइयाँ रखी गई है, उनको देखते हुए एक छोटा-सा अन्तराल सम्भव है।

मेरे प्रस्तावके अनुसार प्रान्तीय स्वायत्त शासन तथा केन्द्रमे पूर्ण उत्तरदायी शासनकी व्यवस्था एक ही कानूनमे की जायेगी और वही कानून उस तन्त्रकी भी रचना करेगा जो सघीय तथा केन्द्रीय ढाँचेको खड़ा करेगा।

[अंग्रेजीसे]

न्यूज क्रॉनिकल, १४-११-१९३१

२०४. भाषण : अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकमे

लन्दन

१३ नवम्बर, १९३१

प्रधान मन्त्री महोदय तथा प्रतिनिधि बन्धुओ,

मै अत्यधिक सकोच और लज्जाके साथ अल्पसख्यकोके प्रश्नकी चर्चामे भाग ले रहा हूँ। कुछ अल्पसंख्यक समुदायोकी ओरसे प्रतिनिधियोको भेजे गये और आज प्रात ही मिले ज्ञापनको[1] मै यथेष्ट ध्यान और एकाग्रतासे नही पढ सका हूँ।

इससे पहले कि उक्त ज्ञापनके सम्बन्धमे मै कुछ शब्द कहूँ, मै अत्यन्त आदर और सम्मानके साथ, आपकी अनुमतिसे, इस समितिके सामने पेश किये गये आपके इस विचारसे मतभेद प्रकट करना चाहूँगा कि साम्प्रदायिक प्रश्नको हल करनेकी असमर्थताके कारण सविधान-रचनाके कार्यकी प्रगति रुक रही है, और ऐसा कोई सविधान बनाये जानेसे पहले इस प्रश्नका हल हो जाना अनिवार्य है। इस समितिकी बैठकके आरम्भमे ही मैंने कह दिया था कि मै इस विचारसे सहमत नही हूँ। उसके बाद अब तक मुझे जो अनुभव हुआ है, उससे मेरा वह विचार और दृढ हो गया

१. ज्ञापन "मुसलमानों, दलित वर्गों, ऐंग्लो-इंडियनों, यूरोपीयनों और भारतीय ईसाइयोंके काफी बड़े भागकी ओरसे" पेश किया गया था और उसके द्वारा यह माँग की गई थी कि सभी विधान-मण्डलोंमें "इन सम्प्रदायोंका प्रतिनिधित्व पृथक् निर्वाचक-मण्डलोंसे हो . . . शर्त यह रहेगी कि दस वर्ष बीत जानेपर पजाब और बगालके मुसलमानों और किसी अन्य प्रान्तके किसी भी अल्पसंख्यक समुदायको संयुक्त निर्वाचक-मण्डल स्वीकार करनेकी स्वतन्त्रता होगी। . . . दलित वर्गोंके बारेमें निर्वाचक-मण्डल २० सालसे पहले सयुक्त निर्वाचक-मण्डलोंमें नही बदले जायेंगे। . . ." मुसलमानों, दलित वर्गों, ऐंग्लो-इंडियनों और यूरोपियनोंकी ओरसे विशेष माँगें रखी गई थी। इस दस्तावेजपर आगा खाँ, डाक्टर आम्बेडकर, रावबहादुर पन्नीर्सेल्वम, सर हेनरी गिडनी और सर ह्यूबर्ट कारके हस्ताक्षर थे।

है, और आप मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करे कि गत वर्ष इस कठिनाईपर आपने जो जोर दिया और इस वर्ष फिर उसे दोहराया, उसीका यह परिणाम है कि विभिन्न समुदायोको अपने पूरे बलके साथ अपने-अपने दावे रखनेका प्रोत्साहन मिला।

यदि उन्होने इसके विपरीत कुछ किया होता तो वह मानव-स्वभावके विरुद्ध होता। सबने यही सोचा कि अपने दावे चाहे जैसे हो, उनपर पूरा-पूरा आग्रह करनेका यही समय है, और मै इस बातको फिर दोहरानेका साहस करता हूँ कि नि सन्देह इस प्रश्नपर दिये गये जोरके ही कारण इसका उद्देश्य विफल हो गया है। यह प्रोत्साहन मिलनेके कारण ही हम किसी समझौतेपर नही पहुँच सके। इसलिए सर चिमनलाल सीतलवाडके इस विचारसे मै पूर्णत सहमत हूँ कि यह प्रश्न आधारभूत नही है, मध्यबिन्दु नही है, मध्यबिन्दु तो सविधान-रचना है।

मुझे पूरा विश्वास है कि आपने हम लोगोको यहाँ ६,००० मील दूरसे अपना घर और कामकाज छुडाकर साम्प्रदायिक प्रश्न हल करनेके लिए नही बुलाया था। आपने हमे यहाँ सविधान-रचनाकी क्रियामे भाग लेनेके लिए एकत्र किया था, बल्कि आपने सोच-विचारकर यह घोषित किया था कि हम लोग इसीलिए निमन्त्रित किये जा रहे है और यह कि आपके इस अतिथिपरायण देशको छोडनेसे पहले हमे यह निश्चय हो चुकेगा कि भारतकी स्वतन्त्रताके लिए हमने एक सम्मान और प्रतिष्ठायुक्त ढाँचा तैयार कर लिया और अब उसपर केवल कॉमस सभा और लॉर्ड सभाकी सम्मति मिलना ही शेष रह गया है।

किन्तु इस समय हमारे सामने एक बिलकुल दूसरी ही स्थिति है, वह यह कि क्योकि हम किसी साम्प्रदायिक समझौतेपर नही पहुँच सके है, इसलिए सविधान-रचनाका काम नही होगा और अन्तिम उपाय और आखिरी रगआमेजीकी तरह आप सविधान और उससे उद्भावित विषयोपर सम्राट्-सरकारकी नीतिकी घोषणा कर देगे। मै यह महसूस किये बिना नही रह सकता कि जो परिषद् इतने हो-हल्लेके साथ शुरू की गई थी और जिसने बहुत-से लोगोके मन और हृदयमे इतनी आशा जगा दी थी, उसका यह दु खद अन्त होगा।

इस दस्तावेजपर आते हुए मै सर ह्यूबर्ट कार द्वारा दिये गये धन्यवादको स्वीकार करता हूँ। उनका यह कहना ठीक है कि इस बोझको अपने कधोपर उठाते समय मैने जो शब्द कहे थे वे यदि न कहे होते और किसी प्रकारका समझौता करनेमे मै सर्वथा असफल न हुआ होता, तो वे अन्य अल्पसख्य समुदायोके साथ मिलकर इस समितिके विचारार्थ और अन्तमे सम्राट्-सरकारकी स्वीकृतिके लिए जो अत्यन्त सराहनीय योजना पेश कर सके है, वह न कर सकते।

सर ह्यूबर्ट कार तथा उनके साथियोको इससे स्पष्टत जो सन्तोष हुआ है, वह मै उनसे नही छीनूँगा। किन्तु, मेरे विचारमे, उन्होने जो-कुछ किया है, वह ऐसा ही है जैसा कि मुर्देके पास बैठना और उसकी चीर-फाडका प्रशसनीय कार्य करना।

भारतके प्रमुख राजनैतिक सगठनके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मै नि.सकोच सम्राट्-सरकारसे और उन मित्रोसे जो अपने नामके सामने लिखे अल्पसख्यक समुदायोके प्रतिनिधि बनना चाहते है या अपनेको उनका प्रतिनिधि मानते है, और नि सन्देह सारे

ससारसे यह कह देना चाहता हूँ कि यह योजना उत्तरदायी शासनकी प्राप्तिके लिए नही, वल्कि निश्चय ही नौकरशाहीके साथ सत्तामे हिस्सा वँटानेके लिए वनाई गई है।

यदि यही इरादा हो — और सारी दस्तावेजमे यही इरादा समाया हुआ है — तो मै उनकी सफलता चाहता हूँ और काग्रेस उससे साफ अलग हो जाती है। काग्रेस किसी ऐसे सुझावपर, जिसके अधीन स्वतन्त्रता और स्वराज्यका सदावहार वृक्ष कभी उग न सकता हो, अपनी सहमति प्रकट करनेकी अपेक्षा चाहे जितने वर्ष जगलमें भटकना स्वीकार करेगी।

मुझे आश्चर्य है कि सर ह्यूवर्ट कार हमे वताते है कि उन्होने जो योजना तैयार की है, वह केवल कुछ ही समयके लिए है, कि उससे राष्ट्रीयताके हमारे ध्येयको कुछ हानि नही होगी, प्रत्युत दस वर्ष वाद हम सव एक-दूसरेसे मिलते और एक-दूसरेको गले लगाते दिखाई देंगे। मेरा राजनैतिक अनुभव मुझे इससे सर्वथा विपरीत वात सिखाता है। यदि उत्तरदायी शासनको, जव कभी भी वह आये, शुभ मुहूर्तमें आरम्भ करना हो तो, उसकी वैसी चीर-फाड नही होनी चाहिए जैसी कि इस योजनाके द्वारा की गई है। यह एक ऐसा तनाव है, जिसे कोई सरकार सह नही सकती।

और वात सर ह्यूवर्टके दावेतक ही सीमित नही है। प्रधान-मन्त्री महोदय, आपका कहना है कि यह योजना ११॥ करोडसे अधिक लोगो अथवा भारतकी आवादीके लगभग ४६ प्रतिशत भागको मान्य होगी। मुझे आश्चर्य है कि आप यह वात कैसे कह गये और सो भी इस भावसे मानो यह एक निर्विवाद तथ्य हो। यह अक गलत है, इसका आपको जीता-जागता प्रमाण मिल चुका है। स्त्रियोकी ओरसे विशेष प्रतिनिधित्वकी माँगका सर्वथा खण्डन आप सुन चुके है, और स्त्रियाँ भारतकी आवादीका आधा हिस्सा है। इसलिए इस ४६ प्रतिशतमें कुछ कमी हो जाती है। किन्तु केवल इतना ही नही है। काग्रेस नगण्य सस्था हो सकती है, किन्तु मैंने नि सकोच यह दावा किया है और विना किसी शर्मके उसे फिर दोहराता हूँ कि काग्रेस केवल ब्रिटिश भारतकी नही, प्रत्युत सम्पूर्ण भारतकी आवादीके ८५ अथवा ९५ प्रतिशत भागकी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है।

चाहे जितने प्रश्न उठानेपर भी मै अपने पूरे बलके साथ इस दावेको दोहराता हूँ कि काग्रेस अपने सेवाके अधिकारसे भारतके कृपक कहे जानेवाले वर्गकी प्रतिनिधि है। यदि सरकार यह चुनौती दे कि भारतमे लोकमतकी गिनती कर ली जाये, तो मै उस चुनौतीको स्वीकार कर लूँगा, और तब आप तुरन्त ही देख लेगे कि काग्रेस उनकी प्रतिनिधि है या नही। लेकिन मै एक कदम और आगे जाता हूँ। इस समय यदि आप काग्रेसके रजिस्टरकी जाँच करे, यदि आप भारतकी जेलोके रजिस्टरोकी जाँच करे, तो आपको मालूम होगा कि काग्रेस मुसलमानोकी बहुत अधिक सख्याकी प्रतिनिधि रही है और है। गत वर्ष काग्रेसके झण्डेके नीचे हजारो मुसलमान जेल गये थे। आज भी काग्रेसके रजिस्टरपर कई हजार मुसलमान और इसी तरह कई हजार अछूत और कई हजार भारतीय ईसाई है। मै नही जानता कि कोई भी ऐसा समुदाय है जिसके सदस्य काग्रेसके रजिस्टर पर न हो। नवाब साहब छतारीके प्रति पूर्ण

सम्मान प्रकट करते हुए, मैं यह कहना चाहता हूँ कि जमीदार, मिल-मालिक और लखपति तक उसके सदस्य है। मैं स्वीकार करता हूँ कि वे धीरे-धीरे और सावधानीसे कांग्रेसकी ओर आ रहे हैं, किन्तु कांग्रेस उनकी भी सेवा करनेका प्रयत्न करती है। नि सन्देह कांग्रेस मजदूरोकी भी प्रतिनिधि है ही। इसलिए इस दावेको स्वीकार करनेमे कि इस ज्ञापनमे रखे गये सुझाव साढ़े ग्यारह करोडसे अधिक लोगोको मान्य हैं, बहुत अधिक सयम और सावधानी बरती जानी चाहिए।

एक शब्द और कहकर मैं इसे समाप्त करूँगा। मुझे आशा है कि साम्प्रदायिक समस्याके सम्बन्धमे जो योजना[1] कांग्रेसने तैयार की है, वह आपके सामने आ चुकी है और सदस्योमे घुमा दी गई है। मैं साहसपूर्वक यह कह सकता हूँ कि जितनी भी योजनाएँ मैंने देखी हैं, उनमे यह सबसे अधिक व्यावहारिक योजना है। किन्तु मैं इसमे भूल भी कर सकता हूँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि विभिन्न समुदायोके जो प्रतिनिधि इस मेजके सामने बैठे हैं उन्हे यह योजना पसन्द नही है। किन्तु भारतमे इन्ही वर्गोके प्रतिनिधि इसे पसन्द कर चुके है। यह किसी एक दिमागकी उपज नही, प्रत्युत एक समितिकी कृति है जिसमे कई महत्त्वपूर्ण दलोके प्रतिनिधि थे।

इसलिए कांग्रेसकी ओरसे आपके पास यह योजना है, किन्तु कांग्रेसने यह भी सुझाया है कि इस प्रश्नके निर्णयके लिए एक निष्पक्ष पचायत होनी चाहिए। पचायतके द्वारा सारे ससारमे लोगोने अपने मतभेद मिटाये हैं और कांग्रेस भी पचायती अदालतके किसी भी निर्णयको स्वीकार करनेके लिए हमेशा तैयार है। मैंने स्वय यह सुझानेका साहस किया है कि सरकार एक न्यायाधिकरण नियुक्त करे जो इस मामलेकी जाँच कर अपना निर्णय दे। किन्तु हममे से किसीको यदि इनमे से कोई भी बात स्वीकार न हो और यदि सविधान-रचना इसी शर्तपर होनी हो कि पहले इस प्रश्नका निपटारा हो जाना चाहिए तो मैं कहूँगा कि इस बातको स्वीकार करनेकी अपेक्षा इस तथाकथित उत्तरदायी सरकारसे दूर रहना ही हमारे लिए कही अच्छा है।

मैंने पहले जो कहा है, वही फिर दुहराता हूँ कि कांग्रेस किसी भी ऐसे समाधानको, जो हिन्दू, मुसलमान और सिखोको मान्य हो, स्वीकार करनेके लिए सदैव तैयार रहेगी। किन्तु अन्य अल्पसख्यकोके लिए विशेष रक्षित स्थान अथवा विशेष निर्वाचक-मडलोका वह कभी समर्थन नही करेगी। मूल अधिकारो और नागरिक स्वतन्त्रता-सम्बन्धी विशेष धाराओ अथवा सरक्षणोका कांग्रेस सदैव अनुमोदन करेगी। निर्वाचकोकी सूचीमे शामिल होने और समान निर्वाचक-मण्डलसे मत मॉगनेका हर व्यक्तिको अधिकार होगा।

मेरी विनम्र सम्मतिमे सर ह्यूबर्ट कारका सुझाव उत्तरदायी सरकार एव राष्ट्रीयताके मूलपर ही आघात करनेवाला है। वे कहते हैं कि यदि आप विधानमण्डलमे किसी जीवन्त यूरोपीयको लाना चाहते है तो वह यूरोपीयनो द्वारा ही चुना होना चाहिए। यदि भारतको इस प्रकार अलग-अलग कटे, अनेक विशिष्ट वर्गो

१. देखिए पृष्ठ १२८-३३।

द्वारा चुने गये प्रतिनिधि मिलने हैं, तो भारतकी क्या दशा होगी, यह भगवान् ही जाने। वह और केवल वही यूरोपीय सम्पूर्ण भारतकी सेवा कर सकेगा जो केवल यूरोपीयनो द्वारा नहीं, प्रत्युत समान निर्वाचक-मण्डल द्वारा निर्वाचित होगा। स्वय इस विचारसे ही प्रकट होता है कि उत्तरदायी सरकारको राष्ट्रीय भावनाके — आबादीके ८५ प्रतिशत भाग, अर्थात् किसानोके — खिलाफ रहनेवाले इन तत्त्वोके विरुद्ध सदैव लडना होगा। मै तो इस चीजकी कल्पना भी नही कर सकता। यदि हमे उत्तरदायी सरकारकी स्थापना करनी है और यदि हमे वास्तविक स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है, तो मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि इन तथाकथित विशिष्ट वर्गोके प्रत्येक व्यक्तिका यह गौरवपूर्ण अधिकार और कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह इस खुले द्वारसे समान निर्वाचक-मण्डलके समर्थनसे और उसके द्वारा चुने जाकर ही, विधानमण्डलोमे प्रवेश करे। आप जानते है कि काग्रेस बालिग मताधिकारके लिए वचनबद्ध है और बालिग मताधिकारमे सबके लिए निर्वाचक-सूचीमें शामिल होनेका मार्ग खुला रहेगा। इससे अधिककी कोई भी माँग नही कर सकता।

अब दो शब्द तथाकथित अछूतोंके बारेमे।

अन्य अल्पसख्यकोके दावोको मै समझ सकता हूँ, किन्तु अछूतोकी ओरसे पेश किया गया दावा मेरे लिए 'सबसे अधिक क्रूर' है। इसका अर्थ यह हुआ कि अस्पृश्यता का कलक सदैवके लिए कायम रहनेवाला है। अछूतोके वास्तविक हितोको मै भारतकी स्वतन्त्रताके लिए भी नही बेचूंगा। मै स्वय व्यक्तिगत रूपसे अछूतोके विशाल समुदायका प्रतिनिधि होनेका दावा करता हूँ। यहाँ मै केवल काग्रेसकी ओरसे नही प्रत्युत स्वय अपनी ओरसे भी बोल रहा हूँ, और मै दावेके साथ कहता हूँ कि यदि अछूतोका मत लिया जाये तो मुझे उनके मत मिलेगे और मेरा स्थान सबसे ऊपर होगा। मै भारतके एक छोरसे दूसरे छोर तकका दौरा करके अछूतोसे कहूँगा कि अस्पृश्यताको, जो उनका नही प्रत्युत रूढिवादी हिन्दुओका कलक है, दूर करनेका उपाय पृथक् निर्वाचक-मडल और पृथक् रक्षित स्थान नही है।

इस समिति और समस्त ससारको यह जान लेना चाहिए कि आज हिन्दू समाज-सुधारकोका एक ऐसा दल मौजूद है जो अस्पृश्यताके इस कलकको धोनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध है। हम नही चाहते कि हमारे रजिस्टरो और हमारी जनगणनामें अछूत नामकी एक पृथक् जाति लिखी जाये। सिख, मुसलमान और यूरोपीय सदाके लिए सिख, मुसलमान और यूरोपीय रह सकते है। किन्तु क्या अछूत भी सदैवके लिए अछूत रहेगे? अस्पृश्यता जीवित रहे, इसकी अपेक्षा मै यह अधिक अच्छा समझूँगा कि हिन्दू धर्म डूब जाये। इसलिए, डॉ० अम्बेडकरके प्रति, अछूतोको ऊँचा उठा देखनेकी उनकी इच्छा तथा उनकी योग्यताके प्रति अपना पूरा सम्मान प्रकट करते हुए भी, मै अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहूँगा कि उन्हे जो भारी अन्याय भोगना पडा और शायद जो कटु अनुभव हुए है उनके कारण उनका विवेक कलुषित हो गया है। यह बात मुझे दु खके साथ कहनी पडी है, किन्तु यदि मै न कहूँ तो मै अछूतोके हितके प्रति, जो मेरे लिए प्राणोके समान है, सच्चा न रहूँगा। सारे ससारके राज्यके बदले

भी मै उनके अधिकारोको नही बेचूँगा। अपने उत्तरदायित्वका पूरा ध्यान रखते हुए, मै यह कहता हूँ कि डॉ० अम्बेडकरका सारे भारतके अछूतोकी ओरसे बोलनेका दावा उचित नही है। इससे हिन्दू धर्ममे जो विभाजन होगा वह मेरे लिए किसी भी तरह सन्तोषकी चीज नही हो सकती। अछूत यदि मुसलमान अथवा ईसाई हो जाये तो मुझे उसकी परवाह नही। वह मै सह लूँगा किन्तु गाँवोमे यदि हिन्दुओके दो भाग हो जाये, तो हिन्दू समाजकी जो दशा होगी वह मुझसे सही न जा सकेगी। जो लोग अछूतोके राजनैतिक अधिकारोकी बात करते है, वे भारतको नही पहचानते है और हिन्दू समाज आज किस प्रकार बना हुआ है, यह नही जानते है। इसलिए मै अपनी पूरी शक्तिसे यह कहूँगा कि इस चीजका विरोध करनेवाला यदि मै अकेला रहूँ, तो भी मै अपने प्राणोकी बाजी लगाकर इसका विरोध करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ५४३-४४

२०५. भाषण : वेस्टमिंस्टर स्कूलमे[1]

लन्दन
१३ नवम्बर, १९३१

फिलहाल सम्मेलन असफल हो गया लगता है और अभेद्य अंधकारमे आशाकी कोई किरण दिखाई नही देती। पर आपके कुछ महापुरुष विपत्तिको टालनेकी भरसक कोशिश कर रहे है। यदि वे असफल रहते है और सम्मेलन अन्तमे विफल हो जाता है, जैसा कि मुझे डर है कि वह होगा, तो लाखो लोग अग्नि-परीक्षामे से गुजरनेको तैयार हो जायेगे, और भयानकसे-भयानक दमनके आगे भी हिम्मत नही हारेगे। हमे यह 'वचन' दिया गया है कि इस बारका दमन पिछले सालके दमनसे दस गुना भयानक होगा। पर मै ईश्वरसे यही प्रार्थना करूँगा कि मानव-जाति पाशविक शक्तिके इस प्रदर्शनसे बची रहे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २६-११-१९३१

१. महादेव देसाईके "लन्दनका पत्र" से उद्धृत। इस भाषणकी कोई अन्य रिपोर्ट उपलब्ध नही है।

२०६. भेंट : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
१४ नवम्बर, १९३१

प्रश्न : प्रधान मन्त्रीकी इस प्रार्थनाके प्रति कि सभी पक्षोंको उनकी मध्यस्थतापर सहमत हो जाना चाहिए, आपका रुख क्या है?

उत्तर. प्रधान मन्त्रीको मध्यस्थता करनेके लिए अपने हस्ताक्षरोसे प्रार्थना-पत्र भेजा जाये, मै इससे सहमत नही हो सकता। परन्तु मै यह चीज स्पष्ट कर दूं कि मुझे श्री मैक्डॉनाल्डके प्रति व्यक्तिगत रूपसे या मध्यस्थताके सिद्धान्तपर कोई आपत्ति नही है। इसके विपरीत, मैने सदा यही कहा है कि सम्बन्धित पक्षोको मध्यस्थतापर सहमत हो जाना चाहिए। परन्तु मै प्रधान मन्त्रीसे मध्यस्थताके लिए प्रार्थना करनेमे शामिल नही हो सकता, क्योकि प्रधान मन्त्री, श्री मैक्डॉनाल्डके रूपमे अपनी निजी हैसियतसे नही, बल्कि प्रधान मन्त्रीकी हैसियतसे सुझाव देते है, जो स्थिति उन्हे मन्त्रि-मण्डलसे प्राप्त है। इसलिए वे सरकारकी ओरसे बोलते है, और मै इस चीजसे सहमत नही हो सकता कि सरकार इस प्रश्नका निर्णय करे। आत्मसम्मानकी उच्च भावना रखनेके कारण, मै सरकारका एहसान लेनेको तैयार नही हूँ। कांग्रेसकी राजनीतिक माँगोके बारेमें मै समझौता नही कर सकता। मै केवल ऐसे हेर-फेर ही स्वीकार कर सकता हूँ जो साफ-साफ भारतके हितमे हो। इसलिए सरकारका एहसान तो मै नही ले सकता।

प्र० : इसका अर्थ क्या यह है कि प्रधान मन्त्रीकी प्रार्थनाकी कोई अनुरूप प्रतिक्रिया नहीं हो सकती?

उ०. नही, हो सकती है। वस्तुत मित्रगण प्रधान मन्त्रीको एक सयुक्त पत्र लिखनेका विचार कर रहे है, जिसमे मुझे शामिल नही किया जायेगा। प्रधान मन्त्रीकी मध्यस्थताके लिए मेरी सहमति, वस्तुत बिलकुल अनावश्यक है, क्योकि मै किसी समुदायका नही, कांग्रेसका प्रतिनिधित्व करता हूँ, और इसलिए भी कि, कांग्रेस-प्रस्तावकी शर्तोके अनुसार, मै किसी भी ऐसे समझौतेको स्वीकार करनेको बाध्य हूँ जो हिन्दुओ, सिखो और मुसलमानोको मान्य हो। इसलिए यदि प्रधान मन्त्री मैक्डॉनाल्ड मध्यस्थता करते है और सिख, हिन्दू और मुसलमान उसे मान लेते है तो मै भी उसे माननेको बाध्य हूँ। एक और तरीका भी है। सभी पक्ष मध्यस्थताको स्वीकार करनेके एक पत्रपर हस्ताक्षर कर सकते है, जिसमे वे श्री मैक्डॉनाल्डको मध्यस्थके रूपमे मनोनीत कर सकते है, लेकिन मै यह फिर दोहराता हूँ कि इस तरहकी मध्यस्थता हिन्दुओ, सिखो और मुसलमानोके बारेमे ही होनी चाहिए। यदि कोई पच-फैसला अन्य समुदायोके बारेमे होता है तो मै उसके प्रति सहनशीलताका रुख अपना नही

सकता, क्योकि मै भारतकी चीर-फाड करने और राष्ट्रके विधान-मण्डलको साम्प्रदायिक अखाडेमे परिवर्तित करनेके हर प्रयासका विरोध करनेको प्रतिबद्ध हूँ।

प्र० : लेकिन आपने संघीय समितिमें बोलते हुए यह वादा किया था कि छोटे अल्पसंख्यक समुदायोंके प्रतिनिधि यदि खुले दरवाजेसे चुने न जा सकें तो परिपाटी (कनवेंशन) या विनियुक्ति (को-ऑप्शन) द्वारा उन्हे समुचित प्रतिनिधित्व देनेकी व्यवस्था की जायेगी?

उ० : वह प्रस्ताव मैंने वापस नही लिया है। वह अपनी जगह कायम है। छोटे अल्पसख्यक समुदायोकी ओरसे रखी गई इस माँगको मै न्यायोचित मानता हूँ कि यदि वे खुले दरवाजेसे नही चुने जाते है तो वह दोष अवश्य दूर किया जाना चाहिए। मै परिपाटी या विनियुक्ति द्वारा उसकी व्यवस्था करनेको तैयार हूँ, परन्तु मै पथक् निर्वाचक-मडलो या विशेष आरक्षणके लिए सहमत नही हूँगा।

प्र० : क्या ऐसी सम्भावना है कि अन्य प्रतिनिधि प्रधान मन्त्रीसे प्रस्ताव करें?

उ० मुझे मालूम नही। प्रतिनिधियोने इस प्रश्नपर विचार किया था, पर वे किसी निर्णयपर नही पहुँच सके।

प्र० : अभी या निकट-भविष्यमें क्या साम्प्रदायिक समझौतेकी कोई सम्भावना है?

उ० . मै यह कह सकता हूँ कि उसके लिए कोई भी कोशिश उठा नही रखी जायेगी। पर मुझे कोई सम्भावना दिखाई नही देती।

प्र० : क्या आप भारत लौटकर भी साम्प्रदायिक गतिरोधको दूर करनेकी अपनी कोशिशें जारी रखेंगे?

उ० . अवश्य। मुझे विश्वास है कि भारतमे हम किसी समझौतेपर पहुँच जायेंगे, यद्यपि, अभी मेरे पास कोई ठोस योजना नही है।

प्र० : प्रान्तीय स्वायत्त शासन दाखिल करने और प्रान्तीय विधानमण्डलों द्वारा संविधान-सभाके सदस्योंके चुनावकी व्यवस्था करानेकी यह योजना किसकी है?

उ० यह कहना सही है कि सरकारी क्षेत्रोमे मेरे साथ और अन्य प्रतिनिधियोके साथ भी इस योजनापर विचार-विमर्श हुआ था। यह योजना सरकारी है या नही, मै कह नही सकता। पर यह किसी प्रतिनिधिकी ओरसे नही रखी गई है।

प्र० : क्या यह सच है कि आप इस योजनाको थोड़े परिवर्तनोंके साथ स्वीकार कर सकते है?

उ० . नही, मै पहली किस्तके रूपमे प्रान्तीय स्वशासनकी इस योजनाके बिलकुल विरुद्ध हूँ। औरोमे और मुझमे फर्क सिर्फ यह है कि उन्होने इस योजनापर विचार-विमर्श करनेसे इनकार कर दिया, जबकि मैंने इस योजनापर विचार-विमर्श करनेकी हिम्मत की।

प्र० : आपकी योजनाकी क्या शर्तें है?

उ० पहली यह कि प्रान्तीय स्वशासनको मूर्त रूप देनेवाला अधिनियम ही केन्द्रमे दायित्वकी बातको भी मूर्त रूप दे। दूसरी, उसे एक अवधि भी निश्चित

कर देनी चाहिए जिसके अन्दर संघीय संविधान, केन्द्रके दायित्व-सहित, अमलमें आ जाये। मैंने छ. मासका सुझाव दिया था। तीसरी, प्रान्तोंको लगभग प्रभुसत्ता प्राप्त होनी चाहिए।

प्र० : संविधान-सभाके पास फिर निर्णयके लिए क्या बचता है?

उ० : संविधान-सभामें विचारके लिए यह विषय रखा जा सकता है कि विधानमण्डल एक सदनवाला हो या दो सदनवाला और संघीय विधानमण्डलकी सदस्य-संख्या कितनी होनी चाहिए। परन्तु मैंने इस विषयमें किसीके भी मनमें कोई सन्देह नहीं रहने दिया था कि केन्द्रके दायित्वके सम्बन्धमें, विशेषकर वित्त, सेना और विदेशी मामलोंके सम्बन्धमें यहाँ और अभी फैसला हो जाना चाहिए।

प्र० : क्या आपने समझौतेकी सभी आशाएँ छोड़ दी हैं?

उ० नहीं, समझौतेके सभी रास्ते खोजनेमें मैं कोई कोशिश उठा नहीं रख रहा हूँ। बिलकुल आखिरमें ही यदि कोई समझौता हो जाये तो मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं होगा।

महात्मा गांधीसे यह पूछा गया कि यदि परिषद् किसी समझौतेपर नहीं पहुँची तो भारतपर उसका क्या असर पड़ेगा।

महात्माजी ने जवाब दिया कि यदि परिषद् यहाँ और अभी किसी समझौतेपर नहीं पहुँची तो उसका अनिवार्य परिणाम सविनय अवज्ञाका, उसके सभी परिणामों-सहित, तुरन्त फिर शुरू हो जाना होगा। क्योंकि, परिषद्की असफलताका अर्थ यह है कि जो भारतीय सुधारक केन्द्रके दायित्वसे प्रतिबद्ध हैं उन्हें अनिश्चित कालतक सरकारसे अपनी माँगोंकी पूर्तिकी आशा नहीं करनी चाहिए। परिषद् असफल रही, यह बात एक बार साफ होते ही सविनय अवज्ञा तुरन्त शुरू हो जानी है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १६-११-१९३१ और १८-११-१९३१

२०७. पत्र : प्रधान मन्त्रीको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, डब्ल्यू०
१४ नवम्बर, १९३१

प्रिय प्रधान मन्त्रीजी,

मुझे मालूम है कि प्रतिनिधियोंके हस्ताक्षरोंसे आपको ऐसे पत्र भेजे जा रहे हैं जिनमें आपसे हिन्दू-मुस्लिम-सिख प्रश्नको सुलझानेके लिए कहा गया है। आप देखेंगे कि इनमें से किसी भी पत्रपर मेरे हस्ताक्षर नहीं हैं। गोलमेज परिषद्की सफल परिणतिके इच्छुक कुछ ऐसे लोगोंने, जो हम दोनोंके मित्र हैं, मुझे सुझाव दिया है कि यदि मैं आपको एक पत्र लिखकर यह स्पष्ट कर दूँ कि इन पत्रोंपर मैंने हस्ताक्षर क्यों नहीं किये, तो इससे आपको सहायता मिलेगी।

किसी ऐसे पत्रपर जिसमे हिन्दुओ, मुसलमानो और सिखोसे सम्बन्वित साम्प्रदायिक प्रश्नको सुलझानेके लिए आपको, व्यक्तिगत रूपसे, एकमात्र पच नियुक्त किया गया हो, हस्ताक्षर करनेमे मुझे कोई झिझक नही होनी चाहिए। परन्तु प्रधान मन्त्रीकी हैसियतसे पचके रूपमे आपकी नियुक्तिसे सहमत होनेमे मुझे जो झिझक है, उसे आप अच्छी तरह समझ सकते है। उसका सीधा-सादा कारण यह है कि यदि मैंने ऐसा किया तो सवैधानिक समस्याके सम्बन्धमे काग्रेसके दावेको पेश करते हुए मुझे उलझन महसूस होगी। परन्तु मेरी अनिच्छाका अर्थ यह नही है कि काग्रेस आपके पच-फैसलेका किसी भी तरह प्रतिरोध करेगी। वस्तुत काग्रेस ऐसा नही कर सकती, क्योकि वह एक प्रस्ताव द्वारा किसी भी ऐसे समाधानको, जो तीनो सम्बन्धित पक्षोको मान्य हो, स्वीकार करनेके लिए वचनबद्ध है, और यदि इन तीन समुदायोके प्रतिनिधित्वका दावा करनेवाले लोग इस मामलेको आपके पास निर्णयके लिए भेजते है तो काग्रेस आपके पच-फैसलेपर आपत्ति नही कर सकती।

अन्य अल्पसख्यकोके विषयमे स्थिति इससे भिन्न है। काग्रेस द्वारा जो रुख अपनाया गया है वह आपको मालूम है। जैसा कि मैंने अल्पसख्यक-समस्या समितिकी पिछली बैठकमे दोहराया था, मेरी रायमे उन्हे इससे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए कि उनके नागरिक और धार्मिक अधिकारो और सभी न्यायोचित हितोकी पूर्ण रक्षा की जायेगी। कानूनके बाहर बहुत-से ऐसे तरीके सुझाये जा सकते है जिनसे समान निर्वाचक-मण्डलके जरिये सभी अन्य अल्पसख्यकोके योग्य उम्मीदवारोको निश्चित रूपसे चुना जा सकता है। मै ऐसा महसूस करता हूँ कि केवल यही सही और न्यायोचित मार्ग है।

किसी भी हालतमे, काग्रेस पृथक् निर्वाचक-मण्डल या विशेष वैधानिक आरक्षणके सिद्धान्तके किसी भी और विस्तारको कदापि स्वीकार नही करेगी।

आपका,
मो० क० गाधी

परम माननीय प्रधान मन्त्री
१० डाउनिंग स्ट्रीट
एस० डब्ल्यू० १

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८२)से, सौजन्य. इडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२०८. पत्र : मेरी ऑस्बर्नको

१६ नवम्बर, १९३१

प्रिय बहन,

आपका पत्र मैंने अभी-अभी ध्यानसे पढा और जो-कुछ आप कहती है मै उस सबका हृदयसे समर्थन करता हूँ। आपने यह ठीक ही कहा है कि विश्व-आत्मासे हम भिन्न नही हैं। मैंने देखा है कि उस स्थितिको प्राप्त करनेके लिए हमे भूत-मात्रकी सेवा करनी चाहिए। यह सेवा केवल तभी सम्भव है जब हम अपने-आपको शून्य कर दे। अहम्‌को मिटाना, अर्थात्, आत्म-बलिदान जीवनका नियम है। हम कहीं यह न समझने लगे कि अमुक परिणाम पैदा करनेवाला मै हूँ — इसलिए हमे यह जान लेना चाहिए कि कोई भी मनुष्य अकेला कोई परिणाम पैदा नही कर सकता। इसलिए हमे परिणामोसे अनासक्त होकर काम करना चाहिए। हमारा काम कर्म करना है, फल ईश्वरके हाथमे है। आप मुझे सही मार्गपर लगती है।

आपका,

मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२९५)से।

२०९. सन्देश : एफ० बी० फिशरको[1]

लन्दन

१७ नवम्बर, १९३१

भारतके मेरे मित्रोने, काग्रेस कार्यकारिणीके सदस्योने, मुझे तार भेजा है कि परिषद्‌के समाप्त होते ही मै भारत वापस आ जाऊँ। इसलिए मैं अमेरिका नही आ सकता। ऐसा लगता है कि अभी दीर्घकाल तक मैं अमेरिकाको कोई सन्देश नही दे सकूँगा। शायद ईश्वर यही चाहता है। यद्यपि मित्रोसे मिलनेकी मेरी बडी इच्छा है, पर अमेरिका आनेका अभी कोई निमित्त नही है।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-११-१९३१

१. यह सन्देश बिशप फिशरको, टेलीफोनपर भेजा गया था, जो उस समय शिकागोमें थे।

२१०. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
१७ नवम्बर, १९३१

गाधीजी लॉर्ड चासलर और प्रतिनिधि बन्धुओ, मै जानता हूँ कि इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर काग्रेसका दृष्टिकोण रखनेकी मुझपर जबरदस्त जिम्मेदारी है। मुझे यहाँ इस सुविचारित उद्देश्यसे भेजा गया है कि मै हर सम्भव उपाय द्वारा एक सम्मानजनक समझौतेकी कोशिश करूँ — वह उपाय चाहे इस मेजपर खुला विचार-विमर्श हो या मन्त्रियो और यहाँके जनमतको प्रभावित करनेवाले सामाजिक व्यक्तियोके साथ और उन सब लोगोके साथ, जो भारतपर गहरा असर डालनेवाले प्रश्नोमे दिलचस्पी रखते है, गैरसरकारी सलाह-मशविरे हो। अत किसी समझौतेपर पहुँचनेके लिए कोई भी कोशिश उठा न रखनेको मै बाध्य हूँ, यदि और किसी कारण नही तो केवल इसी कारण कि काग्रेस ऐसी नीतिसे बँधी है जो आप सबको मालूम है। काग्रेस यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र अपने लक्ष्यपर पहुँचनेको कृतसकल्प है, और इन सब विषयोपर बहुत ही सुनिश्चित विचार भी रखती है। इससे भी अधिक सगत बात यह है कि उत्तरदायी स्वशासनसे जितने भी दायित्व सिरपर आते है, आज वह उन सबको वहन करनेके योग्य है, या अपनेको योग्य समझती है।

स्थिति क्योकि यह है, इसलिए मैने सोचा कि इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषयपर विचार-विमर्श समाप्त होनेसे पहले इस प्रश्नपर काग्रेसके दृष्टिकोणको यथासम्भव अधिकसे-अधिक विनम्रताके साथ और सक्षेपमे रखना मेरे लिए अनिवार्य है।

जैसा कि आप सबको विदित है, काग्रेसकी माँग यह है कि भारतको पूर्ण उत्तर-दायित्व सौप दिया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है, और उसमे यह कहा भी गया है, कि प्रतिरक्षा और विदेशी मामलोपर पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिए। पर उसमे यह गुजाइश रखी गई है कि इस सम्बन्धमे थोडा-बहुत हेरफेर भी किया जा सकता है। मेरा खयाल है कि हमे यह सोचकर कि इस महत्त्वपूर्ण विषयमे उत्तरदायित्वकी माँग किये बिना भी हमे उत्तरदायी शासन प्राप्त हो जायेगा, अपने-आपको और ससारको धोखा नही देना चाहिए। मेरे विचारमे जिस राष्ट्रका अपनी खुदकी प्रतिरक्षा सेनापर और अपनी विदेशी नीतिपर नियन्त्रण न हो, उसे स्वशासित राष्ट्र कहना मुश्किल है। राष्ट्रकी प्रतिरक्षा, उसकी सेना, किसी भी राष्ट्रके लिए उसके अस्तित्वका सार होती है और यदि किसी राष्ट्रकी प्रतिरक्षापर किसी बाहरी अभि-करणका, चाहे वह कितना ही मैत्रीपूर्ण क्यो न हो, नियन्त्रण है तो उस राष्ट्रमें निश्चय ही उत्तरदायी शासन नही है। हमारे अग्रेज शिक्षकोने हमें बार-बार यही

१. समितिमें प्रतिरक्षापर विचार-विमर्श चल रहा था।

सिखाया है। इसीलिए कुछ अग्रेजोने भी जब यह बात सुनी कि हमे उत्तरदायी शासन तो मिलेगा पर अपनी खुदकी प्रतिरक्षा सेनापर हमारा नियन्त्रण नही होगा या हम नियन्त्रणका दावा नही करेगे तो उन्होने मुझे ताना मारा।

इसलिए मै यहाँ बहुत ही सम्मानके साथ काग्रेसकी ओरसे सेना, प्रतिरक्षा-सेना और विदेशी मामलोपर पूर्ण नियन्त्रणका दावा करता हूँ। मैने यह बात इसलिए भी रखी है कि जब सर तेजबहादुर सप्रू इस विषयपर बोले तो मुझे इसपर न बोलना पडे।

बहुत ही सोच-विचारके बाद हम इस निष्कर्षपर पहुँचे है। यदि उत्तरदायित्व ग्रहण करते समय ही यह नियन्त्रण हमे प्राप्त नही होता तो मै किसी ऐसे समयकी कल्पना नही कर सकता जब हमे, अन्य विषयोमे उत्तरदायित्व प्राप्त होनेके कारण ही, अचानक अपनी प्रतिरक्षा सेनापर नियन्त्रण रखनेके योग्य समझ लिया जायेगा।

मै चाहूँगा कि यह समिति कुछ क्षणोके लिए यह समझनेकी कोशिश करे कि आज इस सेनाका अर्थ क्या है। मेरी रायमे यह सेना, चाहे यह भारतीय हो या ब्रिटिश, आधिपत्य-सेना है। हमारे लिए, कमसे-कम मेरे लिए, यह चीज जरा भी महत्त्व नही रखती — मै यह बात अनुभवसे कह रहा हूँ — कि वे सिख है या गुरखा, पठान है या मद्रासी या राजपूत। वे चाहे कोई भी हो, जबतक वे एक विदेशी सरकार द्वारा नियन्त्रित सेनामे है, मेरे लिए वे विदेशी है। सैनिक लोग जब भी मुझसे मिलने आये, चोरी-छिपे आये है। मुझसे बात करते भी वे डरते थे, क्योकि वे सोचते थे कि इसकी शिकायत अधिकारियोसे कर दी जा सकती है। सैनिकोको जहाँ रखा जाता है वहाँ जाना हमारे लिए आम तौरपर सम्भव नही है। उन्हे भी यही सिखाया जाता है कि वे हमे अपने देशवासी न माने। उनके और आम असैनिक आबादीके बीच कतई कोई सम्पर्क नही है। ससारके किसी और देशमें ऐसी स्थिति नही है। इस समितिके आगे अपनी यह गवाही मै एक ऐसे व्यक्तिकी हैसियतसे दे रहा हूँ जिसने भारतीय जीवनके हर अगसे, उन सभी लोगोसे जिनके साथ मै सम्पर्क स्थापित कर सकता था, सम्पर्क स्थापित करनेकी कोशिश की है। और यह मेरा अकेलेका अपना अनुभव नही है, बल्कि लाखो काग्रेसियोका अनुभव है कि उनके और हमारे बीच एक मजबूत दीवार खडी है।

इसलिए मै इस चीजसे पूरी तरह अभिज्ञ हूँ कि उस उत्तरदायित्वको वहन करना और साथ ही ब्रिटिश सैनिकोसे रहित इस सेनापर नियन्त्रण रखना हमारे लिए एक जबरदस्त काम होगा। यह हमारे लिए एक दुर्भाग्यपूर्ण और कष्टकर स्थिति है और मुझे यह कहते दुख होता है कि यह स्थिति हमारे शासको द्वारा पैदा की गई है।

फिर भारतीय सेनाका एक ब्रिटिश भाग है। इस ब्रिटिश सेनाका क्या प्रयोजन है? भारतका बच्चा-बच्चा यह जानता है कि भारतीय सेना-समेत यह ब्रिटिश सेना ब्रिटिश हितोकी रक्षाके लिए है और विदेशी आक्रमणको बचाने या उसका मुकाबला करनेके लिए है। मुझे खेदके साथ ये बाते कहनी पड रही है, पर मैने जो जाना और जैसा मेरा अनुभव रहा वह बिलकुल यही है, और इस सचाईको जिस रूपमे

मैंने यहाँ प्रकट किया है और जिस रूपमे मानता आया हूँ, यदि उस रूपमे प्रकट नही करता तो यह मेरे ब्रिटिश मित्रोतक के साथ अन्याय होगा। तीसरे, यह सेना स्थापित सत्ताके विरुद्ध विद्रोहको कुचलनेके लिए है।

तो इस सेनाके मुख्य कार्य ये है। इसलिए अग्रेज जो दृष्टिकोण अपना रहे है उसपर मुझे कोई आश्चर्य नही है। यदि मै अग्रेज होता और मुझमे दूसरे राष्ट्रपर शासन करनेकी महत्त्वाकाक्षा भी होती तो मै भी विलकुल यही करता। मै भारतीयोको लेकर उन्हे प्रशिक्षण देता और सैनिक वनाता। प्रशिक्षणसे मै उन्हे अपना वफादार वनाता, इतना वफादार बनाता कि वे मेरे हुक्मपर जिस आदमीपर भी मै चाहता उसीपर गोली चला देते। जलियाँवाला बागमे जिन्होने लोगोपर गोलियाँ चलाई वे उनके अपने देशवासी नही तो और कौन थे? इसलिए यह मेरे लिए आश्चर्यकी वात नही है, बल्कि ऐसा तथ्य है जो मेरी आँखोके बिलकुल सामने है।

ब्रिटिश सेनाका अस्तित्व भी वहाँ इसी प्रयोजनके लिए है, वह इन विभिन्न भारतीय सैनिकोके वीच सन्तुलन रखती है। वह निस्सन्देह, जैसा कि उसके लिए आवश्यक है, ब्रिटिश अधिकारियोकी रक्षा करती है, ब्रिटिश लोगोकी रक्षा करती है। फिर, यदि मै इस वातको स्वीकार कर लूँ कि भारतपर कब्जा करना ग्रेट ब्रिटेनके लिए ठीक था, और भारतको आज अपने अधीन रखना और कैसी भी वदली परि-स्थितियोमे बराबर अपने अधीन रखना ग्रेट ब्रिटेनके लिए ठीक है, तो फिर मै कोई शिकायत नही करूँगा।

स्थिति क्योकि यह है, इसलिए जिस सवालका सर तेजबहादुर सप्रू सामना करनेको तैयार नही है और पण्डित मदनमोहन मालवीय भी सामना करनेको तैयार नही है, मेरे लिए उसका जवाब देना कोई कठिन नही है। उन दोनोने कहा है कि विशेषज्ञ न होनेके कारण वे यह नही कह सकते कि यह सेना किस हदतक घटाई जा सकती है या घटाई जानी चाहिए। परन्तु मेरे सामने ऐसी कोई कठिनाई नही है। मेरे सामने यह कहनेमे कि इस सेनाका क्या होना चाहिए, कोई कठिनाई नही है, यानी मै पूरे जोरके साथ यह कहूँगा कि यदि यह सेना मेरे नियन्त्रणमे नही आती है तो इससे पहले कि मै इन जबरदस्त बाधाओके वीच, जो हमे विदेशी शासन-की विरासतके तौरपर भोगनी पड रही है, सरकार चलानेका भार अपने कन्धोपर लूँ, यह पूरी सेना भग कर दी जानी चाहिए।

मेरी मूल स्थिति क्योकि यह है, इसलिए मै कहूँगा कि आप ब्रिटिश मन्त्रिगण और ब्रिटिश लोग यदि सचमुच भारतका भला चाहते है, यदि आप अब हमे सत्ता सौपनेवाले है, तो इसे एक मुख्य शर्त मानिए कि सेना पूर्णतया हमारे नियन्त्रणमे आनी चाहिए। लेकिन यह मै आपको वता चुका हूँ कि इसमे जो खतरा है मै उसे जानता हूँ। वह सेना मेरी कमान नही मानेगी, मै इस चीजको अच्छी तरह जानता हूँ। मै यह जानता हूँ कि ब्रिटिश कमाडर-इन-चीफ मेरी कमान नही मानेंगे, और सिख, गर्वीले राजपूत — उनमे से कोई भी मेरी कमान नही मानेगा। लेकिन मै, फिर भी ब्रिटिश लोगोकी सद्भावनाके साथ, उस कमानको प्रयोगमे लानेकी आशा करता

हूँ। मै आशा करता हूँ कि कमान हस्तान्तरित करते समय वे वहाँ मौजूद होगे और उन्ही सैनिकोको एक नया सबक सिखायेगे और उन्हे बतायेगे कि यदि वे सेवा करते है तो आखिर अपने देशवासियोकी ही करते है। ब्रिटिश सैनिकोको भी यह बताया जा सकता है कि 'अब वह समय है जब आपको यहाँ ब्रिटिश हितो और ब्रिटिश लोगोकी रक्षाके लिए नही रहना है, बल्कि भारतकी विदेशी आक्रमण और भीतरी विप्लवसे रक्षाके लिए ऐसे रहना है, मानो आप अपने खुदके ही देशवासियोकी रक्षा और सेवा कर रहे हो।'

यह मेरा स्वप्न है। मै जानता हूँ कि यह स्वप्न यहाँ पूरा नही होगा। मै यही महसूस कर रहा हूँ। मेरे सामने जो प्रमाण है — इन्द्रियग्राह्य प्रमाण — वे कह रहे है कि यह स्वप्न इस परिषद्की बहसोसे आज और यहाँ पूरा होनेवाला नही है। परन्तु मुझे यह स्वप्न फिर भी सँजोये रखना चाहिए। यह ऐसा स्वप्न है जिसे मै अपने जीवनके अन्ततक सँजोये रखना चाहता हूँ। पर यहाँका वातावरण देखकर मै यह जानता हूँ कि मै ब्रिटिश राजनीतिज्ञो या ब्रिटिश जनसाधारणको इस विचार या आदर्शसे अनुप्राणित नही कर सकता कि यह उनका भी प्रिय ध्येय हो जाना चाहिए। प्रधान मन्त्रीकी घोषणाका मै इसी तरह अर्थ लगाऊँगा, लॉर्ड इर्विनकी कामनाओका मै इसी तरह अर्थ लगाऊँगा। ग्रेट ब्रिटेनका यह गौरवपूर्ण विशेषाधिकार और कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह अब हमे हमारी अपनी प्रतिरक्षाके सचालनके रहस्योमे दीक्षित करे। हमारे पख कतर डालनेके बाद यह उसका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह हमे पख दे, जिससे कि हम उड सके, जैसे कि ब्रिटेनवाले उडते है। वस्तुतः यह मेरी महत्त्वाकाक्षा है, और इसीलिए मै कहता हूँ कि यदि मै प्रतिरक्षापर नियन्त्रण प्राप्त नही कर सका तो मै अनन्त कालतक प्रतीक्षा करूँगा। मै यह मानकर कि यद्यपि मैं अपने देशकी प्रतिरक्षा-व्यवस्थापर नियन्त्रण नही रख सकता पर उत्तरदायी शासन आरम्भ करने जा रहा हूँ, अपने-आपको धोखा नही दे सकता।

आखिर भारत ऐसा राष्ट्र तो नही है जिसे अपनी रक्षा करनेका ढग कभी ज्ञात न रहा हो। वहाँ सारी सामग्री है। वहाँ मुसलमान है, जिन्हे विदेशी हमलेका कोई भय नही है; सिख है, जो कभी यह सोच भी नही सकते कि कोई उनपर विजय प्राप्त कर सकता है, गुरखे है, जो राष्ट्रीय भावना विकसित होते ही कहेगे : 'मै अकेला भारतकी रक्षा कर सकता हूँ।' फिर वहाँ राजपूत है, जिनके बारेमे यह माना जाता है कि उन्होने ग्रीसकी एक छोटी थर्मोपली नही, बल्कि थर्मोपली-जैसी हजार लडाइयाँ लडी है। अग्रेज कर्नल टॉडने हमे यही बताया है। कर्नल टॉडने हमे विश्वास दिलाया है कि राजपूतानेमे हर दर्रा थर्मोपली रहा है। क्या इन लोगोको प्रतिरक्षाकी कला सीखनेकी जरूरत है?

मै यह मानकर चलता हूँ कि यदि मै उत्तरदायित्वका बोझ अपने कन्धोपर लूँ तो ये सब लोग मेरा हाथ बँटायेंगे। मुझे यहाँ यह देखकर बडा सन्ताप होता है कि हम अभीतक साम्प्रदायिक प्रश्नपर किसी समझौतेपर नही पहुँचे है। लेकिन साम्प्रदायिक समझौता जब भी होगा, हमे उससे पहले एक-दूसरेपर विश्वास करना

होगा। शासनमे चाहे मुसलमानोका प्राधान्य हो या सिखोका या हिन्दुओका, वे मुसलमान, सिख या हिन्दूकी हैसियतसे नही, बल्कि भारतीयकी हैसियतसे शासन करेगे। यदि हममें एक-दूसरेके प्रति अविश्वास है, तो एक-दूसरेके हाथो मरनेसे वचनेके लिए हम ब्रिटिश लोगोको रखना चाहेगे। लेकिन तब हमे उत्तरदायी शासनकी बात नही करनी चाहिए।

कमसे-कम मै इस बातकी कल्पना नही कर सकता कि सेनापर नियन्त्रणके विना भी हमें उत्तरदायी शासन प्राप्त हो सकता है। इसलिए अपने हृदयमे खूब गहरे, मैं यह महसूस करता हूँ कि यदि हमे उत्तरदायी शासन प्राप्त करना है — और काग्रेस उत्तरदायी शासन चाहती है, काग्रेसको अपने-आपमे विश्वास है, जनतामें विश्वास है, उन सब बहादुर सैनिक जातियोमे विश्वास है, और इससे भी बडी बात यह है कि काग्रेसको अग्रेजोमे भी विश्वास है कि किसी दिन वे अपना कर्त्तव्य पूरा करेगे और सम्पूर्ण नियन्त्रण हमे सौप देगे — तो हमे ब्रिटिश लोगोंको अपने भारत-प्रेमसे प्रभावित करना होगा, क्योकि यह प्रेम ही तो भारतको अपने पैरोपर खडे होनेके योग्य बनायेगा। यदि ब्रिटिश लोग यह सोचते है कि ऐसा कर सकनेके लिए हमे एक शताब्दी चाहिए तो काग्रेस एक शताब्दीतक जगलमें भटकेगी और काग्रेसको भीषण अग्नि-परीक्षामेंसे गुजरना होगा, विपत्ति और गलतबयानीके तूफानमे से गुजरना होगा, और यदि आवश्यक हुआ और ईश्वरकी ऐसी ही इच्छा हुई तो गोलियोकी बौछारमे से गुजरना होगा। यदि ऐसा होता है, तो उसका कारण यह होगा कि हम एक-दूसरेपर विश्वास नही कर पाते है, कि अग्रेज और भारतीय विभिन्न दृष्टिकोण रखते है।

यह मेरी मूल स्थिति है। विस्तारमे मै जाना नही चाहता। मैने यह मामला जितने सशक्त ढगसे मै रख सकता था रख दिया है। लेकिन यदि यह एक चीज स्वीकार कर ली जाती है, तो मुझमे इतनी सूझबूझ है कि एकके-बाद-एक ऐसे सरक्षण रख सकूँ और गढ सकूँ जो किसी भी निष्पक्ष व्यक्तिको ठीक लगेगे, पर शर्त यही है कि हमारा समान ध्येय यही होना चाहिए कि वे सरक्षण भारतके हितमे हो। लेकिन मै इससे भी आगे जाना चाहता हूँ और लॉर्ड इर्विनकी इस बातका समर्थन करता हूँ कि यद्यपि करारके सरक्षणोके बारेमे यह कहा गया है कि वे भारतके हितमें है, पर वस्तुत. वे भारत और इग्लैड दोनोके हितमें माने जाने चाहिए। मेरा यह खयाल है कि लॉर्ड इर्विनने अपना यह मत व्यक्त करते हुए मेरा नाम लिया था और कहा था कि गाधीकी भी यही राय है। उन्होने ठीक ही कहा था। मैं किसी भी ऐसे सरक्षणकी वात नही सोचता हूँ जो केवल भारतके हितमें होगा, और जो साथ ही ग्रेट ब्रिटेनके भी हितमे नही होगा, पर शर्त यही है कि हम जिस व्यवस्थाके वारेमे सोच रहे है वह साझेदारीकी ही व्यवस्था हो, ऐसी साझेदारीकी जो किसी भी साझेदारकी इच्छासे किसी भी समय समाप्त की जा सकती हो और पूर्ण समानताकी शर्तोपर हो। जो कारण मैंने आज सेनापर पूर्ण नियन्त्रणकी माँगके लिए दिये है, वही कारण विदेशी मामलोपर हमारे नियन्त्रणके पक्षमे और उसकी माँगके लिए भी है। विदेशी मामलोका वस्तुत. क्या अर्थ है, इससे मैं अच्छी तरह

अभिज्ञ नही हूँ और गोलमेज परिपद्की इन रिपोर्टोमें इस विषयपर जो-कुछ कहा गया है उसपर मुझे अपना अज्ञान जाहिर करना पड रहा है, इसलिए मैंने अपने मित्रो श्री अय्यगार और सर तेजबहादुर सप्रूसे कहा कि वे मुझे विदेशी मामलो और वैदेशिक सम्बन्धोके अर्थके बारेमें पहला पाठ दे। उनका उत्तर मेरे सामने है। वे कहते हैं कि इन शब्दोका अर्थ है, अन्तर्राष्ट्रीय मामलोमें पडोसी देशोंके साथ सम्बन्ध, भारतीय रियासतोके साथ सम्बन्ध, अन्य देशोके साथ सम्बन्ध, डोमिनियनोंके साथ सम्बन्ध। यदि विदेशी मामले यही हैं, तो मेरा खयाल है कि हम विदेशी मामलोके सम्बन्धमे अपने दायित्वोको उठाने और पूरा करनेकी पूरी क्षमता रखते हैं। निस्सन्देह, हम अपने बन्धु-बान्धवोके साथ, अपने पडोसियोंके साथ, अपने देशवासी भारतीय नरेशोके साथ सुलह-शान्तिकी शर्तोंके बारेमें वार्त्ता कर सकते हैं। हम अपने पडोसी अफगान लोगोके साथ और समुद्र-पारके जापानियोके साथ अत्यन्त मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध विकसित कर सकते हैं, और निश्चय ही हम डोमिनियनोके साथ भी वार्त्ता कर सकते हैं। यदि डोमिनियन हमारे देशवासियोको वहाँ पूर्ण आत्मसम्मानके साथ रहने नही देते हैं, तो हम उनसे निवट सकते हैं।

हो सकता है, मैं मूर्खतावश वैसी बाते कर रहा हूँ, पर आपको यह समझ लेना चाहिए कि कांग्रेसमें मेरे-जैसे हजारो और लाखो मूर्ख नर-नारी हैं, और उनकी ओरसे मैं सादर यह दावा करता हूँ और इस बातको फिर कहता हूँ कि हमने जो सरक्षण सोचे हैं उनके साथ हम अपने दायित्वोको अक्षरश. पूरा करेंगे। पण्डित मदनमोहन मालवीयने सरक्षणोका एक खाका रखा है। जो-कुछ उन्होंने कहा है उसके अधिकाशमे मैं पूर्णतया सहमत हूँ। पर केवल वही एक संरक्षण नहीं है। यदि अंग्रेज और भारतीय मिल-बैठकर सोचे, बिना किसी मानसिक संकोचके एक दिशामे बढें, तो मैं पूर्ण विश्वासके साथ कहता हूँ कि हम ऐसे सरक्षण पैदा कर सकेगे जो भारत और इग्लैंडके लिए एक-जैसे सम्मानजनक होंगे, और जो प्रत्येक ब्रिटिश व्यक्ति और प्रत्येक ब्रिटिश हितकी सुरक्षाकी गारन्टी करेंगे, जिसके लिए भारत नैतिक रूपसे वचन-बद्ध है।

लॉर्ड चासलर, मैं इससे आगे नही जा सकता। इस बैठकका मैंने जो इतना समय लिया उसके लिए मैं बार-बार क्षमा माँगता हूँ। परन्तु आप यह समझ जायेंगे कि यहाँ रोज बैठकर और दिन-रात इसी बारेमें सोचते हुए मुझमें यही भावना उमडती रही है कि यह विचार-विमर्श सफल परिणामपर कैसे पहुँच सकता है। जो भावना मुझे चालित कर रही है उसे आप समझ जायेंगे। वह अंग्रेजोंके प्रति सद्-भावकी भावना है और अपने देशवासियोंके प्रति पूर्ण सेवाकी भावना है।

अध्यक्ष : श्री गांधी, मैंने आपकी अपील बहुत ही दिलचस्पीसे सुनी है और मैं चाहता हूँ कि आप मेरी व्यक्तिगत रूपसे सहायता करनेकी कृपा करें। सबसे पहले, आप जिसे अपना स्वप्न कहते हैं, मैं उससे बहुत प्रभावित हुआ हूँ — बेशक मैं आपके स्वप्नमें भागीदार नहीं बन सकता — और उसके बाद मैं आपके आदर्शोंसे बहुत प्रभावित हुआ हूँ। उनमें मैं — शायद उस ऊँचाईतक तो नहीं जिसपर आपने उन्हें

रखा है, पर —— बहुत हदतक भागीदार वन सकता हूँ। भारतमें शान्ति और सुखका राज्य हो, इसके लिए मै उतना ही उत्सुक हूँ जितने कि आप है। और इस सालके शुरूमें लॉर्ड इर्विन और आप जिन शर्तोंपर पहुँचे थे उन्हे अमलमें लानेके लिए मै उतना ही उत्सुक हूँ जितने कि आप और लॉर्ड इर्विन है। उन शर्तोंके दूसरे अनुच्छेदमें कहा गया है:

"जिस योजनाकी रूप-रेखा यहाँ प्रस्तुत है संघ उसका आवश्यक अंग है; उसी तरह प्रतिरक्षा, विदेशी मामलो, अल्पसंख्यकोंकी स्थिति, भारतका वित्तीय ऋण और दायित्वोंका पालन-जैसे विषयोंके लिए, भारतके हितमें, भारतीय उत्तरदायित्व और आरक्षण या संरक्षण भी उसका अंग है।"

मै चाहूँगा कि आप यह विश्वास करे कि उस कार्यक्रमको प्रयोगमें लानेके लिए मै आप-जितना ही उत्सुक हूँ। आपकी सद्भावनापर मुझे सन्देह नहीं है। मै चाहता हूँ आप भी मेरी सद्भावनापर सन्देह न करे।

अपने विचार प्रकट करते हुए आपने कहा है कि आप आशा करते है कि हम आपको आत्म-रक्षाका सबक सिखा सकते है। (आपने जिन विषयोंकी चर्चा की है, मै उनमें से कुछका केवल सामान्य सार रख रहा हूँ।) आपके देशवासियोंकी वीरता में किसीको भी सन्देह नहीं है। पिछली शताब्दियोमें वह बहुत-से युद्ध-क्षेत्रोमें उजागर हो चुकी है। परन्तु मान लीजिए कि यह ठीक है, जैसा कि मै सोचता हूँ, मान लीजिए आपका यह कहना सही है कि फिलहाल भारतीयोंको आत्म-रक्षाका सबक सीखना है। मै आपसे सहमत हूँ। मै सोचता हूँ यह ठीक है। अब मेरे साथ जो मुसीबत है वह मै आपको बताता हूँ।

यदि यह ठीक है कि फिलहाल भारतीय सेना उसके लिए तैयार नहीं है, तो आप जब हमसे सेनाको हटाने या इतना घटानेको कहते है कि वह सुरक्षाके लिए उपयुक्त न रहे, तो मुझसे और हमसे एक भीषण उत्तरदायित्व लेनेको कहते है।

जो-कुछ आपने कहा उसके बहुत-से भागसे मुझे अत्यधिक सहानुभूति है। लेकिन श्री गांधी, आप मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करें कि मै जो कठिनाई महसूस कर रहा हूँ, वह उस उत्तरदायित्वकी है, जो मुझे तब वहन करना होगा, यदि मै एक डिक्टेटर बन जाऊँ और यह कह दूँ कि 'कल मै प्रत्येक अंग्रेज सैनिकको हटा लूँगा' वह एक भयानक जोखिम होगी, और यदि भारतकी शान्ति और समृद्धिको कुछ हो गया तो मै अपने-आपको वैसा करनेका निर्णय लेनेके लिए कभी क्षमा नहीं कर सकूँगा, क्योंकि मै यह मानता हूँ कि पहले यह जानना होगा कि भारतीय अपनी प्रतिरक्षाका संचालन किस तरह करते है।

मै आपके आदर्शोंमें भागीदार होननेकी इच्छा रखता हूँ, किन्तु चूँकि मै उक्त उत्तरदायित्वको महसूस करता हूँ इसलिए मुझे लगता है कि आप आप मुझसे, जहाँतक वस्तुतः मझे सहमत होना चाहिए, उससे आगे जानेके लिए कह रहे है। श्री

गांधी, मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि हमें यहाँ जिसपर विचार करना है, वे भारतके हित हैं। परन्तु जब मैं आपसे यह कहता हूँ कि मैं ईमानदारीके साथ यह सोचता हूँ कि सेनाको तुरन्त हटा लेनेकी प्रार्थनाको स्वीकार करना भारतके हितमें नहीं होगा, तो आपको मुझपर कमसे-कम उतना विश्वास तो करना ही चाहिए जितना कि मैं आपपर करता हूँ। यह ऐसा उत्तरदायित्व है जिसे, मेरे खयालमें, भारतके हितोंका सचमुच खयाल रखनेवाला — मुझे इस बातको इस तरह रखनेके लिए आप क्षमा करें — कोई भी राजनीतिज्ञ वहन करना उचित नहीं समझ सकता। ऐसा समय आ सकता है और मुझे आशा है, आयेगा। . . .

गांधीजी : क्या मैं आपकी मात्र-एक भूल सुधार सकता हूँ? मैंने ब्रिटिश सेनाको हटा लेनेके लिए नही कहा है। मेरे खयालसे मेरी बातोंमें इस आशयका कोई वाक्य नही था, और यदि मैंने इस तरहका कोई वाक्य कहा है तो मैं उसे वापस ले लेना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऍंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ३८७-८९

२११. भाषण : वीमेन्स इंडियन कौंसिलकी बैठकमें[1]

लन्दन
[१८ नवम्बर, १९३१][2]

गांधीजी ने इस अवसरपर भारतकी महिलाओंके बारेमें प्रचलित विभिन्न ऊट-पटांग धारणाओंको दूर किया और पिछले संघर्षमें उन्होंने जो साहसिक भूमिका अदा की थी उसका स्पष्ट चित्र रखा। उन्होंने कहा:

वे शायद बहुत बातोंमें आपसे श्रेष्ठ हैं। आपको अपना मताधिकार प्राप्त करनेके लिए अकथनीय कष्ट भोगने पडे है। भारतमें महिलाओको वह माँगते ही मिल गया। सार्वजनिक जीवनमे उनके प्रवेशके मार्गमें कोई बाधा खडी नही की गई। महिलाएँ काग्रेसकी केवल प्रधान ही नही रही हैं, बल्कि श्रीमती नायडू उसकी सर्वोच्च परिषद्की सदस्य रही हैं। कितने सालोसे, और पिछले संघर्षके दौरान जब हमारे सगठन गैरकानूनी घोषित कर दिये गये और उनके अधिकारी जेलोमें डाल दिये गये, तब महिलाएँ ही अगले मोर्चेपर आईं, उन्होने 'डिक्टेटरो'का स्थान लिया और जेले भर दी। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्होने पुरुषोंके हाथो दु ख नही भोगे हैं। उनके अपने कटु

१. महादेव देसाईके "लंडन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। यह बैठक अगाथा हैरिसन द्वारा आयोजित की गई थी और मॉर्ले कॉलेजमें हुई थी।

२. हिन्दुस्तान टाइम्स, २१-११-१९३१ की एक रिपोर्टके अनुसार बैठक इसी तारीखको हुई थी।

अनुभव रहे है, पर मुझे आपसे यह कहनेमे कोई सकोच नही है कि मिस मेयोकी पुस्तकमे आपने भारतके विषयमे जो पढा है वह ९९ प्रतिशत झूठ है। मैने वह पुस्तक आदिसे अन्ततक पढी है और जब मैंने उसे समाप्त किया तो मेरे मुँहसे निकला था कि यह दरअसल नाली-निरीक्षककी रिपोर्ट[1] है। उनकी कही कुछ बातें सच है, पर उन्होने जो सामान्य सिद्धान्त बनाये है, वे बिलकुल मिथ्या है और पुस्तकके कई कथन उनकी कोरी कपोल-कल्पना है।

फिर उन्होंने बताया कि किस तरह पिछले साल वे बल बाँधकर अपने घरोंसे बाहर निकलीं और उनमें ऐसी जागृति दिखाई दी जो आश्चर्यजनक थी। उन्होंने जुलूसोंमें भाग लिया, कानून तोड़ा, पुलिसके खिलाफ अँगुलीतक उठाये बिना और उसे कोसे बिना लाठियाँ खाईं, और समझाने-बुझानेकी अपनी शक्तिका प्रयोग कर शराबियोंकी शराब छुड़ाई और विदेशी कपड़ेके विक्रेताओं और ग्राहकोंका विदेशी कपड़ा छुड़ाया। जो महिला अडिग खड़ी रहकर अपने सिरपर पुलिसकी लाठियाँ झेलती रही और खूनमें तर-बतर हो गई, अपने साथियोंको जिसने अपनी जगहोंसे न हिलनेका आदेश दिया और बोरसदके छोटे-से कस्बेको जिसने थर्मोपलीमें बदल दिया, वह सरोजिनी नायडूकी तरह पढ़ी-लिखी महिला नहीं, बल्कि एक अशिक्षित नारी थी।[2] पिछले सालकी विजयका श्रेय मुख्यतया इन्हीं महिलाओंको है।

प्रश्नोंके लिए समय नहीं बचा था, फिर भी जो एक-दो प्रश्न पूछे गये वे इस बातके द्योतक थे कि गोलमेज परिषद्की कार्रवाईको महिलाएँ कितने चिन्तातुर भावसे देख रही थीं। गांधीजीने कहा :

इन दोनो देशोके आगे ससारकी भलाईके लिए समानताकी शर्तोपर एकतासे रहनेका अभी भी अवसर है। ससारकी शान्तिमे सहायक हुए बिना, भारतकी स्वतन्त्रता प्राप्त करके भी मेरी आत्माको सन्तोष नही मिलेगा। मै अपने मनमे यह विश्वास रखता हूँ कि इग्लैड जब भारतको अपना शिकार बनाना बन्द कर देगा, तो वह अन्य राष्ट्रोको भी अपना शिकार बनाना बन्द कर देगा। कमसे-कम भारतका उस खूनी अपराधमे कोई भाग नही होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-१२-१९३१

१. देखिए खण्ड ३४, पृष्ठ ५८४-९४।

२. गंगाबहन वैद्य; देखिए खण्ड ४५, पृष्ठ १३८।

२१२. पत्र : सर सैम्युअल होरको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू०-१
१९ नवम्बर, १९३१

प्रिय सर सैम्युअल,

भारतमे जो परिस्थिति विकसित हो रही है उसके बारेमे आपको एक समुद्री तारकी प्रति भेजनेके सिवा मैंने अभी तक आपको कोई कष्ट नही दिया है।

अभी भी मेरा इरादा वहाँकी परिस्थितिकी समीक्षासे आपको परेशान करनेका नही है। लेकिन हमारे आसपासके लोगोमे इस आशयकी बडी ही गर्म अफवाहे है कि बगालमे मार्शल लॉ लगनेवाला है, वहाँ दमन व्यापक स्तरपर शुरू हो गया है, और अधिकारी बगालकी स्थिति-सम्बन्धी सारी सूचनाओको दबा रहे है।

क्या आप मुझे यह बतानेकी कृपा करेंगे कि इन अफवाहोमे थोडी-बहुत भी सचाई है या नही, और यह भी कि बगालमे अधिकारी वस्तुत. क्या कर रहे है? और क्या मै काग्रेसके अध्यक्षको बगालके बारेमे सूचना देनेका तार इस निश्चित आशाके साथ भेज सकता हूँ कि जो जवाब वे भेजेंगे, वह यदि सेसरके नियमोको और तरहसे पूरा करता हो तो, सेसर नही होगा?

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

परम माननीय सर सैम्युअल होर
भारत-मन्त्री,
इडिया आफिस, एस० डब्ल्यू०-१

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८३) से, सौजन्य इडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२१३. पत्र : सर फिलिप हार्टोगको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू०-१
१९ नवम्बर, १९३१

प्रिय सर फिलिप,

आपके इसी १७ तारीखके पत्रके लिए मैं आपका बहुत ही आभारी हूँ।

चैथम हाउसकी सभामें मैंने जो बयान दिया था[1] उसे वापस लेनेका मेरा अभी इरादा नहीं है। आपने जिस रिकॉर्डका उल्लेख किया है उसे खोजनेका फिलहाल तो मेरे पास समय है नहीं। परन्तु मैं यह वादा करता हूँ कि मैं इस बातको भूलूँगा नहीं, और यदि मुझे ऐसा लगा कि चैथम हाउसके अपने बयानकी पुष्टि मैं नहीं कर सकता तो उसे वापस ले लेनेका मैं चैथम हाउसके भाषणसे भी कहीं अधिक प्रचार करूँगा।

इस बीच मैं उन सन्दर्भोंको, जो आपको चाहिए, ढूँढनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर फिलिप हार्टोग, के० बी० ई०
५, इन्वर्नेस गार्डन्स, डब्ल्यू० ८

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९०४३-ए०)से, सौजन्य . इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

१. अर्थात्, भारतमें साक्षरताका अनुपात ब्रिटिश शासनमें गिर गया है। सर फिलिप हार्टोगने इस बयानकी सचाईपर सन्देह प्रकट किया था। १७ नवम्बरके अपने पत्रमें उन्होंने कहा था कि उन्होंने यंग इंडियाके लेखों और पंजाब प्रशासनकी रिपोर्टकी जाँच की है और गांधीजी के तर्कके समर्थनमें उन्हें वहाँ कुछ नहीं मिला। अन्तमें उन्होंने कहा था : "...क्या मैं यह सुझाव रख सकता हूँ कि आपको अपना बयान अब वापस ले लेना चाहिए. . .?" देखिए "पत्र : सर फिलिप हार्टोगको" २३-१०-१९३१।

२१४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

लन्दन
१९ नवम्बर, १९३१

नरेशोके सघमें शामिल होनेके बारेमे मैं न केवल उदासीन नही हूँ, बल्कि वे ऐसा करे इसके लिए सबसे अधिक उत्सुक हूँ। जहाँतक मेरा वश है, मैं नरेशोको सघमे शामिल होनेको राजी करनेकी हर तरहसे कोशिश करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-११-१९३१

२१५. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन
१९ नवम्बर, १९३१

गाधीजी : लॉर्ड चांसलर और मित्रो, श्री बेथलने जो अत्यन्त सौम्य वक्तव्य दिया है, उसके लिए मैं उनका अभिनन्दन करता हूँ किन्तु मुझे लगता है, यदि इस सराहनीय वक्तव्यमे उन्होने दो भावनाओका समावेश कर उसे बिगाडनेकी कोशिश न की होती तो अच्छा होता। उनके द्वारा व्यक्त की गई एक भावनाका अर्थ लगभग यह है कि यूरोपीय अथवा अंग्रेज लोग जो माँग करते है, उसका कारण यह है कि उन्होने भारतको कई लाभ पहुँचाये है। यदि वे यह राय न प्रकट करते तो अच्छा होता। किन्तु जब वह प्रकट की गई तो सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास द्वारा उसके शिष्टतापूर्ण प्रत्युत्तरपर और, जैसा कि हमने सुना, अब सर फीरोज सेठना द्वारा उस प्रत्युत्तरके समर्थनपर लॉर्ड रीडिंगको आश्चर्य प्रकट करनेकी कोई आवश्यकता नही थी। जिस बडी संस्थाके वे प्रतिनिधि है, उसकी ओरसे उन्होने उक्त वक्तव्यमे जो धमकी दी है, यदि वह भी न दी होती तो अच्छा होता। उन्होने कहा है कि यूरोपीय राष्ट्रीय माँगोका समर्थन इसी शर्तपर करेंगे कि भारतीय राष्ट्रवादी उनके द्वारा व्यक्त की गई यूरोपीयोकी माँगोको स्वीकार कर ले। साथ ही यूरोपीयोके समर्थनकी एक शर्त यह भी है कि राष्ट्रवादी लोग उस पृथकतावादी प्रवृत्तिको स्वीकार कर ले जिसका इस वक्तव्यमें तो जिक्र नही किया गया है, किन्तु दुर्भाग्यसे जिसकी झलक हमे कुछ ही दिन पहले पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी माँगमे मिल चुकी

१. साधन-सूत्रके अनुसार, गाधीजी ने यह वक्तव्य इस "निराधार" समाचारका खण्डन करनेके लिए दिया था कि उन्होंने प्रधान मन्त्रीसे अपनी भेंटमें कहा है कि वे नरेशोंको संघमें शामिल करना नही चाहते है।

है। इसके सिवा, यह समर्थन पानेके लिए राष्ट्रवादियोको यूरोपीय समुदायका उस पृथकतावादी गठजोडमें शामिल होना भी बरदाश्त करना पडेगा जिसके विषयमे मुझे उस दिन दु खके साथ बोलना पडा था। पिछली परिषद्में स्वीकृत प्रस्तावको समझानेका मैंने प्रयत्न किया है। यद्यपि आप उससे परिचित हैं, फिर भी मै उसे पुन पढ देना चाहता हूँ, क्योकि उसके सम्बन्धमे मुझे कुछ बाते कहनी होगी।

> **ब्रिटिश व्यापारी वर्गके कहनेसे यह सिद्धान्त सामान्यतः स्वीकार कर लिया गया है कि भारतमें व्यापार करनेवाले ब्रिटिश व्यापारी-वर्ग, फर्मों और कम्पनियोंके अधिकारों और जन्मतः भारतीय प्रजाजनोके अधिकारोंमें कोई भेद-भाव नहीं होना चाहिए।**

शेष प्रस्ताव पढनेकी मुझे आवश्यकता नही है।

सर तेजबहादुर सप्रू और श्री जयकरके प्रति अत्यन्त सम्मान और आदरभाव रखते हुए भी, मुझे अत्यन्त दु खके साथ इस अति व्यापक प्रस्तावसे मतभेद प्रदर्शित करना पड रहा है। इसलिए, कल जब सर तेजबहादुर सप्रूने तुरन्त यह बात स्वीकार कर ली कि यह प्रस्ताव अस्पष्ट है और इसमे सुधारकी गुजाइश है तो मुझे प्रसन्नता हुई। यदि आप इस प्रस्तावका ध्यानपूर्वक अध्ययन करे तो आप देखेंगे कि इसका स्वरूप कितना व्यापक है। भारतमे व्यापार करनेवाले ब्रिटिश व्यापारी-वर्ग, फर्मों और कम्पनियोके अधिकारो और जन्मत. भारतीय प्रजाजनोके अधिकारोमे कोई भेद-भाव नही होगा। यदि मैंने इसको सही-सही समझा है तो यह भयानक वस्तु है, और कमसे-कम मै इस तरहके प्रस्तावसे, भारतकी भावी सरकारको तो क्या, काग्रेसको भी बाँध नही सकता।

इसमे किसी तरहकी सीमा ही नही बाँधी गई है। ब्रिटिश व्यापारी-वर्गके बिलकुल वे ही अधिकार होगे जो जन्मत. भारतीय प्रजाजनोके होगे। इसलिए न केवल जातीय भेदभाव अथवा वैसी कोई और बात नही होगी, बल्कि ब्रिटिश व्यापारी-वर्ग जन्मत भारतीय प्रजाजनोके समान ही पूरे अधिकार भोगेगा। मै पूरे बलके साथ यह कहना चाहता हूँ कि मै इस सूत्रका भी समर्थन नही कर सकता कि सभी जन्म-जात भारतीय प्रजाजनोके भी अधिकारोकी समानताकी गारन्टी हो। इसका कारण मै आपको अभी बताता हूँ।

मै समझता हूँ, आप इस बातको तुरन्त स्वीकार कर लेगे कि भारतकी भावी सरकारको (सर फीरोज सेठनाके हाल ही के सराहनीय शब्दोमे) परिस्थितियोको समान करनेके लिए लगातार वह काम करना पडेगा जिसकी मौजूदा सरकारने उपेक्षा की, अर्थात् जिन लोगोको प्रकृतिने अथवा स्वय सरकारने कृपा करके धन और अन्य सुविधाएँ प्रदान की है, उनके विरुद्ध और भूखो मरते भारतीयोके पक्षमे उसे बराबर भेदभाव करना पडेगा। शायद भावी सरकारको मजदूरोके लिए मुफ्त घरोकी व्यवस्था करना आवश्यक होगा। उस समय भारतके धनिक लोग यह कह सकते है कि यद्यपि हमे इस प्रकारके घरोकी आवश्यकता नही है, फिर भी यदि आप उनके लिए घरोकी व्यवस्था करते है तो हमें भी उसके बदलेमें सहायता दे। वह नि.सन्देह मजदूरोके

पक्षमे भेद-भाव होगा। और इस सूत्रके अनुसार, धनिक लोग यह कह सकते है कि वह उनके विरुद्ध भेद-भाव है।

इसलिए मै साहसपूर्वक यह कहता हूँ कि जब हम इस सम्मेलनमे भारतके भावी सविधानकी रचनामे सम्राट्-सरकारकी उस हदतक सहायता करनेकी कोशिश कर रहे है जिस हदतक कि वह हमारी सहायता स्वीकार करे, तब इस अति व्यापक सूत्रको हम स्वीकार नही कर सकते।

किन्तु यह कह चुकनेके बाद, मै ब्रिटिश व्यापारियो और यूरोपीय फर्मोकी इस उचित माँगसे सर्वथा सहमत हूँ कि उनके साथ किसी प्रकारका जातीय भेद-भाव नही होना चाहिए। दक्षिण आफ्रिकाकी महान् सरकारसे मुझे उसके रगभेद और भारतीयोके प्रति भेदभाव-मूलक कानूनके विरोधमे २० वर्षसे अधिक समयतक लडना पडा था। इसलिए, भारतमे अभी मौजूद अथवा भविष्यमे आना चाहनेवाले ब्रिटिश मित्रोके विरुद्ध उसी प्रकारके भेदभावका मै कभी समर्थन नही कर सकता। मै यह बात काग्रेसकी ओरसे भी कह रहा हूँ। काग्रेसका भी यही मत है।

इसलिए इस सूत्रके बजाय, मै एक ऐसा सूत्र सुझाता हूँ, जिसके लिए मुझे वर्षो जनरल स्मट्सके साथ लडनेका सुख और सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उसमे सुधार हो सकता है, किन्तु मै उसे इस समिति और विशेषत यूरोपीय मित्रोके आगे केवल विचारार्थ पेश कर रहा हूँ। "राज्यके जन्मत भारतीय नागरिकोपर जो प्रतिबन्ध लगाया नही गया है, ऐसा कोई प्रतिबन्ध भारतमे कानूनके अनुसार रहनेवाले अथवा प्रवेश करनेवाले किसी भी व्यक्तिपर केवल"—'केवल' शब्दपर मै जोर देता हूँ—"जाति, रग अथवा धर्मके कारण नही लगाया जायेगा।" मै समझता हूँ कि यह सबके लिए सन्तोषप्रद सूत्र है। कोई भी सरकार इससे आगे नही जा सकती। मै इस सूत्रके गर्भित अर्थपर सक्षेपमे अपने विचार प्रकट करना चाहता हूँ। मै खेदके साथ यह कहता हूँ कि गत वर्षके सूत्रसे लॉर्ड रीडिंगने जो अर्थ निकाला था, अथवा निकालना चाहा था, उससे यह गर्भित अर्थ भिन्न है। इस सूत्रसे एक भी ब्रिटिश तो क्या यूरोपीयतक के साथ, उसके ब्रिटिश अथवा यूरोपीय होनेके कारण, कोई भेद-भाव नही होगा। मै यहाँ ब्रिटिश अथवा अन्य यूरोपीय अथवा अमेरिकी या जापानीके बीच कोई भेदभाव करना नही चाहता हूँ। ब्रिटिश उपनिवेशोने मुख्यत रग और जाति-भेदपर आधारित प्रतिबन्धक कानून बनाकर मेरी विनम्र सम्मतिमे, अपनी कानून-सहिताओको जिस प्रकार दूषित किया है, मै उसका अनुकरण नही करूँगा।

मुझे यह विचार प्रिय है कि स्वतन्त्र भारत समस्त ससारको एक दूसरी ही तरहका पाठ पढायेगा, एक दूसरे ही प्रकारका उदाहरण उसके सामने रखेगा। मै यह कभी नही चाहूँगा कि भारत सर्वथा एकाकी जीवन व्यतीत करे और इस प्रकार अपने चारो ओर गढ-कोट खडे कर ले और अपनी सीमामे किसीको प्रवेश अथवा व्यापार न करने दे। किन्तु इतना कह चुकनेके बाद, जैसा कि मै पहले कह चुका हूँ, परिस्थितियोको [सबके हितमे] समान करनेके लिए की जाने योग्य कई बातें

मेरे मनमे है। मुझे भय है, पूंजीपतियो, जमीदारो, तथाकथित ऊँची जातियो और उसके बाद अन्तमे वैज्ञानिक विधिसे ब्रिटिश शासकोने दलितो और पतितोको जिस कीचडमे डुबो दिया है, उससे उन्हे निकालनेके लिए भारत आगामी अनेक वर्षोतक कानून बनानेमे सलग्न रहेगा। यदि हमे इन लोगोको कीचडमें से निकालना है तो अपना घर व्यवस्थित करनेके लिए इन लोगोका विचार पहले करना और जिस बोझके नीचे ये कुचले जा रहे है, उससे इन्हे छुटकारा दिलाना भी राष्ट्रीय सरकारका आवश्यक कर्त्तव्य होगा। और यदि जमीदार, धनिक अथवा विशेषाधिकार-भोगी लोग — वे चाहे यूरोपीय हो या भारतीय — यह पाये कि उनके साथ भेद-भावपूर्ण बरताव हो रहा है तो मै उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करूँगा, किन्तु मुझसे सहायता हो सकती होगी तो भी मै उनकी सहायता नही करूँगा, क्योकि मै तो उस प्रक्रियामे उनकी और सहायता चाहूँगा, बिना उनकी सहायताके मै इन लोगोको कीचडमें से बाहर नही निकाल सकूँगा।

आप चाहे तो अछूतोकी दशापर नजर डाल सकते है। कानूनको उनकी सहायताके लिए आना है और उनके लिए मीलो क्षेत्र अलग निकालना है। आज उनके पास जरा भी जमीन नही है। आज वे तथाकथित ऊँची जातियोकी दयापर, और, मै कह सकता हूँ, सरकारकी दयापर जीवित है। वे आज एक जगहसे दूसरी जगह खदेडे जा सकते है, और इसकी न तो वे शिकायत कर सकते है, न कानूनकी सहायता ही प्राप्त कर सकते है। इसलिए विधानमण्डलका पहला काम यह देखना होगा कि स्थितिको कुछ हदतक समान करनेके लिए, इन लोगोको मुक्त हस्तसे अनुदान दिये जाये।

ये अनुदान किनकी जेबोसे आयेंगे? ईश्वरकी जेबसे तो आयेगे नही। राज्यके लिए ईश्वर आकाशमे रुपयोकी वर्षा नही करेगा। स्वभावत यह रकम धनिक-वर्गके पाससे ही आयेगी, जिनमे यूरोपीय भी शामिल है। क्या वे कहेगे कि यह भेद-भाव है? वे यह देख सकेगे कि उनके साथ यह भेद-भाव उनके यूरोपीय होनेके कारण नही है, बल्कि इसलिए है कि उनके पास पैसा है और दूसरोके पास नही है। इसलिए यह धनिको और गरीबोकी लडाई होगी। और यदि डर इसी बातका हो और यदि ये सब वर्ग करोडो मूक मानवोके सिरपर बन्दूक तानकर कहे कि जबतक तुम हमारी मिल्कियत और हमारे अधिकारोकी अक्षुण्णताका निश्चित वचन नही दे देते तबतक तुम्हे स्वराज्य नही मिलेगा तो मुझे भय है कि राष्ट्रीय सरकारका जन्म ही न हो सकेगा।

मै समझता हूँ कि काग्रेसका ध्येय और जो सूत्र मैने बताया है, उसका गर्भित अर्थ क्या है, इसका मैने काफी सकेत दे दिया है। वे यह चीज कभी नही पायेगे कि क्योकि वे अग्रेज, यूरोपीय, जापानी अथवा किसी अन्य जातिके है, इसलिए उनके साथ भेद-भाव किया जाता है। जिस आधारपर उनके साथ भेद-भाव किया जायेगा, वही आधार जन्मत भारतीय नागरिकोके साथ भेद-भावका भी होगा। इसलिए मेरे पास जल्दीमे तैयार किया हुआ एक और सूत्र है, जल्दीमे तैयार किया हुआ इसलिए

कि उसे मैंने यही, लॉर्ड रीडिंग और सर तेजबहादुर सप्रूका भाषण सुनते-सुनते तैयार किया है। यह दूसरा सूत्र जो मेरे पास है, वह वर्त्तमान अधिकारोंके सम्बन्धमें है:

> किसी भी वर्त्तमान न्यायार्जित हितमें, जो आम तौरपर राष्ट्रके सर्वोच्च हितोंके विरुद्ध नहीं है, इस तरहके हितोंपर लागू होनेवाले कानूनके सिवा और किसी तरह हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा।

यहाँ भी मेरे दिमागमें जो-कुछ है, वह मैं संक्षेपमें बताऊँगा। आज ब्रिटिश सरकारपर जो दायित्व हैं, आगामी सरकारके उन्हें ग्रहण करनेसे सम्बन्धित कांग्रेस-प्रस्तावमें जो बात आप देखते हैं, निश्चय ही वह मेरे मनमें भी है। जिस प्रकार हमारी यह माँग है कि इन दायित्वोंको अपने ऊपर लेनेसे पूर्व एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा इनकी जाँच होनी चाहिए, उसी तरह आवश्यकता होनेपर वर्त्तमान अधिकारोंकी भी न्यायिक जाँच होनी चाहिए। इसलिए प्रश्न दायित्वोंको अस्वीकार करनेका नहीं है, बल्कि उन्हें उनकी जाँच करके स्वीकार करनेका है। यहाँ हममें कुछ लोग ऐसे हैं जिन्होंने यूरोपीयों द्वारा भोगे जा रहे विशेषाधिकारों तथा एकाधिकारोंका अध्ययन किया है। किन्तु अकेले यूरोपीयोंकी बात नहीं है। भारतीयोंमें भी ऐसे लोग हैं — मेरे ध्यानमें निश्चय ही अनेक ऐसे भारतीय हैं — जो आज ऐसी भूमिपर कब्जा किये हुए हैं जो उन्हें राष्ट्रकी किसी सेवाके बदलेमें नहीं मिली है। मैं यह भी नहीं कह सकता कि वह उन्हें सरकारकी सेवाके बदलेमें मिली है, क्योंकि मैं यह नहीं मानता कि उससे सरकारको कुछ लाभ पहुँचा है, बल्कि वह उन्हें किसी अधिकारीकी सेवाके बदलेमें दी गई है। यदि आप मुझसे कहें कि राज्य इन रियायतों और विशेषाधिकारोंकी जाँच नहीं करेगा तो मैं आपसे फिर कहूँगा कि तब अकिंचनोंकी ओरसे, जिनसे उनके अधिकार छीन लिये गये हैं उनकी ओरसे, शासनतन्त्र चलाना असम्भव हो जायेगा। इसलिए आप देखेंगे कि इसमें यूरोपीयोंके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं कहा गया है। दूसरा सूत्र भी यूरोपीयोंपर उतना ही लागू होता है जितना भारतीयोंपर, या यों कहिए जितना सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास और सर फीरोज सेठनापर लागू होता है। यदि इन्होंने सरकारी अधिकारियोंकी सेवा करके रियायतें हासिल की होंगी, मीलों जमीन प्राप्त की होगी, तो यदि शासनकी लगाम मेरे हाथमें हुई तो मैं तुरन्त इन्हें उससे बेदखल कर दूँगा। ये भारतीय हैं इसलिए मैं इनका लिहाज नहीं करूँगा। उतनी ही तत्परतासे मैं सर ह्यूबर्ट कार अथवा श्री बेन्थलको भी बेदखल कर दूँगा, फिर चाहे वे कितने ही प्रशंसनीय क्यों न हों और मेरे प्रति कितना ही मैत्रीभाव क्यों न रखते हों। वे भले ही मुझे पचास भोज दें, किन्तु इससे उन्हें बेदखल करनेमें मेरे लिए कोई बाधा नहीं होगी। मैं आपको यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि कानून किसी भी व्यक्तिके प्रति पक्षपात नहीं करेगा। यह विश्वास दिलानेके बाद, इससे आगे मैं नहीं जा सकता। इसलिए 'न्यायार्जित' शब्दका वास्तविक गर्भित अर्थ यह है कि प्रत्येक हित निष्कलंक और सीजरकी पत्नीके समान सन्देहसे परे होना चाहिए। इसलिए जब ये सारी

बाते उस सरकारकी नजरमें आयेगी तो हम इनकी जाँचकी अपेक्षा रखेंगे। इसके बाद 'राष्ट्रके सर्वोच्च हितोके विरुद्ध न हो', ये शब्द आते है। मेरे विचारमे कई एकाधिकार ऐसे है जो निस्सन्देह न्यायत प्राप्त है, किन्तु जो राष्ट्रके सर्वोच्च हितोके विरुद्ध पैदा किये गये है। मै आपको एक उदाहरण देता हूँ, जिससे आपका कुछ मनोरजन होगा, किन्तु जो किसी व्यक्ति या वर्गके पक्ष-विपक्षमे नही है। इस नई दिल्ली नामधारी सफेद हाथीको लीजिए। इसपर करोडो रुपये खर्च हुए है। मान लीजिए कि भावी सरकार इस निर्णयपर आती है कि यह सफेद हाथी जब अपने पास है तो इसका कुछ उपयोग होना चाहिए। कल्पना कीजिए कि पुरानी दिल्लीमे प्लेग अथवा हैजा फैला है और हमे गरीबोके लिए अस्पतालोकी जरूरत है। इस स्थितिमे हम क्या करे? क्या आप समझते है कि राष्ट्रीय सरकार अस्पताल या ऐसी ही चीजे बनवा सकेगी? नही, ऐसा कुछ नही होगा। हम उन इमारतोपर अधिकार करेगे, इन प्लेगग्रस्त रोगियोको उनमें रखेंगे और उनका अस्पतालकी तरह उपयोग करेगे, क्योकि मेरे खयालसे वे इमारतें राष्ट्रके सर्वोच्च हितोके विरुद्ध है। वे भारतके करोडो लोगोकी प्रतिनिधि नही है। वे यहाँ इस मेजके पास बैठे धनिक लोगोकी प्रतिनिधि हो सकती है—वे भोपालके नवाब साहब अथवा सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास, सर फीरोज सेठना अथवा सर तेजबहादुर सप्रूकी प्रतिनिधि हो सकती है। किन्तु जिन लोगोके पास रातको सोनेके लिए स्थान नही है और खानेके लिए रोटीका टुकडा नही है, उनकी वे प्रतिनिधि नही हो सकती। इसलिए यदि राष्ट्रीय सरकार इस निर्णयपर पहुँचती है तो, चाहे किसीके भी हित उससे सम्बद्ध हो, वे इमारतें ले ली जायेंगी, और मै आपको बता देना चाहता हूँ कि वे बिना किसी मुआवजेके ले ली जायेगी। क्योकि यदि आप इस सरकारसे मुआवजा दिलाना चाहेगे तो उसका अर्थ होगा माधोको देनेके लिए ऊधोसे छीनना, और वह एक असम्भव बात होगी।

आपके सामने यह कड़वी गोली रखनेके लिए मै आपका मनोरजन करनेकी कोशिश कर रहा हूँ, क्योकि काग्रेस जैसी सरकारकी कल्पना करती है वैसी सरकार यदि स्थापित होनेवाली हो तो आपको यह कडवी गोली निगलनी ही होगी। आपको धोखा देनेकी मेरी जरा भी इच्छा नही है। यहाँसे कुछ ले जानेके लिए, आपको यह विश्वास दिलाकर कि सब बाते सर्वथा ठीक होगी, मै आपको धोखा देना नही चाहता हूँ। काग्रेसकी ओरसे मै सारी बाजी आपके सामने रख देना चाहता हूँ। मै मनमे किसी तरहकी कोई बात छिपाकर रखना नही चाहता हूँ। इसके बाद यदि काग्रेसकी नीति आपको स्वीकार हो तो मुझे अत्यन्त आनन्द होगा। किन्तु यदि आपको वह स्वीकार नही है, यदि आज मुझे ऐसा महसूस होता है कि मै आपके हृदयको छू नही सकता और अपनी बात आपसे मनवा नही सकता, तो जबतक आप सबका हृदय-परिवर्त्तन नही हो जाता और आप भारतके करोडो लोगोको यह अनुभव करनेका मौका नही देते कि अन्तमे उन्हे राष्ट्रीय सरकार मिल गई है, तबतक काग्रेसको भटकते रहना और आपके मत-परिवर्त्तनका प्रयत्न करते रहना होगा।

इस प्रस्तावकी अन्तिम दो पंक्तियोंके बारेमें अबतक किसीने एक शब्द भी नहीं कहा है। ये पंक्तियाँ हैं :

> **यह स्वीकार किया गया है कि भारतमें यूरोपीय समुदायको फौजदारी मुकदमोंमें जो अधिकार हैं, वे कायम रहने चाहिए।**

मुझे यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि इसके सभी गर्भित अर्थोंका मैं अध्ययन नहीं कर सका हूँ। मुझे यह कह सकनेमें खुशी है कि कुछ दिनोंसे सर ह्यूबर्ट कार, श्री बेन्थल और कई मित्रोंके साथ मैं मित्रतापूर्ण — सर्वथा मित्रतापूर्ण — और गैर-सरकारी बातचीत कर रहा हूँ। मैं उनके साथ इसी विषयकी चर्चा कर रहा था, और मैंने उनसे पूछा कि इन दोनों बातोंका क्या अर्थ है। उन्होंने कहा कि दूसरे समुदायोंके लिए भी यही बात है। मैं यह चीज निश्चित रूपसे नहीं जान सका कि दूसरे समुदायोंके लिए भी यही बात होनेका क्या अर्थ है। मेरा खयाल है, इसका यह अर्थ है कि दूसरे समुदाय भी अपनी जूरीकी माँग कर सकते हैं। इसका सम्बन्ध जूरीके जरिये होनेवाले मुकदमोंसे है। मुझे भय है कि मैं इस सूत्रका समर्थन नहीं कर सकता।

श्री जिन्ना : श्री गांधी, क्या मैं आपकी भूल सुधार सकता हूँ? यह केवल जूरीसे ही सम्बन्धित नहीं है, बल्कि न्यायाधिकरणों, यूरोपीयों और भारतीयोंके मुकदमोंकी सुनवाई करनेवाले न्यायाधिकरणोंसे भी इसका सम्बन्ध है और अन्य कई भेद भी हैं। अकेली जूरीकी ही बात नहीं है।

गांधीजी : मुझे यह पता नहीं था। इसीलिए मैंने कहा कि मैंने इसका अध्ययन नहीं किया है। इसमें यदि कुछ और हो तो मेरे अज्ञानके लिए आप मुझे क्षमा करें। किन्तु मैं ऐसे आरक्षणोंका समर्थन नहीं कर सकता। मेरा खयाल है कि राष्ट्रीय सरकारको ऐसे प्रतिबन्धोंसे जकड़ रखना सम्भव नहीं है। भावी भारतीय राष्ट्र बननेवाले आजके सभी समुदायोंको सद्भावसे श्रीगणेश करना चाहिए, परस्पर विश्वाससे श्रीगणेश करना चाहिए, अन्यथा श्रीगणेश करना ही नहीं चाहिए। यदि हमसे कहा जाये कि हमें उत्तरदायी शासन नहीं मिल सकता, तो वह स्थिति समझमें आ सकती है। किन्तु हमसे कहा जाता है कि ये सब आरक्षण और संरक्षण रहने ही चाहिए। वह स्वतन्त्रता और उत्तरदायी शासन नहीं होगा, वह तो केवल संरक्षण होगा। ये संरक्षण सारी सरकारको खा जायेंगे। मैं आज प्रातः इससे मिलती-जुलती किसी उपमाकी खोजमें था और इस निर्णयपर पहुँचा कि यदि ये सब संरक्षण दिये जानेवाले हों और यहाँकी सब बातें ठोस रूप धारण करनेवाली हों और हमसे कहा जाये कि हमें उत्तरदायी शासन मिलनेवाला है, तो वह वैसा ही उत्तरदायी शासन होगा जैसा कि जेलमें कैदियोंको प्राप्त होता है। जेलकी कोठरियोंमें ताला लगते और जेलरके रवाना होते ही कैदियोंको पूर्ण स्वतन्त्रता मिल जाती है। १० अथवा ७ वर्ग फुटकी कोठरीके अन्दर कैदियोंको पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। जिसमें जेलर अपने अधिकारोंकी आरामसे रक्षा कर रहे हों, वैसी पूर्ण स्वतन्त्रता मैं नहीं चाहता।

इसलिए अपने यूरोपीय मित्रोसे मै अपील करता हूँ कि उन्हे अपने अधिकारो के सरक्षणका यह विचार छोड देना चाहिए। मै यह सुझाव देनेका साहस करता हूँ कि मैने जो दो सूत्र पेश किये है, वे स्वीकार कर लिये जाये। इन्हे आप जिस तरह चाहे काट-छाँटकर ठीक कर सकते हैं। यदि इनकी शब्द-योजना सन्तोषजनक न हो तो खुशीसे दूसरे शब्द सुझाइए। किन्तु मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि इन निषेधात्मक सूत्रोसे बाहर, जिनमे आपके विरुद्ध कोई प्रतिबन्ध नही लगाया गया है, आप नही जा सकते — क्या मै कहूँ कि इससे अधिक माँगनेका आप साहस नही कर सकते। यह तो हुआ वर्त्तमान हितो और भावी व्यापारके सम्बन्धमे।

श्री जयकर कल मूल उद्योगोके सम्बन्धमे बातचीत कर रहे थे और उसमें उन्होने जो भावनाएँ व्यक्त की है मै उनसे अपनी पूरी सहमति प्रकट करना चाहता हूँ। काग्रेस उद्योगोको कितना महत्त्व देती है, मै समझता हूँ, यह बताकर आपका समय खर्च करनेकी आवश्यकता नही है। काग्रेसकी धारणा यह है कि मूल उद्योगोको यदि राज्य अपने अधिकारमे न भी ले तो कमसे-कम उनके सचालन, प्रबन्ध और विकासमे तो उसकी आवाज प्रमुख होनी ही चाहिए।

भारत-जैसे अविकसित देशके बारेमे इग्लैड-जैसे अत्यन्त विकसित उद्योग-प्रधान द्वीपकी तरह नही सोचना चाहिए। मेरे विचारमे आज जो बात ग्रेट ब्रिटेनके लिए हितकारी है, वही भारतके लिए विष-रूप है। भारतको अपना ही अर्थशास्त्र, अपनी ही नीति, अपनी ही उद्योग-पद्धति और अन्य सब अपना ही विकसित करना है। इसलिए मूल उद्योगोका जहाँतक सम्बन्ध है, मुझे भय है कि अकेले ब्रिटिश लोगोको ही नही, अन्य अनेकोको यह लगेगा कि उनके साथ न्याय नही हो रहा है। किन्तु राज्यके खिलाफ 'न्याय' का क्या अर्थ है, मै नही जानता।

और तटीय व्यापारके बारेमें भी यही बात है। काग्रेसकी राष्ट्रीय तटीय व्यापारको विकसित करनेकी इच्छाके साथ पूरी-पूरी सहानुभूति है। किन्तु यदि तटीय व्यापार-सम्बन्धी विधेयकमे यूरोपीयोके विरुद्ध कुछ भेद-भाव किया गया होगा तो मै यूरोपीयोका साथ दूँगा और उस विधेयक या प्रस्तावका, जो अग्रेजोके विरुद्ध उनके अग्रेज होनेके कारण भेद-भाव करता है, विरोध करूँगा। किन्तु वहाँ विशाल स्वार्थ पैदा हो गये है। बगालमे मैने नदी-मार्गोसे काफी सफर किया है और वर्षो पहले इरावतीपर भी सफर किया है। इसलिए इस व्यापारके सम्बन्धमे मै कुछ जानता हूँ। इन विशाल कार्पोरेशनोने रियायतो, विशेषाधिकारो, सरकारी कृपा द्वारा, आप उन्हे कुछ भी कहिए, जो कम्पनियाँ खडी कर ली है और जो व्यापार जमा लिया है, उसका कोई जरा भी मुकाबला नही कर सकता।

चटगाँव और रगूनके बीच नई उगती एक कम्पनीके सम्बन्धमे आपमें से कुछने सुना होगा। इस कम्पनीके डायरेक्टर, कठिनाइयोसे जूझते बेचारे मुसलमान, रगूनमे मुझसे मिले और कहने लगे कि क्या मै उनके लिए कुछ कर सकता हूँ। उनके लिए मेरे हृदयमे पूरी-पूरी सहानुभूति थी; किन्तु कुछ किया नही जा सकता था। क्या हो सकता था? उनके मुकाबलेमें जबरदस्त ब्रिटिश इडिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी

खडी है। उसने इस उगती हुई कम्पनीको दबानेके लिए दरमे कमी कर दी है, और लगभग कुछ भी किराया लिये बिना मुसाफिरोको ले जाती है। मै इस प्रकारके एकके-बाद-एक अनेको उदाहरण दे सकता हूँ। इसलिए प्रश्न यह नही है कि यह ब्रिटिश कम्पनी है। इस व्यवसायको हडपनेके विचारसे स्थापित कोई भारतीय कम्पनी होती तो वह भी ऐसा ही करती। मान लीजिए कोई भारतीय कम्पनी अपनी पूँजी बाहर ले जाती है — जैसा कि आज भी बहुत-से भारतीय, जो अपनी पूँजी भारतमें लगानेके बजाय भारतसे बाहर लगाते हैं, कर रहे हैं। मान लीजिए, भारतीयोका कोई विशाल कार्पोरेशन इस भयसे कि राष्ट्रीय सरकार सही नीतिपर नही चल रही है, अपनी रकम सुरक्षित रखनेके लिए अपना सब मुनाफा ले जाकर किसी दूसरे देशमें लगाता है। एक कदम और आगे बढिए और मान लीजिए कि ये भारतीय डायरेक्टर अपने कारोबारको अतिशय वैज्ञानिक, सम्पूर्ण और त्रुटिरहित ढगसे सगठित करनेके लिए, जितना सम्भव हो सके, यूरोपीय कौशलका उपयोग करे और कठिनाइयोसे जूझती इन कम्पनियोको अस्तित्वमे ही न आने दे तो मै अवश्य अपनी आवाज उठाऊँगा और चटगाँवकी-जैसी कम्पनीकी रक्षाके लिए कानून बनवाऊँगा।

कुछ मित्र इरावतीमे अपने जहाजतक नही चला सके। उन्होने इस बातका विश्वास दिलानेके लिए कि यह बात सर्वथा अशक्य हो गई, मुझे सुनिश्चित प्रमाण दिये। उन्हे लाइसेस नही मिल सके, और व्यक्ति जिन साधारण सुविधाओको पानेका अधिकारी है, वे तक नही मिल सकी। हममे से हरएक जानता है कि पैसा कितना-कुछ खरीद सकता है, प्रतिष्ठा कितना-कुछ खरीद सकती है, और जब ऐसी प्रतिष्ठा बन जाये जो सब नन्हे पौधोको सुखा डालती हो तो, ४२ वर्ष पूर्व कहे हुए सर जॉन गोर्स्टके शब्दोमे, ऊँचे वृक्षोको उडा देना पडता है। ऊँचे वृक्ष इन नन्हे पौधोको सुखा दे, यह नही होने देना चाहिए। तटीय व्यापारके सम्बन्धमें वास्तविक माँग यही है। सम्भव है, इस विधेयककी भाषा अटपटी हो। वह कोई बात नही, किन्तु मेरा खयाल है, इसका सार-तत्त्व बिलकुल सही है।

अब अन्तिम बात नागरिकताके सम्बन्धमे है। नेहरू-रिपोर्टमे आपको इसकी व्याख्या मिलेगी। स्वभावतः स्थितियाँ ज्यो-ज्यो पैदा होती गई, नेहरू-समितिको उनका विचार करना पडा, और इसलिए मूल वर्णनमे पीछेसे कई परिवर्तन किये गये। किन्तु इस समितिको यह समझ लेना चाहिए कि नेहरू-रिपोर्ट अब पिछड गई है। मुझे यह कहते दु ख होता है; पर वास्तविकता यही है। स्वय स्वर्गीय पण्डित मोतीलाल नेहरूको भी यही कहना पडा था। इसका कारण यह नही है कि हम नेहरू-रिपोर्टको पीछे डालना चाहते थे। नेहरू-रिपोर्ट निस्सन्देह अनेक स्थितियोके बीच एक समझौता है। उस समितिका सदस्य न होते हुए भी, जो-कुछ होता था उसकी पूरी खबर मुझे मिलती रहती थी, क्योकि उस समय मै भारतमे था और उस समितिके सदस्योके सम्पर्कमें था। इसलिए वह रिपोर्ट और वह समिति किस तरह अस्तित्वमे आई, इसका कुछ इतिहास मै जानता हूँ। उस समितिके इतिहासके विस्तारमे जाकर मै आपको उबाना नही चाहूँगा। किन्तु आप देखेगे कि उस रिपोर्टका आधार

यह विचार है कि हमें औपनिवेशिक दर्जा मिलेगा। किन्तु कांग्रेस इससे कई कदम आगे बढ गई है। हिन्दू-मुस्लिम-सिख प्रश्नके सम्बन्धमे, तथा इसी तरह अन्य अनेक बातोंके सम्बन्धमें कांग्रेसको उस रिपोर्टको भुला देना पडा है। यद्यपि नेहरू-रिपोर्ट, और उससे पहले नेहरू-समिति, कांग्रेसकी ही कृति है, किन्तु इससे मैं यह नही कह सकता कि उसमे प्रत्येक बातको हम अब स्वीकार कर सकेंगे। इससे आगे मै अभी जाना नही चाहता। 'नागरिक'की व्याख्या करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। कांग्रेसकी आजकी मनोदशाको, जैसा मै उसे समझता हूँ, देखते हुए कांग्रेस क्या उचित समझेगी अथवा मुझे क्या उचित प्रतीत होगा, यह मै आज इसी क्षण कहनेकी जिम्मेदारी नही ले सकता। यह बात ऐसी है, जिसमे मैं सर तेजबहादुर सप्रू तथा अन्य मित्रोके साथ बातचीत करना और उनके मनकी बात जानना चाहूँगा, क्योकि मुझे यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि इस चर्चासे मै इस बातकी तहतक नही पहुँच सका हूँ। मैंने कांग्रेसकी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर दी है कि हमे जातीय भेद-भावकी जरा भी आवश्यकता नही है। किन्तु इस स्थितिको स्पष्ट कर देनेके बाद 'नागरिक' शब्दकी व्याख्याके विषयमे कांग्रेसके मतका तुरन्त निर्णय देना मेरे लिए आवश्यक नही रह जाता। इसलिए नागरिक शब्दके विषयमें मै इतना ही कहूँगा कि अभी इस व्याख्याके सम्बन्धमे अपना मत मै स्थगित ही रखूँगा।

इतना कहनेके बाद एक बात कहकर मैं अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ। यूरोपीय मित्रोको सन्तोष दे सकनेवाला एक सर्वसम्मत सूत्र खोज निकालनेके बारेमे मै निराश नही हुआ हूँ। मै समझता हूँ कि जिस बातचीतमे भाग लेनेका मुझे सौभाग्य मिला, वह अभी भी जारी रहेगी। मेरी उपस्थितिकी आवश्यकता होगी तो उस छोटी समितिकी बैठकमे मै अभी भी हाजिर हूँगा।

विचार उसे बढाने, उसकी अनौपचारिकता थोडी कम करने और एक सर्व-सम्मत आधार खोज निकालनेका ही है।

मैंने जो-कुछ कहा उसके बावजूद, एक सर्वसम्मत सूत्र खोज निकालनेके बारेमे मै निराश नही हूँ। किन्तु यह आशा प्रकट करनेके बाद, मै फिर कहता हूँ कि जहाँतक मै समझ सकता हूँ, मै कोई ऐसी विस्तृत योजना सोच नही सकता जो सविधानमे शामिल की जा सके। सविधानमे तो इस-जैसा कोई सूत्र ही शामिल हो सकता है और वही सब अधिकारोका आधार हो सकता है।

आप देखेंगे कि इसमे प्रशासकीय ढंगसे कुछ करनेकी कल्पना नही है। संघ-न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालयके सम्बन्धमें अपनी आशा मै प्रकट कर चुका हूँ। मेरे लिए सघ न्यायालय ही सर्वोच्च न्यायालय है; वही अपीलका अन्तिम न्यायालय है, उससे आगे कोई अपील नही हो सकेगी। वही मेरी प्रिवी कौंसिल है और वही स्वतन्त्रताका आधार-स्तम्भ है। यह वह अदालत है जहाँ सब व्यक्ति जरा भी शिकायत होने पर जा सकते हैं। ट्रासवालके एक महान् कानून-विशेषज्ञने — ट्रान्सवाल तथा दक्षिण आफ्रिकाने सामान्यतः बहुत बडे-बडे कानून-विशेषज्ञ पैदा किये हैं — जिनके पास मै अपनी युवावस्थामे सहायताके लिए जाया करता था, एक अत्यन्त कठिन मुकदमेके

सम्बन्धमे एक बार मुझसे कहा था, "यद्यपि इस समय भले ही आशा न हो, किन्तु मै तुमसे कहता हूँ, अपने जीवनमे मैने एक बात सदा नजरके सामने रखी है, अन्यथा मै वकील हो ही नही सकता था, और वह यह कि कानून हम वकीलोको सिखाता है कि ऐसा कोई भी अन्याय नही है जिसका अदालतमे कुछ भी इलाज न मिलता हो, और जो न्यायाधीश यह कहे कि कोई इलाज नही है, उन न्यायाधीशोको तुरन्त ही न्यायासनसे उतार देना चाहिए।" लॉर्ड चासलर, आपके प्रति पूरा सम्मान रखते हुए, मै यही बात कहता हूँ।

इसलिए मै चाहता हूँ कि हमारे यूरोपीय मित्र इस बातका विश्वास रखे कि जिस तरह हम, सम्राट्के सलाहकार मन्त्रियोकी कृपा यदि न हो तो, खाली हाथ लौटनेकी अपेक्षा रखते है, उस तरह भावी सघ न्यायालय उन्हे खाली हाथ नही लौटायेगा। मै अभी भी आशा कर रहा हूँ कि हम अपनी बात उन्हे सुना सकेगे और उनका सद्भाव जाग्रत कर सकेगे, और तब हम अपनी जेबोमे कुछ ठोस चीज लेकर जानेकी आशा कर सकेगे। किन्तु हम अपनी जेबोमें कुछ ठोस चीज लेकर चाहे जाये या न जाये, पर मुझे आशा है कि यदि मेरे स्वप्नोका सघ न्यायालय स्थापित होता है, तो यूरोपीय और प्रत्येक व्यक्ति, सभी अल्पसख्यक, यह विश्वास रख सकते है कि मुझ-जैसा अदना व्यक्ति भले ही उन्हे निराश करे, पर वह न्यायालय उन्हे निराश नही करेगा।

अध्यक्ष : श्री गांधी, इस भाषणके लिए हम आपके बहुत ही आभारी हैं। यदि आप लोग मुझे यह कहनेकी अनुमति दें तो कहूँ कि अपने आदर्शोको उन्होंने जिस उत्कटता और गम्भीरतासे रखा है, उससे हर कोई अवश्य प्रभावित होगा और मैं उन्हे सचमुच बहुत धन्यवाद देता हूँ। ये इन दो सूत्रोंको मुझे देनेकी कृपा करे।

सर तेजबहादुर सप्रू : मैं महात्मा गांधीसे उनके अपने भाषणके एक अंशको समझानेके लिए कहना चाहता हूँ, क्योंकि उसके सम्बन्धमें मेरे मनमें कुछ सन्देह है। क्या वे यह सुझाव देते है कि भावी राष्ट्रीय सरकारको प्रत्येक व्यक्तिके स्वामित्वके अधिकारकी जाँच करनी चाहिए, और यदि ऐसा है तो वह स्वामित्वका अधिकार किसी खास मियादके अन्दर मिला होना चाहिए या नहीं? इस अधिकारकी जाँचके लिए वे कैसा तन्त्र स्थापित करना चाहते हैं, और वे कुछ मुआवजा देना चाहेंगे या राष्ट्रीय सरकार उनके अथवा बहुमतके विचारके अनुसार जिस मिल्कियतको अनुचित रूपसे प्राप्त की गई समझेगी, उसे जब्त कर लेगी?

गाधीजी यदि आप मुझे अनुमति दे तो मै निश्चय ही इन प्रश्नोका, जो बहुत ही वाजिब है, उत्तर दूंगा। वस्तुत मै [इस सम्बन्धमे] अपने विचार प्रकट कर चुका हूँ। जहाँतक मै समझता हूँ, आशय यह नही है कि यह काम प्रशासनको करना चाहिए; जो-कुछ भी होगा, खुलेआम होगा — उसमें कही कोई बेईमानी नही होगी। न्यायतन्त्र द्वारा ही वह होगा। ये सब दावे . . .

सर तेजबहादुर सप्रू : यही मैं जानना चाहता हूँ। वह न्यायतन्त्र कैसा होगा?

गाधीजी : अभी इस समय तो मैंने किसी सीमाका विचार नही किया है। मै समझता हूँ कि अन्यायके विरुद्ध कोई सीमा नही है।

सर तेजबहादुर सप्रू : इसलिए आपकी राष्ट्रीय सरकारके आधीन कोई भी स्वामित्व-अधिकार सुरक्षित नहीं है न?

गाधीजी : हमारी राष्ट्रीय सरकारके आधीन इन सब बातोका निर्णय अदालत करेगी। यदि इन बातोके सम्बन्धमे कोई शका है तो मै समझता हूँ प्रत्येक उचित शकाका समाधान किया जा सकता है। मुझे यह कहनेमे जरा भी हिचकिचाहट नही है कि सामान्यत यह सूत्र स्वीकार कर लिये जाने योग्य है। जहाँ यह शिकायत हो कि अवैध अधिकार प्राप्त किये है, वहाँ अदालतको उन अधिकारोकी जाँचकी छूट होनी चाहिए। मै आज यह नही कहूँगा कि शासन-सूत्र हाथमे लेकर मैं एक भी अधिकार अथवा एक भी स्वामित्व-अधिकारकी जाँच नही करूँगा।

अध्यक्ष : मै समझता हूँ, आपमें से प्रत्येक जो-कुछ दूसरेने कहा है उसपर बहुत ही सावधानीसे विचार करेगा और हम जो-कुछ आप दोनोंने कहा है उसपर विचार करेगे।

पं० मदनमोहन मालवीय : महात्मा गांधीके इस बहुत ही विस्तृत भाषणके बाद मै समितिका ज्यादा समय लेना नहीं चाहूँगा। मै कुछ बातें बिलकुल साफ कर देना चाहता हूँ। हम सब इसपर सहमत है कि भारतमें व्यापार करनेवाले यूरोपीयोंके विरुद्ध भेद-भाव नहीं किया जायेगा और उनके साथ कोई अन्याय नहीं होगा। उनके साथ न्यायसंगत और उचित व्यवहार होगा। इस बातपर सभी सहमत है।

अध्यक्ष : आप हमारी अगली बैठकमें अपना भाषण जारी रखें तो कैसा हो?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज़ कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४२५-२९

२१६. पत्र : डब्ल्यू० ट्यूडर ओवेनको[1]

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू० १
२० नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। अगले बुधवारको ५ बजे शामको शायद मुझे फुरसत रहेगी। अगर यह समय आपके लिए ठीक रहे तो कृपया तार द्वारा सूचित करें।

अगर हम मिल सकें तो उन पुरानी याददाश्तोंको ताजा करना मेरे लिए खुशीकी बात होगी।

हृदयसे आपका,

श्री डब्ल्यू० ट्यूडर
ब्रॉडहर्स्ट
लिटिल कॉमन
बेक्सहिल-ऑन-सी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३२८)से।

२१७. भाषण : लन्दन शाकाहारी मण्डलकी सभामें

लन्दन
२० नवम्बर, १९३१

जब मुझे इस सभामें आनेका निमन्त्रण मिला तो मैं कितना प्रसन्न हुआ, यह बतानेकी जरूरत नहीं। यह स्वाभाविक था, क्योंकि निमन्त्रण पाकर शाकाहारियोंके साथ बनाई गई अपनी सुखद मैत्रीकी स्मृतियाँ मेरे मनमें ताजा हो आईं।[2] अपने दाहिनी ओर श्री हेनरी सॉल्टको देखकर मैं विशेष रूपसे सम्मानित अनुभव करता हूँ। श्री सॉल्टकी पुस्तक 'ए प्ली फॉर वेजिटेरियनिज्म' (शाकाहारकी हिमायत)से ही मैं यह समझ सका कि अपनी वंशानुगत आदत तथा अपनी माँके द्वारा कराई गई प्रतिज्ञाके पालनकी बातको अलग रख दूँ तो भी मेरे लिए शाकाहार क्यों ठीक है। उनकी पुस्तकसे मैंने जाना कि शाकाहारियोंका यह नैतिक कर्त्तव्य क्यों है कि वे-

१. ये पहले भारत सरकारके अधिकारी थे, और उसके बाद भरतपुरके नाबालिग महाराजाके संरक्षक नियुक्त हुए।

२. देखिए खण्ड १।

उसी सृष्टिके प्राणियोका मास खाकर न जिये जिस सृष्टिके वे स्वयं भी अंग है। इसलिए सभामे श्री सॉल्टको देखकर मुझे और भी प्रसन्नता हो रही है।

मै शाकाहारके अपने विभिन्न अनुभव बतानेमें आपका समय नही लेना चाहता, और न उस भारी कठिनाईके वारेमे ही कुछ कहना चाहता हूँ जिसका सामना मुझे पक्का शाकाहारी बने रहनेके लिए इसी लन्दनमें करना पडा था। इस सबके बजाय, मेरे मनमे शाकाहारके सम्बन्धमे जो विचार बने है, उन्हीमे से कुछका जिक्र मै आपके सामने करना चाहता हूँ। आजसे चालीस वर्ष पूर्व मै शाकाहारियोके साथ खूब मिला-जुला करता था। उन दिनो लन्दनका शायद ही कोई ऐसा निरामिष उपाहारगृह बचा हो जहाँ मै न गया होऊँ। कुछ तो उत्सुकतावश और कुछ लन्दनमे निरामिष उपाहारगृहोकी सम्भावनाओका अध्ययन करनेके लिए मैने आवश्यक तौरपर उनमे से एक-एकको देखना तय किया। इसलिए स्वभावत मै बहुत-से निरामिषाहारियोके सम्पर्कमे आया। खानेकी मेजोपर मैने देखा कि बातचीत घूम-फिरकर आहार और रोगो पर ही आ जाती थी। मैने यह भी पाया कि निरामिषाहार पर आरूढ रहनेको प्रयत्नशील निरामिपाहारी लोगोको स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अपने व्रतपर डटे रहना कठिन लग रहा था। मुझे नही मालूम कि आजकल आपमे ऐसी चर्चाएँ होती है या नही, लेकिन उन दिनो मै स्वय निरामिषाहारियोके बीच और निरामिषाहारियो तथा सामिपाहारियोके बीच चलनेवाली ऐसी चर्चाओमे अकसर शामिल हुआ करता था। मुझे डॉ० डेन्समोर तथा स्वर्गीय डॉ० टी० आर० एलिन्सनके बीच हुई ऐसी ही एक चर्चा स्मरण हो आती है। उन दिनो निरामिषाहारियोको केवल आहार और रोगपर ही बातचीत करनेकी आदत थी। मुझे लगता है कि यह तो कोई काम करनेका बहुत खराब तरीका है। मै यह भी देखता हूँ कि जो किसी रोगसे रुग्ण होनेके कारण — अर्थात् विशुद्ध रूपसे स्वास्थ्यके खयालसे — निरामिपाहारी बनते है, उन्हीमे ज्यादातर लोग ऐसे होते है जो पीछे हट जाते है। इससे मैने यह समझा कि पक्का निरामिषाहारी रहनेके लिए आदमीके पास नैतिक आधार अवश्य होना चाहिए।

सत्य-शोधके प्रयत्नमे मेरे लिए यह बहुत बडी खोज थी। अपने प्रयोगोके दौरान कम उम्रमे ही मैने यह जान लिया कि विकास-पथकी एकके-बाद-एक मजिल तय करते जानेमे स्वार्थका आधार सहायक नही हो सकता। इसके लिए कोई उच्च उद्देश्य आवश्यक है। मैने यह भी पाया कि स्वास्थ्यपर कोई निरामिषाहारियोका ही इजारा नही है। मैने ऐसे बहुत-से लोग देखे जिनका निरामिषाहार या सामिषाहार किसी पर कोई आग्रह नहीं था। सामिषाहारियोका स्वास्थ्य मैने आम तौरपर अच्छा देखा है। मैने यह भी देखा कि कई निरामिषाहारियोके लिए निरामिपाहारी रह पाना मुश्किल पड रहा था, क्योकि उन्होने भोजनको ही अपना भगवान् बना लिया था और वे ऐसा सोचते थे कि निरामिषाहारी बन जानेके बाद तो वे चाहे जितना मसूर, सेम और पनीर खा सकते है। कहनेकी जरूरत नही कि ऐसे लोग अपना स्वास्थ्य ठीक नही रख पाते थे। इस प्रकार जाँच-पडताल करते हुए मै इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि आदमीको कम खाना चाहिए और यदा-कदा उपवास भी करना

चाहिए। कोई भी स्त्री या पुरुष कम या जितनेकी शरीरको आवश्यकता हो सिर्फ उतना ही नहीं खाता। हम बडी आसानीसे जीभके लालचमें फँस जाते है, और इसलिए जब कोई चीज सुस्वादु लगती है तो कौर-दो कौर ज्यादा खा लेनेमें हिचकते नहीं हैं। लेकिन, इस हालतमे आप स्वास्थ्य-रक्षा नहीं कर सकते। इसलिए मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि आप चाहे कुछ भी खायें, स्वास्थ्य-रक्षा करनेके लिए यह आवश्यक है कि आप अपने आहारकी मात्रामें और जितनी बार आप खाते है, उसमें कमी कर दे। सयमसे काम लीजिए, गलती ही करनी हो तो ज्यादा खानेकी नहीं, बल्कि कम खानेकी गलती कीजिए। मैं जब मित्रोंको अपने साथ खानेको बुलाता हूँ तो मैं, जिस चीजकी उनको जरूरत होती है, उसके अलावा और कुछ भी लेनेका आग्रह उनसे नहीं करता। इसके विपरीत, मैं उनसे कहता हूँ कि जो चीज न खाना चाहे, मत खाइए।

मैं जो बात आपके ध्यानमे लाना चाहता हूँ वह यह है कि अगर निरामिपाहारी लोग दूसरोंको भी निरामिपाहारी बनाना चाहते है तो उन्हें सहिष्णुतासे काम लेनेकी जरूरत है। तनिक विनयसे काम लीजिए। जो लोग हमसे सहमत न हों, हमे उनकी नैतिक भावनाको जगाना चाहिए। यदि कोई निरामिपाहारी बीमार हो जाता है और डाक्टर उसे गोमासका रसा (बीफ-टी) लेनेकी सलाह देता है तो भी उसे लेने पर मैं उसको निरामिपाहारी नहीं मानूँगा। निरामिपाहारी इससे कहीं अधिक ठोस तत्त्वोंका बना होता है। क्यों? इसलिए कि निरामिपाहार शरीरके विकास-निखारके लिए नहीं, बल्कि आत्माकी उन्नतिके लिए है। मनुष्य केवल हाड-मासका पुतला ही तो नहीं है। हमें चिन्ता तो मनुष्यकी आत्माकी है। इसलिए निरामिपाहारियोंके पास इस सिद्धान्तका नैतिक आधार होना चाहिए कि मनुष्य मासाहारीके रूपमें नहीं जन्मा है, बल्कि उसका जन्म तो धरतीसे पैदा होनेवाले फल-मूलपर जीनेके लिए हुआ है। मैं जानता हूँ कि गलतियाँ तो हम सबसे होगी ही। यदि मुझसे बनता तो मैं दूध छोड देता, लेकिन बनता ही नहीं। यह प्रयोग मैंने अनेक बार किया है। मगर एक बार सख्त बीमार हो जाने पर अपनी खोई हुई शक्ति मैं तब तक प्राप्त नहीं कर सका जबतक कि फिर दूध लेना शुरू न कर दिया। यह मेरे जीवनका एक बहुत ही दुःखद प्रकरण रहा है। लेकिन मेरे निरामिपाहारका आधार शारीरिक नहीं, बल्कि नैतिक रहा है। यदि कोई चिकित्साशास्त्रकी दृष्टिसे भी ऐसा कहे कि आप गोमासका रसा अथवा बकरेका मास नहीं लेंगे तो जीवित नहीं रह पायेंगे तो उस हालतमें मैं मरना ही पसन्द करूँगा। यही मेरे निरामिपाहारका आधार है। यदि अपनेको निरामिपाहारी कहनेवाले हम सभी लोगोंके इस व्रतका आधार यही हो जाये तो यह मेरे लिए बहुत खुशीकी बात होगी। ऐसे हजारो मासाहारी थे जिन्होंने मासाहार छोड दिया। यदा-कदा अपने सगे-सम्बन्धियोको नाराज करनेका खतरा उठाकर भी यदि हम अपने जीवनमें वैसा परिवर्तन करे, समाजमें प्रचलित रीति-रिवाजोंसे भिन्न रीति-रिवाजोंको अपनायें तो हमारे पास उसका कोई सुनिश्चित कारण होना चाहिए। सारी दुनियाके लिए भी आपको किसी नैतिक सिद्धान्तका त्याग

नही करना चाहिए। इसलिए निरामिषाहारी मण्डल अथवा निरामिषाहारके सिद्धान्तकी घोषणाका केवल नैतिक आधार ही है और होना चाहिए। मैने घूम-घूमकर दुनियाको खूब देखा है, मगर जो-कुछ देखा है, उसके आधारपर मै यह नही कह सकता कि सामान्यतया निरामिषाहारियोका स्वास्थ्य सामिषाहारियोकी अपेक्षा कोई बहुत ज्यादा अच्छा होता है। मै ऐसे देशका निवासी हूँ जो अपनी आदत अथवा आवश्यकताके कारण मुख्यत निरामिषाहारी है। मगर अपने यहाँके अनुभवोके आधारपर मै यह नही कह सकता कि निरामिषाहारसे आदमीमे सहनेकी ज्यादा शक्ति, अधिक साहस अथवा बहुत अधिक आरोग्य आ जाता है। कारण, यह तो बिलकुल विशिष्ट ढगकी और व्यक्तिगत चीज है। निरामिषाहारके बाद भी आरोग्यके सभी नियमोके ध्यान-पूर्वक पालनकी जरूरत होती है।

इसलिए मै समझता हूँ कि निरामिषाहारियोको निरामिषाहारके शारीरिक परिणामोपर जोर नही देना चाहिए, बल्कि नैतिक परिणामोकी शोध करनी चाहिए। जहाँ हम अबतक यह नही भूल पाये है कि अनेक दृष्टियोसे हममे और पशुओमे समानता है, वहाँ इस बातको हम काफी महसूस नही करते कि कुछ ऐसी भी चीजे है जो हमे पशुओसे भिन्न कोटिमे बैठाती है। बेशक, पशुओमे भी गाय, बैल आदि निरामिषाहारी है, बल्कि हमसे अच्छे निरामिषाहारी है, लेकिन जिस कारणसे ये पशु निरामिषाहारी है, उससे कोई बहुत ऊँची बात है जिसके कारण निरामिषाहारी बनना हमारा धर्म हो जाता है। इसलिए मैने सोचा कि आपके सामने कुछ-एक मिनट बोलनेका जो सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, उसका उपयोग मै, बस, निरामिषाहारका नैतिक आधार समझानेके लिए ही करूँ। और मै अपने तथा हजारो मित्रो और साथियोके अनुभवोके आधारपर यह कहूँगा कि जहाँतक निरामिषाहारका सम्बन्ध है, उन लोगोने अपने इस व्रतपर आरूढ रहनेके लिए जो नैतिक आधार अपनाया है, उससे उन्हे सन्तोष प्राप्त होता है।

और अन्तमे मै आप सबको इस बातके लिए धन्यवाद देता हूँ कि आप यहाँ आये और आपने मुझे निरामिषाहारियोसे रूबरू मिलनेका मौका दिया। मै यह नही कह सकता कि आजसे बयालीस वर्ष पूर्व आपसे मिला करता था। मेरा खयाल है, अब लन्दनके निरामिषाहारी मण्डलमे नये-नये लोग आ गये है। ऐसे बहुत कम लोग है जो श्री सॉल्टकी तरह यह दावा कर सके कि इस मण्डलसे उनका सम्बन्ध चालीस वर्षोसे अधिक पुराना है। और अब मै चाहूँगा कि अगर आप कोई सवाल पूछना चाहते हो तो पूछिए, क्योकि अभी कुछ मिनट और मै आपके बीच हूँ।

इसपर श्री गांधीसे यह पूछा गया कि उन्होंने अपने दैनिक आहारमें केवल पाँच ही चीजें क्यो शामिल रखी हैं। उत्तरमें उन्होने कहा :

इसका निरामिषाहारसे कोई सम्बन्ध नही है। . . . इसका कारण कुछ और है। बात यह थी कि लोग मुझे बडा लाड-प्यार देते थे। तब मेरी कुख्याति भी कुछ ऐसी थी कि जब मित्र लोग निमन्त्रित करते तो मेरे सामने तरह-तरहके व्यजन परोस देते थे। मै उनसे कहता था कि मै तो सेवा करने आया हूँ और मुझसे

पूछें तो कहूँगा कि यदि मै इस तरहके लाड-प्यारको स्वीकार करूँगा तो यह मेरे लिए तिल-तिल कर मरनेकी वात होगी। सो अपने आहारमें केवल पाँच ही वस्तुओको शामिल रखकर मैंने दोहरा उद्देश्य साधा। और मैंने अपने खानेका धधा सूर्यास्तसे पूर्व ही समाप्त कर देनेका नियम वना लिया है। इस तरह मैंने अपनेको कई मुसीवतोसे वचा लिया है। स्वास्थ्यपर इस चीजके प्रभावके सम्वन्धमें कई खोजें हुई हैं। आहार-शास्त्रियोका कहना है कि हमारी खोजोके आधारपर हम उत्तरोत्तर इसी निष्कर्षपर पहुँच रहे है कि आहार सादा होना चाहिए और अगर कोई स्वस्थ रहना चाहता है तो उसे एक वारमें एक ही चीज खानी चाहिए तथा कई वस्तुओके हानिकर मिश्रणसे वचना चाहिए। अत मै आहारमे ज्यादा चीजोको शामिल करनेके वजाय पहलेसे जितनी चीजें शामिल हो, उनमे भी कमी करते जाना अधिक पसन्द करता हूँ, क्योंकि इस विषयपर हर डाक्टरकी एक अलग ही राय है।

इसके अलावा, मै यह समझता हूँ कि अपने आहारको केवल पाँच वस्तुओ तक सीमित रखना मेरे लिए नैतिक तथा भौतिक, दोनो दृष्टियोसे लाभदायक सिद्ध हुआ है — भौतिक दृष्टिसे इसलिए कि भारत-जैसे गरीव देशमें वकरीका दूध हमेशा नही मिल सकता और फल तथा अगूर पैदा करना भी मुश्किल है। फिर, मै गरीवोसे मिलने-जुलनेवाला आदमी ठहरा। अगर मै उनसे वाहरसे मँगाये डिव्वावन्द अगूरकी आशा करूँ तो वे मुझे फौरन अपने यहाँसे भगा देगे। इस प्रकार अपने आहारमे केवल पाँच ही वस्तुएँ शामिल रखकर मै मितव्ययिताके नियमका भी पालन कर रहा हूँ।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २०-२-१९४९

२१८. पत्र : जे० आर० ग्लॉर्नी बॉल्टनको

८८, नाट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू०-१
२१ नवम्बर, १९३१

प्रिय श्री वॉल्टन,[1]

आपका पत्र वहुत ही हृदयस्पर्शी था। आपका पत्र मैंने टाइम्समें पहले ही देख लिया था और मुझे लगा था कि यही चीज चाहिए थी। जहाँतक मै समझ सकता हूँ, इस परिषद्से कुछ निकलनेवाला नही है। इसलिए सघर्ष जव फिर शुरू होगा तो वहुत-से अग्रेज स्त्री-पुरुषोंके सामने यह प्रश्न आयेगा कि क्या वे अपने देशकी तुलनामे औचित्यको प्राथमिकता दे सकते है। मै अभी भी किसी समझौते

१. वॉल्टन दो वार भारत आये थे और वादमें, १९३४ में, उन्होंने *द ट्रैजडी ऑफ गांधी* नामक पुस्तक लिखी थी।

पर पहुँचने और इस तरह टकरावको, जो पिछले सालसे सम्भवत. अधिक कटु ही रहेगा, रोकनेकी जी-जानसे कोशिश कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री० जे० आर० ग्लॉर्नी बॉल्टन
९ किंग्स बेच वॉक
ई० सी०-४

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३२९) से।

२१९. पत्र : हेनरी लॉरेंसको

८८, नाइट्सब्रिज
एस० डब्ल्यू०-१
२१ नवम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

बोलकर लिखवाये गये इस पत्रके लिए क्षमा करे। जो मिथ्या धारणा पैदा हो गई है,[1] उसके लिए मुझे बहुत ही खेद है। दलित वर्गोके लिए मुझे किसी पत्रकी आवश्यकता नही थी। दलित वर्गोके प्रश्नको मै दूसरे सामान्य प्रश्नोसे अलग रखना चाहता हूँ। वह खुद अपने आधारपर खडा है। पर जब श्री डेविसने उनकी चर्चा चलाई तो मुझे वहसपर आपत्ति नही थी। मैं एक ऐसा छोटेसे-छोटा पत्र चाहता था, जिसमे अग्रेजोकी कार्रवाई की, अव्वल तो, अन्य अल्पसख्यकोके साथ गठजोड़ करने और, दूसरे पृथक् निर्वाचक-मण्डल और विशेष आरक्षणकी माँग करनेके लिए निन्दा हो। इस सिलसिलेमे मैं बालिग मताधिकार तकको बीचमे लाना नही चाहता था, क्योकि मेरे विचारसे बालिग मताधिकार किसी भी नगण्य अल्पसख्य समुदायकी सहायता नही करता। अग्रेजोके बारेमे मेरा तर्क यह था कि उन्हे समान निर्वाचक-मण्डलको अपील करके ही विधानमण्डलोमे पहुँचने और सेवाके अधिकारसे ही सफल होनेकी आशा करनी चाहिए। लेकिन श्री डेविसका खयाल था कि बालिग मताधिकारकी पृष्ठभूमिके बिना कोई भी इस सुझावपर ध्यान नही देगा। मुझे इसपर

१. इसी तारीखके एक पत्रमें सर हेनरी लॉरेंसने कहा था: "... डेविसने फोनपर मुझे आपका सन्देश दिया, जिसमें मुझसे, आपकी अपीलके समर्थनके रूपमें, बालिग मताधिकारकी वकालत करते हुए टाइम्सको एक पत्र लिखनेके लिए कहा गया था। इस तरहका पत्र मैंने तैयार कर लिया। ... श्री डेविसने तब मुझे बताया कि आप मेरे पत्रके समर्थनमें एक पत्र लिखेंगे निदान मैं दोनों पत्र टाइम्ससे स्वीकृत करानेके लिए लन्दन पहुँचा। अब वे मुझसे कहते हैं कि जबतक मैं पृथक् निर्वाचक-मण्डलके समर्थक यूरोपीयोकी निन्दा न करूँ, आप पत्र लिखनेको तैयार नहीं हैं। ... आपके मनमें क्या है, क्या आप ठीक-ठीक बतानेकी कृपा करेंगे? ..."

कोई आपत्ति नही हो सकती थी। परन्तु स्वय मेरे लिए किसी ऐसे पत्रके बारेमें कुछ लिखना, जिसमे अग्रेजोकी कार्रवाईका उल्लेख न हो, सम्भव न था। उस हालतमे भी मुझे बहुत सतर्क रहना पडता, जिसका सीधा-सादा कारण यह है कि सम्मेलनका एक प्रतिनिधि होते हुए मै समाचार-पत्रोके प्रचारमे भाग लेना नही चाहता हूँ। जितना सम्भव है, मै इससे बचा ही हूँ। मुझे जो-कुछ कहना होता है, मै गोलमेज परिषद्मे कहता हूँ। यदि आप अन्य अल्पसख्यकोके साथ अग्रेजोके गठजोडके बारेमे कुछ कह नही सकते, या यदि आप उस गठजोडका समर्थन करते है, तो मुझे कुछ नही कहना है, और उस हालतमे यदि आपको कोई मत व्यक्त करना ही पडे, तो मै आपसे उस गठजोडके समर्थनके सिवा और कोई मत व्यक्त करनेकी आशा नही कर सकता। पता नही, मै अपनी स्थिति ठीकसे स्पष्ट कर पाया हूँ या नही।

हृदयसे आपका,

सर हेनरी लॉरेंस
बोअर्स हिल्स
ऑक्सफोर्ड

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३३२) से।

२२०. प्रश्नोत्तर[1]

लन्दन
[२२ नवम्बर, १९३१]

प्र० : क्या परिषद्की असफलता निश्चित है?

उ० . ऐसा कहना अकृतज्ञता होगी। पर मुझे सफलताका बहुत ही कम आधार दीखता है।

प्र० : सरकारने जब विचार-विमर्श होने दिया है, तो आपके खयालमें क्या वह अब कुछ नहीं करेगी? क्या सरकारमें परिवर्तनसे कुछ अन्तर पड़ेगा?

उ० मुझे उनसे यह अपेक्षा थी कि वह निश्चय ही बेहतर ढगसे काम करेगी, परन्तु उसने सत्ता हस्तान्तरित करनेका इरादा किया है या नही, मुझे नही मालूम। जहाँतक दो पार्टियोका सम्बन्ध है, मेरा खयाल है, भारतके लिए यह केवल नाम-मात्रका अन्तर है। वस्तुत, मुझे इस बातकी खुशी ही है कि मेरा एक बहुत भारी कजर्वेटिव बहुसख्यासे वास्ता पड रहा है, क्योकि मै यहाँसे कोई चीज चुराकर ले जाना नही चाहता हूँ। मै कोई बडी और अच्छी चीज चाहता हूँ, जिसे गरीब लोग

१. महादेव देसाईके "लन्डन लेटर" (लन्दनका पत्र) से उद्धृत। देसाई कहते है कि ये प्रश्न एक प्रमुख नेताके पुत्र द्वारा रखे गये थे। २५ नवम्बरके हिन्दुस्तान टाइम्समें रैंडॉल्फ चर्चिलसे गांधीजी की २२ नवम्बरकी भेंटकी एक सक्षिप्त रिपोर्ट छपी थी। चर्चिल तब हर्स्ट प्रेसके प्रतिनिधि थे।

आसानीसे देख सके और समझ सके। इसलिए यह बहुत ही अच्छा है कि मुझे एक शक्तिशाली पार्टीसे लडना है और जो मै चाहता हूँ वह एक शक्तिशाली पार्टीसे जीतना है। मै जो चाहता हूँ वह टिकाऊ चीज है। मै नाता तोडना नही, बल्कि बदलना चाहता हूँ। भारत और इग्लैंडका सम्बन्ध, बराबरकी साझेदारीका आधार, केवल तभी रह सकता है जब दोनोमे से हर-एक पक्ष दुर्बलताकी भावनासे नही, बल्कि शक्तिकी भावनासे समान कार्य करे। इसलिए मुझे यह अनुभूति प्रिय होगी कि हम कजर्वेटिव शासनके दौरान उस दलके अनुयायियोको यह विश्वास दिला सके कि हम न तो अयोग्य विरोधी है और न अयोग्य साझेदार ही हैं।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-१२-१९३१

२२१. पत्र : सैम्युअल होरको

८८, नाइट्सब्रिज
लन्दन, एस० डब्ल्यू-१
२४ नवम्बर, १९३१

आज प्रात मुझे काग्रेसके प्रधान सरदार वल्लभभाई पटेलका एक तार मिला, जो इस पत्रके साथ सलग्न है। उसमे जो-कुछ कहा गया है, वह अपने-आपमे इतना स्पष्ट है कि उसकी अतिरिक्त व्याख्याकी जरूरत नही है। तार शीघ्र समझमे आ जाये, इसलिए मैं नीचे उसे फैलाये दे रहा हूँ :

> हिजली और चटगाँवमें जो अन्याय हुआ उसे दूर करनेके लिए अभी तक कुछ नही हुआ है। ऑर्डिनेंसके अधीन अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियाँ हो रही हैं। नजरबन्दोंकी संख्या हजारतक पहुँचनेवाली है। बीसियो व्यक्ति रोज गिरफ्तार किये जाते हैं, जिनमें बहुत-से कांग्रेसी कार्यकर्त्ता भी होते हैं। हिजली और चटगाँवके अत्याचारोका विरोध करनेपर कितने ही राजद्रोहके मुकदमे चला दिये गये हैं। हाल ही में ढाकामें छोटे पैमानेपर चटगाँवकी पुनरावृत्ति हुई है, जहाँ पुलिसने निर्दोष स्त्री-पुरुषो और बच्चोको खुल्लम-खुल्ला अपमानित किया और उनके साथ दुर्व्यवहार किया। बंगालके यूरोपीय और अधिक दमनकी लगातार माँग कर रहे हैं। आम विश्वास यह है कि सरकार इसपर सहमत हो गई है। चारो ओर रोष फैला है, जो नौजवानोको दुःसाहसिकताकी ओर धकेल रहा है। संयुक्त प्रान्तकी स्थिति तो आपको मालूम ही है। आन्ध्रमें कई कांग्रेसी नेता सुरक्षा या राजद्रोहकी धाराओके अधीन गिरफ्तार कर लिये गये हैं। सरकारकी अपनी ही समिति और विरोधी विधानमण्डलकी सर्वसम्मत रायके बावजूद, कृष्णा और गोदावरी जिलोमें लगानकी जो वृद्धि हुई है, यह कार्रवाई

उसके खिलाफ उठ रहे आन्दोलनको रोकनेके लिए की गई है। वहाँकी स्थिति गम्भीर होती जा रही है। इमाम साहबको रोज बुखार हो जाता है, थूकमें खून नहीं आता अतः अभी चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

अन्तिम वाक्य एक मित्रकी बीमारीके बारेमें है। क्या मैं इस तारको प्रकाशित कर सकता हूँ?

परम माननीय सर सैम्युअल होर
इंडिया आफिस, एस० डब्ल्यू-१

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३३९)से।

२२२. भेंट: 'इको डी' पेरिसके प्रतिनिधिको

[२४ नवम्बर, १९३१][1]

पूर्ण स्वराज्यसे कम किसी चीजको स्वीकार न करनेपर जोर देते हुए, महात्मा गांधीने कहा कि यदि गोलमेज परिषद् विफल रही तो वे पुनः संघर्ष आरम्भ कर देंगे। वे मानते हैं कि भले ही एकके-बाद-एक सभी नेता गिरफ्तार कर लिये जायें, परन्तु राष्ट्रीय आन्दोलन जारी रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २६-११-१९३१

२२३. मिर्जा इस्माइलको लिखा पुर्जा[2]

[२५ नवम्बर, १९३१][3]

क्या आप आज रात ९-३०का समय रख सकते हैं?

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१८८-८)से।

१. यहाँ तारीख अमृतबाजार पत्रिका, २५-११-१९३१ के अनुसार दी गई है। भेंटकी रिपोर्ट इस पत्रमें भी छपी थी।

२. यह मिर्जा इस्माइलकी इस जिज्ञासाके उत्तरमें था कि वे और डॉ० अम्बेडकर गांधीजी से किस समय मिल सकते हैं।

३. "दैनन्दिनी, १९३१" के अनुसार, गांधीजी मिर्जा इस्माइल और अम्बेडकरसे इसी तारीखको मिले थे।

२२४. भेंट : 'न्यू लीडर' के प्रतिनिधिको

लन्दन

[२५ नवम्बर, १९३१][1]

प्र० : परिषद् यदि भंग हो जाती है तो भारतमें क्या-कुछ हो सकता है, क्या आप बता सकते हैं ?

उ० : विस्तारसे तो नही। भविष्य जैसा मुझे अब लग रहा है, उसके अनुसार तो झगडा अपने तीव्रतम रूपमे फिर शुरू होगा।

प्र० : लेकिन आपके खयालसे क्या प्रतिरोधकी मनोवृत्तिको आप फिर जगा सकेंगे? कोई आन्दोलन जब बन्द कर दिया जाता है, तो उसे फिर चेताना क्या सदा अधिक कठिन नहीं होता ?

उ० : मुझे इस विषयमे किसी तरहका कोई सन्देह नही है। जिस आन्दोलनको मैंने बन्द किया उसे फिर चेतानेमे मुझे कभी कठिनाई नही हुई। पर मुझे अपने भीतर शक्ति महसूस होनी चाहिए। १९२२ मे हमने जब बारडोलीमे सघर्ष खत्म किया[2] तो मेरे मित्र घबरा रहे थे, और १९३१ मे हमने सघर्ष फिर चेता दिया। पर वह बिलकुल ठीक समय था। और उसका स्थगित करना अच्छा ही सिद्ध हुआ। बीचके सालोमे हम बेकार नही बैठे रहे। लोग हमारे विचारोको हृदयगम कर रहे थे। हमारा रचनात्मक कार्य चालू रहा और जनसाधारणपर, जिसने आन्दोलनके अर्थ और उसकी भावनाको आत्मसात कर लिया, इसका असर पडा और बहुत ही शानदार प्रतिक्रिया हुई।

प्र० : मुझे मालूम हुआ है, जवाहरलाल नेहरू यह कह रहे हैं कि लोगोंको रोके रखना अब मुश्किल है।

उ० : वह सब बहुत अच्छा है। मै यथासम्भव अधिकसे-अधिक स्पष्ट रूपसे यह कह सकता हूँ कि यदि लोगोमे स्वत.स्फूर्त भावना नही है तो मै सघर्ष शुरू करना नही चाहूँगा। परन्तु यहाँ इतनी दूर भी मै यह महसूस कर रहा हूँ कि लोग बिलकुल तैयार है। वे केवल सकेतकी प्रतीक्षामे है।

प्र० : क्या किसानों और कस्बोंके लोगोके बारेमें भी यही बात है ?

उ० : हाँ, मुझे किसानोपर ही अधिकाधिक निर्भर रहना है।

प्र० : क्या वे आन्दोलनमें मुख्यतया आर्थिक या राजनीतिक उद्देश्यसे भाग लेते हैं ?

१. तारीख हिन्दुस्तान टाइम्स, २८-११-१९३१ से ली गई है, जिसमें इस भेंटकी सक्षिप्त रिपोर्ट छपी थी। बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-११-१९३१ में भी इस भेंटकी रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी।

२. देखिए खण्ड २२।

उ० : उनकी आर्थिक कठिनाइयोंने उन्हें राजनीतिक परिस्थितिकी समझ दे दी है। वे यह समझते हैं कि जबतक वर्त्तमान राजनीतिक व्यवस्था आमूल नष्ट नहीं हो जाती, उनकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी नहीं। भारतमें सरकार धनिकोंकी रक्षक बन गई है। सरकारकी ओटमें धनिकोंने यह षडयन्त्र कर लिया लगता है कि गरीबोंसे जहाँतक उनका बस चले, एक-एक पैसा छीन लिया जाये। करोंका जो निर्मम बोझ किसानोंको वहन करना पड़ रहा है वह जबतक हटेगा नहीं, उनकी स्थिति सुधर नहीं सकती।

प्र० : इस सालके शुरूमें दक्षिण भारत संघर्षमें कमजोर लगता था। आपके खयालसे क्या इस बार आप दक्षिण भारतपर भरोसा कर सकते हैं?

उ० : दक्षिण भारतने पिछले संघर्षमें दृढ़तासे अपना योग दिया था, और सविनय अवज्ञा आन्दोलन जब स्थगित किया गया तब वह शानदार ढंगसे आगे आ रहा था। संघर्ष जब फिर छिड़ेगा तो वह फिर आगे आयेगा। दक्षिण भारत इसी तरहका है। वह धीरे-धीरे बढ़ता है, पर वह सुदृढ़ है। दक्षिणपर मेरा विश्वास पहले भी टूटा नहीं था। खादीके निर्माणमें दक्षिणने सर्वश्रेष्ठ काम किया है, और अछूतोंके बीच उसका काम ठोस रहा है।... परन्तु इस बार कौन-सा प्रान्त सर्व-श्रेष्ठ रहेगा, मैं कह नहीं सकता। वैसे सभी प्रान्तोंपर मेरा विश्वास है।

प्र० : क्या आपको यह आशंका है कि भारतकी अधीरता आपको आन्दोलनको अहिंसात्मक मार्गोंपर कायम नहीं रखने देगी?

उ० : नहीं, मैं ऐसा नहीं सोचता। यदि लोग आह्वानका उत्तर देते रहते हैं और आन्दोलनका जनरूप कायम रहता है, तो हिंसाका उसमें कोई स्थान नहीं होगा।

प्र० : मैं आपको किसी अटपटी स्थितिमें डालना नहीं चाहता। पर मैं यह माने बिना नहीं रह सकता कि गोलमेज परिषद्के कुछ मुसलमानोंको भारतके स्वराज्यसे अधिक अपने साम्प्रदायिक दावोंकी चिन्ता रही है।

उ० : मैं वैसा नहीं कहूँगा। मैं यह कहूँगा कि उन्हें मुख्य चिन्ता उस चीजकी रक्षाकी है जिसे वे भारतमें इस्लामके अधिकार समझते हैं। उनके मनमें उसका निश्चय ही बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। परन्तु यही बात हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखों, तीनों वर्गोंके साम्प्रदायिक दावोंके बारेमें कहनी पड़ती है।

प्र० : इस सम्मेलनके साम्प्रदायिक 'प्रतिनिधियों'को आप वस्तुतः प्रतिनिधि मानते हैं, या आप यह कहते हैं कि उनके सम्प्रदायोंका अधिकतर भाग कांग्रेसके पीछे है?

उ० : निःसन्देह वे कांग्रेसके पीछे हैं। अन्यथा कांग्रेस अपना काम कर ही नहीं सकती थी। हमें सिखों और मुसलमानों, दोनोंका हार्दिक समर्थन मिला है। कांग्रेस कार्यकारिणीमें पाँच मुसलमान हैं। और वे नगण्य नहीं हैं। वे वस्तुतः प्रतिनिधि मुस्लिम नेता हैं।

प्र० : आपका क्या यह कहना है कि राष्ट्रीय मुस्लिम दल (जो कांग्रेसका समर्थक है) इस परिषद्के अधिकांश मुस्लिम 'नेताओं'से अधिक प्रातिनिधिक हैं?

उ० . बेशक। डॉ० अन्सारी, जो हमारी कार्यकारिणीमे है, हमेशा यही दावा करते है। शायद यह उतना सच न हो जितना कि डॉ० अन्सारी सोचते है, पर यह रोज ज्यादा सच होता जा रहा है। तरुण पीढीके बारेमे, जो सकीर्णतासे हट रही है, यह बात नि सदेह सच है।

प्र० : तरुण पीढ़ीकी यह प्रवृत्ति केवल संकीर्णताके विरुद्ध विद्रोह है या स्वयं धर्मके ही विरुद्ध विद्रोह है?

उ० यह कहना कठिन है। वे सशयवादी और नास्तिक है यह मै नही कह सकता। मै केवल यही कह सकता हूँ कि उनमे सहनशीलताकी भावना विकसित हुई है। यह इस्लामके प्रति श्रद्धाकी कमी और धार्मिक प्रवृत्तिके क्षयका द्योतक है या नही, मुझे नही मालूम।

प्र० : केन्द्रमें उत्तरदायी सरकारके प्रश्नपर यदि गोलमेज परिषद् भंग हो जाती है, तो आपके खयालमें क्या संयुक्त विरोधकी, जैसा कि साइमन कमिशनके मामलेमें हुआ था, पुनरावृत्ति होगी?

उ० . हाँ, मेरा यही खयाल है। 'लिबरल' और 'मॉडरेट' सीधी कार्रवाईके आन्दोलनमे भाग नही लेगे, पर उनकी राय पूरी तरह काग्रेसकी ओर होगी।

प्र० : प्रान्तोंमें स्वशासनके आधारपर ब्रिटिश सरकारके साथ समझौता होनेकी क्या आपको कोई सम्भावना दिखाई देती है?

उ० . नही, मैने एक फार्मूला सुझाया था पर ब्रिटिश सरकार उसे स्वीकार नही करेगी। यदि प्रान्तोको तुरन्त वास्तविक नियन्त्रण दे दिया जाये और यदि शीघ्र केन्द्रीय उत्तरदायित्वकी पूरी गारटी दे दी जाये तो समझौतेकी सम्भावना हो सकती है। मै समयके मामलेमे तो अन्तरालको स्वीकार कर लूँगा, पर कानूनके मामले मे नही करूँगा। दोनो चीजोके बारेमे वही कानून होना चाहिए। केन्द्रीय उत्तर-दायित्वके बारेमे आश्वस्त हुए बिना, भारतीय राष्ट्रवादी प्रान्तीय स्वायत्त शासन पर दृष्टि भी नही डालेगे। उनका कहना है कि वे पूर्ण स्वाधीनताके लिए बहुत काल तक प्रतीक्षा करते रहे है, और कोई ऐसा समझौता स्वीकार करनेकी अपेक्षा, जो केन्द्रीय उत्तरदायित्व न देता हो, वे कुछ समय और प्रतीक्षा कर सकते है।

प्र० : श्री ब्रेल्सफोर्डके इस सुझावके बारेमें कि पूर्ण प्रान्तीय स्वायत्त शासनके साथ, केन्द्रीय सरकारके स्वरूपकी समस्याको सुलझानेके लिए, एक राष्ट्रीय संविधान सभाकी व्यवस्था हो, आपका क्या विचार है?

उ० : साविधिक व्यवस्थाके अधीन उत्तरदायी सरकारकी केवल गारटीसे काम चल जायेगा। हमे उत्तरदायी सरकार मिलनी ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १४-१२-१९३१

२२५. भाषण : संघ-संरचना समितिके समक्ष

लन्दन
२५ नवम्बर, १९३१

लॉर्ड चान्सलर महोदय,

आज हम जो चर्चा कर रहे है, उसका श्रेय श्री लीज-स्मिथको है, इसलिए मै उन्हे बधाई देता हूँ। और आपने इस चर्चाकी अनुमति दी, इसके लिए आपको भी बधाई देता हूँ। मै समझता हूँ, आजकी बहसके लिए पहल करके श्री लीज-स्मिथने आश्चर्यजनक आशावादिताका परिचय दिया है। इस दम तोडती परिषद्मे प्राण फूँकने के लिए वे किसी चिकित्सककी तरह आक्सीजन पम्प लेकर आगे आये है। मेरा मतलब यह नही है कि केन्द्रीय उत्तरदायित्वसे विहीन प्रान्तीय शासन दिये जानेकी अफवाह या आशकाके कारण हमारी यह परिषद् दम तोड रही है। लगभग इन कार्यवाहियोके आरम्भसे ही मै अपने विनीत ढगसे चेतावनीके शब्द कहता रहा हूँ, और परिस्थितिकी अवास्तविकताके बोधसे मेरा मन बहुत परेशान रहा है और मैने स्पष्ट शब्दोमे ऐसा कहा भी है। कल सर तेजबहादुर सप्रूको भी इस अवास्तविकताका बोध हुआ। वैसे मै जानता हूँ कि पिछले कई दिनोसे उन्हे इस चीजका बोध होता रहा है, और इस जानकारीका कारण यह है कि वे अपने अन्य मित्रो और — यदि मुझे उनके साथियोकी श्रेणीमे शामिल किया जा सके तो कहूँगा — साथियोके साथ मुझसे भी अपने मनकी बात कहते रहते है। उन्होने बहुत ऊँचे-ऊँचे सरकारी पदोपर काम किया है, सो प्रशासनिक मामलोके अपने सुदीर्घ अनुभवके आधारपर उन्होने हमे तथाकथित प्रान्तीय स्वशासनके खतरेके खिलाफ आगाह किया है। मुझे अपने किये पर प्राय पश्चात्ताप नही होता। उनके पास यह चेतावनी देनेका कारण था — और विशेष रूपसे मुझको लक्ष्य करके, क्योकि मैने इस देशके कई जिम्मेदार लोक-सेवी व्यक्तियोके साथ प्रान्तीय स्वशासनके प्रश्नपर बातचीत की थी और उनको इस बातका पता चल गया था। अतएव, उन्होने मुझे पूरी तरह आगाह कर दिया। लॉर्ड चान्सलर महोदय, यही कारण है कि उस दस्तावेजपर आप मेरे हस्ताक्षर नही देख रहे है जो आपके सामने रखा गया है। इसके बजाय मैने इसी ढगके उस कागज पर हस्ताक्षर किये जो प्रधान मन्त्रीके नाम लिखा गया था और आजसे कोई दस दिन पूर्व अखबारोको प्रकाशनार्थ भेजा गया था। उनसे मैने कहा था और यहाँ भी यही कहता हूँ कि वे और उनके बाद बोलनेवाले लोग तथा मै एक ही लक्ष्य तक अलग-अलग रास्तोसे पहुँचे है। जहाँ समझदारोको पैर रखते भी डर लगता है, वहाँ मूर्ख लोग बेखटके चले जाते है। प्रशासनका कोई वास्तविक अनुभव न होनेके कारण मुझे लगा कि जो प्रान्तीय स्वशासन दिया जा रहा है, वह यदि मेरी कल्पना का प्रान्तीय स्वशासन है तो क्यो न मै इस फलको हाथमे लेकर टटोलूं और देखूं

कि क्या यह सचमुच मेरे कामका है। मुझे अपनेसे भिन्न नीतिके अनुगामी मित्रोमे खुद उन्हीके मचपर जाकर मिलने और उनकी समस्याओको समझनेका शौक है। वहाँ मै यह पता लगानेकी भी कोशिश करता हूँ कि वे जो बात कह रहे है वह ऐसी तो नही है जो मुझे दूसरे रास्तेसे वही ले जायेगी जहाँ मै जाना चाहता हूँ। इसी भावनासे और इसी अर्थमे मैने मित्रोसे प्रान्तीय स्वशासनकी चर्चा की, लेकिन बातचीत करने पर मुझे यह समझते देर नही लगी कि जो प्रान्तीय स्वशासन उनके मनमे है, निश्चय ही वह मेरी कल्पनाका प्रान्तीय स्वशासन नही है। अतएव मैने अपने मित्रोसे यह भी कह दिया कि यदि वे मुझे अपने भरोसे छोड दें तो भी सब-कुछ ठीक-ठीक ही चलेगा। मैने साफ कह दिया कि प्रान्तीय स्वशासनकी अपनी मूर्खतापूर्ण कल्पनाके पीछे या देशके लिए कुछ प्राप्त करनेकी अधीरताके कारण मै अपने देशके हितोको गिरवी रखनेको तैयार नही हूँ। मै बहुत अनिच्छाके बावजूद हजारो मीलका फासला तय करके यहाँ आया हूँ और अपने मनमे कोई दुराव रखे बिना सरकार तथा परिषद्के साथ पूरे हृदयसे सहयोग करनेको आया हूँ। मैने मन, वचन और कर्मसे सहयोगकी इस भावनाका पालन किया है। सो इतना सब करनेके बाद अब मै जो चाहता हूँ वह यह कि अपने तई कुछ भी उठा न रखूँ। खतरनाक स्थलो पर भी पैर रखनेमे मै हिचकिचाया नही हूँ। इसीलिए मैने प्रान्तीय स्वशासनकी बात करने और मित्रोके साथ उसकी चर्चा करनेकी हिमाकत की है। लेकिन मै इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि आप या ब्रिटेनके मन्त्रिगण भारतको वह प्रान्तीय स्वशासन देनेकी बात नही सोच रहे है जो मेरी-जैसी मनोवृत्तिवाले लोगोको तुष्ट कर सके, जो कांग्रेसको सन्तुष्ट कर सके और उसे प्रान्तीय स्वशासनको कार्य रूप देने पर राजी कर सके — भले ही केन्द्रीय दायित्व दिये जानेमे अभी विलम्ब ही क्यो न हो।

आप लोगोका कुछ ज्यादा वक्त तो लूँगा, लेकिन मै अपना आशय स्पष्ट कर देना चाहूँगा, क्योकि इस प्रसगमे भी मै एक अलग ही ढगकी तर्क-पद्धतिसे काम ले रहा हूँ और इस बातके लिए बहुत उत्सुक हूँ कि मै जो-कुछ कह रहा हूँ, उसका कोई गलत अर्थ न लगाये। इसलिए अब यहाँ एक उदाहरण देता हूँ। उदाहरणके तौरपर मै बगालको लेना चाहता हूँ, क्योकि आज वह भारतका एक सबसे अशान्त प्रदेश है। मै जानता हूँ कि बगालमे एक आतकवादी विचारधारा सक्रिय है। अबतक तो शायद सभी समझ गये होगे कि किसी भी आतकवादी विचारधारासे मुझे किसी प्रकारकी सहानुभूति नही हो सकती। सदाकी भाँति आज भी मेरा दृढ विश्वास है कि आतकवाद किसी भी सुधारकके लिए सबसे बुरा तरीका है। और भारतके लिए तो वह खास तौरपर बहुत बुरा है, क्योकि भारतकी मिट्टी आतकवादी प्रवृत्तियोके फूलने-फलनेके अनुकूल नही है। मेरा निश्चित मत है कि जो भारतीय नौजवान उस चीजके लिए, जिसे वे एक सदुद्देश्य मानते है, अपने प्राणोकी बलि चढा रहे है वे वास्तवमें अपने प्राण व्यर्थ ही गँवा रहे है और वे देशको उस लक्ष्यकी ओर, जो मुझे आशा है, हम सबका समान लक्ष्य है, रच-मात्र भी आगे नही ले जा रहे है।

मै इन सभी वातोका कायल हूँ, लेकिन अव मान लीजिए कि आज वगालको प्रान्तीय स्वशासन प्राप्त होता तो उस दशामें वह क्या करता ? वह प्रत्येक नजर-बन्दको रिहा कर देता। वगाल — स्वशासित वगाल — आतकवादियोकी जानका गाहक बननेके बजाय प्रेमपूर्वक उनतक पहुँचनेकी कोशिश करता और उनका हृदय-परिवर्तन करनेका प्रयत्न करता। मै तो उनके पास पूरे विश्वाससे जाता और उन्हे उनकी वृत्तियोसे विमुख करके वंगालसे आतकवादको मिटा देता।

लेकिन जिस सत्यको मैं अपने अन्दर महसूस करता हूँ उसे समझानेके लिए मैं कुछ और कहूँगा। यदि वगाल स्वशासित होता तो वह स्वशासन ही आतकवादको वगालसे मिटा देता क्योकि ये आतकवादी मूढतावश ऐसा मानते है कि उनके कार्योसे स्वतन्त्रता जल्दीसे-जल्दी प्राप्त हो सकती है। जव वह स्वतन्त्रता प्राप्त हो जायेगी तो आतकवाद अपने-आप मिट जायेगा।

आज हजारकी संख्यामे ऐसे नौजवान है, जिनमे से कुछके वारेम तो मै शपथ-पूर्वक कह सकता हूँ कि आतंकवादी विचारधारासे उनका कोई सरोकार नही है — ऐसे हजार नौजवान है जिनपर कोई मुकदमा नही चलाया गया, जिनके अपराध सावित नही किये गये, लेकिन जिनमे से सवके-सव केवल सन्देहके कारण गिरफ्तार कर लिये गये है। जहाँतक चटगाँवका सम्वन्ध है, श्री सेनगुप्त, जो कलकत्ताके लॉर्ड मेयर, वगाल विधान-परिषद्के सदस्य और वगाल प्रान्तीय काग्रेस कमेटीके अध्यक्ष रह चुके है, यहाँ मौजूद है। उन्होने वगालके सभी दलोके सदस्योके हस्ताक्षरोसे युक्त चटगाँवके सम्वन्धमे एक रिपोर्ट मुझे दी है। उस रिपोर्टको पढकर सचमुच मन दुःखी हो जाता है। इस रिपोर्टको पढकर दुःख तो होता है, लेकिन उसका साराश यही है कि चटगाँवमे 'ब्लैक ऐंड टैंस'[1] सैनिको द्वारा किये अत्याचारोकी एक लघु आवृत्ति ही प्रस्तुत कर दी गई — और चटगाँव भारतका कोई कम महत्त्वका स्थान नही है।

अव हम देखते है कि कलकत्तामे एक ध्वज-प्रदर्शन समारोह किया गया। उस अवसरपर वहाँ पूरी सैनिक शक्तिको सकेन्द्रित करके कलकत्ताकी दस सडकोपर उसका प्रदर्शन किया गया। यह सव किसके खिलाफ किया गया, इससे किस उद्देश्यकी सिद्धि होनेवाली है ? क्या इससे आतकवादी लोग डर जायेगे ? मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि वे नही डरेगे। तो क्या इसके द्वारा काग्रेसियोको सविनय अवज्ञासे विमुख किया जा सकता है ? नही, यह भी नही हो सकता। काग्रेस निर्भयताके लिए प्रतिज्ञावद्ध है। कष्ट-सहन उसका जातीय चिह्न है। काग्रेसवालो ने सभी तरहके कष्ट सहनेका सकल्प कर रखा है। इसलिए इससे वे डरनेवाले नही है। हमारे बच्चे इस प्रदर्शनपर हँसेगे और हमारा उद्देश्य उन वच्चोको यह सिखाना है कि वे तोपो, वन्दूको, हवाई सेना आदिको देखकर भयभीत न हो, घवरा न जायें।

तो अव आप समझ गये होगे कि प्रान्तीय स्वशासनकी मेरी कल्पना क्या है। स्वशासनके अन्तर्गत यह सव असम्भव होगा, मै एक भी सैनिकको वगालमें प्रवेश

१. सन् १९२१ में सिन-फेन आन्दोलनको दवानेके लिए रॉयल आयरिश कास्टेबुलरीमें भरती किये गये भूतपूर्व सैनिक; सेना तथा कास्टेबुलरीकी पोशाकके रगोंके अनुसार इन्हें उक्त नाम दिया गया था।

करनेकी इजाजत नही दूँगा; जिस सेनाकी कमान हमारे हाथमे नही होगी उसका खर्च उठाने के लिए मै एक पैसा भी नही दूँगा। ऐसे प्रान्तीय स्वशासनके अधीन आप ऐसी स्थितिकी तो कल्पना नही करेगे जिसमे मै नजरबन्दोको रिहा न कर सकूँ और विधि-पुस्तकसे बगालका विनियम ३ निकालकर अलग न कर सकूँ। यदि यह प्रान्तीय स्वशासन है तो इसे बगाल सूबेके लिए ठीक उसी प्रकारकी स्वतन्त्रता समझना चाहिए जिस प्रकारकी स्वतन्त्रताको मैने नेटालमे विकसित होते देखा। नेटाल एक छोटा-सा उपनिवेश है, लेकिन उसका अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है, उसकी अपनी स्वयसेवक सेना आदि है। आप बगाल या किसी भी प्रान्तके लिए ऐसी कोई बात तो नही सोच सकते। यहाँ तो तब भी केन्द्रका ही आदेश चलेगा, वही शासन करेगा, सब-कुछ वही करेगा। यह मेरी कल्पनाका प्रान्तीय स्वशासन नही है। इसीलिए मैने कहा कि यदि आप ऐसा जीवन्त प्रान्तीय स्वशासन मेरे सामने पेश करेगे तो मै उसपर विचार करनेको तैयार हूँ, लेकिन मै यह भी मानता हूँ कि वह स्वशासन मिलनेवाला नही है। यदि वह स्वशासन मिलनेवाला होता तो हमे यहाँ ये लम्बी खिंचनेवाली कार्यवाहियाँ देखनेको न मिलती, तब हमने यह सारा-कुछ बिलकुल अलग ढगसे किया होता।

लेकिन वास्तवमे जो चीज मुझे इससे भी अधिक कष्ट पहुँचा रही है वह यह है हम सबको यहाँ एक ही उद्देश्यसे बुलाया गया है। मुझको यहाँ विशेष रूपसे उस समझौतेकी रूसे बुलाया गया है जिसमे लिखा हुआ है कि केन्द्रमे वास्तविक दायित्व, समस्त दायित्वके साथ सघ शासन — जिसमे नि सन्देह भारतके हितकी दृष्टिसे आवश्यक सुरक्षात्मक पूर्वोपाय भी शामिल है — के सम्बन्धमे विचार करने और उसे प्राप्त करनेके लिए मै लन्दन जा रहा हूँ। मै बराबर यह कहता रहा हूँ कि मै हर आवश्यक सुरक्षात्मक पूर्वोपायपर विचार करूँगा। खुद मै श्री लीज-स्मिथ या अन्य किसी भी व्यक्तिके इस विचारसे सहमत नही हूँ कि सविधान-रचनाके इस कार्यमे इतने वर्ष, यानी तीन वर्ष लग जायेगे। वे मानते है कि प्रान्तीय स्वशासनकी स्थापनामे अठारह महीने लगेगे। मेरा मूढ मन कहता है कि इतना सारा समय लगना जरूरी नही है। जब जनता निश्चय कर ले, ससद निश्चय कर ले और मन्त्रिगण तय कर ले तथा जनमत तैयार हो तो इन बातोमे समय नही लगता। जहाँ लोग एकमत होकर प्रयत्नशील हो, वहाँ इन बातोमे मैने समय लगते नही देखा है। लेकिन मै जानता हूँ कि यहाँ लोग एक मन होकर प्रयत्न नही कर रहे है, बल्कि सबके मन अलग-अलग है और सभी अलग-अलग दिशाओमे — शायद एक-दूसरेके विरुद्ध दिशाओमे — काम कर रहे हैं। इस अवस्थामे मुझे पूरा विश्वास है कि इस बहसके बावजूद न केवल केन्द्रमे उत्तरदायी शासनकी स्थापना नही होने जा रही है, बल्कि इस परिषद् का भी कोई ठोस परिणाम नही निकलने जा रहा है। यह सोचकर मुझे दु ख होता है, मेरा मन व्यथित हो उठता है कि ब्रिटेनके मन्त्रियोका, राष्ट्रका और यहाँ आने-वाले इन सारे भारतीयोका — हम सबका — इतना बहुमूल्य समय नष्ट हुआ, लेकिन मुझे पूरी आशका है कि श्री लीज-स्मिथके इस आक्सीजन पम्पके बावजूद परिणाम शून्य ही होगा।

इससे मेरा मतलव यह नही है कि प्रान्तीय स्वशासन जवरदस्ती हमारे मत्थे मढ दिया जायेगा। उस परिणामकी आशका मुझे सचमुच नही है। मुझे जिस चीजका भय है वह इससे भी कुछ अधिक भयकर है — यह कि भारतका भयकर दमन किये जानेके अलावा इसका और कोई परिणाम नही निकलनेवाला है। दमनकी मुझे परवाह नही है; उससे हमारा लाभ ही होगा। यदि ठीक वक्तपर हमारे खिलाफ दमनकी कार्रवाइयाँ की जाती है तो उसे भी मै इस परिषद्का वहुत अच्छा परिणाम मानूंगा। जो राष्ट्र निश्चित सकल्पके साथ अपने लक्ष्यकी ओर वढ रहा हो, दमनसे उसका कभी कोई नुकसान नही हुआ है, क्योकि वह दमन तो उस राष्ट्रमें सचमुच नवजीवनका सचार करनेवाले आक्सीजनका काम करता है — श्री लीज-स्मिथ द्वारा दिये गये आक्सीजनका नही।

लेकिन मुझे डर इस वातका है कि मैंने ब्रिटिश लोगो और ब्रिटिश मन्त्रियोंके साथ सहयोगका जो पतला-सा धागा तैयार किया था वह अव शायद टूटनेवाला है और मुझे शायद एक बार फिर अपने-आपको पक्का असहयोगी और सविनय प्रतिरोधी घोषित करना पडेगा — करोडो भारतीयोको असहयोग और सविनय प्रतिरोधका यह सन्देश फिरसे देना पडेगा, चाहे भारतीय आकाशमे जितने भी विमान मँडरायें, वहाँ जितने भी टैंक उतार दिये जाये। इन सवका कोई परिणाम नही निकलेगा। हम तो उन्हे यह शिक्षा देते हैं कि जव गोलियोकी वौछार हो रही हो तो तुम खुशीसे नाचो — उन्हे आतिशवाजियाँ समझो। हम उन्हे अपने देशकी आजादीके लिए कष्ट सहनेकी शिक्षा देते है। मै निराश नही हूँ। मै ऐसा नही सोचता कि यहाँ कुछ नही हो रहा है, इसलिए भारतमें अराजकता फैल जायेगी। मै यह नही सोचता। जवतक काग्रेस शुद्ध रहती है और देशमें चारो ओर अहिंसाकी भावना जोर पकडती जाती है तवतक मुझे ऐसा कोई भय नही है।

मुझसे अकसर यह कहा गया है कि इन आतकवादी कार्रवाइयोके लिए काग्रेस ही जिम्मेदार है। आपके सामने मै अपनी समस्त शक्तिसे इस कथनका खण्डन करता हूँ। सच तो यह है कि मेरे पास यह सिद्ध करनेके प्रमाण मौजूद हैं कि काग्रेसके अहिंसाके सिद्धान्तने ही आजतक आतकवादी शक्तियोको नियन्त्रणमें रखा है। मुझे इस वातका दु ख है कि हम लोग पूरी तरह सफल नही हो पाये है, लेकिन भविष्यमें हम सफल होनेकी आशा रखते है। ऐसा नही है कि आतकवाद भारतको स्वतन्त्रता दिला सकता है। मै ठीक उसी ढगका, लेकिन उससे पूर्णतर, स्वराज्य चाहता था जिस ढंगका स्वराज्य श्री जयकर चाहते है। मै जनसाधारणके लिए पूर्ण स्वराज्य चाहता हूँ और यह जानता हूँ कि आतकवादसे जनसाधारणका कोई लाभ नही होनेवाला है। जनसाधारण मूक और निरस्त्र है। वे लोग तो किसीको मारना जानते ही नही। यहाँ मै इक्के-दुक्के लोगोकी वात नही कह रहा हूँ, लेकिन भारतके आम लोग इस ओर कभी प्रवृत्त हुए ही नही है।

मै सर्वसाधारणके लिए ऐसा ही स्वराज्य चाहता हूँ और इसलिए यह भी जानता हूँ कि आतकवादसे उसे कोई लाभ नही होनेवाला है। काग्रेस एक ओर जहाँ

ब्रिटिश सत्ता तथा उसके आतकवाद, अर्थात् कानून-समर्थित आतकवादका मुकावला करेगी वहाँ दूसरी ओर वह नौजवानोके आतकवाद, मतलब कि गैरकानूनी आतकके खिलाफ भी जूझेगी। मुझे लगता है कि इन दोनोंके वीचका रास्ता सहयोगका वह रास्ता था जो लॉर्ड इर्विनने ब्रिटिश राष्ट्रके लिए और मेरे लिए खोला था। उन्होने यह सेतु बनाया था और मै समझता था कि इसपर से होकर मै इस कठिन मार्गको निरापद पार कर जाऊँगा। मेरी यात्रा निरापद ही सम्पन्न हुई, मै यहाँ आ गया हूँ और अपना सहयोग देनेके लिए ही आया हूँ। लेकिन मुझे यह बात साफ-साफ स्वीकार करनी चाहिए कि जो-कुछ श्री लीज-स्मिथने कहा है, और इस पक्षसे सर तेजबहादुर सप्रू तथा श्री शास्त्री और अन्य वक्ताओने जो बाते कही है, उस सबके बावजूद उनके मनमे केन्द्रमे जिस सीमित दायित्वका विचार है, वह मुझे सन्तुष्ट नही करेगी।

जैसा कि आप सब जानते है, मै केन्द्रमें ऐसा दायित्व चाहता हूँ, जो मुझे सेना तथा वित्तपर अधिकार दे सके। मै जानता हूँ कि वह चीज मुझे अभी यहाँ नही मिलने जा रही है, और यह भी जानता हूँ कि ऐसा कोई भी अग्रेज नही है जो वह चीज देनेको तैयार हो। इसलिए मै यह भी जानता हूँ कि मुझे वापस जाकर राष्ट्रको एक बार फिर कष्ट-सहनके लिए आमन्त्रित करना है। इस बहसमे मैने इसलिए भाग लिया है कि मै अपनी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर देना चाहता था। प्रान्तीय स्वशासनके बारेमे जो-कुछ मै निजी बैठकखानोमें कहता रहा हूँ, वह सब अब मैने इस पटलपर से खुले आम कह दिया है, और मैने आपको यह भी बता दिया है कि प्रान्तीय स्वशासनसे मेरा क्या आशय है और वास्तवमे कौन-सी चीज मुझे सन्तुष्ट करेगी। और मै यह कहकर अपनी बात खत्म करता हूँ कि जिस नौकामे सर तेजबहादुर सप्रू तथा दूसरे लोग बैठे हुए है, उसीमे मै भी हूँ, और मेरा निश्चित मत है कि जबतक केन्द्रमे उत्तरदायित्व नही मिलता या जबतक आप केन्द्रको इतना कमजोर कर देनेको तैयार न हो कि प्रान्त उसपर अपने हुक्म चला सके तबतक सच्चा प्रान्तीय स्वशासन असम्भव है। मै जानता हूँ कि आज आप यह करनेके लिए तैयार नही है। मै जानता हूँ कि यह परिषद् सघीय सरकारकी रचना होनेपर कमजोर केन्द्रकी नही, बल्कि सशक्त केन्द्रकी कल्पना करती है।

विदेशी अधिकारियों द्वारा प्रशासित सशक्त केन्द्र और सच्चा स्वशासन, ये दोनो परस्पर विरोधी चीजे है। इसलिए मुझे लगता है कि सच पूछिए तो प्रान्तीय स्वशासन और केन्द्रीय उत्तरदायित्व दोनो, साथ-साथ ही निभने-विगडनेवाली चीजे है। लेकिन मै फिर कहता हूँ कि मैं अपने मनमे कोई दुराग्रह लेकर नही बैठा हुआ हूँ। अगर कोई मुझे समझा सके कि वास्तवमें वैसा प्रान्तीय स्वशासन देनेकी बात है जैसे स्वशासनकी कल्पना मैने की है — उदाहरणके लिए, जैसा मैने बगालके सम्बन्धमे कहा है — तो मै उसे समझने-स्वीकारने को तैयार हूँ।

[अग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी एँड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४५३-५४

२२६. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन
२५ नवम्बर, १९३१

श्रीमन्[1],

इस महत्त्वपूर्ण विषयपर आपका कलका भाषण मैंने अत्यन्त ध्यानपूर्वक और निस्सन्देह आप जैसे सम्पूर्ण आदरके अधिकारी है वैसे आदरके साथ सुना। इस भाषणके सन्दर्भमे मैंने गत वर्षकी सघ-सरचना समितिकी रिपोर्टके वे अनुच्छेद भी पढे जो वित्त-व्यवस्थासे सम्बन्धित है। यह शायद १८वाँ, १९वाँ और २०वाँ अनुच्छेद है। किन्तु मुझे दु खके साथ कहना पडता है कि इन अनुच्छेदोमे जो प्रतिबन्ध सुझाये गये है उनका मै समर्थन नही कर सकता। जबतक हम ठीक-ठीक यह न जान ले कि हमारे आर्थिक दायित्व क्या-क्या है तबतक मेरी, और मै समझता हूँ कि हम सबकी स्थिति कठिन ही रहेगी।

अब मै अपनी बात जरा साफ-साफ बता दूं। यदि 'सेना'को आरक्षित विषयोमें रखा गया तो स्वभावत मै स्थितिपर एक दृष्टिसे विचार करूँगा और यदि उसे हस्तान्तरित विषयोमे रखा गया तो दूसरी दृष्टिसे विचार करूँगा। एक और कारण है जिससे मुझे अपनी राय प्रकट करनेमें कठिनाई महसूस होती है। वह यह है कि काग्रेसका दृढ मत है कि भावी सरकारको अपने सिर जो आर्थिक दायित्व लेने पड सकते है, उन्हे वह किसी निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा जाँच लिये जानेपर ही स्वीकार करेगी।

मेरे पास चार निष्पक्ष लोगो द्वारा तैयार की गई एक रिपोर्ट है। इन चारमे से दो तो बम्बई उच्च-न्यायालयके भूतपूर्व एड्वोकेट जनरल हैं। वे है श्री बहादुरजी और श्री भूलाभाई देसाई। तीसरे परीक्षक या समितिके सदस्य प्रोफेसर शाह[2] है। ये बहुत दिनोतक बम्बई विश्वविद्यालयमे प्रोफेसर रह चुके है। इनकी ख्याति सारे भारतमें है और भारतीय अर्थशास्त्रपर इन्होने कई मूल्यवान पुस्तके लिखी है। समितिके चौथे सदस्य श्री कुमारप्पा[3] है। उनके पास यूरोपीय शिक्षण-सस्थाओकी उपाधियाँ है और वित्त-व्यवस्थाके सम्बन्धमे उनके विचारोका बहुत आदर और प्रभाव है। इन चारो सज्जनोने एक विस्तृत रिपोर्ट पेश की है। मै मानता हूँ कि इसमे उन्होने निष्पक्ष जाँचकी आवश्यकता निर्विवाद रूपसे सिद्ध कर दी है, और यह दिखाया है कि बहुतसे दायित्व वास्तवमें भारतके नही है।

१. लॉर्ड रीडिंग; लॉर्ड सर्कीके चले जानेपर उन्होंने अध्यक्षका आसन ग्रहण किया था।

२. प्रोफेसर के० टी० शाह।

३. डॉ० जे० सी० कुमारप्पा।

इस सम्बन्धमे मै अत्यन्त नम्रतापूर्वक एक बात कहना चाहूँगा। वह यह है कि काग्रेसने यह कभी नही कहा है कि वह राष्ट्रीय ऋणके एक पैसेकी भी देनदारीसे इनकार करेगी, और उसके खिलाफ जो ऐसी बाते फैलाई गई है, उसके पीछे दुष्टता-की ही वृत्ति रही है। मगर काग्रेसने जो बात वास्तवमे कही है, वह यह है कि कुछ ऐसे दायित्व, जिन्हे भारतका माना जाता है, वास्तवमे भारतके सिर नही पडने चाहिए और उनका बोझ ग्रेट ब्रिटेनको उठाना चाहिए। इन जिल्दोमे आपको इन तमाम दायित्वोका विवेचन देखनेको मिलेगा। यहाँ इन बातोको दोहराकर मै समिति को उबाना नही चाहता। जो लोग इन दो जिल्दोको पढना चाहे वे इन्हे पढकर काफी लाभ उठा सकते है, बल्कि मै तो कहूँगा कि अवश्य उठायेगे। इन्हे पढकर शायद वे भी यह जान पायेगे कि ये दायित्व भारतके सिर कभी नही थोपे जाने चाहिए थे। इस परिस्थितिसे मुझे लगता है कि अगर हमे यह मालूम हो कि वास्तविकता क्या है, तो कोई निर्णायक मत देना सम्भव होगा, लेकिन इस शर्तको ध्यानमे रखते हुए मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि सघ-सरचना समितिके अनुच्छेद १८, १९ और २० मे जो प्रतिबन्ध या तथाकथित रक्षात्मक पूर्वोपाय सुझाये गये है वे भारतको अपने वाछित मार्गपर गति देनेके बजाय उसकी प्रगतिमे बाधक ही साबित होगे।

श्रीमन्, कल आपने कहा था कि आपके सामने सवाल भारतीय मन्त्रियोके प्रति विश्वासकी कमीका नही है। इसके विपरीत, आपको पूरी आशा है कि भारतीय मन्त्री भी अन्य मन्त्रियोकी तरह ही अच्छी तरहसे अपना काम करेगे। लेकिन आपको भारतके बाहर भारतकी साखकी फिक्र है, आपकी चिन्ता यह है कि यदि सुरक्षात्मक पूर्वोपायोकी व्यवस्था नही की गई तो भारतको पूँजी देनेवाले और उचित ब्याजपर भारतमे पैसा लगानेवाले विनियोक्ता असन्तुष्ट हो जायेगे। और यदि मुझे ठीक याद हो तो आपने आगे यह भी कहा था कि यहाँसे जब भी भारतमे कोई विनियोग किया गया है या भारतको पैसा भेजा गया है तो यह नहीं समझना चाहिए कि वह भारतके भी हकमे नही था।

यदि मुझे ठीक स्मरण हो तो आपने इन शब्दोका प्रयोग किया था — "स्पष्ट ही यह भारतके हितमे था"। आपके यह-सब कहनेके बाद मै इस बातका इन्तजार कर रहा था कि अब आप इसके उदाहरण देगे, लेकिन निस्सन्देह आपने यह मान लिया कि इन बातोको या आपके मनमे जो उदाहरण रहे हो, उन्हे तो हम जानते ही होगे। लेकिन जब आप बोल रहे थे, उस समय वास्तवमे मेरे मनमे इसके विपरीत दृष्टान्त थे, और मैने मन-ही-मन कहा, खुद मेरे अनुभवमें ऐसे दृष्टान्त आये है, जिनके सम्बन्धमे मै यह साबित कर सकता हूँ कि भारत और ग्रेट ब्रिटेनके हित एक-से नही थे, वे एक-दूसरेके विरुद्ध थे और इसलिए हम ऐसा नही कह सकते कि ग्रेट ब्रिटेनसे भारतको जब भी ऋण मिला वह भारतके हकमे ही था।

उदाहरणके लिए, अनेक लडाइयोको ही लीजिए। अफगानिस्तानके साथ हुई लडाइयोको ही देखिए। जब मै युवक था, मैने स्वर्गीय सर जॉन केका लिखा अफगानि-स्तानकी लडाइयोका इतिहास बडे कौतूहलके साथ पढा था, और यह बात अब भी मेरे

स्मृति-पटलपर भली-भाँति अंकित है कि इनमें से अधिकांश लड़ाइयाँ भारतके हितमें नहीं थी। इतना ही नहीं, बल्कि इन लड़ाइयोंके सम्बन्धमें गवर्नर जनरलने भूलसे काम लिया। स्वर्गीय दादाभाई नौरोजीने, जब हम युवक थे, हमें बताया था कि भारतमें ब्रिटिश अर्थ-नीतिका इतिहास जहाँ भारतके शोषणकी कहानी नहीं है वहाँ वह अव्यवस्था और भूलका इतिहास है।

लॉर्ड चान्सलर महोदयने यह चेतावनी दी और आपने इसका जोरदार समर्थन किया कि इस समय वित्त-व्यवस्था एक बहुत ही नाजुक विषय है, और इसलिए हममें से जो लोग इस चर्चामें भाग लें उन्हें सावधान और सतर्क रहना चाहिए, ताकि वे इसमें गलत तरीकेसे हाथ डालकर भारतके वित्त-मन्त्रीके रास्तेमें मुश्किलें न पैदा कर दें या उनके सामने जो मुश्किलें पहलेसे ही मौजूद हैं, उन्हें और बढ़ा न दें। इसलिए मैं तफसीलसे चर्चा नहीं करना चाहता। लेकिन विनिमय-दरमें वृद्धिके सम्बन्धमें एक बात मुझे कहनी ही पड़ेगी। मेरा मतलब रुपयेका मूल्य १ शिलिंग ४ पेंससे बढ़ाकर १ शिलिंग ६ पेंस कर दिये जानेसे है। यह कदम भारतीयोंकी ओरसे — ऐसे भारतीयोंकी ओरसे जो किसी भी तरहसे कांग्रेससे सम्बद्ध नहीं थे — लगभग एक स्वरसे विरोध किये जानेके बावजूद उठाया गया। ये सब स्वतन्त्र विचारोंवाले लोग थे। इनमें से कुछ अर्थ-नीतिके बहुत बड़े विशेषज्ञ थे और वे जो-कुछ कह रहे थे, अच्छी तरह सोच-समझकर कह रहे थे। यहाँ भी यही पता चलता है कि भारतके हितको विदेशी हितका दास बना दिया गया। इतना जाननेके लिए विशेषज्ञ होनेकी जरूरत नहीं है कि रुपयेका मूल्य कम होना किसानोंके लिए सदा लाभप्रद होता है, या आम तौरपर ऐसा ही होगा। यहाँ दो वित्त-विशेषज्ञोंको यह स्वीकार करते सुनकर मैं बड़ा प्रभावित हुआ कि यदि रुपयेको स्टर्लिंग (ब्रिटिश मुद्रा)से जोड़नेके बजाय निर्बन्ध छोड़ दिया जाता तो कमसे-कम कुछ कालतक तो उससे किसानोंको बड़ा लाभ होता। बल्कि वे तो बिलकुल अन्तिम छोरतक जाकर यहाँतक सोचते थे कि यदि रुपयेको अपने भाग्यके भरोसे छोड़ दिया जाये और फलत उसकी विनिमय-क्षमता गिरकर उसके वास्तविक मूल्यतक, अर्थात् ६–७ पेंसतक पहुँच जाये तो यह भारतके लिए बहुत बड़ी विपत्तिका विषय होगा, वैसे खुद मैं तो तब भी यह नहीं समझ पाया कि उससे भारतीय किसानोंको सचमुच किसी प्रकारकी हानि होगी।

इस परिस्थितिमें मैं ऐसे रक्षात्मक पूर्वोपायोंका समर्थन नहीं कर सकता, जो भारतीय वित्त-मन्त्रीके दायित्वोंके निर्वाहके मार्गमें — उन दायित्वोंके निर्वाहके मार्गमें जिनकी अवधारणा मुख्यतः रैयतोंके हितोंको ध्यानमें रखकर की गई है — बाधक हों।

लेकिन मैं समितिका ध्यान एक और बातकी ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। श्रीमन्, लॉर्ड चान्सलर महोदय तथा आपके द्वारा दी गई चेतावनीके बावजूद, पता नहीं क्यों, मुझे लगता है कि यदि भारतीय वित्त-तन्त्रका प्रबन्ध ठीक ढंगसे केवल भारतके ही हकमें किया जाये तो विदेशी बाजारमें — अर्थात् लन्दनमें — हमें आजकी जैसी गम्भीर तेजी और मन्दीका सामना नहीं करना पड़े। आपको मैं यह भी बताना

चाहता हूँ कि मै ऐसा क्यो मानता हूँ। जब सर डेनियल हैमिल्टनके लेखोसे पहले-पहल मेरा परिचय हुआ तो उनके प्रति मेरा रवैया बहुत ही सन्देह और सकोचसे भरा हुआ था। भारतीय वित्त-व्यवस्थाके बारेमे मै लगभग कुछ जानता ही नही था, यह विषय मेरे लिए बिलकुल नया था। लेकिन वे पूरे उत्साहके साथ मुझसे उन लेखोको पढनेका आग्रह करते रहे जो वे मुझे भेजते जा रहे थे। जैसा कि हम सभी जानते है, भारतमे उनके बहुत बडे-बडे हित है, वे खुद बडे महत्त्वपूर्ण ओहदोपर रहे है और सुयोग्य वित्त-विशेषज्ञ भी है। उन्होने जो रास्ते सुझाये है, उनके मुताबिक आज वे स्वय ही प्रयोग कर रहे है, और जो लोग भारतीय वित्त-व्यवस्थाके प्रति उनके दृष्टिकोणको समझना चाहेगे उनके सामने उन्होने एक सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह रखी है कि भारतको अपनी मुद्राके लिए सोने या चाँदी अथवा किसी भी अन्य धातुके मानकी आवश्यकता नही है। उसके पास एक अलग किस्मकी धातुका भण्डार है। वह धातु है — भारतके करोडो श्रमिक। यह सच है कि भारतके वित्त-तन्त्रके सम्बन्धमे ब्रिटिश सरकारने अपनेको दिवालिया ऐलान नही किया है। अभीतक वह इस गाडीको चलाती रही है, लेकिन कौन-सा मूल्य चुकाकर, किसके हितोका बलिदान करके? मेरी नम्र सम्मतिमे, किसानोके हितोका बलिदान करके, उन्हीको चूसकर वह इस गाडीको चला रही है। यदि अधिकारियोने वित्तीय समस्यापर रुपयेको दृष्टिमे रखकर सोचनेके बजाय, सर्वसाधारणको दृष्टिमे रखकर सोचा होता तो मेरी विनम्र रायमे वे आजतक भारतके मामलोकी जैसी व्यवस्था करते आये है उससे लाख दर्जे अच्छी व्यवस्था कर पाते। फिर उन्हे विदेशी बाजारकी शरण न लेनी पडती। हर आदमी यह स्वीकार करता है और ब्रिटिश वित्त-विशेषज्ञोने हमे बताया है कि दसमे से नौ साल तो आर्थिक सन्तुलन भारतके पक्षमे ही रहता है।

तात्पर्य यह कि जिस वर्षको आर्थिक क्षेत्रमे भारतका आठ या दस आने सफलता का वर्ष कहा जा सकता है, उस वर्ष भी यही स्थिति रहती है। वास्तवमे आठ आने सफलताका वर्ष भी उसे अनुकूल आर्थिक सन्तुलन प्रदान करके लिए पर्याप्त है। फिर उदार प्रकृतिकी कृपासे भारत धरती मातासे इतना पैदा कर लेता है कि वह उसकी सारी देनदारियोके भुगतानकी दृष्टिसे पर्याप्त, बल्कि उससे भी अधिक होता है, उसे जितना आयात करना पड सकता है उस सबके लिए काफीसे ज्यादा ही होता है। यदि यह सच है, और मै मानता हूँ कि सच है, तो भारत-जैसे देशको विदेशी पूँजीका सहारा लेनेकी कोई जरूरत नही है। लेकिन उसे ऐसी स्थितिमें डाल दिया गया है कि उसको विदेशी पूँजीका सहारा लेना पडता है। 'होम चार्ज'के नाम-पर और सुरक्षा सम्बन्धी जबरदस्त खर्च पूरा करनेमे उसका बहुत-सा धन बहकर विदेश चला जाता है और इसी कारण उसको विदेशी पूँजीका सहारा लेना पडता है। वह ये खर्च उठानेमे सर्वथा असमर्थ है, फिर भी एक ऐसी राजस्व-नीति द्वारा ये सारे खर्च उससे पूरे करवाये जाते रहे है जिसकी घोर निन्दा एक कार्यवाहक कमिश्नर स्वर्गीय रमेशचन्द्र दत्तने भी की है। मुझे मालूम है कि इस विषयपर लॉर्ड कर्जनसे उनका बडा विवाद हो गया था, और हम भारतीयोका निष्कर्ष यह था कि स्वर्गीय रमेशचन्द्र दत्तका पक्ष सही था।

लेकिन मैं एक कदम और आगे जाना चाहूँगा। सभी जानते हैं कि ये करोड़ो किसान सालमें छ: महीने बेकार रहते हैं। यदि ब्रिटिश सरकार ऐसा-कुछ करे जिससे ये लोग सालमें छ. महीने बेकार न रहें तो कल्पना कीजिए कि वे कितना अधिक धन पैदा करेंगे। फिर हमें विदेशी पूँजीका सहारा लेनेकी कभी जरूरत ही क्यो पड़ेगी? मुझ-जैसे साधारण आदमीको, जो सदा सर्वसाधारणके विषयमें ही सोचता रहता है और जो किसी भी बातके सम्बन्धमें वैसा ही महसूस करना चाहता है जैसा कि वे लोग करेंगे, वित्त-व्यवस्थाकी समस्या इसी रूपमें दिखाई देती है। वे लोग तो यही कहेंगे कि 'हमारे पास पूरी श्रम-शक्ति है और इसलिए हम विदेशी पूँजीका सहारा नही लेना चाहते।' जबतक हम श्रम करते हैं, हमारे श्रमसे उत्पादित वस्तुओको सारी दुनिया चाहेगी। और यह सही है कि आज दुनिया हमारे श्रमसे उत्पादित वस्तुएँ चाहती है। हम उन वस्तुओका उत्पादन कर सकेंगे जिन्हे दुनिया हमसे स्वेच्छासे और राजी-खुशी खरीदना चाहेगी। अतीतमें युगोतक भारतकी यही स्थिति रही है। इसलिए श्रीमन्, आपने भारतीय वित्त-तन्त्रके सम्बन्धमें जो भय व्यक्त किया है, वैसा कोई भय मुझे नही है। ऐसे विचार रखते हुए मैं वास्तवमें इस भयको ठीक नही मानता कि अभी जो बात कहनेकी जरूरत नही है, वह बात यदि हमने दबी आवाजमें भी कह दी, या यदि मुझ-जैसा कोई व्यक्ति आज यह कहे कि अगर भारतको केन्द्रमें दायित्व मिलना है तो मैं वित्त-तन्त्रपर पूर्ण अधिकार चाहता हूँ, तो उस हालतमें भारतीय वित्त-व्यवस्था खतरेमें पड़ जायेगी। मेरे विचारसे तो जबतक अपने रक्षको और अपने खजानेपर हमारा पूरा नियन्त्रण नही होता तबतक हम कोई दायित्व सँभाल नही सकते और वह दायित्व वास्तवमें दायित्व नही होगा।

अब चूँकि मेरे विचार ऐसे हैं, इसलिए मुझे लगता है कि जो रक्षात्मक पूर्वोपाय मैं सुझाऊँगा वे बिलकुल भिन्न प्रकारके होंगे, लेकिन *अभी* — *अर्थात्* जबतक मुझे यह मालूम न हो जाये कि राष्ट्रको पूर्ण दायित्व मिलना है, सेना और गैर-सैनिक अमलोपर उसे पूरा नियन्त्रण प्राप्त होनेवाला है और राष्ट्रको जितने सिपाहियोंकी आवश्यकता होगी, केवल उतने ही सिपाही, और सो भी भारत-जैसे गरीब राष्ट्रको अनुकूल पड़नेवाली शर्तोपर, लेनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता होगी तबतक — मैं कोई पूर्वोपाय सुझानेकी स्थितिमें नही हूँ। जबतक ये सारी बातें मुझे मालूम नही हो जाती कोई पूर्वोपाय सुझाना मेरे लिए लगभग असम्भव है। सचाई यह है कि जब इन सारी बातोका खयाल किया जायेगा तो शायद पूर्वोपायोकी कोई आवश्यकता ही नही रह जायेगी। हाँ, अगर कोई शुरूसे भारतको अपना दायित्व आप सँभालने और देशका प्रशासन शान्तिपूर्ण ढंगसे चलानेकी योग्यतामें अविश्वास रखकर चले तो बात और है। इन परिस्थितियोमें मैं जिस एक-मात्र खतरेकी कल्पना कर सकता हूँ वह यही होगा कि हमारे दायित्व सँभालते ही देशमें घोर अशान्ति और अव्यवस्था फैल जायेगी। यदि ब्रिटेनवालोके मनमें यही भय हो तब तो हमारे और उनके बीच सुलह-समझौतेका कोई आधार ही नही रह जाता। हम दायित्व इसलिए लेते हैं, हम दायित्व इसलिए

चाहते है, दायित्वकी माँग इसलिए करते है कि हमे यह विश्वास है कि हम अपने कार्य-व्यापार ठीक ढगसे सँभाल ले जायेगे, और मुझे लगता है कि जितने अच्छे ढगसे ब्रिटिश प्रशासकोने उसे सँभाला है या वे सँभाल सकते है, निश्चय ही उससे अच्छे ढगसे हम उसे सँभालेगे। ऐसा मै इसलिए नही कहता हूँ कि ब्रिटिश प्रशासक योग्य नही है। मै यह स्वीकार करता हूँ कि वे हमसे बहुत अधिक योग्य है, मै यह भी स्वीकार करता हूँ कि उनमे सगठनकी ऐसी क्षमता है जिसे हमे उनके चरणोमे बैठकर सीखना है। लेकिन हमारे पक्षमे एक चीज है—यह कि हम अपने देशको जानते है, हम अपने लोगोको जानते है और इसलिए हम अपनी सरकार सस्तेमे चला सकते है। हम सभी झगडोसे दूर रहेगे और चूँकि हमे साम्राज्यकी कोई आकाक्षा नही है, इसलिए हम अफगानोके साथ या किसी अन्य राष्ट्रके साथ लडाई नही करेगे। इसके बजाय हम उनसे मैत्रीके सम्बन्ध स्थापित करेगे और उनके लिए हमसे डरनेका कोई कारण नही होगा।

भारतीय वित्त-व्यवस्थाके विषयमे सोचते हुए मेरे मनमे ऐसे ही विचार आ रहे है। इसलिए आप देखेगे कि मेरी कल्पनामे भारतीय वित्त-तन्त्रका कोई बहुत बडा स्थान नही है, और वैसी खतरनाक तसवीर तो मेरे मनमे है ही नही जैसी कि आपके, या लॉर्ड चान्सलर महोदय अथवा उन ब्रिटिश मन्त्रियोके मनमे है जिनसे मुझे इस विषयपर बातचीत करनेका सौभाग्य मिला है। इसलिए, और मैंने जो अन्य कारण बताये है उन कारणोसे भी, मुझे विनम्रतापूर्वक कहना पडेगा कि यहाँ जो रक्षात्मक पूर्वोपाय सुझाये गये है उनसे मै सहमत नही हो सकता और न उस भयको ही सही मानता हूँ जिससे ब्रिटेनकी जनता या ग्रेट ब्रिटेनके जिम्मेदार लोगोके मन आक्रान्त है।

एक बात मै कहना चाहूँगा यह राष्ट्रीय सरकार जो भी देनदारी स्वीकार करेगी, उसके लिए ठीक ढगकी गारटी, ऐसी गारटी जैसी कि कोई राष्ट्र दे सकता है, दी जायेगी और उसके लिए सही ढगके आश्वासन भी दिये जायेगे। लेकिन, मेरे विचारसे, वे गारटियाँ या आश्वासन कभी भी उस ढगके नही होगे जिस ढगकी गारटियो या आश्वासनोकी चर्चा इन अनुच्छेदोमे की गई है। अगर हमे ग्रेट ब्रिटेनके प्रति कुछ देनदारियाँ स्वीकार करनी पडती है, और इसमे सन्देह नही कि कुछ स्वीकार करनी ही पडेगी और उनका भुगतान भी करना पडेगा, और मान लीजिए हम बादमे गडबडी करते है और उन्हे चुकानेके लिए कुछ नही करते तो उस हालतमे कोई भी कागजी आश्वासन किसी काम नही आयेगा। या मान लीजिए भारतके अपना प्राप्य प्राप्त करनेके बादसे दुर्भाग्यवश एकके-बाद-एक कई मौसम प्रतिकूल होते चले जाते है, तो उस हालतमे मै नही समझता कि किसी भी रक्षात्मक पूर्वोपायके बलपर भारतसे जबरदस्ती पैसा वसूल किया जा सकता है। इन आपदामय परिस्थितियोमे, इन अदृश्य स्थितियोमे, प्रकृतिके ऐसे प्रकोप होनेकी हालतमे किसी भी राष्ट्रीय सरकारके लिए कोई आश्वासन देना असम्भव है।

इस प्रकरणको मै और आगे नही बढाना चाहता। मैंने सोचा कि भारतीय वित्त-व्यवस्थाके सम्बन्धमे मुझ-जैसे साधारण व्यक्तिके क्या विचार है, यह बतानेके लिए मै समितिका चन्द मिनटोका समय लूं।

इन विषयोकी चर्चा करते हुए मुझे जिस खेदका अनुभव होता रहा है, उसके उल्लेखके साथ मै अपनी बात समाप्त करता हूँ। मुझे खेद इस बातका है कि मुझे भारतीय मामलोका इतना अनुभव रखनेवाले इतने सारे प्रशासको और गोलमेज परिषद्मे भाग ले रहे अपने बहुत-से देशभाइयोके विचारोके विरुद्ध बाते कहनी पडी। लेकिन, अगर काग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मुझे अपना कर्त्तव्य पूरा करना है तो दूसरोकी नाराजीका खतरा उठाकर भी मुझे उन विचारोको व्यक्त करना ही है जो काग्रेसके बहुत-से सदस्योके साथ-साथ मेरे भी विचार है।

अध्यक्ष : श्री गांधी, जब आप बोल रहे थे, उस समय मै बीचमें आपको टोकना नहीं चाहता था, लेकिन मै नहीं समझता कि आपने मेरी बातोंको बिलकुल ठीक-ठीक पेश किया। स्पष्ट ही मै आपको बीचमें टोक नहीं सकता था, क्योंकि उसका मतलब फिरसे पिछली बातोंकी चर्चा करना और जो बातें पहले ही कही जा चुकी है उन्हें दोहराना होता। आखिरकार वे सारी बातें कार्यवाहीमें दर्ज तो है ही। शायद ये, जो बातें कही गई है, उनमें से कुछकी गलत व्याख्या ही हों, और बेशक ऐसे कई आर्थिक और वित्तीय मसले है, जिनकी चर्चा नहीं हुई है, लेकिन जिन्हें आपने अपने भाषणके दौरान पेश किया है। उनके सम्बन्धमें मै यही कहना चाहता हूँ कि आपने उनका उल्लेख अपनी दलीलके लिए ही किया है। मुझे जो-कुछ कहना है, वह सब वित्त-व्यवस्थाके सम्बन्धमें दिये अपने भाषणोंमें मै कह चुका हूँ, लेकिन मै नहीं चाहता कि कोई यह मान ले कि इस सबका उत्तर नहीं दिया जा सकता।

गाधीजी : हाँ, हाँ, ऐसा तो है ही।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-१२-१९३१ और इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४५९-६०

२२७. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश

लन्दन

२६ नवम्बर, १९३१

अध्यक्ष: आप कृपया रिपोर्टका मसविदा हाथोंमें ले लें। मेरा खयाल है, इसमें बहुत समय नहीं लगेगा, क्योंकि मैंने जो किया है वह यह है कि विभिन्न सदस्योंसे उनके विचार माँगे हैं और उन्हें एक जगह रख दिया है। जैसा कि हम आम तौरपर करते हैं, मैं इसे पूरा पढ़ देता हूँ और फिर हम अलग-अलग प्रत्येक अनुच्छेदकी चर्चा करेंगे। यह व्यापारिक भेद-भावपर संघ-संरचना समितिकी चौथी रिपोर्ट है।

> १. इस विषयपर समितिको काफी हदतक सहमति पा सकनेकी खुशी है। उसे यह याद है कि गत परिषद्की उसकी रिपोर्टके अनुच्छेद २२ में यह कहा गया था कि इस बातपर आम सहमति है कि व्यापार और वाणिज्यके मामलोंमें समान-व्यवहारका सिद्धान्त स्थापित होना चाहिए और परिषद्की पूरी समितिने १९ जनवरी, १९३१ की अपनी बैठकमें निम्नलिखित अनुच्छेदको अल्पसंख्यक-समस्या से सम्बन्धित उप-समितिकी रिपोर्टके अंगके रूपमें स्वीकार किया था:
>
> "ब्रिटिश व्यापारी वर्गके अनुरोधपर यह सिद्धान्त सामान्यतः स्वीकार कर लिया गया कि भारतमें व्यापार करनेवाले ब्रिटिश व्यापारी वर्ग, फर्मों और कम्पनियों तथा जन्मतः भारतीय लोगोंके बीच कोई भेद-भाव नहीं होना चाहिए और इन अधिकारोंके नियमनके लिए पारस्परिकतापर आधारित एक उपयुक्त करार कर लेना चाहिए।"
>
> बहसके दौरान एकसे अधिक सदस्योंने समितिको यह भी याद दिलाया कि सर्वदलीय परिषद्ने १९२८ में अपनी रिपोर्टमें कहा था कि "भारतमें वैध रूपसे व्यापार करनेवाले किसी समुदायके विरुद्ध कोई भेद-भावपूर्ण कानून बन सकता है, इस बातकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।"
>
> २. समिति इस सिद्धान्तको मानती है और फिरसे इसकी पुष्टि करती है कि संघके क्षेत्रके अन्दर वैध रूपसे वाणिज्य और उद्योगमें लगे लोगोंको समान अधिकार और समान अवसर दिये जाने चाहिए और जो मतभेद सामने आये हैं वे मुख्यतया (पूर्णतया नहीं) उस सीमाके बारेमें हैं जिसके भीतर इस सिद्धान्तको काम करना चाहिए और उसे लागू करनेकी सर्वश्रेष्ठ पद्धतिके बारेमें हैं। . . .

गांधीजी: लॉर्ड चान्सलर, मैं चाहूँगा कि उस अनुच्छेदके अन्तमें यह और जोड़ दिया जाये:

"परन्तु, कुछका यह मत है कि भावी सरकारपर सिवा इसके और किसी प्रतिबन्धका भार नही डालना चाहिए कि केवल नस्ल, रग या धर्मके आधारपर कोई भेद-भाव नही किया जायेगा।"

अध्यक्ष: मै निश्चय ही इसे शामिल कर लूंगा। आप इसे किस जगह रखना चाहते है?

गाधीजी: दूसरे अनुच्छेदके अन्तमें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४७२-४

२२८. संघ-संरचना समितिकी बैठककी कार्यवाहीके कुछ अंश[1]

लन्दन
२७ नवम्बर, १९३१

अध्यक्ष: श्रीगांधी दूसरे अनुच्छेदके अन्तमें कुछ जोड़ना चाहते हैं।

गांधीजी: मै अनुच्छेद २ के अन्तमे[2] "उत्तरदायी शासन" शब्दोके बाद ये शब्द जोडना चाहता हूँ, "और पूर्ण नियन्त्रणमें कमी होनेसे वित्त-मन्त्रीके अपना कर्त्तव्य पूरा करनेमे बाधा आयेगी।"

अध्यक्ष: ये शब्द नोट कर लिये गये हैं।[3]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी, ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी, खण्ड १, पृष्ठ ४८३

१. समितिमें वित्तीय संरक्षणोंसे सम्बन्धित चौथी प्रस्तावित रिपोर्टपर बहस जारी थी।

२. अनुच्छेद इस प्रकार समाप्त होता था: "...कुछ सदस्य फिर... वित्तीय सरक्षणोंपर अपनी आपत्तिमें और आगे बढ़े, और उन्होंने भारतीय वित्त-मन्त्रीके विधानमण्डलके प्रति पूर्णतया उत्तरदायी रहते हुए, अपने कार्य-भारका प्रशासन करनेके अधिकारोंको किसी भी तरह सीमित करनेकी बातको माननेसे इस आधारपर इनकार कर दिया कि जो संविधान विधानमण्डलको वित्तपर पूर्ण नियन्त्रण प्रदान नहीं करता, उसे उत्तरदायी शासन नहीं कहा जा सकता।"

३. रिपोर्टके संशोधित रूपमें ये शब्द शामिल कर लिये गये थे।

२२९. तार : वल्लभभाई पटेलको

[२८ नवम्बर, १९३१][1]

शनिवारको चलूँगा रविवारको विलेन्यूव पहुँचूँगा। ग्यारह तक वहाँ रहूँगा। बारहको वेनिससे श्राकोविया (जहाज)से रवाना हूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-१२-१९३१

२३०. गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीका अंश

लन्दन
२८ नवम्बर, १९३१

सर ह्यूबर्ट कार : लॉर्ड चान्सलर, पिछले सप्ताह या दस दिनोंमें हम परिषद्की तथाकथित असफलताके सम्बन्धमें बहुत-कुछ सुन चुके हैं। इसलिए मुझे अपने साथियोंके और अपने विचारको, जो उस कथनके निश्चित रूपसे विपरीत है, व्यक्त करनेका यह अवसर पाकर खुशी हुई है। हम ऐसा महसूस करते हैं कि पिछले साल जो विचार-विमर्श चलता रहा उससे भारतके भविष्यके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बहुत-से प्रश्नोंपर बहुत हदतक सहमति हो गई है। यह विचार रखते हुए हम अभी भी मौजूदा कठिनाइयोंकी ओरसे अपनी आँखें नहीं मूँद रहे हैं। पर हमें उन भारी कठिनाइयोंकी भी तीखी स्मृति है जो इस परिषद्के सामने, जब यह पिछले साल पहले-पहल शुरू हुई, आई थीं। . . .

उसके कार्यके बिना महात्मा गांधी इस देशके बहुत-से लोगोंके लिए बहुत-कुछ पौराणिक व्यक्ति ही बने रहते — ऐसे व्यक्ति जो निषिद्ध स्थानोंपर नमक बनाते हैं या सभी तरहका सूत बुनते हैं।

गांधीजी : आपका मतलब है — सभी तरहका सूत कातते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स, पृष्ठ १०३-१०५

१. "दैनन्दिनी, १९३१" में गांधीजी ने वल्लभभाई पटेलको एक तार भेजनेका जिक्र किया है। अनुमान है कि वह तार यही था।

२. वस्तुतः गांधीजी १४ दिसम्बरको ब्रिण्डिसीसे समुद्री जहाजसे रवाना हुए थे।

२३१. भेंट: लन्दनके पत्र-प्रतिनिधियोंको

[३० नवम्बर, १९३१ के पूर्व][1]

गोलमेज परिषद् यदि असफल रहती है तो ब्रिटिश व्यापारपर इसका विनाशकारी प्रभाव पडेगा, क्योकि वहिष्कार बढेगा। इसलिए हर कोई यही सोचेगा कि परिषद् असफल न हो — यह कोशिश स्वय ब्रिटेनके अपने हितमे है। वैसा हो, इसकी बजाय मै वाजिब त्यागतक करनेको तैयार हूँ। वैसे यदि हमारी माँगोका केवल कुछ भाग ही मजूर होता है तो वह गोलमेज परिषद्की निश्चय ही आशिक असफलता होगी। उस हदतक वह असफल रहेगी।

प्र०: यदि केवल कुछ भाग मंजूर होता है और बादमें पूरी मात्राका वादा कर लिया जाता है तो क्या आप सन्तुष्ट होंगे?

उ०. दिया क्या जा रहा है, इसपर मुझे विचार करना होगा। जो-कुछ मै चाहता हूँ वह सब प्राप्त कर सकूँ, यह सम्भव नही लगता। परन्तु जो-कुछ मुझे मिलता है वह यदि ऐसा है कि मै उसका बहुत-कुछ बना सकूँ, तो मै अपनेको उसके लिए राजी कर सकता हूँ। यदि आवश्यक हो तो मै समझौता करनेको तैयार हूँ।

भारतको राष्ट्र-सघ (लीग ऑफ नेशन्स) से अपील करनी चाहिए, मै ऐसा नही सोचता। अभी नही। अभी हमारी वार्ता चल रही है। गोलमेज परिषद् यदि असफल रहती है तो जिनकी सीधी कार्रवाईमे आस्था नही है वे भारतके मामलेको राष्ट्र-सघके न्यायाधिकरणके आगे रख सकते हैं। पर मै ऐसा नही करूँगा। मै सविनय प्रतिरोधकी पद्धतिको पसन्द करता हूँ, क्योकि वह सबसे स्वच्छ और श्रेष्ठ है। राष्ट्र-सघ इतना शक्तिशाली नही है कि वह इस प्रश्नको सुलझा सके। भारत अपने-आपमे एक ससार है। वह सघतक के वसकी चीज नही है।

प्र०: श्री गांधी, क्या आप मेरी इस बातसे सहमत हैं कि आप भारतकी भारी मशीनमें सुरक्षा-खटकेकी तरह है, देशके अदम्य युवकोपर आपका प्रभाव उनकी उग्रतापर एक अंकुश-जैसा है, आपको भारतसे निर्वासित करना आपराधिक मूर्खता होगी, क्योकि जहाँ एक बार आप गये, विद्रोह और विप्लव हो जायेगा?

उ०: मै आपसे सहमत हूँ। इस तरहकी चीज एक अन्धे आदमीकी कार्रवाई होगी — ऐसे आदमीकी जो भारतकी हालतकी ओरसे आँखें मूँदे हुए है, जो यह समझ नही पा रहा है कि यह बेचैनी, स्वराज्यकी यह माँग पूरे देशको किस सीमातक अभिभूत किये हुए है। यदि मुझे भारतसे निर्वासित किया गया तो बहुत-सी अनिष्ट बातें हो सकती हैं। पर मै ऐसा महसूस करता हूँ कि मेरी अनुपस्थितिमे भी शान्तिके

१. मूलमें तारीखका उल्लेख नहीं है। पर इसकी विषय-वस्तुसे यह लगता है कि भेंट गोलमेज परिषद्में ३० नवम्बरको दिये गये गाधीजी के अन्तिम भाषणसे पहले हुई थी।

लिए मेरा प्रभाव कायम रहेगा। मैं दूर हो सकता हूँ पर मेरी भाव-सत्ता वहाँ रहेगी। संघर्ष जारी रहेगा। वह और तीव्र हो जायेगा। फिर भी मुझे विश्वास है कि वह हिंसात्मक नहीं होगा। मेरे खत्म हो जानेके बाद लोगोंकी उग्रतापर अंकुश रखनेवाला मेरा यह प्रभाव भी मिट जायेगा, यह सोचकर मुझे दुःख होगा। नहीं, मैं निर्वासनका प्रतिरोध नहीं करूँगा। किसी भी सच्चे सत्याग्रहीको अपने ऊपर आये कष्टका प्रतिरोध नहीं करना चाहिए। जो भी दण्ड उसे दिया जाये उसका उसे स्वागत ही करना चाहिए।

दूसरे विषयकी चर्चा करते हुए श्री गांधीने कहा :

मशीन एक महान्, पर भयानक आविष्कार है। एक ऐसी स्थितिकी कल्पना की जा सकती है जब मनुष्य द्वारा आविष्कृत मशीनें अन्तमें सभ्यताको ही निगल जायें। यदि मनुष्य मशीनपर नियन्त्रण रखता है तो वह ऐसा नहीं करेगी। परन्तु यदि मनुष्य मशीनोंपर अपना नियन्त्रण खो देता है और उनके द्वारा अपनेको नियन्त्रित होने देता है, तो वे निश्चय ही सभ्यताको और हर चीजको निगल जायेंगी।

प्र० : पश्चिमकी आपके मनपर क्या छाप पड़ी है? पाश्चात्य सभ्यताकी क्या आप निन्दा करते हैं?

उ० : मैंने इसकी निन्दा की है। यह अत्यधिक जल्दबाज, अत्यधिक भौतिकवादी, अत्यधिक कृत्रिम है। मुझे इससे घृणा है, यह तो मैं नहीं कह सकता। 'घृणा' शब्दका प्रयोग बहुत बुरी बात है। पर मुझे इससे तीव्र अरुचि है। नहीं, मैं अमेरिका नहीं जा रहा हूँ। मुझे भारत लौटना चाहिए। मुझे वहाँ शीघ्र वापस जाना चाहिए। मेरे देशको मेरी जरूरत है।

हाँ, मैं यूरोपके प्रमुख व्यक्तियोंसे मिला हूँ। केवल राजनीतिज्ञोंसे नहीं — कला और साहित्यकी दुनियाके लोगोंसे भी, और हर क्षेत्रके लोगोंसे मिला हूँ। मैं बड़े लोगोंसे मिला हूँ और गरीबसे-गरीब लोगोंसे भी खूब मिला-जुला हूँ। मेरी बर्नार्ड शॉसे भेंट हुई है।

प्र० : उनके बारेमें आपकी क्या राय है?

उ० : मेरा खयाल है वे बहुत अच्छे आदमी हैं।

प्र० : ऐसे तो बहुत लोग हैं।

उ० मेरा खयाल है, वे बहुत ही प्रत्युत्पन्नमति हैं, मर्मोक्ति और विरोधाभासके प्रेमी हैं, उनमें नटखट बालक-जैसा उछाह और उदार और चिरतरुण हृदय है। वे यूरोपके प्रधान विदूषक हैं।

भारतका सबसे सच्चा मित्र मैं किसे समझता हूँ? तुलनाएँ द्वेषजनक होती हैं। इंग्लैंडमें मुझे भारतके इतने सारे सच्चे मित्र मिले हैं कि किसी एकको छाँटना कठिन है। किसका व्यक्तित्व मुझे सबसे अधिक शक्तिशाली लगा, मैं सचमुच कह नहीं सकता। मुझे सोच-विचारकर बात कहनी चाहिए।

स्वतन्त्र भारतका मेरा स्वप्न? आह! उसे पूरा होनेमें अभी सालों लगेंगे। मेरी दृष्टिमें जो स्वतन्त्र भारत है, वह स्वशासित और आत्मनिर्भर होगा, अन्य देशोंके

साथ शान्ति रखेगा और व्यापार व संचारकी उसमे सुव्यवस्था होगी। बडे नगरोमें नर-नारी इस तरह व्यस्त और सन्तुष्ट रहेगे जैसे मधुके छत्तोमें मधुमक्खियाँ रहती है, और परस्पर जुडे ऐसे गाँवोकी शृंखला होगी जो अपने घरेलू उद्योगोके सहारे सुखी होगे। इस नये स्वतन्त्र भारतमें स्त्रियाँ पुरुषोके साथ अपनी बराबरकी भूमिका अदा करेगी।

"इसलिए नये भारतको स्वच्छ नीले आकाशमें अपना झण्डा पूरा फहराते हुए, भविष्य और विश्वका सामना करने दो।"

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २१-१२-१९३१

२३२. गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीका अंश

लन्दन
३० नवम्बर, १९३१

श्री गजनवी: . . . हम पृथक् निर्वाचक-मण्डलोंकी माँग करते है, और हम उनकी माँग करते रहेंगे। वे हमें अब प्राप्त है। बीस सालसे भी अधिक समय तक वे हमें प्राप्त रहे है, उनके व्यावहारिक रूपका हमें काफी अनुभव है और हम उन्हें अपनी सुरक्षाके लिए सर्वथा आवश्यक मानते है। यह अनुभवका परिणाम है, केवल रायका नहीं है। आपकी अनुमतिसे, मै केवल कुछ वाक्य पढ़ना चाहूँगा, जो सर अब्दुल्ला अल-मैमून सुहरावर्दी द्वारा भारतीय केन्द्रीय समितिकी रिपोर्टके परिशिष्टमें उद्धृत किये गये है:

"मुसलमान हिन्दूका स्वाभाविक शत्रु है, मेरा ऐसा विश्वास नहीं है। . . . किसी भी अल्पसंख्यक समुदायके किसी भी न्यायोचित हितको बलिदान करके यदि स्वराज्य मिलना सम्भव हो भी, तो भी मुझे उसे प्राप्त करनेकी इच्छा नहीं है।"

(यंग इडियामें[1] श्री मो० क० गांधीके शब्द, जो 'स्टेट्समैन', १९-९-१९२९ के समुद्रपारीय संस्करणमें उद्धृत किये गये थे।)

गांधीजी: इस मतकी पुष्टिके लिए 'यग इडिया' यहाँ मौजूद है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेंड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स, पृष्ठ २०९

१. सही शब्दावलीके लिए देखिए खण्ड ४१, पृष्ठ ४२४।

२३३. तार : सान्यालको

[३० नवम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्][1]

परिस्थिति को ध्यानसे देख रहा हूँ। चाहता हूँ कि युवक अहिंसाका अमूल्य पाठ सीखे।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३६७) से।

२३४. पत्र : सर सैम्युअल होरको

[१ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व][2]

प्रिय सर सैम्युअल,

आपने मुझपर इतना भरोसा किया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मुझे खेद है कि मैं मानपत्र भेट करनेमें शामिल नही हो सकता। कारण आप जानते ही हैं। मुझे महामहिमसे व्यक्तिश कोई शिकायत नही है। लेकिन मानपत्र भेट करनेके पीछे जो सिद्धान्त है उससे मैं सहमत नही हो सकता। इस समस्यासे पार पानेका सर्वोत्तम उपाय यह है कि आप मुझे बतायें कि मानपत्र कब पेश किया जाना है ताकि मैं उस समय अनुपस्थित रह सकूँ। जहाँतक सम्भव हो सके, मैं ऐसा कोई काम नही करना चाहता जिससे उस कार्यवाहीकी शोभा नष्ट हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३७५) से, सौजन्य: ब्रिटिश हाई-कमिशन

१. यह श्री सान्यालके ३० नवम्बरको मिले तारके उत्तरमें था, जिसमें गांधीजी से ५ दिसम्बरको बरहमपुरमें होनेवाले विशेष बंगाल प्रान्तीय सम्मेलनके लिए सन्देश भेजनेको कहा गया था।

२. पत्रपर तिथि नहीं है। फिर भी यह स्पष्ट है कि यह १ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व लिखा गया होगा; क्योंकि गोलमेज परिषद्का अंतिम अधिवेशन इसी तिथिको समाप्त हुआ था।

२३५. पत्र : गोलमेज परिषद्के अध्यक्षको[1]

[१ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व][2]

अध्यक्ष

गोलमेज परिषद्

प्रिय महोदय,

हम, गोलमेज परिषद्में भाग लेनेवाले निम्न हस्ताक्षरकर्त्ता, सम्मेलनकी समाप्तिसे पहले, इस पत्रपर अपने हस्ताक्षर करके, यह व्यक्त करना और व्यक्तिगत रूपसे आपके ध्यानमे लाना चाहते हैं कि गोलमेज परिषद्मे भाग लेते हुए इंग्लैंडके अपने प्रवासमें हमें सयुक्त सामाजिक सचिवो, श्री एफ० ए० एम० एच० विन्सेट, सी० आई० ई०, सी० वी० ई०, एम० वी० ओ० और श्री पी० के० दत्तसे जो शालीन, सम्मानयुक्त और सौजन्यपूर्ण व्यवहार और उत्कृष्ट सेवाएँ प्राप्त हुई है, उनकी हम हृदयसे सराहना करते हैं। इन दो अधिकारियोंने अपने (कठिन और विषम कर्त्तव्योको जिस योग्यतासे पूरा किया उससे, हमारी रायमे, हम सब एक-दूसरेके निकट-सम्पर्कमें आ सके और एक-दूसरेको समझ सके।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी
[और अन्य अनेक]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८४) से; सौजन्य : इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२३६. भाषण : गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनमें

लन्दन
१ दिसम्बर, १९३१[3]

प्रधान मन्त्री महोदय और मित्रो,

यदि मैं आपके सामने बोले विना रह सकता तो अच्छा होता। किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि यदि मैं नही बोलूंगा तो यह आपके प्रति तथा उसी तरह मेरे

१. यह गांधीजी द्वारा तैयार किया गया था या नहीं, यह निश्चित नहीं है।

२. गोलमेज परिषद्का अन्तिम अधिवेशन १ दिसम्बरको हुआ था, और यह पत्र, जैसा कि इसके मजमूनमें संकेत है, उससे पहले लिखा गया था।

३. अधिवेशन ३० नवम्बरको शुरू हुआ और रातके ११-५० बजे स्थगित कर दिया गया। किन्तु १२-५ बजे रातमें ही फिर दूसरी बैठक भी शुरू कर दी गई।

सिद्धान्तके प्रति अन्याय होगा। सम्भव है कि ये काग्रेसकी ओरसे कहे गये अन्तिम शब्द हो। मै किसी भ्रममे नही हूँ। मै नही समझता कि इस समय मै जो-कुछ कहूँगा, उससे मन्त्रि-मण्डलके निर्णयपर कुछ असर पड सकता है। निर्णय तो शायद लिया जा चुका हो। लगभग एक पूरे महाद्वीपकी स्वतन्त्रताका प्रश्न केवल दलीलो अथवा सन्धि-वार्त्तासे भी कदाचित् ही हल हो सकता हो। वार्त्ताका भी कुछ अर्थ होता है, और वह भी कुछ काम करती है, किन्तु विशिष्ट परिस्थितियोमे ही। ऐसी परिस्थितियोके बिना वार्त्तासे कुछ नतीजा नही निकलता। किन्तु मै इन सब बातोकी ज्यादा चर्चा नही करना चाहता। प्रधान मन्त्री महोदय, आपने इस परिषद्की प्रारम्भिक बैठकमे जो शर्ते पढ़कर सुनाई थी, मै तो यथासम्भव उनकी हदमे ही रहना चाहता हूँ। इसलिए सबसे पहले तो मै इस परिषद्के सामने पेश हुई रिपोर्टोके सम्बन्ध मे ही दो शब्द कहूँगा। आप इन रिपोर्टोमे आम तौरपर यह कहा गया देखेगे कि अमुक-अमुक बहुत बडे बहुमतका विचार है, लेकिन कुछने इसके विपरीत मत प्रदर्शित किया है, इत्यादि। जिन पक्षोने विरुद्ध मत दिये है, उनके नाम नही दिये गये है। जब मै भारतमे था, तब मैने सुना था और मै यहाँ आया तब भी मुझसे कहा गया था कि बहुमतके सामान्य नियमसे कोई भी निर्णय न किया जायेगा, लेकिन, इस बातका उल्लेख मै यहाँ यह शिकायत करनेके लिए नही करता कि ये रिपोर्टे इस तरह तैयार की गई है, मानो सारा काम बहुमतके नियमसे ही किया गया हो। किन्तु इसका उल्लेख मुझे इसलिए करना पडा है कि इनमे से अधिकाश रिपोर्टोमे आप देखेगे कि किसी-न-किसी ओरसे इनके खिलाफ राय जाहिर की गई है, और दुर्भाग्यवश ज्यादातर मामलोमे ऐसी राय देनेवाला मै ही हूँ। प्रतिनिधि-बन्धुओकी रायसे असहमति प्रकट करना मेरे लिए कोई प्रसन्नताकी बात नही थी, किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि यदि मै असहमति प्रकट न करूँ तो मै काग्रेसका सच्चा प्रतिनिधि नही कहा जा सकता।

एक बात और है, जो मै इस परिषद्के ध्यानमे लाना चाहता हूँ और वह यह है कि काग्रेसकी असहमतिका क्या अर्थ है। सघ-सरचना समितिकी एक प्रारम्भिक बैठकमे मैने कहा था कि काग्रेस भारतकी ८५ प्रतिशतसे अधिक आबादी, अर्थात् मूक, मेहनतकश और अधपेट खाकर जीनेवाले करोडो लोगोकी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है। किन्तु मैने तो इससे आगे बढकर यह भी कहा था कि यदि महाराजागण मुझे क्षमा करे, तो कहूँगा, वह तो अपने सेवाके अधिकारसे राजाओकी और उसी तरह जमीदारो और शिक्षित वर्गका भी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है। मै उस दावेको फिर पेश करना चाहता हूँ और इस समय उसपर विशेष जोर देना चाहता हूँ।

परिषद्के दूसरे सब पक्ष खास-खास वर्गोके प्रतिनिधि होकर आये है। अकेली काग्रेस ही सारे भारतकी और सब वर्गोकी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है। वह कोई साम्प्रदायिक संस्था नही है, वह सब प्रकारकी साम्प्रदायिकताकी कट्टर शत्रु है। वह जाति, रग अथवा सम्प्रदायका कोई भेद नही करती है, उसके द्वार सबके लिए खुले है। सम्भव है कि उसने सदैव अपने सिद्धान्तका पालन न किया

हो। मैंने मनुष्य द्वारा सस्थापित एक भी ऐसी सस्था नही देखी, जिसने अपने सिद्धान्तका सदैव और सर्वथा पालन किया हो। मै जानता हूँ कि कई बार काग्रेससे चूक हुई है। और सम्भव है कि आलोचकोकी दृष्टिमे उससे ज्यादातर मौकोपर चूक ही होती रही हो। किन्तु कटुसे-कटु आलोचकको यह तो स्वीकार करना ही होगा, और उन्होने स्वीकार किया भी है कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस दिन-प्रति-दिन विकसित होती जानेवाली सस्था है; उसका सन्देश भारतके दूरातिदूर गाँवोमे पहुँचा है और अवसर आनेपर वह देशके ७,००,००० गाँवोमे रहनेवाली आम जनतापर अपने प्रभावका परिचय दे चुकी है।

और फिर भी मै देखता हूँ कि यहाँ काग्रेसको अनेक पक्षोमे एक पक्ष गिना जाता है। मै इसकी परवाह नही करता, मै इसे कांग्रेसके लिए कुछ सकट-रूप नही मानता, किन्तु जो कार्य करनेके लिए हम यहाँ इकट्ठे हुए है, उसके लिए सकट-रूप अवश्य मानता हूँ। काश, मै ब्रिटिश राजनीतिज्ञो और ब्रिटिश मन्त्रियोको यह विश्वास करा सकता कि काग्रेसमे अपने अगीकृत कार्यको पूरा करनेकी सामर्थ्य है। काग्रेस साम्प्रदायिकतासे रहित, एकमात्र अखिल भारतीय राष्ट्रीय सस्था है और वह निश्चय ही उन अल्पसख्यक समुदायोका भी प्रतिनिधित्व करती है जिन्होने अपने दावे यहाँ पेश किये हैं और जिनका कहना है — अथवा यो समझिए कि जिनकी ओरसे हस्ताक्षर करनेवाले लोगोका कहना है — और मेरे विचारसे ऐसा कहना अनुचित है — कि उनका अनुपात भारतकी कुल आबादीका ४६ प्रतिशत है। मेरा कहना यह है कि काग्रेस इन सभी अल्पसख्यक समुदायोका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है।

काग्रेसका यह दावा यदि स्वीकार कर लिया गया होता तो आज स्थिति कितनी भिन्न होती! मै अनुभव करता हूँ कि शान्तिके लिए और इस परिषद्मे बैठे हुए अग्रेज तथा भारतीय स्त्री-पुरुष सभीके प्रिय उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए मुझे काग्रेसका दावा कुछ विशेष आग्रहके साथ पेश करना पड रहा है। ऐसा मै इस कारणसे कहता हूँ: काग्रेस एक सबल सस्था है, वह ऐसी सस्था है, जिसपर समानान्तर सरकार चलाने अथवा चलानेका विचार रखनेका आरोप लगाया गया है, और एक तरहसे मै इस आरोपका समर्थन कर चुका हूँ। यदि आप यह समझ ले कि काग्रेसका तन्त्र कैसे काम करता है तो आप उस सस्थाका स्वागत करेगे जो समानान्तर सरकार चला सकती है और यह सिद्ध कर सकती है कि किसी स्वैच्छिक सस्थाके लिए भी, बिना किसी सैनिक शक्तिके, प्रतिकूल परिस्थितियोमे भी सरकारका तन्त्र चला सकना सम्भव है। लेकिन नही, आप ऐसा-कुछ नही कर रहे हैं। यद्यपि आपने काग्रेसको आमन्त्रित किया है, फिर भी आप उसका अविश्वास करते है। यद्यपि आपने उसे आमन्त्रित किया है, फिर भी आप सारे भारतकी ओरसे बोलनेके उसके दावेको अस्वीकार करते हैं। बेशक ससारके इस किनारेपर बैठे हुए आप लोग इस दावेका विरोध कर सकते है, और यहाँ मै इस दावेको साबित भी नही कर सकता। फिर भी यदि आप मुझे उसे दृढतासे पेश करते हुए देखते है, तो इसका कारण यह है कि मेरे सिरपर जबरदस्त जिम्मेदारी मौजूद है।

काग्रेस बागी मनोवृत्तिका प्रतिनिधित्व करती है। मै जानता हूँ कि बातचीतके जरिये भारतकी कठिनाइयोका सर्व-सम्मत हल निकालनेके लिए निमन्त्रित इस परिषद्मे 'बागी' शब्दका उच्चार भी न करना चाहिए। एकके-बाद एक अनेक वक्ताओने खडे होकर कहा है कि भारतको अपनी स्वतन्त्रता बातचीत और दलीलोसे ही प्राप्त करनी चाहिए, और ग्रेट ब्रिटेन यदि भारतकी माँगोको दलीलोसे ही स्वीकार करेगा, तो इसमे ग्रेट ब्रिटेनका अत्यन्त गौरव समझा जायेगा। किन्तु काग्रेसका मत सर्वथा ऐसा ही नही है। काग्रेसके पास एक और मार्ग है, वह आपको अप्रिय है।

मै यह बता दूँ कि मैंने एक भी बैठकसे गैरहाजिर न रहनेका प्रयत्न किया है और मैंने प्रत्येक वक्ताकी बातोको, मेरे लिए जहाँतक सम्भव था, पूरे ध्यानसे और आदरपूर्वक समझनेका प्रयत्न किया है। और इनमे से कई वक्ताओको मैंने यह कहते सुना है कि यदि भारतमे अराजकता, विद्रोह और आतकवादी प्रवृत्ति फैल जाये तो यह बहुत भयकर बात होगी। मै इतिहासका विशेष अध्येता होनेका दावा नही करता, किन्तु एक स्कूलके विद्यार्थीकी तरह मुझे इतिहासके पर्चेमे भी पास होना पडा था, इसलिए मैंने पढा था कि इतिहासके पृष्ठपर स्वतन्त्रताके लिए लडनेवालोके रक्तके लाल धब्बे लगे हुए है। मेरी जानकारीमे ऐसा एक भी उदाहरण नही, जिसमे राष्ट्रोने अपार कष्ट सहे विना स्वतन्त्रता प्राप्त की हो। जिन्हे मै स्वाधीनता या स्वतन्त्रताके अन्ध-प्रेमी मानता हूँ, वे लोग आजतक खूनी खजर, विषके प्याले, बन्दूककी गोली, भाले तथा सहारके इन सभी शस्त्रास्त्रो और साधनोका उपयोग करते आये है, फिर भी इतिहासकारोने उसकी निन्दा नही की है। मै हिंसावादियोकी वकालत करनेके लिए खडा नही हुआ हूँ। श्री गजनवीने हिंसावादियोकी चर्चा की, और उसमे कलकत्ता नगरनिगमको भी सम्मिलित किया। उन्होने जब कलकत्ता नगरनिगमकी एक घटनाका उल्लेख किया, तो उससे मुझे चोट पहुँची। वे यह कहना भूल गये कि कलकत्ताके महापौरने, स्वय वे और नगरनिगम अपने काग्रेसी सदस्योके कारण जिस भूलमे फँस गया था, उसका काफी प्रक्षालन किया। जो काग्रेसी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे हिंसाको उत्तेजन देते है, मै उनकी वकालत भी नही करता। काग्रेसके ध्यानमे उक्त घटनाके आते ही उसने उसके प्रतिकारका प्रयत्न आरम्भ किया। उसने तुरन्त ही कलकत्ताके महापौरसे इस घटनाका विवरण माँगा और महापौरने अपनी सहज सज्जनताका परिचय देते हुए तुरन्त ही अपनी भूल स्वीकार कर ली और बादमे भूल-सुधारके लिए कानूनन जो-कुछ सम्भव था, वैसा किया। इस घटनापर बोलकर मुझे इस परिषद्का अधिक समय नही लेना चाहिए। कलकत्ता नगरनिगमकी ओरसे चलनेवाली चालीस पाठशालाओके विद्यार्थी जो गीत गाते बताये जाते है, उसका भी श्री गजनवीने उल्लेख किया है। उनके भाषणमे और भी ऐसी अनेक भ्रमपूर्ण बाते थी, जिनके सम्बन्धमे मै बोल सकता हूँ; किन्तु उनपर बोलनेकी मेरी इच्छा नही है। कलकत्ताके महान् नगरनिगमके प्रति मेरे मनमे जो सम्मान है और सत्यके प्रति जो आदर है उसके कारण और फिर जो लोग अपना बचाव करनेके लिए यहाँ उपस्थित नही है, उनका खयाल

करके ही मैं ये दो प्रकट एवं स्पष्ट उदाहरण यहाँ दे रहा हूँ। मैं एक क्षणके लिए भी यह बात नहीं मानता कि यह गीत कलकत्ता नगरनिगमकी पाठशालाओंमें नगर-निगमकी जानकारीमें सिखाया जाता था। मैं इतना अवश्य जानता हूँ कि गत वर्षके भयंकर दिनोंमें ऐसी कई बातें हुईं जिनके लिए हमें खेद है और जिनके लिए हमने प्रायश्चित्त और पश्चात्ताप किया है। यदि कलकत्तामें हमारे बालकोंको वह गीत गाना सिखाया गया हो, जो श्री गजनवीने यहाँ दोहराया है, तो मैं उनकी ओरसे क्षमा माँगनेके लिए यहाँ मौजूद हूँ। किन्तु इतना मैं चाहूँगा कि इन पाठशालाओंके शिक्षकोंने यह गीत नगरनिगमकी जानकारीमें और उसके प्रोत्साहनसे सिखाया है, यह बात साबित की जाये।

कांग्रेसके विरुद्ध इस प्रकारके आरोप अनगिनत बार लगाये जा चुके हैं और अनगिनत बार कांग्रेस उनका खण्डन कर चुकी है। फिर भी इस अवसरपर मैंने इसका उल्लेख किया है। यह भी मैंने यही बतानेके खयालसे किया है कि स्वतन्त्रताके लिए लोग लड़े हैं, उन्होंने अपने प्राणोंकी आहुति दी है, और जिन्हें वे अपदस्थ करना चाहते थे उन्हें मारा है और उनके हाथों मारे गये हैं। अब कांग्रेस रंगमंचपर आती है, और इतिहासके लिए अपरिचित एक नवीन उपाय — सविनय अवज्ञा — खोज निकालती है, और उसका अनुसरण करती रहती है। किन्तु मेरे सामने फिर एक पत्थरकी दीवार आ खड़ी होती है, और मुझसे कहा जाता है कि दुनियाकी कोई भी सरकार इस उपाय, इस पद्धतिको सहन नहीं कर सकती। ठीक है, सरकारकी मर्जी न हो तो वह इसे सहन न करे; खुली बगावतको किसी भी सरकारने सहन नहीं किया है। यह भी स्वाभाविक है कि कोई भी सरकार सविनय अवज्ञाको सहन न करे। लेकिन सरकारोंको इन शक्तियोंके आगे भी झुकना पड़ता है। ब्रिटिश सरकार भी इन शक्तियोंके आगे झुकी है और इसी तरह जबरदस्त डच सरकारको आठ वर्षोंके संघर्षके बाद अनिवार्य स्थितिके सामने झुकना पड़ा था। जनरल स्मट्स एक महान् सेनानायक, महान् राजनीतिज्ञ और लोगोंसे कसकर काम लेनेवाले व्यक्ति हैं, लेकिन वे भी केवल अपने आत्म-सम्मानकी रक्षा करनेके लिए लड़नेवाले निर्दोष पुरुषों और स्त्रियोंको मौतके घाट उतारे जानेकी कल्पना-मात्रसे काँप उठे, और उन्होंने १९०८ में जो चीज कभी न देनेकी प्रतिज्ञा की थी, वही चीज उन्हें इन सविनय प्रतिरोधियोंकी पूरी तरह कसौटी पर कस लेनेके बाद १९१४ में देनी पड़ी, यद्यपि तब उन्हें जनरल बोथाका भी सहयोग-समर्थन प्राप्त था। भारतमें लॉर्ड चेम्सफोर्डको यही करना पड़ा था, बम्बईके गवर्नरको बोरसद और बारडोलीमें यही करना पड़ा था। प्रधान मन्त्री महोदय, आपसे मेरा यह कहना है कि अब इस प्रवाहको रोकनेका समय बीत चुका है, और इसीके बारेमें, उनके सामने आज जो विकल्प है — कदाचित् अलग रास्ता अपनानेका विकल्प — उसीके बारेमें सोचकर मेरा मन परेशान है। आशाका कोई आधार दिखाई न देनेपर भी मैं आशा बनाये रखूँगा, अगर मुझसे हो सका तो अपने देशके करोड़ों पुरुषों और स्त्रियोंको, बल्कि बच्चोंको भी, इस अग्नि-परीक्षामें उतारे बिना अपने देशके लिए कोई सम्मानजनक समाधान प्राप्त करने

की मै हरचन्द कोशिश करूँगा। उन्हे एक बार फिर उस तरहके सघर्षमे उतारना मेरे लिए प्रसन्नता और सन्तोषका विषय नही हो सकता, लेकिन अगर हमारे भाग्यमे, पुन. आगकी तपन सहना ही लिखा है तो उसे मै अत्यन्त प्रसन्नताके साथ स्वीकार करूँगा और मेरे मनको यह परम सन्तोष प्राप्त रहेगा कि मैंने जो ठीक समझा, वही कर रहा हूँ, देशने जो ठीक समझा, वही कर रहा है। इसके अतिरिक्त देशको यह सन्तोष भी प्राप्त रहेगा कि कमसे-कम वह किसीकी जान तो नही ले रहा है, इसके बजाय स्वय अपने प्राणोकी आहुति दे रहा है, वह ब्रिटेनके लोगोको सीधा कोई कष्ट नही पहुँचा रहा है, बल्कि स्वय कष्ट सह रहा है। प्रोफेसर गिलबर्ट मरेने मुझसे एक बात कही थी, जिसे मै कभी नही भूलूँगा। उनकी प्रवाहमयी भाषाको ज्योका-त्यो दोहरा सकना तो कठिन है, फिर भी यहाँ मै उसका आशय बता रहा हूँ। उन्होने कहा था: आप क्षण-भरको भी ऐसा न माने कि जब आपके हजारो देशभाई कष्ट सहते है तो अग्रेजोको कोई कष्ट नही होता। क्या आप हमे इतना हृदय-हीन मानते है? नही, मै उन्हे इतना हृदय-हीन नही मानता। मै जानता हूँ कि आपके मनको कष्ट पहुँचेगा, लेकिन मै आपके हृदयको द्रवित करना चाहता हूँ और इसलिए आपके मनको कष्ट पहुँचाना चाहता हूँ। जब आपका हृदय द्रवित होगा, उस समय बातचीतका उपयुक्त अवसर आयेगा। बातचीत तो बराबर चलती ही रहेगी, और अगर इस बार मै आपसे बातचीत करनेके लिए इतने मीलोका फासला तय करके यहाँ आया हूँ तो यही सोचकर आया हूँ कि आपके देशभाई लॉर्ड इर्विनने अपने अध्यादेशोके जरिये हमारी पर्याप्त परीक्षा ले ली है, उन्हे इस बातके पर्याप्त प्रमाण मिल गये है कि भारतके हजारो नर-नारियो और बच्चोने कष्ट-सहन किया है; और उन्हे इस बातका प्रमाण मिल गया है कि अध्यादेश हो या नही, लाठियाँ चलाई जाये या नही, इस उमडते प्रवाहको कोई चीज रोक नही सकती, स्वतन्त्रताके लिए व्याकुल भारतके नर-नारियोके हृदयोमे उठती प्रबल भावनाओको कोई चीज दबा नही सकती।

अब भी कुछ समय शेष है, इसलिए मै चाहता हूँ कि काग्रेस किस चीजको लेकर चल रही है, उसे आप समझ लीजिए। मेरा जीवन आपके हाथमे है। कार्य-समितिके, अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीके सभी सदस्योका जीवन आपके हाथमे है। किन्तु स्मरण रखिए कि इन करोडो मूक मानवोका जीवन भी आपके ही हाथमे है। मेरा बस चले तो मै इन प्राणियोको होम देना नही चाहता। इसलिए स्मरण रखिए कि यदि सयोगसे मै कोई सम्मानपूर्ण समझौता करा सकूँ, तो उसके लिए कितना भी बलिदान क्यो न करना पडे, मै उसे बहुत नही समझूँगा। जो भावना काग्रेसके हृदयमे काम कर रही है—अर्थात् यह कि भारतको सच्ची स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए—वह भावना यदि मै आपमे भर सकूँ, तो आप मुझमे सदा समझौतेकी अधिकसे-अधिक भावना पायेगे। स्वतन्त्रताको आप कुछ भी नाम दे, गुलाबको दूसरा कोई भी नाम दे, वह उतनी ही सुगन्ध देगा, किन्तु मै जो चाहता हूँ वह स्वतन्त्रताका असली गुलाब होना चाहिए, नकली नही। यदि आपके और उसी तरह काग्रेसके, इस परिषद्के

और उसी तरह अंग्रेज जनताके मनमे इस शब्दका एक ही अर्थ हो तो आप देखेंगे कि समझौतेके लिए अधिकसे-अधिक गुंजाइश है, और कांग्रेसमें आपको सदा समझौतेकी भावना दिखाई देगी। किन्तु जबतक ऐसा मतैक्य नही होता, जबतक जिस शब्दका प्रयोग आप, मै और सब करते है, उसकी एक ही व्याख्या, एक ही फलितार्थ नही होता, तबतक कोई समझौता सम्भव नही। हम जिन शब्दोका प्रयोग करते है, उनकी हममे से प्रत्येकके मनमे अलग-अलग व्याख्या हो तो समझौता हो ही किस तरह सकता है? प्रधान मन्त्री महोदय, यह असम्भव है। मै आपसे अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि उस हालतमे सबको स्वीकार्य कोई सामान्य आधार, कोई ऐसा आधार, जहाँ आप समझौतेकी भावनाका प्रयोग कर सके, सर्वथा असम्भव है। और मुझे अत्यन्त दु.खके साथ कहना पडता है कि इन सब उकता देनेवाले सप्ताहोमे हम जिन शब्दोका प्रयोग कर रहे है, उनकी कोई भी सर्व-सम्मत व्याख्या मै अभीतक ढूंढ नही सका हूँ।

पिछले हफ्ते एक शकालु सज्जनने मुझे वेस्टमिन्स्टरका कानून दिखाते हुए कहा कि "क्या आपने 'औपनिवेशिक स्वराज्य' शब्दकी परिभाषा पढी है?" मैने उस परिभाषाको पढा, लेकिन स्वभावत. मुझे यह देखकर कोई परेशानी या अचम्भा नही हुआ कि उसमे औपनिवेशिक स्वराज्यकी विशद परिभाषा की गई है, और उसमे न केवल सामान्य ढगकी परिभाषा की गई है, बल्कि उसके विशिष्ट उदाहरण भी बताये गये है। उसमे बहुत साफ-साफ कहा गया है: औपनिवेशिक स्वराज्य-प्राप्त राज्योमे आस्ट्रेलिया, दक्षिण आफ्रिका, कनाडा आदि शामिल माने जायेगे; और अन्तमे आयरिश फ्री स्टेटका नाम दिया गया है। मै नही समझता, उसमे मिस्रका भी उल्लेख था। फिर उन्होने कहा. "क्या आप समझ रहे हैं कि आपके औपनिवेशिक स्वराज्यका मतलब क्या है?" लेकिन, उसका मुझपर कोई असर नही हुआ। मेरे औपनिवेशिक स्वराज्य अथवा पूर्ण स्वराज्यका क्या मतलब है, इसकी मुझे कोई परवाह नही है। एक तरहसे मेरे मनका बोझ हलका ही हुआ। मैंने कहा कि अब मुझे 'औपनिवेशिक स्वराज्य' शब्द पर विवाद करनेसे छुटकारा मिल गया है, क्योकि मै उससे अलग हूँ। मै पूर्णस्वराज्य चाहता हूँ, लेकिन इसपर भी कई अंग्रेजोने कहा है. "हाँ, आपको पूर्ण स्वराज्य तो मिल सकता है, लेकिन यह तो बताइए कि पूर्ण स्वराज्यका मतलब क्या है।" फिर हम उसी अलग-अलग परिभाषाओ पर आ गये। इसीलिए मैं कहता हूँ कि कांग्रेसकी माँग पूर्ण स्वराज्यके रूपमे पेश की गई है।

आपके एक बहुत बडे राजनयिक — उनका नाम बताना मै उचित नही समझता — मुझसे बातचीत कर रहे थे। बातचीतके दौरान उन्होने कहा· "सच मानिए, मै नही जानता था कि पूर्ण स्वराज्यसे आपका मतलब यह है।" उन्हे जानना चाहिए था, मगर जानते नही थे। और वे क्या नही जानते थे, यह मै आपको बता रहा हूँ। जब मैंने कहा कि "मै साम्राज्यके अन्तर्गत साझेदार नही हो सकता" तो उन्होने कहा, "हाँ, हाँ, यह तो बिलकुल तर्कसगत बात है।" इस पर मैंने कहा, "लेकिन मै साझेदार होना चाहता हूँ। मै जबरदस्तीकी साझेदारीको नही चाहता हूँ,

लेकिन ग्रेट ब्रिटेनका साझेदार होना जरूर चाहता हूँ। मै इग्लैडकी जनताके साथ साझेदारीका रिश्ता कायम करना चाहता हूँ। लेकिन साथ ही मै ठीक उसी तरहकी स्वतन्त्रताका उपभोग करना चाहता हूँ जिस तरहकी स्वतन्त्रता आपके यहाँके लोगोको प्राप्त है। और मै इस साझेदारीको केवल भारतके हित-साधनके लिए अथवा दोनो देशोके पारस्परिक हित-साधनके लिए प्राप्त नही करना चाहता हूँ। इसे मै इसलिए प्राप्त करना चाहता हूँ जिससे दुनियाके सिरसे वह भारी बोझ उतर जाये जो उसे कुचलता जा रहा है।"

यह कोई दस-बारह दिन पहलेकी बात है। और शायद यह बात विचित्र लगेगी कि फिर मुझे एक अन्य अग्रेज सज्जनका भी पत्र मिला और आप उन्हे भी जानते है और उनका भी बहुत आदर करते है। उन्होने जो बहुत-सी बाते लिखी थी, उनमे एक यह भी थी · "मै हृदयसे ऐसा मानता हूँ कि मानव-जातिका सुख और शान्ति हमारी मित्रतापर ही निर्भर है।" मानो मै 'हमारी' शब्दका अर्थ न समझ पाऊँगा, इस तरह उन्होने आगे स्पष्ट करते हुए कहा, "आपकी और हमारी जनताकी मित्रता," और उन्होने जो एक और बात कही उसे भी मुझे यहाँ दोहरा देना चाहिए। वह यह थी: "और सभी भारतीयोमे आप ही ऐसे है जिसे सभी अग्रेज पसन्द करते है और समझते है।"

वे चापलूसी करनेवाले आदमी नही है, और मै नही समझता कि यह अन्तिम वाक्य उन्होने मेरी चापलूसी करनेके लिए लिखा है। मै इससे तनिक भी फूल उठनेवाला भी नही हूँ। इस पत्रमे ऐसी बहुत-सी बाते है जो यदि मै आपको बता सकता तो आप शायद इस वाक्यके मर्मको ज्यादा अच्छी तरह समझ जाते। लेकिन आपको इतना बता दूँ कि इस अन्तिम वाक्यमे उनका आशय व्यक्तिगत रूपसे मुझसे नही था। व्यक्तिकी हैसियतसे तो मै कुछ हूँ ही नही और मैं जानता हूँ कि व्यक्तिकी हैसियतसे मै किसी भी अग्रेजके लिए किसी कामका नही होऊँगा। लेकिन कुछ अग्रेज मुझे कुछ महत्त्व इसलिए देते है कि मै एक उद्देश्यको लेकर चल रहा हूँ, मै एक राष्ट्रका, एक प्रभावशाली सगठनका प्रतिनिधित्व करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। यही कारण है कि वे ऐसा कहते है।

लेकिन, प्रधान मन्त्री महोदय, यदि मै कोई ऐसा आधार ढूंढ सकूं जिस परसे हमारे कामको आगे बढाया जा सके तो समझौतेके लिए काफी गुजाइश है। मैं जिस चीजके लिए तरस रहा हूँ, वह है मित्रता। मेरा काम दासोके स्वामी और अत्याचारीको समूल नष्ट कर देना नही है। मैने जीवनमे जो दर्शन अपनाया है, वह मुझे वैसा करनेकी इजाजत नही देता और आज काग्रेसने उस दर्शनको अपना लिया है — सिद्धान्तके रूपमे तो नही, जैसा कि वह मेरे लिए है, लेकिन नीतिके रूपमे उसने अवश्य अपना लिया है, क्योकि वह मानती है कि पैतीस करोड आबादीवाले राष्ट्र भारतके लिए यही रास्ता सही और सबसे अच्छा है। ३५ करोड आबादीवाले राष्ट्रको हत्यारेके खजर या विषके प्याले, तलवार, भाले या गोलियोकी जरूरत नही है। उसे तो सिर्फ सकल्पकी आवश्यकता है, 'न' कह सकनेकी सामर्थ्यकी जरूरत है और वह राष्ट्र आज 'न' कहना सीख रहा है।

लेकिन तब वह राष्ट्र करता क्या है? क्या वह अंग्रेजोको एकदम निकाल देना चाहता है या कि उसके मनमें ऐसी कोई भी इच्छा है? नही, ऐसा नही है। आज उसका उद्देश्य अंग्रेजोका हृदय-परिवर्त्तन करना है। मै इंग्लैंड और भारतके सम्बन्धको तोड़ना नही चाहता, लेकिन उस सम्बन्धको एक नया रूप अवश्य देना चाहता हूँ। मै अपने देशकी उस गुलामीको आजादीका रूप देना चाहता हूँ। आप चाहे पूर्ण स्वराज्य कहे या और कुछ, शब्दोको लेकर मैं कोई विवाद नही करूँगा, और भले ही मेरे देशवासी किसी अन्य शब्दको चुननेपर आपत्ति करें, लेकिन यदि आपके सुझाये शब्दका आशय वही होगा जो हमारी माँगका है तो मै उनके विरोधको शान्त कर दूँगा। इसीलिए मैंने आपका ध्यान इस बातकी ओर बार-बार दिलाया है कि आप जो सुरक्षात्मक पूर्वोपाय सुझाते रहे हैं, वे सर्वथा असन्तोषजनक हैं। वे भारतके हकमें नही हैं।

वाणिज्य तथा उद्योग संघके तीन विशेषज्ञोने अपने-अपने तरीकेसे, विशेषज्ञोकी हैसियतसे अपने-अपने अनुभवके आधारपर, आपको बताया है कि जब भारतकी आयका ८० प्रतिशत इस तरह गिरवी रख दिया जायेगा कि वह वापस आ ही न सके तो कोई भी उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल प्रशासनकी समस्याओको हल नही कर पायेगा। उन्होने अपने पुष्कल ज्ञानके आधारपर, जिस तरह मैं बता सकता था, उससे कही अच्छी तरह आपको बता दिया है कि इन वित्तीय सुरक्षात्मक पूर्वोपायोका मतलब भारतके लिए क्या है। उनका मतलब भारतको पूरी तरह अपंग बना देना है। इस परिषद्में सुरक्षात्मक पूर्वोपायोपर चर्चा हुई है, उन पूर्वोपायोमें अनिवार्यत. प्रतिरक्षा और सेनाके प्रश्न भी आ जाते हैं। फिर भी जहाँ मैंने यह कहा है कि सुरक्षात्मक पूर्वोपाय जिस रूपमें पेश किये गये है, उस रूपमें वे असन्तोषजनक है, वहाँ मैंने यह कहनेमें भी संकोच नही किया है और न अब इस बातको दोहरानेमें संकोच कर रहा हूँ कि कांग्रेस सुरक्षात्मक पूर्वोपायोको स्वीकार करनेको वचनबद्ध है, लेकिन ऐसे पूर्वोपायोको जो भारतके हितमें हो।

संघ-संरचना समितिकी एक बैठकमें मैंने निस्संकोच भावसे इस स्वीकृतिको विस्तारसे समझाया था और कहा था कि सुरक्षात्मक पूर्वोपाय इंग्लैंडके लिए भी लाभदायक होने चाहिए। मै ऐसे सुरक्षात्मक पूर्वोपाय नही चाहता जो केवल भारतके लिए लाभदायक हो और ब्रिटेनके सच्चे हितोके विरुद्ध हो। भारतके काल्पनिक हितोकी बलि चढानी होगी। ग्रेट ब्रिटेनके भी काल्पनिक हितोकी बलि देनी पडेगी। इसी तरह भारतके अनुचित हितोका त्याग करना होगा, और ग्रेट ब्रिटेनके भी अनुचित हितोका त्याग करना होगा। इसलिए मै एक बार फिर कहता हूँ कि यदि सभी प्रतिनिधियोके मनमे एक शब्दका एक ही अर्थ हो तो मै श्री जयकर, सर तेजबहादुर सप्रू और इस परिषद्में बोलनेवाले अन्य प्रतिष्ठित वक्ताओकी बातसे सहमत हूँ। उस हालतमें मै उन सबसे सहमत होऊँगा जिन्होने कहा है कि इतनी सारी मेहनत करनेके बाद आखिरकार हममें काफी हदतक सहमति हो गई है, लेकिन मेरे लिए निराशा और दु:खका विषय यह है कि मै इन शब्दोका वही अर्थ नही लगाता जो दूसरे

लोग लगाते है। मुझे बहुत आशका है कि सुरक्षात्मक पूर्वोपायोमे जो अर्थ श्री जयकर देखते है, मै उससे भिन्न अर्थ देखता हूँ, और जो अर्थ श्री जयकर और मै देखते है वे शायद —— उदाहरणके तौरपर कहूँ तो —— उस अर्थसे सर्वथा भिन्न है जो सर सैम्युअल होर देखते है। वैसे मै निश्चयपूर्वक कुछ नही कह सकता। हमारा आमना-सामना कभी हुआ ही नही है। आपके शब्दोमे कहूँ तो हम कभी यथार्थपर उतरे ही नही है, और मै आमना-सामना करनेके लिए, यथार्थपर उतरनेके लिए बहुत उत्सुक हूँ, बल्कि उसके लिए आकुल हूँ। मै सोचता रहा हूँ : हम सब उत्तरोत्तर अधिकाधिक निकट क्यो नही आ रहे है, क्यो हम तकरीरबाजी, वाग्मिता-प्रदर्शन, बहस-मुबाहसे और अपनी छोटी-छोटी बाते मनवानेका सन्तोष पानेमे अपना समय बरबाद कर रहे है? भगवान् साक्षी है, मै अपनी आवाज खुद नही सुनना चाहता। ईश्वर साक्षी है कि मै किसी भी बहस-मुबाहसे मे भाग नहीं लेना चाहता। मै जानता हूँ कि स्वतन्त्रता किंचित् अधिक ठोस धातुकी बनी हुई चीज है और मै यह भी जानता हूँ कि भारतकी स्वतन्त्रता तो बहुत ही ठोस धातुकी बनी हुई वस्तु है। हमारी कुछ ऐसी समस्याएँ है जो किसी भी राजनयिकको चक्करमे डाल देंगी। हमारी कुछ ऐसी समस्याएँ है, जो दूसरे राष्ट्रोके सामने नही है। लेकिन, उनसे मै घबराता नही हूँ, जो भारतीय वातावरणमे पले-बढे है, उन्हे वे चक्करमे नही डाल सकतीं। ये समस्याएँ तो हमारे साथ लगी ही हुई है। हमे महामारीसे निबटना है, मलेरियाकी समस्यासे जूझना है। हमे साँपों, बिच्छुओ, बन्दरो, बाघो और शेरोसे निबटना पडता है, लेकिन आपको तो यह सब नही करना पडता। हमे इन समस्याओसे इसलिए निबटना है कि हम इन्हीके बीच पले-बढे है। हम उनसे घबराते नही है। इन विषैले कीड़ो और विभिन्न जीव-जन्तुओके अस्तित्वके बावजूद किसी-न-किसी प्रकार हमारा अस्तित्व कायम है। इसी प्रकार हम इन समस्याओको भी झेल लेगे और इनमे से कोई-न-कोई रास्ता निकाल ही लेगे। लेकिन आज हम और आप एक गोलमेज परिषद्मे एकत्र हुए है और हम कोई ऐसा सर्वग्राह्य सूत्र ढूँढना चाहते है जो हमारे उद्देश्यकी पूर्त्तिमे सहायक हो सके। आप सच मानिए कि वैसे तो मैने काग्रेसकी ओरसे जो दावा पेश किया है, और जिसे अब मै यहाँ दोहराना नही चाहता, उसकी एक भी मदको उसमे से हटानेको तैयार नही हूँ और सघ-सरचना समितिके समक्ष मुझे जो भाषण देने पडे उनमे से एक भी शब्द निकालनेको तैयार नही हूँ, किन्तु मै यहाँ समझौतेकी इच्छा लेकर खड़ा हूँ, मै ब्रिटिश मेधा अथवा श्री शास्त्री, सर तेज-बहादुर सप्रू, श्री जयकर, श्री जिन्ना, सर मुहम्मद शफी और अन्य सविधान-शास्त्रियोकी मेधासे उत्पन्न एक-एक सूत्रपर विचार करनेको तैयार हूँ। मै घबराने-वाला नही हूँ। जबतक मेरी जरूरत है तबतक मै यहाँ रहूँगा, क्योकि मै सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू नही करना चाहता। दिल्लीमे जो सघर्ष-विराम हुआ था, उसे मै स्थायी समाधानका रूप देना चाहता हूँ। लेकिन भगवान्के लिए मुझे, मुझ कमजोर, ६२ वर्षके बूढे आदमीको थोडा मौका दीजिए। आप उसके लिए और जिस संगठनका वह प्रतिनिधित्व करता है, उसके लिए थोड़ी-सी गुजाइश निकालिए।

आज भले ही ऐसा दिखता हो कि आप मुझपर विश्वास करते है, लेकिन उस सगठनके प्रति आपके मनमे अविश्वास है। आप क्षण-भरको भी मुझे उस सगठनसे अलग रखकर न देखे जिसमे मेरी स्थिति समुद्रमें बूंदके समान है। मै जिस सगठनमें हूँ, उससे मै बडा नही हूँ। मै उससे बहुत ही छोटा हूँ, और अगर आप मेरे लिए गुजाइश निकालते है, मेरा विश्वास करते है, तो आपसे मेरा अनुरोध है कि आप काग्रेसका भी विश्वास करे। अन्यथा मुझमे विश्वास करना बेकार है। जो अधिकार मुझे काग्रेसने दिया है, उसके अलावा मेरा और कोई अधिकार नही है। काग्रेस जो-कुछ करने योग्य है, उसे आप वह सब करनेका मौका दे तो आप अपनी आतकवादी कार्रवाईको तिलाजलि दे. देगे, आपको उसकी जरूरत ही नही रह जायेगी। आज आपको आतकवादियोका सामना करना पड रहा है। आपके अनुशासनबद्ध और संगठित आतकके साथ-साथ उन आतकवादियोकी भी प्रवृत्ति चल रही है। इसका कारण यह है कि आप तथ्योकी ओर ध्यान नही देते या जो बात दिनके उजालेकी तरह साफ दिखती है उसे देखते ही नही। ये आतकवादी अपने खूनसे बहुत ही साफ अक्षरोमें जो लेख लिख रहे है, क्या उसे आप देखनेका कष्ट नही करेंगे? क्या आप यह देखनेका कष्ट नही करेगे कि हम गेहूँकी नही, आजादीकी रोटी चाहते है, और आज ऐसे हजारो लोग है जिन्होने प्रतिज्ञा कर रखी है कि जबतक वह आजादी नही मिलती, न खुद चैन लेगे, न देशको चैन लेने देगे।

तो मै आपसे उस स्पष्ट लेखको पढनेका अनुरोध करता हूँ। आपसे विनती करता हूँ कि आप अपने धीरजके लिए प्रसिद्ध भारतके लोगोके धीरजकी परीक्षा न ले। हम एक विनम्र जातिके रूपमे हिन्दुओकी चर्चा करते है, और हिन्दुओके सम्पर्कमे आकर — चाहे वह सम्पर्क अच्छा रहा हो या बुरा — मुसलमान भी वैसे ही नम्र हो गये है। अब मुसलमानोके उल्लेखसे मुझे सबको चक्करमे डालनेवाली अल्पसख्यको की समस्याका ध्यान आता है। आप विश्वास कीजिए, वह समस्या यहाँ भी है, और जो बात मै भारतमे कहता था उसे यहाँ फिर दोहराता हूँ, उसे मै भूला नही हूँ — अर्थात् यह कि अल्पसख्यकोकी समस्याके समाधानके बिना भारतको स्वराज्य नही मिल सकता। मै इस बातको जानता हूँ, इसे महसूस करता हूँ, फिर भी मै यहाँ कदाचित् इस आशासे आया कि हो सकता है, यहाँ मै कोई समाधान ढूंढ पाऊँ। लेकिन अब भी मैने यह आशा छोड नही दी है कि किसी दिन हम अल्पसख्यकोकी समस्याका कोई सच्चा और जीवन्त समाधान ढूंढ पायेगे। मैने अन्यत्र भी कहा है और यहाँ फिर कहता हूँ कि जबतक विदेशी शासन-रूपी पच्चरने एक समुदायसे दूसरे समुदायको, एक वर्गको दूसरे वर्गसे अलग कर रखा है, तबतक कोई सच्चा और जीवन्त समाधान नही हो सकता, इन समुदायोके बीच सच्चा सौहार्द स्थापित नही हो सकता। वह अन्तत. और अधिकसे-अधिक एक कागजी समाधान ही होगा। लेकिन ज्यो ही आप उस पच्चरको निकालेगे, उनका घरेलू बन्धन, घरेलू स्नेह-सौहार्द, एक ही देशमे जन्म लेनेका बोध अपना रग दिखाने लगेगा। क्या आप ऐसा मानते है कि इन सबका कोई असर नही होगा?

जब वहाँ ब्रिटिश शासन नही था, जब वहाँ कोई अंग्रेज दिखाई नही देता था तब क्या हिन्दू, मुसलमान और सिख आपसमे बराबर लड ही रहे थे? हिन्दू और मुसलमान इतिहासकारो द्वारा दिये गये विशद और सप्रमाण विवरणोके आधारपर हम कह सकते है कि तब भी हम अपेक्षाकृत शान्तिपूर्वक रह रहे थे। और ग्रामवासी हिन्दुओ और मुसलमानोमे तो आज भी कोई झगडा नही है। उन दिनो तो उनके बीच झगडेका नामो-निशान तक नही था। स्वर्गीय मौलाना मुहम्मद अली, जो खुद ही किसी हदतक इतिहासकार थे, मुझसे अकसर कहा करते थे कि "अगर अल्लाहने मुझे इतनी जिन्दगी बख्शी तो मेरा इरादा भारतमे मुसलमानी हुकूमतका इतिहास लिखनेका है। उसमे दस्तावेजी सबूतोके साथ यह दिखा दूँगा कि अंग्रेजोने गलती की है, औरगजेब उतना बुरा नही था जितना बुरा उसे अंग्रेज इतिहासकारोने दिखाया है, मुगल हुकूमत उतनी खराब नही थी जितनी खराब अंग्रेज इतिहासकारोने बताई है," इत्यादि। ऐसा ही हिन्दू इतिहासकारोने भी लिखा है। यह झगडा पुराना नही है, यह झगडा तो तब शुरू हुआ जब हम गुलामीकी लज्जाजनक स्थितिमे पडे। मै यह कहनेकी धृष्टता करता हूँ कि यह अंग्रेजोके भारत-आगमनके साथ शुरू हुई, और ज्यो ही भारत तथा ब्रिटेनका सम्बन्ध — यह दुर्भाग्यपूर्ण, कृत्रिम और अस्वाभाविक सम्बन्ध — स्वाभाविक रूप लेगा, ज्यो ही उनका सम्बन्ध ऐसी साझेदारीके सम्बन्धका रूप लेगा — पता नही, ऐसा कब होगा अथवा होगा भी या नही — जिसे दोमे से कोई भी पक्ष इच्छानुसार त्याग सकता हो, तोड सकता हो, यह ऐसा रूप कभी लेगा त्यो ही आप देखेगे कि हिन्दू, मुसलमान, सिख, यूरोपीय, आग्ल-भारतीय, ईसाई, अस्पृश्य सब इस तरह घुल-मिलकर साथ रहने लगे है मानो वे एक ही शरीरके विभिन्न अग हो।

अब मै देशी नरेशोके बारेमे दो शब्द कहकर अपनी बात समाप्त करूँगा। मैने देशी नरेशोके बारेमे ज्यादा-कुछ नही कहा है और न आजकी रात ही ज्यादा-कुछ कहना चाहता हूँ। लेकिन अगर मै देशी नरेशोके सामने — गोलमेज परिषद्के सामने नही — अपना दावा पेश न करूँगा तो उनके साथ और कांग्रेसके साथ अन्याय करूँगा। देशी नरेशोको, वे जिन शर्तोपर सघमे शामिल होना चाहेगे, वे शर्ते पेश करनेका पूरा अधिकार है। मैने उनसे अनुरोध किया है कि वे भारतके दूसरे हिस्सोमे रहनेवाले लोगोका रास्ता सुगम बनाये, इसलिए मै उनके सामने सहानुभूतिपूर्वक और पूरे मनसे विचार करनेके लिए ये सुझाव ही रख सकता हूँ। ये सुझाव चाहे जो हो, लेकिन अगर वे यह मान ले कि पूरे भारतको अमुक मूलभूत अधिकार सामान्य रूपसे प्राप्त है और यदि वे उस स्थितिको स्वीकार कर ले तथा न्यायालयमे, जिसके गठनमे उनका भी हाथ होगा, उन अधिकारोके परखे जानेकी अनुमति दे दे, और फिर वे अपनी प्रजाकी ओरसे प्रतिनिधित्वके भी कुछ तत्त्व — केवल कुछ तत्त्व ही — दाखिल कर दे तो मै समझूँगा कि अपनी प्रजाको सन्तुष्ट करनेके लिए उन्होने बहुत-कुछ किया — दुनियाको और सारे भारतको यह दिखा देनेके लिए बहुत-कुछ किया कि उनमे भी लोकतन्त्रकी भावना है, वे निरे स्वेच्छाचारी शासक नही बने रहना चाहते, बल्कि वे ग्रेट ब्रिटेनके राजा जॉर्जकी तरह सवैधानिक राजा बनना चाहते है।

श्रीमन्, मेरे मित्र सर अब्दुल कयूमने मुझे एक कागज दिया है। उसमे उन्होने पूछा है: क्या आप सीमा-प्रान्तके बारेमे कुछ नही कहेगे? मै जरूर कहूँगा और जो कहूँगा वह यह है। भारत जो पानेका पात्र हो और वह सचमुच जो-कुछ प्राप्त कर सके, वह प्राप्त करे, लेकिन उसे चाहे जो भी प्राप्त हो, जब भी प्राप्त हो, सीमा-प्रान्तको तो पूर्ण स्वशासन मिलना चाहिए और आज ही मिलना चाहिए। तब सीमा प्रान्त सारे भारतके सामने एक स्थायी उदाहरणका काम करेगा, और इसलिए कांग्रेसके सारे मत सीमा-प्रान्तके कल ही प्रान्तीय स्वशासन प्राप्त करनेके पक्षमे पड़ेगे। प्रधान मन्त्री महोदय, अगर आप अपने मन्त्रि-मण्डलको यह स्वीकार करने पर राजी कर सके कि सीमा-प्रान्त कलसे ही एक पूर्णतः स्वशासित प्रान्त बन जाये तो सीमा-प्रान्तके कबीलोके बीच मुझे एक सही आधार मिल जायेगा और फिर जब सीमा-पारके लोग भारतपर अपनी लोलुप दृष्टि डालेगे तो मै उन कबीलोको अपनी सहायताके लिए खड़ा कर सकूँगा।

और अब मै अन्तिम बातपर आता हूँ, जिसकी चर्चा करना मेरे लिए हर्षका विषय होगा। यह शायद आपके साथ बैठकर मेरे वार्त्ता करनेका आखिरी मौका है। ऐसा नही कि मै चाहता हूँ कि यह आखिरी मौका हो। मै तो यह चाहता हूँ कि मै आपके साथ आपके कमरोमें बैठकर आपसे बातचीत करूँ, हाथ जोडकर आपसे अनुनय-विनय करूँ, और इसपर भी यदि बात न बने तभी अन्तिम कदम उठाऊँ। लेकिन, मुझे अपना सहयोग देते रहनेका सौभाग्य प्राप्त रहता है या नही, यह मुझपर निर्भर नही है। यह मुख्यतः आपपर ही निर्भर है। लेकिन, शायद आपपर भी निर्भर न हो। यह ऐसी अनेक परिस्थितियोपर निर्भर है जिनपर शायद न आपका और न हमारा ही कोई बस है। तो अब मै आपसे राज-दम्पतीसे लेकर जहाँ मै रह रहा हूँ, उस ईस्ट एडके गरीबसे-गरीब लोगो तक सबको धन्यवाद देनेके अपने सुखद कर्त्तव्यको पूरा करनेकी इजाजत चाहता हूँ।

लन्दनके ईस्ट एण्डके गरीबोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले उस आश्रममे रहते हुए मै उन लोगोमे पूरी तरह रम गया हूँ। उन्होने मुझे अपने एक सदस्य, अपने परिवारके एक विशेष स्नेह-पात्र सदस्यके रूपमें स्वीकार कर लिया है। मै अपने साथ जो स्मृतियाँ यहाँसे ले जाऊँगा, यह उनमे से एक सबसे मूल्यवान स्मृति होगी। यहाँ भी मै जितने लोगोके सम्पर्कमे आया हूँ, सबसे मुझे सच्चा स्नेह ही मिला है। मै अनेक अंग्रेजोके सम्पर्कमे आया हूँ। मेरे लिए यह बहुत बडे सौभाग्यका विषय रहा है। उन्होने मेरी बाते, जो उन्हे अकसर अप्रिय तो जरूर लगी होगी फिर भी जो सत्य है, सुनी है। यद्यपि मुझे उनसे अकसर ये बातें कहनी पड़ी है, फिर भी उन्होने कभी कोई अधैर्य या नाराजगी नही दिखाई है। यह सब भूल पाना मेरे लिए असम्भव है। मुझपर चाहे जो आ पड़े, इस गोलमेज परिषद्का हश्र चाहे जो हो, एक स्मृति मै अपने मनमे सँजोकर अवश्य ले जाऊँगा — यह कि छोटे-बड़े सभीसे मुझे अतीव शिष्टता और स्नेहका ही व्यवहार प्राप्त हुआ है। मै मानता हूँ कि यह मानवीय स्नेह प्राप्त करके मेरा इग्लैंड आना सार्थक हो गया। यद्यपि अग्रेज स्त्रियो और पुरुषोको अकसर

इतनी झूठी बातें बताई गई हैं कि आपके अखबारोंमें भी गलत और भ्रामक बातें छपते देखता हूँ, यद्यपि लंकाशायरमें वहाँके लोगोंके पास मुझसे नाराज होनेका कुछ कारण था, फिर भी मुझे कर्मचारियों तकमें कोई नाराजगी या रोष देखनेको नहीं मिला। इससे मानव-स्वभावके प्रति मेरी अदम्य आस्थामें वृद्धि हुई है, वह और भी गहरी हो गई है। लंकाशायरके स्त्री और पुरुष सभी कर्मचारियोंने मुझे गले लगाया। उन्होंने मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया, मानो मैं उन्हींमें से एक होऊँ। इस चीजको मैं कभी नहीं भूलूँगा।

मैं यहाँसे हजारों अंग्रेजोंकी मैत्रीका सौभाग्य प्राप्त करके जा रहा हूँ। मैं उन सबको जानता तो नहीं हूँ, लेकिन सुबह-सुबह घूमते हुए मैंने उनकी आँखोंमें उस स्नेहको देखा। मेरे अभागे देशपर चाहे जो आ पड़े, इस आतिथ्य और इस स्नेहकी स्मृति मेरे मनसे कभी नहीं मिटेगी। आपके धैर्यके लिए मैं आप सबको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउंड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन) : प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स, पृष्ठ २६५-७५

२३७. भेंट : पत्रकारोंको[1]

[१ दिसम्बर, १९३१][2]

प्र० : शान्तिवादी और अन्तर्राष्ट्रीयतावादी ईसाई भारतकी सहायता किस तरह कर सकते हैं?

उ० : इसके लिए सबसे पहले तो उन्हें इस प्रश्नका सम्यक् शास्त्रीय अध्ययन करना चाहिए, जिससे वे किसी खास घटनाक्रमको देखकर चक्करमें न पड़ जायें और उनका मन डिग न जाये। कुछ ऐसे लोग हैं जो कभी तो मुझे गले लगाने लगते हैं और कभी दुतकारने लगते हैं। इनकी वृत्तियाँ क्षण-क्षण बदलती रहती हैं। मैं चाहता हूँ कि वे भारतके आन्दोलनमें निहित सत्यको हृदयगम करें, ताकि उनके विचारमें आसानीसे परिवर्तन न आ पाये। ऐसे लोग होंगे, तो आन्दोलनको सुरक्षित समझना चाहिए। अन्यथा समझना चाहिए कि इसकी कहीं कोई जड़ नहीं है। लेकिन

१. "एच० डब्ल्यू० पी० . . . कुछ पत्रकारों" को साथ लेकर गांधीजी से मिले थे। फ्रेंडमें दी गई उनकी रिपोर्टको रिकंसिलिएशनमें प्रकाशित दूसरी रिपोर्टसे मिला लिया गया है।

२. एच० डब्ल्यू० पी० फ्रेंड्स हाउसमें २ दिसम्बरको हुई एक बैठकका उल्लेख करते हुए कहते हैं कि भेंट-वार्ता पिछले दिन सुबह गोलमेज परिषद्की अन्तिम बैठकके आरम्भ होनेसे ठीक पहले हुई थी। गोलमेज परिषद्की यह बैठक १ दिसम्बरको हुई थी।

इस प्रकार अध्ययन करनेके बाद उन्होने सत्यको जिस रूपमे ग्रहण किया हो, उसीके आधारपर उन्हे सामूहिक रूपसे कार्य भी करना होगा।[1]

शान्ति अशान्तिमे से उत्पन्न हो सकती है, क्योकि अशान्ति-मात्र शान्तिके विरुद्ध ही नही होती। हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहनेसे सुधार नही हो सकता।

मुझसे कहा गया है कि मै जो स्वय कष्ट-सहन करता हूँ, उससे मेरे विरोधियोकी भावनाओको चोट पहुँचती है। हाँ, निश्चय ही इस तरह उन्हे चोट पहुँचती है। लेकिन मै चाहता भी तो यही हूँ। आप यह तो नही चाहेगे कि आपका विरोध इतना जड हो कि दूसरोके कष्ट-सहनका उसपर कोई प्रभाव ही न पडे। हाँ, इतना जरूर है कि जिस-तिस बातपर कष्ट-सहन नही करना चाहिए और कष्ट-सहनका उद्देश्य केवल कष्ट-सहन नही होना चाहिए। यह तो बहुत बुरी बात होगी। मै कष्ट-सहनके लिए तभी आगे आता हूँ जब वैसा करना अत्यावश्यक हो जाता है। जब कष्ट-सहनका ठीक कारण हो तो कष्ट-सहन करना ही चाहिए, यह आवश्यक है।

क्या यह हृदय-परिवर्तनकी प्रक्रिया नही है? इसके अन्तर्गत अपने विरोधीको तबाह करने और उसे या तो झुक जानेको अथवा मिट जानेको मजबूर करनेके बजाय आप स्वय ही तबाह होने और कष्ट सहनेको तैयार हो जाते है। अगर आपको इस तरह कष्ट सहते देखकर आपके विरोधीकी भावनाको चोट पहुँचती है तो आप यही चाहते भी है। इस देशके शान्तिवादी शान्तिके बुनियादी नियमको ही मानकर नहीं चलते। उन्हे दुःख उठानेवालोके साथ दुःख उठानेको तैयार रहना चाहिए।

मुझसे ऐसा कहा गया है कि कष्ट-सहन करना कोई आवश्यक तो नही है। अपना उद्देश्य बातचीतके द्वारा क्यो नही पूरा किया जा सकता? मेरा उत्तर यह होता है: 'आजतक दलीलसे किसीको किसी बातकी प्रतीति नही हुई है। इसके विपरीत, दलील वही काम करती है, जहाँ उसके अनुकूल विश्वास होता है। अगर ऐसा न होता तब तो सभी पुस्तके सबको समान रूपसे प्रभावित कर सकती थी। जिन पुस्तकोका लाखो-करोडो लोगोपर कोई प्रभाव नही पडा है, उन्होने मेरे हृदयको स्पर्श किया है। इसका कारण यह था कि मेरे अन्दर वैसा विश्वास पहले से ही विद्यमान था।

मेरे निरामिषाहारको ही लीजिए। मै जन्मसे ही निरामिषाहारी था। मै अपनी माताके सामनेकी गई प्रतिज्ञासे इस बातके लिए बँधा हुआ था कि मै निरामिषाहारी ही रहूँगा। तब मैने सॉल्ट-कृत 'प्ली फॉर वेजेटेरियनिज्म' पढी और उसमें लिखी बातें मुझे बिलकुल जँच गईं, लेकिन वास्तवमे मुझमे वैसा विश्वास तो पहलेसे ही मौजूद था। ऐसी ही बात रस्किन-कृत 'अनटु दिस लास्ट' के सम्बन्धमे भी हुई। मै उस जीवन-पद्धतिका पालन करनेकी कोशिश कर रहा था, लेकिन रस्किनकी यह कृति पढनेके बाद वह मेरे जीवनमें ही मूर्त्त हो गई। रस्किनने उसे बिलकुल बदल दिया, लेकिन उस चीजकी प्रतीति तो मुझमे पहलेसे ही थी। जिन लोगोमे ऐसा विश्वास नही था, उनपर उसी पुस्तकका कोई प्रभाव नही पडा।

१. आगेके तीन अनुच्छेद रिकंसिलिएशनसे लिये गये हैं।

प्र० : लेकिन श्री गांधी, जब सत्याग्रह एक सिद्धान्तके रूपमें नहीं, बल्कि केवल एक उपायके रूपमें किया जाये तब वह कैसे सफल हो सकता है?

उ० : 'सत्याग्रह'का मतलब है सत्यपर आग्रह रखना। जब कोई आदमी सत्य-पर आग्रह करता है तो उसे उससे बल मिलता है। अगर उसके सही बोधके बिना कोई उसका प्रयोग करता है तो मानना चाहिए कि वह सत्याग्रहका नाम व्यर्थ ही ले रहा है। किसी सिद्धान्तसे प्रेरित होकर मैं सडकपर चलनेसे सम्बन्धित नियमको माननेसे इनकार कर सकता हूँ। कोई दूसरा आदमी इसलिए भी इनकार कर सकता है कि वह नियम उसे असुविधाजनक लगता हो। हम काम तो एक ही कर रहे होंगे, लेकिन जहाँ मेरे कामके पीछे नैतिक बल होगा, वहाँ उसके कामके पीछे ऐसा कोई बल नही होगा। इस अवस्थामे मैं तो सविनय प्रतिरोधी होऊँगा, लेकिन वह अपराध करनेवाला प्रतिरोधी होगा। मगर इस खतरेका इलाज भी इसीमें समाया हुआ है, सो इस तरह कि नियमको भग करनेके कारण अन्ततः कष्ट तो सहना ही पडेगा और कलुषित उद्देश्यसे कष्ट-सहन करनेका साहस दिखानेवाले लोग बहुत ज्यादा नही होगे।

अन्तरात्माके आदेशपर आपत्ति करनेवाले सच्चे आपत्तिकर्त्ताका आचरण सही है, क्योंकि उसके पीछे आत्मिक बल है। लेकिन, चाहे आत्मिक बल हो या नहीं, वह आचरण तो सही ही होगा। अन्तर इतना है कि जहाँ एकका आचरण सर्वथा सही है, वहाँ दूसरेका एक सीमातक ही सही है।

प्र० : आप अकसर कहते रहे हैं कि पाश्चात्य सभ्यता शैतानी सभ्यता है। उसमें शैतानके क्या लक्षण है? और क्या इनमें से कोई भी लक्षण भारतीय सभ्यतामें नहीं है?

उ० : पाश्चात्य सभ्यता भौतिकतावादी है और वह साफ स्वीकार करती है कि वह भौतिकतावादी है। यह वस्तु-जगत्में — रेलमार्गों, रोगोपर विजय, वायुपर विजयके क्षेत्रोमे — की गई प्रगतिको ही अपनी प्रगतिका मापदण्ड मानती है। पाश्चात्य दृष्टिकोणसे यही सभ्यताकी विजयके चिह्न हैं। कोई भी यह नही कहता : 'अब लोग पहलेसे ज्यादा सत्यपरायण या विनयशील हो गये है।' मैं इसे अपने निकर्षपर परखता हूँ और इसके लिए 'शैतानी' शब्दका प्रयोग करता हूँ। आप दुनियावी चीजो, बाह्य उपादानोको बहुत अधिक महत्त्व देते है। प्राच्य सभ्यताका असली तत्त्व यह है कि वह आध्यात्मिक है, अभौतिक है। पाश्चात्य सभ्यताकी उपलब्धियोको देखकर प्राच्य ससारके मनमे लोभ जग सकता है, लेकिन तब भी उसके अन्दर कही-न-कही यह भाव जरूर रहेगा कि ऐसा करके वह गलत काम कर रहा है। आपका आदर्श यह है कि आप अपनी आवश्यकताएँ जितनी बढायेंगे, आप उतने ही सुधरेंगे, और आप अपने इस विश्वासको कार्य-रूप देनेमे भी कोई कमी नही करते। आपकी सभ्यता भौतिक प्रगतिकी मजिल-दर-मजिल तय करती चली गई है और इसका कही कोई अन्त नही है। आप अपनी प्रकृति-विजयपर गर्व करते है, किन्तु मुझपर इसका कोई प्रभाव नही पड़ता। हो सकता है, कलको आप मुझे विमान

द्वारा यहाँसे प्रस्थान करते देखें, लेकिन अगर मैं विमानसे यात्रा करूँगा भी तो मेरे मनमें यह भाव अवश्य रहेगा कि मैं गलत काम कर रहा हूँ। मान लीजिए, लन्दनके ट्यूब रेलमार्ग और बसें आपसे छीन ली जाती हैं। उस हालतमें मैं तो यही कहूँगा, 'भगवान्का शुक्र है कि आज मुझे पैदल चलकर अपने निवास-स्थान बो को जाना पड़ेगा — भले ही उसमें तीन घंटे लग जायें।'

श्री गांधीसे एक अन्तिम प्रश्न यह पूछा गया कि वे जिस तत्त्वको ढूँढ़ते हैं, वह उन्हें क्या किसी पाश्चात्य धर्मग्रन्थमें मिला है। उत्तरमें उन्होंने तुरन्त कहा :

हाँ, मिला है। उदाहरणके लिए, कुछ वर्ष पूर्व मेरे मित्र हेनरी पोलकने मुझे टॉमस-ए-केम्पिस-कृत 'इमिटेशन ऑफ क्राइस्ट' नामकी पुस्तक दी थी। उसे मैं एक ही बैठकमें पढ़ गया और पढते समय मुझे यही लग रहा था मानो कोई प्राच्य धर्मग्रन्थ पढ रहा होऊँ।

प्र० : मतलब कि वह ऐसी पुस्तक है जो सारी दुनियाके लिए समान महत्त्व रखती है?

उ० : हाँ, 'प्राच्य' शब्दका प्रयोग मैंने इसी अर्थमें किया था।

[अंग्रेजीसे]

फ्रेंड्स, ११-१२-१९३१ और रिकंसिलिएशन, जनवरी, १९३२ से।

२३८. गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीके अंश

१ दिसम्बर, १९३१

अध्यक्ष : . . . इस वर्षके आरम्भमें मैंने तत्कालीन सरकारकी नीतिकी घोषणा की थी, और अब वर्त्तमान सरकारने मुझसे आप लोगोंको तथा भारतको यह स्पष्ट आश्वासन देनेको कहा है कि वह नीति अब भी कायम है। उस घोषणाके मुख्य वाक्योंको मैं फिर दोहरा रहा हूँ :

"महामहिमकी सरकारका विचार है कि भारतके शासनका दायित्व केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान-सभाओंको सौंप दिया जाये, लेकिन संक्रान्ति-कालमें कतिपय दायित्वोंके निर्वाहके लिए तथा अन्य विशेष परिस्थितियोंकी माँगोंको पूरा करनेके लिए जिन पूर्वोपायोंकी व्यवस्था करना जरूरी हो उनकी व्यवस्था की जाये और साथ ही ऐसे पूर्वोपाय भी किये जायें जो अल्पसंख्यक समुदायोंकी राजनीतिक स्वतन्त्रता तथा अधिकारोंको सुरक्षा प्रदान करनेके लिए आवश्यक हों।

"संक्रान्ति-कालकी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए जिन वैधानिक पूर्वोपायोंकी व्यवस्था की जायेगी, उनके सम्बन्धमें इस बातका खयाल रखना महामहिमकी सरकारका बुनियादी कर्त्तव्य होगा कि सुरक्षित अधिकारोंकी रचना इस प्रकार की जाये और उनका प्रयोग इस तरहसे किया जाये जिससे नये संविधानके माध्यमसे अपना

शासन स्वयं चलानेके लिए पूर्ण दायित्व प्राप्त करनेकी दिशामें भारतकी प्रगतिके मार्गमें कोई बाधा उपस्थित न हो।"

केन्द्रीय सरकारके सम्बन्धमें तो मैंने यह स्पष्ट कर दिया था कि जो शर्तें साफ-साफ तय की जायें, उनके पालन किये जानेका खयाल रखते हुए, महामहिमकी (भूतपूर्व) सरकार विधायिकाके प्रति कार्यकारिणीके दायित्वके सिद्धान्तको स्वीकार करनेके लिए तैयार है, बशर्ते कि विधायिका और कार्यकारिणी दोनोंका गठन अखिल भारतीय संघीय प्रणालीके आधारपर हो। उत्तरदायित्वके सिद्धान्तके साथ यह मर्यादा जुड़ी रहनेवाली थी कि वर्तमान परिस्थितियोंमें सुरक्षा तथा परराष्ट्र विभाग गवर्नर-जनरलके सुरक्षित अधिकार-क्षेत्रमें रहें और वित्तीय मामलोंके सम्बन्धमें ऐसी शर्तें लागू करनी ही पड़ेंगी जो भारत-मन्त्रीके अधिकारोंके अधीन स्वीकृत दायित्वोंके निर्वाहके लिए तथा भारतकी वित्तीय सुस्थिरता और साखको अक्षुण्ण बनाये रखनेके लिए आवश्यक हों।

और अन्तमें, हमारा विचार यह था कि गवर्नर-जनरलको अल्पसंख्यक समुदायोंके संवैधानिक अधिकारोंकी रक्षा करनेकी अपनी जिम्मेवारी तथा राज्यमें शान्ति कायम रखनेके अपने अन्तिम दायित्वके निर्वाहके लिए आवश्यक अधिकार दिये जायें।

गत परिषद्के अन्तमें महामहिमकी सरकार भारतको जो नया संविधान देनेका विचार कर रही थी, उसकी मोटी-मोटी बातें यही थीं।

महामहिमकी वर्तमान सरकारमें मेरे सहयोगी गत जनवरी महीनेमें तय की गई उपर्युक्त योजनाको अपनी नीतिके रूपमें पूरी तरहसे स्वीकार करते हैं। विशेष रूपसे वे अपना यह विश्वास पुनः व्यक्त करते हैं कि भारतकी संवैधानिक समस्याका एकमात्र आशाजनक समाधान अखिल भारतीय संघकी रचना करना ही है। वे इस योजनाके अनुसार दृढ़तासे काम करना चाहते हैं और उस योजनाको कार्यरूप देनेके मार्गमें आज जो कठिनाइयाँ हैं उनपर विजय पानेके लिए वे भरसक कोशिश करनेकी इच्छा रखते हैं। इस घोषणाको पूर्ण रूपसे प्राधिकृत रूप देनेके लिए, आपके सामने मैं जो वक्तव्य दे रहा हूँ, उसे एक श्वेतपत्र (ह्वाइट पेपर) के रूपमें संसदके दोनों सदनोंमें प्रचारित किया जायेगा और सरकार इसी हफ्ते संसदसे उसपर स्वीकृति देनेका अनुरोध करेगी।

श्री गांधी: प्रधान मन्त्री महोदय और मित्रो, अध्यक्षके प्रति धन्यवादका प्रस्ताव प्रस्तुत करनेका सौभाग्य तथा दायित्व मुझे प्रदान किया गया है, और इस दायित्व तथा गौरव-पदको मैंने अत्यन्त हर्षके साथ स्वीकार किया है। इस समय उस महत्त्वपूर्ण घोषणाके सम्बन्धमें, जिसे हमने अभी सुना है, कुछ कहनेकी आशा हममें से किसीसे नहीं की जाती — मुझसे तो और भी नहीं। अपनी सभाकी कार्यवाहीका शोभनीय तथा शिष्ट ढंगसे सचालन करनेवाला अध्यक्ष सदा धन्यवादका पात्र होता है — चाहे उस सभाके सदस्य सभा द्वारा किये निर्णयों अथवा स्वयं अध्यक्षके निर्णयोंसे सहमत हों या नहीं।

श्रीमन्, मै जानता हूँ कि आपपर दोहरा कर्त्तव्य-भार था। आपको केवल परिषद्की कार्यवाहीका शोभनीय तथा निष्पक्ष ढगसे सचालन ही नही करना था, बल्कि साथ ही अकसर महामहिमकी सरकारके निर्णयोसे भी हमें अवगत कराते रहना पडा। और अध्यक्षके रूपमे आपने जो अन्तिम कार्य किया है वह यह कि जिन अनेक विषयोपर इस परिषद्ने विचार-विमर्श किया है उनपर महामहिमकी सरकारके सुचिन्तित निर्णय हमे सूचित किये है। यहाँ मै आपके कर्त्तव्यके उस हिस्सेके सम्बन्धमें कुछ नही कहना चाहता। लेकिन मेरे लिए अधिक हर्षका विषय तो, आपने जिस ढगसे परिषद्की कार्यवाहीका सचालन किया है, वह है। और आपने समयकी पाबन्दीके सम्बन्धमें अकसर हमे जो सबक दिया है, उसके लिए मै आपको बधाई देता हूँ। अध्यक्ष अकसर अपने इस बुनियादी कर्त्तव्यकी ही उपेक्षा कर देते है, और मै स्वीकार करूँगा कि मेरे देशमें तो यह चीज इतनी आम है कि आदमी ऊब जाता है। हमें समयकी ठीक पाबन्दीका श्रेय प्राप्त नही है। अत, अध्यक्ष महोदय, भारत लौटनेपर अपने देश-भाइयोको यह बता देना मेरा सुखद तथा आवश्यक कर्त्तव्य होगा कि ब्रिटेनके प्रधान मन्त्रीने समयकी पाबन्दीका कैसा उदाहरण प्रस्तुत किया।

आपने हमे अपने जिस दूसरे गुणका परिचय दिया है, वह है आपकी परिश्रम करनेकी क्षमता, जिसे देखकर चकित रह जाना पडता है। आपका लालन-पालन स्कॉटलैडकी कठोर जलवायुमें हुआ है, सो स्वभावत· आप नही जानते कि विश्राम क्या होता है और न आपने हम लोगोको ही यह जाननेका अवसर दिया है कि विश्राम क्या होता है। अनुचित न माना जाये तो कहूँ कि आपने लगभग अभूतपूर्व कठोरताके साथ हममें से हर व्यक्तिसे काम लिया है। इन लोगोमे मेरे मित्र तथा समादृत भाई पण्डित मदनमोहन मालवीय-जैसे वयोवृद्ध व्यक्ति भी शामिल है और उतने ही वृद्ध मुझ-जैसे लोग भी आते है। आपने स्कॉटलैडवासीके योग्य निर्ममता दिखाते हुए मेरे मित्र तथा सम्माननीय नेता श्री शास्त्रीसे इतना काम लिया कि उन्हे बिलकुल ही थका डाला। आपने कल हमे बताया कि आप उनकी शारीरिक अवस्थासे परिचित थे, किन्तु कर्त्तव्यके सामने आपने इन व्यक्तिगत सवेदनशीलताकी बातोकी कोई परवाह नही की। इसके लिए आपको जितना सम्मान दिया जाये, अपर्याप्त होगा। आपकी परिश्रम करनेकी इस अद्भुत क्षमताको मै अपनी स्मृतिमे श्रद्धापूर्वक सँजोकर रखूँगा।

लेकिन इस सम्बन्धमे मै यह कहनेकी इजाजत चाहता हूँ कि यद्यपि मै भू-मध्यीय क्षेत्रके बहुत पास पडनेवाले ऐसे देशका निवासी हूँ जहाँकी आबोहवाको आरामतलबी बढानेवाली आबोहवा माना जाता है, फिर भी शायद वहाँ परिश्रम करनेमे हम भी आपसे होड ले सकते है। मगर इससे कोई फर्क नही पडता। कल आपने जो-कुछ कर दिखाया वह अगर इस बातका एक दृष्टान्त-मात्र था कि आपमे परिश्रम करनेकी कितनी क्षमता है — यहाँतक कि आप लगातार चौबीस-चौबीस घटे तक परिश्रम कर सकते है, जैसा कि यदा-कदा आपकी कॉमन्स सभाने कर दिखाया है — तो बेशक उस होडमें विजयी आप ही होगे।

इसलिए यह धन्यवाद प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए मुझे अतीव हर्षका अनुभव हो रहा है। लेकिन, एक और भी कारण है — और वह कारण शायद ज्यादा बडा है — जिससे मुझे इस दायित्वको अपने ऊपर लेना चाहिए और इस सौभाग्यकी कद्र करनी चाहिए। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मुझे कुछ ऐसी सम्भावना दिखाई देती है — 'कुछ' इसलिए कह रहा हूँ कि मै आपकी घोषणाको एक बार, दो बार, तीन बार, बल्कि जितनी बार जरूरी होगा उतनी बार पढना चाहूँगा, उसके एक-एक शब्दका अर्थ समझूँगा, अगर कोई गूढार्थ छिपा होगा तो उसको भी ग्रहण करना चाहूँगा और तभी इस निष्कर्ष पर आऊँगा — कि हम ऐसी मजिलपर पहुँच गये है, जहाँसे हमारे रास्ते एक-दूसरेसे अलग हो गये है। लेकिन इससे कोई फर्क नही पडता। इस स्थितिके बावजूद आप हमारे हार्दिक तथा सच्चे धन्यवादके पात्र है। हमारे इस समाजमे हमारी यह नियति नही है कि यदि हम परस्पर एक-दूसरेका सम्मान करना चाहे तो उसके लिए हम सबमे विचार-सहमति हो ही। हमारे लिए यह सम्भव नही है कि हम सदा एक-दूसरेके मतोका पूरा सम्मान करे और हम एक-दूसरेके विचारो और इच्छा-ओको हमेशा स्वीकार करते रहे — इस हदतक कि हमारे पास सिद्धान्त नामकी कोई चीज रह ही नही जाये। इसके विपरीत, मानव-स्वभावकी गरिमा इस बातमे निहित है कि हम जीवनमे आनेवाले झझावातोका वीरतासे सामना करे। कभी-कभी तो सगे भाइयोको भी एक-दूसरेसे अलग रास्ते पकडने पडते है। लेकिन अपने झगडेके अन्तमे — अपने मतभेदके बाद — वे यदि यह कह सके कि उनके मनमे कोई दुर्भावना नही थी और झगडो और मतभेदोके बावजूद उन्होने ऐसा आचरण किया जो किसी सज्जनके योग्य था, किसी सच्चे सिपाहीको शोभा देनेवाला था — मतलब कि अगर इस अध्यायके अन्तमे मै खुद अपने और अपने देशभाइयोके बारेमे और अगर सभव हो तो आपके और आपके देशभाइयोके विषयमें ऐसा कह सका तो मै कहूँगा कि हम जब एक-दूसरेसे अलग भी हुए तो शोभनीय ढगसे अलग हुए। मै नही जानता — मै कौन-सी राह पकडूंगा, मगर उससे कोई अन्तर नही पडता। यदि मुझे आपसे ठीक उल्टी दिशामें जाना पडे तब भी आप मेरे धन्यवादके — मेरे हृदयकी पूरी गहराईसे निकले धन्यवादके पात्र है।[1]

अध्यक्ष : . . . इस प्रस्तावको प्रस्तुत करते हुए महात्मा गांधीने मेरे प्रति स्नेह और सौजन्यसे भरे जो शब्द कहे उनके लिए मैं उनका बहुत आभारी हूँ। बस, एक ही बातपर उनसे मेरा झगड़ा है और मैं आशा करता हूँ कि वे इसे कोई बड़ी बात नहीं मानेंगे और न इस सम्बन्धमें उन्हे कोई गलतफहमी होगी। वह बात यह है : मेरी तुलनामें वे अपनेको वृद्ध क्यों कहते हैं? उनके पास तो अभी जीवनके अनेक वर्ष पड़े हुए हैं? पिछली रात १२ बजे जिसने भाषण दिया वह नौजवान था — युवा आदमी था। और जो उस समय अध्यक्षके आसनपर बैठा हुआ उससे

१. धन्यवाद-प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे और हर्ष-ध्वनिके बीच स्वीकार किया गया।

काम ले रहा था, वह वृद्ध था। मेरी तुलनामें तो श्री गांधी युवक हैं। मैं नहीं जानता था कि हम दोनोंमें से कौन ज्यादा बूढ़ा दिखता है — लेकिन अगर आप "परिचय-पुस्तिका" (हू इज हू) जैसे दस्तावेजोंको देखें, जिनमें कोई झूठी बात नहीं दी जाती, तो पायेंगे कि प्रकृतिके सामान्य नियमके अनुसार श्री गांधीकी तुलनामें मेरे जीवनका अन्त अधिक निकट है। ("नहीं, ऐसा नहीं है।") सो अगर किसीको अधिवेशनके दीर्घ-काल तक चलते रहनेपर शिकायत होनी चाहिए तो वह उस समय भाषण देनेवाले उस नौजवानको नहीं, . . . बल्कि उस वृद्ध व्यक्तिको होनी चाहिए जिसने आपकी इस परिषद्‌की अध्यक्षता की, और जिसे आपने गत रातको दो बजे तक जगाये रखा और फिर परिषद्‌में आपके सामने एक लिखित वक्तव्य देनेके लिए आज सुबह छः बजे ही जग जानेको मजबूर किया। शिकायत होनी चाहिए तो उसीको। लेकिन, मित्रो, मैंने जितना-कुछ किया है वह अगर भारतके हकमें रहा है और यदि उससे आप सबको एक-दूसरेके निकट लानेमें कोई सहायता मिली है तो मुझे उसपर कोई शिकायत नहीं है।

केवल एक बात और है जिसके सम्बन्धमें मै कुछ कहना चाहूँगा। मुझे इस बातसे बड़ी प्रसन्नता हुई है कि मेरे सामने बैठे मेरे वयोवृद्ध मित्र (सर अब्दुल कयूम)ने इस धन्यवाद प्रस्तावका अनुमोदन किया। उनको और महात्मा गांधीको किसी बातपर एक कर पाना बहुत बड़ी उपलब्धि है। इस सम्बन्धमें इन दोनोंका सहयोग उस सुखद स्थितिका पूर्वानुभव है जो मुसलमानों और हिन्दुओं!

श्री गांधी : नही, हिन्दू नही!

अध्यक्ष : श्री गांधी असंयत वाणीकी चूकोंको समझते हैं।

श्री गाधी : लेकिन मैं इस चूकको दरगुजर करता हूँ।

अध्यक्ष : वे असंयत वाणीकी — जैसी कि मेरी है — चूकको समझते हैं, और मुझे कहना चाहिए था कि जब मुसलमान और दूसरे समुदाय एक हो जायेंगे। मैं श्री गांधीके विचारोंको समझने लगा हूँ, क्योंकि उन्होंने हमसे बराबर कहा है कि आप लोग अलग-अलग वर्गोंका प्रतिनिधित्व करते हैं और वे एक साथ उन सबका प्रतिनिधित्व करते हैं।

श्री गाधी : बिलकुल ठीक कह रहे हैं आप।

अध्यक्ष : लेकिन आप दो आदमी एक-दूसरेसे सहयोग करनेको आगे आये और मिलकर एक स्कॉटलैंडवासीके प्रति अपना आभार व्यक्त किया, इसके सुपरिणामकी ओर ध्यान दीजिए। तो महात्माजी, हम इसी तरहसे आगे बढ़ें; यही सबसे अच्छा रास्ता है; और किसी दिन आप यह भी समझ सकते हैं कि यही एकमात्र रास्ता है। निश्चय ही यह वह रास्ता है, जिसे अपनाकर हम अपने इस कार्यपर गर्व कर सकते हैं और अपने राजनीतिक कामका सम्बन्ध उन भव्य आध्यात्मिक प्रेरणाओंसे जोड़ सकते हैं जो हम सबके अस्तित्वके मूलमें विद्यमान है।

एक और बात भी है। जब महात्माजी भारतमें अध्यक्षका आसन ग्रहण करेंगे और वे मुझे इसकी सूचना देंगे तो मैं वहाँ जाकर देखूँगा कि वे मेरे सुयोग्य शिष्यकी तरह बरत रहे हैं या नहीं और आजकी इस सुबह उन्होंने "समयकी पाबन्दी" के जिस गुणके लिए मेरी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की है, उस पाबन्दीको वे मुस्तैदी और सफलतासे कायम रखवा पाते हैं या नहीं।

तो अब मैं कामना करता हूँ कि आपकी वापसी यात्रा शुभ रीतिसे सम्पन्न हो; लौटकर आपको सुख और समृद्धि प्राप्त हो! और यह स्मरण रखिए कि हम सब एक ही उद्देश्यको पूरा करनेके लिए चुने गये लोग हैं, हम वफादारीके एक ही धागेसे बँधे हुए हैं — भारतके प्रति वफादारीके धागेसे। आप हमारे साथ कन्धेसे-कन्धा मिलाकर खड़े रहना और विचारोंका आदान-प्रदान करते रहना न भूलें; फिर अगर भाग्यने चाहा तो अपने पारस्परिक सहयोगके बलपर हम उन समस्याओंका समाधान ढूँढ़ लेंगे जो आज हमारे सामने हैं और भारतको दुनियाके सामने एक स्वशासित और स्वाभिमानी देशके रूपमें देख सकेंगे।

और अब मैं यह घोषणा करता हूँ कि परिषद् अन्तिम रूपसे स्थगित की जाती है।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन राउण्ड टेबल कांफरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ द प्लेनरी सेशन्स, पृष्ठ २८९-३००

२३९. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

लन्दन
१ दिसम्बर, १९३१

इस समय मैं प्रधान मन्त्रीके वक्तव्य अथवा परिषद्में जो-कुछ हुआ उसको लेकर उतना परेशान नही हूँ जितना कि भारतमे जो-कुछ हो रहा है उसके कारण हूँ। अंग्रेजीकी यह कहावत बिलकुल ठीक ही है कि "आनेवाली घटनाएँ अपना आभास पहले ही दे देती है।" तो भारतमे और खासकर बगालमे स्थिति इतनी बुरी हो चली है कि ऐसी आशा रखनेकी कोई गुजाइश नही बच रही है कि परिषद्का कोई बड़ा परिणाम हो सकता है। मेरा तात्पर्य बगालमे पास किये गये उस ताजा अध्यादेशसे है जिसमे सरकारको उस चीजका मुकाबला करनेके लिए असाधारण अधिकार दिये गये हैं जिसे आतकवादी प्रवृत्ति कहा गया है और एक हदतक ठीक ही कहा गया है। लेकिन, अतीतके अनुभवोसे मैं यही निष्कर्ष निकालता हूँ कि सरकार अपना

१. परिषद् दिनके १२-३३ पर समाप्त हुई थी।

संतुलन खो बैठी है जैसा कि उसके साथ किसी भी यूरोपीयकी हत्या अथवा हत्याके प्रयत्न किये जानेपर होता है। अपराधोसे मुझे सख्त नफरत है, लेकिन इस सम्बन्धमें मेरे मनमे कोई शका नही है कि आतकवादी प्रवृत्तिके जितनी फैलनेकी आशका है, उसकी तुलनामे सरकारको दी गई सत्ता बहुत ही अधिक है। अगर मुझपर छोड दिया जाये तो मै इसका मुकाबला साधारण कानूनके अधीन ही कर सकता हूँ।

मुझे कहना चाहिए कि साधारण कानूनके अन्तर्गत भी कार्यकारिणीको बहुत व्यापक अधिकार प्राप्त है, और अगर सारी स्थितिपर विचार करनेके बाद हम शुद्ध गणितकी दृष्टिसे भी हिसाब लगाकर देखें तो पायेगे कि बगाल जो-कुछ कर रहा है, वह बहुत अधिक बुरा नही है। इस हालतमे मूल कारणको दूर करनेकी कोशिश करनेके बजाय भारत सरकार, बल्कि यो कहिए कि भारत सरकार और भारत-मन्त्रीकी सहायतासे बगाल सरकार रोगके नही, केवल उसके लक्षणके उपचारमे ही लगी हुई है। सभी स्वीकार करते है कि आतकवादी आतकका सहारा केवल आतक पैदा करनेके उद्देश्यसे ही नही लेते। कोई भी बिना किसी उद्देश्यके अपनी जानको खतरेमें नही डालता है और मेरा खयाल है, इस बातको सभी स्वीकार करते हैं कि आतकवादी अपने देशको स्वतन्त्र करानेकी आशासे ही इस तरीकेका सहारा लेते है। अगर वह स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाये तो निश्चय ही आतकवादी प्रवृत्ति नही रह जानी चाहिए और यूरोपीयो अथवा सरकारी अधिकारियोकी — चाहे वे यूरोपीय हो या कोई और — हत्या करनेके प्रयत्न तो बिलकुल ही नही होने चाहिए। इसलिए अगर मेरा बस चले तो जहाँ मै अपराधको बन्द करवानेके लिए सभी सामान्य कानूनी अधिकारोका उपयोग करूँ, वही दूसरी ओर यह जाननेकी भी कोशिश करूँ कि स्वतन्त्रतासे आतकवादियोका आशय क्या है और अगर जाँच-पडताल करनेपर उनकी माँगे मुझे सही लगे तो मै सीधे उनको स्वीकार कर लूं। फिर देशमे कोई आतकवादी प्रवृत्ति रह ही नही जाये।

स्वर्गीय श्री चित्तरजन दास तथा उनके समयके और भी कई लोकसेवी जनोंने सरकारको यह उपाय अपनानेकी सलाह दी थी, लेकिन सलाह या तो अनसुनी कर दी गई या उसे पूरा-पूरा स्वीकार नही किया गया। लेकिन ऐसे मामलेमे कोई जब भी अपनी गलती महसूस करके अपना कदम वापस ले ले, वह काम समयसे ही किया गया माना जायेगा। मुझे बहुत भय है कि देश जिस पूर्ण स्वतन्त्रताके लिए तडप रहा है, वह जबतक उसे प्राप्त नही होती तबतक आतकवादी प्रवृत्ति समूल नष्ट नही होगी।

काग्रेसने एक ऐसा तरीका अपनाया है जिससे सविनय प्रतिरोध और उसमें जो-कुछ समाया हुआ है वह चीज पूर्ण रूपसे आतकवादी प्रवृत्तिका स्थान ले सकती है। और मेरा निश्चित मत है कि काग्रेसके तरीकेके परिणामस्वरूप आतकवादी अपराधोपर बहुत हदतक अकुश लगा रहा है। लेकिन, अभी मै काग्रेसके तरीकेकी सफलताके विषयमे कोई बहुत बडा दावा नही करता। लेकिन मै यह आशा करता हूँ कि सरकार फिर चाहे समझदारीसे काम लेना शुरू करे या न करे, काग्रेस

अपने रास्तेपर चलती रहेगी और इस तरह किसी दिन आतकवादी प्रवृत्तिको बिलकुल मिटा देगी। लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि प्रगतिकी रफ्तार बहुत धीमी है। मगर ऐसा तो हृदय-परिवर्त्तनके सभी तरीकोके सम्बन्धमे सम्भावित है।

लेकिन यह सब कहनेका तात्पर्य यह है कि बगाल सरकार द्वारा अपनाये गये ये दमनकारी अधिकार, सत्ताके हस्तान्तरण तथा जैसी सच्ची स्वतन्त्रता भारत चाहता है वैसी सच्ची स्वतन्त्रता देनेकी यहाँ जो इच्छा व्यक्त की गई है, उससे सगत नही है। इसलिए, प्रधान मन्त्रीकी घोषणाका जो अर्थ है, उसको अलग भी रखे तो भी इस अध्यादेश तथा मेरी जानकारीमे भारतमे और भी जो-कुछ हो रहा है उस सबके परिणामस्वरूप मेरा मन आशकाओसे भर जाता है और हो सकता है कि अब काग्रेसके सामने आगे सहयोग करनेका कोई रास्ता ही न रह जाये।

काश, यहाँ सही दिशामे लोकमत तैयार किया जा सकता! बगालमे जो-कुछ हो रहा है, अगर उसका सच्चा भारतीय विवरण यहाँ प्रकाशमे आये तो मुझे निश्चय है कि उसे किसी भी तरह बरदाश्त नही किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ३-१२-१९३१

२४०. पत्र : हे० सॉ० लि० पोलकको

लन्दन
२ दिसम्बर, १९३१

प्रिय हेनरी,

यह जानकर दु:ख हुआ कि तुम मुझसे बातचीत करनेको नही रुके और मकान-मालकिनको दो दिनोका अतिरिक्त किराया दे दिया। जो शर्तें तय हुई थी, उनका तुमने खयाल ही नही किया। और अब तथ्योको जाननेकी फिक्र किये बिना तुमने गलीचेके इस्तेमालसे उसमे हुई छीजनका हर्जाना देनेका आग्रह किया है। समृद्धिके बीच तथा धन और शक्तिशाली लोगोके सम्पर्कमे रहनेके कारण स्पष्ट ही अब तुम गरीबोंका प्रतिनिधित्व करने लायक नही रह गये हो। तुमको मालूम होना चाहिए कि मैं जो पैसा खर्च करता हूँ वह मेरा नही है। मैं गरीबोका न्यासी हूँ और मुझे गरीबोका पैसा इस तरह बरबाद करनेका कोई हक नही है। और मेरे हाथमे आनेवाला एक-एक रुपया गरीबोके उस न्यासमें शामिल हो जाता है। मैंने पहलेके सौदेके बारेमे, जब तुमने मकान-मालकिनको चेक दिया था, तुमसे कुछ नही कहा है। मुझे मॉड तथा एन्ड्रयूज दोनोसे बहुत सख्तीसे बोलना पड़ा था। मैंने उम्मीद की थी कि उस घटनाके बाद मुझसे पूछे बिना कुछ नही किया जायेगा। मुझे इस चीजसे

बहुत चोट पहुँची है। अब बताओ कि गलीचेके बारेमें तुम मुझसे क्या करनेको कहते हो।

सस्नेह,

भाई

हे० सॉ० लि० पोलक
डी विअर गार्डेन्स
लन्दन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८३७३)से।

२४१. भेंट : फिलिप हार्टोगको[1]

लन्दन
२ दिसम्बर, १९३१

गत २० अक्टूबरको रॉयल इंस्टिट्यूट ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्समें श्री गांधीने कहा था कि भारतमें पिछले ५० या १०० वर्षोंमें साक्षरतामें कमी आई है।[2] उनको लिखा मेरा पिछला पत्र इसीके सम्बन्धमें था। और उसमें मैंने उनसे मुलाकातका समय भी माँगा था। . . . मैं श्री गांधीसे मिलने शामके ४ बजे ८८, नाइट्सब्रिज पहुँचा और ५ बजेतक वहाँ ठहरा। वे बड़ी-सी अँगीठीके सामने शाल ओढ़े एक सोफेपर लेटे हुए थे। साफ दीख रहा था कि वे बहुत थके हुए हैं, हालाँकि मेरे वहाँ पहुँचने और वहाँसे चलते समय वे सोफेपर से उठे बिना मान ही नहीं रहे थे। उन्होंने कहा कि मैं तो समझता था कि मुझमें चाहे जितना काम करनेकी शक्ति है, लेकिन अब मेरा शरीर जवाब दे रहा है। इसपर मैंने कहा कि आप शायद बहुत थक गये हैं और अभी बातचीत न करना चाहते हों, लेकिन उन्होंने बताया कि वे मुझसे मिलकर बड़े प्रसन्न थे और साथ ही मुझे पत्र लिखकर भेंटका समय न देनेके लिए हृदयसे क्षमा माँगी।

उन्होंने तुरन्त इस बातको स्वीकार किया कि उस समय उनके पास अपने २० अक्टूबरके वक्तव्योंकी सचाई प्रमाणित करनेको कोई तथ्य-आँकड़े नहीं थे। इसपर मैंने जो दलील दी उसका उत्तर देनेकी कोशिश उन्होंने नहीं की। मैंने कहा कि आपने 'यंग इंडिया' के ८ और २९ दिसम्बर, १९२० के अंकोंमें दौलतराम गुप्तके लिखे जिन लेखोंकी टाइप की हुई प्रतियाँ मुझे दी हैं, उनमें शिक्षा-सम्बन्धी कोई आँकड़ा नहीं है और उनमें सबसे बादकी जिस सरकारी रिपोर्टका — अर्थात् डॉ० जी० डब्ल्यू०

1. सर फिलिप हार्टोग द्वारा ली गई भेंट-वार्ताकी टीपसे उद्धृत।
2. देखिए "भाषण : चैथम हाउसकी सभामें", २०-१०-१९३१।

लीटनरके 'हिस्ट्री ऑफ इंडिजिनस एजुकेशन इन पंजाब' का — हवाला दिया गया है, वह १८८२ में लिखी गई थी और इसलिए उससे गत २० वर्षोंमें भारतमें शिक्षाके उत्कर्ष अथवा अपकर्षका कोई प्रमाण नहीं मिल सकता। इसपर उन्होंने कहा कि श्री महादेव देसाई (जो उस समय वहाँ मौजूद थे) ब्रिटिश संग्रहालयमें इस विषयमें छानबीन कर रहे हैं। श्री देसाईने स्वीकार किया कि अभीतक उन्हें कोई नई चीज नहीं मिल पाई है। अब श्री गांधीने कहा कि मैं 'यंग इंडिया' में उक्त लेख लिखनेवाले सज्जनसे पूछताछ करूँगा और भारत लौटकर आश्रमके कुछ सुयोग्य मित्रोंसे इसके विषयमें छानबीन करनेको कहूँगा। फिर जो परिणाम सामने आयेगा, आपको तार द्वारा सूचित कर दूँगा। उसमें मैं आपको बता दूँगा कि ऐसी कोई सामग्री मिल पाई या नहीं जिससे आपको विश्वास हो जाये कि मेरी बातें सही थीं। अगर नहीं मिली तो अपनी भूलके लिए मैं पर्याप्त क्षमा-याचना करूँगा और अपनी बातें इस तरह वापस लूँगा जिससे उसकी जानकारी उससे कहीं अधिक लोगोंको हो सके जितने लोग उस सभामें मौजूद थे जिसमें मैंने उक्त वक्तव्य दिये।

इसके बाद मैंने उनको लीटनरकी पुस्तक दिखाते हुए उसके पृष्ठ ३ पर कही हुई इस बातकी ओर उनका ध्यान आकर्षित किया कि पंजाबको पूरे भारतकी शिक्षाकी स्थितिका नमूना नहीं समझना चाहिए, बल्कि आबादी और पढ़नेवाले लोगोंके अनुपातकी दृष्टिसे वह मध्य प्रान्त और बंगालके निचले हिस्सेसे बहुत पिछड़ा हुआ है। मैंने कहा कि जहाँ श्री गुप्तने पृष्ठ २ पर होशियारपुरके सम्बन्धमें दिये आँकड़ोंको उद्धृत किया है वहाँ पृष्ठ ३ पर कही गई इस बातका कोई उल्लेख ही नहीं किया है। मैंने श्री गांधीजो बताया कि १८८२ में ब्रिटिश भारतकी आबादी मोटे तौरपर २१ करोड़ थी और अब १९३१ में लगभग २७ करोड़ हो गई है, अर्थात् मोटे तौरपर ३० प्रतिशतकी वृद्धि हुई है, जबकि इस अवधिमें ब्रिटिश भारतमें शिक्षा प्राप्त करनेवाले बच्चों और युवकोंकी संख्या लगभग २५ लाखसे बढ़कर १ करोड़ १० लाख हो गई है, अर्थात् चार गुनेसे भी ज्यादा वृद्धि हुई है। इस हालतमें अगर इन ५० वर्षोंमें साक्षरतामें कमी आई हो तो यह बड़े आश्चर्यकी बात होगी।

मैंने यह भी बताया कि दूसरी ओर शिक्षा प्राप्त कर रहे लोगोंकी संख्याके आधारपर साक्षरताके सम्बन्धमें कोई अनुमान लगाना असम्भव है। अपनी 'एजुकेशन इन ब्रिटिश इंडिया' नामक पुस्तकमें हावेलने बताया है कि कई कारणोंसे, जिनमें एक बच्चोंका कम उम्रमें ही स्कूलोंसे हटा लिया जाना भी है, १९ वीं सदीके स्कूल लगभग बेकार ही थे। मैंने इस बातका भी उल्लेख किया कि १९१७-२७ में बंगालमें ३००,००० से अधिक (असली संख्या लगभग ३७०,००० है) बच्चोके दाखिलेके बावजूद चौथे दर्जेमें पहुँचनेवाले छात्र-छात्राओंकी संख्यामें लगभग ३०,००० की कमी आई है और यह वह दर्जा है जिसमें छात्रोंके पहुँचनेके बाद ही वर्तमान परिस्थितियोंमें यह कहा जा सकता है कि उसने साक्षरता प्राप्त कर ली।

मैंने श्री गांधीको बंगालमें साक्षरताकी स्थितिके सम्बन्धमें ऐडमकी 'रिपोर्ट ऑन वर्नाक्युलर एजुकेशन ऑफ १८३५-३८' से भी कुछ आँकड़े दिखाये और उनकी तुलना १९२१ की जनगणनाके आँकड़ों — खण्ड ५, पृष्ठ ३०२ — से की। फिर मैंने उनको उसी खण्डके पृष्ठ २८५ से १९११ और १९०१ के आँकड़े दिखाये, जिससे सिद्ध होता है कि बर्मा, बंगाल और मद्रासमें साक्षरता खूब बढ़ी है, यद्यपि इस अवधिमें पंजाब, बिहार, बम्बई तथा संयुक्त प्रान्तमें बहुत कम या कोई भी प्रगति नहीं हुई। श्री गांधीने क्षमा-याचनाके स्वरमें कहा कि "इन बातोंके सम्बन्धमें मैं बहुत कम जानता हूँ।" इसपर मैंने कहा कि यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि आपको बहुत-सी और बातोका भी तो खयाल रखना पड़ता है।

भेंट-वार्त्ताके लगभग अन्तमें मैंने कहा कि मैं आशा करता हूँ, अब आप अपनी शक्ति शान्तिके ही पक्षमें लगायेंगे। उत्तरमें उन्होंने कहा कि कल मैंने जो-कुछ कहा, वास्तवमें मेरा आशय भी वही था। अर्थात्, मैं प्रधान मन्त्रीकी घोषणाको बार-बार पढ़ूँगा। उन्होंने यह भी कहा कि इस मामलेमें कांग्रेसको कोई सलाह देनेके सम्बन्धमें मेरी व्यक्तिगत जिम्मेदारी कितनी बड़ी है, इसे मैं महसूस करता हूँ। उन्होने यह भी बताया कि अगले शुक्रवारको सर सैम्युअल होरसे मिलनेके खयालसे मैंने प्रस्थानकी तिथि स्थगित कर दी है, क्योंकि सर सैम्युअलने कहा है कि संसदकी बहसमें व्यस्त रहनेके कारण अभी (बुधवार और गुरुवारको) उनके पास समय नहीं होगा। इसपर मैंने कहा, "मुझे पूरा विश्वास है कि आपको इस बातकी प्रतीति हो गई होगी कि अंग्रेज लोग, इस समय भारतको जो-कुछ दिया जा सकता है, वह देनेकी हार्दिक इच्छा रखते हैं।" उत्तरमें उन्होंने कहा:

हाँ, लेकिन एक बात है कि जो अंग्रेज हृदयसे मानते है, लेकिन मैं इस चीजको नही समझ सकता। वे मानते है कि हममे विशेषज्ञोकी सहायतासे भी अपना कार्य-व्यापार स्वय सँभालनेकी योग्यता नही है। जब मै युवा था और मेरे पिता एक राज्यके दीवान थे, उन दिनो मै एक दूसरे राज्य (जूनागढ)के दीवानके बारेमे जानता था। वे अपने हस्ताक्षर भी मुश्किलसे कर सकते थे, लेकिन वे बडे होशियार आदमी थे और उस राज्यके कार्य-व्यापारका सचालन अद्भुत सफलतासे करते थे। वे जानते थे कि उनको किन व्यक्तियोसे सलाह लेनी चाहिए और वे उन्हीसे सलाह लेते थे। जब मैंने रुपयेकी विनिमय-क्षमताके विषयमे आपके प्रधान मन्त्रीसे बात की तो उन्होने मुझसे कहा कि विनिमय-दरोके बारेमे वे कुछ नही जानते और यद्यपि प्रधान-मन्त्रीको सब-कुछ अपने ही नामपर करना पडता है, लेकिन वास्तवमे उसे विशेषज्ञोकी सलाहपर निर्भर रहना पडता है। हमे अतीतमे अपना शासन आप चलानेका अनुभव है और अब भी हम उतनी ही खूबीसे उसे चला सकते है।

भेंट-वार्त्ताका अन्त मैंने यह कहकर किया कि मैं शान्ति-प्रिय आदमी हूँ और किसी विवादमें नहीं पड़ना चाहता, लेकिन 'जर्नल ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्स' में मुझे ये तथ्य देने ही पड़ेंगे। इसपर मुझे श्री गांधीकी मूक सहमति मिल गई। मैंने उनके

आनन्दपूर्वक भारत लौटनेकी कामना करते हुए कहा कि आशा है, मेरी बातचीतसे आपको ऊब नहीं हुई होगी। उत्तरमें उन्होंने कहा कि नहीं, आपसे मिलकर सचमुच मैं बड़ा प्रसन्न हुआ और आशा करता हूँ कि आगे आपसे सम्पर्क बनाये रखूँगा। . . .

श्री गांधीने कहा, मैंने ब्रिटिश सरकारपर देशी स्कूलोंको नष्ट करनेका आरोप नहीं लगाया। बल्कि यह कहा था कि प्रोत्साहन न देकर उसने उन्हें स्वभावतः दम तोड़ देनेको छोड़ दिया।

इसके बाद मैंने श्री गांधीको बताया कि मैं उनकी इस बातको स्वीकार कर सकता हूँ कि सार्वत्रिक प्राथमिक शिक्षा अभी बहुत दूरकी चीज है, और मेरी समितिने अनुमान लगाया है कि प्रतिवर्ष १९ करोड़ अतिरिक्त खर्च करनेपर ८० प्रतिशत लड़कों और लड़कियोंको प्राथमिक स्कूलतककी शिक्षा दी जा सकेगी। इसपर श्री गांधीने मुझसे पूछा कि क्या मैं ऐसा समझता हूँ कि अगर बच्चोंको माध्यमिक स्कूलोंतक पढ़नेकी सुविधा न हो तो प्राथमिक स्कूलतक पढ़नेसे कोई खास फायदा होगा। मैंने कहा कि उसके बाद तो वही कदम उठाया जायेगा, और देशी भाषाओंके माध्यमिक स्कूलोंको प्रोत्साहन देना मैं बहुत महत्त्वकी बात समझता हूँ — केवल बच्चोंके लाभके लिए ही नहीं, बल्कि इसलिए भी कि उनसे प्राथमिक स्कूलोंके लिए शिक्षक प्राप्त होंगे। मैंने इस बातपर अपना खेद प्रकट किया कि बंगालको देशी भाषाओंके माध्यमिक स्कूलोंसे चिढ़ है और वह अंग्रेजी पढ़ानेवाले माध्यमिक स्कूलोंपर ही आग्रह रखता है।

इसके बाद हमने लड़कियोंकी शिक्षाकी चर्चा की और मैंने अपनी समितिके इस मतको उद्धृत किया कि शिक्षा-प्रसारकी सभी योजनाओंमें लड़कियोंकी शिक्षाको प्राथमिकता देनी चाहिए। श्री गांधीने इस सम्बन्धमें मुझसे पूर्ण सहमति प्रकट की लेकिन साथ ही कहा कि मैं अपने मनमें सोचता हूँ कि क्या प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर लेनेसे लड़कियाँ आगे चलकर बेहतर माताएँ बन सकेंगी। श्री गांधीने कहा कि अभी मैंने आपकी समितिकी रिपोर्ट नहीं पढ़ी है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४०८)से, सौजन्य. इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२४२. भेंट : समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको

लन्दन
३ दिसम्बर, १९३१

मध्यरात्रिसे कुछ पहले कोई ४० पत्र-प्रतिनिधि महात्मा गांधीसे मिले। महात्माजी अपने नाइट्सब्रिज कार्यालयके एक छोटे-से कमरेमें अँगीठीके सामने पालथी मारकर बैठे हुए थे और पत्र-प्रतिनिधि भी फर्शपर ही उनके इर्द-गिर्द बैठे हुए थे। उन्होंने उनसे कहा कि मैं प्रधान मन्त्रीके वक्तव्य अथवा कॉमन्स सभामें हुई बहस, किसीके सम्बन्धमें अन्तिम रूपसे कुछ कहनेमें असमर्थ हूँ, लेकिन आपको इस बातके लिए आश्वस्त करता हूँ कि उस वक्तव्य तथा बहस दोनोंको पूरी तरह समझनेके लिए मैं जो-कुछ कर सकता हूँ वह करनेके बाद ही किसी निष्कर्षपर पहुँचूंगा। उन्होंने कहा कि मेरे किसी भी निष्कर्षका तबतक कोई महत्त्व नहीं होगा जबतक कि उसे कांग्रेस कार्य-समितिके सामने पेश नहीं किया जाता और वह उसे स्वीकार नहीं कर लेती।

महात्मा गांधीने सविनय अवज्ञाके सम्बन्धम अपनी घोषणाको दोहराया और प्रधान मन्त्रीके वक्तव्यके बारेमें बनी अपनी इस अस्थायी रायको फिरसे जाहिर किया कि उसका मतलब यह है कि हम ऐसी मंजिलपर पहुँच गये हैं, जहाँसे हम दोनोंके रास्ते अलग हो जाते हैं। किन्तु उन्होंने यह भी कहा कि मैंने जिस प्रकार इसका अध्ययन करनेका वादा किया था, उस प्रकार अभीतक इसका अध्ययन नहीं कर पाया हूँ। महात्मा गांधीने कहा कि एक बार पुनः अग्निपरीक्षासे गुजरनेके लिए पूरे राष्ट्रका आह्वान करना बहुत बड़ी जिम्मेदारीकी बात है। इसलिए मैं गम्भीरतापूर्वक विचार किये बिना सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू करनेकी सलाह दूंगा, ऐसी सम्भावना नहीं है, लेकिन बंगाल अध्यादेश जिस दमन-नीतिकी सूचना देता है, उस नीतिपर आग्रह करते रहनेका परिणाम यह हो सकता है कि हमारा सोचा हुआ बिलकुल उलट जाये और राष्ट्रीय स्तरपर सविनय अवज्ञा शुरू हो जाये। महात्मा गांधीने यह घोषणा करते हुए कि इस अध्यादेशका कोई औचित्य नहीं है, आगे कहा :

भारतसे रवाना होते हुए मेरी जो मनःस्थिति थी, आज वह उससे कुछ अधिक निराशापूर्ण नही है। अपनी आन्तरिक शक्तिके बलपर हम जितना पानेके पात्र है, उससे कुछ भी ज्यादा पानेकी आशा मैंने कभी नही की थी। गोलमेज परिषद्की वार्त्ताएँ यह जाननेका एक तरीका साबित हुई है कि आज जिनके हाथोमे सत्ता है, उनकी तुलनामे हममे कितनी शक्ति है। जाहिर है कि हम विफल हो गये है। इसलिए काग्रेसको फिरसे शक्ति-संचय करनी चाहिए ताकि वह अपना काम करनेके लिए आवश्यक क्षमताका विकास कर सके।

महात्मा गांधीका विचार था कि इंग्लैंड आकर उन्होंने बहुत अच्छा किया। उन्होंने कहा कि मेरा परिषद्के बाहरका काम परिषद्के अन्दरके कामसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण साबित हुआ है। अगर सरकार समझौते तथा लोकमतका ध्यान रखकर चलनेकी नीतिका अनुगमन करे और प्रधान मन्त्रीकी घोषणामें कांग्रेसकी माँगोंके स्वीकार किये जानेकी गुंजाइश हो तो मैं वार्त्ता जारी रखनेको तैयार हूँ। उस हालतमें मैं अपने देशभाइयोंको पूरे हृदयसे सहयोग करते रहनेकी सलाह दूँगा। महात्मा गांधीको इस बातके लिए खेद था कि वे श्री चर्चिल तथा कुछ अन्य लोगोंसे नहीं मिल पाये। वे २८ दिसम्बरको भारत पहुँचनेकी आशा रखते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ६-१२-१९३१

२४३. बातचीत : हॉरैबिन तथा अन्य लोगोंसे[1]

लन्दन

३ दिसम्बर, १९३१

हॉरैबिन : सरकारके प्रस्ताव ऊपरसे देखनेमें तो इतने सही हैं कि खतरनाक मालूम होते हैं।

गांधीजी : इस घोषणाको पिछले सालकी तुलनामें प्रगतिका सूचक नहीं कहा जा सकता। बल्कि एक महत्त्वपूर्ण मामलेमें तो इसे एक कदम पीछे हटना ही माना जायेगा। सचमुच ऐसा नहीं है कि कोई कदम पीछे हटाया गया है, लेकिन जहाँ गत वर्षके प्रस्ताव[2] अस्थायी थे, इस वर्षके प्रस्तावोंमें परिवर्तनकी कोई गुंजाइश नहीं रखी गई है। वे अस्थायी नहीं, बल्कि अन्तिम हैं। पिछले वर्षके प्रस्तावोंकी स्वीकृति संघ-संरचना समितिकी सिफारिशोंपर निर्भर है। मगर ये प्रस्ताव गत वर्षके प्रस्तावोंकी तुलनामें कड़े, अपरिवर्तनीय हैं — उदाहरणके लिए वित्त-सम्बन्धी सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंको ले सकते हैं। मुझसे कहा गया कि गत वर्षके निष्कर्ष अन्तिम नहीं थे और इसीलिए मैं यहाँ आया भी। घोषणामें संघ-संरचना समितिके निष्कर्षोंको स्वीकार किया गया है। हर रिपोर्टमें एक-न-एक असहमति दर्ज है, लेकिन उसमें यह नहीं कहा गया है कि असहमति किसने व्यक्त की। यदि प्रत्येक पक्षके समर्थकोंकी संख्याका विचार किया जाये तो कांग्रेसका मत शेष सभी पक्षोंके मतोंके योगसे भी अधिक वजनदार साबित होगा।

प्रतिरक्षा और वित्तको ताजके अधीन रखा गया है। यह स्थिति किसी भी तरह स्वीकार करने योग्य नहीं है। जबतक द्वार-रक्षक और खजानेपर अपना अधि-

१. बातचीत शामके समय हुई थी।

२. पहली गोलमेज परिषद्में रखे गये प्रस्ताव।

कार न हो तबतक कोई भी व्यक्ति अपने घरका मालिक नहीं हो सकता। इसीलिए मैंने कहा कि, अगर भारतीय इसे स्वीकार करेंगे तो अपनेको उपहासका पात्र बनायेंगे। यह बहुत ही अपमानजनक स्थिति है। इसमें बेईमानी भी है। सरकारको कहना यह चाहिए था कि हम आपको इन विषयोंका नियन्त्रण सौंपनेको तैयार हैं। लेकिन वह तो संक्रान्तिकालीन सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंकी बात कर रही है।

अब आप इस चीजपर, जो-कुछ बंगालमें हो रहा है, उसके प्रकाशमें विचार कीजिए। यह अध्यादेश अत्यन्त आपत्तिजनक है। अत्यन्त आपत्तिजनक तो रौलट अधिनियम भी था, किन्तु यह उससे भी बहुत अधिक आपत्तिजनक है। यह हमें गदरके जमाने और सैनिक-शासनके दिनोंकी याद दिलाता है। दरअसल यह सैनिक-शासनसे भी बदतर है। सैनिक-शासनमें तो किसी निर्णयको विचार करके बदला भी जा सकता है, लेकिन यहाँ नहीं। यह तो कानून समर्थित सैनिक-शासन है। हत्या करनेके प्रयत्नका दण्ड फाँसीपर चढ़ा दिया जाना तय किया गया है। कोई अपील नहीं की जा सकेगी, मुकदमोंकी सुनवाई बन्द कमरोंमें होगी. अनुभवहीन नौजवानोंको मुकदमेकी सुनवाईका अधिकार होगा, और वे चाहें तो पुलिस-अधिकारियोंको भी यह अधिकार दे सकते हैं। जो-कुछ आयरलैंडमें हुआ वह इससे बुरा नहीं था, आम जनतासे फरार लोगोंको अधिकारियोंके हवाले करनेकी अपेक्षा की जायेगी। इसका मतलब तो सारे बंगालको सजा देना होगा। जनताकी ओरसे जो अपराध किये गये, वे निश्चय ही बुरे थे, लेकिन सरकारने सैनिक-शासनके अधीन जो बदला लिया वह तो भयंकर था।

जब मैं उक्त घोषणाको इस अध्यादेशके प्रकाशमें देखता हूँ तो मुझे नहीं लगता कि सरकार सत्ता हस्तान्तरित करना चाहती है। जो थोड़ी जिम्मेदारी दी जानेवाली है, वह तो छाया-मात्र है। जाहिर है कि इन बाधाओंके कारण उनको निभा पाना हमारे लिए मुश्किल होगा और तब इस बातको हमारे खिलाफ हमारी अयोग्यताके एक सबूतकी तरह पेश किया जायेगा। आजकी विधानसभाको ही लीजिए। जिन प्रस्तावोंको सरकार द्वारा मनोनीत सदस्योंने भी लगभग अस्वीकार कर दिया वे प्रस्ताव पास हो गये। बजटके मामलेमें भी ऐसा ही हुआ। आज जब आपको सिर्फ दमन-ही-दमनको झेलना पड़ रहा है तो कलको उत्तरदायी शासन कैसे मिल जायेगा? दक्षिण आफ्रिकामें जब उत्तरदायी शासन आया तो स्वाभाविक रीतिसे आया। लोग जानते थे कि वह आ रहा है। जीवन्त विकासकी हर प्रक्रिया ऐसी ही होती है। यहाँ तो वैसी कोई बात ही नहीं है। लेकिन यह सब कहते हुए मेरे ध्यानमें यह बात जरूर है कि वर्तमान प्रस्ताव अस्थायी हैं, इनमें कुछ परिवर्तन किये जा सकते हैं और अध्यादेश दो-तीन दिनोंमें रद्द कर दिया जायेगा।

रैंच: मैं तो यही महसूस करता हूँ कि स्थितिमें बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ है। रॉदरमेयर और चर्चिलका कोई विशेष महत्त्व नहीं है। मैकडॉनाल्डका वक्तव्य, जैसी मैंने आशा की थी उससे अच्छा ही है, टोरी बहुमत जहाँतक गया, वहाँतक जाये, इससे अच्छी स्थितिकी आप कल्पना नहीं कर सकते। आप तीन साल इन्तजार

क्यों नहीं करते? ग्रेट ब्रिटेनको यह दिखानेका मौका तो दीजिए कि वह सचमुच ईमानदार है।

गाधीजी . यहाँ आयरलैंडवाला दृष्टान्त लागू नही किया जा सकता। आयर-लैंडके मामलेमे भी वार्त्ता तो चली थी, लेकिन वार्त्ताके दौरान दमनकी कार्रवाई नही की गई थी। लेकिन भारतके मामलेमे तो इधर बातचीत चल रही है और उधर दमन सर सैम्युअल होरने साफ कहा "मुझे आप लोगोकी योग्यता या क्षमतामे भरोसा नही है।" अगर आप यह कहे कि जो-कुछ चर्चिल कहते है उसके आधारपर हमारे सम्बन्धमे कोई धारणा कायम न कीजिए तो इस बातको मै मान लूँगा। लेकिन अगर आप यह कहे कि जो-कुछ मैकडॉनाल्ड या लोथियन कहते है, उसके आधारपर हमारे सम्बन्धमे कोई राय कायम मत कीजिए तो यह चीज मेरी समझमे नही आ सकती। होर बडे खरे ढगके आदमी है, बातके पक्के और ईमानदार, लेकिन वे बहुत जिद्दी और सख्त है, जिस बातपर अड जाते है, अडे ही रहते है और भारतीय इतिहासके बारेमे उन्होने ऐसे अज्ञानका परिचय दिया है कि आश्चर्य होता है। उन्हे लगता है कि भारतमे अग्रेजी शासन हमारे लिए एक निश्चित वरदान साबित हुआ है। वे मानते है कि इस विश्वासके बिना वे इस शासनको चला ही नही सकते। दूसरे लोग भी करते तो यही है, मगर जो-कुछ होर कहते है, वे कहते नही।

लास्की : मगर पूरा मन्त्रिमण्डल अध्यादेशको ठीक नहीं मानता। आपकी बातको मै एक हदतक तो सही मानूँगा।

गाधीजी : नही, अगर ऐसी बात है तो मन्त्रिमण्डलके सदस्योको त्यागपत्र दे देना चाहिए। यह तो मनको क्लेश पहुँचानेवाली स्थिति है। यह बिलकुल असह्य स्थिति है। इसको मिटानेकी कोशिशमे मै खुदको भी मिटा देनेके लिए तैयार हूँ। अगर इस तरहके मामलेमे आप चुप रहते है तो उसका मतलब है कि आप भी अपराध कर रहे है।

लास्की : लेकिन इसपर जरा हमारे दृष्टिकोणसे तो सोचकर देखिए — इस दृष्टिकोणसे कि प्रधान मन्त्रीने एक बहुत ही चतुराई-भरा कदम उठाया है। उन्होंने अन्तिम निर्णयकी घड़ी टाल दी। उन्होंने आपके लिए अपना अगला रुख तय करना मुश्किल कर दिया है और इसी तरह हमारे लिए भी। मुझे लगता है कि आपको उनसे अपनी सदाशयताका पूरा प्रमाण देनेको कहनेका अधिकार है। अगर आपकी स्थितिमें मै होता तो उनसे बंगाल अध्यादेशको पूरा-पूरा बदल देनेको कहता। उनसे बजाय यह कहनेके कि आपने घोर अपराध किया है और हमारा आपसे कोई सरो-कार नहीं है, आप उनसे, बंगालमें जो-कुछ हो रहा है, उसका स्पष्टीकरण करनेको कह सकते हैं। इसके अलावा विभिन्न समितियाँ है। उनमें सही ढंगके लोगोंको स्थान दिये जानेकी माँग करके आप उनकी सदाशयताको परखनेका आग्रह कर सकते हैं। आपकी स्थितिमें मै होऊँ तो मै इन समितियोंमें कांग्रेसको पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिये जानेकी माँग करूँ। और तीसरी बात यह कि अगर आपकी जगह मै होऊँ तो

मैं उनसे कहूँ कि जिन विषयोंके लिए केन्द्रीय सरकार उत्तरदायी है, उनके संचालनमें भारतीयोंको उत्तरोत्तर अधिकाधिक हाथ बँटानेका मौका देकर अपनी सदाशयताका प्रमाण दीजिए। इन विषयोको ऐसा समझकर चलना कि इनमें किसी ओरसे किसीको दखल देनेकी इजाजत ही नहीं दी जा सकती, भारी भूल है। मै चाहता हूँ कि एक खास अवधिके अन्दर आप सरकारको यह समझानेकी कोशिश कीजिए कि अगर वह आपको संतुष्ट करनेके लिए तैयार है तो आप गोलमेज परिषद् द्वारा शुरू किये गये काममें सहयोग करते रहेगे। उसके बाद अगर आपको जरूरी लगे तो सविनय अवज्ञा शुरू कीजिए।

गाधीजी: आपकी कठिनाइयोका विचार न करूँ तो भी सत्याग्रहीके नाते मैं, जो-कुछ आप कह रहे हैं, उसके अलावा और कुछ कर भी नही सकता। कलकी बातचीतमे मै वही सब करने जा रहा हूँ जो आपने सुझाया है। मै यह नही कहूँगा कि रक्षात्मक पूर्वोपायोको टुकड़ोमे बाँटा जा सकता है। कुछ विषयोको ताजके अधीन बरकरार रखकर उनमें से कुछ चीजें हमे सौप दी जाये, इसमे मै कोई लाभ नही देखता। फिर भी ऐसे रक्षात्मक पूर्वोपाय सोचे जा सकते है जिनसे भारतको और अग्रेजोकी जानको निरापद बनाया जा सकता हो। निश्चय ही मै इस तरहके कुछ उपाय सोच निकालूँगा। मुझे समितिमे इन उपायोमें परिवर्तन करनेकी सुविधा होनी चाहिए। अगर ऐसा हो तो मै उनपर विचार करूँगा, लेकिन अगर आप ऐसा सोचते है कि यह नही हो सकता, तो फिर हमारा इससे कोई सम्बन्ध नही हो सकता। जहाँतक हुकूमतमें भारतीयोके शामिल किये जानेकी बात है, इससे मुझे सन्तोष नही होगा। नीतिमें आमूल परिवर्तन होना चाहिए। सरकारको लोकमतका खयाल रखकर चलना होगा। उसमे काग्रेसकी मनोवृत्तिवाले लोगोको स्थान देना होगा। इस अध्यादेशका लक्ष्य कांग्रेस है। आतकवादका मुकाबला जरूर करना चाहिए, लेकिन जो हुकूमत खतरे उठानेको तैयार न हो उसे हुकूमत करनेकी बात सोचनी ही नही चाहिए और दूसरोंके लिए स्थान खाली कर देना चाहिए। राष्ट्रपति कार्नोट[1] अपनी सुरक्षाके बारेमें आश्वस्त नही थे। क्लीवलैण्ड[2]की हत्या कर दी गई, लेकिन इससे अमेरिकाने अपना आपा नही खो दिया। आप पूरे राष्ट्रको पुसत्वहीन बना देनेकी बात कैसे सोच सकते है? हत्यारोके सिर बखूबी काट लीजिए, लेकिन उनके माता-पिताओके सिर तो न काटिए, गाँवोको तबाह न कीजिए। उनके प्रति गाँवोकी मूक सहानुभूति तो होगी ही। उसे आप नही रोक सकते। अगर आप उनका दमन करेगे तो इसका मतलब उन्हे और भी भडकाना होगा। आतकवादियोको विवश कर देनेके लिए हर सम्भव कदम हम उठायेंगे। लेकिन ब्रिटेनकी मनोवृत्ति इससे ज्यादा कुछ करनेकी नही है। दक्षिण आफ्रिकामे प्रधान मन्त्रीके इस करतबको "मजाक करना"

१. मेरी फ्रैंकाइस सैडी (१८३७-१८९४), फ्रांसीसी गणतन्त्रके चौथे राष्ट्रपति।

२. शायद भूलसे राष्ट्रपति विलियम मैक-किन्लेके स्थानपर यह नाम दे दिया गया है। १९०१ में एक आतकवादीने राष्ट्रपति मैक-किन्लेकी हत्या कर दी थी।

कहा जायेगा। क्या गोलमोल घोषणा उन्होंने की ? मैं इसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना चाहता हूँ, इसका जो अच्छेसे-अच्छा अर्थ लगाया जा सकता है, वह अर्थ लगाना चाहता हूँ और इसी घोषणासे प्रधान मन्त्रीको बाँध देनेकी कोशिश करना चाहता हूँ। लेकिन सरकार यह समझ ले कि भारत बगालको धूल चाटते नही देख सकेगा। अगर सारी आजमाइशके बाद यही पता चला कि इस घोषणाका अर्थ केवल वही है जो मैं अभी लगा रहा हूँ तो हमारे सामने केवल एक ही रास्ता रह जायेगा।

किंग्सले मार्टिन : होरका मैकडॉनाल्डसे झगड़ा हुआ और उसमें मैकडॉनाल्ड जीत गये। इस बातका खयाल करके भी आपको संयमसे काम लेना चाहिए।

गाधी भारतकी परिस्थितियाँ जैसी यहाँसे जान पडती है वैसी ही बनी रहती है तब तो सयमकी बात करना बेकार है। दक्षिण आफ्रिकामे हम सोलहसे सोलह हजार हो गये थे।

किंग्सले मार्टिन : कुछ नये नियम बनाना तो आप जरूरी मानते है?

गाधीजी : अगर साधारण कानूनसे परिस्थितिका मुकाबला नही किया जा सकता हो तो मै विशेष अधिकार अख्तियार करनेके पक्षमे होऊँगा। मै चार्ल्स टेगार्टको भी जानता हूँ। उन्होने तो औचित्यके खयालको बिलकुल ताकपर ही रख दिया था।

नेविन्सन : आप क्या-क्या परिवर्त्तन चाहेंगे?

गाधीजी . मै तो केन्द्रमे पूर्ण उत्तरदायी सरकार चाहूँगा। केन्द्रीय विषयोकी हदतक प्रान्त केन्द्रके प्रति उत्तरदायी होगे, लेकिन शेष बातोमे पूर्ण स्वायत्तताका उपभोग करेगे। मै द्विसदनीय विधायिका नही चाहूँगा। हम कॉमन्स सभाकी नकल नही करना चाहते।

लास्की : आपका मतलब लॉर्ड सभासे है।

गाधीजी : नही, प्रथम सदनको लेकर भी मै चिन्तित हूँ। अगर आपके यहाँ आयरलैंड, स्कॉटलैंड और इग्लैंडके लिए अलग-अलग विधानमण्डल होते तो आपकी कॉमन्स सभा अवश्य ही छोटी होती। मै तो वयस्क मताधिकारके विना सन्तुष्ट नही होऊँगा। अगर वयस्क मताधिकारकी व्यवस्था हो जाती है तो अस्पृश्योको सहज ही बहुत बडा अधिकार प्राप्त हो जायेगा। मेरा मापदण्ड यह होगा कि प्रतिनिधि इस बातको जाने कि वे क्या कह रहे है और वे किसी भी तरह भ्रष्ट और बेईमान न बन सके। लेकिन क्या आपको यह भरोसा है कि लिबरल दल परिवर्त्तन करा सकेगा? मै मानता हूँ कि उसके इरादे नेक है लेकिन अपने इरादोको कार्यान्वित कर सकनेकी उसकी क्षमतामे मुझे विश्वास नही है। जहाँतक भारतका सम्बन्ध है, मतदाता इसे अपने मनकी नही करने देगे। लेकिन इसमे कोई बात नही है। अगर गुजाइश हो तो मै प्रतीक्षा करनेके लिए तैयार हूँ। मै आपमें से हर-एकका सक्रिय समर्थन और सहानुभूति चाहता हूँ। मै आपको सन्तुष्ट करनेकी कोशिश करूँगा, सविनय प्रतिरोध शुरू करनेमे मै जल्दबाजी नही करूँगा। क्योकि सविनय प्रतिरोधमें सिद्धान्तकी दृष्टिसे जल्दबाजीके लिए स्थान ही नही है। किन्तु मै सक्रान्तिकालमे

बगालको चूर-चूर होकर विखरते कैसे देख सकता हूँ? स्मट्सकी शब्दावलीका प्रयोग करूँ तो कहूँगा कि या तो हमे अपनी माँगे मनवानी है, अन्यथा लडना है।

नेविन्सन: बड़ेसे-बड़े संवैधानिक सुधारके जरिये भी गरीबीको दूर करना कैसे सम्भव है?

गाधीजी. हम इसे दूर करनेकी कोशिश कर रहे है। गरीवोकी आयमे जिससे थोडा और जुड सके वैसा कोई अन्य साधन हमे बताइए। फिर मै चरखेको जला दूँगा।

ब्रेल्सफोर्ड: हो सकता है, हम इतनी मूर्खतासे काम ले रहे हों कि यह समझ ही न पायें कि हम कब पराजित हो गये; और हो सकता है, आप इतनी अधिक चतुराई बरत रहे हों कि आप यही न जान पायें कि कब आपको विजय मिली। मैं मैकडॉनाल्डकी बातको वस्तुपरक दृष्टिकोणसे देखनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मुसलमानोंकी चुप्पी, तफसीलके सम्बन्धमें मतैव्यका पूरा अभाव तथा और भी बहुत-सी चीजें थीं। इन परिस्थितियोमें मैकडॉनल्डको कुछ न देनेके बहाने-पर-बहाने मिल सकते थे। आपने संवैधानिक सरकारसे जो-कुछ प्राप्त किया है, वह उससे बहुत अधिक है जो आपको अल्पसंख्यक श्रमिक दलसे मिलता। मैकडॉनल्ड संविधानके सम्बन्धमें अपनी स्थितिको कायम रखे हुए है और आतंकवादियोंके सम्बन्धमें भी वे संविधानके ही अनुसार कर रहे हैं। वे लुटेरोंको थोड़ा-कुछ देकर पूरे मालकी रक्षा करना चाह रहे हैं।

प्रान्तीय परिषदोंमें बहुमत प्राप्त कर लेनेके बाद आप गरीबीको दूर करनेकी अपनी नीतिको मजेमें कार्य-रूप दे सकते है।

गाधीजी: दुराशयताकी कोई बात नही है। ब्रिटेनके दिमागमे जो जडता आ गई है, उसे मै अनुभव करता हूँ। आप कहते है: जो मिल रहा है, ले लो। नही, आप ऐसा नही कह सकते। केन्द्रमें ८० प्रतिशत विषय सुरक्षित विषयोकी श्रेणीमे रहेगे। वर्तमान योजनाके अधीन प्रान्त बड़ी ही दयनीय स्थितिमें रहेगे, क्योकि उनके सिर एक भारी प्रशासन-तन्त्रका बोझ रहेगा। आखिरकार केन्द्रीय राजस्व प्रान्तोसे ही तो प्राप्त होते है — प्रान्तोसे उसे ४७ करोड रुपये मिलेगे। इतने-सारे बोझोसे दबे प्रान्त कोई सुधार क्या कर पायेंगे? जबतक आप मुझे स्पष्टीकरणकी सुविधा नही देते, मै इस चीजको स्वीकार नही कर सकता।

प्रधान मन्त्रीकी घोषणाके पीछे कोई बेईमानी नही है।

देशी राजा तो अब बहुत ज्यादा बँध गये है। भोपालके नवाब और हैदरीने शर्तोकी जाँच करनेका वादा किया है। इस्माइल तथा अन्य लोगोकी स्थिति भी बहुत ठोस है। सर मनुभाईके साहसपूर्ण वक्तव्यके बाद कोई कठिनाई नही होनी चाहिए।

इस्पात उद्योग ऐसा नही है, जिसे हाथके श्रमसे चलाया जा सके। मै मशीनोके बिलकुल खिलाफ हूँ, ऐसी अफवाह या तो बिना समझे-बूझे, लिखने-बोलनेवाले गैर-जिम्मेदार आलोचक फैलाते है या शत्रु लोग। शल्य-चिकित्साके औजार बनानेके लिए मै जटिलसे-जटिल यन्त्रोको अपनाना चाहूँगा। लेकिन जहाँतक खाने-कपड़ेका सम्बन्ध है, मै औद्योगीकरणके बिलकुल खिलाफ हूँ।

रेंच : लोकमतमें भारी परिवर्तन हुआ है और ऐसे हलकोंमें हुआ है जिनसे ऐसी अपेक्षा नहीं की जाती थी।

गांधीजी : मैं ब्रिटिश राष्ट्रका प्रेमी हूँ। आपका कोई भी गुण मेरी आँखोसे छिपा हुआ नही है। [लेकिन आप जो चाह रहे हैं उसमें] आप तर्ककी अवज्ञा कर रहे हैं। निश्चय ही मुझे धीरजसे काम लेना चाहिए, लेकिन पत्थरोकी तरह जडतापूर्ण धीरजसे नही। मुझे इस बातका विश्वास कराइये कि ब्रिटिश अधिकारियोके मनमे सदाशयता है। क्या आप मुझसे इस आशामे कि सब-कुछ ठीक ही होने जा रहा है, हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहनेकी अपेक्षा करते हैं ?

एक ऐसा सम्मेलन होना चाहिए जिसमे सभी मतोके प्रतिनिधि शामिल हो। केवल उसी पक्षको बुलाना चाहिए जो कुछ निश्चय कर सके। किया कुछ नही जाता है, लेकिन लगता है मानो सब-कुछ किया गया। क्या वे नही जानते थे कि मैं और सप्रू कभी भी सहमत नही होगे या यह कि यहाँ आनेवाले मुसलमान सहमत नही होगे अथवा यह कि डॉ० मुंजेके लिए यहाँ कोई स्थान नही है? आखिरकार हमे अपनी स्वतन्त्रता तो हमारी कमजोरीके कारण नही, बल्कि शक्तिके फलस्वरूप ही प्राप्त होगी।

वर्त्तमान घोषणाके अनुसार तो न केन्द्रमे उत्तरदायी शासनकी स्थापना की तजवीज है और न प्रान्तोमे। ऋणोके सम्बन्धमे मूलभूत अधिकारोपर कोई प्रतिबन्ध नही लगाया गया है। एक ऐसी धारा हो सकती है जिसमे सभी अधिकारोका समावेश हो। मैं तो अपना कोई भी पत्ता यो ही हाथसे फेंक देनेवाला नही हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य . नारायण देसाई

२४४. भेंट : एडमंड डिमिटरको[1]

लन्दन

[५ दिसम्बर, १९३१ के पूर्व][2]

प्र० : मैं तो समझा था कि आप यन्त्र-मात्रके कट्टर दुश्मन हैं। फिर आप घड़ीका उपयोग कैसे करते हैं ?[3]

उ० : मुझे यह तो जानना ही पडता है कि कब क्या समय हुआ है, और इसलिए मुझे घडीका उपयोग भी करना ही पडता है। इसके अलावा, मैं इसका

१. एडमंड डिमिटर द्वारा तैयार किये भेंट-वार्ताके विवरणसे उद्धृत।

२. साधन-सूत्रमें भेंट-वार्ताकी तिथि नही दी गई है, लेकिन गांधीजी ५ दिसम्बरको इग्लैंडसे रवाना हुए थे।

३. भेंट-वार्ता शुरू होते ही गांधीजी ने अपनी घडी देखी थी।

उपयोग करके अपने सिद्धान्तोके विरुद्ध आचरण नही कर रहा हूँ। मै यन्त्रका नही, बल्कि सगठित यन्त्रवादका शत्रु हूँ। इस प्रणालीको, जो आज आपकी सभ्यताका आधार बन गई है, मै मानव-समाजपर आ सकनेवाला सबसे बडा खतरा मानता हूँ। अगर मै घडीका उपयोग करता हूँ तो इसका मतलब यह नही कि मै उसका गुलाम बन गया हूँ। लेकिन जब यन्त्र एक सगठित सस्थाका रूप लेता है तब तो मनुष्य उसका गुलाम ही बन जाता है और स्रष्टासे वरदानके रूपमें प्राप्त अपने समस्त मूल्योको खो बैठता है।

प्र० : बीचमें बोलनेके लिए क्षमा कीजिएगा। आप ईश्वरकी बात कहते है, लेकिन आपका ईश्वर मेरा ईश्वर तो नहीं है।

उ० : लेकिन, आपका ईश्वर तो मेरा भी है, क्योकि मै आपके ईश्वरमे भी विश्वास रखता हूँ — बावजूद इसके कि आप मेरे ईश्वरमे विश्वास नही करते।

प्र० : हाँ, ऐसा इसलिए है कि आपके कई ईश्वर है।

उ० : हाँ, लेकिन इसका कोई महत्त्व नही है। ज्यो ही हम मनुष्यमे विश्वास करने लगते है, इन बातोका रहस्य हमारे सामने खुल जाता है। हममे जो फर्क है वह यही कि मनुष्य और उसकी नियतिके सम्बन्धमें हमारे अलग-अलग मत है। आप यूरोपीय लोग कहते है कि मनुष्य जन्मसे न तो अच्छा होता है और न बुरा, और वह किस राहपर चलेगा, यह बहुत-कुछ इस बातपर निर्भर करता है कि वह किस स्थानपर रहता है, किन सस्थाओके सम्पर्क और प्रभावमे आता है, आदि इसके विपरीत मै यह मानता हूँ कि मनुष्य सदा अच्छा ही होता है और अगर वह सही रास्तेसे भटकता है तो केवल बुरी सस्थाओंके कारण ही भटकता है।

प्र० : इसका मतलब कि आप हमारी संस्थाओंके खिलाफ युद्धकी घोषणा कर रहे है?

उ० : नही, इस तरहकी तो कोई घोषणा मै कभी करता ही नही। मै केवल यह कहता हूँ कि हमें मानवीय सस्थाओको अधिक न्याय-सम्मत बनानेके लिए उन्हे सुधारना चाहिए। सुधार शान्तिपूर्ण उपायोसे सम्पन्न करने चाहिए और इस मामलेमे मै उसी प्रक्रियाको अपनानेकी सलाह देता हूँ, जिसका अनुसरण मैंने अपने राजनीतिक सघर्षमे किया है। मै लडाई नही करता, क्योकि मै मानता हूँ कि मनुष्य स्वभावतः अच्छा है और अगर कोई उसे मैत्री-भावसे कायल करनेकी कोशिश करे तो एक-न-एक दिन वह सत्यको समझ ही जायेगा।

प्र० : क्या आप अंग्रेजोंको अच्छा मानते है?

उ० : अवश्य। अगर अंग्रेजोसे हमारा मतभेद है तो उसका कारण केवल यह है कि उनकी सस्थाएँ बुरी है। किसी-न-किसी दिन वे सत्यको समझेंगे और तब अपना आजवाला रुख भी छोड देंगे।

प्र० : महात्माजी, क्या आनन्द आपके जीवनका लक्ष्य है?

उ० : नही, आनन्द मेरे जीवनका उद्देश्य नही है, यह तो उस वस्तुतक पहुँचनेका एक साधन है जो मेरे पथको प्रकाश-स्तम्भकी भाँति आलोकित करता रहा

है। मेरा उद्देश्य बड़ा सीधा-सादा है : मैं भारतको स्वतन्त्र, सशक्त, शान्तिमय और सुखी देखना चाहता हूँ।

[एक मुलाकाती[1] :] कल मैं भारत रवाना हो रही हूँ। मैं आपसे विदा लेने आई हूँ।

[गांधीजी :] लन्दनमें आपने क्या किया?

[मुलाकाती :] बस, स्कूल ऑफ मेडिसिनमें अपना अध्ययन समाप्त किया है।

[गांधीजी :] भारतमें आप क्या करना चाहती हैं?

[मुलाकाती :] आपके विचारोंका प्रचार करना चाहती हूँ।

[गांधीजी :] क्या आपकी सगाई हो चुकी है?

[मुलाकाती :] नहीं।

[गांधीजी :] तो सुनिए। आपको जितनी जल्दी हो सके, शादी करके जल्दीसे-ल्दी बच्चे पैदा करने चाहिए।

[डिमिटर :] आपके विचारसे, किस विश्वविख्यात व्यक्तिने बीसवीं सदीपर सबसे अधिक और अच्छा प्रभाव डाला है?

उ० : टॉल्स्टॉय। केवल टॉल्स्टॉयने ही।

राजनीतिके सम्बन्धमें बोलते हुए गांधीजी ने निम्नलिखित बातें कहीं :

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जिसका मैं प्रतिनिधि हूँ, विभिन्न वर्गों या विश्वासोंके लोगों अथवा स्त्री-पुरुषमें कोई भेद नहीं करती। इसने बराबर अपने-आपको अवहेलित-उपेक्षित जनोंके पक्षधरके रूपमें पेश किया है। लेकिन कांग्रेस सबसे पहले भारतमें रहनेवाले उन करोड़ों दीन-दुःखी जनोंका प्रतिनिधित्व करती है जिनकी संख्या भारतकी कुल आबादीका ८५ प्रतिशत है।

उस संस्थाके नामपर मैं भारतके लिए स्वतन्त्रताकी माँग करता हूँ और इसमें इंग्लैंडके साथ स्वेच्छापर आधारित तथा पूर्ण समानताके दर्जेपर सम्बन्ध कायम रखनेकी भी गुंजाइश रखता हूँ। भारतके हितकी दृष्टिसे किसी प्रकारकी संघ-योजना अथवा सर्वस्वीकृत सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंसे हमें इनकार नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-१२-१९३१

१. यह एक भारतीय लड़की थी, जो उसी समय गांधीजी से मिलने आई थी।

२४५. एक घोषणापत्र[1]

[५ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व]

कांग्रेस सुरक्षा-सेनाओं, विदेशी मामलों तथा वित्तपर नियन्त्रणके अधिकार सहित पूर्ण स्वतन्त्रताकी माँग करती है। इसमें वह समानताके स्तरपर ब्रिटेनके साथ साझेदारीकी गुंजाइश रखती है। साझेदारी दोनोंमें से किसी भी पक्षकी इच्छा होनेपर समाप्त की जा सकती है। हाँ, उस साझेदारीमें एक-दूसरेके प्रति अपने दायित्वोंका निर्वाह अथवा उनका पारस्परिक समंजन (ऐडजस्टमेंट) करना आवश्यक होगा।

सुरक्षात्मक पूर्वोपाय

कांग्रेस भारतके हितमें आवश्यक सुरक्षात्मक पूर्वोपायोंको स्वीकार करेगी और वह सारे उचित दायित्व अपने सिर लेनेको तैयार है, बशर्ते कि किसी निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा जाँच करवाकर उन दायित्वोंके औचित्य-अनौचित्यका फैसला करा लिया जाये। कांग्रेस अल्पसंख्यकोंकी समस्याके राष्ट्रीय समाधानके लिए प्रतिश्रुत है, लेकिन अगर जरूरत हुई तो वह ऐतिहासिक कारणोंसे एक अनिवार्य बुराईके रूपमें मुसलमानों तथा सिखोंके लिए विधायिकामें स्थानोंके आरक्षणके सिद्धान्तको स्वीकार कर लेगी।

अस्पृश्य

अस्पृश्योंका हित-साधन कांग्रेसका विशिष्ट दायित्व होगा और उनके मामलेपर अलगसे विचार करना और इस तरह इस समय, जबकि इस बुराईको समूल नष्ट कर देनेके लिए हर सम्भव प्रयत्न किया जा रहा है, अस्पृश्यताको कानूनी स्थिति प्रदान करना अन्यायपूर्ण होगा।

कोई भी जातीय भेद-भाव नहीं

जाति, धर्म अथवा रंगके आधारपर किसीपर कोई राजनीतिक निर्योग्यता नहीं लगाई जायेगी और चूँकि कांग्रेस वयस्क मताधिकारकी प्रबल समर्थक है, इसलिए किसी भी वयस्क अल्पसंख्यक समुदायके प्रतिनिधियोंके लिए अपनी राष्ट्र-सेवाके बलपर, विधायिकाके सदस्योंके रूपमें चुना जाना मुश्किल नहीं होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-१२-१९३१

१. साधन-सूत्रके अनुसार इंग्लैंडसे चलते समय गांधीजी द्वारा तैयार किये इस घोषणापत्रको कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगने जारी किया था। चूँकि इसका कोई और पाठ अन्यत्र कहीं उपलब्ध नहीं है, इसलिए यह कहना मुश्किल है कि यह घोषणापत्र पूरा है अथवा उसका केवल हिस्सा।

२४६. भेंट : समाचार-पत्रोंको[1]

लन्दन
५ दिसम्बर, १९३१

श्री गांधीने कहा कि कॉमंस सभामें हुई बहस केवल सरकारकी ही नहीं, बल्कि केन्द्र तथा प्रान्तोंमें उत्तरदायी सरकारे स्थापित करनेके सिद्धान्तकी स्पष्ट विजय है।

लेकिन मुझे ऐसी आशका है कि सम्बन्धित प्रस्तावके पास होनेसे भारतीय समस्याके समाधानकी दिशामे कोई बहुत बडी प्रगति नही हुई है। जो बाते घोषणामे मोटे तौरपर बताई गई थी और जिनपर बहसमे जोर दिया गया वे वास्तविक उत्तरदायी शासनसे बहुत कम पडती है। कॉमन्स सभामे पास हुए प्रस्तावने हमे फिर अवास्तविकताकी स्थितिमे डाल दिया है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१२-१९३१

२४७. भेंट : रायटरके प्रतिनिधिको[2]

फोकस्टोन
५ दिसम्बर, १९३१

अंग्रेज मेरी इस बातका विश्वास करे कि अगर मुझे उनसे लडना ही पडा तो मै जिस प्रकार अपने कुछ अधिकसे-अधिक प्रिय स्वजनोके साथ लडा हूँ, उसी प्रकार उनके साथ भी घृणासे नही, बल्कि प्रेमसे प्रेरित होकर लडूँगा। इसलिए राष्ट्रके आत्मसम्मानका ध्यान रखते हुए जहाँतक उचित है वहाँतक उनसे सहयोग करना जारी रखनेका हर सम्भव प्रयत्न करनेको मै कृतसकल्प हूँ।

लेकिन मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि मै बगाल अध्यादेशपर जितना ही अधिक विचार करता हूँ, मेरे मनमे उतनी ही अधिक आशकाएँ — अत्यन्त गम्भीर ढगकी आशकाएँ — घर करती जाती है। वह खण्ड तो बुरा है ही जिसमे हत्याका प्रयत्न करनेपर मृत्यु-दण्डतक की सजा देनेका अधिकार दिया गया है, लेकिन कुछ दूसरे खण्ड इससे भी कही बुरे है।

कुछ-एक निर्दोष व्यक्तियोके प्राण ले लिये जाये, यह बात तो हम बरदाश्त कर सकते है, किन्तु पूरे राष्ट्रको पुसत्वहीन बनानेके प्रयत्नको हम शान्त मनसे देखते नही रह सकते। इसलिए मै आशा कर रहा हूँ कि ब्रिटेनके लोग इस अध्यादेशका

१. गाधीजी ने यह भेंट लन्दनसे रवाना होने के ठीक पहले दी थी।
२. गाधीजी ने यह भेंट मेड ऑफ केंट नामक जहाजपर सवार होनेके ठीक पहले दी थी।

अध्ययन करेंगे और इसके वापस लिये जानेपर जोर डालेंगे, क्योंकि मेरे विचारसे यह राजनीतिक सत्ताका अमानवीय प्रयोग है।

उन्होंने आगे कहा कि मैंने भारतीयोंसे बराबर यह कहा है कि अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ते हुए मनमें अंग्रेजोंके प्रति घृणा न रखो। अपनी इस इंग्लैंड-यात्राके बाद तो मैं महसूस करता हूँ कि अपने देशभाइयोंसे अंग्रेजोंके प्रति कटुताका कोई भाव न रखनेका आग्रह करना मेरा और अधिक कर्त्तव्य हो गया है।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ७-१२-१९३१

२४८. भेंट : 'ब्रिस्टल ईवनिंग न्यूज' के प्रतिनिधिको

पेरिस
५ दिसम्बर, १९३१

इंग्लैंडको मेरा आखिरी सन्देश यही होना चाहिए : अलविदा और खबरदार! मैं यहाँ शान्तिकी खोजमें आया था। अब युद्धकी आशंका लेकर लौट रहा हूँ। मैं युद्ध नही चाहता, लेकिन लगता है कि परिस्थितियाँ मुझे उसी ओर ढकेल रही हैं। आश्चर्य नही कि भारत लौटनेके महीने-भरके अन्दर मैं जेलमे होऊँ।' . . .

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३१

२४९. प्रश्नोत्तर[2]

५ दिसम्बर, १९३१

प्र० : [अगर ईसा मसीह आपको आमन्त्रित करते हैं तो आप ईश्वरके घरमें प्रवेश करनेसे इनकार क्यों करते हैं? भारत ईसाई धर्मको स्वीकार क्यों नहीं कर लेता?

उ० : अगर ईसा मसीह मुझे ईश्वरके घरमें प्रवेश करनेका आमन्त्रण दे रहे हों तो कहूँगा कि उस घरमे प्रवेश करने से मैंने कभी भी इनकार नही किया है। सच तो यह है कि मैं हर क्षण उसमे प्रवेश करनेको प्रयत्नशील हूँ। अगर ईसा मसीहसे किसी व्यक्तिका नही बल्कि अहिंसाका बोध होता है तो भारत अहिंसाकी सुरक्षात्मक शक्तिको स्वीकार कर चुका है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

१. साधन-सूत्रमें इससे आगे जो अनुच्छेद दिये गये हैं वे लगभग ज्योंके-त्यों ३० नवम्बरको गोलमेज परिषद्की आम बैठकमें दिये गांधीजी के भाषणसे ही लिये गये हैं।

२. महादेव देसाईके लेख "जीसस आई लव" (ईसा मसीह जिसे मैं प्यार करता हूँ) से उद्धृत। यह सवाल पेरिसमें पूछा गया था।

२५०. भाषण : स्वागत-समारोहमें[1]

पेरिस
५ दिसम्बर, १९३१

गोलमेज परिषद्मे शामिल होनेका मुझे कोई दु ख नही है। अगर मै भारतकी माँगमे तनिक भी कमी करनेको तैयार हुआ होता तो मुझे वहाँ जानेपर दु ख-लज्जा का अनुभव होना चाहिए था। मै ईश्वरका बडा आभारी हूँ कि उसने मुझे सही मौकेपर सही बात कहनेकी शक्ति दी और मैने वहाँ जो-कुछ भी कहा या किया, उसके लिए मै तनिक भी शर्मिन्दा नही हूँ। अब मै पहलेसे कुछ अधिक शक्ति और समझ लेकर स्वदेश लौट रहा हूँ। कारण, अब मै जानता हूँ कि मुझे कैसे लोगोसे निबटना है। मै जानता हूँ कि अपनी बातको सही सिद्ध कर दिखानेके लिए हमे और भी कष्ट सहने होगे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

२५१. भाषण : सार्वजनिक सभामे[2]

पेरिस
५ दिसम्बर, १९३१

हमने एक लडाई शुरू की थी और बीचमे ही वार्त्ताके लिए एक विराम-सन्धिपर हस्ताक्षर किये थे, लेकिन वार्त्ता सफल नही हुई। लेकिन अभी कुछ बिगडा नही है, क्योकि मैने उन लोगोके चरित्र तथा युद्ध-कलाको समझ लिया है जिनके खिलाफ हमे लडना है, और इसलिए भविष्यमे हम गलतियाँ नही करेगे। लडाइयोमे कभी-कभी दुर्भाग्यकी चपेटमे आ जाना साधारण बात है, इसलिए हमे अपनी लडाई और अधिक उत्साह तथा सकल्पके साथ जारी रखनी चाहिए और स्वदेशकी स्वाधीनताके लिए कष्ट सहने चाहिए। आप लोगोसे — पेरिस तथा यूरोपके अन्य स्थानोमे रहने-वाले आप लोगोसे — मेरा अनुरोध यह है कि आप दुनियाके सामने सदा, भारत

१. महादेव देसाईके "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) से उद्धृत। स्वागत-समारोहका आयोजन पेरिसमें रहनेवाले भारतीयोने किया था। देसाईके अनुसार, यह भाषण हिन्दीमें दिया गया था।

२. स्थानीय बुद्धिजीवियों द्वारा दोपहर बाद आयोजित इस सभामें लगभग २,००० लोग एकत्रित थे। प्रवेश टिकटपर दिया जाता था। भाषणका पूरा पाठ उपलब्ध नहीं है। नीचे जो-कुछ दिया जा रहा है वह श्रोतृ-समूहमें उपस्थित भारतीयोको सम्बोधित करके कहा गया था। सभाके अन्तमें गांधीजी से पूछे गये अधिकांश प्रश्न फ्रांसीसियोने ही पूछे थे।

तथा भारतके उद्देश्यके लिए जो-कुछ उत्तम है, उसे रखनेकी कोशिश करे। आप बराबर दुनियाका ध्यान भारतके सघर्षके असली स्वरूपकी ओर आकर्षित करनेका प्रयास करे। अभी मै आपको नही बता सकता कि वहाँ हमारे देशके लोगोकी मनोदशा क्या होगी। लेकिन इतना बता सकता हूँ कि जब मै वहाँ पहुँचूँगा, वे फिरसे लडाई शुरू कर देनेको तैयार बैठे होगे। हम अपने देशके लिए जो चाहते है वह यह कि सेना तथा वित्तपर हमारा अपना नियन्त्रण हो और अगर हम कष्ट सहन करने तथा अहिंसापर डटे रहनेके लिए तैयार हो तो निश्चय ही हम इस चीजको प्राप्त कर सकते है। मै अपने देशभाइयोसे एक बार फिर कहूँगा कि आप कष्ट-सहन करके इसे प्राप्त कीजिए। अवज्ञाका मतलब हिंसा नही, बल्कि और कष्ट सहना है।

प्र० : आपके विचारसे भारत निश्चित रूपसे कब स्वतन्त्र हो जायेगा?

उ० मै कोई सर्वज्ञ तो हूँ नही कि इस प्रश्नका उत्तर दे सकूँ या कोई भविष्यवाणी कर सकूँ। भविष्यको तो केवल ईश्वर ही जानता है।

प्र० : अगर भारतको एकाएक स्वतन्त्र कर दिया जाये तो वहाँके अधिकांश लोगोके अज्ञानको देखते हुए क्या ऐसा नहीं लगता कि वे मुट्ठी-भर बुद्धिजीवियोकी दयापर निर्भर हो जायेंगे?

उ०. शायद, लेकिन केवल ऊँची-ऊँची बाते करके लोगोको बहकानेवाले पश्चिमी दुनियाके-जैसे नेताओकी सत्ताके अधीन रहनेसे तो यह बात हर हालतमें बेहतर ही होगी कि कुछ समयतक वे बुद्धिजीवियोके एक दलके नेतृत्वमे रहे।

प्र० : क्या आप लंकाशायरकी कठिनाईको दूर करने के लिए कुछ नहीं करेंगे?

उ० : बेशक, मै अपनी ओरसे पूरी कोशिश करूँगा।

प्र० : भारतके स्वतन्त्र हो जानेपर क्या आप आर्थिक प्रतिबन्ध भी लागू करेंगे? क्या आप फ्रांसके साथ भारतका व्यापार होने देंगे?

उ० नही, मै व्यापारिक आदान-प्रदानका विरोध नही करूँगा। लेकिन मै आपको यह बता दूँ कि स्वतन्त्र होनेपर भारत किसी अन्य देशके बजाय पहले इग्लैडको व्यापारिक सुविधाएँ देगा। फिर भी, फ्रासके साथ ऐसे सम्बन्ध रखनेमे उसकी काफी रुचि होगी।

प्र० : मनुष्यका आनन्द उसके ज्ञानमें बसता है या अज्ञानमें?

उ० : दोनोमे से किसीमे नही। उसका निवास खुद मनुष्यके अन्दर और मनुष्य द्वारा पूर्णत तथा सत्यको प्राप्त करनेके प्रयत्नमे है।

प्र० : क्या हर आदमीमें पूर्णताको प्राप्त करनेकी सामर्थ्य है?

उ० : हाँ, पूर्णता तो उनके अन्दर ही है।

प्र० : क्या आप श्री मैकडॉनाल्डकी घोषणासे सन्तुष्ट है?

उ० मुझे कहना चाहिए कि यद्यपि मै सन्तुष्ट नही हूँ, फिर भी इस तथ्यके बावजूद कि मै लोगोको खाली हाथ लौटते दीख सकता हूँ, मेरे मनमें आशा बहुत अधिक है।

प्र० : कुछ वर्ष पहले मैंने आपको यूरोपीय पोशाक पहने देखा था। अब आपने उसका त्याग क्यों कर दिया है?

उ० : मै गरीब आदमी हूँ, और हजारो भारतीयोकी तरह मै यूरोपीय पोशाक नही पहनता। इसका पहला कारण तो यह है कि वह महँगी है और दूसरा यह कि मेरे देशकी जलवायुके लिए वह सर्वथा अनुपयुक्त है। अन्तिम बात यह कि भारतीय कपड़े पहननेसे हमारे भारतीय श्रमिकोको काम मिलता है।

प्र० : मान लीजिए, यूरोपमें युद्धकी-सी स्थिति उत्पन्न हो जाती है और उसके लिए तैयारियाँ होने लगती हैं। उस हालतमें क्या सैनिकों और जनताके असहयोगसे युद्धको टाला जा सकता है?

उ० . हर युद्धमे असहयोग सम्भव है और इसीके द्वारा दुनियामे अखण्ड शान्ति की स्थापना हो सकती है। तब स्त्रियोको, जिन्हे आम तौरपर पुरुषोसे कमजोर समझा जाता है, असहयोग तथा अहिंसाको समर्थन-सहायता देकर अपनी शक्तिका परिचय देनेका अवसर मिलेगा।

प्र० : कोई किसीको मार रहा हो तो उससे दो-दो हाथ किये बिना मर जाना क्या उचित होगा?

उ० : दोनो ही हालतोमे सवाल तो अपने प्राणोकी वलि देनेका ही होगा। और जिसने अपने प्राणोकी वलि देनेका निश्चय कर लिया हो, उसके लिए अपने-आपको 'बाहरी' हथियारोसे लैस करने और खुद मरनेके अलावा दूसरेको भी मारनेसे तो यह बेहतर ही होगा कि वह अहिंसा-धर्मका पालन करते हुए अपना हाथ न उठाये। इस तरहकी आकस्मिक परिस्थिति आनेपर हमे अपने-आपको आन्तरिक शस्त्रसे सज्जित करना चाहिए, क्योकि आन्तरिक और आध्यात्मिक शक्तियाँ अधिक प्रवल हैं और ये अधिक सुनिश्चित तथा स्थायी जीवन देनेवाली हैं। आप अपने-आपको शस्त्र-सज्जित करके दुनियामे शान्तिकी स्थापना नही कर सकते। वाहरी हथियारोसे — तोपो, वन्दूको और गैससे — वुरे और अस्थायी परिणाम ही निकल सकते है। हम अपने हथियार तभी रखते है जब कुछ कालका विराम आवश्यक हो जाता है और जव अपने हथियार उतारकर रखते हैं तब भी हमारे मनमे आगे चलकर फिरसे उन्हे उठा लेनेका ही विचार रहता है। जव हजारो लोग केवल अहिंसाको ही अपना हथियार वना लेगे तब वे अपने-आपको उन वौद्धिक तथा आध्यात्मिक शक्तियोसे सज्जित कर लेगे जो दिन-रात सक्रिय रहती हैं। इस प्रकार वे इस लक्ष्यको प्राप्त करेगे और अपने प्रति अंग्रेजोकी सहानुभूति जगानेमे सफल होगे।

प्र० : यदि भारत स्वतन्त्र हो जायेगा तो सोवियत रूसके प्रति उसका क्या रवैया होगा?

उ० : मै अपने देशकी समस्याओमे ही इतना व्यस्त हूँ कि मुझे स्वीकार करना चाहिए, मै एक प्रकारसे रूसी लोगोकी समस्याओसे अनभिज्ञ हूँ। फिर भी, मै इतना कह सकता हूँ कि भारत स्वतन्त्र होनेपर, रूसमे जो अच्छाई है, उसका अनुकरण

बखूबी कर सकता है। अगर रूसमे कुछ और आध्यात्मिकता आ जाये तो वह हर तरहसे निर्दोष और अच्छा बन जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-१२-१९३१

२५२. प्रश्नोत्तर[1]

[५ दिसम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्][2]

हम भारतमे जिस तरीकेसे काम ले रहे है, उसमे झूठ-फरेब, धोखेबाजी तथा हिंसा और असत्यसे जुडी अन्य किसी भी कुप्रवृत्तिके लिए कोई गुंजाइश नही है। हर काम खुले आम और साफ-साफ ढगसे किया जाता है, क्योकि सत्यको गोपनीयता सह्य नही है। आपका व्यवहार जितना अधिक खुला होगा, आपके उतने ही अधिक सत्यनिष्ठ बननेकी सम्भावना रहेगी। जिसने सत्य और अहिंसाको अपने जीवनका आधार बना लिया है, उसके शब्दकोषमें पराजय या निराशा नामका कोई शब्द नही है। लेकिन फिर भी अहिंसाका तरीका किसी भी तरहसे निश्चेष्टता या निष्क्रियताका तरीका नही है। यह तत्त्वत· एक सक्रिय आन्दोलन है, जिस आन्दोलनमे हमे हिंसक शस्त्रास्त्रोसे काम लेना पडता है, उससे भी बहुत अधिक सक्रिय। सत्य और अहिंसा शायद दुनियाकी सबसे अधिक सक्रिय शक्तियाँ है। जिसके हाथमें हिंसक शस्त्रास्त्र होते है और जो उन लोगोको जिन्हे वह अपना शत्रु मानता है, नष्ट करनेको कटिबद्ध रहता है, उसे चौबीस घटेमे कमसे-कम थोडे-से विश्रामकी आवश्यकता तो होती ही है और इसलिए उतने समयतक उसे अपने शस्त्रास्त्र भी छोड देने पडते है। इसलिए हर दिन कुछ समयके लिए वह बिलकुल निष्क्रिय रहता है। लेकिन सत्य तथा अहिंसाके मार्गपर चलनेवाले को ऐसा नही करना पडता, जिसका सीधा-सादा कारण यह है कि ये कोई बाहरी हथियार नही है। ये मनुष्यके हृदयमें सतत विद्यमान रहते है और चाहे आप सोते हो या जागते, आरामसे घूम रहे हो या शारीरिक श्रमवाला कोई खेल, खेल रहे हो, ये सक्रियरूपसे अपना काम करते रहते है, प्रभाव डालते रहते है। सत्य और अहिंसाका सर्वांग-कवचधारी योद्धा सदैव सक्रिय रहता है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

१. महादेव देसाईके "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) से उद्धृत। पेरिस तथा लासेनमें हुई सभाओं में पूछे गये प्रश्नों के गांधीजी ने जो उत्तर दिये थे उन्हें महादेव देसाईने सार-रूपमें प्रस्तुत किया है। इनमें से अधिकाश प्रश्नोत्तर अगले शीर्षकमें आ जाते है। लेकिन यह अन्यत्र कहीं भी उपलब्ध नही है।

२. पेरिसमें सभाका आयोजन ५ दिसम्बरको किया गया था और लासेनमें ८ दिसम्बरको।

२५३. बातचीत : रोमाँ रोलाँसे[1]

विलेन्यूव
६ दिसम्बर, १९३१

गांधीजी : मुझे स्कार्पेलकी[2] बातको शब्दश लेना होगा। और मै उनकी उपस्थितिमे लोगोसे ठीक वही सब कहना चाहूँगा जो मुझे बिना किसी छिपावके साफ-साफ कह देना चाहिए।

रोमाँ रोलाँ : तब तो आपको अपने साथ अमेरिकी रिपोर्टर ले जाने चाहिए।

गांधीजी . पहलेसे ही इस तरहका प्रबन्ध कर रखना मेरे स्वभावके प्रतिकूल होगा।

रोमाँ रोलाँ : वे तो आपको ऐसे लोगोंसे — अमेरिकियों और अंग्रेजोंसे — घेर लेंगे जो फासिस्ट है। आपकी आवाजको उस घेरेको तोड़कर इटलीकी जनतातक पहुँचाना चाहिए।

गांधीजी मैं यह शर्त भी रखूँगा कि मै उनसे ऐसे विषयोके सम्बन्धमे कोई बात नही करूँगा जिनके विषयमे मुझे तटस्थ होना चाहिए। वहाँ जानेकी मेरी कोई इच्छा नही थी, फिर भी जानेका मौका आ गया है। हम यह मानकर चले कि इटलीके अखबारोमे मेरे प्रत्येक शब्दको तोड-मरोडकर पेश किया जायेगा। जिस इंग्लैडमे सबको अपने विचार व्यक्त करनेकी पूरी स्वतन्त्रता है, वहाँ भी मेरी बातोको तोड-मरोडकर पेश किया गया और मेरे सन्देशका बहिष्कार किया गया। फ्रासमे भी 'फिगारो'मे बहुत बेतुकी बाते लिखी गई है।

रोमाँ रोलाँ : एक और भी कठिनाई है। आप तो बोलेंगे, लेकिन जब दूसरे लोग आपके खिलाफ बोलेंगे तो आप उसे समझ नहीं पायेंगे।

गांधीजी · मै तो अपना कर्त्तव्य करूँगा और परिणामको भगवान्‌के भरोसे छोड दूँगा।

रोमाँ रोलाँ : आपका एक कर्त्तव्य यह है कि आप गरीबोंसे अपनी बात कहे।

गांधीजी : मैं समझता हूँ कि इतनी अधिक सावधानी बरतना तो किसीके लिए भी असम्भव है।

रोमाँ रोलाँ : आपके साथ किसी-न-किसीको हमेशा होना चाहिए।

गांधीजी · इसका तात्कालिक परिणाम तो यह होगा कि इटलीके अखबार उसके बारेमे गलत बाते प्रचारित करेगे, लेकिन अगर कोई अच्छा शब्द कहा जाता है या अच्छा कार्य किया जाता है तो अन्तत. उसका परिणाम अच्छा ही होना चाहिए।

१. गांधीजी की विलेन्यूव यात्राके विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट २।

२. गांधीजी को इटली जाकर पोप तथा मुसोलिनीसे मिलनेकी सलाह दी गई थी।

अगर हमे इस वातका विश्वास हो कि मै प्रलोभनोंके जालमे नही फँसूँगा तो हमें यह खतरा उठाना चाहिए।

रोमाँ रोलाँ : वहाँ आप बुद्धिजीवियोंसे — बुद्धिजीवियोंके मुखौटे लगाये लोगों से — मिलेंगे, लेकिन फॉरमिशी, जेंटाइल-जैसे लोगोंसे नहीं मिल पायेंगे।

गाधीजी : मैंने देखा कि इस वातको लेकर आप कितने चिन्तित रहे है और मैंने यह भी महसूस किया कि कितना अविक श्रम करके आपने इस परिस्थितिके सम्वन्धमे अपने निष्कर्ष निकाले है। दूसरी ओर मेरी मनोरचना कुछ और ढगकी है। मै जिन निष्कर्षोपर भी पहुँचा हूँ, उनपर ऐतिहासिक अध्ययनके जरिये नही पहुँचा हूँ। मेरी मनोरचनामे इतिहासकी भूमिका वहुत कम है। मेरा निन्दक यही कहेगा कि मेरा तरीका प्रयोग और अनुभवका तरीका रहा है और मेरे सारे निष्कर्ष मेरे तथाकथित अनुभवपर आधारित है। अपने अनुभवको मै तथाकथित इसलिए कहता हूँ कि उसके सम्वन्धमे आत्मप्रवचनाका भी खतरा है। मै ऐसे कई सिरफिरो को जानता हूँ जो कुछ चीजोमे इस तरह विश्वास करते है, मानो ये उसके अपने अनुभव हो। उदाहरणके लिए, यदि अपनी पत्नी तथा अपने बच्चोंके सम्वन्धमे उसके कुछ विश्वास है और यदि वह उन्हे अपना अनुभव कहता है तो उसे उनसे डिगा पाना असम्भव होता है। अव, हो सकता है उसके तथा मेरे अनुभवोंके वीच वहुत कम अन्तर हो फिर भी मेरे अनुभवके पूर्वोदाहरण अवश्य है सतोंने अपने अनुभवोंके आधारपर अपनी-अपनी विचार-प्रणालियाँ खडी की है और आखिर-कार अव तो दुनिया यह मानती ही है कि उन्होंने अपने जो अनुभव लिखे, वे सही थे और यह भी कि ऐतिहासिक तथा विश्लेषणात्मक पद्धतियोसे भी उनकी कसौटी की जा चुकी है। मेरा अनुभव सर्वथा निराधार नही रहा है और अहिंसा तथा असहयोग के सम्वन्धमे मेरा सम्पूर्ण अनुभव ऐसी ही नीवपर खडा है, और इसलिए कलके गम्भीर प्रवचनको सुनते हुए मैंने मनमें सोचा कि "इसपर मेरी क्या प्रतिक्रिया हो सकती है?" मेरा उत्तर यह था: "मुझे कहना चाहिए कि मेरा विश्वास ऐसा है और मुझे उसीके अनुरूप काम करना चाहिए।" समस्या वहुत कठिन थी। जहाँ अहिंसा भारतमे सफल हो सकती है, यूरोपमे नही भी हो सकती। लेकिन इससे मुझे कोई परेशानी नही होती। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि मै समझता हूँ, मुझे यूरोपको अहिंसाका सन्देश समझा सकना चाहिए। हाँ, यह वात जरूर है कि यह सन्देश शायद वह भारतके माध्यमसे धीरे-धीरे ग्रहण करे। हो सकता है, मै उन्हे यह सन्देश कभी भी न समझा पाऊँ, लेकिन सम्भव है, ईश्वरको मुझसे और भी वहुत-से काम करवाने हो। मै प्रवुद्ध अग्रेजो तथा अन्य देशोके निवासियोसे मिला हूँ और मैंने उनसे यही कहा है कि जवतक आपमे ऐसी प्रवल आस्था न हो कि सारी दुनियाको अपने खिलाफ खडा देखकर भी आपका विश्वास न डिगे तवतक आप आगे कदम न वढाये। अगर आपमे ऐसी आस्था होगी तो प्रसग आनेपर कठिनाइयोसे निकलनेका रास्ता आपको स्वत सूझेगा। इसलिए मेरा यह दृढ विश्वास है कि यूरोपकी रक्षा केवल अहिंसा ही कर सकती है। अन्यथा मुझे सिर्फ विनाश-ही-विनाश दिखाई देता

है। मैं अपने सामने विघटनकी प्रक्रिया चलते देख रहा हूँ। रूसमें जो-कुछ हो रहा है, वह सम्भव है पहेली-जैसा लगता हो। रूसके बारेमें मैं बहुत कम बोला हूँ। लेकिन मेरे अन्तर्मनमें, रूसमें जो-कुछ हो रहा है, उसके प्रति गहरा अविश्वास भरा हुआ है। यह अहिंसाको एक बहुत बड़ी चुनौती जान पड़ती है। इस समय तो वह ठीक काम करता दिखाई देता है, लेकिन उसका आधार भौतिक शक्ति है। कह नहीं सकता कि वह शक्ति उस समाज, उस देशको इस तंग रास्तेपर कबतक रख पायेगी। जो भारतीय रूसी पद्धतिके प्रभावमें हैं, वे बहुत उग्र ढंगकी सहिष्णुताका परिचय दे रहे हैं। परिणाम यह है कि उसके प्रभावमें रहनेवाले लोग आतंकवादी बने हुए हैं। इसलिए रूसके प्रयोगको मैं मूलतः अविश्वासकी दृष्टिसे देखता हूँ। मैंने रूस हो आनेवाले प्रत्येक अंग्रेज तथा अमेरिकीसे जिरह करके देखी है। वे मुझे निष्पक्ष प्रेक्षक-जैसे लगे। अभी कुछ ही दिन पहले लॉर्ड लोथियन और बर्नार्ड शॉ रूस गये थे। लोथियन तो साफ कहते हैं कि वे नहीं जानते कि जोर-जबरदस्ती समाज-को कहाँतक सुधार सकेगी। बर्नार्ड शॉने लिखा तो बहुत उत्साहपूर्वक है, लेकिन उनके साथ हुई बातचीतमें मैंने वह उत्साह नहीं देखा और वास्तवमें इस विषयपर मैं उनसे साफ-साफ और पूरी बात नहीं कहला पाया। इसके विपरीत, भारतीय मामलोंमें उनकी ज्यादा रुचि दिखी। मुझे लगता है कि यूरोपके लिए भी अहिंसा आवश्यक है। अहिंसाके लिए किसी बड़े संगठनकी आवश्यकता नहीं है। चाहे जिस प्रकार हो, यह अपना संगठन आप ही कर लेती है। बस, ऊपर कोई ऐसा व्यक्ति हो जो सच्चा अहिंसावादी हो, जिसमें पर्वतके समान अडिग आस्थाका बल हो। जबतक ऐसा आदमी सामने नहीं आता, हमें ईश्वरसे प्रार्थना करते हुए प्रतीक्षा करते रहना है।

रोमाँ रोलाँ : मैंने आपको रुन्हम ब्राउनको लिखे पत्र भेजे थे। अप्रतिरोधकी नीति तो सुदूर भविष्यमें ही सफल हो पायेगी। लेकिन, यहाँ समस्या तत्काल समा-धानकी अपेक्षा रखती है। बीस वर्षोंमें तो शायद यूरोपीय सभ्यता नष्ट ही हो जाये। बीस वर्षोंमें सब-कुछ तय हो जायेगा। इस बीच हम क्या करें?

गांधीजी : मैंने कुछ इस तरहकी बात कही है। वास्तवमें संसार मूर्ति-पूजक है — मूर्तका, प्रत्यक्षका पुजारी है। इस्लाम भी उसीका पुजारी है और प्रोटेस्टेंट ईसाई सम्प्रदाय भी। वह अपनी पाँचों इन्द्रियोंमें से किसी एकके माध्यमसे कुछ देखना चाहता है। इसीको मैं मूर्ति-पूजा कहता हूँ। वह कोई प्रत्यक्ष प्रमाण चाहता है। अगर भारत अहिंसाकी शक्तिका प्रत्यक्ष प्रमाण दे सका तो बात आसान हो जायेगी। मेरा निश्चित विश्वास है कि भारतको इसमें २० वर्ष नहीं लगेंगे, और अगर भारतने अहिंसाके बलपर सच्ची स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली तो दुनिया अहिंसाकी शक्तिको जान जायेगी और तब सारी दुनिया उसे अपना लेगी। मैं विश्व-जनमत इसलिए तैयार करना चाहता हूँ कि इंग्लैंडको गलत काम करनेपर लज्जाका अनुभव हो। लेकिन ऐसा जनमत तैयार होगा या नहीं, दूसरे लोग इस लड़ाईमें शामिल होंगे या नहीं होंगे, यह मैं नहीं कह सकता। लेकिन इतना मैं निश्चित तौरपर जानता हूँ कि

अहिंसाका परिणाम अच्छा ही होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इंग्लैंडके विचारोंमें क्रान्तिकारी परिवर्त्तन हुआ है, हालाँकि इतना परिवर्त्तन पर्याप्त नहीं है। इसका श्रेय मैं अहिंसाको ही देता हूँ। कुछ प्रतिभाशाली अंग्रेज —[उदाहरणके लिए] गिलबर्ट मरे — इससे सहमत नहीं हैं और इस बातको स्वीकार नहीं करते। मैं चाहता भी नहीं कि वे सहमत हों और इस बातको स्वीकार करें। जो बात है वह तो है ही और कोई भी उसे देख सकता है। अहिंसक लड़ाईके परिणामस्वरूप ही तथाकथित गोलमेज परिषद् आयोजित की जा सकी। इसलिए मुझे आशा है कि . . .[1] शेष कठिनाइयोंपर पार पानेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। जो अन्तर है, उसे मैं जानता हूँ, लेकिन उसके कारण मैं अपना विश्वास नहीं छोड़ सकता। मुझे तो उन चन्द आत्मत्यागी लोगोंके बलपर ही आगे बढ़ना है जिन्होंने इसके लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर दिये हैं। मेरे साथ यही बात दक्षिण आफ्रिकामें हुई। यही भारतमें भी हुई, जहाँ मुझे यह नहीं मालूम था कि मैं ठोस लड़ाई लड़ भी सकूँगा या नहीं। हम वह लड़ाई लड़ सकेंगे। इससे आगे मैं कुछ नहीं कह सकता। आप अगर भारतीय परिस्थितिको ठीक ढंगसे निपटा सकें तो यूरोपकी परिस्थिति भी सुधर जायेगी, बल्कि उस दशामें उसका सुधरना अनिवार्य हो जायेगा।

रोमाँ रोलाँ : कुछ मामलोंमें अप्रतिरोधकी नीतिका प्रयोग किया गया है। लेकिन हमारी कठिनाइयाँ दोहरी-तिहरी हैं। भारतीयोंके साथ दुर्व्यवहार किया गया है, लेकिन मैं नहीं समझता कि वैसा दुर्व्यवहार किया गया है जैसा कि इटलीकी जनताके साथ किया जा रहा है। बच्चोंतक से श्रम कराया जाता है, इस तरह लोगोंका शोषण किया जाता है। उन बेचारोंको देनेके लिए कोई सन्देश होना ही चाहिए।

रूसके बारेमें आपको जानना होगा कि वहाँ क्या परिस्थितियाँ हैं। रूसमें अहिंसा क्या कर सकती है? क्या हमें उनसे यूरोपके प्रति अहिंसा बरतनेको कहनेका अधिकार है? क्या हमें उनको यूरोपके सामने झुकनेको मजबूर करना चाहिए?

गांधीजी : जहाँतक यूरोपके श्रमिकोंका सवाल है, मालिकों और मजदूरोंके आपसी सम्बन्ध काफी अच्छे हैं। लेकिन मैंने यह कहा कि उपाय यह नहीं है कि मजदूर पूँजीपतियोंके खिलाफ संघर्ष करें, बल्कि यह है कि वे अपने-आपसे जूझें। तब वे आप ही अपने रोजगार-दाता बन जायेंगे। वे अपने श्रमका उपयोग करनेके लिए पूँजीका मुँह ताकते हैं। अगर पूँजीपति उन्हें अपनी सारी पूँजी दे दें, तब भी वे सुखी नहीं हो पायेंगे और वे पूरे एक सालतक भी उसका उपयोग नहीं कर सकेंगे। इसलिए मैंने उनसे कहा : "आप अपने गृह-उद्योगोंका पुनरुद्धार करें।" वेल्समें लोग इस तरीकेको अपना रहे हैं। स्वस्थ, साहसी और उद्यमी प्रवृत्तिवाले लोगोंमें से अधिकांश बेरोजगार रहें, यह कैसी विडम्बना है। और तेल-कूपोंकी संख्यामें वृद्धि होनेके साथ-साथ यह बेरोजगारी बढ़ती ही जायेगी। उनमें से किसीको भी दान-पर नहीं जीना चाहिए।

१. साधन-सूत्रमें आगेके कुछ शब्द स्पष्ट नहीं हैं।

रोमाँ रोलाँ : यूरोपको खतरा उस विशाल मध्यम वर्गसे है जो दूसरोंको चूसकर खुद एशोआरामकी जिन्दगी बिताता है। युद्धके बाद फ्रांससे कहा गया कि जर्मनी उसे हर्जाना देगा। फ्रांसमें एक एशियाई सेना खड़ी करने, रोम साम्राज्यके दिनोंको पुनः वापस लानेकी तैयारी हो रही है।

भारत सही रास्तेपर है — आप मनुष्य-जातिके हित-साधनके लिए काम कर रहे हैं। फ्रांसमें अभी गरीबी नहीं आई है, हालाँकि जर्मनीमें आ गई है। हमारा कर्त्तव्य शोषितोंका साथ देना है।

गाधीजी · लेकिन क्या यहाँ भी इलाज खुद शोषितोके ही हाथोमें नही है? अगर वे शोषकोके साथ सहयोग करना बन्द कर दे तो उन्हे अवश्य ही मुक्ति मिल जायेगी।

जिनमे गहरी धार्मिक भावना नही है, वे मोटी-मोटी तनख्वाहो और भौतिक सुख-सुविधाओके प्रलोभनमे फँस जाते है। दुनियाका सबसे बडा उद्योग, रसायन-उद्योग है और उसका उद्देश्य है हिंसा। लोगोको गरीबी और आत्म-त्यागका सन्देश दिये विना काम नही चल सकता।

[अग्रेजीमे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य : नारायण देसाई

२५४. भेट : पत्रकारोंको

विलेन्यूव
६ दिसम्बर, १९३१

प्रश्नोके उत्तर देते हुए उन्होंने [गांधीजी ने] कहा कि मै लन्दनसे प्रस्थान करनेसे पूर्व जितना कह चुका हूँ, उससे आगे मुझे कुछ नहीं कहना है। उन्होंने जिनेवाके एक अखबारमें छपी लन्दनकी इस खबरको बिलकुल गलत बताया कि अगर भारतीयों की इच्छा पूरी नहीं की गई तो वे हिंसात्मक तरीके अपनायेंगे। उन्होंने कहा कि इस चीजको रोकनेके लिए खुद मैं तो अपने प्राणोको आहुति दे देनेको तैयार हूँ।

जब उनसे कॉमन्स सभामें रैम्जे मैकडॉनाल्ड द्वारा दिये वक्तव्यके बारेमें सवाल पूछा गया तो उन्होने कहा कि कांग्रेसके विचार जाननेके बाद ही मैं उस वक्तव्यपर कोई राय जाहिर करूँगा। भारतके लोगोंको उनका सन्देश यह था कि उन्हे जल्दबाजीमें किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँचना चाहिए, बल्कि जनताके सामने जबतक इस विषयपर मैं वक्तव्य न दूँ तबतक प्रतीक्षा करनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

अमृतबाजार पत्रिका, ८-१२-१९३१

२५५. लॉर्ड इर्विनको लिखे पत्रका अंश

[विलेन्यूव
६ दिसम्बर, १९३१के पश्चात्][1]

अगर भारतमे स्थिति इतनी नही विगड जाती कि लडाई करना जरूरी हो जाये तो शायद सहयोग करना अब भी जारी रखा जा सकता है। जो भी हो, मै आपको यह आश्वासन दे सकता हूँ कि वाइसराय महोदयसे वातचीत किये विना मै जल्दवाजीमे कुछ नही करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हैलिफैक्स, पृष्ठ ३१७

२५६. पत्र : सर सैम्युअल होरको

विलेन्यूव
७ दिसम्बर, १९३१

प्रिय सर सैम्युअल,

हमारे वीच अभी अन्तमे जो वातचीत हुई थी, उसका सार मै यहाँ लिखित रूपमे दे रहा हूँ। आपने यह कहनेकी कृपा की थी कि न तो प्रधान मन्त्रीकी घोषणा और न कॉमन्स सभामें दिया आपका भाषण सुरक्षात्मक पूर्वोपायो तथा आरक्षित किये जानेवाले विषयोके सम्वन्धमे अन्तिम निर्णयका सूचक है, और प्रस्तावित कार्यसमितिके हर सदस्यको उनमे से किसी भी वातमे सशोधन सुझाने अथवा उसके रद्द किये जानेका सुझाव देनेका अधिकार होगा और साथ ही राष्ट्रीय सरकारको जिन आर्थिक सौदोका दायित्व लेना होगा उनकी महत्त्वपूर्ण जाँचपर भी वे आग्रह कर सकते हैं। आपने यह भी कहा था कि 'आप कार्यसमितिके विचारार्थ जो मुद्दे भेजेंगे वे महज औपचारिकताके निर्वाहके लिए नही भेजे जायेंगे, वल्कि कार्यसमितिकी सिफारिशोको महामहिमकी सरकार अधिकसे-अधिक महत्त्व देगी। मेरे मनपर बातचीतकी यह जो छाप पडी है, वह अगर सही हो तो मै चाहूँगा कि आपको विशेष असुविधा न हो तो हवाई डाकसे पत्र भेजकर इसकी पुष्टि कर दें। भारतमे मेरा पता अहमदाबाद होगा।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-२-१९३२

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्र विलेन्यूव से लिखा गया था और वहाँ गाधीजी ६ दिसम्बरको पहुँचे थे।

२५७. पत्र : सर सैम्युअल होरको

मार्फत – मोशिए रोमाँ रोलाँ, विलेन्यूव
७ दिसम्बर, १९३१

प्रिय सर सैम्युअल,

मैंने आपसे कहा था कि मैं, सरकारने मेरे लिए पुलिसकी जो व्यवस्था की थी, उसके बारेमें लिखना चाहता हूँ। लिखनेका समय आज मिल पाया है। यो तो इस कामपर जिन गुप्तचरो और सिपाहियोको लगाया गया था, उन सबने अपना कर्त्तव्य निभाते हुए मेरा बड़ा खयाल रखा और शिष्टतापूर्ण व्यवहार किया, लेकिन प्रतिदिन मेरे सम्पर्कमे आनेवाले सार्जन्ट इवान्स और सार्जन्ट रॉजर्स तो मानो मेरे परिवारके सदस्य ही बन गये थे। वे भ्रातृवत् स्नेह और सावधानीसे मेरी देख-रेख करते थे। मेरे अनुरोधपर आपने उन्हे ब्रिंडिसीतक भेजनेका सौजन्य दिखाया। वे इन विदेशी इलाकोमे भी असाधारण रूपसे उपयोगी साबित हो रहे हैं। उनकी कुशल-क्षेम जानना मेरे लिए सदा हर्षका विषय होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८५) से, सौजन्य : इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२५८. प्रश्नोत्तर[1]

लोजान
८ दिसम्बर, १९३१

प्र० : शान्तिके पक्षमें काम करनेके लिए प्राच्य तथा पाश्चात्य संसारको साथ कैसे लाया जा सकता है?

उ० यह सवाल मुझसे कोई ५ वर्ष पहले पूछा गया था। तब मैंने यह उत्तर दिया था. मैं तो एक पराधीन राष्ट्रका निवासी हूँ और इसलिए मैं नही जानता कि अपने राष्ट्रकी स्वाधीनताके लिए काम करनेके अलावा और किस तरह मैं शान्ति-स्थापनामे सहायता दे सकता हूँ। अगर भारतको शान्तिपूर्ण उपायोसे स्वाधीनता प्राप्त

१. यद्यपि साधन-सूत्रमें यह नही बताया गया है कि ये सवाल किस अवसरपर पूछे गये, लेकिन अनुमानत ये, लोजानमें गाधीजी जिस पहली सभामें बोले, उसीमें पूछे गये थे।

करनेमे सहायता दी जा सके तो शान्तिके पक्षमें राष्ट्रोके सहयोगका यह एक बहुत अच्छा उदाहरण होगा। मैंने यह बात अपने देशको सर्वथा अहिंसक तथा सत्यमय उपायोसे स्वतन्त्र करनेका प्रयत्न करनेके बाद कही है।

प्र० : तो क्या हम यह मानें कि उधर जबकि भारतमें अहिंसाका प्रयोग किया जा रहा है, यहाँ भी राजनीतिक उद्देश्योके लिए अहिंसाके प्रयोगके लिए आन्दोलन चलाना चाहिए?

उ० : अगर आपको यह विश्वास हो गया हो कि भारतमें अपनाये गये साधन दिन-प्रतिदिन वाछित परिणाम प्रकट कर रहे है, और अगर आप इस बातके कायल हो कि भारत यह काम आध्यात्मिक साधनोके बलपर कर रहा है, तो आप यहाँ भी वैसा ही कीजिए हालाँकि यूरोप [की परिस्थितियो] में अधिक अन्तर है।

मित्रोने मुझे बताया है कि यूरोपमे अहिंसात्मक उपाय अपनानेके मार्गमें कुछ विशिष्ट कठिनाइयाँ हैं। यूरोपमें बसनेवाली जातियाँ, भारतके विपरीत, लडाकू जातियाँ है। यहाँ सभी हथियारोका इस्तेमाल करना जानते हैं। सभी पुरुषोने एक-न-एक समयमे हथियार चलाये है। सो आपके लिए प्रतिशोधमे हाथ न उठानेकी कार्यसाधन-क्षमता और खूबसूरतीको समझना कठिन है। यहाँ मुझसे सर्वत्र यही पूछा जाता है कि गलत काम करनेवाले को सजा क्यों न दी जाये और सो भी ऐसी सजा जो दूसरोको एक सबक दे सके। इस प्रकार अहिंसा यूरोपके लिए बिलकुल अजूबा चीज है। ऐसे देशके लोगोके लिए कोई नया रास्ता अख्तियार करना कठिन है। आपके आर्थिक जीवनका गठन ऐसा है कि मोटे तौरपर किसी साधारण आदमीके लिए यह सम्भव ही नही है कि वह इस पिटे-पिटाये रास्तेसे निकल सके। अगर वह ऐसा करेगा तो उसको गरीबीका सामना करना पडेगा। चौथी कठिनाई यह है कि कैथोलिक मतावलम्वी यूरोपका फौलादी अनुशासन बुद्धिको अपनी इच्छित दिशामे चलनेकी बहुत कम छूट देता है। आपके रास्तेमे ये चार कठिनाइयाँ ऐसी है, जिनका सामना हमें भारतमे नही करना पडता। अगर भारत अहिंसात्मक उपायोसे स्वतन्त्र हो जाता है तो वह कभी भी युद्ध नही करेगा। लेकिन अगर करेगा तो मै आशा करता हूँ कि ईश्वर मुझे ऐसी शक्ति देगा कि मै अकेला भी उसका विरोध कर सकूँ।

प्र० : आइन्स्टीनके इस आह्वानके विषयमें आपका क्या विचार है कि सैनिकोंको युद्धमें भाग लेनेसे इनकार कर देना चाहिए?

उ० : मेरा उत्तर केवल एक ही हो सकता है, अगर यूरोप इस तरीकेको उत्साहपूर्वक अपना सके तो मै यही कहूँगा कि आइन्स्टीनने मेरा तरीका चुरा लिया है। लेकिन अगर आप यह चाहते हो कि मै इस तरीकेको विस्तारसे समझाऊँ तो मै तनिक गहराईमें उतरकर इसकी चर्चा करूँगा। जब किसी व्यक्तिके सैनिक सेवा करनेका अवसर आये, उस समय वैसा करनेसे इनकार करनेका मतलब जब बुराई का विरोध करनेका समय लगभग बीत चुका हो तब उसका विरोध करना होगा। रोग जरा गहरा है। मेरा कहना यह है कि जिनके नाम सैनिक सेवा करनेवालो की सूचीमे शामिल नही है, वे इस अपराधमे उतना ही अधिक हाथ बँटा रहे है। इस-

लिए जो भी स्त्री या पुरुष इस ढगसे गठित राज्यकी सहायता करता है, वह प्रत्यक्ष रूपसे हो या परोक्ष रूपसे, उस पापमे हिस्सा बँटाता है। इसमे खतरा है और वह दूर नही है। यह देखते हुए कि हर आदमी — चाहे वह बूढा हो या नौजवान — राज्य को (करोके रूपमे) अश-दान देकर इस पापमे शामिल होता है, मैंने उसी समय — जब कि मैंने नौसेना द्वारा मुहैया किया गेहूँ खाया था, और जब मै हथियार उठाने के सिवाय सिपाहीके सभी काम कर रहा था — कहा था कि मेरे लिए सबसे अच्छा यही होगा कि मुझे गोलीसे उडा दिया जाये, या फिर मुझे सभ्य ससारको छोडकर जगलोमे चले जाना चाहिए और वहाँ प्रकृति जो दे उसीसे अपना उदर-पोषण करना चाहिए। इसी प्रकार, जो लोग सैनिक सेवा देना बन्द करना चाहते है वे सारा सैनिक सहयोग देना बन्द करके ही वैसा कर सकते है। राज्यको सहारा देनेवाली सम्पूर्ण पद्धतिसे असहयोग करनेकी तुलनामे सैनिक सेवा करनेसे इनकार करना बहुत ही सतही और नकली चीज है। लेकिन जब आपकी सैनिक सेवा करनेकी वारी आती है तो वह इतनी तेजी और इतने प्रभावकारी ढगसे आती है कि इनकार करनेपर न केवल आपको जेल भेज दिये जानेका खतरा रहता है, बल्कि यह भय भी रहता है कि राज्य आपको कहीका न छोडे। टॉल्स्टॉय यही कहते थे।

प्र० : क्या हमें राज्यको किसी भी रूपमें स्वीकार ही नहीं करना चाहिए? क्या हमें स्थानीय स्वशासन (जिसमें लोक-कार्य, स्कूल आदि शामिल हैं)का उपयोग करनेसे भी इनकार कर देना चाहिए?

उ० : अब आपने मानव-स्वभावके मर्मको छू दिया है। असहयोगके स्रष्टाके नाते प्रारम्भिक अवस्थामे मेरे सामने भी यह प्रश्न उपस्थित हुआ था और इस विषयपर कोई निश्चय करनेके पूर्व मैंने मनमे कहा, मै राज्यसे दो तरहसे सहयोग करता हूँ। ऐसा कोई भी राज्य नही है — नीरो या मुसोलिनी द्वारा सचालित राज्य भी नही — जिसमे कुछ-न-कुछ अच्छी बाते न हो। भारतमे एक ग्रैंड ट्रक रोड है। राज्य करोड़ो यात्रियोको सुविधा प्रदान करता है, उसने सुसज्जित अस्पताल और स्कूलोके लिए राजसी इमारते बनवाई है। इन्हे हम अच्छी चीजे मान सकते है। लेकिन मैंने सोचा कि अगर ये तमाम चीजे राष्ट्रको कुचलती है तो मुझे इनसे कोई सरोकार नही रखना चाहिए। वे मणियुक्त विषधर भुजगके समान है। इस प्रकार मै इस निष्कर्षपर पहुँचा कि भारतमे ब्रिटिश हकूमतने राष्ट्रके स्वतन्त्र विकासको अवरुद्ध कर रखा है और इसलिए मैंने हर सुविधाके उपभोगसे इनकार कर दिया। सज्जनताका तरीका उनका उपभोग करनेसे इनकार करना ही था।

आत्मरक्षाकी दलील तो बहुत ही घिसी-पिटी दलील है। आप अपने देश और समाजका सगठन असगठित समुदायो और राष्ट्रोका शोषण करनेके लिए करते है। यह बुरी चीज है। . . .[1] जो बात आइन्स्टीनने कही है, उसको आजमानेका प्रसग

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द अस्पष्ट है।

सालमे कभी एक-आध बार ही आयेगा और सो भी कुछ ही लोगोके सामने। लेकिन आपका पहला कर्त्तव्य राज्यसे असहयोग करना है।

प्र० : क्या भारतके लोगों और उन दूसरे देशोंके लोगोंमें, जो स्वतन्त्र हैं, इतना अधिक अन्तर है? अपने राज्यसे झगड़नेसे पहले क्या हम यह नहीं कह सकते कि हमारी स्थिति आपकी स्थितिसे भिन्न है?

उ० : भिन्नता तो है। पराधीन राष्ट्रकी प्रजाकी हैसियतसे मै शान्ति-स्थापनामे सबसे अच्छा योगदान पराधीनताकी बेडीको तोडकर ही दे सकता हूँ। यहाँ मुझसे यह पूछा गया है कि सैनिक मनोवृत्तिसे छुटकारा पानेका सबसे अच्छा तरीका क्या है। आप जिन सुविधाओका उपभोग कर रहे है उनका उपभोग इसी शर्तपर कर रहे है कि आप राज्यको सैनिक सेवा प्रदान करेगे। तो यहाँ आपको राज्यको सैनिक मनोवृत्तिसे मुक्त करना है। लेकिन आपके पक्षमे बहुत कम लोग है। जो राज्य सैनिक हिंसापर आधारित है वह बुरा राज्य है। इसपर आप शायद कहे कि अधिकाश लोग तो ऐसे ही है। हाँ, वे है। इस तरीकेकी कार्य-साधक क्षमतापर विचार करते हुए मै स्वाधीन राज्य और पराधीन राज्यके बीचका भेद स्पष्ट कर पाया हूँ। अगर आप शान्तिकामी अल्पसख्यक समुदायको बहुसख्यक समुदायमे परिवर्त्तित करना चाहते है तो आपको राज्य द्वारा दी गई सुविधाओको अस्वीकार करना होगा।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य . नारायण देसाई

२५९. भाषण : लोजानकी सभामें[1]

लोजान

८ दिसम्बर, १९३१

भाइयो,

जबसे मै आपके इस सुन्दर नगरमे आया हूँ, आप सब मुझपर इतना अधिक अनुग्रह करते रहे है कि मै उससे बिलकुल अभिभूत हो गया हूँ। अगर हमारी इस पृथ्वीका सौन्दर्य स्वर्गका निर्माण हो सकता है तो आप सचमुच स्वर्गमे ही रह रहे है। मै एक ऐसे देशका निवासी हूँ, जिसे ईश्वरने मुक्तहस्त होकर प्राकृतिक सुन्दरताका दान दिया है। आपको भारतके बिलकुल छोरपर — त्रावणकोरमे — जैसा दृश्य देखनेको मिलेगा उससे अधिक भव्य दृश्य ससारमें कही नही मिल सकता। लेकिन जिस समय हमारी रेलगाडी धीरे-धीरे आपकी मनोरम झीलकी बगलसे गुजर रही थी और जब

१. साधन-सूत्रमें यह नहीं बताया गया है कि यह कौन-सी सभा थी। लेकिन ३१-१२-१९३१ के यंग इंडियामें प्रकाशित अपने "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) में महादेव देसाई कहते है कि यह अन्तरात्माके आदेशपर सैनिक सेवाका विरोध करनेवालों की सभा थी और इसका आयोजन एक गिरजा-घरमें पियरे सेरेसोल तथा उनके मित्रोंने किया था। इस भाषण तथा तत्पश्चात् पूछे गये प्रश्नोंके गांधीजी द्वारा दिये उत्तरोंका अनुवाद एडमंड प्रिवेट तथा प्रोफेसर बोवेटने किया।

हम लोग आपके यहाँके स्वच्छ-सुन्दर गाँवोंसे होकर गुजरे उस समय वहाँका लोकोत्तर सौन्दर्य देखकर मैं अपनी सुध-बुध खो बैठा और यहाँ आकर मैंने आपके स्नेहमें निहित सौन्दर्य-रसका जी-भरकर पान किया। आपके साथ हार्दिक सलापके जो भी अवसर आये हैं उनमें आपके पूछे सच्चे जिज्ञासापूर्ण और उपयुक्त प्रश्नोंमें भी मुझे आपके स्नेहकी झाँकी मिली है। और जो बात सबसे बढ़कर है, वह यह कि अब आपने खुदाके इस घरमें अपने प्रश्न-प्रहारोंका सिलसिला एक ऐसे प्रश्नसे शुरू किया है जो लगभग ५० वर्षोंसे मेरे मनपर, मेरे सम्पूर्ण मनपर, छाया रहा है।

आपने मुझसे पूछा है कि मैं ऐसा क्यों मानता हूँ कि ईश्वर सत्य है। अपने बचपन या किशोरावस्थामें मुझे, हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें जिन्हें ईश्वरके सहस्रनाम [विष्णु-सहस्रनाम] कहा गया है, उनका जप करना सिखाया गया था। हमारे परिवारके पास धार्मिक शिक्षा देनेवाली जो अनेक छोटी-मोटी वस्तुएँ थीं उनमें एक वह छोटी-सी पुस्तिका भी थी जिसमें ईश्वरके सहस्रनाम दिये गये थे। परन्तु इन सहस्रनामोंमें ही ईश्वरकी सारी नामावली समाप्त नहीं हो जाती। हम मानते हैं — और मेरे विचारसे यही सत्य है — कि जितने प्राणी हैं, उतने ही ईश्वरके नाम हैं, और इसलिए हम यह भी कहते हैं कि ईश्वर अनाम है, और चूँकि उसके अनेक रूप हैं, इसलिए हम उसे अरूप कहते हैं, और वह हमसे कई वाणियोंमें बात करता है, इसलिए हम उसे अवाक् कहते हैं, इत्यादि-इत्यादि। इसी तरह मैंने इस्लामका अध्ययन किया तब मुझे पता लगा कि इस्लाममें भी ईश्वरके अनेक नाम हैं। जो यह कहते हैं कि ईश्वर प्रेम है, उनके स्वरमें स्वर मिलाकर मैं भी कहूँगा कि ईश्वर प्रेम है। लेकिन अपने हृदयकी गहराईमें मैं यही कहता हूँ कि ईश्वर प्रेम-रूप होगा, पर सबसे अधिक तो वह सत्य-रूप है। यदि मनुष्यकी वाणीके लिए ईश्वरका सम्पूर्ण वर्णन करना सम्भव हो तो मैं स्वयं तो इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि ईश्वर सत्य है। किन्तु दो वर्ष पूर्व मैं एक कदम और आगे बढ़ा और मैंने कहा सत्य ही ईश्वर है। ईश्वर सत्य है और सत्य ही ईश्वर है, इन दोनों बातोंके बीचके सूक्ष्म भेदको आप समझते होंगे। इस निष्कर्षपर मैं इतने वर्षोंतक सत्यकी अनवरत और कठिन खोजके बाद पहुँचा हूँ। मैंने पाया कि सत्यतक पहुँचनेका निकटतम मार्ग प्रेमका है। लेकिन मैंने यह भी पाया कि कमसे-कम अंग्रेजी भाषामें प्रेम (लव)के कई अर्थ हैं, और काम-विकारके अर्थमें मानव-प्रेम तो मनुष्यको गिरानेवाली चीज भी है। मैंने यह भी देखा कि अहिंसाके अर्थमें प्रेमके पुजारियोंकी संख्या दुनियामें बहुत थोड़ी है और अपनी खोजमें आगे बढ़ते हुए मैंने इस बातका खण्डन तो नहीं किया कि 'ईश्वर प्रेम है' [लेकिन] 'ईश्वर प्रेम है', इस बातको समझना (प्रेमके अनेक अर्थ होनेके कारण) बहुत कठिन है, और काम-विकारके अर्थमें मानव-प्रेम एक गिरानेवाली वस्तु भी बन जाता है। किन्तु सत्यका दोहरा अर्थ होते मैंने कभी नहीं देखा, और नास्तिकोंतक ने सत्यकी आवश्यकता या शक्तिको अस्वीकार नहीं किया है। बात इतनी ही नहीं है। सत्यको खोजनेकी अपनी लगनमें उन्होंने ईश्वरके अस्तित्वतक को अस्वीकार करनेमें संकोच नहीं किया है — और उनके अपने दृष्टिकोणसे यह ठीक भी है। और उन्हींके तर्कके

कारण मेरे मनमे यह बात आई कि ईश्वर सत्य-रूप है, यह कहनेके बजाय मुझे कहना चाहिए कि सत्य ही ईश्वर है। इस सन्दर्भमें मुझे चार्ल्स ब्रैडलॉका नाम स्मरण हो आता है। वे एक महान् अंग्रेज थे और आजसे कोई पचास वर्ष पहले उनका निधन हुआ। वे बड़े उत्साहसे अपनेको नास्तिक कहा करते थे। लेकिन मै चूंकि किसी हदतक उनके जीवनके विषयमे जानकारी रखता हूँ, इसलिए मैंने उन्हे कभी भी नास्तिक नही माना। मै तो उन्हे ईश्वरसे डरकर चलनेवाला आदमी ही कहूँगा, हालाँकि वे इस बातको स्वीकार नही करते और मै जानता हूँ कि मेरी बात सुनकर उनका चेहरा लाल हो जाता था। मै तो उनसे यही कहता: नही ब्रैडलॉ साहब, नही, आप ईश्वरसे डरकर चलनेवाले आदमी नही, बल्कि सत्यसे डरनेवाले आदमी हैं। और जिस प्रकार मैंने अनेक युवकोंको निरुत्तर कर दिया उसी प्रकार उन्हे भी यह कहकर निरुत्तर कर देता कि "सत्य ही ईश्वर है।" "ईश्वर सत्य है", ऐसा कहनेमे एक दूसरी कठिनाई यह है कि ईश्वरका नाम करोडो लोगोने लिया है और साथ ही उसके नामपर अवर्णनीय अत्याचार किये हैं। ऐसा नही है कि सत्यके नामपर वैज्ञानिक लोग बहुधा क्रूरता नही बरतते। मुझे मालूम है कि आज सत्य और विज्ञानके नाम पर पशुओंकी चीर-फाडके सिलसिलेमे उनके साथ कैसी अमानवीय क्रूरता बरती जाती है। मैं इसे ईश्वरके अस्तित्वको अस्वीकार करना मानूंगा भले ही आप चाहे ईश्वरको सत्य कहे या कोई और नाम दे। साराश यह कि ईश्वरका वर्णन चाहे जिस नामसे किया जाये, उसमें अनेक कठिनाइयाँ हैं। लेकिन मानव-मस्तिष्ककी क्षमता सीमित है, और जब हम ऐसी सत्ताके विषयमे सोचते है जो मनुष्यकी समझसे परे है तब हमे अपने मस्तिष्ककी क्षमताकी उस सीमाके भीतर ही काम करना पड़ता है। किन्तु हिन्दू तत्त्वज्ञानमें एक बात और है। वह कहता है, केवल ईश्वरका ही अस्तित्व है, उसके अतिरिक्त और किसी वस्तुकी सत्ता नही है। इस्लामके उस प्रसिद्ध वचनमें जिसे 'कलमा' कहा जाता है इसी सत्यको जोर देकर कहा और समझाया गया है। उसमे साफ-साफ कहा गया है — और मुसलमानोको हर इबादतके समय उसे दोहराना पडता है — केवल अल्लाह ही है, और कुछ नही है। यही बात सत्यके साथ भी है, और सत्यके लिए सस्कृतमे जो शब्द है — अर्थात् सत् — उसका शब्दार्थ ही 'जो है' होता है। इन कारणो तथा और भी अनेक कारणोसे, जो मै बता सकता हूँ, मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि सत्य ही ईश्वर है। और जब आप सत्यको ईश्वरके रूपमें पाना चाहते हैं तो उसका एकमात्र अनिवार्य साधन प्रेम, अर्थात् अहिंसा है। चूंकि मैं मानता हूँ कि अन्ततः साधन और साध्य समानार्थक शब्द हो जाते है, इसलिए मुझे यह कहनेमें सकोच नही होगा कि ईश्वर प्रेम है।

प्र० : तो फिर सत्य क्या है?

उ० : प्रश्न तो कठिन है, लेकिन मैंने अपने लिए उसका हल निकाल लिया है — वह यह है कि जो हमारी अन्तरात्मा कहे, वही सत्य है। इसपर आप पूछेगे कि तब फिर अलग-अलग लोग अलग-अलग और एक-दूसरेके विरुद्ध सत्योकी कल्पना कैसे करते हैं?

इसका उत्तर यह है कि मानव-मन असख्य माध्यमोमे काम करता है और प्रत्येक मनुष्यके मनका विकास एक-सा ही नही हुआ है, इसलिए यह परिणाम तो आयेगा ही कि जो एकके लिए सत्य हो वह दूसरेके लिए असत्य हो। इसीलिए जिन लोगोने ये प्रयोग किये है वे इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि इन प्रयोगोमे कुछ शर्तोका पालन करना आवश्यक है। जिस प्रकार विज्ञानके क्षेत्रमे प्रयोग करनेवाले सभी लोगोके लिए एक सामान्य और अनिवार्य पद्धति है उसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्रमे प्रयोग करनेकी इच्छा रखनेवालो के लिए भी कुछ शर्तोका पालन करना आवश्यक है। और चूँकि हर आदमी कहता है कि उसकी अन्तरात्माकी आवाज ही उससे अमुक बात कह रही है, इसलिए आपको उस आवाजको सुनना चाहिए, और तब आप जैसे-जैसे अपनी साधनाके पथपर आगे बढेगे, आपको अपनी मर्यादाओका बोध होता जायेगा। इसलिए सतत अनुभवोके आधारपर हमारा यह विश्वास बना है कि जो लोग लगनके साथ सत्यकी — ईश्वरकी — खोज करना चाहते है उन्हे कुछ व्रतोका पालन करना ही चाहिए। वे व्रत है : सत्य — अर्थात् सत्य बोलना और सत्य ही सोचना, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, गरीबी और अपरिग्रह। अगर आप इन सुन्दर व्रतोका पालन नही करते तो फिर आपको यह प्रयोग आरम्भ नही करना चाहिए। इसके लिए कई और भी नियम निर्धारित किये गये है, लेकिन यहाँ मै उनका विवेचन नही करूँगा। लेकिन जिन्होने ये प्रयोग किये है, वे जानते है कि हर व्यक्तिका अपनी अन्तरात्माकी आवाज सुन सकनेका दावा उचित नही है, और आज जो ससारके सामने इतनी अधिक असत्य बातें रखी जा रही है कि वह हैरान है, उसका कारण यही है कि हर आदमी इस प्रयोगके लिए आवश्यक नियमोका पालन किये बिना अपनी अन्तरात्माकी आवाज सुननेका दावा करता है। इसलिए मै संपूर्ण विनम्रताके साथ केवल इतना ही निवेदन कर सकता हूँ कि जिसमें विनय नही है, वह कभी भी सत्यको प्राप्त नही कर सकता। अगर आप सत्य-रूपी सागरकी सतहपर तैरना चाहते है तो आपको अपनेको शून्य बना देना होगा, अपना अहं बिलकुल मिटा देना होगा। इस मन्त्रमुग्ध कर लेनेवाले विषयपर आजकी रात इससे आगे कुछ नही कहूँगा।

प्र० : ईसाई धर्मके सम्बन्धमें आपका क्या विचार है?

उ० : बडा कठिन प्रश्न है। ईसाई धर्म बहुत अच्छा है, लेकिन साथ ही बहुत-से ईसाई खासे बुरे है।

आर्थिक सकटको तभी टाला जा सकता है जब लोग गरीबीसे प्रेम करने लगेगे। यहाँ मै आपसे 'प्रेम' शब्दपर खास जोर देनेको कहूँगा। अगर लोग सचमुच गरीबीसे प्रेम करने लगे तो कोई आर्थिक संकट नही आये। आर्थिक सकट इसीलिए आते है कि हम अपने पडोसीकी सम्पत्तिको लोभकी निगाहसे देखते है। दुनियामे मजबूरीकी गरीबी इसलिए है कि बहुत-से लोगोंके पास, वे जितनेके पात्र है, उससे अधिक है। अगर हम यह पवित्र सकल्प ले ले कि हमे अपनी भौतिक सुख-सुविधाके लिए जितनेकी जरूरत है, उससे ज्यादा हम नही लेगे तो दुनियामे गरीबी रह ही न जाये। तब कोई लखपती बिना सोचे-समझे यह नही कहेगा कि उसके पास

लाखो रुपये इसलिए है कि उसे अपनी भौतिक सुख-सुविधाओके लिए उनकी जरूरत है। इसके विपरीत, जो गरीब है वह भी बराबर इस बातकी छानबीन करता रहेगा कि उसके पास कही कोई ऐसी वस्तु तो नही है जो उसके लिए वास्तवमे आवश्यक न हो। जब आप जीवनके प्रति खिलाडियोका-सा दृष्टिकोण अपनाकर प्रतिदिन वैसा ही आचरण करेगे तो यह देखकर चकित रह जायेगे कि वास्तवमे आपको कितने कमकी जरूरत है।

इस समय खुदाके इस घरमे होनेके कारण मै तो यह कहना चाहूँगा कि दूसरोकी आँखकी फूली देखनेसे पहले आप अपना टेंटर देखिए। अगर आप इतना ही करे कि अपनेको अच्छा बना ले तो मुझे इस बातमे बहुत कम सन्देह है कि दुनिया अपने-आप अच्छी बन जायेगी।

प्र० : यूरोपकी स्त्रियोको आपका क्या सन्देश है?

उ० : मै नही कह सकता कि उनका कोप-भाजन बने बिना मै उनको कोई सन्देश दे सकता हूँ। मै उनसे उन भारतीय महिलाओके पद-चिह्नोका अनुसरण करनेको कहूँगा जो गत वर्ष एक-जुट होकर उठ खडी हुई थी। मै सचमुच ऐसा मानता हूँ कि अगर भारत अहिंसामृतका पान कर सका तो यूरोप उसका पान अपने यहाँकी महिलाओके द्वारा ही कर सकेगा। स्त्रीको मै आत्म-त्यागकी प्रतिमूर्ति मानता हूँ, किन्तु दुर्भाग्यवश स्त्रियाँ आज यह नही जानती कि पुरुषोंकी तुलनामे उनमे कितनी अधिक सामर्थ्य है। टॉल्स्टॉयके शब्दोमे, वे पुरुषके व्यामोहमे डालनेवाले प्रभावमें पडी हुई है। अगर वे अहिंसाकी खूबसूरतीको समझ जाये तो फिर वे यह बरदाश्त नही करेगी कि उन्हे पुरुषोकी तुलनामे कमजोर कहा जाये — अबला माना जाये।

जिन चीजोका मुझे केवल एक धुँधला-सा आभास था, टॉल्स्टाय और रस्किनने उनके सम्बन्धमें मेरे विश्वासको नई शक्ति प्रदान की।

प्र० : अप्रतिरोध और आपके अहिंसक प्रतिरोधमें क्या अन्तर है?

उ० : अकसर ऐसा कहा गया है कि अहिंसाका सिद्धान्त मैने टॉल्स्टॉयसे लिया है। इसमे पूरी सचाई तो नही है, लेकिन अहिंसाके सम्बन्धमे उनकी रचनाओसे भी मुझे सबसे अधिक बल मिला है। लेकिन इस बातको टॉल्स्टॉयने स्वय भी स्वीकार किया है कि अप्रतिरोधकी जिस पद्धतिका सवर्धन और विकास मैने दक्षिण आफ्रिकामे किया वह उस अप्रतिरोधसे भिन्न है जिसके सम्बन्धमे टॉल्स्टॉयने लिखा है और जिसे अपनानेकी उन्होने सिफारिश की है। यह बात मै कोई टॉल्स्टॉयकी प्रसिद्धिको कम करनेके खयालसे नही कह रहा हूँ। जो अपने लिए अपने शिक्षक द्वारा तैयार किये गये आधारपर कोई और ढाँचा खडा न करे वह योग्य शिष्य नही है। अच्छा गुरु पानेका पात्र वही है जो अपने गुरुकी दी हुई विरासतमे कुछ वृद्धि भी कर सके। यदि मै अपने पितासे प्राप्त विरासतमें कुछ और जोड नही पाता तो मानना चाहिए कि मै एक अयोग्य पुत्र हूँ। और इसलिए मैने सदा इसे गर्वका विषय माना है। मैने टॉल्स्टॉयसे जो-कुछ सीखा है, वह ईश्वरकी कृपासे मुझमे आकर सौ गुना अधिक निखरा है। टॉल्स्टॉय निष्क्रिय प्रतिरोधकी बात बहुत करते थे, लेकिन ट्रान्सवालमे मैने

जिस अप्रतिरोधके उपायका विकास किया[1] वह किसी भी सशस्त्र व्यक्ति द्वारा ढूँढे जा सकनेवाले उपायसे लाख गुना अधिक सक्रिय था, और मुझे यह बताते हुए हर्षका अनुभव हो रहा है कि मेरे कुछ लिखे बिना अपनी ही इच्छासे उन्होंने मुझे एक लम्बा पत्र लिखा था, जिसमें कहा था कि आप जहाँ-कहीं होते हैं, मेरी दृष्टि आप पर ही लगी रहती है। और अगर आप दक्षिण आफ्रिका तथा भारतमें मेरे चलाये आन्दोलनोंका अध्ययन करेंगे तो पायेंगे कि इस चीजका किस तरह असीम विस्तार किया जा सकता है।

प्र० : क्या अप्रतिरोधका मतलब अन्यायके आगे झुक जाना नहीं है?

उ० : निष्क्रिय प्रतिरोधको कमजोर लोगोंका अस्त्र माना जाता है, लेकिन उस प्रतिरोध (रेजिस्टेंस)की अवधारणा — जिसको अंग्रेजीमें कोई सही शब्द न होनेके कारण तथा इस खयालसे कि उसका अर्थ कहीं अप्रतिरोध न लगा लिया जाये, मैंने एक बिलकुल नया नाम दिया, अर्थात् सत्याग्रह — किसी भी तरहसे कमजोर लोगोंके अस्त्रके रूपमें नहीं, बल्कि अधिकसे-अधिक शक्तिशाली लोगोंके अस्त्रके रूपमें की गई है। किन्तु इसका विलक्षण गुण यह है कि इस अस्त्रका प्रयोग कमजोरसे-कमजोर, बूढ़ेसे-बूढ़ा, यहाँतक कि बच्चा भी कर सकता है, बशर्ते कि उसका हृदय सबल हो। और चूँकि सत्याग्रहके द्वारा किये जानेवाले प्रतिरोधका माध्यम स्वेच्छासे कष्ट सहन करना है, इसलिए स्त्रियोंके लिए इसका प्रयोग विशेषरूपसे सम्भव है। गत वर्ष भारतमें वास्तविक अनुभवके आधारपर हमने जाना कि कष्ट सहन करनेमें स्त्रियाँ बहुधा पुरुषोंसे आगे निकल जाती हैं। और इस आन्दोलनमें हजारों बच्चोंने भी बड़ा सुन्दर काम किया। कारण यह था कि स्वेच्छासे कष्ट सहनेका सिद्धान्त तेजीसे फैला और उन्होंने आश्चर्यजनक आत्म-त्याग करके दिखाया। अगर यूरोपकी स्त्रियों और बच्चोंमें मानवताके प्रति प्रेम उमड़ पड़े और वे कहें कि हमारे यहाँके पुरुष शस्त्रीकरण करके गलत काम कर रहे हैं तो वे देखते-देखते पुरुषोंपर विजय पा लें और सैन्यवाद इतनी जल्दी मिट जाये जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। इस सबके पीछे जो भावना काम करती है वह यह है कि स्त्रियों, बच्चों और अन्य लोगों, सभीमें एक ही आत्माका निवास है, सभीमें एक-सी क्षमताएँ और सम्भावनाएँ हैं। सवाल सिर्फ सत्यकी छिपी हुई असीम शक्तिको प्रकट करनेका है। लेकिन मुझे इस मोहक विषयपर भी अधिक चर्चा करनेका लोभ संवरण करना चाहिए।

प्र० : निरामिष आहारका महत्त्व क्या है?

उ० : मेरे लिए तो उसका महत्त्व असीम है, मगर गो-मांस खानेवाले यूरोपके लिए नहीं। फिर भी, मैं यह महसूस करता हूँ कि किसी-न-किसी समय आध्यात्मिक प्रगतिके लिए यह आवश्यक — नितान्त आवश्यक — हो जाता है कि हम अपनी शारीरिक जरूरतोंको पूरा करनेके लिए सृष्टिके प्राणियोंका नाश करना बन्द कर दें।

१. मूलमें ऐसा ही है यद्यपि यह कहना ज्यादा सही होगा कि "टॉल्स्टॉय अप्रतिरोधकी बात बहुत करते थे लेकिन ट्रान्सवालमें मैंने जिस निष्क्रिय प्रतिरोधका विकास किया . . .।"

निरामिषाहारके अपने प्रिय सिद्धान्तपर बोलते हुए मुझे गोल्डस्मिथकी ये पंक्तियाँ याद हो आती है:

> घाटियोमें मुक्त विचरनेवाले उन भेड़ोंके झुंडोंको मारनेकी बात मै नहीं सोच सकता; जो सत्ता मुझपर दया बरसाती है, उसीसे मैंने भी इनपर दया करना सीखा है।

प्र० : शराबके बारेमें आपका क्या विचार है?

उ० . जैसा कि हम कहते है, शराबकी ईजाद शैतानने की। इस्लाममे कहा गया है कि जब शैतानने स्त्रियो और पुरुषोको फुसलाना शुरू किया तो उसने उनको शराबका लालच दिया। मैंने तो देखा है कि इसके कारण लोगोने केवल अपना धन ही नही गँवाया है, बल्कि वे अपना विवेक भी खो बैठे है। कुछ समयके लिए पत्नी और माँ, उचित और अनुचितका भेद बिलकुल भूल बैठे है। नशेमे धुत बैरिस्टर लोग नालियोमे जा पडे और पुलिसके आदमी उन्हे घर पहुँचायें, इस स्थितिपर तनिक विचार करके देखिए। मैंने दो अवसरोपर जहाजोके कप्तानोको पीकर अपन होशहवास खो बैठते देखा है। उनमे अपने-अपने जहाजोको सँभालनेकी क्षमता नही रह गई थी और उनके होशमे आनेतक दूसरोको काम करना पडा। मदिरा और मास दोनोके सम्बन्धमे सबसे उत्तम नियम यही है. हमे खाने-पीने और मोद मनानेके लिए नही जीना चाहिए, बल्कि अपने शरीरको ईश्वरका मन्दिर बनाने और उसका उपयोग मनुष्यकी सेवा करनेके लिए ही खाना चाहिए। चिकित्साके लिए शराबकी आवश्यकता हो सकती है, जब जीवन चुक गया लगता हो, उस समय उसकी सहायतासे उसे कुछ समय बरकरार रखना सम्भव हो सकता है। मासाहारके बिना पूर्णत. स्वस्थ रहना सम्भव है। अगर आप किसी सिपाहीमे क्रूरताकी प्रवृत्ति जगाना चाहते हो तो मासाहारके बिना वैसा नही किया जा सकता। आपको शायद मालूम न हो कि जापानने जब पाश्चात्य सभ्यताका अनुकरण आरम्भ किया तो उसने अपने यहाँ गोमास खाना अनिवार्य कर दिया।

प्र० : सैनिक मामलोंमें असहयोगकी भरपाई क्या असैनिक मामलोमें सहयोग करनेसे नहीं हो जाती?

उ० : इसे अन्तिम प्रश्न मानना चाहिए। यह अच्छा प्रश्न है। पहली सभामें जहाँ कुछ मित्र लोग इकट्ठे हुए थे हमने इस विषयकी विशद चर्चा की थी। सक्षेपमें, मैं इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि ये दोनो सेवाएँ समान कोटिकी हैं। सैनिक मामलोमे असहयोग और असैनिक मामलोमे सहयोग दोनो एक साथ नही चल सकते। मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखे जा सकते है। बेशक, 'सैनिक सेवा' उपयुक्त शब्द नही है। क्योकि सैनिक सेवा पर आधारित राज्यको सहारा देकर तो आप अप्रत्यक्ष रूपसे बराबर उसकी सैनिक सेवा कर ही रहे होते है। ट्रान्सवालमें यही कानून था। कुछ लोगोको — भारतीय, बटू तथा जुलू लोगोको — कानून बनाकर सैनिक सेवासे वंचित रखा गया था। किन्तु उनसे उसके लिए अनिवार्य रूपसे पैसा लिया जाता था। वे

प्रकारान्तरसे सेवा करते थे। आपको असहयोगके क्षेत्रको विस्तृत करना होगा, लेकिन आप कैसे करेंगे, यह मै नही कहूँगा। राज्यरचित सीमाओंको लाँघकर अपने पडोसियो की सेवा करनेका कोई अन्त नही है। ये सीमाएँ ईश्वरकी बनाई हुई नही है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य : नारायण देसाई

२६०. भाषण : लोजानकी सभामें[1]

लोजान
८ दिसम्बर, १९३१

मुझे मालूम है कि आपके इस महान् महाद्वीपमे मेरे बहुत-सारे मित्र है। रोमाँ रोलाँसे मिलनेके लिए विलेन्यूवकी यात्रा करनेको मुझे एक स्टीमर छोडना पडा। यहाँ भी मै वही बात कहूँगा जो मैने पेरिसके नागरिकोसे कही थी। मै देख रहा हूँ कि पूरे पश्चिमका हृदय आज रुग्ण है। दुनिया अब जिस फौजी बोझके नीचे कराह रही है, आप उससे थक गये लगते है — मै देख रहा हूँ कि आप अपने साथी इन्सानोका खून बहाते थक गये है। पिछले युद्धने, जिसे झूठमूठ ही महायुद्ध कहा जाता है, आपको और मानव-जातिको बहुत-से बडे-बडे सबक सिखाये है। उस युद्धमे मानव-स्वभाव किसी भी तरह अपने उज्ज्वल रूपमे सामने नही आया। युद्धमें विजयी होनेके लिए किसी भी झूठ और छल-कपटको त्याज्य नही समझा गया। एक राष्ट्रके पक्षधरोने दूसरे राष्ट्रपर गन्देसे-गन्दे आरोप लगाये और जवाबमे दूसरे राष्ट्रने और ज्यादा जहर उगला। किसी भी तरहके जुल्मसे परहेज नही किया गया। शत्रुके विनाशके लिए कोई भी हथकंडा अधम या निकृष्ट नही माना गया। कलके मित्र आज क्षण-भरमें ही शत्रु बन गये। न किसी तरहका सम्मान सुरक्षित रहा और न कोई चीज बच सकी। इतिहासकार हमे बताते है कि पिछले युद्धमे जितना खून बहा है उतना पहले कभी नही बहा था। पाश्चात्य सभ्यता तराजूमे तोली गई और पूरी नही उतरी, और उस युद्धके घातक प्रभावोंसे आप अभी उबर नही पाये है। इसके विपरीत, युद्धके दुष्परिणामको आप धीरे-धीरे किन्तु निश्चित तौरपर उत्तरोत्तर अधिकाधिक सघन रूपमे अनुभव कर रहे है। ज्यादातर राष्ट्र आज करीब-करीब दिवालियेपनकी स्थितिमे पहुँच गये है, जो युद्धका ही सीधा फल है। आप केवल आर्थिक दिवालियेपनके नही, बल्कि नैतिक दिवालियेपनके भी शिकार है। युद्ध समाप्त हुए अभी इतना समय नही बीता है कि उससे विरासतमे जो विभीषिका हमे मिली है उसका हम पूरा अन्दाजा लगा सके। और यह अनिष्ट केवल यूरोपतक सीमित नही है। अपनी हदोको

१. गाधीजी लोजानमें तीन सभाओमें बोले थे। साधन-सूत्रसे यह पता नहीं चलता कि यह कौन-सी सभा थी। परन्तु **हिन्दुस्तान टाइम्स**, ११-१२-१९३१ की एक बहुत ही संक्षिप्त रिपोर्टसे यह लगता है कि यह वह सभा थी जो पीपुल्स हॉलमें हुई थी।

तोड़कर यह एशियामे पहुँच गया है और आज किसीको भी यह पता नही है कि वह अपने पैरोपर खडा है या सिरके बल।

ऐसे समयमे भारतसे आशाका एक सन्देश आया है। भारत अपनी स्वतन्त्रता अहिंसा और सत्यके द्वारा प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहा है। पिछले दस सालोमें वह इन्ही साधनोको प्रयोगमे लानेके लिए प्रयत्नशील रहा है। दसियो हजार लोग इस आन्दोलनमे भाग ले चुके है। जिन्होने इस आन्दोलनका अध्ययन किया है वे इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि यह दृढ गतिसे आगे बढ रहा है। मेरा कहना यह है कि यदि भारत इस तथ्यका प्रत्यक्ष प्रदर्शन कर देता है कि भारत बूंद-भर भी रक्त बहाये बिना स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकता है, तो यह दुनियाके लिए एक बडा सबक होगा। आप युद्धका एक नैतिक विकल्प खोजनेकी कोशिश कर रहे है। यह सम्भव है कि भारतने जो पद्धति अपनाई है वह युद्धका सही विकल्प साबित हो। मै जानता हूँ कि अभी इस पद्धतिके बारेमे कुछ भी निश्चित रूपसे कहना जल्दबाजी होगी। परन्तु आज रात मेरा आपसे निवेदन यह है कि आपको भारतीय आन्दोलन और भारतीय तरीकोका अध्ययन करना चाहिए। मै आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इस आन्दोलनका अध्ययन पक्षपाती मित्रोकी तरह नही, बल्कि निष्पक्ष आलोचकोंकी तरह करे। इसके प्रति अपना रुख अच्छे शिक्षार्थीका-सा रखिए, आन्दोलनका निष्पक्षतासे अध्ययन कीजिए और यदि आप इस निष्कर्षपर पहुँचें कि यह ईमानदारीके साथ अहिंसा और शान्तिपूर्ण उपायोंसे चलाया जा रहा है तो फिर सम्पूर्ण हृदयसे इस आन्दोलनमें कूद पडिए। मुझे इस बातमे कतई सन्देह नही है कि आप ऐसा कर सकते है। आप यूरोपके जनमतको — विश्वके जनमतको — नये साँचेमे ढाल सकते है, जिससे कि वह दुर्निवार बन जाये। अहिंसात्मक आन्दोलन, स्वभावतः, अनुकूल जनमत तैयार करता है, वह अपनी बात पूरी जनताके आत्मपीडन द्वारा कहता है। पर मुझे और आगे नही बढना चाहिए। मेरी कोशिश अभी आपकी भूखको केवल चेतानेकी रही है। इस सभाकी अवधि ४५ मिनट है और जैसा कि मेरा कायदा है, मै अपने समयका एक खासा भाग प्रश्नोके लिए बचाये रखना चाहता हूँ। इसलिए मै आपको इस बातके लिए आमन्त्रित करता हूँ कि आपको जो भी प्रश्न रखने हो वे आप रखे।

प्र० : [ऐसी खबर है कि आपने कहा है,] यदि आवश्यक हुआ तो भारतकी जनता हिंसाका सहारा लेगी। [क्या यह सही है?]

उ० : मुझे यह कहनेमे कोई झिझक नही है कि यह एक निराधार और मनगढन्त बात है। यह बहुत ही दु.खकी बात है कि पत्रकार अपनेको इतना गिरा लेते है कि झूठका प्रचार करने लगते है। मेरा आशय एक क्षणको भी यह नही है कि पत्रका सम्पादक झूठका प्रचार कर रहा था। पर रिपोर्टर स्वय पत्रकार था और दोष उसीका है। लेकिन पत्रकारिताके सम्मानकी खातिर अब मेरा सुझाव यह है कि उस कथनको, जिसे मेरा बताया गया है, सुननेके बाद आपको उस रिपोर्टरसे पत्र-व्यवहार करना चाहिए और उसके साथ वही सलूक करना चाहिए जो कि एक बेईमान नौकरके साथ किया जाता है।

प्र० : श्री गांधी, क्या आपने सचमुच लोगोंको यह सलाह दी थी कि वे फौजमें भरती हों और हवामें गोली चलायें?

उ० : यह एक और मनगढन्त बात है। इस तरहका प्रश्न मुझसे पेरिसमे किया गया था और मैंने कहा था कि जो सैनिक फौजमे भरती होकर अपने मनको इस विचारसे सन्तोष देता है कि वह हवामे गोली चला रहा है, वह अपने अहिंसा-धर्म की प्रतिष्ठा नही बढाता है। मेरी योजनामें तो ऐसा करनेवाला आदमी असत्य और कायरता दोनोका दोषी माना जायेगा — कायरताका इसलिए कि वह कैदसे बचनेके लिए फौजमे भरती हुआ और असत्यका इसलिए कि भरती होनेके बाद उसने गोली नही चलाई। इससे युद्धके विरुद्ध युद्धके ध्येयको बट्टा लगता है। युद्धके प्रतिरोधियोंका आचरण सीजरकी पत्नीकी तरह सन्देहसे परे होना चाहिए। उनकी शक्ति इस प्रश्नके नैतिक आधारपर पूर्णतया आरूढ रहनेमे निहित है। काश, मेरा हिन्दू समाजपर काफी असर होता और मै उन्हे मुसलमानों और सिखोंके आगे पूर्ण समर्पणकी सलाह दे सकता। जो लोग एक-दूसरेसे भयभीत हो उनसे निबटना सबसे कठिन काम है। हम इतने पौरुषहीन और हताश हो गये है कि हिन्दू, मुसलमान और सिख आपसमे एक-दूसरेसे डरते है और एक-दूसरेपर सन्देह करते है। भय व अविश्वाससे ग्रस्त लोग एक-दूसरेपर चोट करनेसे बाज नही आते है। हमारी स्थिति ऐसी दयनीय है।

असहयोग और अहिंसाकी पद्धति न केवल उचित है, बल्कि जिसे युद्धके न्याय-विरोधी होनेका विश्वास है, ऐसे हर आदमीका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह चाहे अकेला हो तो भी अहिंसात्मक असहयोग करे।

प्र० : यान्त्रिकताके बारेमें आपकी क्या राय है? आप उसे क्यों रोकते हैं?

उ० : यान्त्रिकतासे आपका आशय शायद मशीनपर आधारित इस जबरदस्त गति-विधिसे ही है। मै जिसे रोकना चाहता हूँ वह मनुष्यपर मशीनका आधिपत्य है। इस समय हर काम मशीनसे करनेकी सनक इतनी बढ गई है कि हम मशीनके दास बनते जा रहे है। मशीनका उपयोग दो प्रयोजनोके लिए होता है : (१) सामूहिक विनाशके लिए और (२) बडे पैमानेपर उत्पादनके लिए। मैने आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर दिलाया कि यह आर्थिक सकट पिछले युद्धके कारण है, परन्तु साथ ही यह बड़े पैमानेपर किया जानेवाला उत्पादन भी इस आर्थिक सकटके लिए कम उत्तरदायी नही है।

प्र० : ईश्वर-प्रेम या मानव-प्रेम?

उ० यह ऐसा प्रश्न है जिसमे आप कोई बात पहलेसे ही मानकर चलनेकी गलती कर रहे है। ईश्वर-प्रेम मानव-प्रेमसे भिन्न नही है। परन्तु यदि दोनो प्रेमोमे द्वन्द्व हो तो मै जानता हूँ कि द्वन्द्व स्वय उस मनुष्यके भीतर है। इसलिए मै उसे इस बातके लिए आमन्त्रित करूँगा कि वह अपने भीतर खोज करे। जब आपको मानव-प्रेम ईश्वर-प्रेमसे विच्छिन्न लगता है तो उसके मूलमे आपको कोई अधम उद्देश्य मिलेगा। ईश्वर-प्रेमके बिना सच्चा मानव-प्रेम मै असम्भव मानता हूँ।

प्र० : पाखण्ड और झूठी बदनामीका कैसे मुकाबला किया जाये ?

उ०. दोनोकी उपेक्षा करके। यह आन्दोलन ईश्वरकी प्रेरणासे विहीन कभी नही रहा है। उस प्रेरणाके बिना मै अपनेको एक विश्वव्यापी आन्दोलन चलानेके अयोग्य मानता हूँ। आन्दोलनकी किसी भी उपलब्धिके लिए मैंने अपनेको कभी उत्तरदायी नही माना है। परन्तु आन्दोलनका यदि कोई बुरा प्रभाव पडा है तो उसके लिए मैंने अपनेको सदा उत्तरदायी समझा है, क्योकि मै ईश्वरके हाथोमें एक दुर्बल और दोषमय यन्त्र हूँ। लेकिन मैंने इस आन्दोलनकी खोज नही की है, यह सीधे मुझे ईश्वरसे मिला है। अनुभवसे मै यह बात जानता हूँ कि ईश्वरमें जीवन्त आस्थाके बिना इस आन्दोलनका सचालन असम्भव होगा।

प्र० : जर्मनी आज इतना पीड़ित है, आप वहाँ क्यो नहीं जाते ?

उ० : मुझे वहाँ जाकर बडी प्रसन्नता होती, पर कार्यक्रम इसकी अनुमति नही देता। मेरा हृदय जर्मनीमे था, जर्मनीमे है। पर मै लाचार रहा हूँ।

प्र० : क्या मिस्र अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकता है ?

उ० : निस्सन्देह। यदि भारत स्वाधीन हो जाता है, तो मिस्र अपने-आप स्वाधीन हो जायेगा। भारतका स्वाधीन होना इतनी विराट् और दूरगामी घटना होगी कि हर देशमें नये जीवनकी धडकन सुनाई देगी। वह महान् और शानदार चीज होगी।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

२६१. बातचीत : रोमाँ रोलाँसे

विलेन्यूव
९ दिसम्बर, १९३१

गांधीजी. मैकडॉनाल्डकी ईमानदारीमे मेरा विश्वास है भी और नही भी है, क्योकि एक तरहसे वे उस घोषणापर कायम रहना चाहते हैं जो उन्होने की है, पर उन्हें यह भी जानना चाहिए कि उस घोषणाका अर्थ केन्द्रमें उत्तरदायी शासनकी स्थापना नही है, जब कि वे कहते हैं कि उसमे यह चीज है और इस तरह जो बात सच नही है उसका हमे विश्वास दिलाना चाहते हैं। एक और अर्थमे भी मुझे वे ईमानदार नही लगे — अपनी बातचीतमे उनका रुख खुला नही था, टालमटोलका था। इसलिए उनके बारेमे मै पूर्णत. अच्छी राय कायम नही कर सका। अपने कधोंपर वे ऐसा दायित्व लिये हुए है जिसे वे ठीकसे वहन नही कर पाते। उनपर कामका बहुत बोझ है और मुझसे निबटना उनके लिए कठिन हो रहा है। मै उन्हे एक योद्धा लगता हूँ; और दूसरी ओर, मेरी माँग इतनी ऊँची लगती है कि वे मुझे फँसा नही पाते। इसीलिए मुझे उनमें ईमानदारीकी कमीका आभास मिलता है। मगर हो सकता है, यह उनकी ईमानदारीकी कमी न होकर उनकी दुर्बलता ही हो।

रोमाँ रोलाँ : भारतके बारेमें उन्होंने काफी सुन्दर लिखा था।

गांधीजी : उनके विचार आज भी अनुकूल है। पर तब उनपर कोई दायित्व नही था। आज है।

रोमाँ रोलाँ : उनका वक्तव्य ठीक नहीं था। गोलमेज परिषद्के आपके आखिरी भाषणने बहुत-से लोगोंके दिलोंको छुआ है।

गांधीजी : "साफ-साफ बोल्शेविक विचारोंसे प्रेरित असाधारण भाषण।" वह भाषण संघ-संरचना समितिकी उस बैठकमे दिया गया था जिसमे व्यापार-सम्बन्धी भेदभावके बारेमे विचार किया जा रहा था। उससे मेरे मित्रोमे बेचैनी पैदा हो गई। मैंने कहा था कि मैं या कांग्रेस किसी व्यक्तिके विरुद्ध इसलिए भेदभाव नही करेंगे कि वह अंग्रेज है। पर अन्य आधारोंपर भेदभाव होगा, और मैंने उनके आगे यह फार्मूला रखा : कोई भी हित, जो राष्ट्रीय हितके विरुद्ध है या वैध रूपसे अर्जित नही है, राज्य द्वारा ले लिया जायेगा, और मैंने कहा कि यह बात भारत-स्थित यूरोपीयोंपर भी लागू होगी। मैंने यह भी कहा कि ऐसा कार्यपालिकाके किसी आदेश द्वारा नही, बल्कि संघीय न्यायालयके आदेश द्वारा किया जायेगा।

[यह अध्यादेश] एक अमानवीय दस्तावेज है—रौलट अधिनियमसे भी खराब। भारत सरकारको अपने ही मातहतोंसे जो खतरा है, वह दूसरी तरहकी चीज है। उदार किस्मके निर्देशोंकी, जो विरले ही होते है, वह उपेक्षा करती है। परन्तु सभी ध्वंसात्मक निर्देशोंके पालनके लिए वह सदा तैयार रहती है, जब कि केन्द्रीय सत्ता अनुशासनका पालन नही करवा पाती। भारतके असैनिक अधिकारी-वर्गको मैंने सबसे बडी राजनीतिक गुप्त संसद (फ्रीमेसनरी) कहा है। इस असैनिक अधिकारी-वर्गकी सर्प-कुण्डलीके सामने खुफिया विभाग कुछ नही है। . . .

रोमाँ रोलाँ : जर्मन युवा-वर्ग युद्धसे पहलेकी अपेक्षा अब बिलकुल बदल गया है। युद्धसे पहले वहाँके युवकोंका सत्ताके ठोस मूल्यमें विश्वास था। वे उसे अब चूर-चूर होते देख चुके हैं। नया युवक सापेक्षताकी स्थितिमें रह रहा है—इसमें कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि वे आईन्स्टीनके देशके हैं। जर्मन युवकोंको फ्रांस पुराने मूल्योंका देश लगता है, इसलिए जर्मन युवक नये आदर्शोंका अनुसरण करनेको तैयार हैं। वे फ्रांससे रुष्ट हैं, क्योंकि वह वर्त्तमानके सिरपर पड़ा अतीतका एक निरर्थक बोझ है। यूरोपके विषयमें हम विजेताको देखकर कोई धारणा नहीं बना सकते।

गांधीजी : भारतीय युवकोमे चाहे बहुत बडे बलिदानकी क्षमता न हो, पर वे अप्रतिरोधके प्रभावमें आ रहे है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य : नारायण देसाई

२६२. भाषण : इंटरनेशनल सेनेटोरियममें

विलेन्यूव, जिनेवा
९ दिसम्बर, १९३१

जल्दीमे ही सही, लेकिन मैं यहाँ आ सका, यह मेरे लिए बहुत खुशीकी बात है। आप लोग सुखद परिवेशके बीच स्थित इस सुन्दर भवनमे रह रहे है, यह आपके लिए अवश्य ही आनदका विषय होगा। आपने ठीक ही कहा है कि इस आरोग्यशाला (सेनेटोरियम) को केवल शारीरिक रोग ठीक करनेका काम ही नही करना चाहिए, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय सौहार्दको भी बढावा देना चाहिए। हम देखते है कि शारीरिक आरोग्यका तो जीवनमे, आखिरकार, गौण महत्त्व ही है। शरीरको हुई क्षतिको तो आदमी सह भी सकता है, लेकिन आत्माको हुई क्षतिको नही। इसलिए मुझे यह देखकर बडी खुशी होती है कि आप आत्मासे सम्बन्धित चीजोंकी ओर भी ध्यान दे रहे हैं। मेरी यही कामना है कि आप अनेक वर्ष जीकर सेवा-कार्य करें, यहाँ रहनेवाले लोग पूर्ण स्वस्थ जीवनको प्राप्त करे और तत्पश्चात् अन्तर-राष्ट्रीय सौहार्द बढानेके लिए उपयोगी काम करे।

प्र० : क्या मनोप्रभाव रोगको ठीक करनेमें सहायक होते है?

उ० : मुझे ऐसी आशका है कि जबतक मानव-जातिका अस्तित्व है, रोग तो उसके साथ लगे ही रहेगें। अगर मेरी चले तो मैं डाक्टरी इलाजको घटाकर कमसे-कम कर दूँ। यह नियम मैंने न केवल अपने जीवनमे बल्कि अपने सैंकडों साथियोंके जीवनमें भी लागू किया है। मेरा खयाल है कि हमे जो रोग होते हैं, उनमें से अधिकांशका उपचार स्वास्थ्य-सफाईके नियमोंका पालन करनेसे हो सकता है, और मैं मानता हूँ कि जीवनमे, जो हर कदमपर खतरोसे भरा हुआ है, हमें गम्भीर खतरोंको भी अपनाना चाहिए। इस बातसे हमे रुग्णावस्थामे बडी सान्त्वना मिली है। नियम यह है : हमें ऐसी सेवा-सुविधाकी बात भी मनमे नही लानी चाहिए जो दुनियाके सभी हिस्सोंमे रहनेवाले करोडो लोगोको नही मिल सकती। उदाहरणके लिए, यहाँके चिकित्साशास्त्रके सौभाग्यशाली प्रोफेसरो और विद्यार्थियोको तो यह सेवा-सुविधा प्राप्त हो सकती है, लेकिन आपकी तरह रुग्ण करोडो लोगोंको नही मिलती। यह बात मैं इस आरोग्यशालाकी आलोचना करनेके लिए नही कह रहा हूँ, बल्कि इसलिए कह रहा हूँ कि व्यक्तिगत रूपसे मैं ऐसी आरोग्यशालाओको पसन्द नही करता। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि अगर दुनियाके सभी लखपती लोग अपना सारा धन लगा दे तब भी वह, लोगोंको जिन लाखों आरोग्यशालाओकी आवश्यकता है, उनके निर्माणके लिए पूरा नही पडेगा। आरोग्यके नियमोको हमे इस हदतक कम कर देना चाहिए कि गरीबसे-गरीब लोग भी अपने जीवनमे उनका पालन कर सके।

मै रोगको ठीक करनेकी दृष्टिसे मनोप्रभावकी चर्चापर आता हूँ। इस चीजमे बहुत हदतक मेरा विश्वास है। मै मानता हूँ कि स्वस्थ शरीरमे ही स्वस्थ मनका निवास होता है, और अगर आप लोग, जो कि चिकित्साशास्त्रके छात्र है, शरीरमे होनेवाले रोगोका विश्लेषण करे तो आप पायेगे कि उनमे से अधिकाशसे बचा जा सकता है और रोग पैदा करने तथा उसे बढानेमे मनका बडा हाथ होता है। इसके विपरीत, यदि हम अपने शरीरको ज्यादा लाड देनेके बजाय सहनशक्तिका विकास करे तो हम इन रोगोसे मुक्ति पा सकते है। जैसा कि आपमे से कुछ लोगोको मालूम होगा, एक नीम-हकीमकी तरह मै इस विषयका अध्ययन और इससे सम्बन्धित प्रयोग पिछले ३५ सालोसे कर रहा हूँ। इसलिए मै तो अपने अनुभव घटोतक बताता रह सकता हूँ।

प्र०: शारीरिक श्रमका नैतिक महत्त्व क्या है?

उ० इसको मै इतना अधिक महत्त्व देता हूँ कि मैने जो सस्थाएँ स्थापित की है, उनमे रहनेवालो के लिए इसे एक पवित्र कर्त्तव्य माना गया है, और जो शारीरिक श्रम नही करता, वह चोरीका खाता है। जिसने पर्याप्त शारीरिक श्रम नही किया है, वह भोजनका अधिकारी नही है और मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही कि जब आदमी शारीरिक श्रमसे जी चुराता है तो वह अपने नैतिक विकासको रोकता है और मुझे पूरा विश्वास है कि यदि हम शारीरिक श्रमकी महत्ताको स्वीकार कर ले तो बहुत-सी बुराइयाँ अपने-आप मिट जायेगी। रोटीके लिए श्रमका नियम यह था कि जिसने रोटीके लिए काम किया हो वही उसका अधिकारी है। आप देखते है कि जब ईसा मसीहने कहा कि 'तुम अपनी रोटी अपने ललाटके पसीनेसे कमाओगे' तब उन्होने इस नियमका प्रतिपादन किया था। अगर इस नियमका पालन किया जाये तो दुनियामे बहुत कम व्याधियाँ होगी और आज धरतीपर जो घृणित चीजे देखनेको मिलती है उनमे से बहुत कम रह जायेगी।

प्र०: क्या यूरोपमें पूरी तरहसे आपके विचारोंके अनुसार जीवन व्यतीत करना सम्भव नहीं है?

उ०: असम्भव तो नही है, लेकिन कठिन अवश्य है। लेकिन कोई विचार कितना भी कठिन हो, उसे कार्य-रूप देनेके लिए पूरे साहस और लगनसे प्रयत्न करना आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य: नारायण देसाई

२६३. भाषण: एक सभामें[1]

जिनेवा
१० दिसम्बर, १९३१

आपके देशके शानदार प्राकृतिक दृश्योके बारेमे मैंने वहुत-कुछ सुना है, परन्तु जो-कुछ देखा, वह मेरी आशाओसे भी अधिक निकला। जो प्रेम मुझे यहाँ मिला है, उससे आपके देशके प्राकृतिक दृश्योको देखनेका आनन्द और वढ गया है। काश, मेरे पास अधिक समय होता और मैं अलग-अलग लोगोसे परिचित हो पाता और आपके इस देशके सुन्दर स्थलोको देख सकता! परन्तु मुझे आपके सामने अपने इस आनन्दका वर्णन करनेके लिए आपको रोके नही रखना चाहिए। मुझे मालूम है कि आप सब लोग, जो इस सभामें आये हैं, मध्याह्न-भोजनके अपने अवकाशसे वचित हो गये हैं और मुझे आपका यह वहुमूल्य समय अपने आनन्दकी चर्चामे नष्ट नही करना चाहिए। मैं आपसे उस चीजकी चर्चा करना चाहता हूँ जिसके लिए मेरा जीवन समर्पित है और जिसका विशेप रूपसे इतने वडे पैमाने पर परीक्षण हो रहा है जितने वडे पैमानेपर ससारमें पहले कभी नही हुआ था। मेरा आशय उन साधनोंसे है जो भारतमे स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए अपनाये गये है। इतिहास यह दिखाता है कि लोगोंको जव पराधीन कर लिया गया है और उन्होंने पराधीनतासे मुक्त होना चाहा है, तो उन्होंने विद्रोह किया है और शस्त्रोंके उपयोगका सहारा लिया है। दूसरी ओर, भारतमे हमने ऐसे साधनोका सहारा लिया है जो विशुद्ध रूपसे अहिंसात्मक और शान्तिपूर्ण है। वाहरके लोगोंने इस बातकी साक्षी भरी है और मैं यहाँ इसकी साक्षी भरता हूँ कि हम अपने ध्येयकी प्राप्तिमें वहुत हदतक सफल हो गये लगते है। मैं जानता हूँ कि अभी परीक्षण चल रहा है। पूर्ण सफलताका मैं अभी दावा नही कर सकता। पर मैं आपसे यह कहनेकी हिम्मत करता हूँ कि यह अनुभव इतना आगे वढ चुका है कि इसका अध्ययन करना एक योग्य कार्य होगा। मैं यह भी कहता हूँ कि यदि यह परीक्षण पूर्णतया सफल हो जाता है, तो यह विश्व-शान्तिमे, जिसके लिए दुनिया आज प्यासी है, भारतका एक वडा योगदान होगा। आपके इस महान् देशमे राष्ट्र-सघका केन्द्रीय कार्यालय है। इस सघसे वडे विलक्षण कार्य करनेकी अपेक्षा की जाती है। इससे यह अपेक्षा की जाती है कि यह युद्धको समाप्त कर देगा और, अपनी निजी शक्तिसे, परस्पर मतभेद रखनेवाले राष्ट्रोके वीच मध्यस्थका काम करेगा। परन्तु मुझे सदा ऐसा लगा है कि संघको आवश्यक सत्ता प्राप्त नही है। यह यदि बिलकुल

१. यह सभा इटरनेशनल वीमेंस लीग फॉर पीस ऐंड फ्रीडम (अन्तर्राष्ट्रीय महिला शान्ति-स्वतन्त्रता संघ)के तत्त्वावधानमें मध्याह्न-भोजनके समय विक्टोरिया हॉलमें आयोजित की गई थी और इसमें लगभग २००० लोग उपस्थित थे।

नही तो ज्यादातर सम्बन्धित राष्ट्रोके निर्णयपर निर्भर है, और इसे निर्भर रहना भी है। मैं आपसे यह कहनेकी हिम्मत करता हूँ कि भारतमें हमने जिन साधनोकी हिमायत की है, वे न केवल इस सघ-जैसे सगठनको, बल्कि विश्वके इस महान् उदेश्यको लेकर चलनेवाले किसी भी विश्व-सगठनको अपनी बात मनवानेके लिए आवश्यक शक्ति प्रदान करते है, परन्तु आपसे इस आन्दोलनकी विभिन्न अवस्थाओकी चर्चा कर मुझे आपको ज्यादा देर रोके रखना नही चाहिए। आपको इस आन्दोलनका केवल परिचय देकर और यह बताकर ही मुझे सन्तोष कर लेना चाहिए कि यदि यह आन्दोलन सफल हो जाता है तो इसके कितने सुन्दर परिणाम होगे। मेरे पास बहुत-से प्रश्न आये है, और मैं आपको अपनी जिज्ञासाएँ शान्त करनेके लिए यथासम्भव अधिकसे-अधिक समय दे सकूँ, इस खयालसे मैंने आपको इस आन्दोलनका बहुत थोडे समयमें सिर्फ सक्षिप्त परिचय दे दिया है। अबतक मै दस निमट ले चुका हूँ। मै केवल थोड़े-से सवाल ले रहा हूँ, जो एम० प्रिवाने छाँटे है।

एक प्रश्न यह है कि लन्दनमे मैंने क्या कहा और क्या नही कहा।

मेरे मुँहसे यह कहलवाया गया है: "आतकवाद और हिंसासे मेरी कोई सहानुभूति नही है। परन्तु यदि आवश्यक हुआ तो भारत हिंसाका सहारा लेगा, इसे आप चाहे जो नाम दीजिए।"

वह पैरा मैंने सुधारनेके लिए सम्पादकके पास भेजा, लेकिन सुधार करनेके बाद सामने आई वह भी पहली रिपोर्टकी पूरी पुष्टि करती है। परन्तु मैंने देखा कि उन्होने भाषणोके वे अश नही छापे जिनसे उन्होने — जैसा कि वे बताते है — ये उद्धरण लिये है। गोलमेज परिषद्के मेरे सभी भाषणोंकी सरकारी रिपोर्ट छपी है, और मै आपसे केवल यही कह सकता हूँ कि उन भाषणोमे कही एक शब्द भी ऐसा नही मिल सकेगा जो इस कथनकी पुष्टि करता हो। फिर, यह कहा गया है कि मैंने इसी तरहकी बात कुछ अन्य भाषणोमे भी कही है। इस बीच मै आपसे यह निवेदन करता हूँ कि आप मेरी बातपर विश्वास करे कि मैंने इस तरहकी बात कभी नही कही है कि यदि आवश्यक हुआ तो जन-साधारण हिंसाका सहारा लेगा। होशोहवासमे रहते हुए इस तरहका बयान देना मै अपने लिए असम्भव मानता हूँ। अहिंसा नीति नही बल्कि धर्म है। मै ईश्वरसे यही प्रार्थना करूँगा कि वह मुझे इतनी आस्था दे कि मै हिंसाका किसी भी रूपमे समर्थन करनेकी बजाय अपना जीवन बलिदान कर सकूँ। इस मामलेने क्योकि कुछ स्थानीय महत्त्व प्राप्त कर लिया है, इसलिए मैं उस संवाददातासे सादर माँग करता हूँ कि वह अपना नाम प्रकट करे और रिपोर्टको फिरसे प्रस्तुत करे। यद्यपि कल मै आपके क्षेत्रसे बाहर हूँगा, पर मै आपको पूर्ण सन्तोष देनेकी कोशिश करूँगा, फिर चाहे मै भारतसे बाहर ही क्यो न रहूँ। मै ऐसा इसलिए करना चाहता हूँ क्योकि मुझे आपकी सद्भावना चाहिए। मेरे आन्दोलनको और मुझे आपके सामनेकी गई अपनी इस घोषणाके साथ ही जीना या मरना है कि मुझे हर हालतमे विशुद्ध अहिंसा के मार्गपर अडिग

रहना है। साथ ही एक व्यक्तिगत स्पष्टीकरण पर मैंने जो आपके कुछ-एक मिनट लिये हैं, उसके लिए मै आपसे क्षमा चाहता हूँ।

प्र० : समाचार-पत्रोंने जब यह रिपोर्ट दी कि आपने सैनिकोंको हवामें गोली चलानेकी सलाह दी थी, तो आपने उसका इतना गम्भीर विरोध क्यों किया?

उ० : मैंने गम्भीर विरोध किया या नही, यह मै नही जानता। पर मैंने अपनी स्थिति स्पष्ट की थी। मै नही चाहता कि एक भी सैनिक सेनामे सेवा करनेकी शपथ लेनेके बाद, हवामे गोली चलाकर लोगोको गुमराह करे। मै अपनेको एक सैनिक मानता हूँ — शान्तिका सैनिक। अनुशासन और सत्यके मूल्यको मै जानता हूँ और मैं सैनिक-कर्त्तव्यके निर्वाहके लिए शपथबद्ध किसी सैनिकके लिए इस बातको पौरुष-हीनता समझूंगा कि वह जब हवामे गोली चलाकर आदेशका उल्लघन करता है तब उसके परिणामोको ग्रहण न करे। मेरी रायमे यदि कोई सैनिक इस निष्कर्षपर पहुँचता है कि यह कार्य अमानवीय तथा मनुष्यके गौरवको घटानेवाला है, तो उसे हथियार रख देने चाहिए और आज्ञोल्लघनका दण्ड भुगतना चाहिए।

प्र० : मजदूर हिंसाके बिना न्याय कैसे प्राप्त कर सकते हैं? यदि पूँजीपति बलप्रयोग करते हैं तो मजदूर दबावका उपयोग क्यों न करे?

उ० . यह पुराना कानून है, जगलका कानून — घूँसेका जवाब घूँसा। और मै आपको बता चुका हूँ कि यह प्रयोग मै मुख्यत. जगलके उस कानूनका विकल्प पानेके लिए ही कर रहा हूँ जो मनुष्यकी गरिमाके विरुद्ध है। शायद आपको पता नही है कि मैं अहमदाबादके एक मजदूर-सघका प्रधान सलाहकार माना जाता हूँ और यह सघ मजदूर समस्याओके विशेषज्ञोकी सराहना प्राप्त कर चुका है। इस मजदूर-सघके द्वारा हम मालिकों और कर्मचारियोंके बीच उठनेवाले सवालोको सुलझानेके लिए अहिंसाके तरीके काममे लानेकी कोशिश कर रहे है। इसलिए जो-कुछ मै अब आपको बताने जा रहा हूँ वह वास्तविक अनुभवपर आधारित है — बिलकुल उसी क्षेत्रकी बात है जिसके बारेमे यह प्रश्न पूछा गया है। मेरी विनम्र रायमे, मजदूरोमे यदि एकता हो और वे आत्म-बलिदानको तैयार हो तो वे अपनी रक्षा कर सकते है। पूँजीवाद चाहे कितना ही उत्पीडक क्यो न हो, पर मुझे विश्वास है कि जो लोग मजदूरोंसे सम्बद्ध है और उनका मार्गदर्शन कर रहे है उन्हे यह पता नही है कि मजदूरोके पास ऐसे साधन है जो पूँजीपतियोके पास कदापि नही हो सकते। मजदूर यदि सिर्फ यह समझ ले कि पूँजी श्रमके बिना बिलकुल असहाय है, तो मजदूर आसानीसे अपनी शक्ति प्राप्त कर लेगे। दुर्भाग्यसे हम पूँजीके इस सम्मोहनकारी सकेत और प्रभावके अधीन हो गये है कि पृथ्वीपर पूँजी ही सब-कुछ है। परन्तु क्षण-भर सोचनेसे ही यह स्पष्ट हो जायेगा कि मजदूरोंके पास ऐसी पूँजी है जो पूँजीपतियोंके पास कभी नही होती। रस्किनने अपने युगमे यह सिखाया था कि मजदूरोको अनुपम अवसर प्राप्त है। परन्तु उनकी बात हमारे पल्ले ही नही पडी इस समय एक अग्रेज इसी तरहका प्रयोग कर रहा है। वह अर्थशास्त्री और पूँजीपति भी है। परन्तु अपनी आर्थिक शोधोसे वह उन्ही निष्कर्षोपर पहुँचा है जिनपर रस्किन

अन्त.प्रेरणासे पहुँचे थे, और उसने एक महत्त्वपूर्ण सदेशकी फिरसे याद दिलाई है। वह कहता है कि यह सोचना कि धातुका एक टुकडा पूँजी है, गलत है; यह सोचना भी गलत है कि उत्पादनका अमुक हिस्सा पूँजी है। वह आगे कहता है कि यदि हम मूल स्रोततक जाये तो पायेंगे श्रम ही पूँजी है और जीवन्त पूँजीको अर्थशास्त्रकी शब्दावलीमे बाँधा नही किया जा सकता, वह अनन्त है। उसी नियम और सत्यके आधारपर, हम अहमदाबादके मजदूर-सघको चला रहे है और सरकारसे लड रहे है। यह वही नियम है जिसे स्वीकार करनेसे चम्पारनमे १,७००,००० लोगोको एक युगसे चली आती दासतासे मुक्ति मिली। वह जुल्म किस तरहका था,[1] यह बताकर मुझे आपको अटकाये नही रखना चाहिए। पर जिनकी उस समस्यामें दिलचस्पी है, वे हर उस तथ्यका, जो मैंने आपके आगे रखा है, अध्ययन कर सकते है। अब मै आपको यह बताता हूँ कि हमने क्या किया है। अंग्रेजी भाषामे — बल्कि सभी भाषाओमे — एक बहुत ही सशक्त शब्द है। वह शब्द है — 'नो' (नही)। भेदकी बात यह है कि जब पूँजी श्रमसे 'हाँ' कहलवाना चाहती है तो श्रम गरज-कर कहता है 'नही'! और श्रम शीघ्र ही यह समझ जाता है कि यदि वह 'नही' कहना चाहे तो उसके आगे 'नही' कहनेका विकल्प है। उसे डरनेकी जरूरत नही है। इस बातसे कि पूँजीके पास बन्दूके और जहरीली गैस है, जरा भी फर्क नही पडेगा। यदि श्रम अपने 'नही'को अजाम देकर अपनी गरिमाको प्रतिष्ठित कर दे तो पूँजी इतनेसे ही बिलकुल लाचार हो जायेगी। उस हालतमे श्रमिकको प्रत्याक्रमणकी जरूरत नही रह जाती बल्कि वह गोलियों और जहरीली गैसको झेलता हुआ विरोधीके रूपमे खडा रहता है और अपने 'नही' पर जोर देता रहता है। पर श्रमिक प्राय असफल क्यो हो जाता है — यह मै आपको बताता हूँ। जैसा मैंने सुझाया है उस तरहसे पूँजीको असहाय बनानेके बजाय, वह पूँजीपर कब्जा करना और — पूँजीपति शब्दके निकृष्ट अर्थोमे — स्वय पूँजीपति होना चाहता है (यह बात मै खुद श्रमिक होनेके नाते कह रहा हूँ)। इसलिए पूँजीपति, जो ठीक तरह सुरक्षित और सगठित है, श्रमिकमे उसी लक्ष्यकी इच्छा देखकर, श्रमिकके दमनके लिए श्रमिकका ही उपयोग करता है। और यदि हम सचमुच इस सम्मोहन-कारी जादूके वशमे न हो तो हममे से हर स्त्री-पुरुष बिना किसी कठिनाईके इस मूल सचाईको समझ सकेगा। जीवनके विभिन्न क्षेत्रोमे शानदार सफलताएँ प्राप्त करनेके बाद, मै यह बात अधिकारके साथ कह रहा हूँ। मैंने आपके आगे जो चीज रखी है वह अतिमानवीय नही है, बल्कि हर श्रमिकके वशकी है। आप देखेंगे कि श्रमिकसे जो-कुछ करनेके लिए कहा जा रहा है, वह उससे अधिक और कुछ नही है जो स्विस सैनिक आज कर रहे है। स्विस सैनिक, निस्सन्देह, अपना नाश अपनी जेबमे लिये फिरता है। मै चाहता हूँ कि श्रमिक सैनिककी क्रूरताकी, अर्थात् दूसरोको मौतके घाट पहुँचानेकी योग्यताकी नकल न करके, उसके साहसकी नकल करे। और मैं

१. यह वाक्य यंग इंडिया, १०-१२-१९३१ में प्रकाशित महादेव देसाईकी रिपोर्टसे लिया गया है। नीलके खेतोंपर बेगारकी समाप्तिके लिए चलाये गये चम्पारन-सघर्षके ब्योरेके लिए देखिए खण्ड १३-२-१४।

आपसे कहता हूँ कि जो श्रमिक विना हथियार उठाये मृत्युका वरण करता है, वह सिरसे पाँवतक हथियारोसे लैस मनुष्यसे कही ऊँचे साहसका परिचय देता है। यद्यपि यह एक आकर्पक विपय है, पर मुझे, इच्छा न होते हुए भी, इसे छोडकर चौथे प्रश्नपर आना चाहिए।

प्र० : निःशस्त्रीकरण मुख्य रूपसे बड़े देशोंपर निर्भर है, फिर स्विट्जरलैंड-जैसे छोटे, तटस्थ और अनाक्रामक देशपर उसे क्यो लादा जाये?

उ० : पहली बात तो यह कि आपकी इस तटस्थ धरतीसे मैं केवल स्विट्जरलैंड के आगे नही, वल्कि सभी देशोके आगे अपनी बात रख रहा हूँ। यदि आप इस सन्देशको यूरोपके अन्य भागोमे ले जाये, तो मैं सारे आरोपसे मुक्त हो जाऊँगा। स्विट्जरलैंड क्योंकि तटस्थ और अनाक्रामक देश है, इसलिए स्विट्जरलैंडको इस सेनाकी जरूरत नही है। दूसरे, आपसे यह बात मैंने आपकी अतिथिपरायणता और आपकी विशेष सुविधापूर्ण स्थितिके कारण कही। क्या आपके लिए यह बेहतर नही होगा कि आप ससारको निरस्त्रीकरणका पाठ सिखाएँ और यह दिखा दे कि आप इतने वीर हैं कि सेनाके विना अपना काम चला सकते हैं?

प्र० : सेनाके विकासकी पवित्र परम्पराओंकी आप उपेक्षा क्यो करते हैं? क्या आपको यह नहीं मालूम कि स्विस सेनाकी मात्र उपस्थितिने ही हमें विदेशी सेनाओं द्वारा रौंदे जानेकी विभीषिकासे बचाया था?

उ० : प्रश्नकर्त्ता क्या मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करेंगे कि इस प्रश्नमे दोहरा अज्ञान छिपा है? वे इस वातपर दु:ख प्रकट करते हैं कि यदि आप सैनिकका पेशा छोड देते हैं तो आपको सेवा और वलिदानकी जो शिक्षा मिलती है वह नही मिलेगी। किसीको यह न मान बैठना चाहिए कि सेनामें भरती होनेसे छुटकारा मिल जानेका मतलव यह है कि वह किसी और भी कठिन और उदात्त काममें नही लगाया जायेगा मैं जव आपसे श्रमके विषयमे बोल रहा था तो मैंने आपको वताया था कि श्रमको सेनाके सभी महान गुण — सहन-शक्ति, मौतको चुनौती और वलिदान — आत्मसात् करने चाहिए। आप यदि अपनेको निरस्त्र करेंगे तो इसका अर्थ यह नही है कि आप मौज उडायेंगे। सैनिकका पेशा यदि आप छोड देते है तो यह नही होगा कि आप अपने घरोंकी सेवाके कर्त्तव्यसे मुक्त हो जायेंगे। इसके विपरीत, आपकी स्त्रियाँ और बच्चेतक आपके घरोकी रक्षामें भाग लेंगे। यह वात भी मैं आपसे विना अनुभवके नही कह रहा हूँ। जो छोटी-सी सस्था[1] हम चला रहे है, उसमे हम स्त्रियो और बच्चोतक को सस्थाकी रक्षा करनेकी शिक्षा दे रहे हैं, क्योंकि हम चोरो और लुटेरोके बीच रह रहे हैं। जैसे ही आप दूसरोके जीवनकी रक्षाके लिए अपना स्वयका जीवन देना सीख लेते हैं, हर चीज सहज और सरल हो जाती है। और अन्तमे यह चीज सचमुच भुला दी गई है कि जो सुरक्षा व्यक्तिको सर्वथा निर्दोष और अनपकारी बननेसे प्राप्त होती

१. आशय यहाँ सावरमतीके सत्याग्रह आश्रमसे है।

है, वह अधिकसे-अधिक मात्रामे शस्त्रास्त्र उपलब्ध होनेसे भी प्राप्त नही हो सकती। अज्ञानका दूसरा भाग प्रश्नके दूसरे भागमें है। मै इस कथनको सच माननेसे नम्रतापूर्वक इनकार करता हूँ कि स्विस सेनाकी उपस्थितिने स्विट्जरलैंडको युद्धकी लपेटसे बचाया। बेल्जियमकी अपनी सेना थी, पर वह बचा नही। आप मेरी इस बातपर यकीन करे कि यदि विरोधी सेनाएँ स्विट्जरलैंडमे से गुजरना चाहती तो वे आपसे भी लड़ती। आप भी बदलेमे लड सकते थे, पर अहिंसासे आप कही ज्यादा अच्छी तरह लड सकते थे।

प्र० : एक तटस्थ देशके लिए क्या यह कायरता नहीं होगी कि वह किसी और देशको अपने क्षेत्रमें से गुजरने दे और तीसरे देशकी पीठमें छुरा भोंकने दे? एक तटस्थ देश, जो निःशस्त्र हो गया है, इस तरहकी कार्रवाईको कैसे रोक सकता है?

उ० : यह जोखिम उठाते हुए भी कि मुझे कल्पना-लोकमें रहनेवाला या मूर्ख समझा जा सकता है, मुझे इसका जवाब उसी ढगसे देना चाहिए जो मुझे मालूम है। यदि आप अपने देशको किसी सेनाके हाथो तबाह होने देते है तो तटस्थ देशके नाते यह आपकी कायरता होगी। पर अभी क्षण-भर पहले मैंने आपको बताया था कि युद्धके सैनिको और अहिंसाके सैनिकोमें एक चीज समान है। यदि मै स्विट्जरलैंडका नागरिक या इस सघीय राज्यका प्रधान होता तो मै यह करता कि उस सेनाको रसद और परिवहनकी कोई सुविधा न देकर उसे रास्ता देनेसे इनकार कर देता। दूसरे, स्विट्जरलैंडमे फिरसे एक थर्मोपली रचकर आप पुरुषो, स्त्रियो और बच्चोकी एक जीती-जागती दीवार खडी कर सकते थे और उन्हे अपनी लाशोपर से गुजरनेका निमन्त्रण दे सकते थे। आप कह सकते है कि इस तरहकी चीज मानव-अनुभव और मनुष्यकी सहन-शक्तिसे परे है। पर मै आपको बता सकता हूँ कि पिछले साल हमने जो-कुछ किया उसके बाद यह मानव-अनुभवसे परेकी चीज नही रही। हमने दिखा दिया कि यह बिलकुल सम्भव है। स्त्रियोने जरा भी कायरता दिखाये बिना लाठियाँ खाई। पेशावरमे हजारो लोगोने किसी भी तरहकी हिंसाका सहारा लिये बिना गोलियोकी बौछार सही। सुरक्षित मार्ग चाहनेवाली किसी सेनाके सामने इस तरहके स्त्री-पुरुषोके खडे हो जानेकी जरा कल्पना तो कीजिए। आप कहेंगे कि उनके ऊपरसे जाना तो बहुत नृशंसतापूर्ण होगा; पर फिर भी आप अपना कर्त्तव्य पूरा कर देते और - अपने-आपको नष्ट हो जाने देते। जो सेना लाशोके ऊपरसे जानेकी हिम्मत करती है, वह भी उस अनुभवको दोहरा नही सकेगी। आप चाहे तो साधारण स्त्री-पुरुषोमे इस तरहके साहसकी सम्भावनापर अविश्वास कर सकते है। पर आपको यह मानना होगा कि अहिंसा अधिक कड़ी धातुकी बनी है। वह कमजोरोका हथियार कभी नही मानी गई बल्कि खूब मजबूत हृदय रखनेवालों का हथियार मानी गई है।

प्र० : अन्तर्राष्ट्रीय रेड क्रॉस विश्वको एक विशिष्ट देन है। आपका इसके बारेमें क्या खयाल है? इसने हजारोंका जीवन बचाया है न?

उ० : मै यह स्वीकार करते हुए लज्जाका अनुभव करता हूँ कि इस अद्भुत और शानदार सगठनके इतिहासकी मुझे जानकारी नही है। यदि इसने लाखों लोगोको

बचाया है तो मैं इसका अभिवादन करता हूँ। परन्तु इस सम्मान-प्रदर्शनके बाद, क्या मैं यह निवेदन कर सकता हूँ कि इस संगठनको युद्धके बाद सहायता देनेकी बात नही सोचनी चाहिए, बल्कि युद्धके बिना सहायता देनेकी बात सोचनी चाहिए। यदि युद्धमे उसके दोपको कम करनेवाली कुछ विशेषताएँ न होती, उसके पीछे साहस न होता तो वह घृणित चीज होती, और उसे नष्ट करनेके लिए किसी भाषणकी आवश्यकता न पडती। परन्तु जो चीज आपको यहाँ सुझाई जा रही है वह युद्धकी सभी शाखाओंसे, जिसमे रेड क्रॉस संगठन भी आ जाता है, बहुत अधिक महान् है। आप मेरी इस बातपर विश्वास कीजिए कि लाखो लोग ऐसे है जो अपनीही गलतीसे कष्टमे पडे हुए है। इस धरतीपर लाखो फटेहाल घर हैं। इसलिए भावी अहिंसात्मक संस्थाएँ जब अन्तर्राष्ट्रीय सेवा प्रारम्भ करेंगी तो उनके लिए करनेको काफी काम होगा। स्विट्जरलैंड इस विषयमे विश्वका मार्ग-प्रदर्शन कर सकता है।

प्र० : क्या आप अलग-अलग संगठनोंके लिए कोई संदेश दे सकते हैं?

उ० : मैं तो यह कहूँगा कि जो प्रश्न पूछे गये है उन सबका उत्तर देते हुए यदि मैंने कोई संदेश नही दिया है, तो मुझे यह मान लेना चाहिए कि मुझमें कोई और सन्देश देनेकी योग्यता नहीं है।

प्र० : हम तो स्वभावतः ईसाई धर्मके सन्देशका अनुगमन करना चाहेंगे, लेकिन कृपया यह बताइए कि आपके सन्देश और ईसाई सन्देशमें क्या अन्तर है?

उ० : मैं कोई मौलिक सन्देश देनेका कतई दावा नही कर रहा हूँ। मेरा सन्देश उतना ही पुराना है जितनी कि यह पृथ्वी और मैं नही जानता कि यह ईसाई संदेशसे तनिक भी भिन्न है। यदि आपका आशय अहिंसासे है, तो मुझे यह जानकर दुःख होना चाहिए कि आपने ईसाके 'गिरि-प्रवचन' की शिक्षाको छोड़ दिया है। यूरोपके ईसाई यदि ईसाके सन्देशको अपने जीवनमें लागू करे तो इससे अधिक प्रसन्नताकी बात मेरे लिए कोई नही होगी। दूसरा प्रश्न अज्ञानका द्योतक है। यदि मैं इसका बाइबिलकी भाषामे उत्तर दूँ तो कहूँगा — जबतक आप अपनेको मिटा देनेको तैयार नहीं हैं, आप अपनेको बचा नही सकते।[1]

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य : नारायण देसाई

१. सेंट मार्क ८/३५ तथा सेंट ल्यूक ९/२४।

२६४. बातचीत : रोमाँ रोलाँसे

[१० दिसम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्][१]

प्र० : मनुष्यमें क्रूरता या दुष्टता इसलिए नहीं आती कि वह क्रूर या दुष्ट बनना चाहता है, बल्कि इसलिए आती है कि उसकी रुचि ही विकृत होती है। इस हालतमें समाजको दायित्वकी भावनासे लगभग शून्य इन लोगोंसे बचानेके लिए अप्रतिरोधकी नीति क्या कर सकती है?

उ० : मुझे हिंसाका प्रयोग करनेकी जरूरत तो बिलकुल नही होगी। अलबत्ता, उन्हे अकुशमे रखना होगा। मै किसी-न-किसी प्रकारकी सामाजिक शक्तिका प्रयोग करूँगा। इसके प्रयोगको मै हिंसा नही कहूँगा। अगर मेरा भाई पागल हो जाता है तो मै उसके हाथोमे बेडियाँ तो पहना ही दूंगा।

जहाँ हिंसा करनेका मन्तव्य न हो वहाँ हिंसा नही होती। इसी तरह वह भी उसमे हिंसाका अनुभव नही करेगा। इसके विपरीत जब उसका दिमाग ठीक होगा, वह मुझे धन्यवाद देगा। पागलपनकी अवस्थामे वह हिंसाका अनुभव करेगा, उसका विरोध भी करेगा। मै इस विरोधका बुरा नही मानूँगा, क्योकि मेरे कार्यके पीछे शुद्ध प्रेमकी प्रेरणा होगी, इसके पीछे तो प्रेममे जो स्वार्थकी भावना होती है वह भी नही होगी। अगर मै उसके हाथ बाँध रहा हूँ तो वह अपनेको चोटसे बचानेके लिए नही। अगर मुझे ऐसा लगे कि उसको बचानेकी कोशिश करते हुए खुद मुझको चोट लगेगी तो मै उस चोटको सहनेके लिए भी सहर्ष तैयार हो जाऊँगा। इसी प्रकारका व्यवहार मै इन अर्धविक्षिप्त लोगोके साथ भी करूँगा, मै उनके साथ रोगी-जैसा व्यवहार करूँगा, उन्हे ऐसे रोगोका इलाज करनेवाले किसी अस्पतालमे रखूँगा, उनको हृदयहीन जेलरोकी देख-रेखमे नही, बल्कि ऐसे चिकित्सकोकी देख-रेखमे रखूँगा जिन्होने उनकी परिस्थितियोका अध्ययन किया हो। मै उन्हे स्नेहपूर्ण सेवासे सराबोर कर दूंगा। इसका मतलब यह होगा कि मै मनुष्यको नही, बल्कि उनके दोषोके लिए जिम्मेवार प्रणालीको सुधारनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य . नारायण देसाई

१. साधन-सूत्रमें तिथिका उल्लेख नही है, लेकिन ये टीपें १० दिसम्बरको जेनेवामें हुई दोनोंकी मुलाकातके बाद ली गईं थीं।

२६५. भेंट : सुखोतिना टॉल्स्टॉयको[1]

रोम

[१३ दिसम्बर, १९३१][2]

सुखोतिना टॉल्स्टॉय : आपसे मिलनेकी आशा मैं जाने कबसे लगाये थी। अगर मेरे पिता जीवित होते तो आपके अहिंसामय स्वातन्त्र्य-संग्रामके बारेमें सुनकर बड़े प्रसन्न होते।

गांधीजी : बेशक। और क्या आप उनकी वही पुत्री हैं जिन्होंने मुझे अपने पिताकी ओरसे वह प्रसिद्ध पत्र[3] लिखा था?

वह दूसरी पुत्री थी। उस पत्रको लेकर टॉल्स्टॉयकी सन्तानोंके खिलाफ जाँच-पड़ताल की गई थी।

सु० टॉ० : हम छः भाई-बहन अभी जीवित हैं। हम दो बहनें तो पिताजी के सिद्धान्तोंपर चलते हैं, लेकिन चारों भाई नहीं। आप जानते ही हैं कि पिताजी ने हम सबको आचार-विचारकी पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है, और यद्यपि मेरे ये भाई उनका बड़ा सम्मान करते थे, लेकिन उनके सिद्धान्तोंको माननेको तैयार नहीं थे।

मैं रोमाँ रोलाँकी मित्र थी।

गांधीजी : थी क्यों? क्या अब उनकी मित्र नहीं हैं?

सु० टॉ० : नहीं, दो साल पहलेतक उनसे मेरी बड़ी मैत्री थी। वे मुझे अकसर पत्र लिखा करते थे और मैं भी लिखती थी।

गांधीजी : पर अब क्या हो गया?

सु० टॉ० : अब मैं देखती हूँ कि बोल्शेविज्म और बोल्शेविक तरीकोंसे उनकी सहानुभूति है। मैं बोल्शेविकोंके ध्येयपर आपत्ति नहीं करती, लेकिन उनका यह सिद्धान्त कि साध्य ठीक है तो उसके लिए चाहे जो भी साधन अपनाना उचित है, मुझे बहुत भयंकर लगता है। रोमाँ रोलाँ, जो अहिंसामें विश्वास करते हैं, उनके साथ कैसे सहानुभूति रख सकते हैं?

गांधीजी : मान लीजिए कि आप जो कहती हैं, सच है। लेकिन उस हालतमें आपके लिए क्या यह और भी जरूरी नहीं हो जाता कि आप उन्हें पत्र लिखकर अपनी भावनाओंसे अवगत करायें? दो साल पूर्वतक आप उनकी मित्र रही हैं, इसलिए क्या आपका यह कर्त्तव्य नहीं है कि आप उन्हें साफ-साफ और पूरी तरह सब-कुछ लिखें? आखिरकार वे टॉल्स्टॉयके बाद यूरोपके एक सबसे सत्यनिष्ठ और

१. महादेव देसाईके "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) से उद्धृत।

२. "दैनन्दिनी, १९३१", में इस तिथिके एक इन्दराजसे।

३. देखिए खण्ड ९, पृष्ठ ६०१।

ईमानदार व्यक्ति हैं। आपके पिताकी तरह ही वे वृद्ध, थके हुए और वर्त्तमान युगके छल-फरेबसे दुःखी आदमी हैं और आपके पिताकी ही तरह उनमें बच्चोंका-सा यह भोलापन है कि अगर कोई — चाहे वह बड़ा बुद्धिमान आदमी हो या मूर्ख — उनको उनकी गलती बताये तो वे उसका अन्यथा अर्थ नहीं लगाते हैं।

सु० टॉ० : मैं जानती हूँ कि उनमें ये सारे गुण हैं। युद्धके दिनोंमें वही एक व्यक्ति थे जो बहादुरीके साथ उसके खिलाफ खड़े रहे और आज भी खड़े हैं। मैं यह भी जानती हूँ कि वे मेरे पितापर अबतक लिखी पुस्तकोंमें से सबसे अच्छी पुस्तकके रचयिता हैं। लेकिन पता नहीं क्यों, मुझे एक संकोच-सा हो रहा है, मैंने वास्तवमें उनके नाम एक पत्र लिखा भी, लेकिन उसे भेजा नहीं है। अगर आप कहें तो अब भेज दूँ।

गांधीजी : भेज दीजिए। मैं चाहता हूँ, आप उसे अवश्य भेजें।

सु० टॉ० : लेकिन तब मैं यह लिख दूँगी कि पत्र आपके कहनेपर भेज रही हूँ।

गांधीजी : हाँ, आप वैसा लिख सकती हैं। मैं भी लिखूँगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-१-१९३२

२६६. भाषण : महिलाओंकी सभा, रोममें[2]

रोम

[१३ दिसम्बर, १९३१][3]

अहिंसक लड़ाईकी खूबसूरती यह है कि इसमें पुरुषोंकी तरह स्त्रियाँ भी हिस्सा ले सकती हैं। हिंसक लड़ाईमें उस तरह हिस्सा लेना स्त्रियोंके बसमें नहीं है जिस तरह पुरुष ले सकते हैं। हिंसक लड़ाईमें स्त्रियोंको ऐसी सुविधा नहीं है, और भारतमें पिछली अहिंसक लड़ाईमें स्त्रियोंने पुरुषोंसे भी अच्छा काम किया है। कारण सीधा-सादा है। अहिंसक लड़ाई अधिक-से-अधिक कष्टसहनकी अपेक्षा रखती है, और स्त्रियोंसे अधिक शुद्ध और उदात्त कष्ट-सहन और कौन कर सकता है? भारतकी स्त्रियाँ परदेसे निकलकर राष्ट्रका काम करनेको आगे आईं। उन्होंने देखा कि राष्ट्र उनसे, केवल वे अपनी-अपनी गृहस्थीकी देख-रेख करें, इससे कुछ अधिक अपेक्षा रखता है। उन्होंने सरकारी आदेशोंको भंग करके नमक बनाया, उन्होंने विदेशी वस्त्रों तथा शराबकी दुकानोंपर धरना दिया और विक्रेता तथा खरीदार दोनोंको इन चीजोंकी खरीद-बिक्रीसे विमुख करनेकी कोशिश की। रातमें देर-देरतक वे अपने हृदयमें उत्साह और दया लेकर शराबखानोंमें शराबियोंको समझाने-बुझानेमें लगी रहीं। उन्होंने जेल-यात्रा की

१. देखिए "पत्र : रोमाँ रोलाँको", २०-१२-१९३१।

२. महादेव देसाईके "लेटर फ्रॉम यूरोप" (यूरोपका पत्र) से उद्धृत।

३. "दैनन्दिनी, १९३१", के एक इन्दराजके अनुसार।

और लाठियोंके इतने प्रहार सहे जितने प्रहार सहनेका साहस पुरुषोंमें भी बहुत कमने ही दिखाया। अगर पाश्चात्य संसारकी स्त्रियाँ पशु-वृत्तिकी बननेमें ही पुरुषोंसे होड़ करनेकी कोशिश करना चाहती हैं, तो फिर भारतकी महिलाओंमें उनके सीखने लायक कुछ नहीं है। उन्हें अपने पुत्रों और पतियोंको लोगोंको मारनेके लिए भेजनेमें आनन्दका अनुभव करना और उनकी बहादुरीपर उन्हें बधाई देना छोड़ना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-१-१९३२

२६७. पत्र : ब्रिस्कोको

१४ दिसम्बर, १९३१

प्रिय श्री ब्रिस्को,

देवदासको लिखा आपका पत्र मिला। मैं आयरलैंड न आ सका और श्री डी वैलेरासे न मिल सका, इसका मुझे दुःख है। मैं वहाँ आनेकी आशा लगाये हुए था, लेकिन भारतसे अत्यावश्यक बुलावा आ जानेके कारण मैं वहाँ आ नहीं सका।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

श्रीमती बडनें मेरे लिए जो तकलीफें उठाईं उनके लिए उनसे मेरा धन्यवाद कहें।

मो० क० गां०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५२०) से; सौजन्य : आर० ब्रिस्को

२६८. एक ऑटोग्राफ

[१५ दिसम्बर, १९३१ या उसके पूर्व][1]

सत्यनिष्ठ बनो

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३३३) से।

१. इसी सफेपर गांधीजी के ऑटोग्राफके नीचे मदनमोहन मालवीयके भी ऑटोग्राफ हैं। उसमें उन्होंने १५ दिसम्बर, १९३१ की तारीख दी है।

२६९. पत्र : देवी वेस्टको

एस० एस० 'पिलसना'
१५ दिसम्बर, १९३१

प्रिय देवी,[1]

मैं बराबर पत्र लिखना चाहता रहा, लेकिन समय ही नही मिल पाया। आज हम लाल सागरमे है। पहले मै जो सो नही पाया, अब धीरे-धीरे उसकी कसर निकाल रहा हूँ और बीच-बीचमे पत्र लिखता रहता हूँ। मुझे म्युरियलसे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुमने उसके पास जाना तय किया है। किंग्सले हॉलके लिए तुम बडे कामकी सिद्ध होगी और मै जानता हूँ कि तुम वहाँ सुखी भी रहोगी। मुझे नियमित रूपसे पत्र लिखती रहना।

हमारे दलमे नौ लोग है और हम सब डेकपर ही यात्रा कर रहे है। मौसम अब भी ठडा तो है, लेकिन आनन्ददायक है। तुम्हारा बिदाई-पत्र मिला था।

सस्नेह,

भाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४३७)से, सौजन्य: ए० एच० वेस्ट

२७०. तार: क्रॉफ्टको[2]

पोर्ट सईद
१७ दिसम्बर, १९३१

क्रॉफ्ट
इडिया ऑफिस
लन्दन

तारके लिए धन्यवाद। 'जर्नेल डी' इटालिया' मे कही गई बाते बिलकुल झूठ। रोममे पत्र-प्रतिनिधियोको कोई भेंट नही दी। सबसे बादमे जो भेट दी वह विलेन्यूवमे रायटरके प्रतिनिधिको दी। उसमे मैंने भारतके

१. ऐडा वेस्ट, ए० एच० वेस्टकी बहन।

२. सर सैम्युअल होर (बादमें वाइकाउट टेम्पलवूड)ने अपनी कृति नाइन ट्रबल्ड ईयर्स (कॉलिन्स, १९५४) में लिखा है कि जब उन्होंने गाधीजी द्वारा जर्नेल डी' इटालियाके प्रतिनिधिके समक्ष ऐसा वक्तव्य देनेकी गलत खबर पढी तो वे इतने घबराये कि उन्होने तुरन्त उसकी पुष्टिके लिए गाधीजी को तार भेजा है। उत्तरमें उन्होंने लिखा कि मैंने "ऐसा कोई वक्तव्य नहीं दिया और जिस भेंटकी खबर छापी गई है, वह मनगढ़न्त है।" यहाँ सैम्युअल होरने जिस उत्तरका उल्लेख किया है वह शायद यही तार था।

लोगोंसे जल्दबाजीमें किसी निर्णयपर पहुँचनेसे मना करते हुए मेरे वक्तव्यकी प्रतीक्षा करनेको कहा। मैं उतावलीमें ऐसा कोई कदम नहीं उठाऊँगा जिससे बात बिगड़े और अगर सीधी कार्रवाई करना दुर्भाग्यसे आवश्यक ही हो गया तब भी मैं पहले अधिकारियोंसे पूरी आरजू-मिन्नत करके झगड़ेको टालनेकी कोशिश करके देखूँगा। कृपया इन बातोंको आप अधिक-से-अधिक प्रचारित करें।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९३८९) से; सौजन्य : इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी

२७१. पत्र : अगाथा हैरिसनको

पोर्ट सईद
१७ दिसम्बर, १९३१

प्रिय अगाथा,

यह एक पंक्ति सिर्फ यह बतानेको लिख रहा हूँ कि मैं तुम्हें बराबर याद करता रहा हूँ। ईश्वर करे, तुम्हारा काम आगे बढ़े।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४४९) से।

टाइम्सके अनुसार गांधीजी को 'एक अधिकृत सूत्र' से जो तार भेजा गया वह इस प्रकार था :

"अखबारोंमें खबर छपी है कि जहाजपर चढ़नेके बाद आपने जर्नेल डी'इटालियाके प्रतिनिधिके समक्ष एक वक्तव्य दिया, जिसमें इस तरहकी बातें कहीं :

१. गोलमेज परिषद्के परिणामस्वरूप भारतीय राष्ट्र तथा ब्रिटिश सरकारके सम्बन्ध निश्चित रूपसे खराब हो गये हैं।

२. आप तुरन्त इंग्लैंडके खिलाफ संघर्ष शुरू कर देनेका खयाल लेकर भारत लौट रहे हैं।

३. बहिष्कार अब ब्रिटेनके मकसदको और भी गम्भीर बना देनेका साधन साबित होगा।

४. हम कर नहीं देंगे, हम किसी भी तरहसे इंग्लैंडके लिए काम नहीं करेंगे, हम ब्रिटिश अधिकारियोंको जनतासे बिलकुल अलग कर देंगे और उनकी राजनीति तथा उनकी संस्थाओंका भी ऐसा ही हाल बना देंगे। हम सभी तरहके ब्रिटिश मालका पूरा बहिष्कार करेंगे।

यहाँ आपके कुछ मित्र सोचते हैं कि निश्चय ही आपकी बातोंको गलत ढंगसे पेश किया गया है; अगर ऐसा हो तो समाचारका खण्डन करते हुए तार भेजना वांछनीय।"

गांधीजी द्वारा किये गये खण्डनके बावजूद जर्नेल डी'इटालियाका प्रतिनिधि यही कहता रहा कि मुलाकातका विवरण सच्चा है। गांधीजी को १९३४ में, जब उनसे उक्त भेंटके बारेमें पूछा गया, पुनः इसकी चर्चा करनी पड़ी।

२७२. भेंट : रायटरके प्रतिनिधिको

पोर्ट सईद
१७ दिसम्बर, १९३१

महात्मा गांधी यहाँ दोपहरको पहुँचे। यहाँ उन्होंने कई शिष्टमण्डलोंसे मुलाकात की। इनमें एक वपदवालोंका शिष्टमण्डल भी था। उन्होंने फोटो भी खिचवाये और कई ऑटोग्राफ भी दिये। रायटरके प्रतिनिधिके पूछनेपर उन्होंने 'जर्नेल डी' इटालिया'में छपे उस मुलाकातके विवरणको झूठा बताया जिसमें उनपर यह कहनेका आरोप लगाया गया है कि वे अपने मनमें फिरसे संघर्ष शुरू करनेका खयाल लेकर भारत लौट रहे है। उन्होंने कहा कि उन्होंने रोममें किसी भी पत्रकारसे मुलाकात नहीं की थी। उन्होंने आगे कहा :

मैं किसी निष्कर्षपर नही पहुँचा हूँ, और स्वभावत जबतक मैं बम्बई पहुँच कर कार्य-समितिके सदस्योसे बातचीत न कर लूँ तबतक किसी निष्कर्षपर नही पहुँच सकता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १९-१२-१९३१

२७३. पत्र : मणिलाल और सुशीलाको

अदन पहुँचनेके पहले
१९ दिसम्बर, १९३१

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोके पत्र तो नही बल्कि कभी-कभी रुक्के अवश्य मिले हैं। क्योकि मैं नही लिख पाता हूँ इसलिए तुम्हे कोई खास उलाहना भी नही दे सकता। किन्तु मेरे न लिख पानेके तो निश्चय ही कुछ सबल कारण थे। लन्दनमें न तो सोनेका ठिकाना था और न खानेका। अपना खाना साथ लेकर निकलता था और जहाँ मौका मिल जाता, खा लिया करता था। इस बार पत्र तो शायद ही किसीको लिखा होगा और 'यग इडिया' और 'नवजीवन'के लिए लिखनेका काम सर्वथा बन्द ही कर देना पडा था। किन्तु तुम्हारे सामने तो लिखने अथवा थोडा-सा ही लिखनेका कोई कारण ही नही था। किन्तु 'बानियाकी बान न जाये' वाली कहावत तुमपर लागू होती है। वैसे उद्यमीके लिए दूसरी ही कहावत है—'रसरी आवत-जातते सिल पर परत निशान'। तो फिर प्रयत्नसे मनुष्य क्या नही कर सकता।

हम आज लाल सागरमे पहुँच चुके है। हम नौ आदमी है और सभी डेकके यात्री है। डेकपर सुविधा तो कोई नही होती लेकिन हमे सब सुविधाएँ मिल रही है, इसलिए चिन्ता करनेकी बात तो है ही नही। यह तो मैने डेककी [सर्वसाधारण] स्थिति सूचित करनेके विचारसे लिखा है।

मै २८ वी तारीखको बम्बई पहुँच जाऊँगा। देखना है, वहाँ क्या होता है। सघर्ष छिड जाये तो तुरन्त आ जाना जरूरी मत मानना। सघर्षका रूप देख-समझकर आना। जबतक वहाँका कोई ठीक प्रबन्ध न हो जाये तबतक मत आना। तुम सबकी तबीयत अच्छी है, वह देशमे आकर बिगड जाये, यह भी मुझे पसन्द नही होगा। तथापि मेरी इच्छा-अनिच्छाका विचार न करके जो कर्त्तव्य जान पडे उसका पालन करना। क्योकि कह नही सकता कि इसके बाद पत्र-व्यवहारका समय मिल पाता है या नही। यह भी हो सकता है कि मुझे वहाँ पहुँचते ही गिरफ्तार कर लिया जाये।

शान्ति पैसा मिल चुकनेके बाद रहेगा, ऐसी बात तो थी भी नही। इसलिए उसके चले जानेसे मुझे आश्चर्य नही हुआ है। फिलहाल वहाँ काम किस तरह चला रहे हो, सो तुमने नही लिखा। वहाँ शास्त्रीजी पहुँचे है, उनकी सेवा तो करोगे ही। एन्ड्रयूज और सरोजिनीदेवी तो यहाँ है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४७८७) से।

२७४. पत्र : मार्किओनेस विटेलेस्खीको

एस० एस० 'पिलसना'
[१९][1] दिसम्बर, १९३१

प्रिय बहन,

आपका लम्बा पत्र मिला। अगर आप अपने विषयमे कम सोचे और आपके सामने जो कर्त्तव्य है उसमे तत्काल जुट जाये तो आपको शान्ति प्राप्त हो जायेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७६८) से।

१. साधन-सूत्रमें यह अंक ११ जैसा लगता है। उस दिन गाधीजी विलेन्यूवमें थे। पत्रपर अदनकी २३ दिसम्बरकी डाककी मोहर लगी हुई है इससे लगता है कि भूलसे १९ के स्थानपर ११ लिखा गया है।

२७५. पत्र : रोमाँ रोलाँको

एस० एस० 'पिलसना
२० दिसम्बर, १९३१

प्रिय मित्र और भाई,

आपसे मेरा अनुरोध है कि आप टॉल्स्टॉय साहबकी पुत्रीको पत्र लिखकर बोल्शेविज्मके सम्बन्धमे उनकी शकाओका समाधान करे।[1] हम सबके प्रति जनरल साहब और श्रीमती मॉरिस, दोनोका व्यवहार बडा स्नेहपूर्ण रहा। घरमे प्रवेश करते ही हमे लगा, मानो हम उन्हीके परिवारके सदस्य हो। मुसोलिनी तो मेरे लिए एक पहेली है। उनके कई सुधार मुझे अच्छे लगे। जान पडता है, किसानोके लिए उन्होने बहुत किया है। मै यह स्वीकार करता हूँ कि इस सबमे बडी सख्तीसे काम लिया जा रहा है। लेकिन चूँकि हिंसा पाश्चात्य समाजका आधार है, इसलिए मुसोलिनीके सुधार निष्पक्ष अध्ययनके लायक है। गरीबोके लिए उनकी चिन्ता, अति-नागरीकरण का विरोध, पूंजी और श्रमके बीच सामजस्य स्थापित करनेके उनके प्रयत्न, ये सब मुझे विशेष ध्यान देने योग्य लगते है। मै चाहूँगा कि आप मेरे लाभके लिए इन विषयोपर प्रकाश डाले। मेरी अपनी बुनियादी आपत्ति यह है कि ये सुधार अनिवार्य कर दिये गये है। लेकिन ऐसा तो सभी लोकतान्त्रिक सस्थाओमे किया जाता है। जो चीज मुझे आकर्षित करती है वह यह कि मुसोलिनीकी कठोरताके पीछे जनताकी सेवा करनेकी इच्छा है। उनके जोरदार भाषणोके पीछे भी ईमानदारीका एक तत्त्व है और जनताके लिए उत्कट प्रेम भी। मुझे यह भी लगता है कि इटलीके अधिकाश लोग मुसोलिनीकी फौलादी सरकारसे प्रेम करते है। मै यह नही चाहता कि आप तुरन्त उत्तर देनेका कष्ट करे, मेरा अनुरोध है कि आप सुविधासे यह काम करे। कहनेकी जरूरत नही कि मै इस विषयपर सार्वजनिक रूपसे कुछ नही लिखना चाहता। अभी तो मैने आपको ऐसा व्यक्ति मानकर जो इस विषयको मुझसे ज्यादा अच्छी तरह और निकटतासे जानता है, आपके सामने केवल ये प्रश्न रख दिये है। मै समझता हूँ कि अगर आप जनवरीसे मार्चके बीच सर्दीके मौसममें यहाँ आये तो आप यहाँकी आबोहवाको मजेमे बरदाश्त कर सकते है और हो सकता है, उससे आपको कुछ लाभ भी हो। आप हवाई जहाजसे भी बखूबी आ सकते है, लेकिन मै यह ज्यादा पसन्द करूँगा कि आप जलमार्गसे आये। अगर आप इस प्रस्तावको गम्भीरतासे ले तो हम इस सम्बन्धमे एक सुनिश्चित कार्यक्रम भी भेज सकेगे।

सस्नेह,

आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९४४१)से, सौजन्य आर० के० प्रभु

१. देखिए "भेंट: सुखोतिना टॉल्स्टॉयसे", १३-१२-१९३१।

२७६. पत्र : कार्ल हीथको

एस० एस० 'पिलसना'
२० दिसम्बर, १९३१

प्रिय मित्र,

आपके मैत्रीपूर्ण विदाई-पत्रके लिए धन्यवाद। यह विचार मेरे लिए बहुत मूल्यवान होगा कि भारतके पक्षके बहुत-से समर्थकोमे मैं उन लोगोको भी गिन सकता हूँ जिनके नाम आपने भेजे हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०२६)से।

२७७. भारतीय सेना

[२१ दिसम्बर, १९३१][1]

गोलमेज परिषद्के अन्तिम दिन प्रधान मन्त्री द्वारा की गई घोषणाके पीछे चाहे जितनी ईमानदारी हो, वह राष्ट्रीय माँगको पूरा करनेकी दृष्टिसे सर्वथा अपर्याप्त थी, और इसलिए अगर उसमे कुछ और जोडने-घटानेकी गुजाइश न हो तो वह सर्वथा अस्वीकार्य थी। मगर दु:ख तो यह देखकर होता है कि इस सम्बन्धमे अंग्रेज जाति क्या सोचती-समझती है, इसका सही निदर्शन उक्त घोषणामे हुआ है।

उत्तरदायित्वकी सच्ची कसौटी प्रतिरक्षा तथा वित्तके नियन्त्रणका अधिकार है। किन्तु यह घोषणा इन दोनो विषयोके सम्बन्धमे बहुत साफ है। भारतीयोको नियन्त्रणका अधिकार नही मिलनेवाला है — प्रतिरक्षापर तो बिलकुल नही और वित्तपर भी लगभग नही ही।

इस विचित्र परिस्थितिका कारण भारतके सम्बन्धमें इग्लैडमे फैला घोर अज्ञान है। बहुत-से अच्छेसे-अच्छे अंग्रेज ऐसा मानते है कि हम अपनी रक्षा आप नही कर सकते और न अपनी वित्त-व्यवस्थाको ही स्वय सँभाल सकते है। अगर बात ऐसी ही है तो निश्चय ही हम जो पूर्ण स्वराज्य चाहते है, वह अभी हमसे बहुत दूर है।

लेकिन मेरा दावा है कि हममे अपनी सुरक्षा तथा वित्त-व्यवस्थाको सँभालनेकी पूरी क्षमता है। भारतकी सेना कैसी है? मोटे तौरपर इसमे साठ हजार ब्रिटिश

१. "दैनन्दिनी, १९३१"के एक इन्दराजके अनुसार गांधीजी ने इस तारीखको इंडियन न्यूज (जो १९३२ से इंडिया रिव्यूके नामसे प्रकाशित होने लगा था)के लिए एक लेख लिखा। शायद यह वही लेख है।

और एक लाख साठ हजार भारतीय सिपाही हैं — सबके-सब किरायेके टट्टू। भारतीय सिपाहियोका चुनाव यह देखकर किया जाता है कि उनमें कोई राष्ट्रीय भावना न हो। उन्हे एक प्रकारसे ऐसा प्रशिक्षण दिया जाता है जिससे वे अपने-आपको विदेशी समझें, उन साधारण लोगोको अवहेलनाकी दृष्टिसे देखे जिनसे उनका कोई साम्य नही है। इस सारी सेनाका उपयोग बाहरी आक्रमणोके लिए, भारतमे ब्रिटिश हितो तथा ब्रिटेनवालोकी जानकी सुरक्षाके लिए किया जाता है।

इस सेनाको मै भारतके अन्दर राष्ट्रीयताके लिए और भारतके बाहर उसके पडोसियोकी स्वतन्त्रताके लिए खतरा मानता हूँ। ब्रिटेनवालोके भारत आनेके पूर्व भी तो भारत चाहे जैसे भी हो जीवित था ही और वह अपनी सस्कृतिकी भी रक्षा कर पा रहा था। भारतकी सुरक्षा अपने पडोसियोसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध और अहिंसक असहयोगके बलपर किसी भी राष्ट्रके द्वारा अपने शोषणका विरोध करनेकी उसकी क्षमतामे निहित है।

राष्ट्रीय सरकार स्थापित होनेपर उसका पहला काम यह होना चाहिए कि वह इस खतरेको, इस सेनाको खत्म कर दे। अगर इसको कायम रखा जा सकता है तो इसी शर्तपर कि इसको घटाकर इतना कम कर दिया जाये जिससे इसकी ठीक व्यवस्था हो सके और ब्रिटिश सरकार सम्मानपूर्वक शान्तिपूर्ण ढगसे इसका नियन्त्रण राष्ट्रीय सरकारको सौप दे। ब्रिटिश सरकारने भारतीय जनताकी उचित आकाक्षाओको दबानेके लिए यह सेना खडी करके उसके प्रति जो अपराध किया है उसका यह न्यूनतम प्रायश्चित्त है।

अगर ब्रिटिश सरकार यह बुनियादी न्याय करनेका अपना स्पष्ट कर्त्तव्य नही देख पाती तो राष्ट्रवादी दलको तबतक अपना सघर्ष जारी रखना है जबतक कि कठोर अनुभवसे उसके सामने इसकी आवश्यकता स्पष्ट नही हो जाती। भावी भारतीय सेना किरायेके टट्टुओसे नही बल्कि स्वेच्छासे सेवा करनेवाले सच्चे सैनिकोसे बनी हुई होगी और उसका स्वरूप बहुत-कुछ पुलिस-सगठनवाला होगा।

लेकिन ब्रिटेनके लोगोको तो ऐसा माननेकी तालीम दी गई है कि भारतकी सेना ब्रिटिश हुकूमतकी सबसे बडी देन है और भारतको उसके लिए सदा ब्रिटेनका आभारी रहना चाहिए। 'इडिया रिव्यू' के सम्पादकको इस घोर अज्ञानको दूर करना है। मैं चाहूँगा कि वे इसके लिए परिश्रमपूर्वक उन तथ्यो और आँकड़ोका अध्ययन करे जो बताते हैं कि भारतीय सेनाका गठन किस तरह किया गया है और किस प्रकार उसके पीछे निहित कल्पनाके अनुसार उसका उपयोग भारत और उसके पडोसियोको लूटनेके लिए किया जाता रहा है।

[अग्रेजीसे]

इंडिया रिव्यू, १६-१-१९३२

२७८. सिंहावलोकन

[२३ दिसम्बर, १९३१][1]

मैंने जबसे 'यंग इंडिया' के सम्पादक-पदका दायित्व सँभाला है तबसे ऐसा कभी नही हुआ कि बीमार अथवा कैद न रहते हुए भी 'यंग इंडिया' या 'नवजीवन' के लिए कुछ-न-कुछ न भेजूं। लेकिन मेरे इस बारके लन्दन-प्रवासमे ऐसी स्थिति नही रही। वहाँ मुझे लगातार एकके-बाद-एक काममे व्यस्त रहना पडता था और इतना ज्यादा काम था कि आधी-आधी रातके बाद भी जगे रहना पडता था। इसलिए इन पत्रोंके लिए कुछ भी लिख पाना मेरे लिए असम्भव ही रहा। सौभाग्यसे महादेव देसाई मेरे साथ थे और यद्यपि उनपर भी कामका बेहिसाब बोझ था, लेकिन वे 'यंग इंडिया' के लिए पूरी साप्ताहिक खुराक भेज देनेका समय निकाल ही लेते थे।

फिर भी, पाठक मुझसे लन्दन-यात्राके अपने अनुभव और प्रतिक्रियाएँ देनेकी अपेक्षा तो करेंगे ही।

यद्यपि मैं वहाँ बहुत डरता-घबराता गया था, लेकिन मुझे वहाँ जानेका कोई दुःख नही है। वहाँ जिम्मेवार अंग्रेज पुरुषो तथा स्त्रियोसे मेरा सम्पर्क हुआ और साधारण लोगोसे भी। हमे चाहे फिर एक और मोर्चा लेना पडे या नही, ये अनुभव भविष्यमें अमूल्य महत्त्वके साबित होंगे। आप किसके साथ लड रहे हैं या किसके साथ आपका व्यवहार चल रहा है, यह जानना कोई कम महत्त्वकी बात नही है।

यह बहुत अच्छा संयोग था कि किंग्सले हॉल सेवाश्रमके प्राण म्युरिअल लेस्टरने मुझे अपनी बस्तीमें ठहरनेका निमन्त्रण दिया और मैंने उस निमन्त्रणको स्वीकार भी कर लिया। किंग्सले हॉल और श्री बिडलाके आर्य भवन, इन्ही दो स्थानो मे से एकको चुनना था। निर्णय लेनेमें न तो मुझे कोई कठिनाई हुई, न श्री बिडलाको ही। लेकिन भारतीय भाइयोंने आर्य भवनमे ठहरनेके लिए स्वभावतः मुझपर बहुत जोर डाला। अनुभवसे सिद्ध हो गया कि किंग्सले हॉल मेरे ठहरनेका आदर्श स्थान था। यह लन्दनके गरीबोकी बस्तीके बीचमे बना हुआ है और केवल उन्हीकी सेवार्थ समर्पित है। म्युरिअल लेस्टरकी प्रेरणापर बहुत-सी स्त्रियो और कुछ पुरुषोंने भी इस सेवाके निमित्त अपनेको समर्पित कर दिया है। इस विशाल भवनके किसी कोनेका भी अन्यथा उपयोग नही किया जाता। यहाँ धार्मिक गोष्ठी और पूजा-प्रार्थना होती है, मनोरंजनकी व्यवस्था है, भाषणोका आयोजन होता है, बिलियर्ड खेलनेकी व्यवस्था है, वाचनालय आदि है और ये सब गरीबोके उपयोगके लिए हैं। यहाँ रहनेवाले लोग अत्यन्त सादा जीवन व्यतीत करते हैं। पूरे आश्रममें एक भी गैर-जरूरी उपस्कर नही है। आश्रमवासी छोटे-छोटे कमरोमें रहते हैं, जिन्हे सेल कहा जाता है। वहाँ हम पाँच लोगोके रहनेकी व्यवस्था करनेमें भी बडी कठिनाई हुई।

1. यह तारीख "दैनन्दिनी, १९३१" में इसी तारीखमें दर्ज इन्दराजसे ली गई है।

लेकिन जहाँ स्नेह होता है वहाँ जगह न होनेपर भी जगह निकल ही आती है। चार आश्रमवासियोने अपना-अपना कमरा छोड दिया और ये कमरे हमे दे दिये गये। बिस्तर वगैरह माँगकर काम चलाना पडा। सौभाग्यसे हम सबके पास कम्बल काफी थे, और चूँकि हम लोगोको फर्शपर बैठनेकी आदत थी, इसलिए जो चीजे माँगकर लाई गई थी, उनमे से अधिकाश हमने वापस कर दी। इसमे सन्देह नही कि मेरा वहाँ रहना आश्रमवालोके लिए समय, स्थान तथा अन्य दृष्टियोसे भी बहुत असुविधाजनक था, लेकिन वहाँके नेक लोग मेरे वहाँसे हटनेकी बात सुननेको तैयार ही नही थे। उनकी स्नेहपूर्ण, मूक और अलक्षित सेवाएँ प्राप्त करके मै धन्य हो गया। लन्दनके ईस्ट ऐंडके गरीब लोगोके साथ मेरा जीवन्त सम्पर्क मेरे लिए सतत आनन्दका विषय था। कहनेकी जरूरत नही कि मै वहाँ ठीक उसी तरह रहा जिस तरह भारतमे रहता हूँ, और ईस्ट लन्दनकी सडकोपर सुबह-सुबहका वह घूमना तो मेरी स्मृतिमे सदा बना रहेगा। इस प्रातर्भ्रमणमे जो लोग मेरे साथ होते थे और जिन्हे म्युरियल आने देती थी, उनके साथ मेरी अन्तरग बातचीत होती थी। वहाँ म्युरियल सबको मुझसे बातचीत करनेकी छूट नही देती थी, क्योकि उन्हे मेरे समयका बडा खयाल रहता था। अगर वे ऐसा कुछ सुन लेती थी कि उनकी अनुपस्थितिमे लोगोने मेरा वक्त बरबाद किया तो वे बहुत नाराज होती थी।

ईस्ट लन्दनमें रहते हुए मुझे मानव-स्वभावके सर्वोत्तम पक्षका परिचय मिला और मेरे इस सहज विश्वासकी पुष्टि हुई कि गहराईमे उतरकर देखे तो पूर्वी और पश्चिमी दुनिया-जैसी कोई चीज नही है। जब ईस्ट ऐंडके लोग मुस्कराकर मेरा अभिवादन करते थे तो मै साफ देख सकता था कि उनमे कोई दुर्भावना नही है और वे चाहते है कि भारत अपनी खोई हुई स्वतन्त्रता पुन. प्राप्त करे। अगर मेरे इग्लैंडके और भी निकट आनेकी कोई गुजाइश थी तो इस अनुभवने मुझे उसके और निकट ला दिया है। मेरा झगडा व्यक्तियोसे कभी नही होता, वह तो उनके रग-ढग और कार्योसे होता है। लेकिन ईस्ट लन्दनके सीधे-सादे गरीब लोगोके साथ, जिनमे बच्चे भी शामिल है, मेरा निकट-सम्पर्क मुझे इस बातके लिए और भी सचेत कर देनेवाला है कि मै जल्दबाजीमे कोई कदम न उठाऊँ।

यहाँ मुझे लकाशायर तथा वहाँके कर्मचारियो और मालिकोके साथ हुए अपने अत्यल्प सम्पर्कके अनुभवका उल्लेख भी अवश्य करना चाहिए। मुझे यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि उनमे कोई पूर्वग्रह नही है और वे नये तथ्यो तथा उनपर आधारित निष्कर्षोको सुनने-समझनेके लिए तैयार रहते है। बेशक, यहाँ मेरे लिए पृष्ठभूमि चार्ली एन्ड्रयूजने तैयार कर दी थी। मुझे ग्रेट ब्रिटेनके सबसे निष्पक्ष और सच्चे पत्र 'मैंचेस्टर गार्डियन' के सम्पादक श्री सी० पी० स्कॉटके साथ अपनी अविस्मरणीय भेटका उल्लेख भी करना ही चाहिए। एक महान् अग्रेज राजनयिकने मुझे बताया कि 'गार्डियन' दुनियाका सबसे अधिक विवेकशील और ईमानदार पत्र है। इसी प्रकार मै कैंटरबरी, चिसेस्टर, ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज तथा ईटनके समागमोको भी आसानीसे नही भूल सकता। इन सबसे ब्रिटेनवाले मनमे क्या सोचते है, इस चीजको मै इतनी अच्छी तरह समझ

सका जितनी अच्छी तरह किसी और तरीकेसे नही समझ सकता था। इन सम्पर्कोके परिणामस्वरूप कुछ लोगोसे मेरी स्थायी मैत्री हो गई है। जिन लोगोके सम्पर्कमें मै आया उनमें उन दो गुप्तचरो तथा उनके साथियो और उन अनेक सिपाहियोका भी उल्लेख करना आवश्यक है जिनको मेरे लिए तैनात किया गया था। सार्जेंट इवान्स और सार्जेंट रॉजर्स, ये दोनो गुप्तचर मेरे लिए केवल पुलिस-अधिकारी ही नही थे। वे मेरे सरक्षक, मार्गदर्शक और मित्र बन गये। मेरी सुविधाओंका खयाल तो वे स्नेहमयी परिचारिकाओंकी-सी तत्परतासे रखते थे। और मेरे लिए यह बडी खुशीकी बात थी कि मेरे अनुरोधपर उन्हे मेरे साथ ब्रिंडिसीतक आने दिया गया।

और यद्यपि सन्त रोमाँ रोलाँके निवास-स्थान विलेन्यूवकी अपनी तीर्थयात्राका उल्लेख मै अन्तमे कर रहा हूँ, लेकिन महत्त्वकी दृष्टिसे आप इसे अन्तिम स्थानपर न रखें। यदि मैं केवल उनसे तथा छायाकी भाँति सदा उनके साथ रहनेवाली उनकी बहन मेडेलीनसे, जो उनकी दुभापिया और मित्र भी है, मिलनेके लिए ही भारतसे निकल सकता तो केवल इसी उद्देश्यसे वहाँकी यात्रा करता। लेकिन केवल इस कामके लिए मेरा यहाँसे जाना सम्भव नही था। किन्तु गोलमेज परिषद्के कारण यह तीर्थयात्रा मेरे लिए सम्भव हो गई और सयोगसे मेरे रास्तेमें रोम भी पडा। मैं उस महान् तथा प्राचीन नगर और इटलीके निर्विवाद अधिनायक मुसोलिनीको भी किसी हदतक देख पाया। और वैटिकन क्रूसपर चढे ईसा मसीहकी उस सजीव प्रतिमाको नमन करनेके लिए मै कौन-सा मूल्य नही चुका सकता था? मानव-इतिहासकी उस महान् दुर्घटनाके उस जीवन्त दृश्यने मुझे इस तरह बाँध लिया था कि वहाँसे अलग होते हुए मुझे लगभग वियोगका दु:ख अनुभव हो रहा था। वहाँ मुझे यह समझते देर नही लगी कि व्यक्तिके ही समान राष्ट्रका निर्माण भी शूलीकी पीडा, कष्टोकी आँच सहनेसे ही सम्भव है। सच्चे आनन्दकी प्राप्ति दूसरोको कष्ट पहुँचानेसे नही, बल्कि खुशी-खुशी स्वय कष्ट सहनेसे ही हो सकती है।

२

इसलिए मै निराश होकर नही, बल्कि और भी आशा लेकर स्वदेश लौटा हूँ। इस आशाका आधार यह तथ्य है कि मैंने इग्लैड और यूरोपीय महाद्वीपमे जो-कुछ देखा उससे सत्य और अहिंसामे मेरी आस्था कम होनेके बजाय और भी पुष्ट हुई है। वहाँ मुझे अपनी अपेक्षासे अधिक समान-धर्मी लोगोसे मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ।

गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें मै तो आपको कुछ नया बता नही सकता। उसके गठन तथा उसकी उपलब्धियोंके बारेमें अपने विचार मैंने वहाँ साफ-साफ बता दिये। लेकिन यहाँ मै एक बात कहना चाहूँगा। वहाँसे मैं अपने मनमे यह धारणा लेकर आया हूँ कि वे जो-कुछ कहते है, वही उनके हृदयोमें भी है, लेकिन वे बहुत अधिक लाचारीके बीच काम कर रहे है। मूलभूत बातोके सम्बन्धमें प्रतिनिधियोमे जहाँ ऊपरसे मतैक्य दिखाई देता था, वहाँ बहुत ही महत्त्वपूर्ण तफसीलोके सम्बन्धमें उन्होने आश्चर्यजनक मतभेदका परिचय दिया। अल्पसख्यकोकी समस्या एक भारी गुत्थी बन

गई, जिसमे दोष केवल मन्त्रियोका ही नही था। लेकिन यह तो एक अस्थायी लाचारी थी। उनकी सबसे बडी लाचारी इस बातमे थी कि भारतमे ब्रिटिश राज्यकी स्थापनाके समयसे ही उनके भारत-स्थित एजेन्ट उन्हे अक्सर एक-पक्षीय सरासर झूठी बाते बताते रहे है और उनके सामने उन्ही वर्गोंके मत रखते रहे है जो राष्ट्र-विरोधी है। भारतके सम्बन्धमे उनकी जानकारीका यही स्रोत रहा है और इनकी भेजी जानकारीको मन्त्रियोने आम तौरपर परम सत्यकी तरह ग्रहण किया है। इसलिए वे हमे अपनी सुरक्षा-व्यवस्था और वित्तीय मामलोको स्वय ही सँभालनेमे अक्षम मानते है। वे मानते है कि भारतके कल्याणके लिए भारतमे ब्रिटिश सेना और ब्रिटिश अधिकारियो का रहना आवश्यक है। दुनियाके किसी अन्य राष्ट्रमे ब्रिटेनसे अधिक आत्म-प्रवचनाकी क्षमता शायद ही हो।

मै जो-कुछ लिख रहा हूँ उसकी पुष्टिके लिए मै पाठकोसे सर सैम्युअल होरका वह भाषण पढनेको कहूँगा जो उन्होने श्वेत पत्र (ह्वाइट पेपर) पर चल रही बहसके दौरान कॉमन्स सभामे दिया था। मै जितनी बार भारत-मन्त्रीसे मिला, हर बार उनकी ईमानदारी और साफगोईके सम्बन्धमे मनपर कुछ बेहतर छाप लेकर ही लौटा, हालाँकि मुझे चेतावनीके तौरपर लोगोने उनके विषयमे इसके विपरीत बाते ही बताई थी। वे मुझे ब्रिटिश मन्त्रियोमे सबसे अधिक निष्कपट और स्पष्टवादी आदमी लगे। वे काफी दृढ आदमी भी है, लेकिन उतने ही सख्त भी। मै मानता हूँ कि वे निर्ममतापूर्ण दमन-नीति अपनाने और कडीसे-कडी कार्रवाई करनेकी सलाह या सहमति भी दे सकते है। ऐसी सलाह या सहमति देकर भी वे सच्चे दिलसे यही मानेगे क उन्होने उस सर्जनकी तरह दयाका कार्य किया है जो आवश्यकता पडनेपर बहुत ही दृढता और मजबूतीसे अपने रोगीपर शल्य-चिकित्साकी अपनी छुरीका प्रयोग करता है। भारत-मन्त्री सचमुच बहुत ही परिश्रमी और ईमानदार आदमी है और वे ज्वरसे पीडित रहनेपर भी अपना काम करते रह सकते है। किसी भी क्षण उन्हे क्या करना है, इस बातको वे बहुत साफ-साफ जानते है। उनके पीछे ब्रिटेनके सभी दलोके लोग है और ब्रिटेनके आधुनिक इतिहासमे ज्ञात काफी बडा बहुमत उनके साथ है। इस-लिए उनका भाषण ब्रिटिश ढगका सबसे अच्छा भाषण है। फिर भी, तथ्य यह है कि कांग्रेसकी माँगोकी दृष्टिसे इसमे कही बाते सर्वथा अपर्याप्त है और इस सन्दर्भमे जिस शब्दावलीका प्रयोग कांग्रेस कर सकती है, उसका प्रयोग करूँ तो कहूँगा कि यह भाषण गलत तथ्योपर आधारित है, लेकिन दुर्भाग्यसे अन्य ब्रिटिश राजनयिकोकी तरह वे इन्हे सच मानते है।

ब्रिटेनकी इस मनोवृत्तिको बदला कैसे जाये, अर्थात् इन अनिच्छुक लोगोंके हाथोसे सत्ता छीनी कैसे जाये? ये राजनीतिज्ञ दलीलसे कायल होनेवाले नही है। ये सब तपे-परखे और अपनी धुनके पक्के सिपाही है। ये तथ्योको, ठोस कार्योको पसन्द करते है और उन्हीकी भाषा समझते है। वे खुल्लम-खुल्ला विद्रोहकी भाषा समझेगे, और अगर ये उसे दबा न सके तो तत्काल यह स्वीकार करेगे कि हम अपनी रक्षा आप कर सकते ह और अपना कार्य-व्यापार स्वय सँभाल सकते है। और मै ब्रिटेनसे अपनी इस धारणाको और भी पुष्ट करके लौटा हूँ कि वे अहिंसक विद्रोह

की भाषा भी समझेंगे और शायद ज्यादा जल्दी समझेंगे। लेकिन दुर्भाग्यकी बात यह है कि हमारी सामूहिक अहिंसा-वृत्तिमे उनका विश्वास नही है। और इससे भी बड़ी बात यह, कि वे मानते है कि बडे पैमानेपर सामूहिक अहिंसा सम्भव ही नही है। उनके इस अविश्वासको किसी दलीलसे दूर नही किया जा सकता। विश्वास तो वास्तविक अनुभवसे ही उत्पन्न हो सकता है।

इसी तरह वे यह भी नही मानते कि वास्तवमे जो दल अपनेको सौपे कामको पूरा करके दिखा सके, वह काग्रेस ही है। जनरल स्मट्स भी उन्हे यह विश्वास नही दिला सके कि काग्रेस ऐसा दल है। उनके भारत-स्थित एजेटोसे मिलनेवाली विपरीत जानकारीके रहते हुए वे उन्हे इस बातका विश्वास दिला भी कैसे सकते थे?

इसलिए मुझे लगता है कि एक बार और अग्नि-परीक्षामे से गुजरना आवश्यक है। ब्रिटेनका मन प्रधान मन्त्रीकी घोषणामें बताई चीजोसे कुछ बहुत अधिक देनेका नही है।

३

लेकिन मै जल्दबाजीमे किसी निष्कर्षपर नही पहुँच सकता। यह लेख मै 'पिलसना' जहाजपर २३ दिसम्बरको लिख रहा हूँ। मुझे भारतकी स्थितिकी कोई जानकारी नही है। मुझे नही मालूम कि आगे बातचीत चलानेकी क्या सम्भावनाएँ है। और न मुझे यह मालूम है कि बगाल, सयुक्त प्रान्त, गुजरात तथा दक्षिण भारतकी स्थिति शान्तिपूर्ण वार्त्ताकी कितनी गुजाइश छोडती है। हाँ, एक बात जो मेरे नजदीक जितनी स्पष्ट आज हो गई है उतनी पहले कभी नही हुई थी। वह यह है कि हमारा असली रण-क्षेत्र लन्दन नही, बल्कि भारत है। हमे कायल करना है तो ब्रिटिश मन्त्रियोंको नही, बल्कि भारतके गैर-सैनिक ब्रिटिश अधिकारियोको। सशक्तसे-सशक्त भारत-मन्त्री भी अपने भारत-स्थित एजेटोकी सलाहकी बहुत दूरतक उपेक्षा नही कर सकता। इंडिया ऑफिस भारतके प्रगति-चक्रमे लगा एक अवरोध है। असली सत्ता वाइसरायके हाथोमे भी नही है; वह तो २५० जिलाधीशोके हाथोमे है। इन जिलाधीशोके हाथोमे इतनी सत्ता है जितनी दुनियाके किसी वास्तविक अधिनायकके हाथोमे भी नही है। अधिनायकोंके पीछे एक जबरदस्त सरकारके पूरे तन्त्रका बल नही होता, लेकिन इनके पीछे यह बल है।

लेकिन इस तरह देखनेपर समस्या बिलकुल सरल हो जाती है। प्रत्येक जिलेकी परिस्थितियोकी कुजी खुद उसीके हाथमे है। हमे अपनी मुक्ति खुद ढूँढनी है और भारतमे ही ढूँढनी है — सम्भव हो तो बातचीतके जरिये, और बिलकुल जरूरी हो जाये तो सीधी कार्रवाईके जरिये। मै जानता हूँ कि मै उस अग्नि-परीक्षासे गुजरनेके लिए देशका आवाहन हलके मनसे नही कर सकता, लेकिन साथ ही अगर मुझे कोई और रास्ता दिखाई नही दिया तो सीधी कार्रवाई करनेंकी सलाह देनेमे भी मै सकोच नही करूँगा। कोई रास्ता ढूँढनेके लिए मै भरसक कोशिश करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

२७९. तार: वल्लभभाई पटेलको[1]

[२३ दिसम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्]

सरदार वल्लभभाई
बारडोली

हाँ दोपहर से ।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८४०८)से।

२८०. तार: रेवाशंकर झवेरीको[2]

[२३ दिसम्बर, १९३१ या उसके पश्चात्]

मॉरैलिटी[3]
बम्बई

स्विस-दम्पती[4] सहित नौ आदमी ।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८४०९)से।

२८१. वक्तव्य: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ अमेरिकाको[5]

[२४ दिसम्बर, १९३१][6]

मुझे तो बड़े दिनके अवसरकी चमक-दमक कभी भी जँची नहीं। इस तरहका आमोद-प्रमोद मुझे ईसाके जीवन और उपदेशसे सर्वथा असगत प्रतीत हुआ है।

१. यह वल्लभभाईके २३ दिसम्बरके निम्नलिखित तारके उत्तरमें भेजा गया था. "आप चूँकि सोमवारको आ रहे हैं, इसलिए सुझाव है कि आप मौनव्रत जरा जल्दी, रविवारसे आरम्भ कर दें।" (एस० एन० १८४०७)।

२. यह सन्देश वल्लभभाई पटेलको भेजे सन्देशके साथ एक ही कागजपर अंकित है। देखिए उपर्युक्त शीर्षक।

३. रेवाशकर झवेरीका तारका पता।

४. एडमण्ड प्रिवा और उनकी पत्नी।

५. यह वक्तव्य जेम्स मिलको दिया गया था।

६. "दैनन्दिनी, १९३१" में दर्ज इस तारीखके इन्दराजके अनुसार।

अगर अमेरिका इस अवसरका उपयोग अपनी नैतिक लाभ-हानिका सच्चा लेखा-जोखा लगानेके लिए करे तथा मानव-जातिकी सेवाके जिस उद्देश्यके लिए ईसा जिये और अन्तमे जिसके लिए उन्होने अपना बलिदान दिया, उस उद्देश्यके लिए अपनेको समर्पित करनेपर जोर देकर दुनियाको एक नया रास्ता दिखाये तो यह कितना अच्छा हो।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १८४११)से।

२८२. प्रवचन: एस० एस० 'पिलसना' जहाजपर[1]

२५ दिसम्बर, १९३१

मै आपको यह बताऊँगा कि मुझ-जैसे अन्य धर्मावलम्बीपर, 'नया करार'में ईसा मसीहके जीवनकी कहानी जिस तरह कही गई है, उसकी क्या छाप पड़ी है। बाइबिलसे मेरा परिचय आजसे लगभग पैंतालीस वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ, और वह 'नया करार'के माध्यमसे आरम्भ हुआ था तब मै 'पुराना करार' में रस नही ले सका था, हालाँकि उसे एक मित्रसे, जिनसे मेरी भेंट एक होटलमे हुई थी, किये वादेको पूरा करनेके लिए ही सही, मैं पढ अवश्य गया था। लेकिन जब मैं 'नया करार' पढने लगा और उसके 'गिरि-प्रवचन' पर आया तो मै ईसा मसीहके उपदेशो को समझने लगा। 'गिरि-प्रवचन'मे मुझे उसी चीजकी प्रतिध्वनि सुनाई दी जो मुझे बचपनमें सिखाई गई थी और जो मुझे मेरे अस्तित्वका अभिन्न अंग-सा प्रतीत होती थी तथा मेरे आसपासके जीवनमें प्रतिदिन आचरणमें उतारी जाती जान पड़ती थी।

मैंने कहा है, जान पडती थी। इससे मेरा तात्पर्य यह है कि मेरे इर्द-गिर्द के जीवनमे ठीक उस उपदेशके ही अनुसार आचरण किया जा रहा है, यह देखना मेरे मतलबके लिए जरूरी नही था। यह उपदेश था — मनमें प्रतिशोधकी भावना न रखना या बुराईका विरोध न करना। मैंने जितना-कुछ पढ़ा उसमें से जो बात मेरे मनमें जम गई वह यह थी कि ईसा विश्वको लगभग एक नया नियम देने आये थे, हालाँकि उन्होंने कहा था कि मैं कोई नया नियम देने नही आया हूँ, बल्कि मूसाके पुराने नियममे ही कुछ जोड़नेको आया हूँ। बहरहाल उन्होंने उस पुराने नियममें कुछ परिवर्तन अवश्य किया और उस परिवर्तनके परिणामस्वरूप 'आँखके बदले आँख निकाल लो, दाँतके बदले दाँत तोड़ दो' के स्थानपर एक नया नियम आरम्भ हुआ कि कोई एक तमाचा लगाये तो उसे दूसरा लगानेको आमन्त्रित करो, एक मील चलनेको कहे तो दो मील चलनेको तैयार रहो।

१. महादेव देसाईकी रिपोर्ट "ईसा मसीह जिन्हें मैं प्यार करता हूँ" (जीसस आई लव) से उद्धृत। प्रवचन सुबहके साढ़े चार बजे हुआ था जिसमें आधा दर्जन लोग उपस्थित थे।

मैंने अपने मनमें कहा: "निश्चय ही यह तो वही है, जो हम अपने बचपनमें सीखते है। किन्तु यह तो ईसाई धर्म नही है।" कारण, तब मैंने यही सुन रखा था कि ईसाई धर्मका अर्थ एक हाथमें ब्राडी की बोतल और दूसरेमें गोमास रखना ही है। लेकिन 'गिरि-प्रवचन' ने मेरी इस धारणाको झूठा साबित कर दिया।

जैसे-जैसे सच्चे ईसाइयों अर्थात् ईश्वरसे डरकर चलनेवालोसे मेरा सम्पर्क बढता गया, मुझे मालूम होता गया कि जो सच्चे ईसाईका जीवन व्यतीत करना चाहता है, उसके लिए सारी ईसाइयतका सार 'गिरि-प्रवचन' में आ जाता है। उसी प्रवचनके कारण ईसा मेरे प्रिय हो गये।

मै यह बता दूँ कि ऐतिहासिक ईसामे मेरी कभी कोई रुचि नही रही है। अगर कोई यह सिद्ध कर दे कि ईसा नामका कोई आदमी कभी हुआ ही नही और धर्मग्रन्थमे जिसका वर्णन किया गया है, वह तो लेखककी कल्पनाकी उपज है, तो उससे मेरे लिए कोई फर्क पडनेवाला नही है। क्योकि 'गिरि-प्रवचन' तो मेरे लिए तब भी सत्य ही रहेगा।

तो सारी कहानीको इस दृष्टिसे पढते हुए मुझे लगा कि अभीतक तो ईसाई धर्मका आचरण नही किया जा सका है। हाँ, अगर कोई यह कहे कि जहाँ-कही असीम प्रेम और प्रतिशोधकी भावनाका सर्वथा अभाव देखनेको मिलता है वहाँ ईसाई धर्मके ही तो दर्शन होते है तो बात दूसरी है। लेकिन तब तो इसे किसी सीमामें नही बाँधा जा सकता, किसी ग्रन्थमें दिये उपदेशकी परिधिमे नही रखा जा सकता। तब वह ऐसी चीज बन जाता है जिसकी कोई व्याख्या नही की जा सकती, जिसका उपदेश किसीको नही दिया जा सकता, जिसे मुँहसे बोलकर एक-दूसरेतक नही पहुँचाया जा सकता, बल्कि अगर पहुँचाया जा सकता है तो एक हृदयसे दूसरे हृदयतक ही। किन्तु आम तौरपर ईसाई धर्मको इस रूपमे नही समझा जाता है।

ईश्वरकी कृपासे ईसाइयोने — तथाकथित ईसाइयोने — बाइबिलको किसी-न-किसी तरह नष्ट होनेसे बचा लिया है। ब्रिटिश ऐंड फॉरिन बाइबिल सोसाइटीने कई भाषाओमें इसका अनुवाद करवाया है। यह सब भविष्यमे कोई सच्चा उद्देश्य साध सकता है। किसी जीवन्त धर्मके जीवनमे शायद दो हजार वर्षोका कोई महत्त्व न हो। कारण, यद्यपि गानेको तो हमने गाया है "ऊपर बैठे ईश्वरकी जय हो, धरतीपर शान्तिकी जय हो", परन्तु आज न तो ईश्वरकी जय दिखाई देती है और न शान्तिकी।

जबतक यह पिपासा तृप्त नही होती, तबतक यही मानना चाहिए कि ईसा धरित्रीपर अवतरित नही हुए हैं, अभी हमे उनके अवतारकी प्रतीक्षा करनी है। जब सच्ची शान्ति स्थापित हो जायेगी तब हमे प्रदर्शनोकी आवश्यकता नही रह जायेगी, तब वह हमारे जीवनमें — व्यक्तिगत जीवनमे — ही नही, बल्कि सामूहिक जीवनमें भी प्रतिध्वनित होगा। तब हम कह सकेंगे, हाँ, धरित्रीपर ईसा अवतरित हो चुका है। हमने जो भजन अभी गाया है,[1] उसका सच्चा अर्थ मै यही लगाता हूँ। तब हम

१. प्रवचनसे पहले उपस्थित लोगोंने ईसाके जन्म-दिवसके उपलक्ष्यमें यह भजन गाया था; "व्हाइल शेपर्डस् वाच्ड देयर फ्लॉक्स बाई नाइट"।

वर्षमें किसी एक विशेष दिनको ईसाका जन्म-दिवस नहीं मानेंगे, बल्कि उसके जन्मको सतत घटित होती रहनेवाली एक ऐसी घटना मानेंगे जो हर मनुष्यके जीवनमें आचरित हो सकेगी।

मैं धर्मके इस मूल तत्त्वका जितना अधिक विचार करता हूँ, एकके-बाद-एक युग तथा एकके-बाद-एक देशमें जन्म लेनेवाले धर्मगुरुओंकी अद्भुत कल्पनाओंके विषय में जितना अधिक सोचता हूँ, मेरे सामने यह बात उतनी ही अधिक स्पष्ट होती जाती है कि उन सबके पीछे वही शाश्वत सनातन सत्य है जिसका वर्णन अभी मैंने किया है। इस सत्यको किसी छाप या घोषणाकी जरूरत नहीं हैं। वह तो जीवनमें जीनेकी चीज है, ऐसी चीज जो बिना रुके निरन्तर शान्तिकी दिशामें आगे बढ़ती जाती है।

इसलिए जब हम किसीके लिए 'बड़े दिन' की शुभकामनाएँ, उसके अर्थको बिना समझे करते हैं तो वह एक थोथा फार्मूला ही बनकर रह जाता है। और जबतक हम सम्पूर्ण सृष्टिके लिए शान्तिकी कामना नहीं कर सकते तबतक स्वयं अपने लिए उसकी कामना नहीं कर सकते। यह तो यूक्लिडके स्वयंसिद्ध सिद्धान्तकी तरह एक स्वयंसिद्ध बात हैं कि जबतक हममें चतुर्दिक शान्तिकी उत्कट अभिलाषा नहीं होगी तबतक स्वयं हमको शान्ति नहीं मिल सकती। आप बेशक संघर्षके बीच भी शान्तिका अनुभव कर सकते हैं, लेकिन वह तभी हो सकता है जब आप उस संघर्षको दूर करनेके लिए अपने सम्पूर्ण जीवनको नष्ट कर दें, अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा दें।

और इसलिए जिस प्रकार ईसाका चमत्कारपूर्ण जन्म एक शाश्वत घटना है, उसी प्रकार इस झंझावातोंसे भरे जीवनमें शूलीपर चढ़ना, आत्म-बलिदान करना भी एक शाश्वत घटना है। इसलिए हमें आत्मोत्सर्गका विचार किये बिना जन्मका विचार नहीं करना चाहिए। ईसाके समान जीवन व्यतीत करनेका मतलब है सतत बलिदानका जीवन व्यतीत करना। इसके बिना जीवन सतत मृत्यु है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

२८३. टिप्पणियाँ

मरहूम इमाम साहब

इमाम साहब अब्दुल कादिर बावजीरके उठ जानेसे मैंने अपना एक पुराना मित्र और साथी खो दिया। हिन्दुस्तानने एक सच्चा सेवक खो दिया और इस्लामने एक हीरा गँवा दिया। इमाम साहबकी बहादुरी और उनके देशप्रेमसे कौन परिचित नही है? कमजोर होनेके बावजूद धरासणामे [नमकके भण्डारोपर] हमलेके समय वे सबसे आगे थे और नाजुक होते हुए भी उन्होने जेल-यात्रा की थी। इमाम साहब सजग मुसलमान थे। नमाज और रोजे वे कभी चूके नही। ट्रान्सवालमे इमामत करनेके कारण वे इमाम कहलाते थे। वे देशकी खातिर फकीर बन गये थे। ट्रान्सवालमे जेल काटनेके बाद वे सकुटुम्ब मेरे पास फीनिक्समे रहने चले आये और वहाँ फकीरी ले ली। मै जब स्वदेश वापस आया तो वे भी चले आये। उनकी मलय पत्नी भी उनके साथ आई। उनकी एकके बाद दूसरी पत्नी गई, फिर उनकी बड़ी लडकी फातिमा गुजरी और अब इमाम साहब चले गये। उनके पीछे उनकी लडकी अमीना बेगम और उसके पति कुरेशी रह गये हैं। दोनों देशसेवामे लगे हुए हैं। इमाम साहब आश्रमके न्यासियोंमे से एक थे। वे आश्रमके मामलोमे पूरी तरह रुचि लेते थे, वहाँके नियमोंका पालन करते थे और सबके साथ घुले-मिले थे। मेरे लिए यह एक बड़ी क्षति है; और मेरे हिन्दुस्तान लौटनेके पहले ही उनका चले जाना मेरे दुखमे वृद्धि ही करता है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २७-१२-१९३१

२८४. भेंट : रायटरके प्रतिनिधिको

एस० एस० 'पिलसना
२७ दिसम्बर, १९३१

जिस प्रकार इधरसे जाते हुए मै ज्यों-ज्यो लन्दनके निकट पहुँचता जा रहा था, मेरा मन गम्भीर दायित्वकी भावनासे भरता जा रहा था, उसी प्रकार लौटते हुए मै ज्यो-ज्यो भारतके तटके निकट पहुँचता जाता हूँ, मेरे मनपर अपने दायित्वोका बोध छाता जा रहा है। अन्तर केवल यह है कि इस बारका दायित्व उस अवसरके दायित्व से हजार गुना अधिक है।

इसलिए मै जल्दबाजीमे कोई कदम नही उठाऊँगा। मै सारे उपलब्ध उपायोको आजमाकर देख लेनेके बाद ही, जरूरत होनेपर, भारतको एक बार फिर कष्ट-सहन की आगमें से गुजरनेकी सलाह दूँगा।

मै ईश्वरसे मार्ग दिखानेके लिए निरन्तर प्रार्थना कर रहा हूँ। मै जानता हूँ कि अगर मै अपने सिद्धान्तपर ईमानदारीसे डटा रहा तो वह मुझे निराश नही करेगा। राष्ट्रीय प्रयोजनके लिए सत्य तथा अहिंसामें मेरे विश्वासके अगर और भी पुष्ट होनेकी कोई गुंजाइश थी तो ईश्वरकी कृपासे मेरी यूरोप-यात्राके परिणामस्वरूप वह और भी पुष्ट हुआ है। इस जीवनमें मेरा कोई दूसरा लक्ष्य नही है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-१२-१९३१

२८५. सन्देश : अमेरिकाके लिए

[२८ दिसम्बर, १९३१ के पूर्व]

अमेरिकासे कहिए कि हम जिस स्वतन्त्रताके लिए तडप रहे है उस स्वतन्त्रताके प्रतिष्ठापकके नाते वह अपनी प्रार्थनाओमें हमारे देशके दु:खी जनोको भुला न दे।

[अंग्रेजीसे]

गृह विभाग, राजनीतिक, फाइल स० १४१, पृष्ठ १५-१७, १९३२। सौजन्य: भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार

२८६. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

एस० एस० 'पिलसना'

[२८ दिसम्बर, १९३१][1]

जबतक एक राष्ट्र दूसरेका शोषण करना बन्द नही करता, सच्चा नि:शस्त्रीकरण सम्भव नही है।

गांधीजी ने आगे कहा कि जबतक राष्ट्र-संघके पास अपनी बात मनवानेके लिए कोई शक्ति नहीं होगी तबतक वह राष्ट्रोंके बीच शान्ति कायम नहीं रख सकता। मंचूरियामें चीन और जापानकी लड़ाईसे यह बात बिलकुल स्पष्ट हो गई है।

प्र० : क्या आप ऐसा मानते है कि आपके अहिंसाके सिद्धान्तके प्रयोगसे स्थायी शान्ति कायम की जा सकती है?

उ० : जबतक असली कारणका इलाज नही किया जाता तबतक अहिंसाका कोई प्रभाव नही होगा और यहाँ वह असली कारण है राष्ट्रोका लालचीपन। अगर लालच

१. साधन-सूत्रके अनुसार यह भेंट गांधीजी के बम्बई लौटनेसे कुछ ही समय पूर्व दी गई थी।

न हो तो शस्त्रीकरणका कोई प्रसंग ही न आय। अहिंसाका सिद्धान्त सभी प्रकारके शोषणके पूर्ण त्यागकी अपेक्षा रखता है। ज्यों ही शोषणकी प्रवृत्ति समाप्त होगी, शस्त्रीकरणको एक निश्चित और असह्य बोझ माना जाने लगेगा।

गांधीजी का खयाल था कि जब वे पन्द्रह वर्ष पूर्व यूरोप गये थे तबसे भौतिक दृष्टिसे तो उसने काफी प्रगति की है, किन्तु उन्हें इस बातमें सन्देह था कि आध्यात्मिक दृष्टिसे भी उसने कोई प्रगति की है अथवा नहीं।

लेकिन, मै समझता हूँ, आज जनतामे शान्तिकी ज्यादा ललक है। मैने सर्वत्र ऐसा लक्षित किया कि अन्दरसे लोगोमे वर्त्तमान वस्तुस्थितिके प्रति गहरा असन्तोष और विक्षोभ है। मेरी समझसे यह कोई खतरनाक चीज नही है, बल्कि एक शुभ लक्षण है। अब देखना है कि यूरोपकी सरकारे इस विक्षोभको सही दिशामे सच्चे कार्य-रूपमे परिणत करती है या नही।

प्र० : क्या आप ऐसा-कुछ सोचते हैं — जैसा कि हालमें स्पेनमें हुए परिवर्त्तनसे दिखाई पड़ता है — कि इस विक्षोभके परिणामस्वरूप अगले बीस वर्षोंमें राजतन्त्र धीरे-धीरे लुप्त होता जायेगा और उसका स्थान अधिक लोकतन्त्रात्मक ढंगकी सरकारें ले लेंगी?

उ० : जैसा स्पेनमे हुआ उस तरहके आकस्मिक परिवर्त्तनोमे ऐसा-कुछ देखनेको नही मिलता जिसके आधारपर कोई बुद्धिसगत भविष्यवाणी की जा सके। वैसे भी भविष्यके बारेमे अनुमान लगानेकी मेरी आदत नही है।

भारतके राष्ट्रवादी नेताने कहा कि यह एक निर्विवाद सत्य है कि प्रथम कोटिकी शक्तिके रूपमें इंग्लैंड विफल रहा है, किन्तु इंग्लैंडके लोगोंमें मेरा बहुत विश्वास है और इसलिए मुझे लगता है कि वे अपने वर्तमान आर्थिक संकटका सदुपयोग करेंगे और अन्य राष्ट्रोंके समक्ष आध्यात्मिक प्रगतिका एक उदाहरण पेश करेंगे।

स्वयं इग्लैडके हित तथा दुनियाके हितका भी खयाल करके मै यह आशा करता हूँ कि इग्लैड युद्ध-पूर्व कालकी अपनी भौतिक श्रेष्ठताको पुन. प्राप्त नही करेगा, क्योकि उस श्रेष्ठताका उपयोग अन्य राष्ट्रोके शोषणके लिए किया जा सकता है।

महात्माजी के खयालसे ब्रिटिश साम्राज्य टूट रहा है, और अन्ततः वह कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिण आफ्रिका, न्यूजीलैंड और भारत, इन विभिन्न इकाइयोंमें बँटने जा रहा है; लेकिन उन्हें यह आशा भी है कि ये इकाइयाँ मानव-जातिके कल्याणके लिए स्वेच्छासे एक होकर रहेंगी।

लेकिन हो सकता है, इसमें उनके मनकी इच्छा ही प्रतिध्वनित होती हो।

गांधीजी ने कहा कि यूरोप-भ्रमणसे मेरे मनपर जो सबसे जबरदस्त छाप पड़ी है, वह यह है कि यूरोप, वहाँके लोग आज जो कृत्रिम जीवन जी रहे हैं, उसे ज्यादा दिन कायम नहीं रख सकता, क्योकि वह जीवन बहुत ही भौतिकतावादी और उलझा हुआ है।

पुरानी सादगीको फिरसे अपनाना ही होगा, सुख-सुविधाओंकी समुचित सीमाका विचार करना ही होगा। शरीर आत्मापर हावी हो गया है। यह यन्त्र-युग यूरोपीय सभ्यताको नष्ट कर रहा है। अत्युत्पादन तथा उत्पादनके उचित वितरणके उपायका अभाव पूंजीवादी समाजके लिए विनाशकारी सिद्ध हो सकता है। मुझे तो एकमात्र समाधान यही दिखाई देता है कि फिरसे हस्तोद्योगको अपनाया जाये और व्यक्तिको कारखानोंकी गुलामीसे छुटकारा दिलाया जाये।

प्र० : क्या आप इंग्लैंड तथा संयुक्त राज्य अमेरिका-जैसे बड़े-बड़े उद्योगवादी देशोंसे भी चरखा अपनानेकी सिफारिश करेंगे?

उ० : मेरा खयाल है, उन देशोंके जीवनमें वह दिन बड़ा महत्त्वपूर्ण होगा जब वे चरखेको अपना लेंगे।

प्र० : दुनिया सुधरती जा रही है या बिगड़ती जा रही है?

उ० : जबतक परमदयालु परमेश्वरमें मेरा विश्वास है तबतक मुझे यही मानना पड़ेगा कि दुनिया सुधरती जा रही है — हालांकि तथ्य तो इस मान्यताके विपरीत ही दिखाई दे रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-१-१९३२

२८७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२८ दिसम्बर, १९३१

प्रिय जवाहर,

इन्दुने तुम्हारा पत्र मुझे दिया। पता नहीं क्यों, तुम्हारी गिरफ्तारीसे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। मैं अभीतक कमलाके पास नहीं जा सका हूँ। आज रातको जा सकता हूँ, कल तो जरूर ही। तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इन्दुके नाम तुम्हारी दूसरी पत्र-माला मैंने पढ़ ली है। मुझे कुछ सुझाव देने थे, परन्तु यह तो शायद तभी होगा जब हम [इन झंझटोंसे मुक्त होकर] निश्चिंतताकी स्थितिमें होंगे।

इस बीच तुम्हें और शेरवानीको प्यार।

[अंग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृष्ठ १०४

२८८. भेंट : समाचार-पत्रोंको

बम्बई
२८ दिसम्बर, १९३१

पत्रकारोंसे थोड़ी देरकी बातचीतमें गांधीजी ने बताया कि मैंने प्रधान मन्त्रीके वक्तव्य तथा पार्लियामेंटमें भारतके सम्बन्धमें हुई बहसका मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया है। उन्होंने कहा कि आज रातकी सार्वजनिक सभामें मैं इस विषयकी चर्चा करूँगा। वैसे तो सरकारकी सबसे ताजा कार्रवाई, अर्थात् पण्डित जवाहरलाल और श्री शेरवानी तथा अब्दुल गफ्फार खाँकी गिरफ्तारीको लोग कांग्रेसको दी गई चुनौती मानेंगे, लेकिन यह घोषणा करना तो कांग्रेस-अध्यक्षका काम है कि इस कार्रवाईका मतलब दिल्लीके समझौतेको तोड़ना है।

जब महामहिमकी सरकार द्वारा परिषद्के कार्यको आगे बढ़ानेके लिए नियुक्त की जानेवाली उप-समितियोंके प्रति गांधीजी का रवैया जाननेकी जिज्ञासा की गई तो उन्होंने कहा कि अभी यह बतानेका समय नहीं आया है। सारी सामग्री मेरे पास नहीं है। यह सोचना तो सरकारका काम है कि अगर वातावरण अनुपयुक्त रहा तो समितियाँ कैसे काम करेंगी।

गांधीजी के विचारसे गोलमेज परिषद् एक वाद-विवाद समिति थी। उसके जिस प्रकार प्रातिनिधिक होनेका दावा किया गया, वैसी प्रातिनिधिक वह नहीं थी। वह सच्चे अर्थोंमें 'गोलमेज' ही नहीं थी।

जब उनसे यह पूछा गया कि क्या अब आप इस बातके कायल हो गये हैं कि विराम-सन्धिपर हस्ताक्षर करना एक भारी भूल थी, तो उन्होंने कहा कि 'नहीं', वह तो एक राजनयिकोचित कार्य था। उन्होंने इस बातको स्वीकार किया कि हालमें बंगाल, संयुक्त प्रान्त तथा सीमान्त प्रदेशमें जो-कुछ हुआ है, वह कांग्रेसको एक चुनौती है। लेकिन कांग्रेस कार्य-समितिके निर्णयसे पूर्व वे उसके सम्बन्धमें कोई कार्रवाई करनेको तैयार नहीं हैं। उन्होंने आगे कहा कि गोलमेज परिषद् एक वाद-विवाद समिति थी। क्या आप ऐसा मानते हैं कि दिल्लीका समझौता अब निष्प्रभाव हो चुका है, इस प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा कि यह तो कांग्रेस-अध्यक्ष ही बता सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-१२-१९३१, और हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-१२-१९३१।

२८९. भेंट : समाचार-पत्रोंको[1]

बम्बई
२८ दिसम्बर, १९३१

महात्मा गांधीने इस अफवाहका खण्डन किया कि वे वाइसरायसे मुलाकातका समय लेनेकी कोशिश कर रहे हैं और भारतकी परिस्थितियोंके सम्बन्धमें उनसे बात-चीत चला रहे हैं।

महात्माजी ने अपनी बात समझाते हुए कहा कि उन्हें भारतके हालके घटनाक्रम का अध्ययन करनेका समय ही नहीं मिल पाया है और अपने सहयोगियोंसे अबतक उन्होंने जितनी बातें सुनी हैं वे तो किस्से-कहानियोंके ढंगकी ही हैं। इसलिए इस विषयपर वे कोई राय जाहिर करनेको तैयार नहीं थे। लेकिन जब उनसे यह पूछा गया कि देशमें अध्यादेशोंके लागू रहते क्या गोलमेज परिषद्की समितियोंके लिए भारतमें अपना काम करना कठिन नहीं होगा तो उन्होंने इससे सहमति प्रकट करते हुए कहा :

हाँ, उस हालतमे तो उनका काम करना बहुत कठिन होगा। लेकिन समिति अपना काम कैसे करेगी, इसकी चिन्ता करना तो सरकारका काम है।

एक पत्रकारने उनसे पूछा कि क्या आप इसे भारतके लिए बहुत विपत्तिकी बात नहीं मानते कि उसे एक बार फिर संघर्षके दौरसे गुजरना पड़े। गांधीजी ने छूटते ही जवाब दिया :

अगर भारतको एक बार फिर अग्नि-परीक्षा सहनी भी पडी, तो उसे मैं किसी भी तरहसे उसके लिए विपत्तिकी बात नही मानता।

सर प्रभाशंकर पट्टणी : लेकिन आप उस स्थितिको रोकनेके लिए तो भरसक कोशिश करेंगे ?

गाधीजी : स्वभावत: मैं उसे रोकनेकी भरसक कोशिश करूँगा। लेकिन अगर वह अनिवार्य हो जायेगी तो मृत्युको सामने देखकर उदास हो जाना योद्धाके योग्य आचरण तो नही होगा। मेरे लिए उस सघर्षका मतलब कैद या लाठियोकी मार हो सकता है।

एक स्वर : या देश-निकाला।

गाधीजी : कैद और देश-निकाला मेरे लिए एक ही है। उनमें कोई फर्क नही है।

सरदार वल्लभभाई : हाँ, जलवायुका फर्क हो सकता है।

१. यह भेंट-वार्त्ता मणि भवनमें हुई थी। इसमें वल्लभभाई पटेल, सुभाषचन्द्र बोस और प्रभाशंकर पट्टणी भी मौजूद थे।

गाधीजी : जलवायुके फर्ककी मै परवाह नही करता। (हँसी)

गांधीजी ने पत्रकारोंको बताया कि प्रधान मन्त्रीके वक्तव्यपर उन्होंने खूब ध्यानपूर्वक विचार किया है और उसमें छिपे सभी अर्थोंको समझनेकी कोशिश की है। लेकिन आजाद मैदानकी सभासे पहले वे उसपर कुछ कहनेको तैयार नहीं थ।

एक पत्रकारने जब कांग्रेस द्वारा युद्ध-विरामकी घोषणाके सम्बन्धमें कहा कि उसे इस बातमें सन्देह है कि वह कोई समझदारीका काम था तो महात्मा गांधीने तत्परतासे उत्तर दिया कि दिल्लीकी युद्ध-विराम सन्धिपर हस्ताक्षर करना राजनयिकोंको शोभा देनेवाला काम था।

इसपर उस पत्रकारने यह दलील दी कि उसकी आड़ लेकर सरकारने देशके हजारों नौजवानोंको जेलोंमें बन्द कर दिया। उत्तरमें गांधीजी ने कहा :

लेकिन जितने नौजवान जेलोमे है उनसे कही अधिक बाहर है। मै आपकी बात नही मान सकता।

इसके बाद उनसे कई प्रश्न पूछे गये, किन्तु यह कहकर कि अधिकृत तौरपर इनके उत्तर कांग्रेसके अध्यक्ष ही दे सकते हैं, उन्होंने उनका जवाब देनेसे इनकार कर दिया। [उन्होंने कहा] :

मेरी रायका कोई महत्त्व नही है। मेरी राय तो व्यक्तिकी ही राय होगी।

एक व्यक्ति : लेकिन अध्यक्ष तो इतने दिनोंसे यही कहते रहे हैं कि देश आपके आनेतक प्रतीक्षा करे। इससे प्रकट होता है कि आपका विचार ही अंतिम होगा।

गाधीजी : अध्यक्षके लिए शायद हो।

प्र० : आप बंगाल क्यों नहीं जाते? क्या आप यह नहीं समझते कि आपका बंगाल जाना ठीक रहेगा?

गाधीजी : हो सकता है, बिलकुल ठीक हो। लेकिन मै एक प्रतिनिधि हूँ — आप की तरह अपने मनका मालिक नही। (हँसी) इस प्रसगमे तो मेरी इच्छा वही होनी चाहिए जो बगालकी हो। इस विषयमे मुझे सलाह देनेके लिए सुभाष बाबू यहाँ मौजूद है। लेकिन आपने उनको तो मुझसे कुछ कहनेका मौका ही नही दिया है।

इसके बाद उनसे यह पूछा गया कि हालमें बम्बईकी एक सभामें श्री एम० आर० जयकर द्वारा व्यक्त किया गया यह विचार सही है कि अगर आपने लॉर्ड इर्विनका १४ अन्य कांग्रेस-प्रतिनिधियोंको अपने साथ लन्दन ले जानेका प्रस्ताव मान लिया होता तो अच्छा होता।

गाधीजी : अपने अनुभवके बाद मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि काग्रेसने केवल मुझको ही भेजनेका निर्णय करके बहुत समझदारीका काम किया।

अगर राष्ट्रके १४-१५ सेवक यहाँ रहनेके बजाय बाहर भेज दिये जाते तो यह बहुत बुरी बात होती। दूसरी दृष्टियोसे भी केवल एक आदमीको भेजना बहुत अच्छा था। जब आदेश इतना अधिक स्पष्ट था, तो एकसे अधिक एजेट भेजनेकी कोई जरूरत

ही नही थी। हाँ, अगर उसको अपने उस एजेंटपर विश्वास न होता तो बात दूसरी होती। उसने केवल एक आदमीको भेजकर सबसे ज्यादा समझदारीका काम किया — खासकर मुझ जैसे बुद्धिमान आदमीको भेजकर। (हँसी)

एक अन्य रिपोर्टरने गांधीजी से गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें अपनी राय संक्षेपमें जाहिर करनेका अनुरोध किया।

गांधीजी: गोलमेज परिषद्का मेरा अनुभव तो यह है कि उसके जिस अर्थमे प्रातिनिधिक होनेका दावा किया गया है, उस अर्थमे प्रातिनिधिक न होकर वह एक वाद-विवाद समिति ही थी। इसलिए सच्चे अर्थोमे गोलमेज परिषद् भी नही थी।

प्र०: बस, इतना ही!

गांधीजी: लेकिन आप तो सक्षेपमें ही मेरी राय जानना चाहते थे। (हँसी)

प्र०: अस्पृश्य लोग आपसे इतने नाराज क्यों है?

गांधीजी: मुझे नही मालूम कि वे मुझसे नाराज है। मै यह नही मानता कि वे मुझसे नाराज है।

प्र०: अस्पृश्यों और दलित वर्गोंके प्रति आपका क्या रवैया है?

गांधीजी: मेरा रवैया यह है कि वे मेरे अभिन्न अग है। वे जिये और पूरी प्रतिष्ठा और आत्म-सम्मानका जीवन व्यतीत करे, इसके लिए मै सहर्ष अपने प्राणोकी बलि चढा सकता हूँ। और मेरा रवैया यह है कि मै स्वय दलित वर्गका हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३१

२९०. भाषण: सार्वजनिक सभा, बम्बईमें[1]

बम्बई
२८ दिसम्बर, १९३१

जब गांधीजी बोलनेको उठे तो लोग कई मिनटतक हर्ष-ध्वनि करते रहे। बम्बईके नागरिकोको संबोधित करते हुए महात्माजी ने कहा कि आजकी सुबह आपने मेरा जो स्वागत किया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन, मैं इसे अपना व्यक्तिगत सम्मान नहीं, बल्कि कांग्रेसके प्रति आपके विश्वासका द्योतक मानता हूँ।

गत रात मै आपके सामने कुछ और ही तरहकी बाते कहनेकी आशा कर रहा था, लेकिन अब कुछ और तरहकी बाते कहनेका इरादा है। स्पष्ट ही ईश्वरको

१. यह सभा गांधीजी के बम्बई पहुँचनेके कुछ ही घंटे बाद आजाद मैदानमें हुई थी। साधन-सूत्रके अनुसार यह इतनी बड़ी सभा थी जितनी बड़ी सभामें बम्बईमें बोलनेकी किसी नेताने कल्पना भी नही की होगी। गांधीजी के बोलनेसे पहले वल्लभभाई ने गांधीजी के स्वदेश लौटनेके उपलक्ष्यमें उनका स्वागत करते हुए एक भाषण दिया था।

वसा मजूर नही था। सुबह जहाजसे उतरते समयतक मुझे यह नही मालूम था कि पेशावरमे गोलियाँ चली है, न मुझे यही मालूम था कि पण्डित जवाहरलाल और श्रीयुत शेरवानीको जेलमे डाल दिया गया है या उनपर मुकदमा चलाया जानेवाला है। इन्हे मै लॉर्ड विलिंग्डनकी ओरसे मुझको दिये गये 'बडे दिन' के उपहार मानता हूँ। मेरे स्वदेश लौटनेपर मुझे उपहार देना उनके लिए स्वाभाविक ही था। सीमा प्रान्तमे खान अब्दुल गफ्फार खाँ, उनके भाई तथा अन्य कई लोगोको गिरफ्तार कर लिया गया है। और भी बहुत-से लोग जेल भेज दिये गये है। उस प्रान्तसे हमे शायद कोई समाचार भी न मिल पाये। सत्याग्रहीके लिए इनसे अच्छे उपहार और क्या हो सकते है।

यदि हमने कोई अपराध किया होता और उसके लिए हमे दण्ड दिया गया होता तो वह खेदका प्रसग अवश्य होता। लेकिन जितनी अच्छी तरह मै इस बातको जानता हूँ कि मेरे शरीरमे प्राण है उतनी ही अच्छी तरह यह भी जानता हूँ कि खान अब्दुल गफ्फार सत्याग्रहके सच्चे पुजारी है और उन्होने उसके मर्मको समझ लिया है। पण्डित जवाहरलाल और श्रीयुत शेरवानीके बारेमे तो मुझे कुछ कहनेकी जरूरत ही नही है। उनको आप उतनी ही अच्छी तरह जानते है जितनी अच्छी तरह मै जानता हूँ।

अब हमारे सामने सवाल यह है कि हमारा कर्त्तव्य क्या है। क्या हम सरकारकी कार्रवाईसे सकेत लेकर सत्याग्रह-सघर्ष छेड़ दे, या किसी और उपायको आजमाकर देखे? इस समय मै आपको अपनी राय नही बता सकता।

मै केवल इतना ही कहूँगा कि यदि भाग्यको यही मंजूर होगा कि हम फिरसे उस अग्नि-परीक्षासे गुजरे और यदि काग्रेसकी कार्य-समितिने सघर्ष पुनः आरम्भ करनेका निश्चय किया, तो आपसे उसमे शामिल होनेको कहनेमे मुझे कोई सकोच नही होगा। लेकिन, अगर सत्याग्रहको बचानेकी कोई सम्भावना है तो मै उसे बचानेकी भरसक कोशिश करूँगा और आपसे धीरजसे काम लेनेका अनुरोध करूँगा। मेरा खयाल है, वर्षोके अनुभवके बाद भारतने धीरज रखना सीख लिया है।

मुझे जहाजपर यह जानकर बहुत दुःख हुआ कि ऐसी खबर है कि बगालमे दो लडकियोने एक हत्या कर डाली। सत्याग्रहीके नाते इस बातसे मुझे बहुत दुःख हुआ, क्योकि हमारा धर्म मारना नही, बल्कि मरनेको तैयार रहना है। हमारे सघर्ष का आधार प्रेम है। यदि हम सरकारसे लड़ते भी है तो प्रेमास्त्रसे ही लड़ेगे। उसमें घृणाके लिए कोई अवकाश नही है। सो उस घटनाके बारेमे सुनकर मुझे बहुत दु.ख हुआ, लेकिन इसका मतलब यह नही कि सरकार बगालमे जो-कुछ कर रही है, उसका कही भी कोई औचित्य है। सरकारको गलत काम करनेवालो को सजा देनेका पूरा हक है, लेकिन जनताको ऐसे कार्योके लिए परेशान करना, जिनकी उसपर कोई जिम्मेदारी ही न हो, सरकारको शोभा नही देता। सयुक्त प्रान्त या पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें जारी किये गये अध्यादेशोका कोई औचित्य नही हो सकता। हम इनमे से किसीको बरदाश्त नही कर सकते।

मैंने आशा की थी कि सरकारके साथ सहयोग करनेका कोई रास्ता शायद निकल आयेगा। अब भी कोई रास्ता निकालनेकी मैं यथाशक्ति कोशिश करूँगा। लेकिन मुझे यह स्वीकार करना होगा कि यहाँ मैंने जो लक्षण देखे हैं उनके कारण मेरी आशा बहुत क्षीण हो गई है। और अगर हमें लड़ना ही पड़ा तो हमें अपना पूरा जोर लगा देनेको तैयार रहना चाहिए। हमारा संघर्ष ऐसा है जिसमें सभी हिस्सा ले सकते हैं। यह लड़ाई खुशी-खुशी कष्ट सहन करनेकी है। यह जान लेनेकी नहीं, बल्कि देनेकी लड़ाई है। इस संघर्षमें बच्चा भी अपना हिस्सा अदा कर सकता है।

पिछले साल हमने लाठियोंके प्रहार सहे थे, लेकिन इस बार हमें गोलियोंकी बौछार सहनेको तैयार रहना चाहिए। मैं नहीं चाहता कि केवल सीमा-प्रान्तके पठान ही गोलियोंकी बौछार सहें। अगर गोलियोंकी बौछार सहनी ही है तो बम्बई और गुजरातको भी अपने हिस्सेकी सहनी चाहिए। लन्दनमें मैंने कहा था कि अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए हमें दस लाख जानें भी देनी पड़ें तो मैं बिना किसी मनःस्तापके वह बलिदान देनेको तैयार रहूँगा। मैं मानता हूँ कि हमें मृत्युके भयसे मुक्त हो जाना चाहिए और जब मृत्युका वरण करना हो तो इस तरह करना चाहिए जैसे हम किसी मित्रको गले लगाते हैं। लेकिन अपने प्राणोंकी बलि चढ़ानेके बावजूद हमें इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि किसी अंग्रेजका बाल भी बाँका न होने पाये। हमें यह आशा रखनी चाहिए कि अपने बलिदानके बलपर हम उन अंग्रेजोंका हृदय-परिवर्त्तन कर सकेंगे जो आज हमपर प्रहार करते हैं।

अपनी यूरोप-यात्राके परिणामस्वरूप अहिंसामें मेरा विश्वास बहुत बढ़ गया है। मैं मानता हूँ कि अहिंसामें कठोरसे-कठोर हृदयको भी पिघला देनेकी शक्ति है। कुछ लोग सोचते थे कि अपनी यूरोप-यात्रामें मैं कुछ नई बात सीखूँगा, लेकिन मैं सच कहता हूँ कि मैंने वहाँ कुछ भी नया नहीं सीखा और उसका केवल यही परिणाम निकला कि अहिंसामें मेरी आस्था और भी दृढ़ हो गई।

अपनी लन्दन-यात्रामें मुझे जो दूसरा अनुभव हुआ वह यह कि ब्रिटेनका मन्त्रिमण्डल ऐसा मानता है — और निश्चयही पूरी ईमानदारीसे मानता है — कि हम स्वराज्यके योग्य नहीं हैं। वे मानते हैं कि कांग्रेसी अहिंसाकी बात तो करते हैं, लेकिन सच्चे दिलसे उसमें विश्वास नहीं रखते। इसका कारण यह हैं कि भारत-स्थित अधिकारियोंसे उन्हें जो विवरण मिलते हैं उनमें यही बताया जाता है कि भारत स्वराज्यके योग्य नहीं है और कांग्रेसका आम जनतापर प्रभाव नहीं है। इसीलिए वे कांग्रेस-संगठनोंको अवध घोषित करते रहे हैं। हमारा काम अंग्रेजोंके दोष निकालना या उनपर नाराज होना नहीं है, बल्कि अपनी खामियोंसे छुटकारा पाना और अहिंसा-धर्मके अनुसार आचरण करना है।

हो सकता है कि आपमें से बहुतोंने अहिंसाको एक कार्य-साधक नीतिकी तरह स्वीकार किया हो, लेकिन जबतक कांग्रेसने इस धर्मको अपना रखा है तबतक हमें उसका दृढ़तासे पालन करना चाहिए। हमें अपने आचरणसे यह सिद्ध करना चाहिए कि हम कांग्रेसी लोगोंका उद्देश्य किसीको हानि पहुँचाना नहीं, बल्कि अपने प्राणोंकी

बाजी लगाकर दूसरोकी रक्षा करना है। कांग्रेसका उद्देश्य प्राणोकी बलि देकर स्वतन्त्रता प्राप्त करना है। जो लोग इस विचारसे सहमत न हो वे कांग्रेस छोड़ दें तो अच्छा हो। यदि हम वैसा करेंगे तो हमने जो प्रभाव और प्रतिष्ठा प्राप्त की है उसकी वृद्धि होगी अगर हम उसे गँवा बैठेंगे तो स्वतन्त्रता नही प्राप्त कर पायेंगे।

यदि हम अबतक स्वराज्य प्राप्त नही कर पाये है तो उसका मतलब यह नही कि हमें उसके लिए प्रयत्न करना छोड़ देना चाहिए। भारतको केवल अपनी स्वतन्त्रता ही प्राप्त नही करनी है; उसे दुनियाको शान्ति और अहिंसाका सन्देश भी देना है। यदि उस लक्ष्यको प्राप्त करनेमें अनेक वर्ष भी लग जायें तो उससे हमें हतोत्साह नही होना चाहिए।

मै लोगोको यह कहते सुनता हूँ कि अगर कांग्रेस सत्याग्रहका तरीका छोड़ दे तो वह सरकारसे निबट सकती है। मै यह स्पष्ट कर दूँ कि सत्याग्रह और कांग्रेस अभिन्न है। कांग्रेसकी शक्ति सत्याग्रहमें निहित है, और सरकारको अन्ततः कांग्रेसकी बात माननी पड़ेगी। मैंने लन्दनमे यही बात कही थी और आज आपके और सारी दुनियाके सामने यही बात दोहराता हूँ। कांग्रेस केवल हिन्दुओंकी नही है। इसे मुसलमानों, सिखो, पारसियो, ईसाइयों, यहूदियो — बल्कि वास्तवमें भारतको अपना घर बना लेनेवाले सभी लोगो — के हित-साधनकी उतनी ही चिन्ता है। कांग्रेसको उन अंग्रेजोंकी भी फिक्र है जिन्होंने भारतको अपना घर बना लिया है। मैंने लन्दनमे कांग्रेसकी ओरसे यह दावा किया था कि वह सारे भारतका प्रतिनिधित्व करती है और आज फिर वह दावा दोहराता हूँ। इसका प्रभाव निश्चय ही बढेगा।

हम लन्दनमे साम्प्रदायिक समस्याको सुलझा नही सके। मै जानता था कि उसे वहाँ सुलझाया ही नही जा सकता। इसे कांग्रेस ही सुलझा सकती है और इसके लिए वह जो-कुछ कर सकती है, कर रही है। इसका उपाय सभी वर्गों और सम्प्रदायोंकी सेवा करना है। अगर कांग्रेस सिखों और मुसलमानोकी सेवा करेगी तो निश्चय ही वे सब उसे अपना कहेंगे।

दो शब्द अस्पृश्योंके बारेमें। मेरा दावा है कि मै उन्हीम से एक हूँ। मै जीवन-भर उनकी सेवा करता आया हूँ। उनकी सेवा मैंने कांग्रेसका कार्य अपनानेसे भी पहले ही शुरू कर दी थी। फिर मै ऐसा कोई काम कैसे कर सकता हूँ जिससे उनका नुकसान हो? सवर्ण हिन्दुओंने अस्पृश्योंपर इतने अत्याचार किये है कि किसी भी अन्य धर्ममें इसका उदाहरण नही मिल सकता। इसलिए अगर वे नाराज होकर दस-बीस हिन्दुओंका नुकसान करते है तो उससे क्रुद्ध होकर बदलेकी कार्रवाई करना उचित नही होगा। मै अस्पृश्योंको सीटोंके आरक्षण आदि जैसी सुविधा देनेके पक्षमें नही हूँ, क्योकि मै मानता हूँ, उससे तो अस्पृश्यता स्थायी बन जायेगी। भले ही भारतके भावी विधान मण्डलोंमें केवल अस्पृश्य सदस्य ही हो लेकिन उन्हे बराबरीके दर्जेके लोगोंकी तरह विधान मण्डलोंमे स्थान प्राप्त करने चाहिए। यदि हम उन्हे अपने स्तरतक नही उठाते तो हमारी स्वतन्त्रता बेकार होगी। जबतक किसीका भी — चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, अस्पृश्य हो या स्पृश्य, गरीब हो या अमीर — शोषण

होता है और उसे देशके अन्य नागरिकोकी बराबरीका दर्जा नही दिया जाता तबतक हम स्वतन्त्रताका उपभोग नही कर सकते। यह तो स्वतन्त्रताका मुखौटा लगाये गुलामी होगी। लन्दनमे मैंने जो-कुछ किया वह उनके अधिकारोकी सुरक्षाके लिए ही किया।

मै कई विषयोपर बोलना चाहता था। मै आपको यह बताना चाहता था कि लन्दनमे गोलमेज परिषद्के सम्बन्धमें मैंने क्या-क्या किया। अगर मै मुक्त रहा तो किसी और अवसरपर वह सब बताऊँगा या आप किसी और जरियेसे वह सब जान लेंगे।

अभी मुझे आपसे यही कहना है कि अगर सघर्ष हुआ तो हर तरहके बलिदान के लिए तैयार रहिए, लेकिन आप यह प्रतिज्ञा कीजिए कि किसीको हानि नही पहुँचायेंगे। एक बार फिर अग्नि-परीक्षासे गुजरनेके प्रसगको रोकनेके लिए मै एक मनुष्यके लिए जो-कुछ भी सम्भव है, करूँगा, लेकिन अगर मुझे लगा कि कोई और रास्ता नही है तो उसमें से गुजरनेके लिए आपका आह्वान करनेमें भी नही हिचकूँगा। चाहे हमें उसमें कितने भी बडे-बडे कष्ट क्यो न झेलने पडे। ईश्वर हमे स्वतन्त्रताकी खातिर कष्ट सहने और त्याग-बलिदान करनेकी शक्ति दे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३१

२९१. भाषण: वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगकी सभामे[1]

बम्बई

२८ दिसम्बर, १९३१

इग्लैडसे चलनेके थोडी ही देर पहले मुझे श्री डेविडका तार मिला, जिसमे उन्होने इस सभाकी अध्यक्षता करनेको आमन्त्रित किया था। तार पाकर मुझे लगा कि इस निमन्त्रणको अस्वीकार करना तो मेरे लिए असम्भव है। इसलिए मैंने उत्तरमे तार भेजकर उनसे कहा कि आप सरदार वल्लभभाई पटेलसे मिलकर समय तय कर ले, क्योकि स्वभावत· मेरे सारे समयपर उनका अधिकार है। और आजकी रात इस समय आपके समक्ष बोलते हुए मुझे बहुत हर्ष हो रहा है।

जब मैंने यह निमन्त्रण स्वीकार किया था, मेरा इरादा आपके सामने उन बातोकी चर्चा करनेका था जो मैंने इग्लैडमे देखी। लेकिन भारत पहुँचनेपर यहाँकी स्थितिके बारेमें मैंने जो-कुछ सुना है, उससे मेरी सारी योजना उलट-पलट हो गई। मै आपके सामने और काग्रेसके सामने, इंग्लैड तथा यूरोपमे मैंने जो बहुत-सी बाते

१. रातके १० बजे मैजेस्टिक होटलमें हुई इस सभाकी अध्यक्षता सर स्टैनली रीडने की थी। उपस्थित लोगोंमें प्रभाशकर पट्टणी, फीरोज सेठना, नसरवानजी चोकसी, वल्लभभाई पटेल और काग्रेस कार्य-समितिके कुछ सदस्य भी थे।

देखी, उनके सम्बन्धमे बोलना चाहता था। उनमे अच्छाइयाँ भी है और बुराइयाँ भी। मैने कुछ ऐसी चीजे देखी जिनसे हर तरहसे मुझे आशा बँधी। लेकिन ऐसी चीजे भी थी जिनसे कोई आशा नही बँधती थी। मैने इग्लैड और यूरोपमे जो-कुछ देखा, उसकी चर्चा मै खुशी-खुशी करता। लेकिन अब चूँकि वास्तविक परिस्थिति मेरे सामने है, इसलिए मुझे मुख्यतः उन्ही घटनाओपर बोलना होगा जो आज इस देशकी कल्याण-कामना करनेवाले लोगोके रूपमे मेरे और आपके सामने चुनौती बनकर खड़ी है।

लेकिन मै आपको एक बातके लिए आश्वस्त कर देना चाहता हूँ। वह यह है कि लन्दनमे या इग्लैड अथवा यूरोपमे मै जहाँ-कही भी गया, सर्वत्र मुझे अत्यन्त स्नेह मिला और लगा कि किपलिंगके इस कथनमे कोई सत्य नही है कि पूर्व और पश्चिम कभी भी नही मिल सकते। अपने इग्लैड और यूरोपके तीन मासके प्रवास-कालमे मुझे तो ऐसा कोई अनुभव नही हुआ जिससे लगे कि आखिरकार पूर्व, पूर्व है और पश्चिम, पश्चिम। इसके विपरीत, आज मै इस बातका सबसे अधिक कायल हूँ कि चाहे कोई भी देश हो, मानव-स्वभाव सर्वत्र एक-सा होता है, अगर आप आदमीके पास स्नेह और विश्वास लेकर जाये तो आपको प्रतिदानमे दस गुना, बल्कि हजार गुना भी ज्यादा स्नेह और विश्वास मिलेगा।

यद्यपि मै यह नही कह सकता कि काग्रेसकी माँगकी दृष्टिसे गोलमेज परिषद् से मै कुछ भी प्राप्त कर सका हूँ, लेकिन ऐसा भी नही समझता कि मेरा इग्लैड जाना व्यर्थ गया। इसके विपरीत मै यह मानता हूँ कि वहाँ मै जो अनुभव प्राप्त कर सका, उसे प्राप्त करके बहुत अच्छा किया। इस अनुभवने मुझे, गत ३० वर्षोसे सार्वजनिक प्रश्नोके सम्बन्धमे मै जिन तरीकोसे काम लेता आया हूँ, उनकी कार्य-क्षमताको परखनेका और भी अवसर प्रदान किया है। लेकिन मै अपने उस अनुभवके बारेमे इससे ज्यादा नही कहूँगा, क्योकि भारतमे उस अनुभवकी प्रतिध्वनि सुननेके बजाय मै अपने सामने कठोर तथ्योको उपस्थित पाता हूँ।

मै यह तो नही कह सकता कि गोलमेज परिषद् अथवा प्रधान मन्त्रीकी घोषणा से कोई ऐसी चीज मिली है जो काग्रेसको निश्चित रूपसे सन्तुष्ट करनेवाली हो, लेकिन यह जरूर कह सकता हूँ कि ब्रिटिश मन्त्रियोमे मुझे भारतकी परिस्थितियोको समझनेकी सच्ची कोशिश दिखाई दी, यद्यपि भारतीय दृष्टिकोणकी मेरी जो अव-धारणा है, वह उनके गले नही उतर सकी। प्रधान मन्त्रीकी घोषणासे जो आशाएँ बँधी थी और भारत-मन्त्रीके भाषणसे जिनकी पुष्टि हुई थी, उनके अनुकूल परि-स्थितियाँ देखनेके बजाय मुझे तो भारतको वह सीमित दायित्व दिये जानेके लिए भी अनुकूल वातावरण दिखाई नही देता जिसकी चर्चा भारत-मन्त्रीके भाषणमे हुई थी।

मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मुझे जितने मन्त्रियोसे मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ, उनमें भारत-मन्त्रीको मैंने बहुत ही ईमानदार और निश्छल व्यक्ति पाया। उनके मनमे क्या है, यह समझनेमे मुझे कोई कठिनाई नही हुई और उनके साथ हुई प्रत्येक मुलाकातमे मै उनके अधिकाधिक निकट होता गया और जब हम अलग

हुए तो एक-दूसरेके अच्छेसे-अच्छे मित्रके रूपमे अलग हुए। वैसे तो अन्य सभी मन्त्रियोसे भी मै उनके प्रति हृदयमें मैत्रीकी भावना लेकर ही अलग हुआ।

लेकिन यहाँ आकर तो बिलकुल दूसरी ही तरहकी वस्तुस्थिति देख रहा हूँ। यहाँ मै सीमान्त प्रदेशकी समस्या देखता हूँ। एक ओर तो यह घोषणा की जा रही है कि सीमान्त प्रदेशको भी अन्य प्रान्तोका ही दर्जा दिया जायेगा और दूसरी ओर उस प्रान्तमें एक ऐसा अध्यादेश जारी किया गया है, जिसकी कोई मिसाल मुझे अन्यत्र नही मिलती। अगर आपने उसका सम्यक् अध्ययन न किया हो तो अब करनेको कहता हूँ। मैंने भी ध्यानपूर्वक उसका अध्ययन नही किया है। मैं अखबारोमे छपा सक्षिप्त विवरण ही देख पाया हूँ। लेकिन मै नही कह सकता कि अगर यह कानून हो भी तो कोई मानवोचित कानून है।

इसमें जान-मालको सुरक्षा प्रदान करनेकी कोई व्यवस्था नही की गई है। इसका प्रकट उद्देश्य सीमान्त प्रदेशके बहादुर लोगोको सख्तीके साथ दबा देना है। मै खान अब्दुल गफ्फार खाँ तथा उनके खुदाई खिदमतगारोके दलको जानता हूँ। लेकिन इन लाल कुरतीवालो — खुदाई खिदमतगारो — ने क्या किया है, यह मुझे मालूम नही है। मै अब्दुल गफ्फार खाँकी महानतासे परिचित हूँ। वे एक बहादुर पठान है। वे बडे निश्छल हृदयके सच्चे और ईमानदार आदमी है और वे खुदासे डरकर चलते है। पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तके कुछ अधिकारियोने भी उनकी ईमानदारीकी साक्षी भरी है। लेकिन अब उन्हे अपने लोगोके एक दलके साथ निर्वासित कर दिया गया है।

और उनका अपराध क्या है? उनका अपराध यह है कि वे अपने प्रान्त, अपने देश भारतकी आजादी चाहते थे, उनका अपराध यह है कि हालमे उस प्रान्तमें नये ढगकी सरकार स्थापित करनेके उपायोपर विचार करनेके लिए आयोजित दरबारमें वे उपस्थित नही हुए। इसके अलावा उन्होंने कुछ नही किया और न उनके उन हजारो अनुगामियोमे से ही किसीने कुछ किया। वे लाल कुरतियाँ पहनते थे, यह क्या उनका अपराध था? और इस सबके ऊपरसे हमे ये खबरे मिली है कि अध्यादेशकी अवज्ञा करनेके कारण उनपर गोलियाँ चलाई गईं। सविनय अवज्ञाके लिए दण्ड दिया जाना चाहिए, क्योकि अवज्ञाका दण्ड भोगना ही उसकी मुख्य भावना है। सविनय प्रतिरोधी स्वेच्छासे कष्ट और दण्ड सहता है। लेकिन जहाँ सविनय प्रतिरोधी हिंसात्मक कार्रवाई न कर रहे हो, वहाँ भी केवल कानून भंग करनेके कारण उनपर गोलियाँ चलाई जायें, ऐसा मैंने न कही सुना है और न देखा है। हमें यह खबर तो मिल ही चुकी है कि लाल कुरतीवालो और दर्शकोकी भीड़पर सेना द्वारा गोली चलाये जानेके फलस्वरूप चौदह आदमियोकी मृत्यु हुई। जब सेनाने एक दूसरे अवसर पर लाल कुरतीवालोके २,००० के दलपर गोलियाँ चलाईं, तब कितने व्यक्ति हताहत हुए, इसकी खबर हमे नही मिली है।

सीमा-प्रान्तको स्वशासित प्रान्त बनानेकी दृष्टिसे यह निश्चय ही एक अशुभ आरम्भ है। यह एक अपशकुन है कि इस समय सीमा-प्रान्तके सबसे बहादुर और जीवटवाले लोग निर्वासित कर दिये जायें और बहुत-से लोग मौतके घाट उतार दिये

जाये — सिर्फ इस कारणसे कि उन्होंने अपनी बहादुरीका परिचय देते हुए उस अध्यादेशकी अवज्ञाकी जो कानूनी जामेके अन्दर छिपाकर सैनिक शासन लागू करनेके अलावा और कुछ नही है।

अब जरा संयुक्त प्रान्तकी स्थितिका जायजा लूं। वहाँ क्या देखता हूँ? यह कि जवाहरलाल नेहरू और श्री शेरवानी गिरफ्तार कर लिये गये हैं। उनका अपराध क्या था? पण्डित जवाहरलाल नेहरू उस सम्मेलनमे भाग लेना चाहते थे जिसका आयोजन होनेवाला था। लेकिन, उसमे शामिल होनेके बजाय उन्होने उसे कुछ दिनोंके लिए स्थगित करवा दिया, क्योकि सरकारने इस तरहके सम्मेलनोपर कुछ ऐसी शर्तें लगा रखी है, जिनको मानना वे आत्मसम्मानके विरुद्ध समझते है, उन्होंने कांग्रेस कार्यसमितिके, जिसकी बैठक अब कल ही यहाँ होने जा रही है, निर्णय लेनेतक के लिए सम्मेलन स्थगित करवा दिया। वे यह जानना चाहते थे कि गोलमेज परिषद्के मेरे अनुभवोको ध्यानमे रखकर मुझसे और कार्यसमितिसे सलाह-मशविरा करके क्या-क्या करना ठीक होगा। लेकिन सरकारने उनपर यह आदेश जारी करवा दिया कि सरकारी अधिकारियोसे अनुमति लिये बिना वे इलाहाबाद नगरपालिकाकी हदोसे बाहर नही जा सकते। उन्होने मजिस्ट्रेटको पत्र लिखकर मेरी अगवानी करनेके लिए बम्बई आनेका अपना इरादा जाहिर किया। लेकिन उन्हे और श्री शेरवानीको गिरफ्तार कर लिया गया है।

किन्तु, इन गिरफ्तारियोंसे मै चिन्तित नही हुआ हूँ। मुझे चिन्तामे तो वह अध्यादेश डाल रहा है जो आज सयुक्त प्रान्तमें लागू है। यह लगभग उसी ढगका है जिस ढगका सीमा-प्रान्तवाला अध्यादेश है। लॉर्ड इर्विनको बहुत-से अध्यादेश जारी करनेका श्रेय प्राप्त है। लेकिन लॉर्ड विलिंग्डन तो अबतक तेरह अध्यादेश जारी कर चुके हैं। कठोरताकी दृष्टिसे ये तेरह अध्यादेश लॉर्ड इर्विनके अध्यादेशोको बहुत पीछे छोड जाते है।

अब बगालको लीजिए। मुझसे कहा जा सकता है कि बगालके अध्यादेशके खिलाफ तो आप शिकायत नही कर सकते, क्योकि वहाँ बड़े-बडे अपराध किये गये है। बगालके कुछ नौजवान पागल हो उठे है और उन्होने हत्याएँ की है। हत्या और हिंसाकी खबरें सुनकर मेरे मनको सदा ही बहुत आघात पहुँचा है। लेकिन अब यह सुनकर तो मेरा मन और भी व्यथित हो उठा है कि लड़कियाँ भी ये आतंकवादी कार्रवाइयाँ करने लगी हैं। लेकिन कुछ लोगोके होश-हवास खो देनेके कारण पूरे प्रान्तको पुंसत्वहीन बनाना किस तरहसे उचित है? इसका नतीजा तो यह होगा कि सरकारके प्रति सहानुभूति रखनेवाले लोग भी उसकी ओरसे विमुख हो जायेंगे क्योकि जो अध्यादेश वहाँ लागू है, वह वहाँकी जनताके दैनिक जीवनमें अड़चनें डालता है। मैंने इंग्लैंडके अनेक लोकसेवी-जनोके साथ इस अध्यादेशपर चर्चा की है और उन सबने इसकी भर्त्सना ही की है।

मै अपने सामने जिस परिस्थितिको खड़ा पाता हूँ, वह संक्षेपमें यही है। मुझे तो कोई दूसरा रास्ता दिखाई ही नही देता।

लेकिन साथ ही मैं बहुत-से अंग्रेज मित्रोंको यह वचन दे चुका हूँ कि कांग्रेसकी माँगकी दृष्टिसे गोलमेज परिषद्से निराश होनेके बावजूद मैं सरकारसे सहयोग करते रहनेकी पूरी कोशिश करूँगा। किन्तु, यहाँ पहुँचनेके बाद मैंने जो-कुछ देखा है, उससे तो मुझे स्वीकार करना पड़ता है कि अपनी आत्मसम्मानकी भावनाको छोड़े बिना सहयोग करनेकी मुझे कोई आशा दिखाई नहीं देती।

अभी तो चारों ओर घोर अंधकार छाया हुआ लगता है, और अब जब कि प्रकाशकी कोई किरण दिखाई नहीं देती तब यदि मैं लोगोंको सहयोग करनेकी सलाह देता हूँ तो मैं स्वयं अपने साथ और राष्ट्रके साथ भी बहुत बड़ा अन्याय करूँगा।

मुझे नहीं मालूम कि वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगके आप सदस्योंके इन अध्यादेशोंके बारेमें क्या विचार हैं। लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अगर मैं आत्म-सम्मानकी रक्षा करते हुए सरकारसे सहयोग न कर सका तो उसे इन अध्यादेशोंको वापस लेने या इनमें परिवर्तन करनेपर राजी करनेके लिए कुछ भी उठा नहीं रखूँगा।

संयुक्त प्रान्तके गवर्नरने कांग्रेसपर समानान्तर सरकार चलानेका आरोप लगाया है। जबतक समानान्तर सरकारें अहिंसात्मक ढंगसे और जनताके हकमें चलाई जा रही हों तबतक उन्हें चलानेमें क्या बुराई है, यह मैं नहीं समझ पाता। अगर कुछ लोगोंका कोई गैरसरकारी संगठन अस्पताल चलाता हो तो उसमें बुरा क्या है? अगर सरकारी अदालतोंके साथ-साथ पंच-फैसला अदालतें भी चलाई जाती हों, जहाँ कम खर्चपर न्याय मिल सकता है, तो उसमें क्या हर्ज है?

चाहिए तो यह कि सरकार ऐसे प्रयत्नोंका स्वागत करे और इन्हें हर तरहसे प्रोत्साहन दे। अगर कांग्रेस किसानोंकी सहायता और हित-साधनके लिए एक किसान-संगठनके रूपमें चलाई जाती है — जिस रूपमें आज वे वास्तवमें चलाई भी जा रही हैं — तो उसमें बुरा क्या है? अगर मैं गवर्नर होऊँ तो मैं इसका स्वागत ही करूँगा।

यह सच है कि कांग्रेस किसी समय इस सरकारको अपदस्थ करना चाहती है। अगर कांग्रेस सरकारका दायित्व सँभालने योग्य नहीं है तो फिर मानना होगा कि स्वराज्यकी कोई आशा नहीं है। कांग्रेससे यह प्रश्न पूछा गया: "क्या आप देशकी सुरक्षाका दायित्व सँभालनेको तैयार हैं? क्या आप देशकी वित्त-व्यवस्थाकी जिम्मेदारी तथा उसपर जो ऋण आदिका बोझ है उसे अपने सिर लेनेको तैयार हैं?"

मैंने उत्तर दिया: "हाँ, वह तैयार है। बेशक, कांग्रेस सुरक्षाका दायित्व, वित्त-व्यवस्थाकी जिम्मेदारी तथा आप भारतको जितनेका देनदार मानें उतनी देनदारी भी वह अपने सिर लेनेको तैयार है। लेकिन एक ही शर्त है कि जैसा कारोबार और लेन-देनमें होता है, ठीक उसी ढंगसे वह एक निष्पक्ष जाँच-समिति द्वारा सारी देनदारियोंकी जाँच करवा लेना चाहेगी। जबतक कांग्रेस इन विषयोंको सँभालनेकी कोशिश करके नहीं देखेगी, तबतक वह इन्हें सँभालना सीखेगी कैसे और वह प्रगति कैसे कर पायेगी?"

इसलिए अगर कुछ सगठन जनताकी सद्भावनाके आधारपर — उस जनताकी सद्भावनाके आधारपर जिसके सेवक होनेका वे दावा करते है — समानान्तर सरकारे चलाते है तो उसमे गैरवफादारी या राजद्रोहकी बात कहाँ आती है?

कांग्रेसका गठन ही इस आधारपर किया गया है कि वह किसी दिन वर्त्तमान सरकारका स्थान ले सकती है। यह नीव दादाभाई नौरोजी तथा अन्य अनेक प्रसिद्ध अग्रेजो तथा भारतीयो द्वारा डाली गई थी। इसलिए अगर वह अपने आधी सदीसे भी अधिक कालके जीवनके वाद भी समानान्तर सरकार नही चला सकती तो यह हम सबके लिए बडी शर्मनाक बात होती।

काग्रेसने ऐसा कुछ नही किया है जो अनैतिक अथवा अभद्रतापूर्ण हो। यह कोई गुप्त सस्था नही है। वह अपनी बात बराबर सबके सामने रख देती है। अगर इतने पर भी सरकार उसपर अविश्वास करे — जैसा वह करती जान पडती है — तो मै यही कह सकता हूँ कि या तो हमे उसको अपनी शक्तिका एहसास करा देना होगा या इस प्रयत्नमे मर मिटना होगा।

मै वेलफेयर ऑफ इडिया लीगके आप सदस्योसे इस सम्बन्धमे मार्ग-दर्शन करने का अनुरोध करूँगा। मैने आपके सामने, समझ लीजिए, वह पहेली रख दी है जो मुझे हैरान कर रही है। अगर काग्रेसका विश्वास नही किया जाता तो वह सहयोग कैसे कर सकती है? भारतके कल्याण (वेलफेयर)की लगन आपको भी है और मुझे तथा काग्रेसको भी है। अगर काग्रेस कायम है तो केवल भारतके कल्याणके उद्देश्यको लेकर ही कायम है और खुद मेरे जीवनका इसके अलावा और कोई उद्देश्य नही है। हो सकता है, इस सम्बन्धमे मेरा और काग्रेसका रास्ता गलत हो। लेकिन अगर कोई मुझे मेरी गलती दिखा सके और अपनी बातका कायल कर सके तो मै उसे स्वीकार करने और उसका कायल होनेको बराबर तैयार बैठा हूँ। इसलिए मै आप सबसे अनुरोध करूँगा कि आप मेरे भाषणको ध्यानमे रखकर परिस्थितिपर विचार करे। अब अगर आप चीजोको ज्यादा अच्छी तरह समझने और मेरे मार्ग-दर्शनके लिए मेरे भाषणसे सम्बन्धित प्रश्न पूछे तो मै सहर्ष उनके उत्तर दूँगा।

प्र० : सभी अध्यादेशोंके वापस लिये जाते ही गोलमेज परिषद्की विभिन्न समितियाँ भारतमें अपना काम शुरू कर देंगी। क्या आप उनके काममें सहयोग करेंगे?

उ० . मै पहले ही बता चुका हूँ कि किस प्रकार इन अध्यादेशोने सहयोगका रास्ता रोक रखा है। पहली बात तो यह है कि अध्यादेश वापस लिये जाने चाहिए। दूसरे, काग्रेसको इस वातका विश्वास होना चाहिए कि इन समितियोके साथ सहयोग करनेसे उसका उद्देश्य पूरा हो सकता है। मै ऐसी आशा नही दिला सकता कि काग्रेस अपनी माँगोमे कोई कमी भी कर सकती है। लेकिन अगर काग्रेसको यह भरोसा हो जायेगा कि इन माँगोके सम्बन्धमे दलीलो और बातचीतका रास्ता खुला हुआ है तो मै काग्रेसको इन समितियोके कामम सहयोग करनेकी सलाह दूँगा।

प्र० : आपने इन अध्यादेशोकी निन्दा की है, लेकिन इनकी निन्दा करनेके बजाय पहले आप, जिन प्रान्तोंमें ये अध्यादेश लागू है, उन प्रान्तोंमें जाकर वहाँकी

परिस्थितियोंका खुद अध्ययन करनेके बाद यह देखनेकी कोशिश क्यों नहीं करते कि ये उचित हैं अथवा अनुचित?

उ० : अगर सरकार इजाजत दे तो मैं सहर्ष वैसा करूँगा। मैंने कई बार सीमा-प्रान्त जानेकी कोशिश की है। लेकिन हर मौकेपर सरकार आड़े आई है, या कमसे-कम इतना तो हुआ ही है कि उसने सहयोगके इस कार्यको कोई प्रोत्साहन नहीं दिया है। इस सन्दर्भमें आपको एक और बात बता दूँ, लेकिन इसे आप सरकारकी गोपनीय बातको प्रकट करना न मानिएगा। वह बात यह है कि जिस समय दिल्ली समझौतेपर हस्ताक्षर हुए उस समय भी वाइसरायकी कार्यकारिणीके सदस्योंके दिमाग पर गफ्फार खाँका भूत सवार था। मैंने लॉर्ड इर्विनसे सीमा-प्रान्त जानेकी अनुमति माँगी। लेकिन सीमा-प्रान्तके कमिश्नरसे परामर्श करनेके बाद वे इस निष्कर्षपर पहुँचे कि मुझे वहाँ भेजना बहुत खतरनाक बात होगी। (हँसी) मुझसे कहा गया कि मेरे वहाँ जानेसे उत्तेजना फैल सकती है और मेरी कही बातोंको कबायलियोंके सामने गलत रूपमें पेश किया जा सकता है। (हँसी) फिर मैंने शिमलामें लॉर्ड विलिंग्डनसे भी निवेदन किया, लेकिन सफलता न मिली। मैं अनुमति लिये बिना भी वहाँ जा सकता था, लेकिन मैं सरकारको अटपटी स्थितिमें नहीं डालना चाहता था। अगर सरकार अब भी अनुमति दे दे तो मैं दौड़ा हुआ वहाँ जाऊँ। इसलिए आपमें से जिन लोगोंकी बात सरकार सुनती हो वे अगर मुझे अनुमति दिला दें तो मैं सीधे सीमा-प्रान्त चला जाऊँ, मैं तो कल ही वहाँ चला जाना चाहूँगा।

प्र० : क्या आप सरकारकी शर्तोंपर सीमा-प्रान्त और बंगाल नहीं जाना चाहेंगे?

उ० : नहीं, उसकी शर्तोंपर तो जा ही नहीं सकता। अगर सरकार मुझे उनकी सेवा करनेकी अनुमति देना चाहती हो तो वह अनुमति मेरी शर्तोंपर मिलनी चाहिए। वहाँ जाकर मैं बहादुर अब्दुल गफ्फार खाँसे यह तो नहीं कह सकता कि आप सीमा-प्रान्त अथवा भारतकी स्वतन्त्रताकी अभिलाषा न कीजिए। अगर आप किसी चिड़िया को उड़ाना चाहते हैं तो आप उसके पर काटकर तो उससे यह नहीं कह सकते कि जाओ, अब उड़ जाओ। लेकिन सरकार यही करना चाहती है। वह मेरे पंख तोड़कर मुझसे उड़नेकी अपेक्षा करती है। अगर सरकार मुझे अपनी सेवा करने देना चाहती है तो उसे मुझे शक्तिशाली भी बनने देना चाहिए।

वास्तवमें मैं परिस्थितिको आसान बना सकता हूँ। सरकार यह जानती है कि अब्दुल गफ्फार खाँ मेरी बात सुनेंगे। मैं पठानोंके बीच रहा-सहा हूँ। मुझे उनका आक्रमण भी झेलना पड़ा है, लेकिन वह आक्रमण सदा उनके और मेरे बीचकी कड़ी का काम करता रहा है। (हँसी) जबतक उन्हें यह विश्वास रहेगा कि मैं उनके उद्देश्यके प्रति कोई घात नहीं कर रहा हूँ तबतक वे मेरी बात अवश्य मानेंगे। कुछ दिन पूर्व वे मेरी ही सलाहपर कमिश्नरसे मिले थे। लेकिन सरकार मेरी सेवाएँ स्वीकार करनेको तैयार नहीं है।

मैं बंगाल भी जाना चाहता हूँ। बंगालके सम्बन्धमें परिस्थिति भिन्न है। वहाँ जानेके लिए मुझे अनुमति माँगनेकी जरूरत नहीं है। लेकिन, वहाँ जाकर मैं सरकारको

अपनी बात लिखूंगा और उसके हितमें अपनी सेवाएँ पेश करूँगा, जैसा कि बंगालकी जनताके हितमे भी करूँगा। उसे स्वीकार करना या न करना सरकारका काम होगा। लेकिन मैं चटगाँव या हिजली तबतक नही जाऊँगा जबतक कि बगाल सरकारसे यह न पूछ लूँ कि मेरे वहाँ जानेसे क्या उसे कोई परेशानी भी होगी। वैसे तो सरकार चाहे या न चाहे, मै सीमा-प्रान्त भी जा सकता हूँ और चटगाँव तथा हिजली भी। अगर इसपर अधिकारी प्रतिबन्धात्मक आदेश जारी करते है तो उसकी मै सविनय अवज्ञा भी कर सकता हूँ। लेकिन मै सविनय अवज्ञा करनेका खतरा उठाकर सीमा-प्रान्त या चटगाँव अथवा हिजली नही जाऊँगा। अगर मै वैसा करूँगा तो सरकार बहुत परेशानीमे पड जायेगी और उसे मै परेशानीमे नही डालना चाहता। अगर मैं सविनय अवज्ञा करनेका निश्चय भी करूँगा तो सत्याग्रहीके नाते उसके लिए कोई ऐसा आधार खोजूंगा जिससे सरकारको कमसे-कम परेशानी हो और फिर भी उसकी गलती साफ दिखे।

प्र० : अगर आपको यह विश्वास हो जाये कि बंगालमें एक राजद्रोही संगठन है तब भी क्या आप अध्यादेश वापस लेनेको कहेंगे?

उ० : 'राजद्रोह' तो बहुत लोचदार शब्द है। लेकिन मै आपके प्रश्नके आशय को समझता हूँ। अगर ये सगठन कानून और व्यवस्था भंग करने तथा सरकारके अधिकारोको हडप लेनेकी कोशिश कर रहे हो तो निस्सन्देह सरकारका यह कर्त्तव्य है कि वह ऐसी प्रवृत्तियोके खिलाफ कार्रवाई करे। लेकिन उन प्रवृत्तियोसे निबटनेके लिए कौन-सा तरीका अपनाया जाता है, इसका बडा महत्त्व है। यही सवाल मुझसे इंग्लैंडमे भी पूछा गया था। सवाल यह था "अगर सरकार कांग्रेसके हाथोमें हो तो आप आतकवादी प्रवृत्तियोसे कैसे निबटेंगे?" उत्तरमे मैंने कहा था, "आप मुझे सत्ता दीजिए, फिर मै दिखा दूँगा कि मै उससे कैसे निबटता हूँ।" ऐसे सगठनके प्रति मैं बहुत ही सहानुभूतिका रुख रखकर उससे निबटूँगा। ऐसे सामान्य कानून भी है जिनसे सभी तरहके अपराधोसे निबटा जा सकता है। फिर अध्यादेशोका सहारा क्यो लिया जाये? इससे तो उन लोगोमें विक्षोभ ही उत्पन्न होता है जिनपर अध्यादेश लागू किये जाते है। अपराधोकी भर्त्सना करनेमें मै किसीसे भी पीछे रहनेवाला नही हूँ, लेकिन ये अध्यादेश तो लोगोको आतकवादसे विमुख करनेके बजाय उसे और उत्तेजन ही देते है।

बगालके नौजवानोने निर्दोष लोगोकी जाने ली। इस तरहके कामको कोई भी समाज बरदाश्त नही कर सकता। लेकिन पाँचके अपराधके लिए पचास हजारको सजा क्यो दी जाये? अगर मै भारत-मन्त्री अथवा गवर्नर-जनरल होता तो जिस समय बगालके गवर्नरने अध्यादेश जारी करनेको कहा था उसी समय उससे त्यागपत्र दे देनेको कहता। लेकिन मै इतनेपर ही नही रुकता। मै इस असन्तोषके मूल कारणका पता लगाता और सबसे पहले उसीका इलाज करनेकी कोशिश करता।

गवर्नरको चाहिए कि वे प्रमुख नेताओको अपने गुप्त कक्षमे बुलाकर उनपर पूरा भरोसा करते हुए इस विषयपर खुले मनसे और विस्तारपूर्वक चर्चा करे और ऐसे अपराधोकी रोक-थामके उपाय निकाले।

यहाँ आवश्यकता पारस्परिक विश्वासकी है। कैंटरबरीके आर्कबिशपने मुझसे कहा था कि भारतकी समस्याके पीछे क्या है, यह मैं समझ गया हूँ और जब उन्होंने कहा कि आप लोगोंमें पारस्परिक विश्वासका अभाव है तो मैं जान गया कि उन्होंने इस समस्याको ठीक ही समझा है।

बंगालकी अपनी शिकायतें हैं। बंगालके नौजवान साहसी, भावुक और देशभक्त हैं और इसलिए कॉमन्स सभामें उनकी बहादुरीकी निन्दा करते हुए जिस तरहके भाषण दिये गये उस तरहके भाषणोंके परिणामस्वरूप वे उग्रतम कार्रवाई करनेपर उतर आये। जैसा कि मैं कह चुका हूँ, अपराधोंकी भर्त्सना करनेमें मैं किसीसे भी — अंग्रेजोंसे भी — पीछे रहनेवाला नहीं हूँ। लेकिन उनसे निबटना तो चाहिए साधारण कानूनोंके अनुसार ही।

कांग्रेसके अहिंसाके सिद्धान्तने आतंकवादी प्रवृत्तियोंको शमित रखनेकी दृष्टिसे बहुत-कुछ किया है। लेकिन जनरल डायरके तरीकोंसे काम चलनेवाला नहीं है। वैसे जनरल डायरने मेरी कोई शत्रुता या नाराजगी नहीं है। मैं जानता हूँ कि वह ईमानदार आदमी था — वह भारतमें जो-कुछ कर रहा था अपने विश्वासकी प्रेरणापर कर रहा था और अपने कार्योंको उचित मानता था।

लेकिन डायरका तरीका गलत है। भारतमें अंग्रेजोंकी जान डायरवादी तरीकोंसे नहीं बचाई जानी चाहिए।

देशके लिए संविधान तैयार करनेका विचार किया जा रहा है, लेकिन इन अध्यादेशोंने जो वातावरण पैदा कर दिया वह निश्चय ही इस कामके उपयुक्त नहीं है। अगर आप यह सोचते हों कि इन अध्यादेशोंके वातावरणमें तैयार किये गये किसी संविधानको युवा भारत कोई महत्त्व देगा तो यह आपकी कोरी आशा ही है।

यह कहनेसे कोई बात नहीं बनती कि भारतके राजभक्त लोग इन तरीकोंके समर्थनमें सरकारसे हामी भर रहे हैं। मैं आपसे सच कहता हूँ कि जब ये राजभक्त लोग सरकारसे 'हाँ' कह रहे होते हैं तब भी अपने मनमें 'ना' ही कह रहे होते हैं। मैं आम जनताका आदमी हूँ, उसीके बीच, उसके साथ और उसीके लिए जीता हूँ। इसलिए इन अध्यादेशोंके प्रति भारतीय मानसकी क्या प्रतिक्रिया है, इस बातको मैं शिमला या दिल्लीमें रहकर अध्यादेश जारी करनेवाले गवर्नर-जनरल महोदय और उनके सलाहकारोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छी तरह जाननेका दावा करता हूँ।

प्र० : क्या आप अपनी दूसरी सभी प्रवृत्तियाँ छोड़कर पहले आतंकवादी आन्दोलनको ही बन्द करानेकी कोशिश नहीं करना चाहेंगे?

मेरा यह निश्चित विश्वास है कि कांग्रेसके अहिंसात्मक आन्दोलनने आतंकवादी प्रवृत्तियोंपर अंकुश रखनेके लिए बहुत-कुछ किया है। मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, सप्रमाण कह रहा हूँ। मैं ऐसे अनेक लोगोंको जानता हूँ जो पहले आतंकवादी थे, लेकिन जिन्हें कांग्रेसके सन्देशने अहिंसाके पक्षमें ला खड़ा किया। आज मैं जिस प्रकार अपने बारेमें विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि मैं अहिंसक हूँ उसी प्रकार

उनके बारेमें भी कह सकता हूँ कि वे अहिंसक हैं। ये देशभक्त नौजवान आज रचनात्मक कार्योंमें लगे हुए हैं।

प्र० : यदि आपके हाथमें सत्ता हो तो क्या आप किसी अन्य संगठनको एक समानान्तर सरकार चलाने और अपनी सत्ता हड़प लेनेकी छूट देंगे?

उ० : जब मैंने यह कहा था कि मुझे किन्हीं संगठनों द्वारा समानान्तर सरकार चलाई जानेमें कोई बुराई नहीं दिखाई देती तो मेरा आशय उन संगठनों द्वारा सत्ता हड़प लेनेसे नहीं था। ये मित्र मुझपर ऐसी बात कहनेका आरोप लगा रहे हैं जो मैंने कभी कही ही नहीं। अगर ये संगठन जनताकी भलाईके लिए समानान्तर सरकार चलायेंगे तो निश्चय ही मैं उन्हें प्रोत्साहन दूंगा। जरा देखिए कि अधिनायक मुसोलिनी इटलीमें क्या कर रहा है। देशकी खुशहालीके लिए काम करनेवाली स्वैच्छिक संस्थाओंकी प्रवृत्तियोंमें वह कभी भी हस्तक्षेप नहीं करता।

मैं सहयोग करनेको आतुर हूँ और जबतक उसके सारे रास्ते ढूँढकर देख नहीं लूँगा तबतक चैन नहीं लूँगा। मैं आप अंग्रेज पुरुषों और स्त्रियोंसे अनुरोध करता हूँ कि इस समय मैंने आपसे जो-कुछ कहा है, उसपर आप विचार करें और इस देशमें शान्ति और सौहार्दका वातावरण तैयार करनेमें अपना यथोचित योगदान दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३१-१२-१९३१

२९२. तार : वाइसरायको

२९ दिसम्बर, १९३१

बंगाल अध्यादेश तो मेरी प्रतीक्षा कर ही रहा था, लेकिन कल यहाँ उतरनेपर मैं इस खबरके लिए तैयार नहीं था कि सीमा प्रान्त और संयुक्त प्रान्त में अध्यादेश लागू कर दिये गये हैं, सीमा प्रान्तमें गोलियाँ चलाई गईं और इन दोनों प्रान्तोंमें महत्त्वपूर्ण जन-नेताओंको गिरफ्तार कर लिया गया है। मैं नहीं जानता कि इन सबको मुझे इस बातका संकेत समझना चाहिए कि हमारे बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध समाप्त हो गये अथवा आप अब भी यह अपेक्षा करते हैं कि मैं आपसे मिलकर इस विषयमें आपका मार्गदर्शन प्राप्त करूँ कि कांग्रेसको मुझे किस प्रकारकी सलाह देनी चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२

१. इसके उत्तरमें ३१ दिसम्बरको वाइसरायने जो तार दिया उसके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

२९३. भाषण: प्रार्थना-सभामें

बम्बई
३१ दिसम्बर, १९३१

अब तो हम एक-दो दिन ही मुक्त हैं। इस बीच हम शान्तिपूर्वक प्रार्थना करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ३-१-१९३२

२९४. दैनन्दिनी, १९३१

लन्दन, १४ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर १८० तार। सर सैम्युअल होर द्वारा बुलाये गये लोगोंके साथ सेना सम्बन्धी बातचीत; बेथलके साथ बातचीत; जिन्नाके साथ बातचीत।

लन्दन, १५ अक्टूबर, गुरुवार

चरखेपर १७६ तार। सर सैम्युअल होरके साथ बातचीत। सप्रू, जयकर आदिके साथ बातचीत; विद्यार्थियोंकी सभा। लतीफीके साथ बातचीत।

लन्दन, १६ अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर १६२ तार। कांफरेंस, प्रेस द्वारा भोज। मुसलमान, इंडिया ऑफिस, मद्य-निषेध सभा, नवाब साहब। इस समय एक बजा है।

बर्मिंघम, १७ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर १२७ तार। ग्रामोफोनके लिए भाषण रिकार्ड कराया[1]; माडगाँवकर, मॉडको घर लेनेके लिए डाँटा[2]; नॉटिंघम गया; शामको बर्मिंघम; एन्ड्रयूज आये; देवदास नाइट्सब्रिज वापस लौट गया।

बर्मिंघम, १८ अक्टूबर, रविवार

चरखेपर १२९ तार। बिशप बार्न्स, स्टाइनर-शाला, डॉ० पारघी, आश्रम-वासियोंकी सभा[3]।

लन्दन, १९ अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर १७८ तार। सुबह बर्मिंघमसे रवाना; शुएब दो-चारबार मिल गया। सरदार उज्ज्लसिंह, राजाओंके साथ बातचीत।

१. यहाँ जिस भाषणके रिकार्ड करानेका उल्लेख है वह "ईश्वर है" शीर्षकसे यंग इंडिया ११-१०-१९२८में प्रकाशित लेखका ही एक अंश है। देखिए खण्ड ३७, पृष्ठ ३६१-६५।

२. देखिए "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", २-१२-१९३१।

३. सम्भवतः वुडब्रुक सेटलमेंटमें हुई सभा; देखिए पाद-टिप्पणी १, पृष्ठ २०३।

लन्दन, २० अक्टूबर, मंगलवार

चरखेपर १७६ तार। अप्टन क्लोज मिलने आये; आर्कविशप, केटरवरी, सैम्युअल होर, एमहर्स्ट; चैथम हाउसमें सभा।

लन्दन, २१ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर १६० तार। लॉर्ड इर्विन, पादरियोंकी सभा, कूचविहारकी रानी।

लन्दन, २२ अक्टूबर, गुरुवार

चरखेपर १५३ तार। सर मिर्जाके साथ बातचीत, बीकानेरके समारोहमें; मालवीयजीके यहाँ सप्रू आदिसे मुलाकात, आज किंग्सले हॉल ८.४५ बजे पहुँचा।

ईटन, २३ अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर २२१ तार। संघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोला; शामको कृषि-प्रदर्शनी देखने गया। बादमें सप्रू आदिसे बातें हुईं। रातको ईटन गया। वहाँ युवकोंसे बातचीत की।

ऑक्सफोर्ड, २४ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर १६२ तार। सुबह ईटनसे रवाना हुआ; ऑक्सफोर्ड पहुँचा। रास्तेमें कर्नल मैडॉकके घर गया। बादमें मीराके चाचाके यहाँ खाना खाया। ऑक्सफोर्डमें स्नातकोंके साथ दो घंटे बिताये। बादमें रातको भारतीय मजलिसमें लाला दुनीचन्दका लड़का मिलने आया।

ऑक्सफोर्ड, २५ अक्टूबर, रविवार

चरखेपर १९९ तार। सुबह थामसनके यहाँ प्रो० मरे, सेडलर आदिसे मुलाकात हुई। बादमें सर हेनरी लॉरेन्स, श्रीमती एलविन, रस्किन सोसाइटी, उसके बाद ऑक्सफोर्डके विद्वानोंके साथ चर्चा; रातको रोड्ज-छात्रवृत्ति पानेवालोंके साथ।

लन्दन, २६ अक्टूबर, सोमवार

चरखेपर १६२ तार। १०.१५ बजे लन्दन पहुँचा। सप्रू आदिसे मुलाकात। कमेटी। रातको नवाब साहबसे मिला। इस वक्त साढ़े बारह बज रहे हैं।

लन्दन, २७ अक्टूबर, मंगलवार

चरखेपर १६५ तार। श्रीमती शेरीडन यहीं सोई थी। रातको पोलकके घर मेननके साथ बातचीतकी।

लन्दन, २८ अक्टूबर, बुधवार

चरखेपर १८१ तार। मैडम म० ...[1]से मिला, मैडम मॉन्टेसरी। मीराकी बीमारी।

लन्दन, २९ अक्टूबर, गुरुवार

चरखेपर २१५ तार। आज तीन बजे नहीं उठा गया। एक घंटा देर हुई। बहुत-से लोग मिल गये। मन उद्विग्न रहा। दत्ताके साथ बातें हुईं।

१. सही नाम पढा नहीं जा सका; ये शायद मैडम मॉन्टेसरीकी सम्बन्धी थी।

मालवीयजी के यहाँ सप्रू आदिसे मिला। शामको स्ट्रैकॉश और सर बेसिल ब्लैकेटसे मिला। रातको बाबा और अन्य युवकोसे मिला।

लन्दन, ३० अक्टूबर, शुक्रवार

चरखेपर १८२ तार। दोपहरको शाकाहारी भोज, लेटनसे भेंट। कॉमनवेल्थ ऑफ इडिया लीग।

कैम्ब्रिज, ३१ अक्टूबर, शनिवार

चरखेपर १६२ तार। क्वेकर मित्रोसे मिला। सरदार उज्ज्वलसिंहसे कैम्ब्रिजमे पाँच बजे मिला।

कैम्ब्रिज, १ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १९२ तार। सुबह पेम्बरटन कॉलेजमे गया। वहाँ आयोजित सभामे लोज डिकिन्सन, इवलिन रैंच आदि उपस्थित थे। तीन घटे तक बातचीत होती रही। बादमें कुछ लोगोसे मिलने गया। एन्ड्रचूजकी पुरानी कोठरी देखी, किंग्ज चैपल देखा। शामको निकलसन मिलने आये। रातको भारतीय मजलिसकी बैठक। ९.३८ बजे मौन शुरू किया।

लन्दन, २ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर १८६ तार। १०.३० बजे कैम्ब्रिजसे लन्दन पहुँचा। कमेटीकी बैठक चलती रही। बादमे मालवीयजी के यहाँ गया फिर जीवराज, बोमनजी आदि आये। शाह बो आया।

लन्दन, ३ नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर १६१ तार। मैकडॉनाल्ड, अली इमाम; इर्विनका चित्र, मालवीयजी के यहाँ; बालकोका समारोह, बॉल्डविन, होर, अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थिगण, बोमनजी।

लन्दन, ४ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १७३ तार। काफरेस, सर डेनियल हेमिल्टन, मालवीयजीके यहाँ, डॉक्टर, तुर्कीका जनरल।

लन्दन, ५ नवम्बर, गुरुवार

चरखेपर २२० तार। बादशाहकी पार्टी, डाक-कर्मचारी सघके सदस्योसे मिला; सिडनी वाल्टन।

लन्दन, ६ नवम्बर, शुक्रवार

चरखेपर १७२ तार। बर्नार्ड शॉ और उनकी पत्नीसे भेट। सर डार्सी लिन्डसेसे मिला। सर जॉन मेनार्ड, सप्रू आदिसे मुलाकात, मैकडॉनाल्डको पत्र, रातको जायजी साथ आये।

ऑक्सफोर्ड, ७ नवम्बर, शनिवार

चरखेपर २०८ तार। सुबह ११ बजे ऑक्सफोर्ड पहुँचा। माल्कम मैकडॉनाल्ड और प्रो० मरेके साथ बातें हुईं। शामको एन्ड्रचूज आये, रातको लॉर्ड लोथियनसे बातें हुईं, कोपलैंड भी उपस्थित थे।

ऑक्सफोर्ड, ८ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १७८ तार। पूरे दिन बातचीत। कॉरबेट आये थे। शामको सरोजिनी आ गई। ३.५० बजे मौन शुरू किया।

लन्दन, ९ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर १९९ तार। ऑक्सफोर्डसे लन्दन आया। कई पत्र लिखे। पुरुषोत्तमदासकी पार्टी, कॉरबेटके साथ बातचीत, रामेश्वरदासके यहाँ प्रार्थना और भोजन, फ्रेन्ड्स हाउसमें[1] सभा, रेनॉल्ड्ज मिलने आये।

लन्दन, १० नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर २०३ तार। सप्रू आदि आये। उनके साथ बातें की। कॉरबेट और श्रीमती सुब्रायनसे मिला। लन्दन स्कूल ऑफ इकनामिक्स, हालबर्न रेस्तराँ।

लन्दन, ११ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १६९ तार। सुबह मिर्जा इस्माइल आये। उसके बाद म्युरियलके साथ लेडी एस्टरके यहाँ। ढाई बजे मालवीयजी के यहाँ। उसके बाद श्री व्हिटलेके यहाँ, फिर आठ बजे रेड क्रासकी महिलाओंके यहाँ।

लन्दन, १२ नवम्बर, गुरुवार

चरखेपर १८३ तार। कुमारी मोल्टिनोकी आत्मीय, डॉ० स्टैनली रीड; मालवीयजी के यहाँ हॉरैबिनकी कमेटीसे मुलाकात। होर, मैक्डॉनाल्डको पत्र[2]।

लन्दन, १३ नवम्बर, शुक्रवार

चरखेपर १४७ तार। अल्पसंख्यक कमेटी, स्मट्स, आगाखाँ आदि, श्री बेन आदि, स्मट्स, लैन्सबरी, वेस्टमिंस्टर स्कूल, बिडला, 'न्यूज क्रॉनिकल' का प्रतिनिधि। अब आधी रात हो गई है।

लन्दन, १४ नवम्बर, शनिवार

चरखेपर १७१ तार। लॉर्ड इर्विनसे मिला, बादमें बेन और ली-स्मिथसे; फिर आगाखाँ आदिसे। डॉ० मुंजे आदिसे रातको मालवीयजी के यहाँ। आज देर नहीं हुई।

लन्दन, १५ नवम्बर, रविवार

चरखे पर २२१ तार। दस बजे शास्त्रीजी के यहाँ, फिर मालवीयजी के यहाँ, फिर घर। आज थोडा सोया। इतालवी महिलासे बातचीत, शामको सर सैम्युअल होरके यहाँ गया, रातको बिडलाके यहाँ केट, बैन्थल और कारसे मिला।

लन्दन, १६ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर १६६ तार। कमेटी। लॉर्ड रीडिंग, कार और बैन्थल।

१. इस सभाका आयोजन फेलोशिप ऑफ रिकन्सिलिएशन द्वारा किया गया था।
२. लेकिन इस पत्रपर दी गई तारीख १४ नवम्बर है।

लन्दन, १७ नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर १७८ तार। कमेटी, मुख्य मन्त्री, स्मट्स, कॉरबेट, लोथियन, लेडी एस्टर, बैन्थल वगैरा।

लन्दन, १८ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १६७ तार। रेवरेंड हेज, फिलिप, कमेटी, महिलाओंकी सभा। लॉयड जॉर्जके साथ साढे तीन घंटे। इस वक्त एक बजा है।

लन्दन, १९ नवम्बर, गुरुवार

चरखेपर १८३ तार। कमेटी, ब्रॉकवे, कमेटीमें वर्णभेद और साम्प्रदायिक मतभेदपर भाषण।

लन्दन, २० नवम्बर, शुक्रवार

चरखेपर १६५ तार। फॉली आदि आये। शामको बैन्थल आदिसे मिला। बादमें शाकाहारी सोसाइटीकी सभा और पोस्ट ऑफिस।

लन्दन, २१ नवम्बर, शनिवार

चरखेपर १८३ तार। फिन्डलेटर स्टुअर्ट, पुरुषोत्तमदास, दिनशा मुल्ला, पाठक आदिसे मिला, वल्लभभाईको तार।

लन्दन, २२ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १९४ तार। मालवीयजी के यहाँ सभा, सेनगुप्तसे मिला; दोपहरको डेढ घंटा सोया। ३.१५ बजे मौन शुरू किया।

लन्दन, २३ नवम्बर, सोमवार

चरखेपर २०७ तार। डेगनहामका किंग्स्ले हॉल देखा। कॉरबेट, पोलक, मॉड चीजमैनसे मिला।

लन्दन, २४ नवम्बर, मंगलवार

चरखेपर १९४ तार। सुबह मैक्डॉनाल्ड, सैंकी और होरसे मिला। शामको डॉ० सप्रू आदिसे मिला; ली-स्मिथसे भी मिला। वल्लभभाईका तार। सख्त सर्दी।

लन्दन, २५ नवम्बर, बुधवार

चरखेपर १६० तार। समितिमें दो भाषण दिये। शामको मिर्जा और डॉ० अम्बेडकर आये। एक कैथोलिक चर्चमें गया था।

लन्दन, २६ नवम्बर गुरुवार

चरखेपर १७१ तार। कमेटी; लॉर्ड इर्विन; दीपचन्द झवेरीके घर गया।

लन्दन, २७ नवम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १७४ तार। एन्ड्रयूज दक्षिण आफ्रिकाके लिए रवाना। सेम्युअल होरसे मिला। भंडारीके यहाँ गया, बादमें लैन्सबरीसे मिला।

लन्दन, २८ नवम्बर, शनिवार

चरखे पर १७४ तार। पूर्णाधिवेशन। होरने बादशाहके प्रति आभार व्यक्त करनेवाले प्रस्तावके बारेमें पूछा। मैंने हाजिर रहनेसे इनकार कर दिया। वल्लभभाई और सतीशबाबूको तार।

लन्दन, २९ नवम्बर, रविवार

चरखेपर १६० तार। सर फिन्डलेटर स्टुअर्टसे मिला। रातको ली-स्मिथ आये।

लन्दन, ३० नवम्बर, सोमवार

चरखे पर १५७ तार। समितिमें पूरे दिन मेरा भाषण। रातके तीन बजे घर पहुँचा। ८-३० बजे हॉरैबिनके यहाँ सभा।

लन्दन, १ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १८४ तार। परिषद् समाप्त। सप्रू आदिके साथ बातचीत। कार और बैन्थलसे बातचीत।

लन्दन, २ दिसम्बर, बुधवार

चरखे पर १६६ तार। आज ज्वर-सा था। क्वेकर लोगोंकी मौन-प्रार्थनामें गया।

लन्दन, ३ दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर १७४ तार। आज रातको हॉरैबिनके यहाँ सभा। दोपहरको लॉर्ड लोथियन, प्रेसवालोंसे मिला। इस समय आधी रात हो चुकी है।

लन्दन, ४ दिसम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १७५ तार। मैकडॉनाल्ड और होरसे मुलाकात।

पेरिस, ५ दिसम्बर, शनिवार

चरखे पर १५१ तार। सुबह लन्दन छोड़ा। साथमें इवान्स, रॉजर्स, मॉड, म्युरियल, शामराव हैं। शामको पेरिस पहुँचे। वहाँ काफी भीड़ एकत्र। भारतीयोंकी तरफसे स्वागत।

विलेन्यूव, ६ दिसम्बर, रविवार

चरखे पर १६७ तार। सुबह पेरिस छोड़ा। म्युरियल वहीं रह गई। शामको विलेन्यूव पहुँचे। रोलाँसे भेंट, पत्रकारोंके साथ।

विलेन्यूव, ७ दिसम्बर, सोमवार

चरखे पर १८५ तार। १० से १२-३० तक रोलाँके साथ। बरसातके कारण घूमने नहीं गया पर खूब सोया। बादमें दोपहरको सूरज निकल आया इसलिए घूमने गया। शामको होरको पत्र लिखा। वल्लभभाईका तार, उसका जवाब दिया। सर जगदीश बोसको तार, घोषको तार।

विलेन्यूव, ८ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १७० तार। सुबह ढाई घंटे रोलाँके साथ। दोपहरको लोजानमें तीन सभाएँ। रातको बारह बजे वापस आया।

विलेन्यूव, ९ दिसम्बर, बुधवार

चरखेपर १६० तार। एक गरीब महिलाका घर तथा इन्टरनेशनल सेनेटोरियम देखने गया; प्रार्थना रोमाँ रोलाँके यहाँ की। मैडेलिन रोलाँको मैडम कामावाला शाल भेंट किया।

विलेन्यूव, १० दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर २०४ तार। जिनेवामें सभा, रोलाँके साथ बातचीत, शिलो स्कूलमें भाषण, टोमाके साथ बातचीत, अरबोंके साथ बातचीत।

रोम जाते हुए, ११ दिसम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १७८ तार। रोलाँके साथ बातें हुईं, सर कावसजी मिले। ढाई बजे विलेन्यूव छोड़ा। इन्दुके स्कूलकी लड़कियाँ मिलीं। मिलानमें राज्यकी तरफसे गाड़ी मिली। रास्तेमें जगह-जगह लोगोंकी भीड़ इकट्ठी हो गई थी।

रोम, १२ दिसम्बर, शनिवार

चरखे पर २०४ तार। सुबह ८-३० बजे रोम पहुँचे। इस आशयका पत्र मिला कि पोपसे मुलाकात नहीं हो सकेगी। तीन जने जनरल मॉरिसके यहाँ ठहरे, बाकी होटलमें। दोपहरको वैटिकन देखने गया। ६ बजे मुसोलिनी। मॉडको २० पौंड।

ब्रिंडिसी जाते हुए, १३ दिसम्बर, रविवार

चरखे पर १८० तार। सुबह टॉल्स्टॉयकी बेटी आई। नवयुवकोंकी शालाएँ, महिलाओंके लिए सुविधाएँ, फोरम, स्कार्पाके यहाँ समारोह, राजकुमारी मिल गई, अमानुल्लाके सचिव, रातको १०-४० पर रवाना। प्रिवा-दम्पती साथमें हैं।

स्टीमर पर, १४ दिसम्बर, सोमवार

चरखे पर १३७ तार। सुबह ब्रिंडिसी पहुँचे। इवान्स, रॉजर्स लौट गये। १२-३० बजे एस० एस० 'पिलसना' रवाना हुआ। डेक अच्छा नहीं है, इससे थोड़ी असुविधा होगी। ठंड काफी है। विट्ठलभाई साथ हैं।

स्टीमर पर, १५ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १७२ तार। कप्तानके साथ थोड़ी बातचीत।

स्टीमर पर, १६ दिसम्बर, बुधवार

चरखे पर १८४ तार। कप्तानके साथ स्टीमर देखा। सर अकबरके साथ बातचीत।

स्टीमर पर, १७ दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर १९० तार। ग्यारह बजे पोर्ट सईद पहुँचे। सिन्धी और मिस्रके लोग लेने आये। किन्तु यह पता चलनेपर कि जहाज स्वेजमे नही रुकेगा इसलिए जाना नही हुआ। सिन्धियोने लगभग १,५०० रुपयेकी थैली दी।

स्टीमर पर, १८ दिसम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १६२ तार। ५-३० बजे स्वेज छोड़ा, जस्टिस हॉलैड, लाल काका आदि मिल गये। हॉयलैड द्वारा सुधारे गये भजन पढे।[1]

स्टीमर पर, १९ दिसम्बर, शनिवार

चरखे पर १७० तार। आजसे दाये हाथसे लिखना शुरू किया। आज दिनमे तीन बार सोया। पत्र लिखे। हॉयलैडकी पुस्तक 'द क्रॉस मूव्स ईस्ट' पढी।

स्टीमर पर, २० दिसम्बर, रविवार

चरखे पर १७१ तार। आज भी दिनमे खूब सोया। थोडा पढ़ा। विट्ठलभाईके साथ बाते की।

स्टीमर पर, २१ दिसम्बर, सोमवार

चरखे पर १७० तार। अदनके पास पहुँचते जा रहे है। आज दिनमे अपेक्षाकृत कम सोना पड़ा। 'इडियन न्यूज'के लिए लेख[2] लिखा। पत्र लिखे। मुसोलिनीवाला [पत्र] पूरा किया।

स्टीमर पर, २२ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १७५ तार। सुबह १२-३० बजे अदन पहुँचे। किनारे उतरे; सभा हुई, सूरजके घर गया। रेजिडेट कर्नल रालीसे मिला। ४-३० बजे स्टीमरपर लौट आये। लगभग ४,००० रुपये मिले। आज बाई पसलियोमे दर्द है। स्टीमर ५ बजे रवाना हुआ।

स्टीमर पर, २३ दिसम्बर, बुधवार

चरखे पर १७१ तार। आज तबीयत अच्छी नही लगी। दोपहरको सिर्फ अजीर खाये, शामको कुछ नही खाया। दिनमे अच्छी तरह सोया। 'यग इडिया'के लिए लेख[3] पूरा किया। बल्गेरियन चित्रकार चित्र बनाने आया।

स्टीमर पर, २४ दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर १७२ तार। इतालवी पत्रकारकी जर्मन पत्नीके साथ बाते की। मिल्सको कुछ लिख भेजा। कल रातको श्रीमती काब्राजीके साथ बाते की, सुबह दो बजे एरडीका तेल लिया। पाखाना साफ हुआ।

१. तात्पर्य आश्रम भजनावलिमें संगृहीत भजनोंका गांधीजी द्वारा किये गये अंग्रेजी अनुवादसे । उक्त अनुवाद हॉयलैण्डने सुधारा था। देखिए खण्ड ४४, पृष्ठ ३९४की पाद-टिप्पणी १।

२. देखिए "भारतीय सेना", २१-१२-१९३१।

३. देखिए "सिंहावलोकन", २३-१२-१९३१।

स्टीमर पर, २५ दिसम्बर, शुक्रवार

चरखे पर १७१ तार। प्रधान मन्त्रीके गोलमेज परिषद्में हुए भाषणकी जो चर्चा कॉमन्स सभामें हुई उसे पढ़ रहा हूँ। शामको मसानीके साथ बातचीत।

स्टीमर पर, २६ दिसम्बर, शनिवार

चरखे पर १७८ तार। सर अकबर हैदरीके साथ बातचीत हैदराबादकी शहजादीसे मिला। विट्ठलभाईके साथ बातचीत।

स्टीमर पर, २७ दिसम्बर, रविवार

चरखे पर १८२ तार। शफी दाऊदी मिलने आये। १२ बजे मौन लिया। मीराबहनको उसकी अनुदारताके बारेमें कहना पड़ा। मिल्सको सन्देश लिख भेजा।

बम्बई, २८ दिसम्बर, सोमवार

चरखे पर १८४ तार। सुबह बम्बई पहुँचे। जबरदस्त स्वागत, भारी सभा, वेल्फेयर लीग आदि।

बम्बई, २९ दिसम्बर, मंगलवार

चरखे पर १८९ तार। सुभाषबाबू, आन्ध्र, कर्नाटक आदिके प्रतिनिधियोंसे बातचीत। कार्यसमिति, वाइसरायको तार, सर फजलीको पत्र।

बम्बई, ३० दिसम्बर, बुधवार

चरखे पर २१४ तार। माटुंगामें स्त्री सेवादल, रघुवीरसिंहके साथ बातचीत, कार्यसमिति, डाक्टरने जाँच की। सर चिनुभाईको देखने गया। जमनादासके साथ बातचीत, काका, जयप्रकाशके साथ बातचीत।

बम्बई, ३१ दिसम्बर, गुरुवार

चरखे पर १७७ तार। वाइसरायका तार आया। जवाब भेजा।[1] प्रस्ताव तैयार किया, रातके डेढ़ बजे पूरा हुआ। उसके बाद कताई की। इस वक्त २-४५ हुए हैं। लालजी सेठ, मोदी मिल गये। आज सुबह प्रार्थना रास्तेमें की, फिर सेविकाओंसे मिलने गया। शामकी प्रार्थना लेडी नॉर्थकोट अनाथालयमें की।

मूल गुजराती (एस० एन० १९३३७)से।

१. देखिए "तार : वाइसरायके निजी सचिवको", १-१-१९३२।

२९५. कांग्रेस कार्य-समितिके प्रस्तावका पाठ[1]

बम्बई

[१ जनवरी, १९३२]

कार्य-समितिने महात्मा गाधीसे यूरोप-यात्राका विवरण सुना और बगाल, संयुक्त प्रान्त तथा सीमा-प्रान्तमें जारी किये गये असाधारण अध्यादेशो, अधिकारियोके अनेक कार्यो, जिनमे खान अब्दुल गफ्फार खाँ, श्री शेरवानी और पण्डित जवाहरलाल नेहरू सहित अन्य बहुतसे लोगोकी गिरफ्तारी भी शामिल है, तथा सीमा-प्रान्तमे निर्दोष लोगोपर की गई गोलीबारीसे, जिसमे कई लोग मारे गये और बहुत ज्यादा जख्मी हुए, उत्पन्न स्थितिपर विचार किया। कार्य-समितिने महात्मा गाधी द्वारा परमश्रेष्ठ वाइसरायको भेजे तारके उत्तरमे उनसे प्राप्त तार भी देखा। कार्य-समितिका विचार है कि इन अनेक कार्योके कारण तथा दूसरे प्रान्तोमे अपेक्षाकृत कम गम्भीर ढगकी जो और कार्रवाइयाँ की गईं उनके फलस्वरूप एव परमश्रेष्ठके तारके कारण काग्रेसके लिए सरकारके साथ सहयोग करना तबतक सर्वथा असम्भव ही जान पडता है जबतक कि सरकार अपनी नीतिमे आमूल परिवर्त्तन न करे। इन कार्रवाइयों और इस तारसे ऐसा प्रतीत नही होता कि नौकरशाही जनताको सत्ता देनेको तनिक भी इच्छुक है और इन सबका उद्देश्य राष्ट्रके मनोबलको तोडना है। इनसे यह भी प्रकट होता है कि जिस काग्रेससे सरकार सहयोगकी अपेक्षा रखती है उसीमे उसका विश्वास नही है। अभी हालमे बगालमे कुछ व्यक्तियो द्वारा जिस प्रकारकी आतक-वादी कार्रवाइयाँ की गई, उस प्रकारकी आतकवादी कार्रवाइयोकी भर्त्सना करनेमें — वे कार्रवाइयाँ चाहे जिस कारणसे की गई हो — कार्य-समिति किसीसे पीछे नही है। लेकिन साथ ही सरकारने अपने हालकी कार्रवाइयो और अध्यादेशोके रूपमे जिस आतकवादी वृत्तिका परिचय दिया है, उसकी भर्त्सना भी समिति उतने ही तीव्र स्वरमें करती है। कार्य-समिति मानती है कि कुमिल्लामे दो लडकियोने एक व्यक्तिकी हत्या करके राष्ट्रको घोर लज्जाजनक स्थितिमे डाल दिया और उसका यह निश्चित मत है कि ऐसे अपराधोसे राष्ट्रकी बडी क्षति होती है — विशेषकर उस अवस्थामे जब कि वे अपनी सबसे बडी प्रतिनिधि सस्था काग्रेसके जरिये, स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए, अहिंसक मार्गपर चलनेको प्रतिश्रुत है। लेकिन कार्यसमितिको उस बगाल अध्या-देशका तो कोई औचित्य दिखाई नही देता जिसका उद्देश्य कुछ लोगोके अपराधके लिए सारी जनताको दण्डित करना है। इसका असली उपाय ऐसे अपराधोकी प्रेरणा देने-वाले कारणको दूर करना है। बंगाल अध्यादेशके अस्तित्वका तो कोई औचित्य नहीं

१. इसका मसविदा गांधीजी ने तैयार किया था; देखिए "बातचीत: वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगके शिष्टमण्डलसे", २-१-१९३२ और "दैनन्दिनी, १९३१" में ३१ दिसम्बरका इन्दराज। इसका पाठ अगले शीर्षकके साथ वाइसरायको तार द्वारा सूचित किया गया था।

है, लेकिन सयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्तके अध्यादेशोका तो और भी कम औचित्य है। काग्रेस कार्य-समितिका विचार है कि काग्रेसने सयुक्त प्रान्तमे किसानोको राहत दिलानेके लिए जो कदम उठाये, वे उचित हैं और उनका औचित्य सिद्ध किया जा सकता है। कार्य-समिति मानती है कि सयुक्त प्रान्तके किसान जिस प्रकारके गम्भीर आर्थिक कष्टमे निश्चित रूपसे पडे हुए हैं उस प्रकारके आर्थिक कष्टमें पडे लोगोको इस बातका निर्विवाद अधिकार प्राप्त है कि यदि वे अन्य सवैधानिक तरीकोसे राहत प्राप्त कर सफल न हो सके — जैसा कि सयुक्त प्रान्तके किसान नही हो सके — तो वे लगान देना बन्द कर दें। सयुक्त प्रान्त काग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री शेरवानी तथा काग्रेसके कार्यकारी महामन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरूको, जो महात्मा गांधीसे बात-चीत करने और कार्य-समितिकी बैठकमे भाग लेने बम्बई जा रहे थे, गिरफ्तार करके सरकार अपने अध्यादेशकी सीमासे भी आगे निकल गई है, क्योकि बम्बईमें इन लोगो के उत्तर प्रदेशके लगानबन्दी आन्दोलनमे शामिल होनेका तो कोई सवाल ही नही था। जहाँतक सीमा-प्रान्तका सम्बन्ध है, खुद सरकारके ही साक्ष्योसे लगता है कि वहाँ अध्यादेश जारी करने अथवा खान अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके साथियोको गिरफ्तार करने और बिना मुकदमा चलाये जेलमें बन्द कर देनेका कोई उचित कारण नही है। कार्य-समिति उस प्रान्तके निर्दोष और निहत्थे लोगोपर गोलीबारीको मन-माना और अमानवीय कार्य मानती है और सीमान्तके बहादुर लोगोको उनके साहस तथा सहन-शक्तिपर बधाई देती है, और कार्य-समितिको इस बातमे कोई सन्देह नही है कि अगर सीमा-प्रान्तके बहादुर लोग गम्भीरसे-गम्भीर उत्तेजनाके कारणोके बाव-जूद अपनी अहिंसाकी भावना कायम रखते हैं तो उनका रक्त और उनके कष्ट भारतकी स्वातन्त्र्य प्राप्तिमे बहुत सहायक सिद्ध होंगे। कार्य-समिति भारत सरकारको उस घटनाक्रमकी खुली और निष्पक्ष जाँच करानेको आमन्त्रित करती है जिसके कारण उसे ये अध्यादेश जारी करने पडे, सामान्य न्यायालयो और विधायक तन्त्रको स्थगित करना जरूरी लगा तथा उन अध्यादेशोके अन्तर्गत उसने और भी जो अनेक कारंवाइयाँ की उन्हे करना आवश्यक प्रतीत हुआ। और अगर एक योग्य जाँच-समिति नियुक्त की जाती है और प्रमाण जुटानेके लिए कार्य-समितिको सारी सुविधाएँ दी जाती हैं तो वह जाँच-समितिके समक्ष सबूत पेश करके जाँचमे मदद देनेको तैयार है। कार्य-समितिने गोलमेज परिषद्के समक्ष प्रधान मन्त्री द्वारा की गई घोषणा तथा संसदमें हुई बहसोपर विचार किया है और वह उस घोषणाको काग्रेसकी मागोके सदर्भमें सर्वथा असन्तोषजनक और अपर्याप्त मानती है और अपना यह विचार व्यक्त करती है कि पूर्ण स्वतन्त्रतासे कम किसी भी चीजको काग्रेस सन्तोषजनक नही मान सकती। इस स्वतन्त्रतामें सुरक्षा-व्यवस्था, विदेशी मामलो तथा वित्त-व्यवस्थाका पूर्ण नियन्त्रण शामिल है, यद्यपि इनके सम्बन्धमे राष्ट्रके हितमे स्पष्टत: जैसा उचित लगे, उस तरहके सुरक्षात्मक पूर्वोपाय किये जा सकते हैं। कार्य-समितिने लक्ष्य किया है कि गोलमेज परिषद्मे ब्रिटिश सरकार कांग्रेसको जाति, धर्म अथवा रगके भेदभावके बिना सम्पूर्ण राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करने और उसकी ओरसे बोलनेके अधि-

कारसे सम्पन्न संस्था माननेको तैयार नही थी। साथ ही कार्य-समिति दु खके साथ इस बातको स्वीकार करती है कि उक्त परिषद्मे साम्प्रदायिक एकता प्राप्त नही की जा सकी। इसलिए कार्य-समिति इस बातके लिए राष्ट्रका आह्वान करती है कि काग्रेसकी सम्पूर्ण राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करनेकी क्षमता प्रदर्शित करने तथा ऐसा वातावरण तैयार करनेके लिए वह सतत प्रयत्न करे जिससे विशुद्ध राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे रचित सविधान राष्ट्रके सभी घटक-समुदायोको स्वीकार हो सके। इस बीच कार्य-समिति अपना सहयोग देनेके लिए तैयार है, बशर्ते कि परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदय अपने तारपर पुर्नविचार करे, अध्यादेशो तथा सरकारके हालके कार्योके सम्बन्धमें राहत दी जाये, किसी भी भावी वार्त्तामे काग्रेसके लिए अपनी पूर्ण स्वतन्त्रताकी माँगपर आग्रह करनेकी पूरी गुजाइश रहने दी जाये और जबतक पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त न हो तबतक देशका प्रशासन जन-प्रतिनिधियोकी सलाहसे चलाया जाये। यदि उपर्युक्त बातोके सम्बन्धमे सरकारने कोई सन्तोषजनक प्रतिक्रिया नही दिखाई तो उसे कार्य-समिति इस बातका द्योतक समझेगी कि उसने दिल्लीके समझौतेको रद्द कर दिया है। यदि सरकारने कोई सन्तोषजनक प्रतिक्रिया नही दिखाई तो उस अवस्थामें कार्य-समिति राष्ट्रको उदाहरणस्वरूप दिये जा रहे निम्नलिखित विषयोके सम्बन्धमे उल्लिखित शर्तोंका पालन करते हुए सविनय अवज्ञा — जिसमे लगानबन्दी भी शामिल है — करनेको आमन्त्रित करती है. (१) कोई भी प्रान्त, जिला, तहसील या गाँव तबतक सविनय अवज्ञा करनके लिए बाध्य नही है जबतक कि वहाँके लोग इस सघर्षके अहिंसात्मक स्वरूपको उसके समस्त फलितार्थोंके साथ-साथ न समझते हों और जान-मालकी क्षतिकी सीमा तक कष्ट उठानेको तैयार न हो। (२) उत्तेजनाका गम्भीरसे-गम्भीर कारण उपस्थित रहने पर भी मन, वचन और कर्मसे अहिंसाका पालन करना चाहिए और यह तो समझ ही लेना चाहिए कि इस आन्दोलनका उद्देश्य बदला लेना या अत्याचारीको चोट पहुँचाना नही बल्कि स्वेच्छासे कष्ट सहन करके और आत्मशुद्धिके द्वारा उसका हृदय परिवर्त्तन करना है। (३) सरकारी अधिकारियो, पुलिस या राष्ट्रविरोधी लोगोको चोट पहुँचानेके लिए सामाजिक बहिष्कारका तरीका नही अपनाना चाहिए और यह चीज अहिंसाकी भावनाके सर्वथा प्रतिकूल है। (४) यह याद रखना चाहिए कि अहिंसक आन्दोलनोमे आर्थिक सहायताकी गुजाइश नही है; इसलिए किरायेके स्वयंसेवक नही रखे जाने चाहिए, लेकिन जहाँ सम्भव हो वहाँ केवल उनके तथा जेल जानेवाले या मारे जानेवाले गरीब पुरुषो और स्त्रियोके आश्रितोके जीवन-यापनका खर्च देनेकी छूट है। लेकिन, कार्य-समिति इस उद्देश्यके लिए काम करनेवाले कार्यकर्त्ताओसे कगाली और तंगीको झेलते हुए भी सघर्ष जारी रखनेकी अपेक्षा करती है। (५) सभी विदेशी कपडों — चाहे वे ब्रिटेनके हो या किसी अन्य देशके — का बहिष्कार हर हालतमे आवश्यक है। (६) सभी काग्रेसी पुरुषो और स्त्रियोसे हाथ-कते और हाथ-बुने खद्दरके उपयोगकी अपेक्षा रखी जाती है, यहाँतक कि देशी मिलोके बने कपडे भी उनके लिए त्याज्य होने चाहिए। (७) शराब तथा विदेशी कपडेकी दुकानो पर धरना देनेका काम जोरदार ढगसे चलाना चाहिए। इस कामको मुख्यत. स्त्रियाँ

करे, लेकिन अहिंसाका पूरा पालन होना चाहिए। (८) गैरकानूनी तौरपर नमक बनाना और एकत्र करना फिरसे शुरू कर देना चाहिए। (९) यदि जुलूसो और प्रदर्शनोका आयोजन किया जाये तो उनमे केवल वही लोग शामिल हो जो लाठियोके प्रहार या गोलियोकी बौछार अडिग होकर सह सकते हो। (१०) अहिंसात्मक लडाईमें भी अत्याचारियो द्वारा उत्पादित मालका बहिष्कार सर्वथा उचित है, क्योकि अत्याचारियोके साथ व्यापारिक सम्बन्धोको बढावा देना या कायम रखना पीडितोका कर्त्तव्य नही है। इसलिए ब्रिटिश माल और पेढियोका बहिष्कार फिरसे शुरू करना चाहिए और उसे जोर-शोरसे चलाना चाहिए। (११) जहाँ-कही सम्भव और उचित माना जाये वहाँ अनैतिक और लोगोको चोट पहुँचानेवाले नियमो तथा आदेशोकी सविनय अवज्ञा करनी चाहिए। (१२) अध्यादेशोके अन्तर्गत जारी किये गये सभी अन्यायपूर्ण आदेशोकी सविनय अवज्ञा की जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२, पृष्ठ २३५-३७

२९६. तार : वाइसरायके निजी सचिवको

बम्बई
१ जनवरी, १९३२

अपने इसी २९ तारीखके तारके उत्तरमे भेजे परमश्रेष्ठके तारके लिए मैं उन्हे धन्यवाद देता हूँ। तार पढकर बडा दुःख हुआ। कारण, उनकी ओर अत्यन्त मैत्रीपूर्ण भावसे सुलहके लिए जो हाथ बढाया गया उसे उन्होने इस तरहसे झटक दिया है जो उन-जैसे उच्च पदस्थ व्यक्तिके लिए कदाचित् ही शोभा देनेवाला हो। मैंने तो एक जिज्ञासुकी तरह उनसे कुछ-एक प्रश्नोपर प्रकाश डालनेका निवेदन किया था ताकि सरकार द्वारा उठाये गये जिन अत्यन्त गम्भीर और असाधारण कदमोका उल्लेख मैंने किया था उनके सम्बन्धमे उसका क्या कहना है, यह समझ सकूँ। मैंने मित्रताका जो हाथ बढाया उसकी कद्र करनेके बजाय परमश्रेष्ठने यह कहकर उसे ठुकरा दिया है कि पहले मै अपने सुयोग्य साथियोके आचरणोका खण्डन करूँ। यदि मैं ऐसा अशोभनीय आचरण करूँ और उनसे मुलाकातका समय माँगूं तो भी वे इस बातके लिए तैयार नही है कि मैं मुलाकातके दौरान राष्ट्रके लिए इतने अधिक महत्त्वपूर्ण इन विषयोकी चर्चा उनसे करूँ।

मेरे विचारसे, इन अध्यादेशो और कार्योंके सामने सविधानके प्रश्नका कोई महत्त्व ही नही रह जाता है, क्योकि ये अध्यादेश और कार्य ऐसे है कि यदि इनका डटकर विरोध नही किया गया तो ये राष्ट्रके आत्मसम्मान और मनोबलको बिलकुल नष्ट करके छोड़ेंगे। मै आशा

करता हूँ कि कोई भी आत्मसम्मानवाला भारतीय इस सन्दिग्ध सम्भावनाका विचार करके कि हमे एक सविधान मिलनेवाला है, राष्ट्रके उत्साहको भग करनेका खतरा नही उठायेगा — विशेषकर इसलिए कि तवतक कही ऐसा न हो जाये कि राष्ट्रमे उस सविधानको चलानेकी शक्ति ही न रह जाये। मै यह भी वता दूँ कि जहाँतक सीमा-प्रान्तका सम्वन्ध है, आपके तारमे तथ्योका जो विवरण दिया गया है, उससे साफ दिखता है कि लोकप्रिय नेताओको गिरफ्तार करने, असाधारण अध्यादेश जारी करने, जान-मालको सर्वथा अरक्षित बना देने और निहत्थी तथा अहिंसक भीड़पर उनके विश्वस्त नेताओकी गिरफ्तारीके विरुद्ध प्रदर्शनका दुस्साहस करनेके कारण गोलीबारी करनेका कोई औचित्य नही था। यदि खान साहव अब्दुल गफ्फारने पूर्ण स्वतन्त्रताके अधिकारपर आग्रह किया तो उनकी यह माँग स्वाभाविक थी और यही माँग काग्रेसने १९२९मे लाहौरमे की थी, मगर तव किसीको कोई सजा नही दी गई फिर मैने लन्दनमे ब्रिटिश सरकारके समक्ष पूरे जोरसे यह माँग पेश की थी। इसके अलावा, मै वाइसराय महोदयको यह भी याद दिला दूँ कि यद्यपि सरकारको यह मालूम था कि काग्रेसके प्रादेशपत्रमे ऐसी माँग की गई है, फिर भी मुझे काग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे लन्दन परिषद्मे भाग लेनेके लिए आमन्त्रित किया गया। इसी तरह दरबारमे शामिल होनेसे इनकार-भर कर देना मुझे ऐसा अपराध नही लगता जिसके लिए किसीको तत्काल जेलमें डाल दिया जाये। यदि खान साहव साम्प्रदायिक विद्वेष फैला रहे थे तो यह बात निस्सन्देह खेदजनक थी। वैसे तो मेरे पास उनका अपना वक्तव्य मौजूद है, जिसमें उन्होने इससे उलटी बातें कही है, लेकिन अगर मान भी ले कि उन्होने साम्प्रदायिक विद्वेष फैलाया, तो भी उचित तो यह था कि उनपर खुला मुकदमा चलाया जाता, जहाँ वे अपने ऊपर लगाये आरोपकी सफाई दे सकते। सयुक्त प्रान्तके सम्बन्धमे परमश्रेष्ठको निश्चय ही गलत बातें वताई गई है, क्योकि काग्रेसने किसी लगान-बन्दी आन्दोलनकी घोषणा नही की, बल्कि सचाई यह थी कि सरकार तथा काग्रेसके प्रतिनिधियोके बीच बातचीत चल ही रही थी कि लगान वसूल करनेका समय आ गया और लगान माँगा जाने लगा। इसलिए कांग्रेसियोको किसानोको बातचीतके परिणाम सामने न आने तक लगान न देनेकी सलाह देनी पडी, और श्री शेरवानीने कांग्रेसकी ओरसे यह प्रस्ताव किया था कि यदि अधिकारिगण बातचीतके दौरान लगान वसूल करना बन्द रखे तो जनताको दी गई यह सलाह वापस ले लेगे। मै यह निवेदन करनेकी धृष्टता करता हूँ कि यह ऐसा मामला नही है जिसको उस तरहसे आनन-फानन बरतरफ

कर दिया जाये जैसा कि आपके तारमें किया गया है। संयुक्त प्रान्तमें यह विवाद बहुत समयसे चला आ रहा है और इसका सम्बन्ध उन करोड़ो किसानोके हिताहितसे है जिनके बारेमें सभी जानते है कि वे गरीबीकी चक्कीमें पिसे जा रहे हैं। जनताके कल्याणकी चिन्ता करनेवाली कोई भी सरकार कांग्रेस-जैसी सस्थाके स्वेच्छासे दिये गये सहयोगका स्वागत करती, क्योकि यह बात निर्विवाद है कि उसका जनसाधारण पर बडा प्रभाव है और उसकी एकमात्र आकांक्षा ईमानदारीके साथ जनताकी सेवा करना है। और मैं यहाँ यह भी बता दूं कि मैं मानता हूँ कि जिस समुदायने असह्य आर्थिक बोझसे छुटकारा पानेके अन्य सभी उपाय आजमाकर देख लिये है, उसका यह प्राचीन, स्वाभाविक और कभी न छीना जा सकनेवाला अधिकार है कि वह कर देना बन्द कर दे। मैं इस कथनका स्पष्ट खण्डन करता हूँ कि कांग्रेसका किसी भी तरहसे अव्यवस्था फैलानेका कोई इरादा है।

बंगालके सम्बन्धमें सरकारकी ही तरह कांग्रेस भी हत्याकी घटनाओं की भर्त्सना करती है और ऐसे अपराधोको समूल नष्ट कर देनेके लिए आवश्यक समझी जानेवाली किसी भी कार्रवाईमें सरकारके साथ हार्दिक सहयोग करनेको तैयार है। लेकिन, जहाँ कांग्रेस आतंकवादी तरीकोकी भर्त्सना तीव्रतम शब्दोमें करेगी, वहाँ वह बंगाल अध्यादेश तथा उसके अधीन की गई कार्रवाइयोके रूपमें सामने आनेवाली सरकारकी आतंकवादी नीतिके साथ भी अपना नाम नही जुडने देगी, बल्कि उसने अपने ऊपर अहिंसा-धर्मकी जो मर्यादा लगा रखी है उस मर्यादाका पालन करते हुए कानून-समर्थित सरकारी आतकका विरोध करेगी। मैं आपके तारमें बताई इस बातको हृदयसे स्वीकार करता हूँ कि सहयोग पारस्परिक होना चाहिए, लेकिन आपके तारसे तो मैं अनिवार्यत. इसी निष्कर्षपर पहुँचता हूँ कि परमश्रेष्ठ कांग्रेससे तो सहयोगकी माँग करते हैं, लेकिन वे सरकारकी ओरसे कोई सहयोग देनेको तैयार नही हैं। इन मामलोपर बातचीत करनेसे उनके साफ इनकार कर देनेका मैं और कोई अर्थ लगा ही नही सकता हूँ। मैंने यह समझानेकी कोशिश की है कि इन मामलोके दो पक्ष हैं। जनताके पक्षको जिस रूपमें मैंने समझा है उस रूपमें रख दिया है, लेकिन निश्चित निष्कर्षपर पहुँचनेसे पहले मैं दूसरे, अर्थात् सरकारी पक्षको भी समझ लेनेको उत्सुक था। मेरा इरादा था कि उसके बाद ही मैं कांग्रेसको कोई सलाह दूं। आपके तारके अन्तिम अनुच्छेदके बारेमें मेरा निवेदन यह है कि अपने साथियों और सहयोगियोके कार्योंके लिए — चाहे वे लोग सीमा-प्रान्तके रहे हो या संयुक्त प्रान्तके — अपने

नैतिक दायित्वसे इनकार करना मेरे लिए मुनासिब नही होगा, लेकिन मै यह स्वीकार करता हूँ कि उन साथियो और सहयोगियो, तफसीलवार कार्यो और प्रवृत्तियोकी जानकारी मुझे नही थी, क्योकि तब मै भारतमे नही था, और चूंकि काग्रेसकी कार्य-समितिको सलाह देना तथा उसका मार्गदर्शन करना मेरे लिए आवश्यक था और चूंकि मै वस्तुस्थितिकी पूरी जानकारी प्राप्त करना चाहता था, इसीलिए मैंने साफ मनसे और पूरी सदाशयताके साथ परमश्रेष्ठसे मुलाकातका समय माँगा और सोच-समझकर उनसे अपना मार्गदर्शन करनेका निवेदन किया। मै परमश्रेष्ठपर अपनी यह राय जाहिर किये बिना नही रह सकता कि उन्होने जो उत्तर देनेकी कृपा की है वह उस मैत्रीपूर्ण तथा सदाशयतासे भरे निवेदनका योग्य उत्तर नही था और अगर अब भी बहुत देर नही हो गई हो तो मै परमश्रेष्ठसे अपने निर्णयपर पुनर्विचार करनेको कहूँगा और यह निवेदन करूँगा कि वे मुझको एक मित्र मानकर वार्त्ताके विषयोपर कोई प्रतिबन्ध लगाये बिना मुझसे मिले। अपनी ओरसे मै यह वादा कर सकता हूँ कि वे जो भी तथ्य मेरे सामने रखेंगे उनपर मै खुले दिमागसे विचार करूँगा। मै बेहिचक और खुशी-खुशी विभिन्न प्रान्तोमे जाऊँगा और अधिकारियोकी सहायतासे प्रश्नके दोनो पक्षोका अध्ययन करूँगा। उसके बाद यदि मै इस निष्कर्षपर पहुँचा कि जनताने गलती की थी और कार्य-समितिको तथा मुझे भी गुमराह किया गया तथा सरकार सही थी तो यह सब निस्संकोच और स्पष्ट रूपसे स्वीकार करूँगा और काग्रेसको तदनुसार सलाह दूँगा। सरकारके साथ सहयोग करनेकी अपनी इच्छा और तत्परताके साथ-साथ मुझे परमश्रेष्ठके सामने अपनी मर्यादाएँ भी रख देनी चाहिए। अहिंसा मेरा सम्पूर्ण धर्म है। मै मानता हूँ कि सविनय अवज्ञा न केवल जनताका — विशेषकर जब अपने ही शासनमें उसकी आवाजका कोई महत्त्व नही हो — स्वाभाविक अधिकार है, बल्कि यह हिंसा अथवा सशस्त्र विद्रोहका प्रभावसम्पन्न विकल्प भी है। इसलिए मै अपने धर्मसे कभी भी डिग नही सकता। इस धर्मका पालन करनेके लिए और जनताका मार्गदर्शन करनेका शायद और मौका मुझे मिले ही नही, इस आशयकी उन निर्विवाद खबरोके आधारपर जिनकी पुष्टि भारत सरकारकी हालकी कार्रवाइयोसे होती है, कार्य-समितिने मेरी सलाह मानकर प्रस्ताव पास किया है, जिसमे सविनय अवज्ञाकी एक रूपरेखा अस्थायी तौरपर प्रस्तुत की गई है। साथमे मै प्रस्तावका पाठ भेज रहा हूँ। यदि परमश्रेष्ठ मुझसे मिलना योग्य समझें तो हमारी बातचीत होनेतक इस आशासे कि उसके परिणाम-स्वरूप प्रस्तावको अन्तत शायद वापस ही ले लेना पड़े, इसके

अनुसार कार्रवाई करना स्थगित रखा जायेगा। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मेरे और परमश्रेष्ठके बीच हुआ पत्रव्यवहार इतना अधिक महत्त्वपूर्ण है कि उसका प्रकाशन रोककर नही रखा जा सकता। इसलिए, मैं अपना तार, आपका उत्तर, यह प्रत्युत्तर और कार्य-समितिका प्रस्ताव प्रकाशनार्थं भेज रहा हूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]
इंडिया इन १९३१-३२; यंग इंडिया, ७-१-१९३२ भी।

२९७. परिचय-पत्र : प्रिवा-दम्पतिको[2]

१ जनवरी, १९३२

श्री प्रिवा और उनकी धर्मपत्नी हिंदुस्तानके मित्र है और आजकलकी हालत देखनेके लिए मेरे साथ आये है। प्रत्येक हिंदीसे प्रार्थना है कि इन दपतिको यथा-संभव सहाय करे और उनसे प्रेम करे।

मोहनदास गांधी

हिन्दीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७९१) से।

२९८. तार : प्रभाशंकर पट्टणीको

बम्बई
२ जनवरी, १९३२

सर प्रभाशकर पट्टणी
भावनगर

सम्भवत: कल रात अहमदाबादके लिए प्रस्थान कर दूंगा। आपका वही आना शायद बेहतर रहेगा।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९२२)से।

१. वाइसरायके निजी सचिव द्वारा भेजे इस तारके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ४।
२. यह परिचय-पत्र अंग्रेजीमें भी दिया गया था।

२९९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

[२ जनवरी, १९३२][1]

प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र पाकर बडी खुशी हुई। कोई कारण नही कि तुम हम बेचारे बाहरवालो से ईर्ष्या करो। लेकिन हमे तुम्हारे भाग्यसे अवश्य ईर्ष्या है कि तुम्हे सारा गौरव प्राप्त हो रहा है और हम बाहरवालो के हिस्से पडा है वेगार करना। लेकिन हम बदला लेनेकी साजिश कर रहे है। आशा है तुम्हे कुछ अखबार दिये जाते होगे। मै जो-कुछ भी कर रहा हूँ, उसमे सदा तुम्हारा खयाल बना रहता है।

अभी पिछले दिनो मै कमलासे मिला था। बेशक, उसे खूब आरामकी जरूरत है। मै एक बार फिर उससे मिलनेकी कोशिश करूँगा और इस बातके लिए आग्रह करूँगा कि जबतक वह पूर्णरूपसे स्वस्थ न हो जाये, कमरेसे बाहर न निकले। आशा है, डॉ० महमूदके[2] सम्बन्धमे की गई कार्रवाईसे तुम सहमत होगे। मेरा निश्चित मत है कि आनन्द-भवनपर लगाया कर चुकानेका वचन पूरा किया जाना चाहिए।[3]

तुम दोनोको स्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

ईश्वर और सरकारकी इच्छा रही तो कल मै आश्रम जा रहा हूँ। वहाँसे दो-तीन दिनमे लौट आऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृष्ठ १०४

३००. पत्र : नारणदास गांधीको

२ जनवरी, १९३२

चि० नारणदास

तुम्हारे पत्र तो मिलते ही रहे है, किन्तु मै तुम्हे किस समय पत्र लिखूँ? इस समय रातके ११-३० बज रहे है। इस बातकी सम्भावना है कि शायद आज रातको मुझे गिरफ्तार कर लिया जाये; इसलिए तुम्हे यह पत्र लिखने बैठा हूँ। तुम्हे

१. साधन-सूत्रमें तिथि २९ जनवरी बताई गई है, जो स्पष्टतः चूक है। नेहरू स्मारक संग्रहालयमें सुरक्षित मूल पत्रपर तिथि २ जनवरी दी हुई है।

२. श्री सैयद महमूद।

३. यह वाक्य मूलमें इसी प्रकार है।

क्या सीख दूं ? तुमपर मुझे पूर्ण विश्वास है। तुम्हारे सामने जो भी कठिनाइयाँ आयेंगी प्रभु तुम्हे उनका सामना करनेकी शक्ति देगा। मेरे पकडे जानेके बाद मीरा-बहन वहाँ आ जायेगी। तुम्हे उसका पथ-प्रदर्शन करना है। यदि कहीसे उसकी माँग आये तो उसका निर्णय भी तुम्हे ही करना है। सम्भवतः कुछ ही दिनोमे प्रभावती भी वहाँ पहुँच जायेगी। लक्ष्मीसे कहना कि उसका पत्र मुझे मिल गया है और उसका निर्णय मुझे पसन्द आया है।

माता-पितासे मेरे दण्डवत् कहना। कितना अच्छा होता यदि मैं उनके दर्शन कर पाता। मुझे ऐसा याद आता है कि आश्रममें जो पुस्तके है उनमे से स्कूलके लिए उपयोगी पुस्तकोको छोडकर, शेष विद्यापीठको दे देनेको मैने कहा था। काका कह रहे थे कि तुम्हारा खयाल कुछ अलग है। जो हो किन्तु विद्यापीठको पुस्तके दे डालनेको मै बुद्धिमत्ता मानता हूँ। मेरा विश्वास है कि मासिक पत्र-पत्रिकाएँ वहाँ दे देनेसे वे अधिक उपयोगमे आयेगी और सुरक्षित भी रहेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८१९८ भी, सौजन्य . नारणदास गाधी

३०१. बातचीत : वेलफेयर ऑफ इंडिया लीगके शिष्टमण्डलसे[1]

[बम्बई]
२ जनवरी, १९३२

मेरे तारकी[2] भाषा बहुत ही शिष्ट और मैत्रीपूर्ण थी। मेरे मित्रोने 'मार्ग-दर्शन' शब्दपर आपत्ति की थी, लेकिन अनुनय-विनय कर मैने उन्हे मना लिया। आप देख सकते हैं कि वाइसरायने अपने-आपको बिलकुल गलत स्थितिमे डाल लिया है। और अध्यादेशके सम्बन्धमें दलीले देना इस विषयसे निबटनेका गलत तरीका था। वे यह भूल गये कि मैंने उनसे कोई साधारण नागरिककी हैसियतसे नही, बल्कि ऐसे व्यक्तिके रूपमें निवेदन किया था जिसका उनसे बराबर व्यवहार चलता रहता है और जिसके साथ उनको इस भावी योजनापर बात करनी थी कि गोलमेज परिषद्के कार्यको किस प्रकार अच्छेसे-अच्छे ढगसे सम्पन्न करना चाहिए। उनका यह कहना अप्रासंगिक था कि मै अध्यादेशोके सम्बन्धमें बातचीत नही कर सकता। दूसरी शर्त — अर्थात् यह कि मुझे अपने साथियोके रवैयेका खण्डन करना चाहिए — अपमानजनक है। बात यह है कि सरकार अपनी सीमा लाँघ गई है। यह लॉर्ड विलिंग्डनकी भाषा नही है। इस उत्तरको तो उनकी ओरसे औरोने तैयार किया है।

१. महादेव देसाईके लेख "द हिस्टॉरिक वीक" (ऐतिहासिक सप्ताह) से उद्धृत।
२. देखिए "तार: वाइसरायको", २९-१२-१९३१।

यह बहुत बुरी बात है कि भारत सरकार यह जानते हुए भी कि कोई भी गलती होनेपर भारतमें भयावह परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है, इस तरहका व्यवहार करे। यदि आपको विश्वास हो कि मित्रताकी भावनासे बढाये मेरे हाथको झटक-कर और मेरे लिए अपने दरवाजे बन्द करके भारत सरकारने भारी भूल की है तो उसे अपने निर्णयपर पुनर्विचार करने और बिना किसी शर्तके मुझसे बातचीत करनेपर मजबूर करनेके लिए आपको जमीन-आसमान एक कर देना चाहिए। इसपर आप पूछेंगे कि तब मैंने कार्य-समितिसे एक अस्थायी प्रस्ताव क्यो पास करवाया। क्या इसका मतलब भरी पिस्तौल लेकर किसीपर दबाव डालना, धमकी देना नही है? मेरा उत्तर यह है कि नही, ऐसा नही है। कारण, भारत सरकार यह जानती थी कि काग्रेस ऐसी सस्था है जिसने सविनय अवज्ञाको अपने धर्मकी तरह अपना रखा है। काग्रेसने ऐसा बहुत-कुछ किया है जिससे देश और सरकारको यह विश्वास हो जाना चाहिए कि अन्यायके निराकरणके लिए चलाये गये आन्दोलनमें काग्रेस सशस्त्र विद्रोहकी सलाह कभी नही देगी, बल्कि वह अहिंसात्मक अवज्ञाका ही परा-मर्श देगी। स्पष्ट ही, उसने इस तथ्यको नजरअन्दाज कर दिया कि सविनय अवज्ञा एक जायज चीज मान ली गई है। दिल्ली समझौतेमे सविनय अवज्ञाका त्याग नही किया गया था, सघर्ष-विरामके दौरान उसे केवल बन्द कर दिया गया था। शिमलामे जब हमारे अन्तिम पत्रोका — जिन्हे दूसरे समझौतेके हिस्सेके रूपमे प्रकाशित किया गया, उन पत्रोका — आदान-प्रदान हुआ था तो अपने पत्रमें मैंने कहा था कि यदि सारे प्रयत्न विफल हो गये तो उस हालतमें हम सविनय अवज्ञा करनेका अपना अधि-कार सुरक्षित रखते है।[1] इस प्रकार सरकारका उत्तर, जिसके द्वारा उसने अन्तिम रूपसे अपने दरवाजे बन्द कर लिये है, दिल्ली-समझौते और उस शिमला-समझौतेका सीधा उल्लघन है जिसमें लॉर्ड विलिग्डन भी शामिल थे। इस प्रकार आपको यह देखना चाहिए कि भारत सरकार कैसी भारी गलत स्थितिमे जा फँसी है। इसलिए आपको मेरा यह सुझाव है कि तार भेजनेके बाद अब आप कुछ और कार्रवाई भी कीजिए और अगर सरकार मुलाकात देने-जैसी छोटी-सी बातपर राजी न हो तो काग्रेसके पक्षमें आ मिलिए।

मुझे लोगोको यह कहते सुनकर बडा दु:ख होता है कि मै अपने उग्रपथी साथियोके दबावमे आ गया। मै तो स्वय ही सबसे बड़ा उग्रपथी हूँ। गत चार वर्षोसे मेरे साथी मेरे प्रति जैसी वफादारी दिखाते आये है, उससे अधिक वफादारी दिखाने वाले साथी मैंने अन्यत्र नही देखे है, मेरे साथियोने कभी भी किसी बातके लिए मुझपर जोर नही डाला है और हम सबके द्वारा पास किये गये सभी प्रस्तावो और हमारे भेजे सभी तारोके मसविदे मैंने ही तैयार किये है। इन मामलोमें उन्होने मुझे विशेषज्ञ माना है और अपनी इच्छानुसार बरतनेकी छूट दे रखी है। हमने काफी देरतक विचार-विमर्श किया और लोगोकी भावना यह थी कि अस्थायी ढगका एक प्रस्ताव तो पास कर दिया जाये, लेकिन उसे प्रकाशित न किया जाये। इसपर

१. देखिए खण्ड ४७।

'नही' कहनेवाला मैं ही था। यदि उसे मैं दवा रखता तो यह वाइसराय और राष्ट्र दोनोके प्रति अन्याय होता। मैंने कहा कि जब प्रस्ताव पास हो गया तो वाइसराय साहबको पूरे तथ्य वता देने चाहिए। सविनय अवज्ञा या अहिंसासे जैसा अन्योन्याश्रय सम्बन्ध मेरा है वैसा मेरे साथियोका नही है। यहाँ जिस तरह 'उसीके लिए जियो और उसीके लिए मरो' वाली वात मुझपर लागू होती है उस तरह उनपर लागू नही होती। लेकिन, मेरे सामने और कोई रास्ता ही नही था। जिसके सामने सशस्त्र विद्रोहकी घोषणा करनेका विकल्प हो वह तो आज जो परिस्थिति है उसमें सुलहकी वात करता रह सकता है, लेकिन जिसके सामने ऐसा विकल्प नही है, वह कैसे ऐसा कर सकता है — मैं कैसे सुलहकी वात करता रह सकता हूँ? जो हुआ है, यही है; सविनय अवज्ञा मेरा धर्म है, मैं उसे कैसे छोड सकता हूँ? यही कारण है कि यद्यपि राष्ट्रका पैसा खर्च करते हुए मैं वहुत कजूसीसे काम लेता हूँ, फिर भी मैंने उत्तरसहित प्रस्तावके पूरे पाठको तार द्वारा सूचित करनेका खर्च उठाया।

तार भेजनेके वाद अव आपको जो करना चाहिए वह मुझे वाइसरायके पास भेजना नही, वल्कि आपका स्वय उनसे मिलना है। उनसे आपको सिर्फ इतना ही कहना है कि ऐसे मौकेपर, जवकि एक वहुत वडा सवैधानिक कदम उठाया जा रहा है, राज्यका प्रधान जन-प्रतिनिधिसे मिलनेसे इनकार करे, यह वात ठीक नही लगती।[1]

[अग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-१-१९३२

३०२. सन्देश : खेड़ाके किसानोंको[2]

अहमदावाद
[३ जनवरी, १९३२के पूर्व]

गुजरातमे झाँकने, आश्रमवासियो और अन्य साथियोसे मिलने और आपकी कठिनाइयोमें आपके साथ सवेदना और सहानुभूति प्रकट करनेकी मेरी वड़ी इच्छा थी। परन्तु मुझे डर है कि यह सव सम्भव नही होगा।

सत्याग्रहीको जव जेल या कोई उस-जैसी चीज आमन्त्रित कर रही हो तो वह परिवार या मित्रका सपना तक नही देख सकता और न उनसे मिलने या विदाई लेनेके लिए प्रतीक्षा ही कर सकता है। अपनी मौजूदा स्थितिमें मैं इसी तरहकी मानता हूँ। इसलिए यदि आपसे भेंट सम्भव न हो तो मेरी इस वातपर विश्वास करना कि ऐसा कर्त्तव्यकी अत्यावश्यक माँगके कारण ही हुआ है। ऐसा लगता है कि सग्राम हमारे सामने खडा है और वह इस वार अधिक गम्भीर होगा।

१. गाधीजी से वातचीत करनेके वाद शिष्टमण्डलने अपने अध्यक्षको यह अधिकार दिया कि वे वाइसरायको तार भेजकर वतायें कि गाधीजी के मनमें कोई दुराग्रह नही है और इसलिए यह और भी जरूरी हो जाता है कि उन्हें वाइसरायसे मिलकर परिस्थितिपर वातचीत करनेका मौका दिया जाये।

२. साधन-सूत्रके अनुसार यह सन्देश गुजरातीमें था।

उन्हें लड़ाईके प्रहारको सहने और अडिग रहनेके लिए प्रेरित करते हुए, गांधीजी उनसे हँसी-खुशी अपनी जमीन, माल-असबाब और मवेशियोका त्याग करने, सभी तरहके कष्ट भोगने और लाठी-गोली समेत सभी तरहका उत्पीड़न सहनेका लिए कहते हैं। गांधीजी उनसे यह अपील करते है कि इन सबको सहते हुए भी उन्हे तनिक भी उत्तेजित नहीं होना है और अपने उत्पीड़कपर तरस खाना है और उसके लिए शुभकामना करनी है।

प्रसिद्ध गुजराती कवि शामल भट्टका यह वचन उद्धृत करते हुए कि "जो बुराईका बदला भलाईसे देता है, वही वस्तुतः जीता है", गांधीजी आगे कहते हैं :

प्रेमकी इस धाराका आप पान कर चुके हैं और दूसरोके अनुभव देख चुके हैं। इसलिए आपको उस किसान तकको, जो आपका साथ नही दे रहा है या आपके विरुद्ध है, ठेस नही पहुँचानी है। आपको उसपर भी तरस खाना है, क्योकि कर्त्तव्य के मामलेमें यदि उसका मत आपसे नही मिलता, तो यह उसका दोष नही है।

अपनी बात जारी रखते हुए गांधीजी कहते हैं कि वल्लभभाईको लोगोंने सरदारकी उपाधि दी है, और फिर आगे कहते हैं :

उनकी इज्जत और शक्ति आपके हाथोमें है। यही नही, बल्कि पूरे भारतकी प्रतिष्ठा और इज्जत आपके हाथोमें है। संघर्ष फिर छिड जानेपर, भारत और सारे ससारकी निगाहे आपपर टिकी हैं। इन सब बातोको याद रखिए और सत्याग्रहीके योग्य शक्तिके लिए ईश्वरसे प्रार्थना कीजिए।

किसानोंसे यह आग्रह करते हुए कि उन्हें अपने धाराला भाइयोके साथ मेल-मिलापसे रहना चाहिए, गांधीजी अन्तमें कहते हैं :

यह याद रखिए और अपने-आपको ढाढस दीजिए। यह विश्वास रखिए कि आपकी जब्त की गई सब जमीन आपको वापस मिलेगी। यह कोई प्रलोभन नही है। मैं जब यह कहता हूँ कि सच्चे सत्याग्रहीकी यह सच्ची नीव है, तो इसके एक-एक शब्दपर विश्वास करिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-१-१९३२

३०३. मन्दिर-प्रवेश सत्याग्रह

[३ जनवरी, १९३२ या उसके पूर्व][1]

पिछले सप्ताह जिन दिनों कार्य-समितिकी बैठक चल रही थी, केरलके कई प्रतिनिधियों और दूसरे कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंसे भी मन्दिर-प्रवेशसे सम्बन्धित प्रश्नोंपर अनेक बार मेरी बातचीत हुई। मुलाकातियोंने प्रश्नोत्तरके रूपमें इन वार्त्ताओंकी जो रिपोर्टें प्रकाशित कराई हैं, उनमें भूल-सुधार करनेके बजाय मैं नीचे वह सब दे रहा हूँ जिन्हें मैं उनके प्रश्नोंके उत्तर मानता हूँ। पाठक देखेंगे कि उत्तर इस तरहके हैं कि अलगसे प्रश्नोंका उल्लेख करनेकी जरूरत नहीं रह जाती।

१. इस बातको ध्यानमें रखना आवश्यक है कि यद्यपि अस्पृश्यता-निवारणके प्रश्नका राजनीतिक महत्त्व बहुत अधिक है, किन्तु तत्त्वतः और मुख्य रूपसे यह एक ऐसा धार्मिक प्रश्न है जिसका समाधान हिन्दुओंको करना है और इस दृष्टिसे यह उनके लिए राजनीतिक प्रश्नसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। मतलब यह कि सवर्णोंके अस्पृश्यता-निवारणके कर्त्तव्यको राजनीतिक आवश्यकताओंके सामने भी कभी गौण नहीं बताया जा सकता। इसलिए वर्त्तमान राजनीतिक परिस्थितियोंके कारण अस्पृश्यता को मिटानेके प्रयत्नोंको बन्द कर देना किसी भी तरहसे उचित नहीं होगा।

२. ऐसे धार्मिक और पवित्र कार्यमें सुधारकको सभी तरहके परिणामोंको झेलना पड़ता है, कुछ समयतक सुविधा-प्राप्त वर्गोंकी सहानुभूतिसे वंचित रहनेका खतरा भी उठाना पड़ता है। इसलिए जो लोग यह मानते हों कि अस्पृश्यता एक ऐसा अभिशाप है जिसे किसी भी कीमतपर मिटाना है, वे अपने साथ बहुत ही कम लोगोंके रह जानेके भयसे अपने प्रयत्नमें शिथिलता नहीं लायेंगे।

३. यदि मन्दिरोंके वर्त्तमान पुजारी हड़ताल कर दें और आवश्यक कर्मकाण्ड करनेसे इनकार करें तो उनके स्थानपर तुरन्त नये पुजारी रख लेने चाहिए। और जिस जाति-विशेषने वे पुजारी दिये थे वह यदि दूसरे पुजारी देनेसे इनकार करे तो किसी अन्य जातिका पुजारी ढूंढनेमें भी मैं हर्ज नहीं मानता। ध्यान सिर्फ इस बातका रखना चाहिए कि नये पुजारियोंमें आवश्यक योग्यताएँ और निष्ठा हो। मगर जहाँतक मैं जानता हूँ, तथ्य यह है कि अधिकांश पुजारी अपनी जीविकाके लिए इस सेवापर इतने अधिक निर्भर हैं कि वे बहुत दिनोंतक हड़ताल जारी नहीं रख सकते। इस दलीलका मेरी रायपर कोई असर नहीं पड़ता कि पूजा करनेका अधिकार वंशानुगत है, क्योंकि यदि इस अधिकारका भोक्ता, चाहे जिस कारणसे हो, स्वयं ही अपना अधिकार छोड़ दे तो इसके लिए दोषी तो खुद वही है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजी ने कामके बहुत अधिक दबाव और किसी भी घड़ी गिरफ्तार कर लिये जानेकी आशंकाके बीच यह लेख बोलकर लिखाया था और गिरफ्तारीसे ठीक पहले ४ जनवरीको इसे प्रकाशनार्थ दे दिया।

४. यदि मन्दिरके अधिकारी यह कहे कि हम अस्पृश्योके लिए एक कोना अलग किये देते हैं तो इसे पर्याप्त नही मानना चाहिए। अस्पृश्योपर लगाया ऐसा कोई प्रतिबन्ध बरदाश्त नही किया जा सकता जो अन्य अब्राह्मण हिन्दुओपर लागू नही किया जा सकता। अलबत्ता, उन लोगोके लिए एक कोना अलग किया जा सकता है जो अस्पृश्योसे घुलना-मिलना न चाहते हो। उस हालतमे ये लोग अपनी ही इच्छासे अस्पृश्य बन जायेगे।

५. घेरोको हमे जबरदस्ती तोडना नही चाहिए। वह एक तरहकी हिंसा ही होगी। यहाँ यह कहनेसे बात नही बनती कि घेरे तो निष्प्राण है। घेरे भले ही निष्प्राण हो लेकिन उनको खडा करनेवाले हाथ तो प्राणयुक्त थे।

६. उपर्युक्त बातोसे यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि मन्दिर-प्रवेश सत्याग्रह करनेके लिए सत्याग्रहीका मन्दिरोमे विश्वास होना आवश्यक है। मन्दिर-प्रवेश एक धार्मिक अधिकार है। इसलिए जिसका मन्दिरोमे विश्वास न हो, उसके प्रवेशको सत्याग्रह नही कहा जा सकता। वाइकोम सत्याग्रहके समय जब श्री जॉर्ज जोजेफ जेल गये तो मैने उन्हे लिखा था कि आपने गलत काम किया है।[1] उन्होने मेरी बात मान ली, तुरन्त क्षमा-याचना की और वे जेलसे बाहर आ गये। मन्दिर-प्रवेश सत्याग्रह स्पृश्य हिन्दू द्वारा किया जानेवाला प्रायश्चित्त है। उसने पाप किया है और इसलिए उसे अपने साथ इन सहधर्मी अस्पृश्योको मन्दिरमे ले जानेका प्रयत्न करनेके लिए विरोधियोको स्वयंको दण्डित करनेको आमन्त्रित करके प्रायश्चित्त करना है। इसलिए गैरहिन्दू लोग तो सत्याग्रहको छोडकर किसी और तरीकेसे सहायता ही कर सकते है। उदाहरणके लिए, गुरुद्वारा आन्दोलनके समय जहाँ अन्य जातियोने और तरह सिखोकी मदद की, वहाँ सत्याग्रह केवल अखण्ड पाठमे[2] विश्वास रखनेवाले सिख ही कर सकते थे और केवल उन्होने ही किया भी।

मेरे विचारसे सत्याग्रह केवल अस्पृश्योको ही नही करना चाहिए। इसका नेतृत्व स्पृश्य सुधारकोको करना चाहिए। कार्य-साधक नीतिका तकाजा यही है। एक समय ऐसा आ सकता है जब अस्पृश्य स्वय ही सत्याग्रह करें। इस विचारके पीछे यह भावना काम कर रही है कि पहले स्पृश्य हिन्दुओके बीच लोकमत काफी सजग और सक्रिय हो जाना चाहिए और तभी सबको सत्याग्रह करना चाहिए। यह ऐसा शस्त्र है जिसकी सफलता लोकमत तैयार करनेपर निर्भर है। इसलिए, इसके उपयोगसे पहले हमेशा सभी जाने-माने प्रचलित तरीकोको आजमाकर देख लिया जाता है।

७. जो जमीन वास्तवमे निजी हो, उसपर बनाये गये मन्दिरोमे प्रवेशाधिकारकी माँग नही की जा सकती। किन्तु, जब कोई व्यक्ति किसी निजी जमीनपर बनाये मन्दिरके सार्वजनिक प्रयोगकी छूट दे दे, लेकिन अस्पृश्योके प्रवेशपर रोक लगा दे तो वह मन्दिर निजी मन्दिर नही रह जाता।

१. देखिए खण्ड २३, पृष्ठ ४१६-१७।
२. देखिए खण्ड २३, पृष्ठ २३३ और २४६-४८।

८. ऐसा सुझाया गया है कि सत्याग्रह द्वारा मन्दिर-प्रवेशके प्रयत्नको अभी बिलकुल छोड दिया जाये और इस कामको कानून बनाकर किया जाये। मैं इस विचारसे सर्वथा असहमत हूँ। कोई कानून बनाये जानेसे पहले आम तौरपर उसके लिए जनमत तैयार किया जाता है और लोकतन्त्रमे तो निश्चय ही यही होता है। मेरे जानते ठीकसे किये गये सच्चे सत्याग्रहके द्वारा जितनी जल्दी लोकमत तैयार किया जा सकता है, उतनी जल्दी और किसी उपायसे नही किया जा सकता। और किसी स्थान-विशेषमे सत्याग्रह करनेका उपयुक्त अवसर कौन-सा है, इसका निर्णय तो स्थानीय कांग्रेस कमेटीको ही करना चाहिए।

९. जो लोग यह कहते हैं कि अस्पृश्यतासे सम्बन्धित प्रश्नोपर गैरहिन्दू लोग भी मत दे सकते ह, उनसे मैं १९२० मे कांग्रेसके नागपुर सविधानके स्वीकृत होनेके बाद पास किया गया प्रथम प्रस्ताव देखनेको कहूँगा। उसमे साफ-साफ कहा गया है कि अस्पृश्यता-निवारणकी समस्या ऐसी है जिसके समाधानका भार विशेष रूपसे और केवल हिन्दुओंके सिर ही होना चाहिए। इसलिए एक ऐसी परिपाटी बन गई है कि गैरहिन्दुओंको मत देकर अथवा अन्य प्रकारसे इस धार्मिक समस्यामे हस्तक्षेप नही करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-१-१९३२

३०४. तार: वाइसरायके निजी सचिवको

बम्बई

३ जनवरी, १९३२

आपके इसी तारीखके तारके[1] लिए धन्यवाद। परमश्रेष्ठ और परमश्रेष्ठकी सरकारके निर्णयपर मैं गहरा खेद प्रकट किये बिना नही रह सकता। ईमानदारीसे अपना मत व्यक्त करनेको धमकी कहना निश्चय ही गलत है। क्या मैं सरकारको यह याद दिलाऊँ कि दिल्ली-वार्त्ता सविनय अवज्ञा के जारी रहते ही शुरू हुई थी और चलती रही थी और जब समझौता हुआ तो सविनय अवज्ञा बन्द नही की गई थी, बल्कि केवल स्थगित कर दी गई थी। लन्दनके लिए मेरे रवाना होनेसे पहले गत सितम्बरमे शिमलामे इस स्थितिपर फिरसे जोर दिया गया था और परमश्रेष्ठ और परमश्रेष्ठकी सरकारने उसे स्वीकार कर लिया था। मैंने यद्यपि यह चीज साफ कर दी थी कि कुछ हालातमे कांग्रेसको सविनय अवज्ञा फिर शुरू करनी पड़ सकती है, फिर भी सरकारने वार्त्ता भग नही की थी। सरकारकी ओरसे यह तो जरूर स्पष्ट कर दिया गया था कि सविनय

१. जाहिर है कि गांधीजी ने यह तार २ जनवरीको लिखना शुरू किया था।

अवज्ञा करनेवालोको कानूनकी अवज्ञाकी सजा दी जा सकती है पर इससे केवल यही सिद्ध होता है कि सत्याग्रहियोको सत्याग्रह करते समय उसके परिणामोका पता होना चाहिए, किन्तु मेरी दलीलपर इससे कोई असर नही पडता। सरकारको यदि यह रवैया बुरा लगा था तो उसके आगे यह रास्ता खुला था कि वह मुझे लन्दन न भेजती। इसके विपरीत, परमश्रेष्ठने मेरी बिदाईपर अपनी शुभकामना प्रकट की थी। यह कहना भी उचित या सही नही है कि मैंने कभी यह दावा किया है कि सरकारकी नीति मेरे निर्णयपर निर्भर रहनी चाहिए। परन्तु मै यह अवश्य निवेदन करता हूँ कि कोई भी लोकप्रिय और वैधानिक सरकार सार्वजनिक सस्थाओ और उनके प्रतिनिधियोके सुझावोका सदा स्वागत करेगी और उनपर सहानुभूतिसे विचार करेगी। और अपने उन अधिनियमो या अध्यादेशोके बारेमे, जिनका जनमत विरोध करता है, उन्हे सभी उपलब्ध सूचनाएँ प्रदान करेगी। मेरा कहना यह है कि मेरे सन्देशोका, जो-कुछ पिछले अनुच्छेदमे कहा गया है, उसके सिवा और कोई अर्थ नही है। समय ही यह बतायेगा कि किसकी स्थिति न्यायोचित थी। इस बीच मै सरकारको यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि काग्रेसकी ओरसे सघर्षको द्वेषरहित और बिलकुल अहिंसात्मक ढगसे चलानेकी पूरी-पूरी कोशिश की जायेगी। मुझे यह याद दिलानेकी कतई आवश्यकता नही थी कि हमारे कार्योके सभी परिणामोके लिए काग्रेस और उसका यह विनम्र प्रतिनिधि मै ही उत्तरदायी होगे।

[अग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२ तथा यंग इंडिया, ७-१-१९३२ भी।

३०५. तार: हॉरेबिनको

[३ जनवरी, १९३२]

मुझे भेजे गये आपके तारके लिए हृदयसे आभारी हूँ। पूरा तार टॉम विलियम्सके पतेपर भेज दिया है। सरकारसे आधी रातको सन्देश मिला है। भेटके लिए प्रार्थना और सब तरहकी वार्त्ता इस आधारपर अन्तिम रूपसे अस्वीकार कर दी गई है कि काग्रेस ने समाधान प्राप्त न कर सकनेकी दशामे सविनय अवज्ञाकी धमकी देनेकी हिम्मत की है। वाइसरायके उत्तरमें मुझपर यह आरोप भी लगाया गया है कि मै अवैध कार्रवाईका डर दिखाते हुए शर्ते थोपना चाहता हूँ। चारो ओरके वातावरणमे मुझे आज सम्मानजनक और सहयोगकी समानतापर आधारित इच्छाका कोई चिह्न दिखाई नही देता। वाइसराय यह भूल गये है कि दिल्लीके

सघर्ष-विराममे नागरिकोका सविनय अवज्ञा करनेका अधिकार मूक रूपसे स्वीकार कर लिया गया था, क्योकि वार्त्ता जब चल रही थी तब सविनय अवज्ञा जारी थी, और वह सघर्ष-विरामके दौरान ही रोकी गई थी। फिर, शिमलामे वर्त्तमान वाइसरायने मेरे इस वक्तव्यको चुनौती नही दी थी कि यदि समाधान प्राप्त करनेके अन्य तरीके असफल रहे तो काग्रेसका सविनय अवज्ञा करनेका अधिकार कायम रहेगा। वेशक इसके साथ कानून की अवज्ञाके लिए सजा की शर्त लगी थी, पर वह तो सत्याग्रहकी पद्धतिमे अन्तर्निहित ही है। किन्तु वाइसरायने उपर्युक्त परिस्थिति उत्पन्न होनेपर हमारे सविनय अवज्ञा करनेकी वात सोचनेके कारण न केवल वार्त्ता भग नही की थी, वल्कि उसे पूरा किया था और मुझे अपनी शुभकामनाओके साथ लन्दन भेजा था। इसलिए मौजूदा रवैया परिषद्से तुरन्त पहलेके रवैयेसे स्पष्ट रूपसे भिन्न है। सचाई यह है कि सरकार काग्रेसकी वढती हुई शक्तिको और उसके फलस्वरूप जनतामे आत्मवलके उदयको सहन नही कर पा रही है। विरोधी जनमत और अपनी वातपर आग्रह करनेकी उसकी वढती हुई क्षमताके प्रति सरकारकी असहिष्णुता पूर्ववत जारी है। मुझे विश्वास हो गया है कि इस तरहके वातावरणमे स्वाधीनताकी ओर ले जानेवाले स्वतन्त्र सविधानका विकास विलकुल असम्भव है। काग्रेस सगठनका दमन और नेताओकी गिरफ्तारी निकट प्रतीत होती है। फिर भी जहाँतक मै अन्दाजा लगा सकता हूँ, विशाल जन-समाज हिम्मत नही हारेगा, सत्ताका दृढतासे प्रतिरोध करेगा, और सरकारके भडकावेके वावजूद कडाईसे अहिंसाका पालन करेगा। मुझे आशा है कि यदि सरकारने तथ्योका सीधा-सादा विवरण भेजनेपर प्रतिवन्ध नही लगाया तो मै, जवरदस्त अडचनके वावजूद, आपको तार द्वारा नियमित 'वुलेटिन' भेजता रहूँगा। श्री एलेक्जैंडर और अन्य मित्रोको कृपया समाचारोसे वरावर सूचित करते रहें।

गांधी

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-१-१९३२

३०६. तार: लॉर्ड इर्विनको

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

आप सच मानिए, मैंने भरसक कोशिश की, लेकिन असफल रहा। फिर भी मैं निराश नही हूँ, और अगर ईश्वरने चाहा तो मैं उस भावनाको कायम रखूँगा जिस भावनासे, आपके विचारमे, मैं दिल्लीमे उस पवित्र सप्ताहके दौरान प्रेरित था। मैं आपके प्रमाणपत्रको झूठा नही साबित होने दूँगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-१-१९३२

३०७. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

३ जनवरी, १९३२

परमश्रेष्ठ वाइसराय और सरकारकी ओरसे यह तार प्राप्त करके मुझे हार्दिक दु:ख हुआ है। जिस भेटके लिए हम इतने लालायित थे उसका दरवाजा मेरे लिए लगभग बन्द कर दिया गया है, क्योकि तारमे भेटके लिए ऐसी शर्तें रखी गई है जिन्हे स्वीकार करके कोई भी स्वाभिमानी व्यक्ति उस बन्द दरवाजेको फिरसे खोलनेकी कोशिश नही कर सकता। मैं यह कहे बिना नही रह सकता कि इस तरह तो पहली गलतीको साहसके साथ स्वीकार करनेकी बजाय, गलतीपर गलती की गई है। इस तारमे एक ऐसी दलील पेश करते हुए जो मुलाकातके मेरे बार-बारके अनुरोधसे किसी तरह मेल नही खाती, मुझे सूचित किया गया है कि सविनय अवज्ञा फिर शुरू करनेकी धमकीके रहते वाइसराय महोदय मुझसे नही मिल सकते। इस प्रकार इस तारके द्वारा जान-बूझकर और अन्तिम रूपसे दरवाजा बन्द करके एक और गलती की गई है। वाइसराय और उनकी सरकारने सविनय अवज्ञा फिर शुरू करनेकी तथाकथित धमकीको मुझसे न मिलनेका बहाना बनाकर दिल्ली समझौतेका खुल्लमखुल्ला उल्लघन किया है।

निश्चय ही उन्हें यह मालूम है कि जिस वार्त्ताके फलस्वरूप समझौता हुआ वह सविनय अवज्ञाके चालू रहते ही हुई थी और समझौतेके अधीन सविनय अवज्ञा अन्तिम रूपसे बन्द कदापि नही की गई थी, बल्कि केवल स्थगित कर दी गई थी,

१. यह सन्देश एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको रातको लगभग दो बजे टेलिफोनपर लिखाया गया था।

जिसका उद्देश्य यह था कि गोलमेज परिषद्में काग्रेसका प्रतिनिधित्व हो सके, और यह चीज साफ थी कि यदि गोलमेज परिषद् राष्ट्रीय माँगको पूरा नही कर पाई तो वह फिर शुरू की जा सकती है। इसके साथ मै दूसरे समझौतेको भी जोड़ना चाहता हूँ जो मेरे लन्दन रवाना होनेसे ठीक पहले शिमलामें हुआ था।[1] मेरे और सरकारके वीच जो पत्र-व्यवहार चला है उसकी जाँचसे यह देखा जा सकता है कि सघर्ष-विरामके वावजूद मैने, रक्षात्मक कार्रवाईके रूपमें, अपना यह अधिकार सुरक्षित रखा था कि यदि नरम तरीकोंसे शिकायतोंका समाधान नही हुआ तो उनके लिए मै सविनय अवज्ञा कर सकूँगा। यदि सविनय अवज्ञा ऐसा ही घृणित अपराध है तो निश्चय ही सरकार उस आधारपर पत्र-व्यवहार कदापि नही कर सकती थी और वाइसरायकी शुभकामनाओंके साथ मुझे लन्दन नही भेज सकती थी। परन्तु मै देख रहा हूँ कि समयके साथ व्यवहार भी वदल गया है।

राष्ट्रको अव सरकारकी चुनौतीका अवश्य जवाव देना चाहिए। परन्तु यह आशा की जाती है कि सभी वर्गो और धर्मोके लोग जहाँ साहसके साथ और पूरी विनम्रतासे अग्नि-परीक्षामे गुजरेगे और किसी भी कीमत और कष्टको अत्यधिक नही समझेंगे, वहाँ वे वडीसे-वडी उत्तेजना होने पर भी मन, वचन और कर्मसे खूब कडाईके साथ अहिंसाका पालन करेगे। मै उनसे यह भी अनुरोध करूँगा कि वे प्रशासकोंसे नाराज न हों। पीढी-दर-पीढी चली आती आदतको छोडना उनके लिए आसान नही है। हमारी लडाई मनुष्योंसे नही है, वल्कि उनकी कार्रवाइयोंसे है।

हमे अपनेपर और इसलिए मानव-स्वभावपर विश्वास है और हम यह महसूस करते है कि यदि हम काफी समयतक और सही भावनासे कष्ट सहे तो हमारे कष्टोंके परिणामस्वरूप प्रशासकोंमे अवश्य परिवर्त्तन आयेगा। हर हालतमे हमें यह समझ लेना चाहिए कि कष्ट जितने वडे होंगे और जितनी ज्यादा देर रहेंगे, हम उस स्वराज्यके उतने ही योग्य वनेंगे जिसके लिए हम यह अग्नि-परीक्षा देने जा रहे है। मै राष्ट्रको अपने उस वचनकी याद दिलाना चाहता हूँ जो मैंने गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनके अन्तमे प्रधान मन्त्रीको दिया था कि यदि हमे सघर्ष फिर शुरू करना पडा तो उसमे द्वेषकी भावना नही होगी और हम कोई भी अनुचित कार्य नही करेंगे। मुझे विश्वास है कि हर भारतीय इस वचनको पूरा करेगा।

अग्रेजोंसे मै यह कहना चाहूँगा कि वे उन झूठी रिपोर्टोंसे सावधान रहे जो भारतमे काग्रेसकी कार्रवाइयोंके सिलसिलेमे सुवह-शाम प्राय. उनके आगे रखी जाती है। झूठी सूचना मिलना या सही सूचनाके दमनके कारण विलकुल सूचना न मिलना हृदयसे-हृदयके सहयोगमें एक वहुत वडी वाधा है।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-१-१९३२

१. देखिए खण्ड ४७।

३०८. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको[1]

लैवर्नम रोड
बम्बई
३ जनवरी, १९३२

प्रिय गुरुदेव,

इस समय मै अपना थका हुआ शरीर लेकर गद्देपर लेटा ही हूँ और एक-आध झपकी ले लेनेकी कोशिश करते हुए आपके बारेमे सोच रहा हूँ। मै चाहता हूँ कि जो यज्ञाग्नि सुलगाई जा रही है, उसमे आप जो सर्वोत्तम समिधा डाल सकते है, वह डाले।

सस्नेह,

मो० क० गांधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३२)से।

३०९. भाषण : प्रार्थना-सभामें[2]

[बम्बई]
३ जनवरी, १९६२

कुछ दिनोसे आप इन प्रार्थनाओमे मेरे साथ रहें है, और अब जब कि सघर्ष फिरसे शुरू किया जा रहा है और मुझे किसी भी क्षण गिरफ्तार किया जा सकता है, मैं आशा करता हूँ कि आप लोग प्रार्थनाका कार्यक्रम सुबह-शाम नियमित रूपसे जारी रखेंगे। आप इसे अपने लिए प्रतिदिनका एक आवश्यक कर्त्तव्य बना ले। आत्मशुद्धिके यज्ञमे प्रार्थनाकी भूमिका बहुत बडी है और आप देखेंगे कि यह आपके लिए कामधेनु का काम करेगी और आपका रास्ता साफ करती रहेगी। आप अपनेको इसमे जितना अधिक लगायेंगे, आप अपने दैनिक जीवनमे निर्भयताका उतना ही अधिक अनुभव करेंगे, क्योंकि निर्भयता आत्मशुद्धिका लक्षण और प्रतीक है। मै तो किसी भी ऐसे आदमीको नही जानता जो आत्मशुद्धिकी राहपर चलते हुए भी भयकी भावनासे ग्रस्त रहा हो। आदमीके मनमे आमतौर पर दो तरहके भय होते है — मृत्युका और भौतिक सम्पत्ति गँवानेका। प्रार्थनारत तथा आत्मशुद्धिकी राहपर चलनेवाला आदमी मृत्युका भय

१. यह पत्र गांधीजी ने ३ जनवरीको ४ बजे दिनमें महादेव देसाईको बोलकर लिखाया था। इसके साथ महादेव देसाईने सूचनार्थ जो पत्र भेजा था, उसके अनुसार गांधीजी ने दूसरे दिन "अपनी गिरफ्तारीके कुछ ही क्षण बाद" इसपर अपने हस्ताक्षर किये थे।

२. शामके चार बजे आयोजित।

त्याग देगा और एक वरदानकी तरह उसका वरण करेगा और सारी पार्थिव सम्पत्तिको नश्वर मानते हुए वह उसे सर्वथा महत्त्वहीन समझेगा। उसे यही लगेगा कि जब देश दु.खदारिद्र्यसे ग्रस्त है और जब करोड़ो लोगोंको एक बार भोजन भी नही मिलता तब उसे सम्पत्तिशाली रहनेका भला क्या अधिकार है? जिसने ये दो भय छोड़ दिये हो, उसे दुनियाकी कोई भी ताकत पराजित नही कर सकती। लेकिन इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रार्थना प्रदर्शनकी नही, बल्कि हृदयकी वस्तु हो। इसे हमें दिन-प्रतिदिन ईश्वरके अधिकाधिक निकट ले जाना चाहिए, और प्रार्थनारत आदमीकी यह हार्दिक इच्छा पूरी न हो, ऐसा हो ही नही सकता। सीधा-सादा कारण यह है कि उसके मनमें कोई अनुचित इच्छा जागेगी ही नही। इसलिए आप इस नियमको जारी रखें। इस तरह न केवल आप अपने इस नगरको द्युतिपूर्ण बनायेंगे, बल्कि हमारा देश भी उस प्रकाशसे चमक उठेगा। मुझे आशा है कि मेरी इस छोटी-सी विनतीको आपके हृदयोमे स्थान मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-१-१९३२

३१०. भेंट : 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

राष्ट्रसे मै अपनी गिरफ्तारीके बाद यही करनेको कहूँगा कि वह अपनी नीदसे जागे, और

१. सभी विदेशी वस्त्रोंका तुरन्त त्याग करे और खद्दर अपनाये,

२ सभी मादक औषधियो, द्रव्यो और पेयोका त्याग करे;

३. हिंसाका नामो-निशान तक मिटा दे और अधिकारियोकी कार्रवाई चाहे कितनी भी उत्तेजक क्यो न हो, प्रत्येक अंग्रेज स्त्री-पुरुष और बच्चेकी, चाहे वह अधिकारी हो या सामान्यजन, पूरी तरह रक्षा करे;

४. प्रत्येक व्यक्ति सरकारको यथासम्भव अपना हर तरहका सहयोग देना बन्द कर दे; और

५. कार्य-समितिके प्रस्तावका अध्ययन करे और उसके शब्दो और उसकी भावनाको कार्यान्वित करे। और उस प्रक्रियाके दौरान उसपर जो भी मुसीबतें आये, सब सहे — जान और मालका नुकसान तक।

पूरे भारतके लिए एक नियम निर्धारित करना कठिन है। पर मुझे ऐसा लगता है कि क्योंकि कांग्रेसने अहिंसा द्वारा आत्मशुद्धिकी पद्धति अपनाई है, इसलिए मैं चाहूँगा कि यह आन्दोलन हड़तालसे शुरू किया जाये, अर्थात्, मुनाफेके सब काम स्वेच्छासे रोक दिये जाये और एक प्रार्थनामय उपवास किया जाये और उसके

बाद एक-साथ हर इलाकेमे उस ढगसे सत्याग्रह शुरू कर दिया जाये जो कि वहाँ सम्भव हो, जैसे कि

(क) बिना लाइसेस नमक बनाना,

(ख) शराब और विदेशी कपडेकी दुकानोपर धरना देना,

(ग) धारा १४४के अधीन जारी किये गये तथा ऐसे ही अन्य आदेशोको भग करना, बशर्ते कि ऐसे आदेश शान्ति भग होनेके किसी खतरेके बिना और किसी कानूनी आवश्यकताके कारण नही, बल्कि जनताके उत्साहको भग करने या काग्रेसको दबानेके लिए — जो जनताका उत्साह भग करनेका ही एक तरीका है — जारी किये गये हो।

बम्बईको कार्यक्रमकी किन खास मदोंको अंजाम देना है, यह बात श्री के० एफ० नरीमान और उनकी परिषद् पर छोड़ देनी चाहिए।

यह पूछनेपर कि यदि कांग्रेसकी सूचीमें दर्ज सभी कार्यकर्त्ता, जैसा कि सरकारने सोच रखा है, कार्यक्षेत्रसे हटा दिये गये, तो क्या कांग्रेसके आदेशोंको पूरा करनेका काम कठिन सिद्ध नहीं होगा, गांधीजी ने कहा :

कार्य-समितिका प्रस्ताव इसी कठिनाईको दूर करनेके लिए तैयार किया गया था। परिस्थिति इतनी अचानक बदलेगी कि जितनी सुनिश्चित बातें उस प्रस्तावमे कही गई है उससे अधिक सुनिश्चित बाते कहना सम्भव नही है। कमोबेश जोरदार ढगके सत्याग्रहके १२ वर्षके अनुभवके बाद अब सम्बन्धित लोगोसे यह अपेक्षाकी जाती है कि परिस्थितियाँ बदलनेपर क्या कुछ आवश्यक होगा, इसका अन्दाजा वे खुद ही लगा ले। पिछले सालका अनुभव यह बताता है कि प्राय. सभी नेताओकी गिरफ्तारीके बावजूद, राष्ट्रने आपत्कालीन स्थिति पैदा होनेपर गजबकी सूझबूझ दिखाई थी और सविनय अवज्ञाकी भावनाको ऊँचा रखा था।

उनका ध्यान जब इस सम्भावनाकी ओर खींचा गया कि भारतीयोंके कुछ वर्ग कांग्रेसका विरोध कर सकते है, तो महात्माजी ने कहा कि भीतरी विरोध होनेपर कुछ बाधा तो स्वाभाविक रूपसे पड़ेगी ही, परन्तु वे बोले :

प्रशासको या हमारे अपने लोगो किसीके भी प्रति, चाहे वे हमारे आन्दोलनका विरोध कर रहे हो या उसकी ओरसे उदासीन हो, द्वेष न रखते हुए जो कष्ट-सहन किया जायेगा उसकी आँचमे ये सभी बाधाएँ अपने-आप पिघल जायेगी।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-१-१९३२

३११. सन्देश : भारतीय ईसाइयोंको[1]

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

प्यारे ईसाई मित्रो तथा देशभाइयो,

मुझे पूरा विश्वास है कि देश जो संघर्ष छिड़ने जा रहा है, तत्त्वतः शान्तिपर आधारित उस संघर्षमें भारतीय ईसाई, जो अपनेको उस महापुरुषका अनुयायी मानते हैं जिसे वे शान्तिका सम्राट् कहते हैं, भारतकी किसी भी जातिसे पीछे नहीं रहेंगे। मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि इस राष्ट्रीय कार्यमें हाथ बँटाना किसी भी अल्पसंख्यक समुदायके लिए मात्र कागजी सुरक्षा-व्यवस्थाकी अपेक्षा लाख दर्जे अधिक सुरक्षा-व्यवस्था प्रदान करनेवाला कारगर होगा।

मैं खद्दर तथा मद्य-निषेधपर जोर देना चाहूँगा। देशका दौरा करते हुए जब मैं हजारों गरीब ईसाई देशभाइयोंसे मिला, तब मैंने अन्य लोगोंकी ही तरह उनके लिए भी खद्दरकी आवश्यकता महसूस की है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि हर ईसाईका घर चरखेसे सुशोभित होगा और हर ईसाईके शरीरकी शोभा हमारे देशके गरीब भाइयों और बहनों द्वारा तैयार किया गया खद्दर बढ़ायेगा।

फिर, मद्यपानका अभिशाप भी है। मैं कभी भी यह बात समझ नहीं पाया हूँ कि कोई ईसाई मद्यपान कैसे कर सकता है। जब शैतान ईसा मसीहको फुसलाने गया था तब क्या उन्होंने यह नहीं कहा था: "ऐ शैतान, तू मेरे सामनेसे चला जा।" क्या मदिरा शैतानका ही अवतार नहीं है? कोई ईसाई शैतान और ईसा मसीह दोनोंका भक्त कैसे हो सकता है?

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-१-१९३२

३१२. सन्देश : अमेरिकाको[2]

बम्बई
३ जनवरी, १९३२

अब जब कि वह संघर्ष शुरू होने जा रहा है जिसके बहुत ही भयंकर होनेकी सम्भावना दिखाई देती है, मैं अमेरिकावासी अपने बहुत सारे मित्रोंसे यह अपेक्षा करूँगा कि वे इसके दौरको ध्यानसे देखें और उस महान् राष्ट्रके प्रभावका उपयोग अत्याचार-पीड़ित मानवताके लिए करें। यह भारतीय संघर्ष केवल राष्ट्रीय संघर्ष ही

१. यह सन्देश नेशनलिस्ट क्रिश्चियन पार्टी (राष्ट्रवादी ईसाई पार्टी) के मन्त्रीकी मार्फत दिया गया था।
२. यह सन्देश मिल्स नामक एक अमेरिकी संवाददाताकी मार्फत दिया गया था।

नहीं है। इसका एक अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य और महत्त्व है। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि हमारे देशके भाई और बहन सभी अहिंसाकी भावना कायम रखेंगे तो इसका मतलब यह होगा कि उन्होंने धरतीपर एक नये युगका सूत्रपात कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-१-१९३२

३१३. दैनन्दिनी, १९३२

बम्बई, १ जनवरी, शुक्रवार

चरखेपर १६०, तार। दिन कार्य-समितिमें बिताया। रातमें कपड़े और सोने-चाँदीके व्यापारी मिलने आये, भूलाभाई तथा कुछ अन्य लोग भी।

बम्बई, २ जनवरी, शनिवार

चरखेपर १८९ तार। मोदी, वेलफेयर लीग[1] [के सदस्यों], सर नेस वाडिया को मुलाकात दी। वेणीलालसे मिलने गया। मेहरबाबा मिलने आये। वाइसरायका उत्तर आया।

बम्बई, ३ जनवरी, रविवार

चरखेपर १८० तार। सर फीरोज सेठना, कावसजी जहाँगीर आदि मिलने आये। चैम्बरके सदस्य मिले। उनसे बातचीतकी। उनके कहनेपर अहमदाबाद जाना रद कर दिया।[2]

मूल गुजराती (एस०एन० १९३३७)से।

१. देखिए पृष्ठ ५२६-२८।

२. यह दैनन्दिनी (१ जनवरी, १९३३ तककी) आगेके खण्डोंमें चालू है। जिस कालकी सामग्री जिस खण्डमें दी गई है, उस कालसे सम्बन्धित दैनन्दिनी उस खण्डके अन्तमें दी गई है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

कपास-उद्योगके प्रतिनिधियोंसे गांधीजी की मुलाकातका विवरण[1]

एजवर्थ
२७ सितम्बर, १९३१

टी० डी० बार्लो . बातचीतमे दोनो ओरसे साफगोई वरती गई और दोनोका स्वर मैत्रीपूर्ण था। श्री गाधीका मुख्य तर्क यह था कि भारतके ९० प्रतिशत लोग कृपिपर निर्भर है और साल्में छ महीने उनके पास कोई काम नही होता। इसलिए खद्दर आन्दोलनका जवरदस्त सामाजिक महत्त्व है। श्री गाधीने लोगोके लिए घरमे ही अपने हाथसे सूत कातनेका काम इसलिए चुना है कि इसमें कोई भारी पूंजीगत खर्च नही पडता और यह काम सब जगह किया जा सकता है।

श्री गाधी कृपक-जीवनकी अवस्था सुधारनेके लिए प्रयत्नशील है और मेरा खयाल है कि इस उद्देश्यको पूरा करनेके लिए अगर उनके सामने कोई और विकल्प रखा जाये तो वे उसे स्वीकार कर लेगे, लेकिन अभी तक उन्हे इसका स्थान ले सकनेवाला या इससे होड करनेवाला कोई और धन्धा नही मिल पाया है। इसलिए गृह-कताई-आन्दोलनको छोडना उनके लिए असम्भव है।

श्री गाधीने इस बातका खण्डन किया कि यह आन्दोलन खास तौरपर ब्रिटेनके कपडेके खिलाफ है। उन्होने कहा कि जब ५ मार्चको मैंने और लॉर्ड इर्विनने समझौते पर हस्ताक्षर किये तब दोनो पक्षोको इस बातमे कोई सन्देह नही था कि आर्थिक बहिष्कार जारी रहेगा। उनका यह भी खयाल था कि यहाँके मालकी माँगमे कमी आनेका उतना बडा कारण बहिष्कार नही है जितना कि विश्वकी आर्थिक स्थिति, लेकिन सबसे बडा कारण तो व्यापारकी जिन्सोके दामोमें आई गिरावट है। उन्होने यह भी कहा कि यदि ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच वह व्यवस्था हो जाये जिसे वे उचित और आवश्यक मानते है तो उन्हे पूरा विश्वास है कि ऐसा प्रबन्ध किया जा सकता है जिसके अधीन भारत इग्लैंडके काफी कपडेका आयात कर सकता है। लेकिन वे ऐसी कोई आशा दिलानेको तैयार नही थे कि लकाशायरका व्यापार अपना पिछला वैभव फिर प्राप्त कर सकता है।

श्री गाधीने कहा कि कताई-आन्दोलनमे १००,००० कत्तिनें और १०,००० बुनकर सक्रिय है और गाँवोमे आर्थिक तरक्कीके स्पष्ट सकेत देखनेको मिल रहे है। उन्होने

१. देखिए "बातचीत: कपड़ा-उद्योगके प्रतिनिधियोंसे", २६-९-१९३१।

कहा कि जो मिले अंग्रेजोंकी मिल्कियतमें हैं वे कुल मिलाकर देशी मिलोंसे अधिक अच्छी स्थितिमें हैं। लेकिन देशी मिलोंमें से कुछकी हालत तो दुनियाकी किसी भी मिलकी तरह अच्छी है या उससे बेहतर ही है। लंकाशायरके श्रमिकोंको जिस तरहकी रिहाइशी और दूसरी सुख-सुविधाएँ प्राप्त हैं, उसपर उन्होंने आश्चर्य प्रकट किया। मुझे उम्मीद है कि इस बातचीतमें साफगोई और सौहार्दका जैसा आलम था वह औपचारिक बातचीतके लिए अनुकूल वातावरण तैयार करेगा। यदि गोलमेज परिषद्में कोई सन्तोषजनक व्यवस्था हो जाती है तो लंकाशायरके कष्टोंको अधिकसे-अधिक दूर करनेका कोई उपाय कर सकना बहुत ज्यादा आसान हो जाना चाहिए।

जॉन ग्रे: श्री गांधीने हमें किंचित् विस्तारसे अपनी आर्थिक नीति समझाई। उस नीतिका लक्ष्य भारतमें ग्राम-जीवनका पुनरुद्धार करना है। उन्होंने भारतके ग्राम-वासियोंकी छः महीनेकी बेकारीका कोई ऐसा विकल्प ढूँढनेकी आकुल आवश्यकता पर जोर दिया जो उनकी आयमें भी कुछ वृद्धि कर सके। वे खद्दरको एक उद्योगकी तरह कोई विशेष महत्त्व नहीं देते। उसे महत्त्व मुख्यतः इस दृष्टिसे देते हैं कि उससे लोगोंको रोजगारका अवसर मिलेगा और वे अपनी आयमें कुछ वृद्धि कर सकेंगे। लेकिन वे यह महसूस करते हैं कि अभी बहुत दिनोंतक भारत आत्म-निर्भर नहीं होगा और उसे विदेशी कपड़ेकी जरूरत पड़ेगी। उन्होंने हमें भरोसा दिलाया कि वे भारतके लिए जैसी आजादी चाहते हैं, अगर वैसी आजादी उसे मिल गई तो वे भारत और ग्रेट ब्रिटेनके बीच दो मित्र-देशोंकी तरह सहयोगको बढ़ावा देनेके लिए कुछ भी उठा नहीं रखेंगे और हमें किसी-न-किसी प्रकारकी प्राथमिकता दिलानेके लिए काफी दूरतक जायेंगे।

मेरे मनमें एक बातका बहुत ज्यादा डर बना हुआ है और यह चीज मैंने श्री गांधीके सामने बड़ी नम्रताके साथ रखी। उन्होंने स्वातन्त्र्य-संघर्षमें अलग-अलग वर्गों, विभिन्न जातियों और विभिन्न धर्मोंके तरह-तरहके लोगोंको एकताके सूत्रमें बाँध दिया है। लेकिन जब वह उद्देश्य पूरा हो जायेगा तब क्या उन लोगोंपर श्री गांधी का उतना प्रभाव रह जायेगा जितना कि आज है? मेरा खयाल है, स्वतन्त्रताकी लालसाने उनके अनुगामियोंको आपसमें जोड़नेमें सीमेंटका काम किया है, लेकिन बादमें स्वतन्त्रता मिल जानेपर शायद यह भी पता चल सकता है कि वह सीमेंट ठीकसे जम नहीं पाई, उन्हें स्थायी रूपसे जोड़ नहीं पाई। मेरी समझमें तो श्री गांधी इस बातको ठीकसे समझ नहीं रहे हैं कि यन्त्रोंपर आधारित उद्योगोंके पीछे कैसी जबरदस्त शक्ति खड़ी है या व्यापारी-वर्ग किस एकाग्रतासे अपनी ही समृद्धिकी साधना में सन्नद्ध है। श्री गांधीका उत्तर यह था कि एक बार सार्वत्रिक मताधिकार दे दिये जानेपर गाँव इकाइयोंकी तरह मतदान करेंगे और इस प्रकार वे व्यापारी-वर्गका नियमन और नियन्त्रण कर सकेंगे। लेकिन, मेरा खयाल है, इस सवालसे वे परेशान जरूर हुए। इस मुलाकातके बाद जब वे शामके नाश्तेमें फल और सब्जियाँ वगैरह ले रहे थे, उस समय उनसे फिर मेरी बातचीत हुई और इस बार हमने गरीबीकी चर्चा की।

उन्होने 'पौरुषहीन नर-ककालो' से भरे गाँवोका उल्लेख किया और मैंने स्वीकार किया कि भारतकी गरीवी और लकाशायरकी गरीवीके बीच कोई वाहरी तुलना नही हो सकती। लेकिन मैंने कहा कि यह तो केवल परिमाणका ही अन्तर है। गरीवीके कष्ट और वोझकी दृष्टिसे देखें तो सम्भव है, यहाँकी गरीवी भी उतनी ही सच्ची हो जितनी सच्ची भारतकी गरीवी है। यह सव तो इस वातपर निर्भर है कि कोई किन सुख-सुविधाओका अभ्यस्त रह चुका है। मैंने उन्हे वताया कि यहाँ एक वार घूम-फिरकर वे जितना देख सकते है, गरीवी उससे वहुत अधिक गहरी है, और डारवेन, ब्लैक-वर्न तथा विशेष रूपसे ग्रेट हारवुडमें वेरोजगारीकी कालिमा वहुत घनीभूत हो गई है। लोगोका कष्ट वहुत वढ गया है और इस सवका सीधा कारण यह वताया जाता है कि भारतमे यहाँकी चीजोकी माँग नही रही।

श्री गाधीने तथ्य-आँकडे देकर यह सिद्ध करनेकी कोशिश की — और वहुत कारगर ढगसे कोशिश की — कि यहाँकी गरीवीका कारण भारतके वहिष्कारके साथ-साथ विश्वकी परिस्थितियाँ भी है। लेकिन मैंने कहा कि भारतके वहिष्कारका असर ज्यादा वुरा है, और वह अपने-आपमे तो वुरा है ही, साथ ही उसका जो नतीजा हुआ है उस दृष्टिसे भी वुरा है, क्योकि वह असर पूरे उद्योगके वजाय खास तौरसे एक ही औद्योगिक क्षेत्रमे केन्द्रित है। श्री गाधीको यह वात जँचती-सी लगी और उनका रुख वड़ा सहानुभूतिपूर्ण था। मुझे पूरा यकीन है कि वे वडे दयालु आदमी है, लेकिन उनकी दयालुता सवसे पहले और सवसे अधिक भारतीयोके लिए है। उन्होने इस वातका खण्डन किया कि वे एक सत्तार्थी राजनीतिज्ञ है और उनका खण्डन हमारे मनको वहुत जँचा।

वे हमारे आनेका इन्तजार करते हुए इस तरह वैठे थे मानो चीनियो द्वारा हाथी-दाँतसे वनाई वुद्धकी प्रतिमा हो। उनकी वह छवि वहुत भानेवाली और प्रभावोत्पादक थी। उनका सिर वड़ा सुघड़ है, और यद्यपि वे तसवीरोमे गजे दिखते है, लेकिन गजे है नही। उनके सिरपर वहुत छोटे-छोटे सफेद वाल है। उनकी वोलचाल और उनका तौर-तरीका वड़ा आकर्षक है।

जॉन ली: हमने ऐसी कोई अपेक्षा कभी नही की थी कि श्री गाधीसे हमारी मुलाकातके फलस्वरूप हमें निकट-भविष्यके लिए कोई आश्वासन मिलेगा। हमने उनके यह कहनेकी आशा नही की थी कि वे वहिष्कार समाप्त करने या भारतीय मिलोके मुकावले हमें प्राथमिकता देनेको तैयार है। हाँ, हम यह जरूर सोचते थे कि वे शायद, गोलमेज परिषद्के सफल हो जाने पर, भविष्यके लिए कोई आश्वासन दें। और एक तरहसे यह आश्वासन उन्होने दिया भी, लेकिन इस वातपर भी जोर दिया कि देशी खद्दर और, जवतक खद्दरसे देशकी जरूरत पूरी नही होने लगती तव-तक, भारतीय मिलोको दी जानेवाली प्राथमिकताको तो हमें वरदाश्त करना ही होगा। उन्होने हमें यह भरोसा दिलानेकी खास कोशिश की कि वहिष्कार राजनीतिक नही, वल्कि विशुद्ध रूपसे आर्थिक कारणोसे चलाया जा रहा है। लेकिन स्पष्ट कहे तो हमें लगता है कि इन दोनोके वीच, राजनीतिक वहिष्कार और आर्थिक वहिष्कारके

बीच, भेद करनेवाली जो रेखा खीची जा सकती है वह बहुत सूक्ष्म है। उनसे एक प्रश्न यह पूछा गया: "मिलोमे काम करनेवाले भारतीय मजदूरोके कामकी परिस्थितियो और मजदूरीके सम्बन्धमें उनके हितमें काग्रेस अपने प्रभावका कैसा उपयोग कर सकती है और उसने इस दृष्टिसे अबतक क्या कुछ किया है?" उत्तरमे उन्होने हमे बताया कि काग्रेस अबतक अमुक प्रकारके सुधार करवा चुकी है और आगे वह मिल-मजदूरोकी अवस्थामे सुधार करानेका प्रयत्न जारी रखेगी। हम सब इसी नतीजेपर पहुँचे कि आदर्शवादी दृष्टिकोणसे विचार करे तो श्री गाधीसे झगडना हमारे लिए मुनासिब नही होगा। खुद मैंने अपने एक सहयोगीसे कहा, "अगर मै भारतीय होता तो मै तो गाधीका शिष्य बनना चाहता।"

अलबत्ता, यह बात हमारी समझमे नही आती कि वे खेती-बाडीमे या सूत तैयार करनेमे उत्पादनके पुराने और अपरिष्कृत उपायोको फिरसे क्यो अपनाना चाहते है। उन्होने हमे बताया कि वे खुद भी प्रतिदिन एक घटा तो हमेशा कातते ही है। लेकिन यद्यपि उनका कताईका यन्त्र पुराने चरखेसे कुछ सुधरा हुआ है, फिर भी उसपर काम बहुत मन्द गतिसे होता है और वह अपरिष्कृत ढगका ही है। हमे उनसे यह आश्वासन पाकर बडी खुशी हुई कि अगर स्वतन्त्रता-विषयक उनकी समस्त आकाक्षाएँ पूरी हो जाती है तो वे भारतमे लकाशायरके मालको प्राथमिकता दिलानेकी कोशिश खुशीसे करेगे। हमने यह भी पाया कि उनकी यह बात केवल लंकाशायरके मालपर ही नही, बल्कि पूरे ब्रिटेनके मालपर लागू होती थी। अन्य प्रकारकी वस्तुओका उल्लेख उन्होने विशेष रूपसे किया। शायद एक बात ऐसी है जिसके सम्बन्धमे अगर कोई कुछ आशा करना चाहे तो अनुचित न होगा। श्री गाधी गाँवोमे जिस शिक्षाका प्रसार चाहते है उसके प्रसारके बाद वे कदाचित् जरूरतका कपड़ा तैयार करनेके इस अपरिष्कृत तरीकेसे सन्तुष्ट नही रहेगे और अपनी शक्ति अन्य दिशाओमे नियोजित करना चाहेगे। मतलब यह कि भारतीय गाँवोके विकासमे हमारे लिए आशाका कुछ आधार हो सकता है।

ऐड्रू नैस्मिथ: लोग गाधी और उनकी नीतिके सम्बन्धमे चाहे जो सोचें, एक बात स्पष्ट है। उनका अपना एक अलग व्यक्तित्व है, अलग आकर्षण है। यह सोचकर चकित रह जाना पडता है कि ऐसे कृषकाय व्यक्तिको, जिसका डील-डौल जरा भी प्रभावोत्पादक न हो, भारतके गाँवोमें रहनेवाले करोड़ो लोगोकी निष्ठा, श्रद्धा और प्रेम प्राप्त हो। हमे भारतीय गाँवोकी अवस्था, भारतके सामाजिक जीवन और उसके साथ अपने सम्बन्धोसे अवगत कराते हुए उन्होने तथ्योका जैसा सन्तुलित निवेदन किया उससे मै सबसे अधिक प्रभावित हुआ।

वे बिना किसी हाव-भावके स्वरोके प्रसगानुकूल उतार-चढ़ावके साथ बोले। उनके अन्तरकी भावनाकी अगर कोई झलक मिलती थी तो स्वरोके इस उतार-चढावसे ही। मुझे लगा कि यह आदमी ईमानदारीसे ऐसा मानता है कि वह सत्य, अहिसा और प्रेमकी जिन नीतियोका प्रतिपादन कर रहा है उनके द्वारा भारतके जीवन-स्तरको ऊपर उठानेके लिए ईश्वरने उसे अपने खास साधनकी तरह चुना है। अपनी

साफगोईका परिचय देते हुए उन्होने हमारे साथ हुई अपनी लम्बी बातचीतमे कहा कि उनकी और काग्रेसकी नीतिके लकाशायरके औद्योगिक और आर्थिक जीवनके लिए जो भयकर परिणाम हो सकते है उनके प्रति वे पूरी तरह सजग है। लेकिन जब वे हमारे यहाँके लोगो और भारतीयोकी सामाजिक अवस्थाओके बीच तुलना करते हुए दोनोका अन्तर देखते है तो उनका मन यही कहता है कि इस कामको करनेके लिए वे परम शक्तिके आदेशसे बँधे हुए हैं। मैं नही समझता कि गाधीने जो-कुछ लकाशायरमे देखा है और जो-कुछ हमसे जाना है उसकी वजहसे वे अपने उद्देश्योमे कोई परिवर्त्तन करेगे। इसलिए मुझे तो ऐसी कोई आशा दिखाई नही देती कि लकाशायर आगे भी भारतमे पहलेकी तरह बडे पैमानेपर कपडेका व्यापार कर पायेगा।

अगर उनकी आर्थिक नीति और उनके राजनीतिक सिद्धान्त सही है और अन्ततः उनको क्रियान्वित कर दिया जाता है तो मुझे लगता है कि लकाशायरके पूरे ४० प्रतिशत तकुओ और करघोको फिर कभी नही चलाया जा सकेगा। भारतमे ग्राम-जीवनके उद्धारके प्रति भला किसकी सहानुभूति नही होगी? किन्तु, साथ ही उसका लकाशायरपर जो असर होगा उसके विषयमे सोचते हुए मनका भविष्यके प्रति आशकासे भर उठना भी स्वाभाविक ही है। हमने पूछा कि हाथ-करघेपर बुननेवालो और बम्बईकी मिलोके बीच झगडा हो जाये तब आप क्या करेगे। उन्होने बहुत नपे-तुले शब्दोमे बिलकुल शान्त स्वरमे कहा, "जरूरत होने पर मैं बम्बईकी मिलोका नाश कर सकता हूँ।" और जिस स्वरमे उन्होने यह बात कही उससे तो यही लगता था कि वे जैसा मानते हैं, वैसा कर सकते हैं।

एफ० हिंडल. मैं श्री गाधीसे पहले भी, जब मैं १९२६ मे श्री टॉम शॉ और अन्य लोगोके साथ एक व्यापारिक शिष्टमण्डलके सदस्यके रूपमे भारत गया था, मिला था। शनिवारको श्री गाधीने बहुत ही साफगोईके साथ बात की, लेकिन बावजूद इसके कि वे उन ब्रिटिश व्यवसायियोसे मिल रहे थे जिन्होने उनकी नीतिके कुप्रभावो को बडी गहराईसे महसूस किया है और जो अपनी बात उनके सामने रखनेको कृत-सकल्प थे, बातचीतमे कोई कटुता नही थी और वह मुलाकात बहुत आनन्ददायक रही। लेकिन मेरा खयाल है, इस मुलाकातसे हमे इस बातकी प्रतीति तो हो ही गई है कि भारतसे हम फिर पहलेकी तरह बडे पैमानेपर व्यापार करनेकी आशा नही कर सकते। यह कहते हुए मुझे अच्छा नही लग रहा है, लेकिन कभी-कभी हमे जी कड़ा करके ऐसे कठोर तथ्योका भी सामना करना ही पडता है। सवाल यह उठता है कि क्या मैं ऐसा समझता हूँ कि उनके यहाँ आनेसे कोई लाभ हुआ है। हाँ, हुआ है। उनके आनेसे हमे स्थितिका सही ज्ञान प्राप्त हुआ है, लेकिन इस ज्ञानके साथ कोई आशा नही जुडी हुई है।

फ्रेड मिल्स: श्री गाधीसे मिलनेके बाद मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि वे बहुत ईमानदार आदमी हैं, और वे जो कहते है कि उनके मनमे लकाशायरके प्रति कोई वैर-भाव नही है, वह बिलकुल ठीक है। बहिष्कारको वे विशुद्ध रूपसे आर्थिक

साधन मानते हैं और यदि उनकी स्वातन्त्र्य-विषयक आकाक्षाएँ पूरी कर दी जाती है तब भी वे उससे विमुख नही होगे। . . .[1]

गरीबीका सवाल बडा कठिन है। हमने उनसे कहा कि प्राच्य देशोमे निम्न जीवन-स्तर एक सामान्य बात है। उन्होने हमारी यह बात तो मान ली, लेकिन साथ ही कहा कि भारतमे तो ऐसे करोडो लोग है जिनका जीवन-स्तर इतना निम्न है जितना निम्न जीवन-स्तर प्राच्य देशोमे भी देखनेको नही मिल सकता। हो सकता है, कुछ लोग मानते हो कि श्री गाधी तो बनते है। लेकिन मै उन लोगोमे से नही हूँ। मै तो आजतक जितने लोगोसे भी मिला हूँ वे उन सबमे सबसे अधिक विलक्षण है और वे अपने मधुर व्यवहारसे आलोचकोको निरस्त कर देते है। उन्होने ऐसा कुछ नही कहा जो हमे अच्छा लग सकता था, लेकिन सारी बातचीत बहुत ही अच्छे ढगसे हुई। उन्होने हमारे सभी सवालोके जवाब काफी विस्तारसे और विनोदपूर्ण ढगसे दिये। लकाशायरमे हर आदमीने उनका जैसा स्वागत किया, उसकी उन्होने बडी सराहना की, और कहा कि उन्हे यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ कि लोगोने उनके प्रति उस उचित क्षोभका भाव भी प्रदर्शित नही किया जिसके लिए उनका मन पहलेसे ही तैयार था।

टी० ऐशर्स्ट. मै नही समझता कि हमने कोई खास प्रगति की है। श्री गाधीने हमारे सामने यह बात साफ कर दी है कि हमारी मदद वे तभी करेगे जब उनकी माँग पूरी कर दी जायेगी और उनके देशकी जरूरते भी पूरी हो जायेगी। आर्थिक और राजनीतिक प्रश्नोको एक-दूसरेसे अलग कर पाना हमे बहुत कठिन लगा — उसे जितना कठिन मानते श्री गाधी जान पडे उससे कठिन तो जरूर लगा। सवाल यह उठता है कि क्या श्री गाधी अपने ही देशके मिल-मालिकोको नियन्त्रणमे रख पायेगे, और क्या वे अपने मशीनसे बने कपडेसे भारतके गाँवोको भर नही देगे। फिर भी, मै समझता हूँ, श्री गाधीसे हमारा मिलना अच्छा ही रहा और व्यक्तिगत रूपसे तो वे हमे बहुत अच्छे लगे।

[अंग्रेजीसे]

मैंचेस्टर गार्डियन, २८-९-१९३१

1. यहाँ साधन-सूत्रमें एक वाक्य अधूरा-सा है और उसका अर्थ स्पष्ट नहीं होता। इसलिए उसका अनुवाद नहीं दिया जा रहा है।

परिशिष्ट २

रोमाँ रोलाँका पत्र: एक अमेरिकी मित्रके नाम[1]

दिसम्बर, १९३१

बड़ी इच्छा थी कि जब भारतीय मित्र आये थे, उस समय तुम भी यहाँ होते। वे विला वायोनेतमें ठहरे थे — पाँच दिन — रविवारकी रातसे लेकर शुक्रवार, ११ तारीखको तीसरे पहरतक। आँखोंपर ऐनक लगाये, पोपले मुँहवाला वह लघुकाय व्यक्ति सफेद चादरमें लिपटा हुआ था, लेकिन उसकी बगुलेकी-सी पतली टाँगें अनावृत थीं। उसके घुटे हुए सिरपर, जो वर्षामें भीग गया था, कुछ थोड़े-से रूखे बालोंके सिवा कुछ नहीं था। मानो कोई प्यारा-सा कुत्ता हाँफ रहा हो, इस तरह अपना मुँह खोले और एक सूखी हँसी बिखेरते हुए वह मेरे पास आया और आते ही अपना एक हाथ मेरे गिर्द डालकर अपना गाल मेरे कन्धेपर टिका दिया। उसके छोटे धूसर बालोंवाले सिरका स्पर्श मैंने अपने गालोंपर महसूस किया। वह सेंट डोमिनिक और सेंट फ्रान्सिसका आलिंगन था, ऐसा सोच-सोचकर मैं अपने मनको गुदगुदाता हूँ।

उसके बाद आई मीरा — आकृतिकी सुघड़ताकी प्रतीक, दिमीतरकी तरह आकर्षक व्यक्तित्वकी धनी। अन्तमें आये तीन नौजवान भारतीय। उनमें से एक तो था स्वयं गांधीका पुत्र देवदास — गोल और दृष्टिको सुख पहुँचानेवाली मुखाकृतिसे सम्पन्न। वह बड़ा ही विनम्र है और अपने नामके वैभवके प्रति बहुत कम सजग। अन्य दो थे गांधीके सचिव या शिष्य — हृदय और मस्तिष्कके विरल गुणोंसे सम्पन्न युवकद्वय — महादेव देसाई और प्यारेलाल।

इससे कुछ ही समय पूर्व ठंड लग जानेसे मेरी छाती जकड़ गई थी, इसलिए गांधी प्रतिदिन प्रातःकाल मेरे घर विला ओलगा ही आ जाया करते थे, और तीसरी मंजिलके मेरे उस खास कमरेमें, जिसमें — तुम्हें याद होगा — मैं सोता हूँ, बैठकर वे मुझसे देर-देरतक बातें किया करते थे। मीराकी सहायतासे मेरी बहन दुभाषियेका काम करती थी, और मेरी सेक्रेटरी कुमारी कोंडचेफ बातचीतकी टीपें लेती थी। हमारे मॉन्ट्रू-निवासी पड़ोसी श्लेमरने हमारी मुलाकातोंके कुछ बहुत अच्छे फोटो खींचे।

शामके सात बजे दूसरी मंजिलके सैलूनमें प्रार्थना होती थी। रोशनी मद्धिम कर दी जाती थी और भारतीय मित्र दरीपर बैठ जाते थे और श्रद्धालु भक्तोंकी यह छोटी-सी मण्डली तीन सुन्दर प्रार्थनाओंका गान करती थी। पहली प्रार्थना 'गीता' से ली गई है, दूसरी एक स्तोत्र है, जिसे एक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थसे लिया गया है और जिसका गांधीने अनुवाद कर दिया है; और तीसरी राम और शिवका गुण-गान करनेवाला एक भजन है, जिसे मीरा अपने गम्भीर और भावपूर्ण स्वरमें गाती थी।

१. देखिए "बातचीत: रोमाँ रोलाँसे", ६-१२-१९३१।

दूसरी प्रार्थना सुबहके तीन बजे की जाती थी और जब वे लोग लन्दनमे थे, और गाधी रातके एक बजेसे पहले नही सो पाते थे तब भी वे इसके लिए अपने सहयोगियोको तीन बजे ही जगा दिया करते थे, जिससे उन्हे परेशानी भी होती थी। इतना कमजोर दिखनेवाले इस लघुकाय व्यक्तिमे परिश्रम करनेकी अद्भुत क्षमता है और थकावट शब्द तो जैसे उसके कोषमे हो ही नही। भीड़ प्रश्नोकी बौछार कर रही हो, लेकिन वे सबके उत्तर परम धैर्य और शान्तिसे देते चले जाते है। लोजान और जिनेवामे यही देखनेको मिला। श्रोताओके उतने सारे टेढे-मेढे प्रश्नोके उत्तर देते हुए उनके चेहरेपर शिकनतक न आई। वे एक मेजपर बिलकुल शान्त बैठे थे और अपने स्पष्ट और धीर स्वरमे अपने प्रकट और अप्रकट दोनो तरहके विरोधियोको— और जिनेवामे ऐसे विरोधियोकी कोई कमी नही थी—उत्तर देते चले जा रहे थे—कटु सत्योसे भरे उत्तर, जिनसे उनके मुँह बन्द होकर रह जाते थे और वे अन्दर-ही-अन्दर घुटनेको मजबूर हो जाते थे।

जब वे रोम पहुँचे तो वहाँके बुर्जुआ लोगो और राष्ट्रवादियोने पहले तो उनके प्रति एक चतुराई-भरा रुख अपनाये रखा, लेकिन वे जब रोमसे गये तो वे सब लोग क्रोधसे काँप रहे थे। मै समझता हूँ, अगर वे कुछ दिन और रुके होते तो उनकी सार्वजनिक सभाओपर पाबन्दी लगा दी गई होती। राष्ट्रीय शस्त्रीकरण और पूँजी तथा श्रमका सघर्ष, इन दोनो प्रश्नोपर उन्होंने अपनी बाते अधिकसे-अधिक स्पष्ट शब्दोमे कही। इस दूसरी बातके लिए उन्हे प्रेरित करनेमें मेरा बहुत हाथ था।

वे एकके-बाद-एक क्रियागत प्रयोग करते जाते है और उसीके साथ उनका चिन्तन निश्चित दिशामे ढलता जाता है और वे एक सीधी लीकपर आगे बढते जाते है, लेकिन रुकते कभी नही हैं। इसलिए यदि कोई उनके विषयमे, उन्होने दस वर्ष पहले क्या कहा, इसके आधारपर कोई धारणा बनाना चाहे तो गलती ही करेगा, क्योकि उनका चिन्तन सतत विकासमान है। तुम्हे एक उदाहरण देता हूँ जो इस चीजको ठीकसे पल्लवित करता है।

लोजानमे उनसे पूछा गया कि ईश्वरसे उनका क्या तात्पर्य है। उन्होने लोगोको समझाया कि अपनी युवावस्थामे उन्होने किस प्रकार, हिन्दू धर्मग्रन्थोने ईश्वरके जो अनेक उदात्ततम गुण बताये है, उनमें से 'सत्य'को ईश्वरके मुख्य तत्त्वका सबसे सच्चा वर्णन करनेवाले शब्दके रूपमे चुना था। तब वे कहा करते थे, "ईश्वर सत्य है।" "लेकिन", जैसा कि उन्होने आगे कहा, "दो वर्ष पूर्व मै एक कदम और आगे गया और अब मै कहता हूँ, 'सत्य ही ईश्वर है।' कारण, सत्यकी शक्तिको स्वीकारनेकी आवश्यकतासे तो नास्तिक भी इनकार नही करते। सत्यको पानेकी धुनमे नास्तिकोने ईश्वरके अस्तित्वसे इनकार करनेमे भी कोई सकोच नही किया है और अपन दृष्टि-कोणसे उनका यह आचरण सही भी है।" इस एक ही चीजसे तुम प्राच्य ससारके इस धर्मात्मा पुरुषकी वैचारिक निर्भीकता और स्वतन्त्रताको समझ गये होगे। मुझे तो उनमे विवेकानन्दकी-सी प्रवृत्तियाँ दिखाई दी।

लेकिन दूसरी ओर राजनीतिका एक भी दाँव-पेच ऐसा नही जिसके लिए वे पहलेसे ही तैयार न लगते हो। और स्वय उनकी राजनीति यही है कि उनके मनमे

जो भी बाते उठती है, उन्हे तनिक भी दुराव-छिपावके बिना वे हर आदमीके आगे रख देते है।

आखिरी शामको प्रार्थनाके बाद गाधीने मुझसे बीथोवनकी कोई चीज सुनानेको कहा (वे बीथोवनको व्यक्तिश तो नही जानते, लेकिन यह जानते है कि मीराको मेरे सम्पर्कमे वही लाये। और फलत. उनसे भी मीराके सम्पर्कका श्रेय प्रकारान्तरसे बीथोवनको ही है[1] और अन्त में देखें तो हम तीनोको उनका कृतज्ञ होना चाहिए।) मैंने उन्हे 'फिफ्थ सिंफनी' का 'अन्दान्ते' सुनाया। साथ ही मैंने ग्लककी 'ले शाजेलीजे' भी सुनाई . . ।

अपने देशके भजन आदि उन्हे बहुत अधिक भाव-विभोर कर देते है। ये भजन हमारे ग्रेगरी-युगीन श्रेष्ठतम मधुर गीतोसे मिलते-जुलते है। गाधीने इन भजनोका एक सग्रह तैयार कराया है। हमने अपने कला-विषयक विचारोका भी आदान-प्रदान किया। वे अपनी सत्यकी कल्पनाको कलासे अलग नही करते और न वे अपनी सत्यकी कल्पनासे अपनी आनन्दकी कल्पनाको ही अलग करते है। उनके विचारसे, सत्यको आनन्द भी उपलब्ध करा सकना चाहिए। मगर यह तो स्वयसिद्ध ही है कि ऐसी कर्मठ वृत्तियोवाले व्यक्तिको आनन्द भी विना श्रम, विना प्रयत्नके नही मिल सकता और न कठिनाइयोके बिना उसके लिए जीवनका कोई अर्थ है। "सत्यान्वेषीका हृदय तो कमल-सा कोमल और कुलिश-सा कठोर होता है।"

तो मेरे दोस्त, यहाँ मैंने उन चन्द दिनोके कुछ सकेत-भर दिये है जो हमने साथ गुजारे और जिनके अनुभव मैंने इससे बहुत अधिक विस्तारसे लिपिबद्ध कर रखे है। अगर तुम्हे कुछ नही बता रहा हूँ तो वह यह है कि गाधीके आगमनके फलस्वरूप हमारे दोनो मकानोपर बिन-बुलाये मेहमानो, निठल्लो और सनकी लोगोने कैसा बावेला मचाये रखा। टेलीफोन तो लगातार घनघनाता ही रहता था और घात लगाये फोटोग्राफरोके कैमेरोके फ्लैश चाहे जिस झाडीके पीछेसे बराबर चमक-चमक उठते थे। लेमानके दूधियोके सघवालोने मुझे बताया कि जबतक "हिन्दुस्तानका बादशाह" हमारे साथ है तबतक उसके "भोजन" की पूरी व्यवस्थाका दायित्व वे अपने सिर लेना चाहते है। कई "ईश-पुत्रो" ने भी हमे पत्र लिखे। किसी इतालवीने महात्माको पत्र लिखकर अगली साप्ताहिक राष्ट्रीय लाटरीके लिए दस शुभ अक बतानेका आग्रह किया।

मेरी बहन तो इस मुसीबतसे उबरकर स्वास्थ्य-सुधारके निमित्त दस दिनोके लिए ज्यूरिख गई हुई है। वह कल लौटेगी। और मेरा तो यह हाल है कि मैं अपनी सोनेकी क्षमता बिलकुल खो बैठा हूँ। अगर वह तुम्हे कही मिल जाये तो रजिस्टर्ड डाकसे भेज देना।

[अंग्रेजीसे]

बापूज लेटर्स टु मीरा, पृष्ठ १८०-३

१. मीराबहन रोमाँ रोलाँके सुझावपर ही गांधीजी की छत्रछायामें आई थी।

परिशिष्ट ३

वाइसरायके निजी सचिवका भेजा तार[1]

३१ दिसम्बर, १९३१

परमश्रेष्ठकी इच्छानुसार आपको इसी २९ तारीखके आपके उस तारके लिए धन्यवाद देता हूँ जिसमे आपने बगाल, सयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्त-सम्बन्धी अध्यादेशोका उल्लेख किया है। जहाँतक बगालका सम्बन्ध है, सरकारके लिए यह जरूरी रहा है और जरूरी है कि अपने अधिकारियो और साधारण नागरिकोकी कायरतापूर्ण हत्याको रोकनेके लिए वह हर सम्भव कदम उठाये।

परमश्रेष्ठका कहना है कि वे और उनकी सरकार सभी राजनीतिक दलो और जनताके सभी हिस्सोसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखना चाहते है और विशेष रूपमे सवैधानिक सुधारके उस महान् कार्यमे, जिसे वे यथासम्भव जल्दीसे-जल्दी आगे बढानेको कटिबद्ध है, सबका सहयोग प्राप्त करना चाहते है। लेकिन सहयोग तो पारस्परिक होना चाहिए और परमश्रेष्ठ तथा उनकी सरकारको सयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्तमे काग्रेसकी प्रवृत्तियोमे भारतकी भलाईके लिए अपेक्षित स्पष्ट सहयोगकी वह भावना कही नही दिखाई देती। जहाँतक सयुक्त प्रान्तका सम्बन्ध है, निस्सन्देह आपको तो यह मालूम ही होगा कि जहाँ स्थानीय सरकार वर्त्तमान परिस्थितियोमे यथासम्भव अधिकसे-अधिक राहत देनेके उपाय ढूँढ रही थी, वहाँ प्रान्तीय काग्रेस कमेटीने लोगोसे लगानबन्दी आन्दोलन छेडनेको कहा और अब उस प्रान्तमे काग्रेसी सस्थाएँ पूरे जोरसे वह आन्दोलन चला रही है। काग्रेसी सस्थाओकी कार्रवाईसे मजबूर होकर सरकारको आम अव्यवस्था और वर्गगत तथा साम्प्रदायिक विद्वेषको फैलनेसे रोकनेके लिए आवश्यक कदम उठाने पडे, क्योकि यदि उस आन्दोलनको निर्बाध चलने दिया जाता तो अनिवार्यत वैसी अव्यवस्था और विद्वेष फैलता।

सीमा-प्रान्तमे अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके नियन्त्रणमे काम करनेवाली सस्थाएँ लगातार सरकार-विरोधी प्रवृत्तियाँ चलाती रही है और जातिगत विद्वेषको बढावा देनेमे लगी रही है। अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके साथियोका सहयोग पानेके लिए मुख्य आयुक्तने तरह-तरहसे प्रस्ताव-निवेदन किये, लेकिन उन लोगोने सबको ठुकरा दिया और प्रधान मन्त्रीकी घोषणाको अस्वीकार करते हुए पूर्ण स्वतन्त्रताकी माँग की है। अब्दुल गफ्फार खाँने ऐसे भाषण दिये है जिनका मतलब सिवा इसके और कुछ नही

१. देखिए "तार: वाइसरायको", २९-१२-१९३१।

हो सकता कि वे विप्लवका प्रचार कर रहे है, और उनके अनुगामियोने कबायली क्षेत्रोमें उपद्रव भडकानेकी कोशिश की है। परमश्रेष्ठकी सरकार-की सहमतिसे मुख्य आयुक्तने अधिकसे-अधिक सहिष्णुताका परिचय दिया है और उस प्रान्तमें सवैधानिक सुधारोको लागू करनेके महामहिमकी सरकारके इरादोको जल्दीसे-जल्दी अजाम देनेमे अब्दुल गफ्फारका सहयोग प्राप्त करनेकी कोशिश वे आखिर तक करते रहे है। सरकार विशेष कदम उठानेसे बचती रही, लेकिन जब अब्दुल गफ्फार खाँ और उनके साथियोकी प्रवृत्तियोके फलस्वरूप और, विशेष रूपसे, सरकारके खिलाफ जल्दी ही सघर्ष छेड देनेकी खुली और जोरदार तैयारीके परिणामस्वरूप उस प्रान्त और कबायली क्षेत्रोकी शान्तिको ऐसा खतरा पैदा हो गया कि इस सम्बन्धमे और ज्यादा विलम्ब करना असम्भव हो गया तब सरकारको यह कदम उठाना ही पडा। परमश्रेष्ठको ज्ञात हुआ है कि पिछले अगस्त महीनेमें अब्दुल गफ्फार खाँको उस प्रान्तमे काग्रेसकी प्रवृत्तियोके सचालनका दायित्व सौपा गया और स्वयसेवकोके जो संगठन उनके नियन्त्रणमे काम कर रहे थे उन्हे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने स्पष्ट रूपसे काग्रेसी सस्थाओके रूपमे मान्य किया। परमश्रेष्ठकी इच्छा है कि मै आपके सामने यह बात बिलकुल स्पष्ट कर दूँ कि जो लोग या संस्थाएँ उपर्युक्त कार्रवाइयोके लिए जिम्मेदार हैं उनसे कोई व्यवहार रखना शान्ति-सुव्यवस्थाके लिए जिम्मेदार व्यक्तिके रूपमे उनके लिए असम्भव है। आप खुद गोलमेज परिषद्के सिलसिलेमे भारतसे बाहर रहे है और वहाँ आपने जो रुख अपनाया है उसे देखते हुए परमश्रेष्ठ यह नही मानना चाहते कि हालमे काग्रेसने संयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्तमे जो-कुछ किया है, उसके लिए आप व्यक्तिगत रूपसे जिम्मेदार है या कांग्रेसकी उन कार्रवाइयोका आप समर्थन करते है। यदि बात ऐसी हो तो वे आपसे मिलने और गोलमेज परिषद्मे सहयोगकी जो भावना व्याप्त रही उसे कायम रखनेके लिए आप अपने प्रभावका उपयोग किस प्रकार कर सकते है, इस सम्बन्धमे आपको अपने विचार बतानेको इच्छुक है। लेकिन परमश्रेष्ठ इस बातपर जोर देना अपना कर्त्तव्य मानते हैं कि भारत सरकारने महामहिम की सरकारकी पूर्ण सहमतिसे बंगाल, संयुक्त प्रान्त और सीमा-प्रान्तके सम्बन्धमे जो कदम उठाना उचित समझा है, उनके बारेमे वे आपसे कोई बातचीत करनेको तैयार नही होगे। ये कदम अच्छे शासनके परम कर्त्तव्य कानून और व्यवस्थाकी रक्षाके उद्देश्यसे उठाये गये है और जबतक यह उद्देश्य पूरा नही होता तबतक तो उन्हे हर हालतमें कायम ही रखना होगा। आपका उत्तर मिलनेपर परमश्रेष्ठ इस तारको प्रकाशित करना चाहते है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२

परिशिष्ट ४

वाइसरायके निजी सचिवका भेजा तार[1]

२ जनवरी, १९३२

परमश्रेष्ठकी इच्छानुसार सूचित करता हूँ कि आपका १ जनवरीका तार मिला और उन्होने तथा उनकी सरकारने उसपर विचार किया। उन्हे यह देखकर बड़ा दुख हुआ कि आपकी सलाहपर कांग्रेस कार्य-समितिने एक प्रस्ताव पास किया है, जिसके अनुसार यदि आपके तार और उस प्रस्तावमे उल्लिखित शर्तें पूरी नही की जाती तो सविनय अवज्ञा फिरसे शुरू कर दी जायेगी।

प्रधान मन्त्रीके वक्तव्यमे सवैधानिक सुधारकी नीतिको तेजीसे लागू करनेके महामहिमकी सरकार और भारत सरकारके जिन इरादोका उल्लेख किया है उनको ध्यानमे रखते हुए वे इस रुखको और भी दुखद मानते हैं। जिस सरकारको अपने दायित्वोका निर्वाह करना हो, ऐसी कोई भी सरकार किसी भी राजनीतिक सगठन द्वारा गैरकानूनी कार्रवाईकी धमकीके साथ रखी गई शर्तें स्वीकार नही कर सकती, और न भारत सरकार आपके तारमे प्रकारान्तरसे कही गई इसी बातको स्वीकार कर सकती है कि जो कदम सरकारने सभी तथ्योपर पूरी सावधानी से सम्यक् विचार करने और अन्य सभी उपायोके विफल हो जानेके बाद उठाये है उनकी आवश्यकता थी या नही, इसका फैसला वह आपकी रायसे करे।

परमश्रेष्ठ और उनकी सरकारको विश्वास नही होता कि आप या कार्य-समिति ऐसा सोच सकती है कि जब आपकी ओरसे सविनय अवज्ञाके पुनः प्रारम्भ कर दिये जानेकी धमकी दी जा रही है तब भी परमश्रेष्ठ आपको मुलाकातके लिए बुला सकते हैं और उस मुलाकातके किसी तरह से लाभ-दायक होनेकी भी आशा कर सकते हैं।

जो कदम उठानेका इरादा कांग्रेसने जाहिर किया है और जिसका मुकाबला करनेके लिए सरकार हर आवश्यक कार्रवाई करनेको कटिबद्ध है उसके सम्भावित परिणामोके लिए सरकार और परमश्रेष्ठको कांग्रेसको ही जिम्मेदार मानना होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया इन १९३१-३२; यंग इंडिया, ७-१-१९३२ भी।

१. देखिए "तार: वाइसरायके निजी सचिवको", १-१-१९३२।

सामग्रीके साधन-सूत्र

इडिया ऑफिस रेकर्डस . इडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दनमे सुरक्षित, इन अभिलेखोमे वे कागज-पत्र शामिल है जिनका सम्बन्ध उन भारतीय मामलोसे है जिनके लिए भारत-मत्री जिम्मेदार थे।

गाधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली . गाधी साहित्य और गाधीजी-सम्बन्धी कागज-पत्रोका केन्द्रीय अभिलेखागार व पुस्तकालय।

साबरमती सग्रहालय, अहमदाबाद गाधीजी से सम्बन्धित कागज-पत्रोका पुस्तकालय और सग्रहालय।

गृह विभागकी राजनीतिक फाइले राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्लीमे सुरक्षित।

ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैडकी मिशनरी सस्थाओका सम्मेलन . निजी कागज-पत्र।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमे सुरक्षित।

'अमृतबाजार पत्रिका' कलकत्तासे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक, सर्व प्रथम १८६८ मे बगला साप्ताहिकके रूपमे प्रकाशित होना शुरू हुआ, १८९१ से दैनिक बन गया।

'इटरनेशनल अफेयर्स' रॉयल इस्टिटयूट ऑफ इटरनेशनल अफेयर्सकी त्रैमासिक पत्रिका।

'इडियन न्यूज': लन्दनसे प्रकाशित मासिक पत्रिका, १९३२ से 'इडिया रिव्यू' नामसे प्रकाशित।

'इडिया रिव्यू' लन्दनसे प्रकाशित मासिक पत्रिका, पहले 'इडियन न्यूज' नामसे प्रकाशित।

'ईवनिग स्टैडर्ड': 'स्टैडर्ड' के साध्यकालीन सस्करणके रूपमे लन्दनसे प्रकाशित दैनिक; प्रवेशाक १८७० से।

'क्लिथरो ऐडवर्टाइजर ऐड टाइम्स': लन्दनसे प्रकाशित दैनिक, प्रवेशाक १८८५ मे।

'गिल्डहाउस' लन्दनसे प्रकाशित मासिक — फेलोशिप गिल्डकी मुख-पत्रिका, प्रवेशाक १९२७ में।

'जॉन बुल'. लन्दनसे प्रकाशित मासिक पत्रिका।

'ज्यूइश क्रॉनिकल': लन्दनसे प्रकाशित साप्ताहिक, प्रवेशाक १८४१ मे।

'टाइम्स' लन्दनसे प्रकाशित प्रात कालीन दैनिक।

'टेक्स्टाइल मर्क्युरी ऐड आर्गस': मैचेस्टरसे प्रकाशित सावधिक पत्रिका, प्रवेशाक मार्च, १९३१ में।

'ट्रिब्यून': अम्बालासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'डेली टेलीग्राफ': लन्दनसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'डेली मेल': लन्दनसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक, प्रवेशांक १८९६ में।

'डेली वर्कर': लन्दनसे प्रकाशित दैनिक।

'डेली हेराल्ड': लन्दनसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'नवजीवन': गांधीजी द्वारा संपादित और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'न्यूज क्रॉनिकल': लन्दनसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'न्यूयॉर्क टाइम्स': न्यूयॉर्कसे प्रकाशित दैनिक।

'पोस्ट': होस्लोसे प्रकाशित मासिक पत्रिका, यूनियन ऑफ पोस्ट ऑफिस वर्कर्सकी मुख-पत्रिका।

'फ्रेंड': केंटसे प्रकाशित साप्ताहिक; प्रवेशांक १८४३ में।

'बर्मिंघम पोस्ट': बर्मिंघमसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक, प्रवेशांक १८५७ में।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉरोज ऑफ पॉपलर ऐंड स्टेपनी ईस्ट लंडन एडवर्टाइजर': लन्दनसे प्रकाशित दैनिक।

'मैंचेस्टर गार्डियन': मैंचेस्टरसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'यंग इंडिया': गांधीजी द्वारा संपादित और अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'यॉर्कशायर पोस्ट': यॉर्कशायरसे प्रकाशित प्रातःकालीन दैनिक।

'रिकंसिलिएशन': मासिक पत्रिका, यह फेलोशिप ऑफ रिकंसिलिएशन, लन्दनकी मुख-पत्रिका थी।

'लेबर मंथली': लन्दनसे प्रकाशित, प्रवेशांक १९२१ में।

'संडे ऑब्जर्वर': लन्दनसे प्रकाशित साप्ताहिक।

'संडे टाइम्स': लन्दनसे प्रकाशित साप्ताहिक।

'स्टेट्समैन': कलकत्ता और नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'स्पेक्टेटर': लन्दनसे प्रकाशित साप्ताहिक, १८२८ में प्रवेशांक।

'हरिजन': हरिजन सेवक-संघकी ओरसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक। प्रवेशांक ११ फरवरी, १९३३ को पूनामें; २७ अक्टूबर, १९३३ को मद्रासको स्थानान्तरित, १३ अप्रैल, १९३५ से फिर पूनासे प्रकाशित, आगे चलकर अहमदाबादसे प्रकाशित।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'इंडियन राउंड टेबल कान्फरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ प्लेनरी सेशन्स': हर मेजेस्टीज स्टेशनरी ऑफिस, लन्दन द्वारा प्रकाशित।

'इंडियन राउंड टेबल कान्फरेंस (सेकेण्ड सेशन): प्रोसीडिंग्स ऑफ फेडरल स्ट्रक्चर कमिटी ऐंड माइनॉरिटीज कमिटी', खण्ड १: हर मैजेस्टीज स्टेशनरी ऑफिस, लन्दन द्वारा प्रकाशित।

'इंडिया इन १९३१-३२': भारत सरकार केन्द्रीय प्रकाशन शाखा, कलकत्ता।

'दैट स्ट्रेंज लिटल ब्राउन मैन – गांधी': फ्रेडरिक बी० फिशर कृत, आर० लोंग ऐंड आर० आर० स्मिथ, न्यूयॉर्क द्वारा प्रकाशित।

'बंच आफ ओल्ड लेटर्स': जवाहरलाल नेहरू द्वारा सम्पादित; एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९५८।

'बापुना पत्रो–२: सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती): मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५२।

'बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने (गुजराती): मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – ६: ग० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती): काकासाहब कालेलकर द्वारा सम्पादित, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापूज लेटर्स टू मीरा': नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'माई ऑटोबायोग्राफी': चार्ली चैपलिन-कृत, बोडले हेड, १९६४।

'हैलीफैक्स': बर्कनहेड-कृत: हैमिश हैमिल्टन, लन्दन।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१२ सितम्बर, १९३१ से ३ जनवरी, १९३२)

१२ सितम्बर: गाधीजी लन्दन पहुँचे।

समाचार-पत्रोको भेटमे काग्रेसके प्रादेश (मेडेट) का सार समझाया।

फ्रेड्स हाउस, लन्दनमे भाषण दिया।

१३ सितम्बर: कोलम्बिया ब्रॉडकास्टिंग सर्विससे अमेरिकाके निमित्त किये गये प्रसारणमे लोगोके अन्त.करणसे अपील की।

ब्रिटिश प्रधान मन्त्री और लॉर्ड सैकीसे मुलाकात की।

१४ सितम्बरके पूर्व. 'टाइम्स' को दिये गये एक सन्देशमे कहा कि शान्ति-स्थापनाके अपने कार्यमे उन्हे हर अग्रेज स्त्री-पुरुषकी सद्भावनाकी जरूरत है।

१४ सितम्बर· सघ-सरचना समितिकी बैठकमे शामिल हुए, लेकिन मौन-दिवस होनेके कारण बोले नही।

१५ सितम्बर. सघ-सरचना समितिमे पूर्ण स्वराज्यकी राष्ट्रीय माँग पेश की।

१६ सितम्बर: लेबर पार्टीके ससद-सदस्योकी बैठकमे बोलते हुए पूर्ण स्वराज्यकी माँग दोहराई।

१७ सितम्बर: 'टेक्स्टाइल मर्क्युरी' और 'न्यूज क्रॉनिकल' को मुलाकात दी।

सघीय विधान-मण्डलके सदस्योके चुनावपर सघ-सरचना समितिमे बोले।

१९ सितम्बर. किंग्सले हॉलके स्वागत-समारोहमे बोले।

२१ सितम्बर: किंग्सले हॉल छोडकर ८८ नाइट्सब्रिजमे रहने चले गये।

२२ सितम्बर: चार्ली चैपलिनसे मुलाकात की।

स्वर्ण मानक समाप्त करनेके सरकारी निर्णयके विषयमें सघ-सरचना समितिकी बैठकमे बोले।

२३ सितम्बर. गिल्डहाउस चर्चमे स्वेच्छासे अपनाई गरीबीपर बोले।

ससद-सदस्योकी सभामे बोलते हुए पूर्ण स्वराज्यकी अवधारणाका पल्लवन किया।

२४ सितम्बर: आगाखाँ और जिन्नासे बातचीत की।

सघ-सरचना समितिकी बैठकमे शरीक हुए।

२५ सितम्बर: लॉर्ड इर्विनसे भेट की।

२६ सितम्बर. एजवर्थ और डारवेनमे कपासपर आधारित उद्योगके प्रतिनिधियोसे बातचीत की।

स्प्रिगफील्ड गार्डन विलेजमे बेरोजगार मजदूरोके शिष्टमण्डलको मुलाकात दी।

२६/२७ सितम्बर: लकाशायरकी बेरोजगारीकी समस्यापर बोले।

२७ सितम्बर. वेस्ट ब्रैडफोर्डमे वयस्कोके स्कूलमे बोले।

वेस्ट ब्रैडफोर्डमे बेरोजगार मजदूरो और क्लिथरो बुनकर-सघके शिष्टमण्डलोको मुलाकात दी।

सवाददाताओसे बातचीत की।

२८ सितम्बर. अल्पसख्यक-समस्या समितिकी बैठकमे शरीक हुए।

२९ सितम्बर. लन्दनमे सर सैम्युअल होरसे बातचीत की।

३० सितम्बर: प्रधान मन्त्रीसे मुलाकात की।

भारतीय व्यापार-मण्डल, लन्दन द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमे भाषण दिया।

१ अक्टूबर रिट्ज होटलमे आगाखॉ और अन्य मुसलमान नेताओसे मुलाकात की।

प्रधान मन्त्रीसे बातचीत की।

अल्पसख्यक-समस्या समितिमे बोलते हुए समितिकी कार्यवाही एक सप्ताह स्थगित रखे जानेका अनुरोध किया।

२ अक्टूबरके पूर्व: 'ज्यूइश क्रॉनिकल' को भेट दी।

२ अक्टूबर: हेनरी कार्टरसे मद्य-निषेधपर बातचीत की।

कई सस्थाओ द्वारा गाधीजी के जन्म-दिनके उपलक्ष्यमे वेस्टमिन्स्टर पैलेसमे एक प्रीति-भोजका आयोजन।

अल्पसख्यक-समस्या-सम्बन्धी गोष्ठी, लन्दनमे दलित वर्गोके लिए विशेष प्रतिनिधित्वका विरोध।

वीमेस इडियन एसोसिएशन द्वारा केन्द्रीय य० मे० क्रि० ए० लन्दनमे आयोजित एक स्वागत-समारोहमे भाषण दिया।

३ अक्टूबर: सी० एफ० एन्ड्रयूजसे मिलने कैंटरबरी गये।

४ अक्टूबर. कैंटरबरीमे।

५ अक्टूबर: अल्पसख्यक-समस्या-सम्बन्धी गोष्ठीमे बोले।

६ अक्टूबर: फेलोशिप क्लबकी सभामे बोले।

लॉर्ड इर्विनके सम्मानमे आयोजित प्रीति-भोजमे शरीक हुए।

७ अक्टूबर: फ्रेड्स ऑफ इडिया, लन्दनकी सभामे बोले।

८ अक्टूबर: अल्पसख्यक-समस्या समितिमे अल्पसख्यकोके सम्बन्धमे काग्रेसकी नीतिका स्पष्टीकरण किया।

लन्दनमे ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैण्डकी मिशनरी सस्थाओके सम्मेलनमे भाषण दिया।

९ अक्टूबर या उसके पूर्व. मादाम मॉन्टेसरी और शॉ डेसमडको मुलाकाते दी।

९ अक्टूबर. सघ-सरचना समितिकी बैठकमे बोले।

१० अक्टूबर: चिचिस्टरमे।

११ अक्टूबर या उसके पूर्व. एच० एन० ब्रेल्सफोर्डको भेट दी।

१२ अक्टूबर: नेशनल लेबर क्लबमे कहा कि भारत विना रक्तपातके पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेको कृतसकल्प है।

१३ अक्टूबर. समाचार-पत्रोके प्रतिनिधियोको भेट देते हुए उन्हे साम्प्रदायिक समस्याका मर्म समझाया।

गोवर स्ट्रीट होस्टल, ब्लूम्सबरी, लन्दनमे भारतीय विद्यार्थियोकी सभामे भाषण दिया।

१४ अक्टूबर या उसके पूर्व 'आडलैड', लन्दन के सम्पादक जोजेफ बार्डको मुलाकात दी।

१४ अक्टूबर: साम्प्रदायिक समस्याके हलके बारेमे समाचार-पत्रोके लिए वक्तव्य जारी किया।

सैम्युअल होर, बेथल और जिन्नासे बातचीत की।

सघ-सरचना समितिकी बैठकमे बोले।

१५ अक्टूबर: रसेल स्क्वेयर, लन्दनमे इटरनेशनल स्टूडेट्स मूवमेटके छात्रोकी सभामे भाषण दिया।

सैम्युअल होर, तेजबहादुर सप्रू, एम० आर० जयकर और अन्य लोगोसे बातचीत की।

१६ अक्टूबर. कैलेडरसे थोक उत्पादन और जनता द्वारा किये जानेवाले फुटकर उत्पादनपर बातचीत की।

सघ-सरचना समितिकी बैठक और मद्य-निषेधवादी कार्यकर्त्ताओकी बैठकमे भाषण दिया।

१७ अक्टूबर: नॉटिंघममे नॉटिंघम युनिवर्सिटी कॉलेजमे बोले।

१७ अक्टूबर या उसके पश्चात् 'स्पेक्टेटर', लन्दनके सम्पादक एवलिन रेचको मुलाकात दी।

१८ अक्टूबर: सेली ओक, बर्मिंघममे भारतीयोके सामने बोलते हुए उनसे अनुरोध किया कि वे भारत लौटकर स्वदेशभाइयोकी सेवा करे।

वुडब्रूक सेट्लमेट, सेली ओक, बर्मिंघममे भारत द्वारा शान्तिपूर्ण उपायोसे स्वराज्य प्राप्त करनेके सकल्पके विषयमे बोले।

१९ अक्टूबर. सुबह बर्मिंघमसे प्रस्थान किया।

२० अक्टूबर: सघ-संरचना समितिकी बैठकमे बोले।

चैथम हाउस (लन्दन)मे रॉयल इस्टिट्यूट ऑफ इन्टरनेशनल अफेयर्सके तत्त्वावधानमें आयोजित सभामे "भारत — आज और कल" पर बोले।

२१ अक्टूबर: लॉर्ड इर्विन और कर्नल मैडॉकसे मुलाकात की। संघ-सरचना समितिकी बैठकमे शरीक हुए।

२२ अक्टूबर: 'स्टेट्समैन' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।

सघ-संरचना समितिकी बैठकमे बोले।

२३ अक्टूबर: रायटरके प्रतिनिधिको मुलाकात दी।

संघ-संरचना समितिकी बैठकमे बोले।

तेजबहादुर सप्रू तथा अन्य लोगोसे बातचीत की।

रातमें ईटन पहुँचे और वहाँ स्कूली छात्रोकी एक सभामें भाषण दिया।

सुबह ईटनसे ऑक्सफोर्डको प्रस्थान किया।

२४ अक्टूबर: ऑक्सफोर्डमे इडियन मजलिसकी बैठकमें बोले।

ऑक्सफोर्डमे ही एक परिचर्चामें कुछ प्रश्नोके उत्तर दिये।

२६ अक्टूबर: सघ-सरचना समितिकी बैठकमे शरीक हुए।

२७ अक्टूबर: सघ-संरचना समितिकी बैठकमे शरीक हुए।

२८ अक्टूबर: मॉन्टेसरी ट्रेनिंग कॉलेज, लन्दनमे बाल-शिक्षापर बोले।

२९ अक्टूबर: चार्ल्स पेट्रिख तथा कुछ अन्य लोगोको मुलाकात दी।

३० अक्टूबर: सेन्ट्रल हॉल, वेस्टमिंस्टरमे कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया लीगकी सभामे बोले।

३१ अक्टूबर: फ्रेड्स हाउस, लन्दनमें क्वेकरोकी सभामें बोले।

१ नवम्बर: पेम्ब्रोक कॉलेज, कैम्ब्रिजमें बोलते हुए भारत और इग्लैंडके बीच समानता पर आधारित साझेदारीमें अपनी आस्था पुन. व्यक्त की।

इंडियन मजलिसमें बोले।

लन्दन पहुँचे।

२ नवम्बर: संघ-संरचना समितिके समक्ष लिखित वक्तव्य पेश किया।

३ नवम्बर: बो में चिल्डरेस हाउसकी वार्षिक बैठकमे बोले।

४ नवम्बर: सघ-संरचना समितिकी बैठकमें बोले।

इंडियन मेडिकल एसोसिएशनकी सभामे भाषण दिया।

५ नवम्बर: डाक-कर्मचारी सघकी सभामें बोले।

६ नवम्बर: श्री व श्रीमती जॉर्ज बर्नार्ड शॉ गांधीजी से मिलने आये।

७ नवम्बर: गांधीजी ऑक्सफोर्ड पहुँचे और रैम्जे मैकडॉनाल्ड तथा प्रोफेसर मरेसे उनकी बातचीत हुई।

९ नवम्बर: ऑक्सफोर्डसे लन्दन लौटे।

समाचार-पत्रोको दिये वक्तव्यमे सूचित किया कि उन्होंने यूरोपीय देशोकी यात्राका कार्यक्रम रद्द कर दिया है।

फ्रेड्स हाउस, लन्दनमे फेलोशिप ऑफ रिकसिलिएशन द्वारा आयोजित सभामे भाषण दिया।

१० नवम्बर: तेजबहादुर सप्रू तथा अन्य लोगोसे बातचीत की।

जे० एम० सेनगुप्तसे बगालकी परिस्थितिके बारेमे बातचीत की।

लन्दन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्समे बोले।

११ नवम्बर: समाचार-पत्रोके प्रतिनिधियोको मुलाकात दी।

गोलमेज परिषद्के सदस्योकी बैठकमे अपनी प्रान्तीय स्वशासनकी कल्पनाका स्पष्टीकरण किया।

१२ नवम्बर: कॉमनवेल्थ ऑफ इडिया लीग, लन्दनमे बोले।

१३ नवम्बर: 'न्यूज क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।

अल्पसख्यक-समस्या समितिकी बैठकमे बोले।

वेस्टमिन्स्टर स्कूलमे बोले।

१४ नवम्बर: लॉर्ड इर्विनसे भेट की।

समाचार-पत्रोके प्रतिनिधियोको मुलाकात दी।

१६ नवम्बर: अल्पसंख्यक-समस्या समितिकी बैठकमे शरीक हुए।

१७ नवम्बर: अमेरिका जानेकी अपनी असमर्थता बताते हुए एफ० बी० फिशरको सन्देश भेजा।

सघ-सरचना समितिकी बैठकमे प्रतिरक्षाके विषयमे बोले।

१८ नवम्बर. मॉर्ले कॉलेज, लन्दनमे वीमेन्स इडियन कौंसिलकी बैठकमे बोले।

१९ नवम्बर सघ-सरचना समितिकी बैठकमे "व्यापारिक भेद-भाव" पर बोले।

लन्दन शाकाहारी मण्डलकी सभामे भाषण दिया।

२० नवम्बर: शाकाहारियोकी सभामे शरीक हुए।

२४ नवम्बर. प्रधान मन्त्री, लॉर्ड सैकी, सप्रू और लीज-स्मिथसे बातचीत की।

२५ नवम्बर. 'न्यू लीडर' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।

सघ-सरचना समितिकी बैठकोंमे "प्रान्तीय स्वशासन" और "वित्त" के विषयमे अपने विचार व्यक्त किये।

डॉ० अम्बेडकरसे मुलाकात की।

२६ नवम्बर: सघ-सरचना समितिकी बैठकमे शरीक हुए।

२७ नवम्बर: सघ-सरचना समितिकी बैठकमे शरीक हुए।

२८ नवम्बर: गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीमे भाग लिया।

३० नवम्बरके पूर्व: लन्दनमे समाचार-पत्रोके प्रतिनिधियोको मुलाकात दी।

३० नवम्बर: गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनकी कार्यवाहीमे भाग लिया।

१ दिसम्बर: गोलमेज परिषद्के पूर्णाधिवेशनमे समापन-भाषण दिया।
पत्रकारोको मुलाकात दी।
भारतकी ताजी घटनाओके सम्बन्धमे अखबारोके लिए वक्तव्य जारी किया।

२ दिसम्बर: सर फिलिप हार्टोगको मुलाकात दी।

३ दिसम्बर: समाचार-पत्रोके प्रतिनिधियोको मुलाकात दी।
जे० एफ० हॉरैबिन, रेच, लास्की, किग्सले मार्टिन, ब्रेल्सफोर्ड और नेविनसनसे बातचीत की।

४ दिसम्बर. प्रधान मन्त्री और भारत-मन्त्रीसे भेट की।

५ दिसम्बरके पूर्व: एडमड डिमिटरको मुलाकात दी।
इग्लैडसे विदा होनेसे पूर्व एक घोषणापत्र जारी किया।

५ दिसम्बर: रायटर और 'ब्रिस्टल ईवनिंग न्यूज'को विदाई-सन्देश दिये।
पेरिस, रोम आदि होते हुए स्वदेश लौटनेके लिए ब्रिटेनसे प्रस्थान किया।
पेरिसमे भारतीयो द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमे भाषण दिया।
तीसरे पहर एक सार्वजनिक सभामे बोले।

६ दिसम्बर: विलेन्यूवमे रोमाँ रोलाँसे बातचीत की।
समाचार-पत्रोके प्रतिनिधियोको मुलाकात दी।

८ दिसम्बर: लोजानमे तीन सभाओमे भाषण दिये।

९ दिसम्बर: इटरनेशनल वीमेन्स लीग फॉर पीस ऐंड फ्रीडमके तत्त्वावधानमे विक्टोरिया हॉलमे आयोजित सभामे बोले।

१० दिसम्बर या उसके पश्चात्: रोमाँ रोलाँसे बातचीत की।

११ दिसम्बर: विलेन्यूवसे प्रस्थान किया।
मिलानमे।

१२ दिसम्बर: रोममे। वैटिकन सिटी देखी। मुसोलिनीसे मिले।

१३ दिसम्बर: रोममे। सुखोतिना टॉल्स्टॉयसे बातचीत की।
महिलाओकी एक सभामे भाषण दिया।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

घ

ढ

त

थ

द

फ

ब

म

य

र

श